सर्वज्ञकथित

जैन सिद्धान्त

(भाग २)

पं. दिनेशभाई शहा

सर्वज्ञकथित
जैन सिद्धान्त
(भाग २)

– वक्ता एवं लेखक –

पं. दिनेशभाई शहा

एम.ए., एल.एल.बी.

– संपादक –

डॉ. श्रीमती उज्ज्वला दि. शहा

एम.बी.बी.एस., डी.सी.एच., डी.जी.पी.

– प्रकाशक –

श्री. तीर्थंकर आदिनाथ स्वामी दिगंबर जैन मंदिर, चिखली

जि. बुलडाणा, महाराष्ट्र, पिन - ४४३२०१.

टेलि. ९८५०८१४१२५

एवं

– वीतरागवाणीप्रकाशक –

१५७/९, निर्मला निवास, सायन (पूर्व), मुंबई - ४०००२२.

टेलि. : ०२२-२४०७३५८१ / ९७५७३९३६३७

सर्वज्ञकथित जैन सिद्धान्त

प्रथम संस्करण वीर शासन जयंती – १४ जुलाई २०२२ १००० प्रत

– प्राप्तिस्थान –

वीतरागवाणीप्रकाशक
१५७/९, निर्मला निवास,
सायन (पूर्व),
मुंबई - ४०००२२.

श्री. तीर्थंकर आदिनाथ स्वामी दिगंबर
जैन मंदिर, चिखली
जि. बुलडाणा,
महाराष्ट्र, पिन - ४४३२०१.

– हमारे प्रकाशन –

			रु.
१)	जैनतत्त्व परिचय	– मराठी, हिन्दी, गुजराती, इंग्लिश	१५
२)	कारण कार्य रहस्य	– मराठी, हिन्दी, गुजराती, इंग्लिश	१५
३)	करणानुयोग परिचय	– मराठी, हिन्दी, गुजराती	१५
४)	पंचलब्धि	– मराठी, हिन्दी, गुजराती	१५
५)	भक्तामरस्तोत्र प्रवचन	– मराठी	१५
६)	स्वानुभव	– मराठी	६
७)	परमात्मा कसे बनाल!	– मराठी	६
८)	सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि	– हिन्दी	१५०
९)	सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि	– हिन्दी	१५०
१०)	सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लब्धिसार-क्षपणासार एवं अर्थसंदृष्टि	– हिन्दी	१००
११)	सर्वज्ञप्रणीत जैन भूगोल	– हिन्दी, गुजराती	५०
१२)	सर्वज्ञकथित जैन सिद्धान्त (भाग १ और २)	– हिन्दी	२५०
१३)	पंच परावर्तन	– हिन्दी	१५०

मूल्य रु. २५०/-
(भाग १ और २)

– हमारी बात –

इसी पुस्तक के प्रथम भाग में हमने 'कथा हमारे शिबिरों की' बतायी थी। शिबिरों की बातें याद आती हैं तो केवल देवलाली में ही हमने शिबिर नहीं किये हैं। देवलाली तो हमें अपने घर जैसा लगता है। हर साल गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की जन्मजयंती पर, दिवाली में और अन्य अवसर पर ५-५ दिन के प्रोग्रॅम में हम दोनों प्रतिदिन एक-एक कक्षा तो जरूर लेते थे। देवलाली ट्रस्टियों का हमें हमेशा ही खास स्नेह मिला है। इतना ही नहीं, हमारे छह-छह घंटों के शिबिरों के श्रोताओं से भी हमें उतना ही प्यार मिला है। छोटे-छोटे गावों से, बड़े-बड़े शहरों से, केवल देशभर के नहीं विदेशों से भी मुमुक्षु हमारे इन शिबिरों में उपस्थित रहते हैं; इन शिबिरों के इंतजार में रहते हैं।

इ.स. १९७६ में हमने गुजरात के प्रांतीज में प्रशिक्षण शिबिर अटेंड किया, वहां हम प्रथम-द्वितीय क्रमांक से उत्तीर्ण हुये थे। पश्चात् हमें उन शिबिरों के अध्यापक नियुक्त किया गया, तब से कक्षायें लेना-प्रवचन करना आदि शुरू हुआ। इ.स. १९८० से दिनेशजी दसलक्षण पर्व के अवसर पर प्रवचनार्थ जाने लगे, पहली बार सोनगीर गये थे। तब से दिन में तीन बार एक-एक घंटा वे सिद्धान्त प्रवेशिका की कक्षायें ही लेते थे। शुरू-शुरू में वे अकेले ही जाते थे, कुछ साल बाद मैंने भी जाना प्रारंभ किया। तब से हम जहां भी प्रवचनार्थ जाते थे वहां दिनेशजी ३ घंटे और मैं ३ घंटे इसतरह ६-६ घंटों के शिबिर लेने लगे। पुणे में हमने दो साल में ८-१० दिन के आठ शिबिर किये थे। पुणे, सोलापूर, वर्धा, वाशीम, कारंजा, द्रोणगिरी, औरंगाबाद, छिंदवाडा, अमदाबाद आदि अनेक जगह हम गये थे। इ.स. २००२ में दुबई में हमारा शिबिर हुआ। इ.स. २००४ से प्रतिवर्ष अमेरिका जाने लगे। वहां ३-३ महीने रहते थे और १०-१० सेंटर्स में जाते थे। वहां भी प्रत्येक सेंटर में ८-८ दिन तक प्रति दिन ६-६ घंटे सिखाते थे। हमारी कंडिशन ही थी कि जो ६-६ घंटे सुनने के लिये तैयार हैं उन्हींके यहां हम जायेंगे। डलास, मायामी, वॉशिंग्टन, शिकागो, अटलांटा, पिट्सबर्ग, राले, फिनिक्स, न्यूयॉर्क, सॅन डिअॅगो, सॅन होजे, डेट्रॉइट, किंग्स्टन आदि अनेक जगह जाते थे। अभी भी वहां के लोग बुलाते हैं, लेकिन हमने ही विदेशों में जाना बंद किया।

परंतु उसके बाद भारतभर में इतनी जगह से मांग आने लगी, उनको ना नहीं कर

सके। होशंगाबाद में छह शिबिर हुये, भोपाल में सात बार, इंदौर में दो बार, औरंगाबाद में चार बार, कुकमा (कच्छ) में दो बार, फलटण में दो बार, नागपुर में दो बार, जबलपुर में दो बार, वाशीम में तीन बार, छिंदवाडा में दो बार अमदाबाद (नवरंगपुरा) में दो बार शिबिर हुये। अन्यत्र भी तारंगा, मंगलायतन, नवागड, ग्वालियर, विदिशा, नातेपुते, सागर, कलकत्ता, दिल्ली-अध्यात्मतीर्थ, कोबा आश्रम-अमदाबाद, पुणे-बाणेर, डासाला, गजपंथ आदि अनेक जगह हम दोनों के शिबिर हुये। सर्वत्र २-३ महीने पहले तारीख नक्की करके बाहरगांव के मुमुक्षुओं को भी आमंत्रित किया जाता था, उनके आवास-निवास, भोजन की व्यवस्था की जाती थी। बहुत उत्साह के साथ शिबिर संपन्न होते थे। लोग पहले से चिंतित रहते थे कि हम ६-६ घंटे कैसे बैठ पायेंगे? हमें तो घंटे-दो घंटे बैठने की आदत है। परंतु हर शिबिर के अंत में आग्रह चलता था कि ऐसे ही और पंद्रह दिन चलने दो।

सभी शिबिरों की रेकॉर्डिंग तो नहीं हुयी है। दिनेशजी के सिद्धान्त प्रवेशिका पर ४-५ बार देवलाली में ६-६ घंटों के शिबिर लिये हुये हैं। उनमें से इ.स. २००७ और २००८ में हुयी शिबिरों में व्हिडिओ रेकॉर्डिंग की हुयी है। उसीको सुनकर हमारी मानस कन्या निशा सेठ और अन्य समर्पित स्वाध्यायियों ने वर्ड टू वर्ड टाइप कराके अपना अनमोल योगदान दिया है। इस पुस्तक के तैयार होने में अनेक महीनों से वे रोजाना लगातार मेहनत कर रहे थे।

लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका के प्रश्नोत्तरों पर आद्योपांत हुये इन प्रवचनों का यह पुस्तकरूप बनकर उसे प्रस्तुत करते हुये हम दोनों को अत्यंत समाधान हो रहा है। जिनागम की यह चाबी-मास्टरकी जिनागम का खजाना खोलने में जरूर मददगार ठहरेगी।

डॉ. उज्ज्वला दि. शहा

पं. दिनेशभाई शहा

– VISUAL DVDS –

(Each DVD contains 3 to 5 hrs. lectures)

जैन सिद्धान्त : शिबिर १ और २	१६
गुणस्थान : शिबिर	१०
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड : शिबिर १ और २	१६
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड अर्थसंदृष्टि	१८
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड : शिबिर १ और २	२०
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड अर्थसंदृष्टि	१२
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लब्धिसार-क्षपणासार : शिबिर १ और २	२२
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लब्धिसार-क्षपणासार अर्थसंदृष्टि	१६
पंच परावर्तन शिबिर	१२
क्रमबद्धपर्याय	३
आत्मा की ४७ शक्तियाँ	३
सम्यग्दर्शन : शिबिर	१०
ज्ञानमार्गणा – लेश्यामार्गणा : शिबिर	१०
सम्यक्त्वमार्गणा – योगमार्गणा : शिबिर	१०
प्रकृति – बंध, उदय, सत्त्वस्थान : शिबिर	९
क्षपकश्रेणी : शिबिर	१०
बीस प्ररूपणा : शिबिर	१०
पंचलब्धि : शिबिर	१०
आस्रव और पांच भाव : शिबिर (128 GB Pen Drive – 28 Hrs.)	
जैन भूगोल : शिबिर (VCDs)	२०

— विषय सूची —

३१. द्रव्य और गुण ५३७

३२. मिथ्यात्व ५५५

३३. एकांत मिथ्यात्व ५७३

३४. विपरीत मिथ्यात्व ५९१

३५. संशय, अज्ञान, विनय मिथ्यात्व ६०९

३६. श्रद्धा और चारित्र गुण ६२६

३७. चारित्र गुण – कषाय, नोकषाय ६४४

३८. चारित्र गुण की पर्यायें ६६३

३९. चारित्र गुण – स्वभावपर्यायें ६८१

४०. चार अभाव – प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव ६९८

४१. चार अभाव – अन्योन्याभाव ७१६

४२. अत्यंताभाव, प्रश्नोत्तर ७३४

४३. चार अभाव, निमित्त-उपादान ७५१

४४. निमित्त-उपादान ७७०

४५. निमित्त-नैमित्तिक संबंध ७८७

४६. उपादान कारण ८०३

४७. जीव, पुद्गल – विशेष गुण ८२१

४८. पांच वर्गणा, पांच शरीर ८३८

४९. भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माणवर्गणा ८५५

५०. पुद्गल – बंध के कारण ८७३

५१. प्रयोजनभूत सात तत्त्व – १ ८९१

५२. प्रयोजनभूत सात तत्त्व – २ ९०८

५३. जीवतत्त्व और जीवद्रव्य ९२५

५४. सात तत्त्व – भेदविज्ञान ९४२

५५. सात तत्त्वों संबंधी
विपरीत मान्यता – १ ९५९

५६. सात तत्त्वों संबंधी
विपरीत मान्यता – २ ९७६

५७. सात तत्त्वों संबंधी
विपरीत मान्यता – ३ ९९२

५८. सात तत्त्व – हेय, ज्ञेय, उपादेय १०१०

५९. सात तत्त्वों का यथार्थ श्रद्धान १०२७

६०. भेदविज्ञान १०४३

३१. द्रव्य और गुण

पहले में पहले हमें इस बात का निर्णय करना है क्या हमें जैन सिद्धान्तों का जो अभ्यास है, वह इसलिये करना है क्योंकि हम जैन कुल में जन्में हैं? अगर आपकी ऐसी मान्यता होगी तो माफ़ करना, किसीके साथ तो कंपॅरिझन करनी है, तो मेरेमें और मुसलमान में, हिंदू में, ख्रिश्चन में क्या फर्क रहा? क्योंकि वे भी कहते हैं हम मुसलमान कुल में जन्मे हैं, हम हिंदू कुल में जन्मे हैं, हम ख्रिश्चन कुल में जन्मे हैं, तो हम हमारे ही भगवान को नमस्कार करेंगे। हम उनकी ही बातों को समझेंगे, समझने की कोशिश करेंगे। तो हमें पहले में पहले यह नक्की करना है कि हम अगर जैन सिद्धान्तों का अभ्यास केवल हमारे माता-पिता मंदिर में जाते हैं और हमें भी जाना चाहिये इसलिये हमें करना है या उसके पीछे कोई दूसरा मकसद है? तो पहले में पहले यह ध्यान रखना चाहिये कि ये जो कुछ सिद्धान्त बताये गये हैं वे कैसे सिद्धान्त हैं? कि जिसको गुजराती में बोलते हैं अफर सिद्धान्त। अफर का अर्थ होता है कि जो फिरते नहीं, बदलते नहीं, पलटते नहीं; जो हैं वे कायम ही होते हैं। उनको कोई भी पलटा नहीं सकता और ऐसे सिद्धान्त कहनेवाले कौन हैं, इसकी बात हम दो मिनट में बताकर आगे बढ़ेंगे क्योंकि गत साल ये सारी बातें हुयी हैं, फिर भी बहुत सारे लोग नये हैं इसलिये उन बातों को दो मिनट में दोहराकर मैं आगे बढ़ना चाहता हूं।

हमने क्या देखा कि ये जो कहनेवाले हैं, कल यह बात तो चली थी अच्छी तरह से, फिर भी आज दोहराऊंगा क्योंकि जब तक हम यह निर्णय नहीं करते हैं कि जो कथन करनेवाला है वह साचा (सच्चा) है कि नहीं? अगर वही साचा नहीं होगा तो उसका कथन साचा है, यह बात कहां से आयी फिर? तो हमने कल देखा था, हमारे भगवान के लक्षण क्या होते हैं? नेमिचंदजी आप बताओ हमारे भगवान जो हैं, उनके लक्षण क्या हैं? क्योंकि देखो साहब, मैं पूछता हूं हो। अभी आपको पूछूंगा पहले, आपने इमली खायी है या देखी है, क्या है? इमली कैसी होती है बेटा? खट्टी होती है और कौआ कैसा होता है? काला होता है, अच्छा! और ट्वेन्टी-ट्वेन्टी क्रिकेट में वह जो बॉल वापरते हैं, वह कैसा होता है? *श्रोता: लाल।* लाल रंग का, बराबर न! तो अभी आप पीछे जरा देखना वह लाल कपड़ा पहन कर बहन आयी है, वह बॉल है क्या? तुम्हारे बाल काले हैं तो तुम कौआ हो क्या? *श्रोता:*

नहीं। कैरी खाते हो न तुम? कैसी होती है? मीठी होती है या खट्टी? तो हमने ये जो लक्षण बतायें हैं, वे गलत हैं। हमें ऐसे लक्षण नक्की करने चाहिये कि जो कभी भी गलत नहीं हो सकते।

इसलिये पहले में पहले, हमें हमारे भगवान के लक्षणों का पता होना चाहिये। अब नेमिचंदजी आप बताइये कि आपके भगवान हैं क्या कोई और उनके लक्षण क्या होंगे? *श्रोता: वीतरागी, सर्वज्ञ।* हां, जोर से बोलना साहब, मैं बूढा हूं। *श्रोता: वीतरागी, सर्वज्ञ।* बहुत अच्छा, आपका कहना है कि वे वीतरागी हैं, वीतरागी किसको कहते हैं? जिनके कोई राग-द्वेष बाकी रहे ही नहीं, सब निकल गये हैं भाई, वे नि:कषाय हो गये हैं। कषाय रहित ऐसे जो हैं – कौन? हमारे भगवान कि जिनके कषाय है नहीं, उनको नि:कषाय कहो, अरागी कहो, वीतरागी कहो, एक ही है और कैसे हैं वे? सर्वज्ञ हैं। यह सर्वज्ञता क्या होती है? कि विश्व में ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं होगा, आगम की भाषा में बोलना हो तो कोई द्रव्य नहीं होगा, कोई गुण नहीं होगा और कोई पर्याय नहीं होगी, जो केवली भगवान या सर्वज्ञ भगवान के ज्ञान से परे रह जाये। यानी विश्व की सारी बातें, तीन काल की सारी बातें, एक समय में जो जाने वे सर्वज्ञ हैं। सर्वज्ञता उनका स्वभाव है और वीतरागता भी उनका स्वभाव है, ऐसा स्वभाव, जिन्होंने पर्याय में प्रगट किया है, ऐसे जो सर्वज्ञ और वीतरागी हमारे भगवान हैं, तो उनका कथन, उनके कहे हुये सिद्धान्त कभी बदलेंगे नहीं, ख्याल में आया? जब तक हम पहले यह नक्की नहीं करते हैं कि कथन करनेवाले का स्वरूप कैसा है, तब तक हमें उस कथन के बाबत में गॅरंटी नहीं आती है कि भाई, ये कहते हैं, ऐसा ही होगा कि नहीं होगा? भगवान का स्वरूप नक्की करने पर किसी प्रकार का संशय ही नहीं रहता। रत्नकरण्ड श्रावकाचार में लिखा है कि जो हीन जाने, अधिक जाने या विपरीत जाने वह मिथ्याज्ञान है। हीन यानी द्रव्यों की संख्या जो है, गुणों की संख्या और शक्ति जितनी है, उससे कम जानना, अधिक यानी है उससे अधिक जानना; विपरीत यानी अन्यथा जानना। जो हीन या अधिक या विपरीत ज्ञान है या संशयरूप ज्ञान है, तो वह साचा-सच्चा ज्ञान, सम्यग्ज्ञान नहीं हो सकता, ख्याल में आया?

तो हमें यह देखना है कि यह जो ज्ञान हमें बताया जा रहा है, ये सिद्धान्त हमें जो दिखा रहे हैं, क्या ये सिद्धान्त हमें फॉलो करने योग्य हैं कि नहीं? क्योंकि हर एक जन

कहेगा, सर्वज्ञ भगवान ऐसा कहते हैं। लेकिन क्या वे सर्वज्ञ हैं या नहीं, यह तो हम नक्की कर सकते हैं कि नहीं? क्यों साहब? अरे! अन्यमती की बात छोड़ो, अन्य जो स्वयं को जैन मानते हैं और जो स्वयं को ही सही मानते हैं, वे भी कहते हैं कि हमारे सर्वज्ञ भगवान ने ऐसा कहा है। लेकिन उनके जो सर्वज्ञ भगवान हैं, क्या वे सर्वज्ञता या वीतरागता की कसौटी पर खरे उतरते हैं? देखना हो, आप सोचना। मैं आपको इन्फॉर्मेशन तो जरूर दूंगा, लेकिन, सोचने को भी लगाऊंगा। मेरी यह आदत है कि मैं बताता भी हूं और प्रश्न भी बहुत पूछता हूं, प्रश्न पूछने से दिमाग में कुछ विचार चलते हैं। हमको किसीने बताया और हमने वह माना, ऐसा हमारा नहीं होना चाहिये। हम जो-जो बात सुनते हैं उसके ऊपर विचार करें, सोचे और नक्की करें। एक बार नक्की हो जाये, तो दुबारा उसको बताना नहीं पड़ेगा कि तू ऐसा कर, वैसा कर। जैसा अपना ज्ञान होगा, उसके अनुसार आचरण होगा ही होगा।

इसलिये पहले में पहले हमने देखा कि हमारे जो सिद्धान्त हैं, वे सिद्धान्त कैसे हैं? कि जिनेन्द्र भगवान ने बताये हुये हैं और जिनेन्द्र भगवान कैसे हैं? जो वीतरागी हैं और सर्वज्ञ हैं। यह बात तो गये साल अपनी हो चुकी थी, ख्याल में आया न? इस साल दुबारा जरा इसलिये बताया कि हमें थोड़े कोई नये चेहरे दिख रहे हैं। उनको भी इस बात का पता चले कि भाई, हम इन सिद्धान्तों को फॉलो करें या नहीं करें? अभी यहां हम जो कोई सिद्धान्त सीख रहे हैं, वे सिद्धान्त सही हैं या नहीं, इसको भी तराशना चाहिये। क्या आप स्वयं को सर्वज्ञ भगवान से अधिक मान रहे हैं क्या? हां? सर्वज्ञ भगवान के सिद्धान्तों को भी आप व्हेरिफाय करना चाहते हैं? बिलकुल चाहते हैं। यहां जो भी बात बतायी जायेगी, वह बात इसतरह से हमें समझनी है, हमें उसके पीछे कौनसा मंतव्य है, कौनसा रीझनिंग है, यह देखकर ही नक्की करना है। नहीं तो हमारे पिताजी बोलते हैं और हम मम कहते हैं। या हमारे घर में कोई विधि होगी, तो भटजी को बुलाते हैं, क्या कहते हैं आप लोग? पंडित को बुलाते हैं और वह कहेगा, मम ऐसा बोलना। हां-हां हमने भी ॲक्सेप्ट किया, वैसी बात हमें नहीं चाहिये। हमें तो स्वयं को निर्णय करना चाहिये। ख्याल में आया?

तो अभी हम आगे बढ़ते हैं। देखो, गये साल में हमने देखा था कि यह द्रव्य की अनंत स्वतंत्रता है। क्या-क्या देखा हमने, मैं दो मिनट में दोहराता हूं। हमने देखा था, इस विश्व में क्या है? तो कहते हैं, द्रव्यों के अलावा कुछ नहीं है। क्या बात करते हो? केवल द्रव्य ही

द्रव्य है? यह तो आप एकांत की बात कर रहे हो। भाईसाहब, हमने तो सुना था, द्रव्य हैं, गुण हैं, पर्याय हैं और हमने शास्त्र में भी पढ़ा है। कौनसे शास्त्र में? अरे! आचार्य उमास्वामीजी के तत्त्वार्थसूत्र में हमने पढ़ा हैं '**गुणपर्ययवत् द्रव्यम्**' तो यह द्रव्य कैसा है? भाई, द्रव्य के अंदर ही गुण हैं और गुणों के साथ उनकी पर्यायें भी हैं। जब हम द्रव्य कहते हैं तो यह पार्ट ॲन्ड पार्सल ऑफ द्रव्य है। हमने पूछा, आप साहब कौन है? हम शहा है या मेहता है, जो भी आपको चाहिये ले लो न! तो फिर? आप अकेले शहा हो? नहीं-नहीं, मेरी बीबी शहा है, मेरे बच्चे शहा हैं, उनके बच्चे शहा हैं तो यह एक शहा के अंदर सारे आते हैं। जैसा समझ लो सवाईभाई, हमारे घर में शादी हो और हमने आपको इन्व्हिटेशन कार्ड दिया, तो हम उस पर नाम किसका लिखेंगे? आपके पोते के पोते का? नहीं, बोले, अरे भाई! मेरा नाम लिखो! मैं घर का हेड ऑफ फॅमिली हूं; तो हमने लिखा सवाईभाई शेठ, तो उनके अंदर सारी फॅमिली आ गयी की नहीं? मान लो, उनके घर में पंद्रह लोग हैं, तो सबका नाम लिखते थोड़ी हैं? इसलिये द्रव्य के अलावा इस विश्व में कुछ नहीं हैं, लेकिन उस द्रव्य में गुण भी हैं और पर्यायें भी हैं। यह भी देखा था कि प्रत्येक द्रव्य, अपनी-अपनी अवस्था से परिपूर्ण है यानी कोई भी द्रव्य, पर के कारण अपना परिणमन नहीं करता है। प्रत्येक द्रव्य का परिणमन अपने स्वयं के लिये अपने से होता है, ऐसा ही आचार्य उमास्वामी ने लिखा है।

तत्त्वार्थसूत्र के पांचवें अध्याय के २९ वे सूत्र में कहा है, '**सत् द्रव्यलक्षणम्**'। तो द्रव्य का लक्षण कैसा है? सत् यानी सत्तास्वरूप, सत् यानी जिसकी विद्यमानता है, तो साहब यह सत् कैसा होता है? अगले सूत्र में बताते हैं कि '**उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्**'। यानी जिसमें समय-समय पर नयी-नयी अवस्था होती है, नयी-नयी पर्याय होती है, नयी-नयी हालत होती है उसको पर्याय कहेंगे, अवस्था कहेंगे, दशा कहेंगे। ख्याल में आया? ऐसा द्रव्य का स्वरूप है। यह कौनसे द्रव्य की बात कर रहे हैं आप? पुद्गलद्रव्य की? अरे, सभी द्रव्यों की। हां-हां, क्योंकि द्रव्य कैसा है? तो सत्-स्वरूप है। तो यह देखो, यह कागज़ हमने यहां से उठाकर यहां रखा। तो यह क्या है? कौनसा द्रव्य है? कौन बतायेगा? *श्रोता: अजीव।* अजीवद्रव्य? अच्छा! और कोई बताना चाहेगा? हं, बोलो? यह कौनसा द्रव्य है? अविराज, तुम बोलो? *श्रोता: पुद्गलद्रव्य है।* पुद्गलद्रव्य है। तो पुद्गलद्रव्य में ज्ञान है कि नहीं साहब? देखो, भाईसाहब मैं आपको थोड़ासा बताऊंगा, नाराज नहीं हो तो बताऊं हो! क्योंकि जिनेन्द्र भगवान ने जो छह द्रव्य बताये हैं न, तो उनमें अजीव नामका

द्रव्य है क्या? हां? क्यों? धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य, कालद्रव्य और पुद्‌गलद्रव्य ये सब अजीवद्रव्य हैं। द्रव्यों के जब हम दो विभाजन करते हैं, एक चेतन यानी जीवद्रव्य, दूसरे अचेतन यानी अजीवद्रव्य। लेकिन छह द्रव्यों में, अजीव नाम का कोई द्रव्य ही नहीं है। सब अजीव द्रव्य झगड़ा करेंगे – भाई, ये मेरे बारे में बोल रहे हैं, धर्मद्रव्य कहेगा ये मेरे बारे में बोल रहे हैं, आकाशद्रव्य कहेगा ये मेरे बारे में बोल रहे हैं। झगड़ा मत करो।

तो हमने देखा, यह पुद्‌गलद्रव्य है, तो पुद्‌गलद्रव्य में ज्ञान है कि नहीं यह हमें नक्की करना है। गत साल में हमने छह सामान्य गुण भी देखे थे। गये साल में आये हुये कोई हैं क्या यहां पर? आप हैं? बहुत अच्छा? नलिनभाई, आप नहीं थे? तो बोलो न भैया? तो छह सामान्य गुणों के नाम कौन बताना चाहेगा? पद्मताई आप बताओ। *श्रोता: अस्तित्व।* एक मिनट, एक मिनट, हां आप-आप पद्मताई! बोलना चाहिये आपको, सामान्य गुण के नाम। देखो, जो बोलेगा वही आगे बढ़ेगा। देखो देखो, हमारे घर में छोटा बच्चा आया था – यह किधर गया? यह सोहम, इतना-इतना छोटा। वह आठ महिने का हो गया, नौ महिने का हो गया, तो चलने का चालू किया उसने। तो गिर गया, तो उसकी मां क्या बोलती है, अररर, उसको सुला दो-सुला दो चलाओ मत उसको। क्यों साहब? अरे! गिर जायेगा। अगर ऐसा हम करते, उसको चलने ही नहीं देते, चलने में हम उसको जरा भी मदद नहीं करते, तो आज वह जो रूबाब से चल रहा है वैसा चलता क्या? वैसे भले आप गलत बोलो, कोई चिंता नहीं है; कोई माता के पेट से सीख कर तो नहीं आया है, ख्याल में आया? तो बोलने में जरा भी संकोच मत करना। प्रयत्न करो, पीछे प्रॉम्प्टर्स बहुत हैं, फटाफट बतानेवाले। हां बोलो बैठकर, फटाफट बोलो। *श्रोता: अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व और प्रदेशत्व।* बहुत अच्छा! देखो, बच्चों ने याद किया, बहुत अच्छी तरह से बताया। अस्तित्व गुण है, वस्तुत्व गुण है, द्रव्यत्व गुण है, इसतरह से उन्होंने छह गुणों के नाम बताये। अब ये गुण, ये सामान्य गुण और विशेष गुण क्या होते हैं? यह पहले हम देखते हैं। सामान्य गुण उन्हींको कहा जाता है कि जो सभी द्रव्यों में पाये जाते हैं।

द्रव्यों को भी दो अपेक्षा से देखा जाता है, हो! कौन-कौनसे? एक तो जाति अपेक्षा से यानी प्रत्येक की जाति यानी क्वॉलिटि जुदी-जुदी है इसलिये उनके नाम भी जुदे-जुदे हैं। भाईसाहब आपके घर में कितने भाई हैं, आप और आपके साथ? हां दो होंगे, चार होंगे, जो

भी होंगे, हमें क्या करना है? आप कुछ भी बोलो न। तो आप सब मिलकर चार हैं तो सबके नाम अलग-अलग है कि नहीं? सबके अकाउंटस् अलग-अलग हैं कि नहीं? क्यों? क्योंकि भाई अलग-अलग हैं इसलिये तो नाम भी अलग हैं, अकाउंटस् भी अलग हैं, घर भी अलग हैं, सब अलग-अलग हैं। लेकिन अगर एक ही होते तो अकाउंट भी एक होता, ख्याल में आया न? तो हमें यह कहना है कि जाति अपेक्षा यानी पुद्‌गलद्रव्य अलग है, जीवद्रव्य अलग है, धर्मद्रव्य अलग है, इसलिये जाति अपेक्षा प्रत्येक द्रव्य भिन्न-भिन्न है। लेकिन दूसरी एक अपेक्षा है – वह क्या है? संख्या अपेक्षा, संख्या यानी क्वाँटिटि कितनी है? पहले क्या देखा था? क्वॉलिटि, दूसरा क्या देख रहे हैं हम? क्वाँटिटि। तो हमने यह भी देखा कि जीवद्रव्य अनंत हैं, पुद्‌गलद्रव्य अनंतानंत हैं, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य एक-एक है और कालद्रव्य? असंख्यात हैं, क्यों पिनांग? कालद्रव्य कितने हैं? *श्रोता: असंख्यात।* तो यह हमने संख्या अपेक्षा से देखा। अभी हम क्या देखते हैं कि ये जो सामान्य गुण हैं, वे सामान्य गुण सभी द्रव्यों में पाये जाते हैं यानी जैसे हमने अस्तित्व नाम का गुण देखा, तो हर द्रव्य का अस्तित्व अपना-अपना, जुदा-जुदा है। भाईसाहब यह खाली ऐसा एक, क्या अस्तित्व गुण भी हमारे ज्ञान में आ जावे न, तो जो अन्यमती मानते हैं कि अहं सत् जगत् मिथ्या, जो भी होगा, मैं जानता नहीं हूं, यानी मैं अकेला हूं बाकी विश्व में कुछ नहीं, माया है, माया। अरे भैया! प्रत्येक द्रव्य, सत्-स्वरूप है, क्यों? यह किसने बताया भाई आपको? अभी आपने तो बताया न? **'सत् द्रव्यलक्षणम्'**। किसने बताया? उमास्वामीजी ने, उमास्वामी कौन थे? अरे! आप जानते नहीं हैं? वे तो तीन कषाय के अभावपूर्वक जिनके वीतरागता वर्तती है, सकलचारित्र नामक वीतरागता वर्तती है, ऐसे जो सत्य महाव्रतधारी हैं, ऐसे आचार्यों ने यह बात बतायी है। ख्याल में आया? तुम्हारे-हमारे जैसे कोई ऐरे-गैरे ने यह बात बतायी हुयी नहीं है। वे जो स्वयं वीतरागी हैं, और अपने आत्मा का ऐसा उग्र अनुभव कर रहे हैं कि उनको झूठ बोलने की इच्छा कहो... क्या... अरे! उनको गरज भी नहीं। ख्याल में आया?

यह जो बात बता रहे हैं कि यह अस्तित्व गुण अगर हमारे ख्याल में आता है जो प्रत्येक द्रव्य में है, तो प्रत्येक द्रव्य अनादिकाल से अनंतकाल तक टिकनेवाला है यह बात अगर हमारे ख्याल में आवे, तो मैं स्वयं एक जीवद्रव्य हूं, मेरेमें अस्तित्व नामक गुण है, तो मैं कल मर जाऊंगा। हाय-हाय, हाय-हाय, क्या करूं-क्या करूं, मुझे क्या हो गया? कॅन्सर

हो गया तो हाय-हाय रहेगी कि नहीं? अर्पलसाहब आपका बेटा अमेरिका चला गया, तो आप रोयेंगे कि नहीं? बोलो भैया? रोयेंगे? आप कहते हैं आप नहीं रोयेंगे। अब आप कहते हैं... मैं रोऊंगा, तो आपने अपने बेटे को पर्याय जितना माना। लेकिन वह जीवद्रव्य है, अनादिअनंत टिकनेवाला है, तुम चाहो या मत चाहो, वह तो टिकनेवाला है, रहनेवाला ही है। ख्याल में आया? तो हमें दुःख नहीं होगा। ऐसे जो वस्तु का सच्चा स्वरूप है, जो वास्तविकता है, वह अगर हमारे ज्ञान में आवे तो, हमें आकुलता नहीं होगी, क्षोभ नहीं होगा, माया नहीं होगी, मोह नहीं होगा; लेकिन हम पर्याय जितना उस जीव को मानते हैं, उस चीज को मानते हैं। यहां तो कह रहे हैं, भाई, तू तो अनादिअनंत टिकनेवाला है न प्रभु! तेरा स्वभाव ही अस्तित्व गुण से युक्त है और गुण उसीको कहते हैं जो द्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में रहता है, कभी वह गुण उस द्रव्य से जुदा हो ही नहीं सकता है, ख्याल में आया? तो यहां बता रहे हैं कि ऐसा जब वस्तु का स्वरूप है, तो यह अस्तित्व नामक एक गुण देखने से हमें पता लगता है कि मेरा बेटा मर जाये, तो हाय-हाय, मैं मर गया-मैं मर गया। अरे! लेकिन वह यहां से अमेरिका गया है न भाई, वहां तो मौज मजे में है, यहां से स्वर्ग में गया है, और तू यहां? यह बात हम ध्यान में नहीं रखते हैं।

यह अष्टान्हिका महापर्व आता है न साहब, तो अष्टान्हिका में तो हम बहुत सारे लोग, बड़े-बड़े पंडितों को बुलाकर अष्टान्हिका महापर्व जोर-शोर से मनाते हैं। उस समय तो अनादिअनंत, अकृत्रिम जिनालयों की वंदना हम यहां बैठे-बैठे करते हैं, लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि मैं भी अनादिअनंत अकृत्रिम हूं, ऐसा अपना स्वभाव है, इसपर कहां ध्यान है? और सवाईभाई हमें तो आत्मानुभूति करनी है। कैसी आत्मानुभूति? कि जो पर्याय जितना मैं स्वयं को मान रहा हूं, तो मेरा स्वरूप मैंने अधिक माना या हीन माना यह तो नक्की करो? तो जो हमने वस्तु का स्वरूप नहीं समझा है, वस्तु यानी द्रव्य, मेरा द्रव्यस्वभाव कैसा है? उसको हमने जाना नहीं है और हम ध्यान लगाकर बैठते हैं। किसका ध्यान करोगे? जो है, उसका करोगे या जो नहीं है उसका करोगे? ख्याल में आया?

भाईसाहब, बात तो ऐसी है कि दौलतरामजी कहते हैं, 'दौल' समझ सुन चेत सयाने। दौल यानी किसको कहा? स्वयं के नाम को नहीं बोला। अरे! तू ही दौलतराम है,

तेरे पास अनंत गुण हैं, तू अनंत गुणों का स्वामी है ऐसी दौलत – अगाध निधि तेरे पास है। तो पहले क्या कहा? 'दौल' समझ, यानी ज्ञान कर, कैसे ज्ञान करूं साहब? स्वयं पढ़ने से ज्ञान होता हो तो, सब लोग स्वयं पुस्तकें पढ़ कर डॉक्टर हो जाते भाई, स्वयं पढ़ कर इंजिनिअर हो जाते, स्वयं पढ़ कर एम.बी.ए. हो जाते; शिक्षकों से सीखने के लिये क्यों कॉलेज में जाते हैं? तो दौल, समझ, सुन, जो एक्स्पर्ट्स हैं उनसे सुन, कौन हैं एक्स्पर्ट्स? एक्स्पर्ट बॉस तो हमारे जिनेन्द्र भगवान हैं। हां, उनके बाद जो आचार्य हैं, इनके बाद जो मुनिराज हैं। तो 'दौल समझ, सुन, चेत, सयाने' हे बुद्धिशाली जीव, तू अभी जाग जा, हो! बहुत काल तक तू मोहनिद्रा में सोता आया है, सो रहा है तू, अब जाग तो सही, 'काल वृथा मत खोवे', अब तू काल वृथा यानी मुफ्त में, फोकट में, खोना-गंवाना मत क्योंकि अगर तुझे अपने आत्मा का अनुभव करना है, तो वस्तुस्वरूप समझना चाहिये और वह वस्तुस्वरूप समझते हुये हमने देखा है कि ये सामान्य गुण हमें वस्तु का स्वरूप बता रहे हैं। यह तो मैंने एक अस्तित्व गुण की बात बतायी हो, ऐसे वस्तुत्व, द्रव्यत्व आदि गुण देखेंगे तो प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है। प्रत्येक द्रव्य में अनंत स्वतंत्रता है तो इसका अर्थ यह हो गया कि प्रत्येक द्रव्य का प्रत्येक गुण, अनंत स्वतंत्रता से युक्त है। अरे! अनंत गुण तो स्वतंत्र हैं ही हैं, लेकिन हर द्रव्य के, हर गुण की, हर समय की एक-एक पर्याय, वह भी स्वतंत्र है। एक समय की पर्याय को, दूसरा कोई कर देवे, ऐसा तीन काल में नहीं होता है। ऐसी अनंत स्वतंत्रता इस विश्व में है। मैं स्वयं एक द्रव्य हूं, मैं भी अनंत स्वतंत्र हूं, मेरा परिणमन कोई दूसरा कर देवे, ऐसा तीन काल में नहीं बन सकता है।

जब हमें ऐसे वस्तुस्वरूप की पहचान हो जाये, तो मैं भी ऐसा अनंत स्वतंत्र द्रव्य हूं, ऐसी जब अपने स्व की, अपने स्वभाव की महिमा आ जाये, तो हमें पर की तरफ देखने की क्या आवश्यकता है? यहां बैठे-बैठे अरे वह फलां आदमी से मुझे एक करोड़ रुपया लेना था, वह रह गया साहब, अभी मैं यहां कहां आकर फंस गया हूं, ऐसा विचार आवे क्या? जब अपने स्वभाव की तरफ अपनी रुचि हो जाये, अपने स्वभाव को जानने की तमन्ना हो जाये, तब हमें अन्य सारे फीके-फीके-फीके लगते हैं और जिसको पर में रुचि है, पर की चाह है, तो अरे! इसको छोड़कर मैं आपके शिबिर में कैसे आऊं? ऐसा मन में आये बिना नहीं रहता है। ख्याल में आया? देखो, यह तो हमने सामान्य गुणों की बात देखी। सामान्य गुणों में हमने बार-बार यही देखा कि प्रत्येक द्रव्य का अपना-अपना

परिणमन अपने स्वयं के द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव में होता है। अब यह द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव क्या है? वह आगे बात आयेगी, एक बार तो आ चुकी है फिर भी अभी इस वक्त भी उसको हम देखेंगे, सामान्य गुणों की यह बात देखने के बाद। अभी यहां से अपना विषय चालू होता है, आज हम यहां विशेष गुण की बात शुरू करेंगे। विशेष गुण का अर्थ क्या होता है? तो विशेष गुण उन्हींको कहते हैं कि जो कोई विशिष्ट द्रव्य में रहते हैं, बाकी अन्य द्रव्य में नहीं पाये जाते हैं। देखो-देखो!

यह पुद्‌गलद्रव्य जो आपने देखा है तो इस पुद्‌गलद्रव्य में कौन-कौनसे विशेष गुण हैं, कोई जानता हैं? पुद्‌गलद्रव्य में कौनसे विशेष गुण हैं? कौन बतायेगा? अरे! तुम रुक जाओ बेटा! यहां बड़े-बड़े लोग बैठे हैं न, बोलने दो न उनको। हां साहब, हां-हां। *श्रोता: स्पर्श, रस, गंध, वर्ण।* बहुत अच्छा! बहनजी बताती हैं कि इसमें स्पर्श, रस, गंध और वर्ण ये विशेष गुण हैं। यह पर्चा जिसको नहीं मिला है, हाथ उठाये, उनको दिया जायेगा। हं, जरा पीछे इधर दे देना भाई।

तो यहां पेज नंबर ८ पर लिखा है उसमें १६ नंबर का प्रश्न है। हां, देखो-देखो! यहां कह रहे हैं, प्रत्येक द्रव्य में कौन-कौनसे विशेष गुण हैं? तो उत्तर देते हैं जीवद्रव्य में चैतन्य, यह चैतन्य नाम का गुण बताया है। चैतन्य में क्या बताया उन्होंने? दर्शन और ज्ञान; सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, क्रियावती शक्ति इत्यादि। यह किसकी बात चल रही है? सवाईभाई कहते हैं मेरी। बिलकुल सही है। हर एक को समझना चाहिये यह मेरी ही बात है। देखो भाई! एक बात मैं अवश्य आपको कहना चाहूंगा। जब हम यहां बैठते हैं, कहां? शास्त्र स्वाध्याय में, तब ऐसा अगर कोई मानेगा कि मैं तो कौन हूं? मैं डॉक्टर हूं, मैं तो बिझनेसमन हूं, मैं तो वकील हूं, मैं तो बहुत पैसेवाला अब्जोपति हूं। तो उसको यह शास्त्र की बात बिलकुल गले नहीं उतरेगी, क्योंकि उसने अपने को पर्याय जितना माना है कि मैं यह देवलाली का ट्रस्टी हूं, समझ में आया आपको? ऐसा समझकर अगर यहां बैठते हो, तो कोई बात गले उतरनेवाली नहीं हैं, माफ़ करना हो सुमनभाई, हुं मोढा सामे वात करवावाळो छुं। तमे नथी मानता, एनी तो मने सो टका गॅरंटी छे। एटले तमारी आडमां बधाने बताऊं छुं, ख्याल में आया? अगर मैं जीवद्रव्य हूं और यह जिनेन्द्र भगवान की बात जो आचार्यों के माध्यम से हमारे तक पहुंची है, वह मेरे लिये है, ऐसा जब हम मानेंगे, तो

यह बात हमारे गले उतरेगी, ख्याल में आया? तो अभी यहां क्या बताते हैं, सवाईभाई ने हमको बहुत मदद की, तो यह किसकी बात चल रही है। तो बोले मेरी बात चल रही है, बिलकुल मेरी बात चल रही है, आपकी नहीं मेरी। हर एक को समझना है यह मेरे बारे में बात हो रही है। ऐसा हम समझेंगे तो ही आगे बढ़ने के चान्सेस हैं अन्यथा नहीं।

एक कथा सुनाता हूं; एक राजा था, वह राजा क्या करता था? कि जो कलाकार यानी जो कोई आर्टिस्ट अनेक प्रकार के, कोई शिल्पकार हो, कोई चित्रकार हो, कोई गायक हो, जो कोई कलाकार हो, उनका सबका बहुत बड़ा सत्कार करता था। तो एक मूर्तिकार आया, उसने तीन मूर्तियां लायी। बिलकुल हूबहू एक जैसी, जरा भी कोई भी अंतर नहीं है; सामने लाकर रख दी, मतलब लाइफ साइझवाली ऐसी बड़ी और बताया कि महाराज! इन तीन मूर्तियों में से सबसे बढ़िया मूर्ति कौनसी है? आप अगर नक्की करोगे, तो मेरे ऊपर बहुत मेहेरबानी होगी। राजा उलझन में पड़ गया, क्या बात है? अब कैसे करें? रुक जा। तीन दिन की मोहलत दे, मैं तीन दिन में तुझे बताऊंगा। फिर उसने अपने प्रधानजी से कहा, भैया मैं तो बड़े संकट में पड़ गया हूं, अभी आप ही हमें इसमें से छुड़ा सकते हैं। तो क्या करें? तो बोले, आप चिंता मत करो। तो उस प्रधानजी ने क्या किया? कि एक इतनी बड़ी ऐसी, जिसको बोलते हैं, तार। *श्रोता: सलाई।* हां-हां, जो भी है वह आप समझ जाओ, तो उसने वह मूर्ति के एक कान में डाली तो वह दूसरे कान में से बाहर निकली। उसने दूसरी एक तार दूसरी मूर्ति के एक कान में डाली, तो क्या हो गया? वह कान में ड़ाली और मुंह में से बाहर निकली। हां और तीसरी मूर्ति के कान में से डाली तो अंदर पेट में चली गयी। तो दूसरे-तीसरे दिन मूर्तिकार को बुलाया और बताया, यह फलां-फलां मूर्ति जो है वह सर्वोत्कृष्ट है, वह भी आश्चर्यचकित हो गया। आपके कैसे समझ में आया? तो राजा ने कहा आप नहीं समझते, क्योंकि हम गली-गली घूमकर आये हुये हैं। हमने तो ऐसे बहुत श्रोताओं को देखा है कि जो इस कान से सुनते हैं और उस कान से छोड़ देते हैं; और ऐसे वक्ता भी बहुत देखे हैं, जो सुनते हैं और दूसरों को सुनाते हैं; लेकिन ऐसे बहुत कम हैं कि जो सुनकर अपने स्वरूप में गुप्त होते हैं। शिवशंकरजी, ख्याल में आया? देखो बात कैसी है, हम तो यह कहते हैं कि सुनकर यह बात हम पचायें; यह बात मेरे लिये है, अंदर में उतरे, इसके लिये मैं आपको कहानियां सुनाता हूं, ऐसे ही टाइमपास के लिये नहीं; नलिनभाई! ख्याल में आया?

तो अब यहां क्या कह रहे हैं, जीवद्रव्य है, उस जीवद्रव्य की विशेषता क्या है? तो यहां क्या कहते हैं यह पूरा हम पढ़ लेते हैं। जीवद्रव्य में चैतन्य यानी दर्शन, ज्ञान, सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, क्रियावती शक्ति इत्यादि, इस इत्यादि में कितने गुण आते होंगे? हां साहब आप बतायेंगे? यह इत्यादि बताया न? एट्सेटरा इसमें कितने गुण आयेंगे? हां, अर्पलसाहब बताते हैं वह गलत है। उन्होंने बताया न बहुत सारे। किसने बताया, आप बोलो? बहुत सारे नहीं, हं बोलो? हां जी बहुत सारे, गलत हैं! हं, असंख्य किसने बताया? आपने बताया? अच्छा, बोलो गांगजीभाई? *श्रोता: अनंत-अनंत।* अनंत-अनंत हैं। अब वह अनंत की संख्या देखना चाहो तो दो मिनट में बताऊंगा, आप बोअर नहीं होना। देखो इस विश्व में जीव अनंत हैं और जीवों से अनंतगुणा पुद्गलद्रव्य हैं। पुद्गलद्रव्य जितने अनंत हैं, उनसे भी तीन काल के समय अनंतगुणा हैं और तीन काल के समय जितने अनंत हैं, उनसे भी आकाशद्रव्य के प्रदेश अनंतगुणा हैं और आकाशद्रव्य के प्रदेश जितने अनंत हैं, उनसे भी एक द्रव्य में गुण अनंतगुणा हैं। तो जब इत्यादि इतना बोल दिया तो इतने अनंत आ गये उसमें। अब वह कैसा है वह मैंने लास्ट इयर प्रूव्ह किया था। अभी वही बात दोहराऊंगा, तो आप लोग कहेंगे कि इनको तो दूसरा कुछ आता ही नहीं है, वही-वही बोलते हैं। क्यों अमृतभाई? तो यहां कह रहे हैं कि इत्यादि में अनंत गुण लेना और पुद्गलद्रव्य में? स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, क्रियावती शक्ति इत्यादि, यह इत्यादि में भी अनंत गुण ले लेना। धर्मद्रव्य में गतिहेतुत्व इत्यादि, अधर्मद्रव्य में स्थितिहेतुत्व, इन सबका मैं एक्स्प्लनेशन करनेवाला हूं, अभी हम केवल पढ़ लेते हैं। अधर्मद्रव्य में स्थितिहेतुत्व इत्यादि, आकाशद्रव्य में अवगाहनहेतुत्व इत्यादि एवं कालद्रव्य में परिणमनहेतुत्व इत्यादि विशेष गुण हैं।

तो अभी यहां जो सभी द्रव्यों की बातें बतायी हैं, तो मुझे यह पूछना हैं कि इन छहों द्रव्यों में से कौनसे द्रव्य में अधिक गुण होंगे? भाईसाहब हां, बोलो-बोलो? कौनसे द्रव्य में अधिक गुण होंगे? *श्रोता: जीवद्रव्य में;* जीवद्रव्य में, अच्छा, बहुत अच्छा! आप क्या कहते हैं, प्रफुल्लभाई? *श्रोता: जीवद्रव्य में अनंत।* उनमें से अधिक किसमें हैं? *श्रोता: कालद्रव्य में?* कालद्रव्य में, अच्छा-अच्छा! आप भाईसाहब? क्रांति का बेटा, मैं नाम भूल गया, क्या नाम है, नितिन? नितिनभाई आपको बताना है। *श्रोता: जीवद्रव्य में।* जीवद्रव्य में। पहली तो बात यह है कि आपके हाथ में जो पर्चा दिया है, वह कृपया ज़मीन पर मत रखना, यह जिनवाणी का अंश है, और हम उसको बाइज़्ज़त आदर से अपने हाथ में रखना। अब पहले

में पहले तो यह देखो, ये सामान्य गुण भी अनंत हैं, किसीमें अधिक किसीमें ओछे ऐसे नहीं हैं। वैसे विशेष गुण भी प्रत्येक में अनंत हैं। तो कोई आपमें से उठकर कहेगा कि साहब, ये अनंत के नाम तो गिनाओ? हमें जिज्ञासा है। तो कहते हैं – अनंत गुणों के नाम गिनते-गिनते गिननेवाले की पर्याय भी ख़त्म हो जायेगी और सुननेवाले की भी... क्योंकि अनंत की अनंतता हमारे ज्ञान में नहीं आती है, तो ये अनंत गुण हैं यह जिनेन्द्र भगवान ने बतायी हुयी बात है। इतना समझकर हमें उसका विश्वास रखना चाहिये, ख्याल में आया? अभी मैं आपसे पूछता हूं, अनंत की तो बात छोडो। शास्त्रों में जिनेन्द्र भगवान के एक हजार आठ नाम लिखे हैं, लिखितरूप से हैं हो। कितने जन को याद हैं? आपको याद हैं बहन? नहीं? देखो, एक हजार आठ नाम जो लिखे हुये हैं उनको गिनने में हमको फुरसत कहां है? हमारे बच्चों के नाम गिनते-गिनते हम थक जाते हैं। नहीं समझे? तो उन्हें कहां गिनेंगे? तो अनंत का कहां हिसाब रहेगा? कहने का मतलब यह है, मज़ाक छोडो, बात तो यह है कि कोई भी द्रव्य में अधिक या कम गुण नहीं हैं। अरे! अनंत तो अनंत ही है, संख्या सबमें समान है। ख्याल में आया न? अब आगे बढ़ते हैं।

यहां तो देखना है कि जीव में यह चैतन्य गुण बताया न? उसमें ज्ञान और दर्शन, ये दोनों को मिलकर एक चैतन्य गुण कहा जाता है। अब ज्ञान गुण तो आप जानते हैं, ज्ञान गुण का कार्य क्या है? तो कहते हैं जानना-जानना-जानना और यह जाननेरूप इस जीव का स्वभाव है क्योंकि यहां क्या बताते हैं कि यह विशेष गुण जो है न, तो विशेष गुण से हमें क्या पता लगता है कि एक द्रव्य को दूसरे द्रव्य से अलग किया जाता है। किसके माध्यम से? तो कहते हैं, विशेष गुण के माध्यम से क्योंकि हमने विशेष गुण की परिभाषा देखी थी कि जो विशिष्ट द्रव्य में रहता है अन्य कोई भी द्रव्य में नहीं रहता है। ख्याल में आया? तो हमने क्या देखा? इमली खट्टी है, तो कैरी कैसी है? गुजराती कैरी नहीं हो, काची कैरी, तमे कहो। वह कैसी है? वह भी खट्टी है। तो खट्टी दोनों हैं, तो वह उसकी विशेषता नहीं है यह मैं बताना चाहता हूं।

लेकिन यह जीवद्रव्य में जो ज्ञान गुण है, वह अन्य कौन-कौनसे द्रव्य में पाया जायेगा? बोलो अविराज? क्रान्ति तुम बताओ? ज्ञान गुण है, वह अन्य कौन-कौनसे द्रव्य में पाया जायेगा? सुलभाताई आप बताओ? *श्रोता: किसी द्रव्य में भी नहीं।* किसी द्रव्य में भी नहीं,

क्यों नहीं भाई? आपके पास क्या प्रूफ है? *श्रोता: जीवद्रव्य चेतन है, उसका उपयोग ज्ञान और दर्शन में लगता है।* बहुत अच्छा! आपने भी सही कहा, भाईसाहब ने सही फ़रमाया। आप कहते हैं – अभी तो एक मिनट हो गया, आपने बताया कि ज्ञान गुण यह विशेष गुण है और विशेष गुण अन्य द्रव्य में नहीं पाया जाता है। यह ज्ञान गुण जीवद्रव्य का है, तो जीवद्रव्य में ही ज्ञान होगा, अन्य किसी भी द्रव्य में हो नहीं सकता। अरे! जो मैं बताता हूं, वही पूछता हूं लेकिन हमारे ऐसी बात हो गयी है कि हमारा प्रवचन सुन सुनकर, यहां बैठे हुये लोग सप्तम गुणस्थान में जाते हैं। हं, सवाईभाई बोलते हैं – सप्तम गुणस्थान क्या होता है? अरे! वे अपने स्वरूप में गुप्त हो जाते हैं कि बाहर की सुनने की कोई हमें आवश्यकता नहीं है। अरे! तुम्हारी क्या बात है, हम तो समवशरण में भी गये थे, वहां पर भी अंतरंग में लीनता धारण कर किसी जीव ने जो केवलज्ञान प्राप्त किया होगा, तो क्या सुनते-सुनते किया होगा या स्वरूप में लीन होते-होते किया होगा?

तो हम उसीकी प्रॅक्टिस कर रहे हैं भाई, यहीं बैठे-बैठे, ख्याल में आया? तो हमने क्या देखा? यह ज्ञान गुण जो है वह विशेष गुण है और जीवद्रव्य के अलावा अन्य किसी भी द्रव्य में नहीं है। तो यह जो पुद्‌गल है, यह यहां से यहां आया, तो इस जीव ने उठाकर यहां रखा कि नहीं? यह हम देखना चाहते हैं। हां भाभी तमे बोलो, हां, तमे बोलो? *श्रोता: क्रियावती शक्ति।* एक मिनट-एक मिनट, लताबेनना राइटमां बेठा छे, अे बेन, मने नाम खबर नथी, भाभी, भरतभाईना मिसेस, हां बोलो, आपने उत्तर दिया है, मैं जानता हूं। *श्रोता: क्रियावती शक्ति।* लताबेन, आ शुं लंडन छे? तमारे बोलवानु नहीं। क्रियावती शक्ति। हम क्या समझते हैं अरे! यह तो पुद्‌गल है, इसमें क्या ज्ञान है? उसको क्या अक्ल है इधर से इधर आने की? यह तो जीवद्रव्य ही उठा कर यहां रखता है न? ऐसा हम भोले जीव मानते हैं। भोले का अर्थ समझा नितिन? मूर्ख जीव मानते हैं; सत्य बोले तो लोगों को कड़वा लगता है, क्या करें? यह कैसा गलत है यह भी हम देखनेवाले हैं। अब इसके आगे हम यह देखते हैं, कि ज्ञान गुण का कार्य क्या है? तो जानना-जानना-जानना और दर्शन गुण जो है, वह दर्शन गुण जो यहां लिखा है वह दर्शन गुण के दो अर्थ हैं। दो इन द सेन्स, देखो यहां शास्त्र में कई बार दर्शन शब्द आता है, तो दो प्रकार से उसका प्रयोग किया जाता है। यानी दो बातों के लिये वह वापरा जाता है, एक दर्शन नाम का गुण है, वह दर्शन गुण का काम सामान्य अवलोकन करना; दुसरा, श्रद्धा गुण के लिये भी दर्शन शब्द आता है।

सामान्य अवलोकन करना यह दर्शन गुण का कार्य है और ज्ञान गुण का कार्य क्या है कि विशेषरूप से अवलोकन करना या विशेषरूप से जानना। अब हम कहेंगे, सामान्यरूप से जानना नहीं बता पायेंगे हम क्योंकि जानने का कार्य तो ज्ञान गुण का है, तो अवलोकन करना, इतना लेना। यानी क्या? कोई भी वस्तु है, उसमें भेद किये बिना उसको ग्रहण करना, यह दर्शन गुण का कार्य है। जैसे, बहुत आसानी से हम समझते हैं, हमारे जो भगवान हैं, वे अनंतज्ञान और अनंतदर्शन से युक्त हैं। तो अनंतज्ञान में क्या आता है? कि विश्व के जितने द्रव्य हैं, उन सभी द्रव्यों के अनंतानंत गुण और उन एक-एक गुण की, तीन काल की जो अनंत पर्यायें हैं। फिर से... केवलज्ञानी अनंत द्रव्यों को जानते हैं। एक द्रव्य में अनंत गुण हैं, तो अनंत द्रव्यों में अनंतानंत गुण हैं। एक गुण में तीन काल की अनंत पर्यायें हैं, तो अनंत द्रव्यों के अनंत गुणों की तीन काल की अनंतानंत पर्यायों को भिन्न-भिन्न विशेषरूप से जाने, वह केवलज्ञान है और ऐसा केवलज्ञानस्वभावी मैं हूं। यह केवलज्ञानस्वरूप से मैं पुरेपूरा लबालब-खचाखच भरा हूं, ऐसा जब अपनी तरफ अपना यह उपयोग जायेगा, तब यह जीव अपनी तरफ देखेगा कि अन्य तरफ देखते बैठेगा? ख्याल में आया?

अरे! हमें अपने स्वभाव की, अपने स्वरूप की पहचान नहीं हैं इसलिये हम हर जगह माथा मारते हैं। गुरुदेवश्री बताते थे, वे गुजराती में बोलते थे। अभी मैं मेरी भाषा में बोल रहा हूं, यह गांव जो होता है न गांव, वहां उकीरडा, शुं कहेवाय भाई? हां उकरडो, जे होय ते। हिन्दी में क्या बोलते हैं जयशीलभाई? हं, क्या बोले? कुंडी-कुंडी-कचराकुंडी। उसमें वहां के गांव का जो बैल–सांड होता है वह जाकर ऐसा माथा मारता है यानी अपने सींग से कचरा ऐसा उड़ाता है, तो क्या मिलता होगा उसको? कुछ भी नहीं मिलता क्योंकि वह कचरा है न। वैसा हम भी चौबीस कलाक परपदार्थों में माथा मार रहे हैं, हाथ में कुछ आनेवाला नहीं है। तो तू स्वयं ऐसा केवलज्ञानस्वभावी है ऐसा जब तुझे एहसास होगा, ऐसा जब तुम्हें पता लगेगा, तो उसे कैसे मैं प्राप्त करूं, इसकी तालावेली लगनी चाहिये या वह कुंडी में जाकर माथा मारना चाहिये, यह आपको डिसाइड करना है हो! मैं नहीं बताऊंगा, आपको क्या करना है वह आप नक्की करो।

एक प्रकार से हम वही कर रहे हैं, अन्यों को सिखा-सिखा कर माथा मार रहे हैं –

क्या करें? लेकिन हम भी तो अभी रागी हैं, हमें भी ऐसा राग आता है। अरे! जहां वीतरागी ऐसे जो आचार्य, उपाध्याय और साधु हैं, उनको भी, लोगों को उपदेश देने का विचार आता है। इसलिये शास्त्र लिखते हैं, इसलिये उपदेश देते हैं। तो हम तो पूरे-पूरे रागी हैं और हमें ऐसा राग आवे, उसमें कौनसी नवाई है? लेकिन हम जानते हैं कि राग भी करने जैसा नहीं है, यह राग भी बंध का कारण है, लेकिन क्या करें? स्वरूप में लीनता नहीं हो रही है, अनुभव नहीं हो रहा है, तब तक ऐसा राग सहज आये बिना रहेगा नहीं, ख्याल में आया? तो क्या देखा हमने? यह ज्ञान जो है, वह विशेषरूप से सबको जाने और यह जो दर्शन गुण है, तो ऐसे ये अनंत अलग-अलग द्रव्य हैं, उनके अलग-अलग अनंत गुण हैं, उनकी अनंत अलग-अलग पर्यायें हैं, ऐसे भेद किये बिना सबका अवलोकन करें, इकट्ठा – उसमें कोई भेद नहीं। जैसे मान लो यहां इस हॉल में जितने लोग बैठे हैं, सबको इकट्ठा देखे। किसीको विशेष नहीं कि यह फलां-यह फलां ऐसा नहीं, बिलकुल ये सब हैं बस। यह सामान्य अवलोकन कहा जायेगा, वह दर्शन गुण का कार्य है और केवलदर्शन में पूरा-पूरा विश्व सामान्यरूप से अवलोकित होता है। इसलिये आत्मा को ज्ञातादृष्टा कहते हैं, ज्ञाता यानी जाननेवाला और दृष्टा यानी देखनेवाला। देखना कहने से हम क्या समझते हैं? आंखों से देख रहा है और कई भोले लोगों ने भगवान को भी आंखें लगा दी, ज्ञातादृष्टा हैं न!

भरतभाई माफ करजो हं, तमे तो जाणो छो आपणी जबान खोटी छे, साचुं छुपावता नथी अने खोटुं ॲक्सेप्ट करता नथी। तो ज्ञातादृष्टा यह स्वभाव है, किसका? भाई किसका है ज्ञातादृष्टा स्वभाव? *श्रोता: जीवद्रव्य का।* मेरा बोलो न भाई! हां जीव यानी कोई थर्ड पार्टी थोड़ी है? अरे! मैं स्वयं जीव हूं न भाई! हं, देखो हमारी दृष्टि बदलनी चाहिये। यह हम जब स्वाध्याय करते हैं, उससे हमें बार-बार... यह गुरुदेवश्री की महान देन है, मैं तो कहूंगा कि कोई भी विषय चलता हो, वहां से हटकर वे अपने स्वयं की तरफ आते हैं और हमें सिखाते हैं कि भाई तू बार-बार अपनी तरफ देख और वही साचा रास्ता है। हम जब तक अपनी तरफ नहीं मुड़ते हैं, बस पढ़ रहे हैं, पढ़ रहे हैं, याद कर ले। अभी आप रोज सुबह तो दर्शन करते ही होंगे? यहां देवलाली में? तो यहां बलभद्र कितने हैं? हमने देखा था कल, देखो! कितने बच्चों के देखो कितने फटाफट हाथ उठते हैं। लोगों को कुछ यहां चिंता नहीं है। हं बोलो? *श्रोता: आठ बलभद्र हैं।* आठ बलभद्र हैं, नाम बतायेंगे साहब आप? सुनना है आपको? बोलो, ऋतु? जोर से बोल, उठ-उठ, खड़ी हो जा, हं, जल्दी-

जल्दी बोल! *श्रोता: विजय, अचल, सुधर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नंदि, नंदिमित्र, रामचंद्र।* यह आपकी औरंगाबाद की है हो! बैठो, खाली औरंगाबाद-औरंगाबाद करके नहीं चलेगा। यह रंग जो है अपने-अपने में उतरना चाहिये, यह तो पोपट जैसा याद किया है, बुरा मत मानना।

लेकिन मैं भी इनके जैसा केवलज्ञान प्राप्त करके मुक्त होऊंगा ऐसा यहां आने के बाद हमें अंदेशा मिलता है। ऐसा हमारा उपयोग वहां जाना चाहिये कि हे भगवन्! आपने यह अवस्था कैसे प्राप्त की और इस अवस्था को मैं कब प्राप्त होऊं, ऐसी अंदर से तालावेली जगे। नहीं तो बस इतनी सुबह से लगे जय भगवान-जय भगवान, चलो-चलो! जोर-जोर से चिल्लाये और झांजरी-वांजरी लेकर भगवान के सामने गाना गाये। बिलकुल गाना चाहिये हो! पर वह गाते-गाते यह भी देखना चाहिये कि एक दिन ऐसा आवे कि मैं भी इनकी पंक्ति में पंच परमेष्ठि के स्वरूप में समाहित हो जाऊं। तो यह देखने का, यह सुनने का, यह दर्शन करने का, भक्ति करने का फल क्या है? यह तो पहले नक्की करो। हम तो दर्शन करते नहीं हैं, हम तो प्रदर्शन करते हैं, शिवशंकरजी! कौन देख रहा है मेरी तरफ? सुमनभाई? दो मिनट और अधिक और-और, झुक-झुक कर, क्यों साहब?

लोग समझे तो सही कितना विनयशील है यह! पंडित हो तो ऐसा, ऐसा लगना चाहिये न सबको। तो अभी क्या हो रहा है? ये ज्ञान-दर्शन दो गुण हैं, लेकिन यह दर्शन गुण के भी दो प्रकार से उल्लेख शास्त्रों में आते हैं। एक दर्शन गुण यानी सामान्य अवलोकन और दूसरा दर्शन यानी श्रद्धा गुण; क्या बताया? श्रद्धा गुण। मैं आपको प्रश्न पूछूंगा, ध्यान देना हं भैया यहां। बहन आप सम्यग्दृष्टि हो या मिथ्यादृष्टि, हां? आपको सम्यग्दर्शन है या मिथ्यादर्शन इतना तो बोलो? *श्रोता: सम्यग्दर्शन है।* सम्यग्दर्शन है, है न! औरंगाबाद की हो न तुम, हं बराबर। क्या बताया उन्होंने? सम्यग्दर्शन, बहुत अच्छा है। सम्यग्दर्शन का अर्थ क्या? मुझे सम्यक् श्रद्धा है और वह सम्यक् श्रद्धा जिसे है, वह सम्यग्दृष्टि है, ख्याल में आयी बात? अभी यहां क्या कह रहे हैं कि यह दर्शन जो है, वह श्रद्धा गुण की अपेक्षा से भी, यह शब्द इस्तेमाल किया जाता है यानी उस वर्ड का युटिलायझेशन दर्शन गुण के लिये भी किया जाता है, और श्रद्धा गुण के लिये भी किया जाता है। तो जहां जो जिस अपेक्षा से कथन किया हो, वहां वैसा समझना चाहिये।

जैसे भाई, यह जीव सम्यक्त्वी है, तो सम्यक्त्व यानी सम्यक्पना है, तो सम्यक्त्व में तीन बातें गर्भित होती हैं। सम्यक्त्व में तीन बातें आती हैं, आप जानती हैं, लताबेन? सम्यक्त्व में तीन बातें? आपको तो सम्यक्त्व प्राप्त हो गया होगा कि नहीं? नहीं? तो मिथ्यात्व में तीन बातें बताओ? उसमें क्या? अपना क्या? हम छोड़नेवाले थोड़े ही हैं? कौन बताना चाहेगा? हं बोलो बहन? *श्रोता: सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र।* बहुत अच्छा! सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र और मिथ्यात्व में किसको लेना? मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र। देखो, बात कितनी सीधी है। यह देखो जब 'त्व' कहते हैं न, तो त्व का अर्थ है 'पना'। सम्यक्त्व – सम्यक्पना। जब श्रद्धा गुण में सम्यक्त्व होता है तो उसीके साथ ज्ञान गुण में और चारित्र गुण में सम्यक्त्व ॲट अ टाइम होता है। शुरुआत तो तीनों की एक साथ होती है। अरे! तीन की क्या? जीव में जो अनंत गुण हैं उन अनंत गुणों में सम्यक्पना ॲट अ टाइम चालू होता है। देखो भाई, अभी हमने देखा था कि जीवद्रव्य में अनंत गुण हैं। तो अनंत गुण तो सम्यक्रूप से ही परिणमित हो रहे हैं, जयश्रीताई, और अनंत गुण तो मिथ्यारूप से परिणमित हो रहे हैं; इस श्रद्धा गुण में सम्यक्त्व आया, सम्यक्पना आया तो इसके साथ बाकी अनंत गुण जो मिथ्यारूप से जो परिणमित होते थे, वे सम्यक्रूप से परिणमित होने चालू होते हैं। लेकिन हम शास्त्रों में तीन की अपेक्षा से ही बात करते हैं।

जब सम्यक्त्व कहते हैं तो सम्यक्त्व में, सम्यग्दर्शन यानी श्रद्धा में सम्यक्त्व, सम्यग्ज्ञान-ज्ञान में सम्यक्त्व और सम्यक्चारित्र-चारित्र में सम्यक्त्व ये तीन बातें लेते हैं। देखो, यह हमने उत्तर में देखा था न, जीव द्रव्य में विशेष गुण कौनसे हैं? तो वहां दर्शन और ज्ञान जो बताया तो हमने दर्शन के दो प्रकार देखे थे। एक तो दर्शन यानी सामान्य अवलोकनरूप जो परिणमन होता है, वह दर्शन गुण, जो जीव के स्वभाव की बात है। तो हम कहेंगे कि जीव का स्वभाव कैसा है? तो आप कहेंगे की ज्ञातादृष्टा जो है तो वह स्वभाव की बात है तो ज्ञान-दर्शन जिसमें है तो वह दर्शन यानी दर्शन यह सामान्य अवलोकनरूप जो दर्शन नाम का गुण है उसके बारे में यहां कथन हो रहा है और आप मिथ्यदृष्टि हो यानी आप संसार में रुल रहे हो, तो आपको मिथ्यादर्शन है। तो वह दर्शन यानी श्रद्धा में आपका मिथ्यापना चल रहा है। आप सम्यग्दृष्टि हो तो उसके सम्यक्त्व गुण प्रकट हुआ है। गुण प्रकट नहीं हुआ है, वहां तो सम्यक्त्व पर्याय प्रकट हुयी है।

अब जरा पूछूं तो और थोड़ीसी तकलीफ होनेवाली है, यह सिद्धों को कितने गुण प्रकट होते हैं? अनिलजी आप जानते हैं? देखो-देखो, जैसे हमने देखा था, अरिहंतों के छियालीस गुण बताये हैं, हैं न, वैसे सिद्धों के कितने गुण प्रकट होकर वे मुक्त होते हैं? कोई जानता है? यहां तो बहुत सारे होने चाहिये। हां, जयश्रीताई उत्तर देगी अभी? नहीं! आप बम्बई थी तो अच्छा था, औरंगाबाद गयी तो गड़बड़ी चल रही है। हां आपकी बेटी बोलेगी। हं मोना! *श्रोता: आठ गुण।* आठ गुण हं। ये आठ गुण कौनसे हैं यह कौन बतायेगा अभी? हं-हं! बोलो-बोलो! बहुत अच्छा, कौन बोल रहे हैं अभी, हं बोलिये साहब? *श्रोता: अनंतज्ञान, अनंतदर्शन।* अनंतज्ञान, अनंतदर्शन। ठहरो-ठहरो, हं आगे? *श्रोता: अनंतसुख, अनंतवीर्य।* अनंतसुख, अनंतवीर्य। *श्रोता: अव्याबाधत्व, अवगाहनत्व, सूक्ष्मत्व और अगुरुलघुत्व।* तो फिर यहां चारित्र कहां आया? ये आपने अरिहंत के चार गुण बताये हैं। लेकिन इसमें सुनना भाईसाहब बहुत अच्छा! आपने बहुत अच्छा प्रयत्न किया है। देखो यहां सम्यक्त्व यानी श्रद्धा की बात बतायी और यह चारित्र की बात भी सुख में आयेगी तो इसतरह से हमने देखा है कि जब स्वभाव की बात आती है तो वहां दर्शन और ज्ञान गुण की बात होगी, तो वह सामान्य अवलोकनरूपी दर्शन की बात चल रही है और जब संसारमार्गी है या मोक्षमार्गी है ऐसी जब बात आयेगी यानी मिथ्यादर्शन या सम्यग्दर्शन की बात होगी, तो वहां समझना यह श्रद्धा गुण की अपेक्षा से यहां बात चल रही है।

यह दर्शन गुण के बारे में हमने देखा क्योंकि उसके आगे जो है न वह सम्यक्त्व जो लिखा है, उस सम्यक्त्व में दर्शन गुण की ही बात है और वह दर्शन गुण की जो बात है, वह कैसी है, क्या है? वह हम अभी इसके बाद का जो अपना दूसरा प्रवचन होगा, यानी वह कितने बजे है? सवा दस बजे, उसमें हम उसको जरूर देखेंगे। अभी किसी के कोई प्रश्न हो तो अभी डेढ़ मिनट, दो मिनट बाकी हैं, तो आप प्रश्न पूछ सकते हैं। किसीका तो प्रश्न ऐसा है कि आप कब बंद करनेवाले हो? तो फिर उसे बताऊं बस अभी दो मिनट में ही।

बोलो चौबीसों भगवान की जय!

३२. मिथ्यात्व

अभी पहले क्लास में हमने देखा था कि यह जो श्रद्धा गुण है, वह जीवद्रव्य का विशेष गुण है। इसलिये केवल जीवद्रव्य में ही पाया जायेगा, अन्य किसी द्रव्य में नहीं पाया जायेगा। इसका अर्थ यही होता है कि मिथ्यात्व जो होता है वह सिर्फ जीवद्रव्य में ही पाया जायेगा। अन्य कोई द्रव्य मिथ्यात्वी नहीं होगा, क्यों? अरे भाई! श्रद्धा गुण तो जीव का विशेष गुण है न? लेकिन देखो, मजे की बात कैसी है यह जो हमने आठ कर्म जो देखे हैं जिसको द्रव्यकर्म कहते हैं, इसमें मिथ्यात्व नाम का कर्म भी है हो, लेकिन मिथ्यात्व नामक जो कर्म है वह जीवद्रव्य के श्रद्धा गुण को घातने में यानी श्रद्धा गुण को सम्यक्‌रूप से परिणमित न होने में निमित्त है।

लेकिन उसकी बात यहां नहीं हो रही है। यहां हम किसकी बात देख रहे हैं? जीवद्रव्य के श्रद्धा गुण को दर्शन गुण जो कहा गया था उसकी बात हम यहां देख रहे हैं। तो हमने देखा, इस श्रद्धा गुण की कितनी पर्यायें हो सकती हैं? तो यहां द्रव्यानुयोग की अपेक्षा से उसकी दो पर्यायें कही जाती हैं; द्रव्यानुयोग की अपेक्षा से क्यों कह रहे हैं? क्योंकि द्रव्यानुयोग कहेगा श्रद्धा गुण या तो विभावरूप यानी मिथ्यात्वरूप से परिणमता है या तो स्वभावरूप यानी सम्यक्‌रूप से परिणमता है, ख्याल में आया? लेकिन करणानुयोग कहेगा इस श्रद्धा गुण की चार पर्यायें हैं – एक मिथ्यात्वरूप, एक सम्यक्त्वरूप, एक सासादनरूप और एक मिश्ररूप। ऐसे जीवों के परिणाम हैं लेकिन हम अधिक डिटेल में जायेंगे नहीं क्योंकि हमें तो बिलकुल बेसिक सिद्धान्तों को देखना है। लेकिन फिर भी अन्य अपेक्षा से हमें विचार करने में कोई बाधा तो नहीं होनी चाहिये, ख्याल में आता है? देखो! क्या कहा, यह श्रद्धा गुण जो है वह दो रूप से परिणमता है सम्यक्‌रूप से और मिथ्यारूप से। जिसको हम मिथ्यात्व कहते हैं, वह श्रद्धा गुण की अपेक्षा से उसका विपरीत-विभाव परिणमन है। आपको मालूम है, आपको जैन धर्म में किसीको गाली देनी है तो आप उसको मिथ्यात्वी कहो तो बहुत बड़ी गाली होती है।

वह तो जिनेन्द्र भगवान के ज्ञान में तो स्पष्टत: झलक रहा है कि अभी फिलहाल इस काल में कौन सम्यक्त्वी और कौन मिथ्यात्वी है। देखो कड़वा चिरायता समझते हो आप?

कडवुं करियातुं? हां, नहीं समझे? काडे चिराईत भी बोलते हैं उसको – वह एकदम कड़वा-कड़वा होता है। वह किसी थैली में रख दो और उस पर शक्कर लिख दो आप, तो वह मीठा हो जायेगा कि नहीं? जो पदार्थ स्वयं ओरिजिनलि कड़वा है उसको बॉक्स में बंद कर लो और ऊपर लिख दो-क्या लिखना है आपको? शक्कर, तो वह पदार्थ मीठा हो जायेगा कि नहीं? वैसे ही हम भले अपने को सम्यक्त्वी कहें, लेकिन अंदर तो अभी श्रद्धान सही है कि नहीं इस बात को हमें देखना है। क्यों? यह किसी विशेष व्यक्ति की बात मैं नहीं कर रहा हूं हो। हमें अपने को समझना है क्योंकि मैं कैसा हूं यह निर्णय मुझे स्वयं को ही होगा। अभी मैं तो कहता हूं यहां बैठे हुये कई लोग यहां सम्यक्त्वी होंगे लेकिन उनके कोई सींग-बींग आये हैं क्या? कि इधर मस्तिष्क पर कुछ लिख के लाया है क्या कि यह सम्यक्त्वी है, यह मिथ्यात्वी है ऐसा कुछ? अपने को स्वयं को निर्णय करना है कि हम सम्यक्त्वी है या नहीं और यहां सिर्फ श्रद्धा गुण के माध्यम से हम देखने जा रहे हैं। हमें डिसाइड करना है, नक्की करना है कि मैं पर्याय में कैसा हूं।

देखो, अभी आपके पास यह जो पर्चा दिया है न, इसके आखिर का पृष्ठ, जिसके ऊपर ३४ लिखा है, उस ३४ नंबर के पेज पर नीचे १४६ नंबर का प्रश्न है। इसके पहले यह जो मिथ्यात्व जो है उसके कितने भेद हो सकते हैं आप कुछ जानते हैं? हां, बोलो। *श्रोता: पांच।* पांच, कौनसे-कौनसे? *श्रोता: विपरीत, एकांत, विनय, संशय और अज्ञान।* विपरीत, एकांत, विनय, संशय और अज्ञान और भी कोई दूसरे प्रकार से डिव्हिजन हो सकती है क्या? भाइयों में कोई बतायेगा? यह तो एक प्रकार से उन्होंने, एक पद्धति से उसके पांच विभाजन बताये, बिलकुल सही हैं। आप बतायेंगे दूसरी पद्धति से कोई उसका विभाजन आपने सुना है कभी? हां, बोलो। *श्रोता: गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व।* गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व। यह श्रद्धा गुण का जो विपरीत कार्य हो रहा है उसकी बात हम देख रहे हैं, ख्याल में आया? तो यहां क्या कहा? गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व। तो अगृहीत मिथ्यात्व किसको कहना और गृहीत मिथ्यात्व किसको कहना? इसका थोड़ा बहुत स्वरूप हम देखने की कोशिश करेंगे।

पहले में पहले मिथ्यात्व यानी 'उलटी मान्यता'। तो यह उलटी मान्यता जो है वह किसके बारे में होगी – यह भी हमको नक्की करना है। अब इसके लिये यह जो ब्लॅक

बोर्ड है, इसको कोई व्हाइट बोर्ड कहेगा तो वह मिथ्यात्वी है कि नहीं? क्या कहते हैं भाईसाहब आप? ब्लॅक शर्टवाले यह ब्लॅक बोर्ड है या व्हाइट बोर्ड है? कोई कहता है यह व्हाइट बोर्ड है तो वह मिथ्यात्वी है कि नहीं? यह मेरा प्रश्न है। *श्रोता: है।* है, बहुत अच्छा। आप क्या कहते हैं साहब? *श्रोता: मिथ्यात्वी।* मिथ्यात्वी, बहुत अच्छा। प्रफुल्लभाई? *श्रोता: मिथ्यात्वी।* पक्का? *श्रोता: पक्का।* सवाईभाई बोले बिलकुल नहीं। आपस में अभी टकराव नहीं करना चाहिये, हमें मिलजुल कर रहना चाहिये, देखते हैं। तो इसलिये ३४ नंबर का पृष्ठ निकालें सबसे पिछला, उसमें क्या लिखा है, १४६ नंबर का प्रश्न है।

मिथ्यात्व किसे कहते हैं? **प्रयोजनभूत जीवादि सात तत्त्वों के अन्यथा श्रद्धान तथा अदेव (कुदेव) को देव मानना, अतत्त्व को तत्त्व मानना, अधर्म (कुधर्म) को धर्म मानना इत्यादि विपरीत श्रद्धान को मिथ्यात्व कहते हैं**। देखो, यहां क्या बात बताना चाहते हैं हम समझेंगे। इसमें दो बातें बतायी हैं – एक भूत की बात बतायी है, हां, कौनसे भूत की बात बतायी हैं? *श्रोता: प्रयोजनभूत।* प्रयोजनभूत। यह भूत-वूत कुछ नहीं है, घबराना मत, नहीं तो हाथ पैर ढीले हो जायेंगे। हां, प्रयोजनभूत यानी जिसका हमें प्रयोजन है ऐसे प्रयोजन सहितवाले जो तत्त्व हैं। वे कितने तत्त्व हैं? तो कहते हैं सात तत्त्व हैं। वे सात तत्त्व कौनसे होने चाहिये? जिनेन्द्र भगवान ने बताये हैं ऐसे सात तत्त्व – वे सात तत्त्व कैसे हैं? प्रयोजनभूत हैं। यानी हमारा प्रयोजन क्या है? तो हमें तो सुखी होना है; सुखी बनना यह हमारा प्रयोजन है और सुखी बनने के लिये हमें इन सात तत्त्वों का यथार्थ यानी ज्यों का त्यों श्रद्धान होना चाहिये।

ये सात तत्त्व जो हैं, सात तत्त्व कौनसे हैं यह अभी बताना पड़ेगा या मालूम हैं आप लोगों को? मालूम है, हां अनिलभाई आपके सामने बैठे हैं उनको ऐसे पूछना सात तत्त्व कौनसे हैं बतायें? सात तत्त्वों के नाम जानते हैं आप? नहीं जानते तो कोई चिंता नहीं, वही सीखने तो आये हैं हम यहां। कोई बात नहीं, अच्छा, आप बतायेंगे? *श्रोता: जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष।* बहुत अच्छा, देखो, आपने सही नाम बताये लेकिन आपको इसतरह से बोलना चाहिये क्योंकि देखा, आपने जीव कहा, तो यह जीवद्रव्य है, जीवतत्त्व है या जीवास्तिकाय है? आप किसके बारें में बोल रहे हैं? तो हमें ऐसा बोलना चाहिये, नाराज नहीं हो तो बताऊं, हो! जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व... क्योंकि आख़िर हमें तत्त्वों

के नाम बोलने हैं न? क्योंकि जीव, द्रव्यों में भी आता है, जीव, तत्त्वों में भी आता है और जीव, अस्तिकाय में भी आता है। तो इसतरह से जब हम देखते हैं, बोलते हैं तो टु द पॉइंट बोलेंगे तो अपना समय बच जाता है, सही बात ध्यान में आती है । तो जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, आस्रवतत्त्व, अभी सब में तत्त्व-तत्त्व लगाना और उन्होंने सातों के नाम सही बतायें। ये जो प्रयोजनभूत तत्त्व हैं, इन प्रयोजनभूत तत्त्वों का अन्यथा श्रद्धान जिनका है; अन्यथा यानी जैसा है वैसा न होते हुये उसका श्रद्धान दूसरा ही कोई होता है, गलत श्रद्धान होता है। वह कैसा-कैसा है? हम देखेंगे। 'अन्यथा' में बहुत सारी बातें गर्भित हैं। वह अभी आपने बताया; विनय है, संशय है, अज्ञान है, विपरीतता है आदि। तो ये जो सात तत्त्व हैं उनका जैसा स्वरूप है, उससे हमारी मान्यता विपरीत यानी अन्यथा होती है, तो उसे मिथ्यात्व कहते हैं।

यह मान्यता की बात है, यह श्रद्धा गुण का कार्य क्या है? पल्लवी आप जानती हैं श्रद्धा गुण का कार्य क्या है? हां जी, आप में से कोई? ज्ञान गुण का कार्य क्या है? बोलो-बोलो, ऐसा चुप बैठोगी तो खाना हजम नहीं होगा, जानना किसका कार्य है? *श्रोता: ज्ञान गुण का।* ज्ञान गुण का और श्रद्धा गुण का कार्य क्या है? *श्रोता: मानना-मानना।* मानना-मानना! क्या मानना? कि जैसा मै हूं ऐसा मानना, यह उसका स्वभावरूप कार्य है और जैसा मैं हूं ऐसा नहीं मानना, जैसे सात तत्त्व हैं वैसे नहीं मानना, जैसे देव, गुरु, शास्त्र हैं उससे कुछ अन्यथा मानना – वह मिथ्यात्व है, विपरीत मान्यता है, मिथ्या मान्यता है। तो यह हमारा ब्लॅक बोर्ड जो है उसको हमने सफ़ेद माना, सफ़ेद जाना, वह मान्यता में भूल नहीं है, ज्ञान में भूल है। क्यों भाई! बात ख्याल में आती है आपके? नहीं आती? देखो, जानने में और मानने में फर्क है न; जानने में यानी यह क्या है बोर्ड है या अन्यथा कुछ है? काला है या अन्यथा कुछ है? देखो-देखो, अभी हम यहां बैठे हैं बाहर से कोई व्यक्ति आता है तो हमको लगता है वह हमारा परिचित व्यक्ति है। तो हम उसको हाथ उठाकर हॅलो-हॅलो करे तो वह इधर-उधर देखता है कि किसको कर रहा है और हमारे ज्ञान में कोई संभ्रम रहा है कि वही है ऐसा हमें लगा और जैसा लगा वैसा हमने माना।

तो पहले तो जानने में दोष आया, फिर मानने में आया। होते हैं तो दोनों एक साथ में, लेकिन कथन में तो पहिली और दूसरी ऐसी बात आयेगी। तो यहां कह रहे हैं कि ये

जीवादि सात तत्त्व जो हैं और देव, गुरु, शास्त्र जो हैं उनके बारे में विपरीत श्रद्धा करना, यह मिथ्यात्व है। पेन्सिल उठाकर हमने पूछा यह क्या है? आपने कहा कि बॉलपेन है तो यह मान्यता का दोष नहीं, यह ज्ञान का दोष है, ज्ञान के क्षयोपशम में थोड़ी खामी है मतलब ज्ञान का उघाड़ कम है, हो सकता है न? अभी दूर से हमने आपसे पूछा, यह क्या लिखा है जरा पढ़ो तो साहब? तो आप नहीं पढ़ सकते तो आपके ज्ञान का क्षयोपशम कम है। ऐसा है तो आप कहेंगे कि जरा मोटे अक्षर होंगे तो पढ़ सकेंगे, हमें दूर से दिखायी नहीं दिया। कितने दूर से नहीं दिखायी देता है? पंद्रह फ़ीट से? और चन्द्रमा दिखता है क्या? तो दूर का दिखायी नहीं देता यह बात कहां से आयी? ख्याल में आया? उस समय हमारे ज्ञान का परिणमन ऐसा हुआ कि हमारे ज्ञान में नहीं आ रहा है, ख्याल में आया? अब यह थोड़ी डिटेल में बात है, आहिस्ता-आहिस्ता हम समझ जायेंगे।

अभी अपनी क्या बात हो रही है? यह फिर से देखो, प्रयोजनभूत जीवादि सात तत्त्वों में हमारा प्रयोजन क्या है? सुख की प्राप्ति करना। हम दिन-रात चौबीस घंटे सुख प्राप्त करने के लिये लालायित हो रहे हैं, तो हमारा सुख कहां है, इस बात का ही हमें पता नहीं है। सुख किसे कहते हैं यह भी हमें मालूम नहीं है इसलिये हम सुखी नहीं हो रहे हैं। हम सुख तो पांच इन्द्रियों के माध्यम से प्राप्त करने की कोशिश कर रहे हैं। तो जहां सुख होगा वहीं से वह मिलेगा कि अन्यथा जहां नहीं है वहां से मिलेगा? हां साहब, आप क्या कहते हैं? *श्रोता: जहां है वहां।* वह सुख कहां है? कहां लिखा है? आपने बताया कि सुख जहां होगा वहीं से मिलेगा। कहां है? तो आप कहते हैं, आत्मा में है। हम पूछते हैं आपको प्रूव्ह करना है, नहीं प्रूव्ह करोगे! मैं बताऊंगा घबराना मत। पहला पृष्ठ निकालना। प्रत्येक द्रव्य में कौन-कौनसे विशेष गुण हैं? सुनना ज़रा, जीवद्रव्य में चैतन्य, सम्यक्त्व, चारित्र और उसके बाद क्या लिखा है? *श्रोता: सुख।* हां सुख। और वह सुख कैसा गुण है? विशेष गुण है।

विशेष गुण किसे कहते हैं? जो अपने-अपने द्रव्य में रहता है। अन्यथा, इधर-उधर नहीं रहता। तो सुख कहां होगा? जीवद्रव्य में। हम कहां ढूंढ़ते हैं? जहां नहीं है, वहां से कैसे प्राप्त होगा? देखो भाई! जो कुछ है वह यहां लिखा है, जो हमने आपको पढ़ाया है। एक नहीं, दो बार आपसे वांचन कराया है कि जीवद्रव्य में चैतन्य अर्थात् ज्ञान-दर्शन, सुख, चारित्र, क्रियावतीशक्ति आदि गुण हैं। हम शास्त्र का अभ्यास तो करना नहीं चाहते, कौन

फालतू टाइम गंवायेगा, क्यों भाई, इससे कुछ फ़ायदा होनेवाला है क्या? उससे अच्छा दुकान पर जाकर बैठें, धंधे पर बैठें, तो दस-पांच लाख रुपया एक दिन में ज्यादा मिल जावे। तो यहां बैठ कर क्या मिलना है? अरे! तूने तो आज तक अनंत बार, बड़े-बड़े राजा बनते हुये जन्म लिया है; यानी अनंत बार तू राजा बना है, जिसकी एक दिन की आमदनी समझो करोड़ों-अब्जों में होगी। अभी यह अंबानी है न? गुरुदेवश्री की भाषा में बोलना हो तो 'हुं वळ्युं?' हें बेन, हुं वळ्युं अेटले समझ्या के नहीं ? पैसा बहुत हो गया अेनाथी हुं वळ्युं। यह काठियावाड़ी भाषा है यानी उससे क्या प्राप्त हुआ तुझे? या तो वह तुझे छोड़कर जायेगा या तो तू उसे छोड़कर जानेवाला है, साथ में कोई ले जानेवाला है नहीं।

यहां तो यह बताते हैं कि जहां सुख है वहां वह कभी देखना ही नहीं चाहते, रत्तीभर भी हमें विश्वास नहीं है। कल बात आयी थी न, फिर से आज दोहराते हैं कि कोई बीमार पड़ गया, मान लो, हमारे प्रफुल्लभाई बीमार पड़ गये। उनको ही बीमार करते हैं न, हमारा क्या जाता है। वे डॉक्टर के पास गये, तो ब्लड शुगर चेक की, तो कितनी है? तो बोले फलां-फलां इतनी है। अरे बापरे! २५० बहुत ख़राब! क्या करूं, क्या करूं? जीभ बाहर निकालो; जीभ बाहर निकाली। आंख बंद करो; आंख बंद कर ली। कान खुले करो; कान खुले कर लिये। डॉक्टर ने जो-जो करने को कहा सब कर लिया – यह मत खाओ, वह मत खाओ, सुबह को उठो, ऐसा करो, वैसा करो जो बोलना है वह बोला और हमें उनका... तो आपने देखी है आपकी ब्लड शुगर? अरे! उस डॉक्टर ने भी जांची नहीं उसके पॅथॉलॉजिस्ट का जो कोई होगा, क्या बोलते है उसको हां? असिस्टंट उसने जांची है और डॉक्टर तो खाली सही करता है और हमने उस पर विश्वास किया और यहां जिनेन्द्र भगवान कहते हैं कि सुख तेरेमें है, तो क्या करें साहब? आप यहां आये हैं, आप भी बोल रहे हैं, पुस्तक में भी छपा है तो मानना पड़ता है।

हमें तो रत्तीभर भी विश्वास नहीं है जिनेन्द्र भगवान के ऊपर, जो सर्वज्ञ हैं, वीतरागी हैं; हमें उनके ऊपर भरोसा नहीं है। देखो, हमें इस वास्तविकता का पता चल जाये तो हम अन्यथा कहीं सुख ढूंढ़ने का प्रयत्न ही नहीं करेंगे न? हम तो वहीं जायेंगे जहां से वह प्राप्त होता है, इसलिये शास्त्र पढ़ना वह बहुत कार्यकारी है, ख्याल में आया? तो अभी हमने क्या देखा कि हमारा प्रयोजन कौनसा है? तो हमें सुखी होना है। सुखी होना है तो जहां सुख है

वहां से प्राप्त करें यह मैं आपको बताना चाहता हूं। तो यह प्रयोजनभूत तत्त्व समझना किसलिये? कि याद करके, परीक्षा देकर, हमने १००% मार्क लाये। हुं वळ्युं? यानी क्या प्राप्त हुआ? अरे! प्रभु यह सब कुछ ज्ञान का परिणमन हो रहा है, वह मेरेमें, मेरेसे हो रहा है – यह जब तक हम नहीं जानेंगे तब तक कुछ फ़ायदा नहीं है। देखो, एक मज़े की बात बताता हूं आपको, यह बोर्ड देखो, यह कौनसा रंग है? कौन बताना चाहेगा? हां, बोलो कविता। *श्रोता: काला।* काला, तो बोर्ड देखने के बाद तुम्हें ज्ञान हुआ न कि यह काला है। हां, क्या कहती है पल्लवी तू? जब इसे देखा तब ज्ञान हुआ न कि यह काला है करके तू बताती है? मम्मी को नहीं मुझे बता। मोना तू बता न? यह देखने से ज्ञान हुआ कि नहीं हुआ? जोर से बोल। *श्रोता: नहीं।* नहीं। अब देखो, आपको अचरज लगेगा क्या बात कर रहे हैं? जब तक हमने बोर्ड को देखा ही नहीं था तो हमको मालूम नहीं था कि वह काला है या सफेद है; जब आपने दिखाया तब पता लगा कि यह काला है। तो हमने क्या माना ज्ञेय से ज्ञान होता है। ज्ञेय यानी जो जानने में आ रहा है पदार्थ, उस ज्ञेय से ज्ञान होता है। तो तूने अपने स्वभाव का खून किया, मर्डर किया। तू इतना गया बीता है कि तुझे जानने के लिये सामने कोई वस्तु हो तो ही तू जानेगा?

अरे! ज्ञान तो स्वतंत्र है। अपना परिणमन अपने से हो रहा है यह तू नहीं मानता है। मैं आपसे पूछता हूं केवलज्ञानी जिनेन्द्र भगवान जो हैं - वे एक जगह बैठे हैं, तो अभी आपके गांव में जो कुछ बातें चल रही हैं वे जानते होंगे कि नहीं? अरे! केवल आज की नहीं, अनंतकाल पहले भी जो कुछ बातें हुयी थी और अनंतकाल के बाद भी भविष्य में जो कुछ बातें होनेवाली हैं, वे वहां तक जाकर देखकर आते हैं क्या? क्यों? जिसने अपने स्वरूप को पूर्णत: जाना है, वह विश्व की सारी बातों को सहजरूप से जानेगा। यानी वहां ज्ञेय है इसलिये कोई जान रहा है, यह बात कहां से आयी? क्योंकि ज्ञेय तो अनादि से हैं भाई। तो ज्ञान क्यों नहीं हुआ? देखो, ये ऐसी एक-एक बातें हैं कि मैं तो कहूंगा कि पैर के नीचे की ज़मीन खिसक जाये ऐसे एक-एक सिद्धान्त हैं अपने यहां। हमारी मान्यता तो ऐसी है कि चश्मा पहनने से मुझे ज्ञान हो गया, चश्मे से ज्ञान हुआ तो चश्मे से ज्ञान होता है कि नहीं? तो-तो हमने ज्ञान को परावलंबी माना।

तो तेरी स्वयं की जो योग्यता है जाननेरूप, तो अभी यह काला है वह देखा हमने

थोड़ी देर पहले देखा, लेकिन तेरे ज्ञान का परिणमन – यह काला है ऐसा जाननेरूप होना था – उस समय यह तुम्हारे सामने निमित्तरूप से आया। तो हमने माना कि निमित्त से कार्य हुआ। देखो, एक-एक बात कैसे एक दूसरे से संलग्न है। इन सब बातों का खुलासा मैं आपसे करके ही रहूंगा लेकिन अभी तो आज दूसरा लेक्चर है; अभी तो अट्ठाईस लेक्चर्स हैं मेरे हाथ में लेकिन आना आपका कार्य है। आप ही नहीं आओगे, तो मैं किसको समझाऊंगा? हां, तो क्या बताया जीवादि प्रयोजनभूत जो सात तत्त्व हैं उनका अन्यथा श्रद्धान यानी जीव को जीव नहीं मानकर, अजीव को जीव मानना, आस्रव को जीव मानना – यह सारा अन्यथा श्रद्धान है। ये सात तत्त्व सीखेंगे तब उसकी बात मैं बोलूंगा और दूसरी बात क्या है? अदेव; यह अदेव को हम समझ सकते हैं या नहीं समझ सकते? और कुदेव? तो अदेव और कुदेव में क्या फर्क है भाई? आप जानते हैं अदेव और कुदेव किसको कहेंगे?

लोगों को लगता है लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका! वह क्या सीखना, हमने तो समयसार सात दिन में पढ़ डाला! नहीं समझे आप? समयसार पढ़ डाला यानी इधर से उधर पलटा दिया। हां पल्लवी, आप बतायेगी अदेव किसको कहना और कुदेव किसको कहना? *श्रोता: गाय को देव मानते हैं वह गाय अदेव है और रागी द्वेषी अन्यमती के देव, वे कुदेव हैं।* ठीक है, आपका प्रयत्न बहुत अच्छा है। आपको ऐसा कहना है कि गाय को देव मानना वह अदेव को देव माना। गाय को देव नहीं मानते? गाय के पेट में तैंतीस करोड़ देव हैं ऐसा मानते हैं न! कोई बात नहीं, देखो मैं बताता हूं। अभी कुदेव किसको कहना कि जो सच्चे देव नहीं हैं। फॉर-एक्झाम्पल, अन्यमती जो मानते हैं फलां-फलां यह देव, वह देव, वे कुदेव हैं। क्यों कुदेव हैं साहब? क्या उनके देव, देव नहीं हैं क्या? तुम्हारे अकेले के देव, देव होते हैं क्या? और उन्होंने उनको देव माना तो तुम्हारे पेट में क्यों दु:ख रहा है? ठीक है साहब आपको कुछ बताना है? यही या और कुछ? *श्रोता: अन्य जो देव हैं जो परिग्रह सहित हैं।* परिग्रह सहित जो हैं वे कौन हैं? *श्रोता: कुदेव।* कुदेव? अच्छा, वही तो मैं कह रहा हूं आपसे कि आप जो कह रहें है कि अन्य के देव, देव नहीं है क्या? आपके ही देव, देव है ऐसा क्यों मानते हो? देखो, समताबुद्धि रखनी चाहिये; समाज में झगड़ा नहीं करना चाहिये, क्यों आप एक दूसरे से लड़ रहे हैं? क्यों झगड़ रहे हो? ऐसा कहने से तुम्हारा कल्याण होनेवाला है या अकल्याण होनेवाला है – यह आपको नक्की करना है हो। मैं

बोलता हूं इसलिये मत सुनना हो, तुम विचार करो न। अभी मेरे हिसाब से यहां जितने लोग आये हैं न, सबके बुद्धि जिसको हम कहते हैं, साथ में लाये हो या कहीं गिरवी रख कर आये हो? गिरवी समझते हो कि नहीं? मॉर्गेज।

तो अब हम सोच सकते हैं कि नहीं, यहां तो कह रहे हैं **हम देव उन्हींको कहेंगे कि जो वीतरागी और सर्वज्ञ हैं**। जैनदर्शन में तो ऐसी विशेषता है कि जो कोई देव बनता है वह नियम से पहले वीतरागी होता है और बाद में सर्वज्ञ होता है। शास्त्रीय भाषा में बोलना हो तो बारहवें गुणस्थान में परिपूर्ण वीतरागता होती है और तेरहवें गुणस्थान में सर्वज्ञता होती है। जरा सोचो तो सही कि अगर कोई पहले सर्वज्ञ हो जाये और बाद में वीतरागी हो जाये, ऐसा हो जाये तो क्या होगा? अरे भैया! वह सब कुछ जानेगा। समझ लो, आप वहां बैठे सभी सर्वज्ञ हो गये और मैं यहां समझा रहा हूं; वह आपको ज्ञान में आया कि यह हमारे जैसा बोल रहा है तो आपको कितना गुस्सा आयेगा। नरक में इतनी मार काट हो रही है, इतने बूचड़खाने, क्या बोलते हैं आप कसाईखाने चल रहे हैं, केवली जानते होंगे कि नहीं? तो उनको क्षोभ होगा कि नहीं? द्वेष होगा कि नहीं? इतने अनंत जीव एकसाथ मरते हैं। मालूम है अनंत जीव एक साथ मरते हैं? कभी मारे थे तुमने? अरे! जो-जो आलू, प्याज, लहसुन, मूली, गाजर आदि कंदमूल जो खाते हैं, वह एक कौर में तो अनंत-अनंत जीवों को, क्या, स्वाहा। अरे! सूई के नोक के ऊपर आलू का जितना टुकड़ा आता है उसमें अनंत-अनंत जीव हैं तो एक आलू में कितने होंगे? ऐसे एक किलो में कितने होंगे? और होटल में कितने किलो आलू के वड़े बने, जो-जो बने, जो-जो बनता हो!

पूरे विश्व में एक साथ कितने बनते हैं? और हम तो मानते हैं कि ऐसा कोई है जो सबका लेखा-जोखा रखता है – पाप-पुण्य का लेखा-जोखा! अरे अनंत जीव हैं उनका हिसाब कौन रखेगा? यह सब पोपडमबाजी है भाई, ख्याल में आया? तो यहां क्या कह रहे हैं? यहां जो बात चल रही है कि जो वीतरागी होने के पहले अगर वह सर्वज्ञ हो जायें तो उसे दुनिया में जो कुछ चल रहा है उसके प्रति राग-द्वेष हुये बिना रहेंगे नहीं। तो वह अनंतसुखी कैसे रहेगा? क्योंकि जिसके अनंतज्ञान हुआ है, उसके साथ में अनंतदर्शन, अनंतसुख और अनंतवीर्य ये चारों ही बातें होती हैं। तो वह अनंतसुखी कैसा जो क्षण-क्षण में ऐसे क्षोभ की बातें जानता हो और वीतरागी न हो, समझ में आया?

इसलिये सहजपने से जीव पहले वीतरागी होता है और बाद में सर्वज्ञ होता है और जो वीतरागी नहीं है वह क्या-क्या करेगा? कपडा पहनेगा, अलंकार पहनेगा, शस्त्र-अस्त्र-वस्त्र सब रखेगा। हम किसीसे पूछे, क्यों साहब, आप क्यों रखते हैं ये सब? ये आप शस्त्र वगैरह रखे हैं, वह आपने देखा होगा हाथ में ऐसा त्रिशूल है, ऐसा मारता है, यह कर रहा है, वह कर रहा है, जो कुछ हो रहा है; तो आप समझते नहीं हो; हम अपने लिये थोड़े ही रख रहे हैं? हम तो हमारे भक्तों की..... *श्रोता: भक्तों को सुरक्षित रखते हैं।* हमारे भक्तों की सुरक्षा कर रहे हैं, तो यह भक्तों की सुरक्षा करना यह वीतरागता का लक्षण है कि नहीं? मुझे मालूम नहीं, आप बताओ। अभी राग-द्वेष बाकी हैं कि निकल गये? दूसरों की यानी भक्तों की रक्षा करने का भाव यह वीतरागता का लक्षण है कि सरागता का लक्षण है? *श्रोता: सरागता। दूसरा श्रोता: सरागता।* हां भाई, बोलो-बोलो। *श्रोता: सरागता।* तुम बोलोगे तो नींद से हटोगे और जो सरागी है वह सर्वज्ञ हो सकेगा कि नहीं? अपनी बात चल रही थी कि कुदेव किसको कहना? आपने परिग्रह बताया न, किसने बताया? किसी भाई ने, तो परिग्रह के दो भेद हैं मालूम है आपको? एक अंतरंग परिग्रह, दूसरा बहिरंग परिग्रह।

तो अंतरंग परिग्रह में पहले में पहले तो मिथ्यात्व है और उसके बाद चार कषायों की बात आती है और नौ-नोकषाय इसतरह वे चौदह अंतरंग परिग्रह हैं और जिनके बाह्य-बहिरंग परिग्रह होते हैं उनको अंतरंग परिग्रह होंगे ही होंगे। यह देव की और मुनियों की अपेक्षा से हम कह रहे हैं। ख्याल में आया? तो यह बाह्य परिग्रह भी आप जानते हैं – सोना-चांदी, वस्त्र-बर्तन, दास-दासी, इत्यादि। तो इसतरह से वे जो परिग्रह रखते हैं, वे वीतरागी होंगे कि नहीं? तो वीतरागी नहीं हैं तो सर्वज्ञ भी नहीं हैं, तो उनको हम देव ही नहीं कह सकते। तो वे होते हैं कुदेव, कुदेव की बात चली थी न अपनी। तो अब ये अदेव कौन होते हैं? मैं आपसे पूछता हूं हम किसीको वंदन करते हैं या नमस्कार करते हैं, बोलो न, तो किसे करेंगे? अपने से कोई श्रेष्ठ होगा उसे करेंगे या अपने से कोई कनिष्ठ होगा यानी हीन होगा, हम से कुछ कम होगा, उसको करते हैं?

आप कॉलेज में जाते थे तो सामने प्रिन्सिपल आये तो उन्हें नमस्कार करते थे या जो कॉलेज का मेहतर होता है उसको करते थे? अपने से श्रेष्ठों को करते थे, यह बात निश्चित हो गयी न? जो हमारे से श्रेष्ठ हैं, तो हम-आप कितने इन्द्रियवाले जीव हैं साहब?

आप कितने इन्द्रियवाले जीव हैं? *श्रोता: पांच इन्द्रिय।* हां, पांच इन्द्रियवाले, तो पांच इन्द्रियवाला श्रेष्ठ है या एक इन्द्रियवाला श्रेष्ठ है? *श्रोता: पांच इन्द्रिय।* पंचेन्द्रिय। हम पर्याय की अपेक्षा देख रहे हैं न, स्वभाव की अपेक्षा तो सभी एक समान हैं। तो हम पंचेन्द्रिय जीव हैं, मनसहित जीव हैं और हम एकेन्द्रिय को नमस्कार करें तो कहां तक शोभादायक है? देखो-देखो, हम जानते हैं कि ऐसी कोई विशिष्ट जमात है, वे अग्नि को ही पूजते हैं, अग्निकायिक जीव हैं वे कितने इन्द्रियवाले हैं यह तो आपको मालूम है कि नहीं? आप नहीं जानती, अग्निकायिक जीव? कितनी इन्द्रियवाला जीव है वह? *श्रोता: एकेन्द्रिय।* एकेन्द्रिय और हम अग्नि को पूजें? अरे! अग्नि को तो छोड़ो, वनस्पति को भी पूजते हैं। यह जो वटपूर्णिमा आती है तो हाथ में धागा लेकर स्त्रियां क्या करती है? तो वड़ के झाड़ को धागा बांधकर ऐसा-ऐसा गोल-गोल घूमती हैं, क्यों? यही पति मुझे कम से कम सात जन्म तो मिले इसलिये और वह धागा किससे बांधते हैं? एकेन्द्रिय से; तो एकेन्द्रिय जीव के बुद्धि का दिवाला निकला है या जो पूजता है उस पंचेन्द्रिय जीव के बुद्धि का? ये सारे कैसे हो गये? अदेव जो देव होने के लायक नहीं हैं और यह जो कुदेव हैं, वे भी देव हैं ही नहीं लेकिन फिर भी कम से कम पंचेन्द्रिय तो हैं। जल को पूजते हैं भाई! मैं आपसे पूछूंगा आपके यहां इतने लोग आये हैं, किनके घर में टीव्ही नहीं है, हाथ उठाये? हां... अच्छा दो हैं – एक वीर और एक महावीर – इनके घर पर टीव्ही नहीं हैं। मैं यह कहना चाहता हूं वह टीव्ही में आता है न, वह कोई ऐसा कुंभमेला, वहां नदी के अंदर लाखों-करोड़ों लोग जाते हैं, नहाते हैं और ऐसा उसीका पानी उसीको अर्पण कर देते हैं। वे जल को पूजते हैं।

देखो, कैसी विचित्रता है। कोई वायु को पूजते हैं, अब कौनसा रह गया? जमीन को भी पूजते हैं; आपके पास जमीन है – आपको कोई संकुल खड़ा करना है, बिल्डिंग बांधनी है, हॉस्पिटल बांधना है, जो कुछ करना है; तो पहले भूमिपूजन। क्यों भाई? हमारी बिल्डिंग नहीं गिरे इसलिये। देखो, वास्तुपूजन करते हैं कि नहीं साहब आप? आप तो करते हैं? क्यों? हमारे घर में शांति रहे, शांति रहे। शांति तो तेरे मन में है, शांति तो तेरे अंदर है और हम तो वास्तुशास्त्रज्ञ को बुलाते हैं – वह कहेगा यह खिड़की यहां नहीं चाहिये, वहां चाहिये; यह तेरा रसोईघर इधर नहीं उधर चाहिये; इधर नहीं उधर चाहिये; तेरा दिमाग घुमायेगा, तेरेसे पैसा ऐंठ लेगा और वह तुझे जैसा नचायेगा वैसा तू नाचेगा? क्यों? मैंने तो सुना है हो! फलां-फलां गांव में तो ऐसे बहुत किस्से हुये हैं।

ये एकेन्द्रियों को पूजना... ये सारे अदेव में आते हैं भाई और यह पूजनेवाला कैसा है? बिन इन्द्रियवाला बिनडोक है। यह क्या कहा? अदेव! देखो यहां क्या लिखा है प्रयोजनभूत जीवादि सात तत्त्वों के अन्यथा श्रद्धान तथा अदेव या कुदेव को देव मानना। अभी अदेव और कुदेव में डिफरन्स थोड़ा-बहुत तो आपको ख्याल में आया होगा, तो आगे बढ़ते हैं और अतत्त्व को तत्त्व मानना। अतत्त्व यानी जो सात तत्त्व हैं उनको छोड़कर अरे! अन्यमतियों में कोई पांच तत्त्व कहता है, कोई बीस तत्त्व कहता है, कोई कितने कहता है, कोई कुछ कहता है। पांच तत्त्व माननेवाले को आप जानते हैं या नहीं? आप जानते हैं? बोलो-बोलो। *श्रोता: पंच महाभूत।* हां पंच महाभूत। ये पांच महाभूतों से क्या हुआ? यह जीव निर्माण हुआ। अरे वाह! पुद्गल से जीव निर्माण होता है। देखो, कैसी मान्यता है। हां तो यहां कहते हैं, जो अतत्त्व हैं यानी जो तत्त्व हैं ही नहीं, उसको तत्त्व मानना यह मिथ्यात्व है। जो तत्त्व है उसको अतत्त्व या जो अतत्त्व है उसको तत्त्व मानना। इसी बात को मोक्षमार्गप्रकाशक में पंडित टोडरमलजी साहब ने ऐसा लिखा है **जैसा वस्तु का स्वरूप है वैसा नहीं मानना और जैसा वस्तुस्वरूप नहीं है वैसा मानना।**

वही बात यहां लिखी है। तत्त्व को अतत्त्व और अतत्त्व को तत्त्व मानना यह क्या है? मिथ्यात्व है और अधर्म को और कुधर्म को धर्म मानना इसे आप क्या कहेंगे? यह अधर्म को धर्म! देखो, ऐसी बात है कि कई लोग तो ऐसे हमें मिलेंगे ही और ऐसे कई अन्य मत हैं कि जो पुण्य से धर्म होना मानते हैं। पुण्य करें और धर्म हो जाये, लेकिन हमने तो पाप करने से धर्म माननेवालों को भी देखा है। आपने देखा है कभी? बोलो-बोलो। हां, आप बोलिये। *श्रोता: जो वध करता है न, बलि चढ़ाते हैं।* हां, आपका कहना है कि यह जो बलि आदि चढ़ाते हैं, और उससे धर्म होना मानते हैं। हम एक बार इत्तेफ़ाक़ से दुबई गये थे, प्रवचन के लिये, पंद्रह दिन के लिये। तो वहां हम दसवें माले पर रहते थे। तो वह कोई पर्टिक्युलर उन लोगों का दिन था, रोड पर स्टेशन वॅगन गाड़ियों की लाइन लगी हुयी थी मैंने कहा क्या बात है आज? यहां तो कोई पब्लिक दिखती तो नहीं है और गाड़ियां तो बहुत दिख रही हैं। क्या बात है? तो वे भाई बोले आप समझ जाओगे, दस-पंद्रह मिनट रुक जाओ तो आपको समझ में आयेगा। थोड़ी देर से देखा तो सारी गाड़ियां पर्टिक्युलर जगह पर जाकर वापिस घूमकर आ रही थी; उस समय सबके अंदर एक-एक बकरा था। अब आप आगे की बातें समझ ही गये होंगे। हां उस दिन वे बकरें को काटेंगे और जो कुछ

करेंगे और उसमें धर्म मानेंगे। यह क्या है? अधर्म है और कुधर्म यानी अशुभभावों से धर्म मानना – यह क्या है? अन्यथा श्रद्धान है।

देखो, कैसी एक-एक बातें हैं यानी शुभ से धर्म मानना और अशुभ से धर्म मानना दोनों ही गलत हैं क्योंकि शुभभाव करने से बंध होगा कि नहीं होगा? कौनसा बंध होगा? शुभबंध होगा और पाप क्रिया करने से? *श्रोता: पापबंध होगा।* पापबंध होगा तो दोनों से बंध होगा या आपकी अबंध दशा होगी? *श्रोता: बंध ही होगा।* हां जी, बंध ही होगा और हमें बंध चालू रखना है या बंध रहित – मुक्त होना है? यह तो नक्की करो। अगर हमें अनंत सुख की प्राप्ति करनी है तो अनंतसुख की जो अवस्था है वह कौनसी है? *श्रोता: वीतरागता। दूसरा श्रोता: मुक्त अवस्था।* मुक्त अवस्था – मोक्ष अवस्था, ख्याल में आया? और जो प्राप्त करनी है, तो उसके लिये हम करते हैं कुछ और तथा चाहते हैं कुछ और। हां, गुरुदेवश्री तो कितनी बार बताते थे कि 'राग करता करता वीतरागता थाय अे त्रण काळमां होइ शके नहीं'। मैं गुजराती बोलता हूं, यह तो आप हिंदी में समझ सकते हो कि राग करते-करते वीतरागता हो जाये ऐसी बात कभी तीन काल में शक्य नहीं है, पॉसिबल ही नहीं है क्योंकि हम बीज बोते हैं नींबू का और चाहते हैं फल आम का। मिलेगा कि नहीं वह? नहीं मिलेगा? करते कुछ हैं, चाहते कुछ हैं और फल मिलता है कुछ तीसरा ही।

तो हमें यह सब सीखने के पीछे का प्रयोजन क्या है? कि पहले में पहले तो हमारे श्रद्धा गुण में जो विपरीतता चल रही है, उस विपरीतता को हम पहचाने। अभी देखो, हमने क्या देखा था, आपको यहां पांच प्रकार बताये थे, वैसे मैं आपको दो प्रकार बताऊंगा – एक गृहीत मिथ्यात्व और एक अगृहीत मिथ्यात्व। अब गृहीत मिथ्यात्व किसको कहना और अगृहीत मिथ्यात्व किसको कहना? उसको हम पहले से देखने की कोशिश करेंगे। अभी यहां जो बातें बतायी हैं, क्या है कि यह जीव सात तत्त्वों के बारे में अन्यथा श्रद्धान करता है यानी किसी जीव को यह सिखाना नहीं पड़ता है कि तू शरीर है।

वह तो अनादि से मैं शरीररूप ही हूं, यानी मैं जीव हूं तो जीव के बदले में मैंने शरीर यानी अजीव तत्त्व को मैं हूं ऐसा माना, यह क्या है? अगृहीत मिथ्यात्व है। यह सीखाना नहीं पड़ता है, यह सिखानेवाले कौन हैं? तो कहते हैं कुगुरु हैं। यह कुगुरु कहां ढूंढ़ने जाये साहब? हां जी, शिवशंकरजी, कुगुरु कहां है, देखना है आपको? नहीं भैया, आईने में

देखो – दिख जावे। देखो, हमारे घर में बालक पैदा होता है तो हम उसको सिखाते हैं तेरी आंखें कहां हैं? वह ऐसा-ऐसा करके बताता है; तेरी नाक कहां है? नाक यहां है, कान कहां है? तो इधर है; फोटो भी दिखाते हैं कि यह तू है, तो तुम शरीररूप हो यह माता-पिता उसको सिखाते हैं या बाहर की कोई ट्यूशन रखनी पड़ती है हमको कि भाई, इसको ऐसा सिखाओ, ऐसा सिखाओ। अरे! घर-घर में कुगुरु बैठे हैं। हम तो कुगुरु कहते ही कहां है-कहां है, अच्छा-अच्छा, ऐसा अन्यत्र ढूंढ़ने की कोशिश करते हैं। लेकिन हम स्वयं इस बच्चे को तू जीव है ऐसा कितने जन सिखाते हैं बताओ? अरे! हमें खुद को ही मालूम नहीं तो बच्चे को क्या सिखायेंगे? क्यों दिव्याबहन, बात असल है न? कोई मिलावट नहीं है न?

ये जो बातें हैं कि कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्र घर-घर में बसे हुये हैं, ये कहीं बाहर ढूंढ़ने नहीं पड़ते। लेकिन हमारी आदत ऐसी है कुदेव की बात करेंगे तो फिर भी हम टॉलरन्ट हैं – टॉलरन्ट हैं यानी हम सहन करेंगे परंतु कोई कुगुरु की बात करें तो हमारे कान ऐसे खड़े हो जाते हैं, क्या बात कर रहे हो? कौन है? यह कैसे है? ये सारे लोग मुनि विरोधी, साधु विरोधी हैं! अरे! भैया, तू क्या कर रहा है? यहां तो बताना है कि ये बातें जो बता रहें हैं वे वीतरागी संत बता रहें हैं। यहां जो बात हमारे तक पहुंची है यह जो जिनेन्द्र भगवान ने, महावीर भगवान ने बतायी है। उनकी तो केवल ॐ ऐसी दिव्यध्वनि खिरी तो वह ॐकार का अर्थ जो होता है वह गणधरों ने झेला; गणधरों ने समझा और उन्होंने द्वादशांग की रचना करी। आप जानते हैं जो केवलज्ञानी हैं या जिन्हें हम सर्वज्ञ कहते हैं उनके ज्ञान में जो कुछ आता है, उसका अनंतवां भाग उनकी वाणी में आता है – दिव्यध्वनि में – ॐकारध्वनि में और जितनी वाणी में बात आती है उसका अनंतवां भाग गणधरों के ज्ञान में आता है और जितना उनके ज्ञान में आता है, उसका अनंतवां भाग द्वादशांग की रचना में आता है।

आप बोलेंगे ऐसा कैसा हो सकता है, पॉसिबल ही नहीं है। मैं आपसे पूछूंगा, छोटों को पूछने से मजा नहीं है। आप लोग घी खाते हैं कि नहीं? हां साहब, आप घी खाते हैं क्या? पक्का? तो घी का स्वाद कैसा होता है हमें बताओ? आप खाकर अनुभव करते हैं न उसका। हां, घी का स्वाद कैसा होता है? हां, बता नहीं सकते हैं। अच्छा जाने दो, शक्कर तो खाते होंगे कि नहीं? हां, कैसी हैं? *श्रोता: मीठी है।* मीठी है और गुड़ खाते हैं, वह भी

मीठा है, तो फिर दोनों के मीठेपने में अंतर क्या है? ख्याल में आया? जो हम स्वयं अनुभव करते हैं, खाते हैं, स्वाद लेते हैं, उसका कथन नहीं कर सकते हैं, ऐसे जिनेन्द्र भगवान की जो बात, केवली के वाणी से निकली हुयी जो बात है, वह जो गणधरों ने सुनी और समझी है, वह गणधर रचना करने के टाइम पर... उतनी अनंतता उसमें नहीं आती, ख्याल में आया? और यह जो अनंत की बात है उसका जो अनंतवां-अनंतवां-अनंतवां भाग हमारे सामने आया है जो हम आपको बता सकते हैं। तो उसकी लिमिट यह अनंतवां भाग है क्योंकि यह बारह अंग की जो रचना है उसका अगर हम डिटेल में अभ्यास करेंगे तो आपको लगेगा यहां कहां फंस गये। कहने का मतलब यह है कि यहां कुधर्म जो है या कुदेव जो है या कुगुरु है इनकी हम जितनी बात करें कम है।

तो यहां जो कह रहे हैं कि अतत्त्व को तत्त्व मानना, अधर्म को, कुधर्म को धर्म मानना इत्यादि विपरीत श्रद्धान को मिथ्यात्व कहते हैं। अब गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व ऐसे जो दो भेद हैं उसमें से अगृहीत मिथ्यात्व को हमने देखा। यह जो अभी डिस्क्राइब किया न वह अगृहीत मिथ्यात्व है यानी किसीको सिखाना नहीं पड़ता। बच्चा अगर भूख लगे तो रोता है कि नहीं? और दूध पिलायेंगे तो चुपचाप बैठता है। तो उसने स्वयं को शरीररूप माना है और उसको अन्य जो सिखा रहें हैं कि तू गोरा है, तू काला है, तू बहुत सुंदर है, जो कुछ बातें होगी। यह हमारे घर में बैठे हुये कुगुरु सिखाते हैं। क्यों? वह गृहीत मिथ्यात्व है। यानी जो कुदेव, कुगुरु के द्वारा जो उलटी पट्टी पढ़ायी जाती है और ऐसे जो शास्त्र हैं, वे कुशास्त्र हैं। देखो, जो जिनेन्द्र भगवान बतायें वही साचे शास्त्र होंगे। जो अल्पज्ञ बताये, जिनके सर्वज्ञता नहीं है, ऐसे जीवों ने अपनी कल्पना से रचे हुये शास्त्र-कुशास्त्र हैं। तो यहां क्या बात हो रही है जो गृहीत मिथ्यात्वी है वह कैसा है? मैं बताता हूं आपको। पहले में पहले यह नियम ध्यान में रखना, कौनसा? कि जिसे-जिसे सम्यग्दर्शन होता है या करना चाहता है तो उसका पहले में पहले गृहीत मिथ्यात्व जाना चाहिये और गृहीत मिथ्यात्व गये बिना अगृहीत मिथ्यात्व जाता ही नहीं है, ख्याल में आया?

हम यह तो नहीं कहेंगे कि मिथ्यात्व के बिना सम्यक्त्व नहीं होगा; लेकिन उसमें भी हमें पहले ध्यान में रखना चाहिये, जो कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्र के द्वारा जो कुछ सिखाया जाता है, जो तत्त्व के विरुद्ध बात होती है, वह है गृहीत मिथ्यात्व और जो अनादिकाल से

चली आ रही शरीर में एकत्वबुद्धि आदि जो कुछ बातें हैं वह सारा अगृहीत मिथ्यात्व है। तो अभी देखो, अभी हम समझते हैं कि यह जो शर्ट है वह गृहीत मिथ्यात्व है, क्या है? गृहीत मिथ्यात्व और यह जो बनियान है वह है अगृहीत मिथ्यात्व। यह अगृहीत मिथ्यात्व है उसको निकालना है लेकिन गृहीत मिथ्यात्वरूपी शर्ट को साबुत रखकर, हमको बनियान निकालना है। कौन यह कमाल कर सकेगा? हमें पहले यह गृहीत मिथ्यात्व को निकालना पड़ेगा फिर बाद में अगृहीत मिथ्यात्व निकलेगा। पहले में पहले और एक बात बताना चाहता हूं, इस जीव ने अनादिकाल से आज तक अनंत बार तो गृहीत मिथ्यात्व का त्याग किया है लेकिन अगृहीत मिथ्यात्व गये बिना इस जीव को सम्यक्त्व नहीं हो रहा है। तो हमने क्या देखा, हमें क्या कहना है? ख्याल में आया? नहीं ख्याल में आया?

तो पहले में पहले हमें सच्चे देव, सच्चे गुरु और सच्चे शास्त्र का सही स्वरूप समझकर, उन्हें मानना चाहिये। अन्यथा मानेंगे तो यह मान्यता का दोष है वही मिथ्यात्व है। तो हम पहले में पहले अगर आपको गृहीत मिथ्यात्व की बात ख्याल में नहीं आयी होगी, तो मैं दूसरी प्रकार से बताना चाहूंगा कि आपके घर में नितिनभाई, कलर करना है, पेंटिंग करना है। तो आपने किसी पेंटर से कोटेशन लिये और फिर उसको नक्की किया। तो पूछा भाई आप क्या करोगे? पेंटर बोले, साहब, पहले तो हम दो कोट मारेंगे, फिर बाद में तीसरा कोट मारेंगे। पहला कौनसा कोट मारेंगे? तो जो कुछ बोलेगा ऐसा-वैसा; नहीं-नहीं हमको कॉन्ट्रॅक्ट नहीं देना है, क्यों? तुम उसको डबल कोटिंग करोगे तो ही हम तुम्हें कॉन्ट्रॅक्ट देंगे। डबल कोटिंग का अर्थ क्या होता है? जो रंग लगायें वह पक्का रहे, मजबूत रहे, निकले नहीं जल्दी-जल्दी। वैसे पहले से तो अनादि से जीव के पास अगृहीत मिथ्यात्व तो है। अब यह गृहीत मिथ्यात्व जो आता है तो उसका मिथ्यात्व और पुष्ट होता है, पक्का हो जाता है, डबल कोटिंग हो जाता है, ख्याल में आया? तो हमें तो पहले गृहीत मिथ्यात्व को निकालना चाहिये।

अगृहीत मिथ्यात्व को निकालने के लिये हमें सच्चे देव, गुरु, शास्त्र का स्वरूप समझना चाहिये। तो जिस समय यह जीव सच्चे देव, गुरु, शास्त्र का स्वरूप समझेगा, उसी समय वह अपने स्वरूप को समझेगा। आप बोलेंगे यह कहां से बात निकाली आपने। हम आपको सुनने आये, इसका अर्थ यह नहीं कि आप कुछ भी बोले वह हम सुने। मैं आपसे

पूछूंगा, आपने प्रवचनसार पढ़ा है? हां बिलकुल पढ़ा है। तो उसमें अस्सी नंबर की गाथा निकाल कर देखना, वहां लिखा है **जो जाणदि अरहंतं दव्वत्तगुणत्तपज्जयत्तेहिं**, जो अरिहंत को द्रव्य से, गुण से और पर्यायपने से जानता है उसका मोह नष्ट होता है। अरे! उसको सम्यग्दर्शन होता है। देखो! जानना था उनको, मानना था उनको और यहां हमें सम्यग्दर्शन। हां! हां! बिलकुल। क्योंकि जिसने सच्चे देव का स्वरूप देखा है, देखा है यानी ज्ञान में जाना है, समझा है वह अपना भी स्वरूप उनके जैसा ही है ऐसे उसके ज्ञान में आये बिना रहेगा नहीं। इसलिये शास्त्र में ऐसा वचन है कि जिसके-जिसके सम्यक्त्व होता है उसको नियम से सच्चे देव, गुरु, शास्त्र के स्वरूप का ज्ञान होता ही है, उसका श्रद्धान भी सही होता है। इसलिये तो पहले में पहले हमें यह मिथ्यात्व क्या है, उसको किसतरह से हम निकाल बाहर करेंगे, उसका स्वरूप क्या है इस बात को देखना चाहिये।

अभी फिर से हमने यह गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व की बात बतायी है। आपके समझ में आयी होगी ऐसा समझकर हम आगे बढ़ेंगे। तो आगे हम देखते हैं, आपके पास पुस्तक है न देखो। यह ३४ नंबर का पेज है न, उसमें लिखा है। १४७ नंबर का प्रश्न – मिथ्यात्व के कितने भेद हैं? ये पांच भेद हैं, एकांत, मैं बोलूंगा उसके बाद आप सब लोगों को बोलना है, हो! क्योंकि अभी इसके बादवाला जो क्लास आयेगा उसमें मैं पूछनेवाला हूं। मैं जानता हूं आधे लोग तो भाग जानेवाले हैं। देखो, मैं पढ़ता हूं, पांच भेद हैं। आपको रिपीट करना है। एकांत, *सभी श्रोता: एकांत।* विपरीत, *सभी श्रोता: विपरीत।* संशय, *सभी श्रोता: संशय।* अज्ञान, *सभी श्रोता: अज्ञान।* और विनय, *सभी श्रोता: विनय।* फिर से हां एकांत, विपरीत, संशय, अज्ञान और विनय। अभी आपके हाथ का पर्चा नीचे रख दो, पुस्तके हैं उनको बंद कर दो, नीचे यानी पर्चे में या पुस्तक में मत देखो। पहला नंबर कौनसा पढ़ा था भाईसाहब? *श्रोता: एकांत।* एकांत, बहुत अच्छा। दूसरा? *श्रोता: विपरीत।* तीसरा? *श्रोता: संशय।* चौथा? *श्रोता: अज्ञान।* और पांचवां? *श्रोता: विनय।* अभी मिथ्यात्व के पांचों प्रकार हो गये उसके नाम कौन बोलना चाहेगा? शाबाश। *श्रोता: एकांत, विपरीत, संशय, अज्ञान और विनय।* हां आप बोलो। *श्रोता: एकांत, विपरीत, संशय, अज्ञान और विनय।* एकांत, विपरीत, संशय, अज्ञान और विनय।

ये याद क्या करना है, ये तो फटाफट हो जाते हैं । अरे! ये तो पांच नाम हैं, किसी-

किसी के घर में तो बारह-बारह बच्चें होते हैं, सबके नाम याद होते हैं माता-पिता को। हां, एक कथा बोलूंगा, ये कहते हैं आप कथा नहीं सुनाते हैं। तो अब सुनो कथा। एक गांव है, नाम नहीं बोलूंगा गांव का, वहां एक बुढ़िया मुझसे मिलने आयी। तो बोली, बेटा, तुम यह जो कुछ बताते हो न पुद्‌गलद्रव्य है, जीवद्रव्य है, ये छह नाम मुझे याद ही नहीं रहते हैं। ऐसा क्यों साहब क्यों याद नहीं रहते? क्या करें अभी बूढ़े हो गये न, तो कुछ ख्याल में, याद में, ज्ञान में नहीं रहता। अच्छा-अच्छा। तो फिर उन्होंने कहा, पंडितजी आपको आज हमारे घर में भोजन करने को आना है। मैंने कहा ठीक है, कौन लेने आयेगा? मेरा तीसरे नंबर का बेटा लेने को आयेगा। अच्छा, आपको बेटे भी हैं? क्या बात करते हो? अरे! बेटे क्या बेटे के बेटे भी हैं, पोते हैं, परपोते भी हैं। यह बात है तो आपको कितने बेटे हैं? तो ग्यारह बेटे हैं। नाम बोलों? तो उन्होंने चालू कर दिया, रमेश, सुरेश जो कुछ भी हैं पट-पट-पट-पट; अच्छा उन सब की बहुयें हैं; उनके भी नाम बता दिये; ग्यारह और ग्यारह और पहले बेटे के कितने बच्चें हैं? सात बच्चें। दूसरे के कितने? नौ हैं। ऐसे सबके नाम बोले। तो आप इतने सारे नाम याद रखती हैं, ये छह द्रव्यों के नाम याद क्यों नहीं होते?

ऐसा कहते हैं रुचि अनुयायी वीर्य। जहां जिसकी रुचि होगी वह तो बराबर फटाफट बोलेगा। क्यों साहब, आप बताओ सोने का भाव क्या है? अरे! बोलो-बोलो, घबराते क्यों है? देखो गुरुदेवश्री ने एक बार एक को ऐसा प्रश्न पूछा था बोलो साहेब सोनानो भाव शुं छे? यानी सोने का भाव क्या है? तो एक ने बोला, चार सौ रुपये, नहीं, चार सौ पांच रुपये। तो बोले, मेरेको कहां लेना-देना है? सोने का भाव तो उसमें स्पर्श है, रस है, गंध है, वर्ण है। मुझे बाकी बात से क्या लेना-देना है? ख्याल में आया? वैसे हमें ये पांच नाम याद करने में टॉर्चर लगता है ऐसा महसूस नहीं होना चाहिये। ख्याल में आया? तो आप तो भूल गये होंगे लेकिन मैं पूछूंगा पांच नाम बोलो भैया? हां, *श्रोता: एकांत, विपरीत, संशय, अज्ञान और विनय।* एकांत, विपरीत, संशय, अज्ञान और विनय तो इतना आपने विनय दिखाया इसपर मोगॅम्बो खुश हुआ, इस कारण से मैं आपको छुट्टी देता हूं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

३३. एकांत मिथ्यात्व

अभी तक हमने जो मिथ्यात्व नामक श्रद्धा गुण का विपरीत परिणमन है, उसमें गृहीत और अगृहीत मिथ्यात्व की बात देखने की कोशिश की और हमने यह निश्चित किया कि किसी जीव को मिथ्यात्व को नष्ट करना है, तो प्रथम में प्रथम तो उसके गृहीत मिथ्यात्व का नाश होना चाहिये यानी गृहीत मिथ्यात्व को पहले छोड़ना चाहिये। उसके बाद ही अगृहीत मिथ्यात्व चला जायेगा। अभी यह तो एक अपेक्षा से मिथ्यात्व के दो भेद हमने देखे हैं। इसके अलावा शास्त्रों में इसका अन्य-अन्य प्रकार से भी विभाजन किया गया है। उसकी भी हमने बात देखी थी। वे पांच प्रकार के मिथ्यात्व जो हमने देखे थे वे किसको-किसको याद है? एक, दो, बस दो ही जन? तीन। हं, तुमने हाथ उठाया, जोर से बोलना, बोलो। *श्रोता: एकांत।* एकांत। *श्रोता: विपरीत।* विपरीत, संशय। *श्रोता: संशय, अज्ञान।* अज्ञान और विनय।

ये हमने मिथ्यात्व के पांच प्रकार देखे, देखो बात ऐसी है कि मिथ्यात्व के तो असंख्यातलोकप्रमाण भेद हैं। कितने? फिर से, असंख्यातलोकप्रमाण भेद हैं; लेकिन उनको इकट्ठा करते हुये, उनको हमने पांच में विभाजित किया है। अभी यह असंख्यातलोकप्रमाण यानी क्या इसको भी थोड़ासा देखने की कोशिश करेंगे। हम जानते हैं कि आकाशद्रव्य का हमने अपनी सहूलियत के लिये दो प्रकार से विभाजन किया है। यानी आप यहां रहते हैं, कहां? महाराष्ट्र में और महाराष्ट्र और गुजरात दो अलग-अलग प्रांत हैं न? तो बीच में ऐसी-ऐसी लाइन खींची होगी कि नहीं? हम तो यहां से अहमदाबाद गये लेकिन कहीं जमीन पर तो ऐसी कोई लकीर हमें दिखायी नहीं दी कि यह इधर का महाराष्ट्र है और उधर का गुजरात है। लेकिन हमने मान रखा है कि भाई यह महाराष्ट्र और यह गुजरात है। जो इतने सारे प्रांत हैं न अपने हिंदुस्तान में, सब में ऐसा कहीं विभाजनवाला कोई है क्या? वैसे ही आकाशद्रव्य के जो दो भेद हैं एक लोकाकाश और दूसरा अलोकाकाश। इसमें कहीं ऐसा विभाजन कोई लाइन-रेषा वगैरह कुछ नहीं है। तो कैसे हम समझे? तो यह बताते हैं कि जिसमें, आकाशद्रव्य के जिस क्षेत्र में छहों द्रव्य पाये जाते हैं उसको लोकाकाश कहेंगे और जहां सिर्फ एक आकाशद्रव्य ही है उसे अलोकाकाश कहेंगे। तो यह जो लोकाकाश है, उस लोकाकाश में जितने असंख्यात प्रदेश हैं उस

असंख्यात को एक लोक कहने में आता है। वे कितने हैं? तो कहते हैं असंख्यात प्रदेश हैं; तो लोकाकाश के प्रदेश कितने हैं पूछा जायें, तो हम उसका उत्तर देंगे कि असंख्यात प्रदेश। वैसा एक लोक, दो लोक, तीन लोक, चार लोक, दस लक्ष लोक यानी वन मिलियन और भी आगे बढ़ते जाओ, ऐसे असंख्यात लोक यानी एक लोक में असंख्यात प्रदेश तो, दस लोक में कितने? हजार लोक में कितने? असंख्यातलोक में कितने? इतने प्रकार के अलग-अलग मिथ्यात्व के भेद हैं। लेकिन उनको हमने पांच में विभाजित किया है; हो सकता है, ऐसा भी हो सके, क्या? कि एक मिथ्यात्व जो है यानी मान लीजिये विनय मिथ्यात्व है, उसके साथ में अन्य भी मिथ्यात्व हो सकते हैं। लेकिन हमने स्थूलरूप से इनको पांच में विभाजित किया है। यहां तक तो बात ख्याल में आ गयी? अभी हम आगे बढ़ते हैं।

यहां कह रहे हैं कि एकांत मिथ्यात्व किसे कहते हैं? आपके पास जो पर्चा है, उस पर्चे में देखिये ३४ नंबर के पृष्ठ पर, प्रश्न क्रमांक १४७ जो है, उसमें लिखा है कि मिथ्यात्व के कितने भेद हैं? तो कह रहे हैं, पांच भेद हैं – **एकांत, विपरीत, संशय, अज्ञान** और **विनय**। यह तो अभी हमने देख लिया। अभी कहते हैं, एकांत मिथ्यात्व किसे कहते हैं? मूल प्रश्न है न? एकांत मिथ्यात्व, मिथ्यात्व है लेकिन एकांत मिथ्यात्व का अर्थ क्या? तो यहां समझा रहे हैं। एकांत मिथ्यात्व में क्या लिखा है उत्तर में? १४८ नंबर का प्रश्न है, उसका उत्तर है – आत्मा, परमाणु आदि सर्व पदार्थों का – यहां पदार्थ का अर्थ क्या लेना है अपने को? द्रव्यों का, देखो-देखो, द्रव्य को वस्तु भी कहते हैं, द्रव्य को पदार्थ भी कहते हैं, द्रव्य को सत् भी कहते हैं, द्रव्य को अस्ति भी कहते हैं, अनेक प्रकार से द्रव्य के अनेक नाम बताये गये हैं। तो बता रहे हैं कि **आत्मा, परमाणु** यानी पुद्गलद्रव्य आदि, आदि में बाकी के चार द्रव्य ले लेना, **सर्व पदार्थों का स्वरूप अपने-अपने अनेक धर्मों से परिपूर्ण होने पर भी, उन्हें सर्वथा एक ही धर्मवाला मानने को एकांत मिथ्यात्व कहते हैं।** आपको लगा होगा, यह क्या बात चल रही है? बहुत इन्डायजेस्टेबल बात है। हम इसको पचा नहीं सकते, जरा हमें बताओ तो सही। क्यों ऋतु? तुम्हारे चेहरे पर से तो ऐसा ही लग रहा है, क्यों?

देखो, क्या कहते हैं। हमने देखा था यहां धर्म का अर्थ गुण लेना; धर्म का अर्थ क्या

है ? गुण। देखो भाई, बात ऐसी है कि एक ही शब्द के अनेक अर्थ होते हैं, तो यहां पर धर्म शब्द का अर्थ क्या है ? देखो, आप जानते हैं धर्म नाम का एक द्रव्य भी है। धर्मद्रव्य है न ? तो वहां पर भी धर्म शब्द वापरेंगे। अभी यहां कोई ऐसा बहुत बड़ा विधान चलता हो, शिबिर चलता हो, तो आप लोग इन्व्हिटेशन कार्ड भेजते हैं, कि धर्मलाभ लेने के लिये अवश्य पधारें। हं, और कहते हैं, जो धर्मी हैं यानी जिसने धर्म को प्राप्त किया है, यहां धर्म स्वभाव को भी कहेंगे। धर्म प्राप्त करना है यानी हमें सम्यग्दर्शन प्राप्त करना है, तो उसको भी धर्म कहेंगे और कहीं शुभभाव करने को भी धर्म कहेंगे; धर्म के अलग-अलग अर्थ होते हैं। आपके गांव में धर्मशाला है कि नहीं ? तो वह कैसी, शुभशाला है, कि कैसी शाला है ? अब न मालूम वहां क्या-क्या होता होगा, आप ही जानो आपका गांव है न ? यह मेरी धर्मपत्नी है ऐसा भी कहते है तो क्या वह शुभपत्नी होती है ? कैसा होता होगा ? मैं यही कहना चाहता हूं, धर्म शब्द को अलग-अलग अर्थों से अलग-अलग जगह इस्तेमाल किया जाता है। तो यहां जो धर्म है वह गुण की अपेक्षा से किया गया कथन है। तो क्या कहते हैं ? देखो, आत्मा, परमाणु आदि सर्व पदार्थों में, यानी प्रत्येक द्रव्य में, हां उनका यानी पदार्थों का स्वरूप अपने-अपने अनेक गुणों से परिपूर्ण है। अब कहते हैं, ऐसा होने पर भी सर्वथा एक ही गुणवाला मानने को, उन्हें सर्वथा एक ही गुणवाला मानने को एकांत मिथ्यात्व कहते हैं।

देखो, यह हमने बहुत बार शास्त्रों में से पढ़ा है, सुना भी है कि हमारा जो द्रव्य है, वह कैसा है ? अनेकांतात्मक है; यह जैनदर्शन कैसा है ? अनेकांतात्मक है और स्याद्वाद मुद्रित है। आप बोलेंगे यह क्या-क्या नयी-नयी बातें निकाल रहे हैं, हमें तो कुछ समझ में ही नहीं आ रहा है। बताऊंगा, जो बात हम नहीं समझेंगे उसीको हम समझने की कोशिश करेंगे। तो देखो, पहले में पहले अनेकांत का अर्थ क्या है ? अन् यानी नहीं, एक नहीं – तो क्या है ? अनेक; अन् प्लस एक यानी अनेक। जिसमें एक नहीं, अनेक हैं; क्या हैं ? अंत। अंत का अर्थ है धर्म, धर्म का अर्थ है गुण, तो वस्तु का स्वरूप यानी ये छह द्रव्यों का स्वरूप – प्रत्येक द्रव्य का स्वरूप कैसा है ? तो अनेक धर्मात्मक है, अनेक गुणात्मक है। तो ऐसा वस्तु का स्वरूप होते हुये भी उस पदार्थ को पुरेपूरा किसी एक गुणरूप मान लेना इसको क्या कहते हैं ? एकांत। वस्तु कैसी है ? अनेक धर्मों से, अनेक गुणों से युक्त है। नहीं समझ में आया पल्लवी ? कोई बात नहीं, देखो, मैं आपसे पूछता हूं, आप सब लोग, सीताजी को

तो जानते होंगे? वह रामचन्द्रजी की कौन थी? पत्नी थी, रामचन्द्रजी की पत्नी थी और जनक राजा की पुत्री थी, बराबर? और लव और कुश की? माता थी और भामण्डल की? बहन थी। तो वह माता भी थी, पुत्री भी थी, पत्नी भी थी और बहन भी थी – ऐसा होते हुये भी अगर हम उसको परिपूर्णतः केवल पत्नीरूप से ही मानेंगे, तो चलेगा कि नहीं? क्यों? उसमें तो चार प्रकार के हमने धर्म देखे; एक पत्नीधर्म यानी पत्नी नामक जो कोई उसका अंश है, एक है माता, एक है बहन और एक है पुत्री; तो क्या उसको सर्वथा पुत्री मानेंगे? पुत्री यानी लड़की, बेटी। तो सर्वथा बेटी मानेंगे, तो श्रीराम का क्या होगा? ख्याल में आया? अगर उसको पूर्णतः माता मानेंगे तब भी गड़बड़, पूर्णतः बहन मानेंगे तब भी गड़बड़। तो मैं आप से पूछता हूं, वह ट्वेन्टी फाइव्ह पर्सेंट बेटी थी, ट्वेन्टी फाइव्ह पर्सेंट पत्नी थी, ऐसा ट्वेन्टी फाइव्ह –ट्वेन्टी फाइव्ह यानी चार में डिव्हाइडेड है न वह, पच्चीस-पच्चीस टक्का थी की नहीं? बोलो पद्माबहन? मुंह से बोलना। ऐसा नहीं है, वह पत्नी थी तो राम की अपेक्षा हंड्रेड पर्सेंट पत्नी थी; वह पुत्री थी तो जनक राजा की अपेक्षा से हंड्रेड पर्सेंट पुत्री थी; वह माता थी तो लव-कुश की अपेक्षा हंड्रेड पर्सेंट माता थी; तो यह अपेक्षा से जो कथन किया जाता है उसको ही शास्त्र की भाषा में या आगम की भाषा में कहते हैं **स्यात्** यानी कथंचित् यानी – किसी अपेक्षा से कोई बात बतायी जाये, तो हंड्रेड पर्सेंट उसरूप ही होती है, ख्याल में आया?

तो जब हम कहते हैं कि जनक की अपेक्षा से वह पुत्री थी; लव और कुश की अपेक्षा से माता थी; तो वह अपेक्षा जब लगती है तो उसको कहते हैं 'स्यात्'। स्यात् यानी किसी अपेक्षा से, ख्याल में आया? तो ऐसी वस्तु जो है न, वस्तु यानी द्रव्य वह कैसा है? तो कहते हैं उसमें अस्ति नाम का भी धर्म है और नास्ति नाम का भी धर्म है। अभी मैं आपको दो मिनट में समझाता हूं, देखो, आप समझ जायेंगे। नितिनभाई तुम हो भी और नहीं भी हो यानी तुम्हारा अस्तित्व भी है और तुम्हारा नास्तित्व भी है। आप बोलेंगे अरे! क्या भाई, दोपहर में चाय बहुत पी कि पी ही नहीं? क्या हो गया क्या तुम्हें? अभी एक मिनट में कहते हैं, तुम हो भी, तुम्हारी विद्यमानता भी है और तुम्हारी अविद्यमानता भी है; तुम हो भी और नहीं भी हो; इनका कोई भरोसा नहीं है, ये पंडित लोग होते हैं न! ऐसा आप मानोगे, तो क्या है नक्की? तुम हो भी और नहीं भी हो? तो कहते हैं प्रत्येक द्रव्य में अस्ति नाम का भी गुण है; अस्ति यानी होना; हैपना और नास्ति यानी नहींपना। तो मैं कहता हूं

तुम तुमरूप से हो, इस टेबलरूप से नहीं हो, ख्याल में आया? तुम्हारा अस्तित्व तुम्हारे में है; तुम्हारा अस्तित्व इस टेबल में नहीं है, तुम्हारा अस्तित्व इस कार्पेट में नहीं है, तुम्हारा अस्तित्व इस फॅन में नहीं है, तुम्हारा अस्तित्व इस दीवार में नहीं है, तो आप मानोगे कि नहीं मानोगे? क्यों साहब, तुम्हारा अस्तित्व तुम्हारे में है, तुम्हारा अस्तित्व चश्मे में नहीं है, है चश्मे में? हम अपेक्षा जब तक नहीं समझते हैं तो शास्त्रों में जो कथन किया है, उसका अर्थ प्रतिभासित नहीं होता, ख्याल में आया?

जब तक शास्त्र में बताया गया जो अभिप्राय है इस अभिप्राय को हम नहीं समझेंगे, अभिप्राय यानी अंग्रेजीवाले, जिस मोटिव्ह से, जिस उद्देश से बात बतायी है, वह अगर हम नहीं समझेंगे, तो हमें लगता है कि शास्त्र में कितने कठिन-कठिन शब्द आते हैं। अरे! कुछ कठिन नहीं है भाई। तो प्रत्येक द्रव्य में अनेक अंत यानी अनेक धर्म हैं, प्रत्येक द्रव्य अनेकांतात्मक है; उसको एक ही गुण से, वह सर्वथा ऐसा ही है, ऐसा मानना यह एकांत है। जैसे कहेंगे – द्रव्य जो है वह नित्य भी है और अनित्य भी है। क्या बात करते हो? द्रव्य नित्य भी है और द्रव्य अनित्य भी है, बिलकुल ऐसा ही है। किसने बताया आपको? अरे! हमारे गुरुवर आचार्य उमास्वामी कहते हैं। क्या कहते हैं? **सत् द्रव्यलक्षणम्** और वह सत् कैसा है? तो कहते हैं **उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्** यानी देखो, बात तो ऐसी है, जिस समय उत्पाद होता है उसी समय पूर्व पर्याय का व्यय होता है; उत्पाद होना यानी नयी पर्याय का उत्पन्न होना, उसी समय में पुरानी पर्याय का व्यय होना और उसी समय में वह द्रव्य कायम टिकना। यह कायम टिकनेवाला जो कोई पोर्शन है उसे कहेंगे ध्रुवता और नयी-नयी पर्याय का उत्पन्न होना है उसको कहते हैं उत्पाद और उसी समय पूर्व पर्याय का जो व्यय होता है – पूर्वपर्याय नष्ट होती है, उसको कहेंगे व्यय। तो यह व्यय, यह उत्पाद और यह ध्रुवता तीनों एक समय में होते हैं।

देखो, एक बात मैं आपको बताता हूं, जो असल में बनी है। सातारा में कोई गये हैं क्या? सातारा में? सातारा नाम का एक गांव है; वहां कोई एक पहाड़ है, उस पहाड़ पर एक गुफा है। तो हम वहां गये थे, तो जाकर देखा कि गुफा में इतना अंधेरा था, इतना अंधेरा था। तो हम नीचे आये और वहां से दस-बारह मजदूर लेकर ऊपर जाने लगे। ऊपर चले तो माणिकचंद जैसे कोई मिले हमको। बोले कहां जा रहे हैं आप? अरे! साहब, ऊपर

गुफा में इतना अंधेरा है उसे निकालना चाहते हैं। तो बोले इन मजदूरों की क्या गरज है? हमने कहा फावड़ा, कुदाल वगैरह लेकर उस अंधेरे को हटा देंगे। पागल हो गये! अरे भैया! यह लो और उसने जेब से माचिस निकाली और कहा वहां एक माचिस जलाओगे तो अंधेरा नष्ट होगा। फावड़ा, कुदाल से कभी अंधेरा निकलता है क्या? बात तो मार्के की (सही) थी, हमने उनसे पूछा कि वहां पहले उजाला होगा या पहले अंधेरा निकलेगा? तो उन्होंने क्या जवाब दिया, बोलो? *श्रोता: एक साथ।* देखा, यह जैनदर्शन है। अभी कितनी हंसी आती है, सही उत्तर आने से? कोई कहता है, नहीं-नहीं पहले अंधेरा जायेगा बाद में उजाला आयेगा या पहले उजाला होगा बाद में अंधेरा जायेगा ऐसी बात नहीं है। जो वहां पुद्‌गलद्रव्य का जो वर्ण नामक गुण है, उसका कालारूप परिणमन हो रहा था, उसी जगह पर जब उजालारूप जो परिणमन, सफ़ेदरूप जो परिणमन होगा, उस समय कालारूप परिणमन नहीं रहेगा और वर्ण गुण कायम रहेगा। तो वर्ण गुण को ध्रुव कहते हैं और सफ़ेदपना जो हुआ उसको उत्पाद कहेंगे और उसी समय कालेपना नष्ट हुआ उसको व्यय कहेंगे। हम तो मानते हैं कि नयी पर्याय आये बिना काम नहीं होगा। अरे! पुरानी पर्याय निकल जायेगी तो नयी पर्याय सहजरूप से वहां उत्पन्न होती है। तो यहां जो उत्पाद है वह भी स्वतंत्र है, व्यय है वह भी स्वतंत्र है और जो ध्रुवता है वह भी स्वतंत्र है, ख्याल में आया? तो हमने क्या देखा? जो नित्य है वही अनित्य है। तो यह नित्यपना जो है वह सभी द्रव्यों का नित्य धर्म है। क्या कहा? नित्यपना जो है, उसी समय अनित्यपना भी वहां है। तो हम जब कहते हैं, नित्य और अनित्य ऐसे दो प्रकार के धर्म एक साथ, एक समय में मौजूद हैं और उसमें से हमने सोचा, समझा कि द्रव्य नित्य ही होते हैं। ऐसा माननेवाले जीव भी इस विश्व में कम नहीं हैं।

जो वैदिकधर्मीय हैं वे मानते हैं कि द्रव्य सर्वथा नित्य ही है, उनको पर्याय नामक चीज ही मालूम नहीं है; बस है-है-है ऐसा मानते हैं और सब क्षणिक है-क्षणिक है यानी सब अनित्य है-अनित्य है ऐसा बौद्धधर्मीय मानते हैं। यह विश्व कैसा है यानी द्रव्य कैसा है? तो वे कहते हैं अनित्य है-अनित्य है। ऐसा अगर हम मानेंगे तो कितनी गड़बड़ होगी? भाईसाहब, अगर नित्य है-नित्य है ऐसा ही मानेंगे तो जो रोगी होगा, वह निरोगी होगा कि नहीं? जो मूरख होगा, वह सयाना होगा कि नहीं? जो मिथ्यात्वी होगा, अरे! पर्याय ही नहीं होगी तो मिथ्यात्वी है तो मिथ्यात्वी-मिथ्यात्वी-मिथ्यात्वी, वह सम्यक्त्वी होगा ही नहीं। तो उससे

हमारा क्या लेना-देना है? अरे! तुम जो गरीब रहे हो, तो तुम पैसेवाले नहीं होंगे? हां-हां-हां तो बोलेंगे हम जरूर मानते हैं कि भाई वह पर्याय होगी। पैसे का नाम लिया तो जल्दी जागृति आती है। यहां क्या कहते हैं? यह नित्य भी है और अनित्य भी है; नित्य नाम का धर्म भी है और अनित्य नाम का धर्म भी है; अस्ति नाम का धर्म है और नास्ति नाम का धर्म भी है। वैसे मैं एक हूं; मैं अनेक हूं, ऐसे अनेक धर्म हैं न अपने में?

उसमें से हमने एक ही माना, जो क्षणिक ही है, अनित्य ही द्रव्य है, ऐसा अगर हम मानते हैं तो क्या होगा? अभी तो किसी को मिथ्यात्व है और दूसरे समय में उसे सम्यक्त्व हुआ, तो दूसरे समय में जिसको सम्यक्त्व हुआ है और पूर्व समय में जो मिथ्यात्वी था वे दोनों अलग-अलग हो गये एक ही व्यक्ति न रहे। पुरुषार्थ तो पहले ने किया था, उसका फल? नहीं समझे आप? मान लो हो! मैं क्षणिक हूं, प्रत्येक द्रव्य क्षणिक है-क्षणिक है, ऐसा अगर हम मानेंगे, तो किसीने खून किया और कुछ सालों की उसको सजा हुयी, तो जो खून करनेवाला होगा, वह तो कब का नष्ट हो गया और जो सजा भुगत रहा है वह कोई अलग ही है, क्या यह न्यायपूर्वक है? ख्याल में आया? हां, तो क्या आपका जैनधर्म अन्य सब दर्शनों के एक-एक, एक-एक सिद्धान्तों को लेकर बना है? ऐसा नहीं है। जैनदर्शन कहता है वस्तु नित्य भी है और अनित्य भी है; लेकिन किसी अपेक्षा से नित्य है और किसी अपेक्षा से अनित्य है। जैनदर्शन कहता है कि द्रव्य, द्रव्य की अपेक्षा से नित्य है और उसी समय वह पर्याय की अपेक्षा से अनित्य है। क्यों? द्रव्य कैसा है? **गुणपर्यवत् द्रव्यम्** – गुण और पर्यायों का समूह है। देखो, ऐसे अनेक धर्म होते हुये किसी एक धर्मरूप से ही वह पूरा द्रव्य है ऐसा मानना, इसको क्या कहते हैं? हां भाई – एकांत, अनेकांत नहीं। *श्रोता: एकांत।* एकांत कहते हैं।

देखो फिर से, अभी हम पढ़ते हैं, जो अभी आपने सुना है, वह पढ़ने के बाद और विशेषरूप से ख्याल में आयेगा। आत्मा, परमाणु यानी यहां पुद्गल, धर्म, अधर्म आदि सब ले लेना – आदि सर्व द्रव्यों का स्वरूप, यहां पदार्थ लिखा है हो! तो द्रव्यों का स्वरूप अपने-अपने अनेक गुणों से, यहां लिखा है धर्मों से, परिपूर्ण यानी पूरा होने पर भी – यानी द्रव्य कैसा है? अनेक धर्मात्मक है, अनेक गुणात्मक है – ऐसा परिपूर्ण होने पर भी द्रव्य को सर्वथा यानी केवल – मात्र, एक ही धर्मवाला मानने पर, क्या होता है? ऐसा मानने को

एकांत मिथ्यात्व कहते हैं। अभी यह बात समझ में आयी कि नहीं? नहीं समझ में आयी तो बोलना हो, हम और उदाहरण देकर समझायेंगे। देखो, हम अभी किसी एक व्यक्ति की बात लेंगे; यह हमारी ऋतु है, यह बहुत गोरी है; तो वह होशियार है कि नहीं? वह होशियार है; हां तो वह गोरी है कि नहीं? इसमें एक ही व्यक्ति में कोई राजा होगा, तो वह पराक्रमी है, सुंदर है, हां दयालु है ऐसे अनेक उसके अंदर गुण हैं और हम केवल एक ही गुण को पकड़कर बैठेंगे, तो पूरे राजा का स्वरूप हमें ख्याल आयेगा कि नहीं? वस्तु जब अनेक धर्मों से युक्त है, उन धर्मों को हम जानते हैं, तो उस वस्तु को हमने सही समझा है। अगर एक ही गुणरूप से उस पूरे द्रव्य को हम देखेंगे, तो हमने पूरे द्रव्य को जाना ही नहीं। तो हमें आत्मानुभव होगा कि नहीं? अगर उसे हम एक ही धर्मरूप से परिपूर्णतः मानेंगे, तो वह मान्यता में गलती है और उस गलती का नाम एकांत मिथ्यात्व है।

अभी तो कुछ समझ में आया कि नहीं? भाई, कल से बोलना स्ट्रॉँग चाय बनायें, कड़क, ताकि बुद्धि अच्छी हो जाये। देखो, तो यह पहला जो हमने देखा था, वह एकांत मिथ्यात्व को हमने देखा था। तो मिथ्यात्व के हमने पांच भेद देखे थे, कौन बताना चाहेगा? आप बतायेंगे? आप तो हमेशा बताते हैं, कोई दूसरों को प्रयत्न करने दो। हां बोलो साहब, एकांत। *श्रोताः विपरीत।* विपरीत। *श्रोताः संशय।* संशय। *श्रोताः विनय।* अज्ञान और विनय, कोई बात नहीं, नंबर आगे पीछे चलेगा, लेकिन नाम तो याद रखना चाहिये – सबको याद रखना चाहिये। तो अभी हमने किसकी बात देखी थी, बोलो? आप बोलेंगे? जोर से बोलना बेटा। *श्रोताः एकांत, विपरीत, संशय, अज्ञान और विनय।* एकांत, विपरीत, संशय, अज्ञान और विनय। तो इन पांच में से कौनसा मिथ्यात्व आपके पास है? बोलो भाई बोलो? *श्रोताः पाचों हैं।* पांचों हैं। बहुत अच्छा! देखो, ऐसा क्या बोलना चाहिये, अपने अंदर में ठोस होना चाहिये कि मैं अगर सम्यग्दृष्टि इस वक्त नहीं हूं तो इन पांचों में से, कोई न कोई, या पूरे पांच मिथ्यात्व हमारे में होने चाहिये। हमने वस्तुस्वरूप को जाना नहीं और स्वयं को घोषित किया कि मैं सम्यग्दृष्टि हूं। तो क्या उसको सम्यग्दर्शन होगा? आप बोलेंगे – नहीं, क्यों नहीं? मैं बताता हूं न, आपको खाली मेरे डर के मारे, आप ना-ना करो, वह नहीं चाहिये। देखो, हमारे गांव में किसी व्यक्ति का खून हो गया। पुलिस ने बहुत जंग-जंग पछाड़ दिया – प्रयत्न किया, सब कुछ किया; लेकिन उनको कोई खूनी मिला नहीं, तो उन्होंने क्या कर दिया? अच्छा! आप बोलते हो, फाइल बंद कर दी। फाइल बंद कर देना

यानी समझ में आया न? नो मोअर इन्क्वायरि। बस पुलिस बोली जाने दो, जो कुछ हुआ जाने दो, जो कुछ हुआ मालूम नहीं। तो वह असली खूनी मिलेगा कि नहीं, जब फाइल बंद हो जायेगी? वैसे जब हमने मान लिया कि मैं सम्यग्दृष्टि हूं, तो सम्यग्दर्शन प्राप्त करने के रास्ते हमने ही बंद कर दिये, ख्याल में आया? हमने फाइल बंद कर दी।

यहां एकांत क्या है? अनेकांत क्या है? इस बात का पता ही नहीं है और हमने नक्की कर दिया कि हम सम्यग्दृष्टि हैं। इन सबकी बात नहीं बता रहा हूं और यहां कोई विशेष व्यक्ति की बात नहीं है; हमें यह अपने पर अप्लाय करना है कि क्या मेरी मान्यता ऐसी है क्या? नहीं-नहीं, मैं तो द्रव्य को अनंत धर्मात्मक ही मानता हूं। बहुत अच्छी बात है, अभी आगे बढ़ते हैं। दूसरा क्या कहते हैं देखो, इसको फिर से हम पढ़ेंगे। अगर इसमें कोई प्रश्न हो, तो पूछना हो। फिर से मैं पढ़ता हूं क्वेश्चन नंबर १४८। एकांत मिथ्यात्व किसे कहते हैं? **आत्मा, परमाणु आदि सर्व द्रव्यों का स्वरूप, अपने-अपने अनेक** गुणों से यानी **धर्मों से परिपूर्ण होने पर भी उन्हें** यानी उन द्रव्यों को, **सर्वथा एक ही धर्मवाला मानने को एकांत मिथ्यात्व कहते हैं। जैसे आत्मा को सर्वथा क्षणिक अथवा नित्य ही मानना** और **गुण-गुणी में सर्वथा भेद या अभेद ही मानना।** क्या कहा? यह गुण क्या होता है, गुणी क्या होता है, यह किसीको मालूम है? हां, यह पढ़ना ही रह गया था, अब मुझे याद आया।

गुण किसको कहना और गुणी किसको कहना? पुरुषों में कोई बतायेगा? हां, *श्रोता: विशेष।* हां, विशेष। रश्मिबेन अब मैं नाम नहीं भूलूंगा। भरतभाई ने बता दिया हमको, आप बहुत नाराज़ हो गये थे, आपका नाम भूल गया इसलिये। हां, बोलो-बोलो, हां जी। *श्रोता: अनंत गुणों को धारण करनेवाला गुणी।* उसको क्या कहेंगे? *श्रोता: गुणी कहेंगे?* बहुत सुंदर, बहनजी ने बहुत परफेक्ट उत्तर दिया है। देखो, आपके पास धन है, तो आपको क्या कहेंगे? धनी। यह महाराष्ट्र में जो धनी बोलते हैं, वह नहीं हो, पत्नी अपने पती को धनी बोलती है क्योंकि वह अपने को धन मानती है, इसलिये पति को धनी बोलती है – वह बात यहां नहीं है। जो धन का धारक है, वह धनी; वैसा ही गुण को जो धारण करता है वह गुणी। तो गुणी का दूसरा नाम क्या है? नितिनभाई। गुण को धारण करें उसको गुणी कहते हैं। तो गुणी का दूसरा नाम कौनसा है? *श्रोता: द्रव्य।* पल्लवी आप बतायेंगी? मोना बोलो?

श्रोता: द्रव्य। द्रव्य, यह द्रव्य काहे से बना है? **अनंत गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।** यह सब हम भूल गये, जो सीखा था, भाई, यह जो है न आपके पास अभी पुस्तक इनके हाथ में पुस्तक है, यह जरा ऊपर उठाना उसको; पुस्तक ऊपर उठाओ; पीछे-पीछे, उलटा करो। इस पुस्तक में १६५ प्रश्नोत्तर हैं। वे मैं कम से कम साठ घंटे नहीं, अस्सी बयासी घंटे सिखाता हूं, तब वह पुस्तक पूरा होता है और हमें तो एक शिबिर में, यह तीस-तीस घंटों में सब कुछ समझना है? इस शिबिर में जो आया है वह अगले शिबिर में नहीं आयेगा और जो पिछले शिबिर आया था वह इस शिबिर में नहीं आयेगा। तो कैसे आगे बढ़ेंगे?

हमें तो, हमें स्वयं को, अपना स्वरूप समझने के लिये यह तो भाई, जिसको हम कहते हैं न – मास्टर की है। सारे शास्त्रों को पढ़ने के लिये यह लघु जैन सिद्धांत प्रवेशिका सीखना अत्यंत आवश्यक है, मास्टर की जिसको बोलते हैं। यह अगर हम समझ जायें तो कोई भी शास्त्र खोलकर देखो, आपको उसका भावभासन हुये बिना रहेगा नहीं; यानी वहां शास्त्र में जिसप्रकार से जो कथन किया है, वह कथन को समझने के लिये यह सारा आवश्यक है। अभी एक मज़े की बात बोलकर आगे बढ़ेंगे, क्योंकि आप सारे टेन्स हो गये हैं। तो यहां गुण और गुणी – यहां क्या कहते हैं, कथा बाद में बताऊंगा। गुण और गुणी में सर्वथा भेद या सर्वथा अभेद मानना। तो अभी कैसे बतायेंगे हम? आप जरा वह चार्ट निकालेंगे? द्रव्य-गुण-पर्याय का?

यहां कह रहे हैं ये गुण जो होते हैं, यह अभी बहुत लंबा विषय है, अभी छोड़ते हैं बाद में करेंगे; रहने दो-रहने दो, बाद में करेंगे; इसकी बात मुझे बाद में याद देना। गुण और गुणी यह सर्वथा भेद है या अभेद है? मैं सिर्फ एक, दो व्यक्ति को प्रश्न पूछना चाहता हूं। वे उत्तर देंगे, तो वह विषय चालू रखेंगे, नहीं तो छोड़ देंगे। क्या? गुण और गुणी इनमें सर्वथा भेद है या वे सर्वथा अभेद है? कौन बताना चाहेगा इसका उत्तर? *श्रोता: भेद है।* हां बोलो, कौन बता रहा है? हां आपने बताया। सर्वथा भेद है और आप क्या कहते हैं? कोई है यहां पर? हां पीछे? *श्रोता: अभेद है, दोनों हैं।* कोई एक व्यक्ति बोलो साहब। *श्रोता: भेद भी है और अभेद भी है।* आपका कहना है – सर्वथा भेद भी नहीं है और सर्वथा अभेद भी नहीं है, ऐसा आपका कहना है; यानी आप कहते हैं गुण-गुणी में भेद भी है और वे अभेद भी हैं।

यही बात सही है। वह कैसी है? इसके लिये चार्ट बनाना पड़ेगा और चार्ट बनाते ही आपको हम सिखायेंगे।

देखो भाई! नाम दो हैं न, एक है गुण और एक है गुणी, तो नाम में भेद है। तो द्रव्य एक है और गुण कितने हैं उसमें? अनंत हैं, अनेक हैं; तो नाम में भेद है, संख्या में भेद है और गुण किसको कहना? **जो द्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में रहता है उसको गुण कहना** और गुणी किसको कहना? **अनंत गुणों के समूह को द्रव्य-गुणी कहना**। तो इसमें क्या हो गया कि देखो, द्रव्य की अपेक्षा से, यह बात सुन लेना, उसका एक्स्प्लनेशन मैं बाद में दूंगा – द्रव्य की अपेक्षा से, क्षेत्र की अपेक्षा से और काल की अपेक्षा से गुण और गुणी अभेद हैं। अब हम सोचते हैं, आत्मा यह द्रव्य है और ज्ञान यह गुण है। तो आत्मा का द्रव्य कौनसा द्रव्य है? जीवद्रव्य है। बहुत अच्छा! और ज्ञान गुण का द्रव्य कौनसा है? हां? *श्रोता: जीवद्रव्य।* जीवद्रव्य क्योंकि हमने देखा न कि ज्ञान गुण यह आत्मा का यानी जीवद्रव्य का विशेष गुण है। तो एक जगह आत्मा रहता होगा और दूसरी जगह ज्ञान गुण रहता होगा, ऐसा होगा कि नहीं? क्योंकि गुण की परिभाषा में हमने देखा था कि जो द्रव्य के संपूर्ण भागों में; भागों में यानी क्षेत्र में और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में यानी काल में रहता है, उसको हम गुण कहेंगे। तो जीवद्रव्य और ज्ञान गुण, दोनों का द्रव्य एक ही है, दोनों का क्षेत्र भी एक है क्योंकि जितना बड़ा द्रव्य, उतना बड़ा गुण, क्योंकि वह द्रव्य के संपूर्ण भागों में रहता है। तीसरी बात क्या देखी हमने? काल। द्रव्य-क्षेत्र-काल; तो काल भी दोनों का एक ही है। कितना है दोनों का काल लताबहन? *श्रोता: एक समय।* बहुत अच्छा! आप क्या कहते हैं? *श्रोता: एक समय।* एक समय। जोहान्सबर्ग जइ आओ तमे, लन्दन न जाओ, हां और कोई उत्तर देगा? देखो, बकरी होती है न बकरी, देखी है कभी आपने? वह एक के पीछे एक, एक के पीछे एक ऐसे जाती है। एक बकरी खड्डे में गिरे, तो दूसरी भी उसके पीछे, फिर तीसरी भी उसके पीछे, ऐसे दूसरा उत्तर देता है उसका सुनकर वही उत्तर मत देना। हां बोलो जयश्रीताई। *श्रोता: अनादिअनंत।* अनादिअनंत। यह इनकी नींव बम्बई में पड़ी है – सीखे हैं अपने यहां, अभी जाकर बैठे हैं औरंगाबाद में, सिखाते हैं स्टुडंट्स को।

क्या कहा? द्रव्य कबसे है? अनादिकाल से है और अनंतकाल तक टिकेगा। कैसे

नक्की किया आपने? अरे! **सत् द्रव्यलक्षणम्।** कितनी बार तो बताया। जो है-है-है-है-है-है-है का कोई उत्पन्न करनेवाला नहीं होता है, उसका निर्माण करनेवाला कोई नहीं होता है। जो है वह कायम टिकता है और कायम टिकता है उसका नाश करनेवाला कोई नहीं है और जो कायम टिकता है, उसका संरक्षण करनेवाला कोई नहीं है और हमने तो मान रखा है, क्या? ब्रह्मा, विष्णु, महेश इनमें से एक विश्व को उत्पन्न करता है, एक उसका संरक्षण करता है और एक उसका खात्मा करता है। विश्व का नाश करनेवाला वह भगवान? तीनों को राग है कि नहीं है? यह चाबी एक बार अपने हाथ में आ जाये – मास्टर की, सब जगह लगाना, डरना मत क्योंकि हमने मिथ्यात्व जो प्रकट किया है वह अपनी मूर्खता के कारण है और हमारा मिथ्यात्व जायेगा ते हमारे स्वयं के कारण से जायेगा। कोई दूसरा आकर तुम्हारा मिथ्यात्व हटा दे, ऐसा तीन काल में नहीं होगा। हमने भूल की है तो सुधारना भी हमारा स्वयं का कर्तव्य है। कोई जिनेन्द्र भगवान नहीं आनेवाले, जो तुमको कहेंगे कि आओ बेटा, मैं तुम्हारा भला कर देता हूं सबका। कोई ऐसा है नहीं भाई, ख्याल में आया? हमें यह वस्तुस्वरूप समझना है कि द्रव्यों का स्वरूप कैसा है? तो कहते हैं कि गुण और गुणी में – द्रव्य से दोनों ही एक हैं, अभेद हैं; कभी एक दूसरे से जुदा नहीं हो सकते। मैं आपसे पूछता हूं आपमें कोई ऐसा कुशल कारीगर है क्या? जो अग्नि में से उष्णता को हटा सके? या ऐसा कोई है कि जो शक्कर में से मिठास को जुदा कर सके? क्या ऐसी कोई व्यक्ति है कि जो करेले में से कड़वापन हटा सके? नमक में से खारापन हटा सके? नहीं, क्योंकि द्रव्य और गुण, गुण और गुणी ये द्रव्य से अभेद हैं, क्षेत्र से अभेद हैं, काल से अभेद हैं। ये अनादिकाल से अनंतकाल तक रहेंगे।

अब यह तो मैंने उदाहरण दिया हो पुद्गल का। वास्तविक देखा जायेगा तो पुद्गल में जो स्पर्श, रस, गंध, वर्ण गुण हैं उनको जुदा नहीं कर पायेंगे। यह जो मीठापन है, कड़वापन है, खारापन है ये तो पर्यायें हैं; पर्याय तो पलटेगी, बदलेगी, मयंकभाई बात ख्याल में आती है? देखो, जो अभी हमने क्या कहा नमक खारा है। वह खारा नामक उस स्कंध के रस गुण की जो पर्याय है पलटकर अन्य पर्यायरूप हो जाये। तो उसका वह जो खारापन है वह निकल जायेगा। लेकिन वह जो रस गुण है वह थोड़े ही निकलेगा? ये रस गुण आदि की बातें हम देखने जा रहे हैं तब वे आपको और भी विशेषरूप से समझ में आयेगी। तो अभी अपनी बात क्या हुयी कि द्रव्य से, क्षेत्र से और काल से गुण और गुणी अभेद हैं, लेकिन

भाव से भिन्न हैं क्योंकि हमने दोनों की परिभाषा जुदी-जुदी देखी न। द्रव्य कहते ही हमारे ज्ञान में ऐसा आ जाता है कि अनंत गुणों का समूह है और जब हम गुण की बात करते हैं तो हमारे ज्ञान में आता है कि गुण, उस द्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में रहता है। तो गुरुदेवश्री की भाषा में बोलना हो तो 'द्रव्ये, क्षेत्रे अने काळे अभेद छे, अने भावे भिन्नता छे।' ख्याल में आया? यहां हमने क्या-क्या देखा? द्रव्य और गुण नाम से जुदे भिन्न-भिन्न हैं; संख्या से जुदे-जुदे हैं और भाव से जुदे-जुदे हैं; और भी अनेक बातें हैं, लक्षण है, प्रयोजन है, वगैरह-वगैरह तो यहां क्या लिखते हैं अभी? देखो यह इतना सारा लंबा-चौड़ा लिखने की गरज क्यों पड़ी इनको?

यहां देखो, जैसे यह एकांत मिथ्यात्व, ऊपर से तीसरी लाइन – जैसे आत्मा को सर्वथा क्षणिक अथवा सर्वथा नित्य ही मानना – यहां रुक गये। अब दूसरी बात क्या कह रहे हैं? गुण और गुणी में सर्वथा भेद या सर्वथा अभेद ही मानना, ये दोनों मिथ्यात्व के लक्षण हैं; लेकिन वह भेद भी है और अभेद भी है। अभी आपको बताया न, अर्पलजी आपने बताया न, इसमें भेद भी है और अभेद भी है ऐसा वस्तुस्वरूप है। देखो भाई, यह तो हमें अपने पर लगाना है कि मेरा ज्ञान गुण जो मेरेमें है वह मुझसे सर्वथा अभेद है या सर्वथा भेदरूप है? तो कहेंगे भेदाभेदरूप है। वहां हमने देखा था द्रव्य कैसा है कि नित्यानित्यात्मक है, ख्याल में आया? तो नित्य भी है, अनित्य भी है; यहां कह रहे हैं कि वह भेद भी है और अभेद भी है। इसतरह हम वस्तु का स्वरूप समझेंगे तो यह जो एकांतपना है अपनी मान्यता में, वह हमारे स्वयं के कारण से नष्ट होनेवाला है। कोई सिखा दे, इसलिये हो जाये ऐसा नहीं है क्योंकि जैनदर्शन का मूल सिद्धान्त जो है, जो गुरुदेवश्री ने हमारे सामने रखा है वह यह है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ भी नहीं कर सकता और यह ऐसी अलौकिक बात है, वह किसीके ज्ञान में आ जाये तो उसका भला हुये बिना नहीं रहेगा। भले आज हो जाये, कल हो जाये, कुछ भव के बाद हो जाये; लेकिन अगर उसकी यह मान्यता सही है और यही मान्यता को हम यहां से देखने जा रहे हैं कि क्या यह बात जो बार-बार बतायी जा रही है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है, तो क्या यह बात वास्तविक है? क्या यह बात सही है? क्या हम इसे मानेंगे? मानना चाहिये? मानने से क्या फायदा होगा और नहीं मानने से क्या नुकसान होगा? इस बात को हम देखेंगे।

यहां क्या बात बता रहे हैं कि गुण और गुणी सर्वथा भेदरूप हैं या सर्वथा अभेदरूप हैं, ऐसा मानना यह मिथ्या मान्यता है, इसलिये उसको एकांत मिथ्यात्व कहने में आया है, बात ख्याल में आयी? कोई ना भी नहीं बोलता है और हां भी नहीं बोलता है। हां, क्या कह रहे थे? *श्रोता: यह जो वाक्य है यह नकारात्मक वाक्य है।* कौनसा? *श्रोता: इन्हें भेद भी मानना और अभेद भी मानना।* ही लगाया तो सर्वथा में ही होता है। सर्वथा भेद मानना यह भी मिथ्यात्व है और सर्वथा अभेद है ऐसा मानना भी मिथ्यात्व है; तो है कैसा? भेदाभेदस्वरूप है यानी उन दोनों में गुण और गुणी में भेद भी है, भिन्नता भी है और अभिन्नता भी है। बात ख्याल में आयी? चलो अब आगे बढ़ेंगे।

श्रोता: आत्मा को सर्वथा क्षणिक अथवा सर्वथा नित्य मानना वह एकांत मिथ्यात्व है और नहीं मानेंगे तो कैसे होगा? मुझे नक्की ख्याल है कि आप लेट आये थे आज, कल से कृपया आप हर क्लास में शुरू से आने की कोशिश करना। यह बात मैंने पहले बतायी थी। आपने पूछा कि यहां जो लिखा है कि *श्रोता: जैसे आत्मा को सर्वथा क्षणिक अथवा सर्वथा नित्य मानना।* हां, जैसे आत्मा को क्षणिक अथवा सर्वथा नित्य ही मानना तो सर्वथा क्षणिक की बात मैंने यह भी बतायी थी। *श्रोता: वो मैंने दोनों सुनी, जिसने पूर्व में कर्म किया था...। बस यही बताइये कैसे नापते हैं मिथ्यात्व को?* कई लोग ऐसा मानते हैं कि यह आत्मा यानी यह द्रव्य यह हमेशा नित्य है-है-है-है; उसमें पर्याय है ही नहीं और कई लोग ऐसा मानते हैं कि उसमें क्षणिकता ही है, उसमें नित्यता है ही नहीं; ऐसी एक ही अपेक्षा लेकर अगर हम मानते हैं तो वह मिथ्या मान्यता है। क्योंकि कैसा है वस्तुस्वरूप? कि नित्यानित्यात्मक है, कैसा? नित्य और अनित्य। तो उसका क्या हुआ कि त्य और प्लस अ नित्यानित्यात्मक है। भेदाभेदात्मक है; यानी भेद प्लस अभेद तो उसको भेदाभेदात्मक कहेंगे; सामान्यविशेषात्मक है। अभी साहब यह पूरा घंटा लग जायेगा यह बात समझने में। फिर भी मैंने आपको समझाने की कोशिश की है। तो अभी हम आगे बढ़ेंगे और किसीके कुछ प्रश्न हो तो पूछना हो।

हां देखो, अब दूसरा नंबर है, कौनसा? १४९ प्रश्न – विपरीत मिथ्यात्व किसे कहते हैं? तो यहां क्या कह रहे हैं? **आत्मा के स्वरूप को अन्यथा मानने की रुचि को विपरीत मिथ्यात्व कहते हैं।** यह क्या कहा? आत्मा का स्वरूप जैसा है, हां उससे विपरीत

माननना इतना ही नहीं बताया है, क्या कहा? यहां कह रहे हैं कि आत्मा के स्वरूप को अन्यथा – अन्यथा यानी? जैसा है नहीं वैसा, वह अन्यथा हो गया। यह मानने की, सिर्फ मानना नहीं उस मानने की रुचि को, उस जीव की रुचि कौनसी है? अन्यथा मानने की यानी जैसा वस्तुस्वरूप है यानी द्रव्य का स्वरूप है, उसको हमने गलत माना। मैं मेरी बात बताता हूं – इ. स. १९७५ साल में गुरुदेवश्री के संपर्क में हम आये और तब से हमें इस अध्यात्म का रंग लगा। लेकिन क्या होता है, शुरू-शुरू में तो अपने को उसकी रुचि बढ़ना बात अलग है और कोई आपको प्रश्न करें, तो उसका उत्तर देना, उत्तर देने की क्षमता रखना यह बात अलग है। तो मेरे ही कोई रिलेटिव्ह – मौसी के हजबंड क्या बोलते हैं आप लोग? अंकल, अरे! अंकल तो सब होते हैं – चाचा भी होता है, मामा भी होता है, मौसा जिसको कहते हैं, तो उन्होंने मुझे बोला, क्या तुम रट लगाये बैठे हो, तुम्हारे कारण तुम्हारी फुल फॅमिली भी पागल हो गयी है। आत्मा-आत्मा-आत्मा लेकर बैठे हो, कहां है आत्मा? बताओ? तुम अभी मुझे आत्मा बताओ, तो तुम जो कहो वह मैं हार जाऊंगा। दिखाओ आत्मा। हम भी चुप रहे, कहां से दिखाये? क्योंकि हमने तो सीखा था कि आत्मा अरूपी है; अब इस अरूपी को कैसे बतायें? तो मराठी में एक कहावत है कि बाप दाखव नाहीं तर श्राद्ध कर यानी तेरा बाप किधर है बता, नहीं तो अभी के अभी श्राद्ध कर। श्राद्ध तो समझते हैं न, किया भी होगा किसीने। क्या बतावें? लेकिन उस वक्त यह अक्कल (अक्ल) मुझे नहीं थी कि आत्मा तो अरूपी है और जो जानता है, वह आत्मा है।

वह आत्मा जो जाननेवाला है, जो जानन-देखनस्वरूप है, ज्ञातादृष्टा है, चैतन्यस्वभावी है, वह आत्मा है। यह बात मैं उस समय इतनी दृढ़तापूर्वक नहीं जानता था, तो मैं उनको कुछ बता नहीं पाया, मैं चुपचाप बैठा। खाली रट लगाये है आत्मा-आत्मा-आत्मा-आत्मा, किधर है आत्मा? यह क्या है? अन्यथा मानने की रुचि। मैं उनको कोस नहीं रहा हूं हो, मैं मेरी कमज़ोरी आपके सामने रख रहा हूं कि मैं उस वक्त उनको कन्व्हीन्स नहीं कर पाया। लेकिन मुझे आपको क्या बताना है, उनके जो अन्यथा मानने की जो रुचि है, यह आत्मा वगैरह कुछ है ही नहीं न, देखो साहब मैं तो कहूंगा, जो तेरा स्वरूप है, उस स्वरूप को ही तू मानने को तैयार नहीं है; तो तुझे आत्मानुभव कब होगा? तुम्हारी भाषा और हमारी भाषा में समझना है। अरे! कालिया तेरा क्या होगा! ख्याल में आया? क्या कह रहे हैं? अरे! तूने अपने स्वभाव का ही विरोध–इनकार किया है, तूने अपने स्वभाव को ही विपरीत माना है।

स्वयं का अस्तित्व है कि नहीं, इसके बारे में भी जो साशंक है तो यह जो विपरीत मिथ्यात्व जिसके है, क्या वह आत्मानुभव कर सकेगा?

यह जो शास्त्र में लिखा है न भाई, वह हमें भासित होवें तो अगर मेरेमें ऐसा कोई ऐब है, खोटापन है, नालायकी है, तो वह मैं ही निकाल पाऊंगा, अन्य कोई निकालने में समर्थ नहीं है क्योंकि हमने एक ही रूल देखा है, एक ही सिद्धान्त को समझा है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ परिणमन नहीं करता है। देखो गुरुदेवश्री तो ऐसा बोलते थे, गुरुदेवश्री कहने से कानजीस्वामीजी की बात मैं कर रहा हूं हो, 'अरे भाग्यवंतना काने आ वात पडे'। यानी क्या? जो भाग्यवंत होगा, उसीके कान पर यह जिनेन्द्र भगवान की वाणी पड़ेगी। तो हम क्या मानते थे कि हमको भाग्यवंत बोल-बोलकर मस्का लगा रहे हैं। मैं जानता हूं, मैं जिनवाणी की गादी पर बैठा हूं, झूठ कुछ नहीं बोल रहा हूं; यह जो मेरे मन की बात है, मैं आपके सामने रखना चाहता हूं। शायद आपके मन में हो तो उड़ा देना, रखना है तो आपकी मर्जी है हो कि ये हमको कहते हैं तुम भाग्यवंत हो, तुम भाग्यवंत हो, तो हम जल्दी-जल्दी जाकर उनके पास बैठ जाते हैं। उस समय ऐसा लगता था, भाग्यवंतना काने आ वात पड़े यानी भाग्यवंत के कानों में यह बात आये। यह कैसा हो सकता है? लेकिन जैसे-जैसे शास्त्रों का अभ्यास हुआ, जैसे-जैसे हम उसमें अधिक-अधिक-अधिक रुचि लेते हुये पढ़ने लगे, तब यह बात लगी कि देखो, मेरा सगा भाई, मेरी सगी बहन है, मेरा चाचा है, मेरा फलां है, यह है, वह है, कोई नहीं आता है और हमने तो भाग्य उसीमें माना है कि हमने आज पांच लाख रुपये कमाये, कोई कहता है पांच लाख? अरे, मैंने तो सवा पांच लाख कमाये। अरे! ऐसे तो अनंत बार तेरे पास अनंत संपत्ति आयी है भाई। तो वही की वही बात हुयी न, उससे क्या हुआ? लेकिन यह बात आज तक तूने सुनी तो जरूर है, लेकिन वह सुनकर उसरूप तूने परिणमन नहीं किया है, तो वह नहीं सुनने के बराबर है।

कहां गया सोहम वह मेरा, आपकी भाषा में ग्रैंड सन; एक दफा हम घर पर गये इसके, तो उसकी माता ने यानी मेरी बेटी ने कहा जा बेटा पानी ले आ, उधर ही खड़ा है; पानी ले आ, अभी बाहर से आये हैं; जा-जा-जा अंदर जा। फिर भी उधर ही खड़ा, फिर तीसरी बार बोला, अरे पानी लेकर आ बताया न तुझे, सुनता नहीं है क्या? हां, सुना न मम्मी, तीन बार आपने बताया, पहली बार बोला जा बेटा पानी लेकर आ; दूसरी बार

बोला जा यह लोग बाहर से आये हैं, पानी लेकर आ; तीसरी बार बोलती है, क्या सुना नहीं है तूने ? इधर ही खड़ा है, पागल; सुना कि नहीं मैंने ? तो मैं आपसे पूछता हूं, उसने सुना कि नहीं ? बोलो ? बोलो ? क्यों चुप हो ? आप बताओ। *श्रोता: नहीं सुना।* नहीं सुना। सुना उसीको कहेंगे कि जो अंदर जाकर पानी लाये, ख्याल में आया ? हमने तो इस कान से सुना और उस कान से छोड़ दिया। वे तीन मूर्तियां लायी थी न हमने! तो हमने तो जिनवाणी अनंतों बार सुनी है। क्या कहा ? अनेक बार साक्षात् तीर्थंकर के मुंह से सुनी है लेकिन वह कैसे सुनी है ? जा बेटा, एक लोटा पानी भरकर ला – ऐसे सुनी है। अभी यह सुनकर, यह मिथ्यात्व के स्वरूप को जानकर, हम सम्यक्त्वरूप परिणमन नहीं करेंगे, तो क्या यह सुनना हुआ ? केवल सुनना-सुनना-सुनना, सुनकर क्या करेंगे ?

आप कहेंगे हमने गलती की कि इस पंडित को यहां बुलाया, वहां गुपचुप जाकर बैठना पड़ता है, यह सुनना नहीं है। तो यहां क्या कह रहे हैं देखो, जो विपरीत है यानी क्या ? देखो, आत्मा के स्वरूप को अन्यथा मानने को, मानने की रुचि को विपरीत मिथ्यात्व कहते हैं। अब वह विपरीतता कैसी है ? वह आगे लिख रहे हैं, पेज नंबर ३५ पर कि जैसे शरीर को आत्मा मानना, क्या कहा ? यह आत्मा जो है, वह कौनसा द्रव्य है, हमने देखा था। हां नितिनभाई ? *श्रोता: जीवद्रव्य।* जीवद्रव्य और यह शरीर ? हां जी, शरीर कौनसा द्रव्य है ? पुद्‌गलद्रव्य है। देखो भाई, खाना-वाना जोर से खाना हो! दो बाते हैं आप लोग कम खाना खाते हैं और मैं बहरा हूं। तो आप जो बोलते हैं वह मुझे सुनाई नहीं देता है और आप चार-चार, पांच-पांच लोग एकसाथ बोलते हैं और मैं सोचता हूं कि एक आदमी की इतनी एको–प्रतिध्वनि कैसे आती हैं ? जोर से बोलना भैया सब लोग।

तो यह शरीररूप स्वयं को मानना, आप बोलोगे यह पागल हो गये – एक जीवद्रव्य है, एक पुद्‌गलद्रव्य है – इतना हम नहीं जानते हैं ? लेकिन वह अपने को शरीररूप ही मान रहा है, क्यों साहब आप सुबह क्या करते हैं ? क्या करें, सुबह हम उठते हैं, मुंह हाथ धोते हैं और थोड़ासा एक्सरसाइज़ करते हैं और फिर घूमने जाते हैं। क्यों साहब ऐसा क्यों करते हैं ? इसलिये करते हैं कि हम स्वस्थ रहे, तो तूने स्वयं को आत्मस्वरूप समझा या शरीरस्वरूप समझा ? देखो, लोग कहते हैं आप बहुत नमक खाते हो साहब! इतना नमक मत खाना। व्हेरी बॅड, हेल्थ के लिये अच्छा नहीं है। आप शक्कर इतना खाते हैं ? अपने यहां ऐसा कोई

शुगर फ्री गुड़ मिलता है कि नहीं? ऐसा पूछते हैं लोग। यानी क्यों साहब ऐसा? शरीर के लिये हानिकारक है; शरीर के लिये हानिकारक है न, तू क्यों चिंता करता है? लेकिन मैंने मुझे शरीररूप ही माना है। देखो, आप देख लो, क्यों साहब? ऐसा पैर क्यों बदली कर दिया आपने? साहब आपको क्या मालूम है, हमें रोज इसतरह से बैठने की आदत नहीं है; आप छह-छह घंटा हमें बिठाते हो नीचे; पैर दुखे कि नहीं? अरे पैर दुखे न! तुमको कुछ नहीं हुआ न? लेकिन पैररूप मैं हूं, पैर मेरा है, ऐसी स्वामित्वबुद्धि है, ऐसी एकत्वबुद्धि है। इसलिये हमने यह पलटी किया और थोड़ासा हाश! अच्छा महसूस किया। तो हमने शरीर को अपनेरूप माना कि नहीं? देखो भाई, हमको तो ऐसे-ऐसे शिक्षागुरु मिले हैं, उनकी बात बताता हूं, नाम लेते हुये। आप जानते हैं, बुलंदशहर के पंडित कैलाशचंदजी? हां, पौने चार हो गये। अच्छा! उनकी बात बता कर ख़त्म कर देता हूं क्योंकि मुझे कथा सुनाने में अच्छा लगता है और हमारा नाती है, उसको भी अच्छा लगता है।

हं, तो क्या कहते हैं? वह आये थे हमारे यहां बम्बई में, दादर मंदिर में प्रवचन करते थे, तो पूछा? क्यों प्रफुल्लभाई, कहां गये थे आप? कल प्रवचन में नहीं बैठे थे? साहब जरासा काम था। अरे! जरासा काम था तो तूने जिनवाणी को ठुकराया; बड़ा काम होता, तो क्या करता तू? दूसरे दिन दूसरे को पूछा, क्यों माणिकचंद, कल नहीं आया था? साहब मैं बीमार पड़ा था। क्या बोले? तू बीमार पड़ा था? नहीं-नहीं-नहीं, यह मेरा शरीर बीमार पड़ा था। तब वे क्या बोले? तेरे बाप का शरीर। इतना तो मैं कड़क नहीं बोलता हूं भाई, हमारे गुरु इससे भी कड़क थे। यानी हमने माना और कहा कि मैं बीमार था। तू बीमार था? नहीं-नहीं, यह मेरा शरीर बीमार था। यह शरीर मेरा है यानी मैं शरीररूप हूं यह मान्यता अभी तक हमारी छूटी नहीं है। उन्होंने जो बात बतायी इ.स. १९७५ में, कितने साल हो गये भाई? तैंतीस साल हो गये। वह बात आज तक दिमाग से हटी नहीं। यह शरीर में जो एकत्वपना है, वह ऐसे ही छूटनेवाला नहीं है, ख्याल में आया? तो ये क्या लिखते हैं, यहां? कि जैसे शरीर को आत्मा मानना। इसकी विशेष बात अब हम चार बजे लेंगे। तब तक के लिये हम अभी विराम लेते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

३४. विपरीत मिथ्यात्व

यहां पर एक प्रश्न आया है। हम अभी विपरीत मिथ्यात्व को देखेंगे उसके पहले इस बात का हम जवाब देना चाहते हैं। यहां पूछा गया है कि सुबह आपने बताया था कि गृहीत मिथ्यात्व गये बिना अगृहीत मिथ्यात्व जाता नहीं है और एक बात यह भी बतायी थी कि पहले कई बार गृहीत मिथ्यात्व गया है किंतु अगृहीत मिथ्यात्व नहीं गया तो इस बात को कैसे समझें? अगृहीत मिथ्यात्व कैसे हटेगा? प्रश्न बहुत अच्छा है। देखो हमने तो यह बताया है कि अगृहीत मिथ्यात्व जो होता है वह अनादि का है, वह किसीने सिखाया हुआ नहीं है; यह शरीर मैं हूं, मैं शरीररूप हूं, यह जन्मते हुये बालक को भी सिखाना नहीं पड़ता है। देखो भैया, यह बात तो ऐसी है कि यह गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व की बात तो विशेषत: मनुष्यपर्याय की अपेक्षा से शास्त्रों में बतायी गयी है। लेकिन यह समझना कि जो अन्य गति के जीव हैं यानी अन्य देव गति के जीव हैं, नारकी जीव हैं उनके भी यह होगा; गृहीत भी होगा और अगृहीत तो है ही है। लेकिन हम जो अभ्यास कर रहे हैं, वहां यह बात विशेषरूप से मनुष्यपर्याय के जीवों की अपेक्षा से बतायी गयी है। अब उसकी अपेक्षा सामने रखते हुये हम सोचेंगे। अभी यहां क्या बताया? गृहीत मिथ्यात्व यानी क्या? कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्र के माध्यम से-खोटे उपदेश से, अपनी जो खोटी मान्यता है उसकी पुष्टि हो जाये वह गृहीत मिथ्यात्व है।

मैं सच बताता हूं आपको, वैसे हर बात सच ही बताता हूं लेकिन यह मेरी आदत है सच बात बताना – पूना में हमने करीब दो साल में आठ शिबिर लगाये थे। तो वहां पर एक भाईसाहब थे जो अपने जैनी थे। हां, उन्होंने ऐसा बताया कि हम ऐसे किसी गुरु के चक्कर में आये; हम सुबह चार बजे घर में शिवलिंग रखकर उसके ऊपर पानी डालते थे; तो सुबह चार बजे से लेकर शाम के चार बजे तक। उठते भी नहीं थे, बस एक जगह बैठे और यह चालू है-चालू है और बहुत बातें बतायी उन्होंने। लेकिन जब हमने आपको सुना, तो हम कितनी मूर्खता करते थे इस बात का हमें पता लगा। यानी उन्होंने क्या सोचा था कि हम इनकी पूजा करेंगे तो हमारे ऊपर जो कोई सांसारिक संकट आये हैं, या आर्थिक संकट आये हैं, वे सब हट जायेंगे। पहले ही शिबिर से उन्होंने वह प्रक्रिया भी छोड़ दी और उस सो कॉल्ड गुरु को भी शिबिर में आमंत्रित करके उसको भी सच्चा मार्ग सुनाया।

तो यह जो मान्यता है यह मिथ्या मान्यता दूसरों के कहने पर हुयी है, उसको गृहीत मिथ्यात्व कहेंगे। उन्होंने छोड़ दी, लेकिन अभी अगृहीत मिथ्यात्व गया नहीं न भाई, ख्याल में आया न? अगृहीत मिथ्यात्व यानी जो हमारा पैदाइशी है, जो कई भवों-भवों से हम साथ में लिये घूमते हैं, तो वह कैसे हटेगा? तो वह हटने के लिये वस्तु के स्वरूप को जानकर, पहचानकर, मानेंगे तो वह हटेगा। यह जो मैंने खोटी मान्यता की है, तो जब तक मैं सही मान्यता नहीं करूंगा तब तक वह छूटनेवाली है नहीं। कोई भी आकर आपकी मान्यता छुड़ा दे, ऐसा इस विश्व में शक्य ही नहीं है क्योंकि एक खूंटा हमने जोर से ऐसा गाड़ के रखा है। कैसा? कि हमारी जिंदगी में कोई तकलीफ आ जाये, कोई भी संकट आ जाये तो एक बात ध्यान रखना कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं कर सकता यानी एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का परिणमन कराये, ऐसे तीन काल में नहीं होगा, यह बात बिलकुल गले में बांधकर रखना। जैसे देखो, आपको मालूम है कि मैं जहां-जहां जाता हूं तो एक तावीज भेंट देकर आता हूं। नहीं समझे? हम बहुत जगह देखते हैं वह नारियल को लाल कपड़े में बांध कर घर में टंगवा देते हैं वैसा मैं कुछ नहीं करता हूं। वे कम से कम पांच रुपया तो लेते होंगे, मैं एक भी पैसा नहीं लेता हूं, लेकिन सबको तावीज, तावीज समझते हैं आप! नहीं?

आपने पहले जमाने में क्रिकेट कॅप्टन अझरुद्दीन को क्रिकेट खेलते हुये देखा होगा; जब-जब वह सेंचुरी मारता है, तो गले में से ऐसी कोई एक चीज निकालता है तो उसको ऐसा-ऐसा करके फिर उसको चूमेगा, उसके बाद फिर शर्ट के अंदर छोड देगा; वैसा तावीज मैं आपके गले में पहना रहा हूं। कौनसा तावीज है यह? जब-जब हमें कोई संकट आये तो पहले में पहले यह नक्की करना, यह जो मेरे पर संकट आया है, वह इसमें पर का कोई भी हाथ नहीं है; क्यों? कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का परिणमन करने में असमर्थ है, हो ही नहीं सकता है। यह कंठस्थ हो जाये न, केवल याद नहीं, हमारे दिमाग में, मस्तिष्क में छा जाये तो देखो कितना फर्क-अंतर पड़ेगा अपनी मान्यताओं में। लोग इसके पीछे भागे, उसके पीछे भागे। अरे! क्या बतायें साहब? उनके घरों में तो ऐसे लाइन में सारे के सारे भगवानों की तस्वीरें-फोटो लगती हैं, कोई भगवान छूटा नहीं, क्यों? यह नहीं तो यह; कोई ना कोई भगवान तो उनके पर मेहरबानी करेगा न! तेरा उनमें से एक पर भी भरोसा नहीं है इसलिये उन्होंने निकाला सबका मालिक एक है। क्या? कोई नहीं होगा तो यह है। वास्तविक कोई भी नहीं है, ख्याल में आया?

हम इस जैनदर्शन का अभ्यास करते हैं तो हमारी आंखों पर जो उलटी पट्टियां पड़ी हैं न, जो पर्दे पड़े हैं, वे फटाफट-फटाफट एक के बाद एक निकल जाते हैं। बस एक ध्यान रखना कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कतई कुछ कर ही नहीं सकता है। मैं ही मेरी मान्यताओं में मानता हूं कि यह मेरा कुछ काम कर देगा। यह नहीं तो वह, वह नहीं तो वह। कोई नहीं, जिनेन्द्र भगवान भी नहीं करेंगे हमारा काम क्योंकि वे तो केवल ज्ञाता दृष्टा हैं, जानन-देखन स्वभावी हैं तो अन्य तो कोई होंगे की नहीं करनेवाले? बिलकुल नहीं हैं क्योंकि द्रव्य का स्वभाव – कौनसे? जीवद्रव्य का स्वभाव सिर्फ जानना-जानना-जानना और जानना ही है अन्य का कुछ करना-करना-करना है नहीं और वह तो बारंबार मैं कुछ करूं, मैं कुछ करूं, मैं कुछ करूं ऐसे सोचता है, तो यह करूं-करूं में मरूं-मरूं की भावना है। ख्याल में आया? हां, आपके प्रश्न का उत्तर मिल गया होगा। देखो भाई! अगृहीत मिथ्यात्व जो है, जब तक हम वस्तुस्वरूप को नहीं समझते हैं, नहीं जानते हैं, नहीं मानते हैं तब तक वह छूटनेवाला नहीं है। प्रफुल्लभाई बात ऐसी है, देखो, अब आगे बढ़ते हैं।

अभी यहां क्या कहा, विपरीत यानी क्या? जैसा वस्तु का स्वभाव है वैसा नहीं मानना, विपरीत मानना, यानी बिलकुल अगेन्स्ट, एकदम विरुद्ध बात हो। उसको क्या कहेंगे? विपरीत मिथ्यात्व। यानी जो देव नहीं हैं उनको देव मानना,जो गुरु नहीं है उनको गुरु मानना, जो सत् शास्त्र हैं उनको नहीं मानकर कुशास्त्र को-सत् शास्त्र मानना; यह क्या है सारा? विपरीत मिथ्यात्व है। मैं जीवद्रव्य हूं, मैं आत्मा हूं यह न मानते हुये, मैं शरीर हूं यह मानना या शरीर को आत्मा मानना। देखो! हमने तो कई बार सुना है, आपने सुना नहीं होगा तो बहुत अच्छी बात है, सुनना भी नहीं कि किसी का जवान बेटा मर जाये, हाय-हाय मैं मर गया, हाय मैं मर गया। अरे! उसका बेटा मर गया है तो वह स्वयं को मरा हुआ मानता है और किसीने क्या बोलते हैं भाई? वसंतभाई, कि पैसा लगाया शेअर में और डूब गया, क्या? नुकसान हुआ, आर्थिक नुकसान हुआ तो पैसा निकल गया तो, मैं मर गया। पैसा पुद्‌गलद्रव्य है और मैं मर गया? यह मान्यता कैसी है? विपरीत मान्यता है।

तो यहां क्या कहते हैं, देखो जैसे शरीर को आत्मा मानना; अभी यह तो शरीर की और आत्मा की बात की। अभी आगे की जो बात है वह बहुत खतरनाक है लेकिन यहां मैं बैठूंगा तो आगम के अनुसार ही बात करूंगा; मेरे मन की, मेरे दिल की, मेरी मान्यता की

यह बात नहीं है। शास्त्रों में इसका बारंबार कथन आता है, इसको अगर आपको समझना है तो कुंदकुंद आचार्य का अष्टपाहुड नाम का जो शास्त्र है; जिसका अभी हमारे घर में रोज स्वाध्याय होता है, उसमें अभी सूत्रपाहुड को हम पढ़ रहे हैं उसके पहले दर्शनपाहुड में यह सारी बात बिलकुल आयी हुयी है। तो क्या कह रहे हैं देखो! वस्त्र, पात्र आदि सहित गुरु को निर्ग्रन्थ गुरु मानना, क्या कहा? हमने देखा था कि परिग्रह भी दो प्रकार के होते हैं, कौनसे देखे थे बहन? *श्रोता: अंतरंग परिग्रह और बहिरंग परिग्रह।* अंतरंग परिग्रह और बहिरंग परिग्रह- बाह्य परिग्रह जिसको कहते हैं।

तो अंतरंग परिग्रह में किसको-किसको कहा था हमने, याद है किसीको? नहीं कोई बात नहीं, मैं बताऊंगा क्योंकि अपने पास वक्त कम है। हां जी, पहला परिग्रह कौनसा है? *श्रोता: मिथ्यात्व।* अरे! मिथ्यात्व को परिग्रह कहा है भाई! हो कहां तुम? अरे! मिथ्यात्व तो महा भयंकर पाप है। ये सब पाप कितने हैं, जानते हैं आप? पाप कितने हैं जानते हैं? *श्रोता: पांच।* पांच! हिंसा, चोरी, झूठ, कुशील और ...। *श्रोता: परिग्रह।* परिग्रह, उसको क्या कहा? पांच पाप, ये पांच पाप यह जीव क्यों करता है? इन पांच पापों का बाप तो लोभ है, लोभ के वशीभूत होकर यह जीव पांच प्रकार के पाप करता है और लोभ क्यों करता है? क्योंकि पैसे के कारण मेरा भला होगा, मैं सुखी होऊंगा यह मिथ्यामान्यता यानी मिथ्यात्व के कारण से यह जीव इतने बड़े-बड़े घोर अनर्थकारक पाप करता है। तो यह मिथ्यात्व तो पापों का दादा है-ग्रँड फादर है। बाप कौन है? लोभ और यह मिथ्यात्व जो है, वह महा भयंकर हिंसा भी है। क्या कहा? यह मिथ्यात्वी जो है, वह भयंकर हिंसा कर रहा है। किसकी? जीवों की? अन्य जीवों की? नहीं-नहीं! स्वयं की, क्योंकि मिथ्यामान्यता करेगा तो अपने स्व तरफ कब आयेगा? तो क्षणे-क्षणे भयंकर भावमरण यानी क्षण-क्षण को भयंकर भावमरण यह जीव कर रहा है। क्यों? मिथ्यात्व के कारण। तो यहां कहते हैं, यह जो परिग्रह है, उस परिग्रह में पहला नाम जो है वह मिथ्यात्व का है।

बाद में चार कषाय, उसके बाद में नौ नोकषाय हैं यानी १ + ४ + ९ कितने हुये? बोल कितने हुये बीस-ट्वेंटी? बोल। *श्रोता: चौदह।* चौदह हो गये और बाह्य परिग्रह कौनसे हैं? *श्रोता: दस।* दस हैं, दस जो हमने देखे थे उसमें यह जो परिग्रह की जो बात बतायी है, वह मुनियों की अपेक्षा से, यानी जो साधु होते हैं जो मुनिराज होते हैं, वे इन

परिग्रहों से रहित होते हैं जिनको निर्ग्रन्थ कहा गया है । निर्ग्रन्थ का अर्थ क्या? ग्रन्थ यानी क्या? वह शास्त्र-ग्रंथ वह नहीं अरे! ग्रन्थ यानी ग्रन्थी यानी किसीसे लगाव, किसीसे विशेष आसक्ति। आपने किसीने शादी की तो होगी ही, तो शादी के टाइम में इधर वर का एक वस्त्र और उधर वधू का एक वस्त्र उसकी ग्रंथी-गांठ बांध देते हैं। क्यों? छोड़ना नहीं, बहुत शुभ है, मालूम है न? अनुभव की बात है भाई आप लोगों की। मेरी तो है, मुझे मालूम है। कोई ऐसा भी हो सकता है न, रजिस्टर्ड मॅरेज करके आया, क्या बांधेगा वह। क्यों? तो यह निर्ग्रन्थ यानी किसी भी बाह्य पदार्थों के साथ इस जीव की आसक्ति नहीं है, लगाव नहीं है, एकमेकपना नहीं है, तो ऐसा जो होगा उस जीव को निर्ग्रन्थ कहते हैं। इनके जो बाह्य परिग्रह के नाम बताये हैं, कोई कहना चाहेगा, बाह्य परिग्रह के नाम? हां, बोलो-बोलो। कौन बतावे? ऋतु आपको आता है? बाह्य परिग्रहों के नाम नहीं आते? अच्छा! हां आप बतायेंगे लताबेन? जोर से बोलना बेन। *श्रोता: धन, धान्य, गृह, जमीन, दास, दासी, सोना, चांदी, वस्त्र, बर्तन।* हां। हां दास, दासी बहुत अच्छा।

देखो दास, दासी, सोना, चांदी, वस्त्र, बर्तन और जमीन और गृह यानी घर आदि वगैरह ऐसे जो होते हैं, वे बाह्य परिग्रह हैं। यानी जिनके बाह्य परिग्रह हैं उनके अंतरंग परिग्रह होगा ही। मुनि की अपेक्षा से बात कर रहा हूं, उनमें यह अंतरंग परिग्रह यानी कौनसे? क्रोध, मान, माया, लोभ है, मिथ्यात्व है या नौ नोकषाय अभी जिनके बाकी हैं, उनके बाह्य में वस्त्र, पात्र आदि अवश्य होंगे। लगाव है न? तो क्या हम भूखे मरेंगे क्या? वस्त्र तो चाहिये। क्यों? समाज में घूमना है। अरे! तेरे अंतरंग में अभी कहीं कालिमा है, तो तुझे अभी भी मैं शरीररूप हूं, ऐसी तेरी मान्यता है, इसलिये तुझे वस्त्र रखने के विचार आ रहे हैं, ख्याल में आया? और जो दिगंबर मुनिराज होते हैं यह शरीररूप मैं नहीं हूं, ऐसी श्रद्धा तो निश्चितरूप से उनकी तो चौथे गुणस्थान में ही हुयी है, लेकिन अभी उनके सातवें गुणस्थान में या छठे गुणस्थान में तीन कषाय के चौकड़ी के अभावपूर्वक वीतरागता वर्तती है, यानी उनके अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ और प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभरूप जो कषाय हैं, वे हैं नहीं उनके पास। अभी उनके जो हैं वह केवल संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ हैं, जो नहीं के बराबर हैं।

जो श्रद्धा में जिनके मैं शरीररूप नहीं हूं और आचरण यानी स्वरूप में जो उग्र लीनता है, उसमें भी उन्होंने कन्फर्म किया है कि मैं शरीररूप नहीं हूं। तो शरीर को मैं संवारू, शरीर को मैं डेकोरेट करूं, शरीर को मैं संभालूं ऐसी इच्छा-भाव उनमें नहीं, क्योंकि जो अंतरंग में कषायों से नग्न हुये हैं, वे बाह्य में शरीर से नग्न ही होंगे। तो ऐसे मुनिराज जो होते हैं वे सच्चे मुनिराज हैं। क्या बताते हैं इधर? यह पेज नंबर ३५ पर सेकंड लाइन है, फर्स्ट लाइन में बोलते हैं, वस्त्र, पात्र आदि, आदि में आप यहां समझ लेना, हमारे अर्पलसाहब बोल रहे थे। टेलिफोन के सहित, कौनसा? वह क्या बोलते हैं? *श्रोता: मोबाइल।* मोबाइल-मोबाइल। मैं तो कहूंगा सूत्रपाहुड की अठारहवीं गाथा पढ़ लेना घर पर जाकर। जयश्रीबेन! अष्टपाहुड में दूसरा पाहुड है, सूत्रपाहुड उसमें अठारहवीं गाथा है कि मुनियों का स्वरूप तो यथाजातरूप होता है। नितिन, यथाजात यानी क्या? जैसे माता के गर्भ से बालक जन्मता है; यथाजात यानी जन्मा हुआ बालक जैसा होता है, वैसा मुनियों का स्वरूप होता है बाह्य में। तो अब यहां कोई डॉक्टर तो जरूर बैठे होंगे, बहुत सारे होंगे, एक तो है यह मुझे मालूम है। तो नेमिचंदजी आपने किसी बालक को चश्मे के साथ जन्म लेते हुये देखा होगा कि नहीं? सुना तो होगा कम से कम, देखना तो जरा मुश्किल है। तो यह यथाजातरूप हुआ कि नहीं? तो यह आदि में जोड़ देना हो। यहां तो केवल वस्त्र और पात्र दो बातें बतायी हैं आदि में तो और अनेक बातें होंगी।

भाई, यह आज की बात नहीं है, यह गुरुदेवश्री ने बात बतायी नहीं है, यह तो दो हजार साल पहले कुंदकुंद आचार्य ने जो अष्टपाहुड नामक शास्त्र लिखा है उस शास्त्र की यह बात है। मैं आपको तो गाथा सहित बता रहा हूं, सूत्रपाहुड की अठारहवें नंबर की गाथा पढ़ लेना। हम ऐसा बोले तो हम पागल, हम द्वेषी और जो करें वे? मैंने कहा यह बात सुनने के लिये जरा फौलादी छाती लेकर आना भैया यहां, यहां तो सत्य के अलावा आपको कुछ अन्य मिलनेवाला है ही नहीं। कोई अपनी मनगढ़ंत बातें, काल्पनिक या अपने मन के अनुसार, कतई नहीं होगी। तो यहां क्या लिखते हैं कि वस्त्र, पात्र आदि। आदि में आप लगा लेना जो भी आपको दिखता है, ज्ञान में आता है, क्या कहा? वस्त्र, पात्र आदि सहित गुरु को निर्ग्रन्थ गुरु मानना। यह निर्ग्रन्थ यानी अभी समझ में आया न, जो ग्रन्थी रहित हैं। किसी वस्तु के प्रति, किसी व्यक्ति के प्रति, कोई लगाव नहीं है, वे निर्ग्रन्थ हैं। आपने प्रवचनसार पढ़ा होगा तो उस प्रवचनसार में भी श्री कुन्दकुन्दाचार्य देव ने यह बात बतायी है कि जो

मुनिसंघ में रहते हैं, ऐसे मुनि भी आपस में शास्त्र के अलावा कोई बात करेंगे ही नहीं। क्यों? साथ में रहते हुये आपस में कोई अन्य बातें करेंगे, तो एक दूसरे के प्रति ममत्वभाव जागृत हुये बिना रहेगा नहीं।

हमारी बात देखो न। हम गत साल आये थे, तो हमको १०२ नंबर की रूम दी; इस साल आये, हमको १०३ दी; नहीं साहब हमको तो १०२ नंबर ही चाहिये, क्यों? गये साल तो दी थी न आपने? हमें उस जगह के प्रति लगाव है, आसक्ति है, ग्रन्थी लगी है उससे। अभी आप ही सोचना कि आपकी जगह पर दूसरा कोई बैठे तो आपको कैसा लगे? यह मेरी जगह है, तू इधर बैठ, मैं इधर बैठूंगी। अरे! अभी दो दिन, चार घंटे भी तू यहां नहीं बैठी है तो यह जगह मेरी, यह जगह तेरी! ऐसे मुनि भी आपस में कोई ऐसी बात नहीं करेंगे कि जिससे एक दूसरे के साथ लगाव हो जाये। देखो भैया, मुनियों का स्वरूप हमें पता नहीं है और जो गुरुदेवश्री ने हमें यह बात स्पष्ट बतायी, समझायी, ख्याल में आया? तो यहां कह रहे हैं कि वस्त्र, पात्र आदि सहित गुरु को निर्ग्रन्थ गुरु मानना। यह मानने के लिये आपको किसीने जबरदस्ती माथे पर बंदूक लगायी है कि आपको मानना पड़ेगा? हां, तू मान नहीं तो तेरेको उड़ा दूंगा अभी एक मिनट में। क्या? अपने साथ लफड़ा मत करना, ऐसा कोई बोल तो नहीं रहा है, हां हम ही मूर्ख हैं कि हम जाकर नाक घिसते हैं उनके सामने!

तो यह हमारी मान्यता है, कोई आपको जबरदस्ती से तो नहीं कह रहा है कि ऐसा करो-ऐसा करो, तो यह क्या है? यह विपरीत मिथ्यात्व की बात है। देखो भाईसाहब, हम तो किसी व्यक्ति विशेष के स्वरूप को देखकर यह बात बिलकुल नहीं कह रहे हैं। आगम के अनुसार जो बात है उसीको हम आपके सामने दोहरा रहे हैं। आप किंचित् भी मन में कोई शंका नहीं रखें कि हम अपनी बातों को हांक रहे हैं। ख्याल में आया? अगर अष्टपाहुड यहां होता तो मैं अभी आपको बताता था। है नहीं, चलो! आप लकी हो और क्या कहते हैं देखो, जैसे शरीर को आत्मा मानना, वस्त्र, पात्रादि सहित गुरु को निर्ग्रन्थ गुरु मानना, स्त्री के शरीर से मुनिदशा एवं मोक्ष मानना। यह तो साहब सही-सही बात तो यह है कि अन्य कोई नहीं, लेकिन हमारे ही, भूले भटके ऐसे जो भाईबंद हैं, जिनको हम श्वेतांबर कहते हैं, उनकी यह मान्यता है । वे क्या बोलते हैं? कि स्त्रीपर्याय में जीव को मुक्ति होगी।

तो बात तो ऐसी है, अगर आपको मालूम नहीं होगा तो मैं बताऊंगा। किसी भी जीव को सम्यग्दर्शन होता है और उस जीव का सम्यग्दर्शन टूटता नहीं, छूटता नहीं, ऐसा जीव अगले भव में पुरुष ही जन्मेगा। क्या कहा? यानी कोई भी देव में जाये, कहीं पर भी जाये; केवल नरक में जायेगा, तो वहां पुरुष-स्त्री ऐसा तो कोई भेद है नहीं, वहां तो सारे नपुंसक हैं। उस बात को अलग रखते हुये। वह जीव सम्यक्त्वी कोई होगा और उसको अगला भव पुरुषपर्याय का ही मिलेगा।

अब थोड़ीसी बात आगे बताता हूं – तिर्यंच में जावे, देव में जावे, या दुबारा मनुष्य होवे; उसके लिये भी काफी कंडिशन्स हैं, वह अभी आपके सामने नहीं रखता हूं, हां, क्योंकि अभी वह विषय थोड़ासा करणानुयोग का है। अब वह बताऊंगा तो आप थोड़ासा और अधिक बोअर हो जायेंगे। इसलिये इतना मैं जरूर कहूंगा, आपने छहढ़ाला पढ़ी ही होगी तो उसमें भी यह बात बतायी है कि जो कोई सम्यक्त्वी होता है वह अगले भव में नारी नहीं होता है, षंढ नहीं होता है, वगैरह-वगैरह। वह तो सम्यक्त्व के साथ पहले नरक में जानेवाले क्षायिक सम्यग्दृष्टि की बात छोड़कर अन्य की बात है। अभी यहां क्या बात चल रही है? तो जब वह जीव पुरुष ही होगा तो स्त्रीपर्याय में रहेगा कैसे? नहीं-नहीं, जो स्त्रीपर्याय का जीव है, वह सम्यक्त्व धारण करेगा और उसी पर्याय में मोक्ष में जायेगा, ऐसा भी नहीं होगा। तो किसी के मन में ऐसा आ जावे, यह किसने लिखा है, भाई, आचार्यों ने लिखा है, आचार्य कौन थे? पुरुष थे न? नक्की स्त्री द्वेष्टा होने चाहिये। इसलिये उन्होंने स्त्रियों को अलग कर दिया। अरे! प्रभु, तूने स्वयं को स्त्री माना है या आत्मा माना है? मैं पर्याय जितना हूं, ऐसा अपने को माना है। जिसकी पर्यायदृष्टि है, उस जीव को द्रव्यदृष्टि होगी कि नहीं होगी? जब तक पर्याय जितना ही मैं हूं ऐसा उसने माना है तो उसको तो अपने आत्मा का अनुभव होगा ही नहीं, पहली बात। जो बीच में अपनी बात चल रही थी कि जो स्त्री, उसी पर्याय में सम्यक्त्व प्राप्त करेगी तो उसके अंतरंग में स्थिरतारूप जो कोई स्वरूप अनुभव का जो कोई पुरुषार्थ है, वह पांचवें गुणस्थान से ऊपर का हो ही नहीं सकता। आगम की भाषा में कहना है, तो उसको तो दो कषाय चौकड़ी का अभाव हो सकता है और जो तीन कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक जो वीतरागता मुनियों में होती है, उतना उग्र पुरुषार्थ तो उस स्त्रीपर्याय के जीव को होता ही नहीं।

जब तक मुनिदशा नहीं होती है तब तक वह श्रेणी मांड़ नहीं सकते और जब तक श्रेणी नहीं मांड़ सकते तब तक उसके पूर्ण वीतरागता नहीं होगी; जब तक वीतरागता नहीं होगी, तब तक उसको सर्वज्ञता नहीं होगी और जब तक सर्वज्ञता नहीं होगी तो मोक्ष होने का सवाल ही नहीं हैं; ख्याल में आया? तो उन्होंने क्या आयडिया की? यह आयडिया है हो! सब! अभी हम जानते हैं अपने हिंदुस्तान में क्या बातें चल रही है? इलेक्शन आ गया साहब। तो किसीने डिक्लेअर किया दो रुपया किलो चावल हम आपको देंगे! तो सब लोक उसको जाकर व्होट देने लगे। इन्होंने अनाउन्स किया, आप जानते हैं, बोलने की जरूरत है? तो उन्होंने बोला, हम स्त्रियों को मुक्ति देते हैं। चलो धमा-धम, दौड़ा-दौड़ चालू हो गयी। परंतु जो वस्तुस्वरूप है, उससे अगर विरुद्ध कोई बात कहते हैं तो उसका फल क्या है, मालूम है आपको? बोलो नलिनभाई! *श्रोता: नरक, निगोद।* निगोद है। एक दफा कोई जीव निगोद में जायेगा और निगोद, निगोद, निगोद, बारंबार निगोद-बारंबार निगोद ऐसा अगर कोई निगोद में अधिक से अधिक काल रहेगा तो वह कितने काल रहता है, कुछ मालूम है जयश्रीबेन? *श्रोता: असंख्य काल।* ऐसे नहीं, पक्का चाहिये। हां। महेंद्रभाई आप बता रहे हैं? *श्रोता: असंख्य पुद्गलपरावर्तन।* आप जो बता रहें है, असंख्य पुद्गलपरावर्तन वह तो एकेन्द्रिय में रहने का उत्कृष्ट काल है। लगातार निगोद में रहने का उत्कृष्ट काल ढाई पुद्गलपरावर्तन है। यह परावर्तन क्या होता है? अब वह बहुत लंबी बात है। पुद्गलपरावर्तन क्या होता है? वह भी बात जुदी है। इतना समझना, वह जीव अनंतकाल तक वहीं रखड़ेगा। एकेन्द्रियपर्याय से बाहर निकले ही नहीं भाई! ख्याल में आया? शास्त्र में तो ऐसा बताते हैं कि जिसके साधिक दो हजार सागर त्रसपर्याय खत्म होने को आयी है, उसके ऐसे परिणाम जरूर होंगे। अब यह सारा हम क्या करें? यह तो हमें कुछ-कुछ हमारे जो सीनियर लोग हैं, उनके लिये यह बात रखनी पड़ती है। अब बच्चों के लिये थोड़ासा डिफिकल्ट हो जायेगा लेकिन करूं क्या? हमें तो बच्चों को भी संभालना है और बड़ों को भी संभालना है। करें क्या? देखो-देखो, तो यहां कह रहे हैं कि यह स्त्री अवस्था जो है तो हमने दूसरी आयडिया निकाली; हमने यानी हमारे भाइयों ने।

एक तीर्थंकर को ही स्त्रीपर्याय दे दी; चलो, अभी क्या आवाज है तुम्हारी? हां कौनसे हैं वह? *श्रोता: मल्लिनाथ।* मल्लिनाथ! चलो मल्लिनाथ। तो मल्लिनाथ को स्त्रीपर्याय में मोक्ष हुआ है, ऐसा बताते हैं। तो हमने क्या बताया था अभी आपको? हम देखते हैं

अपने यह मल्लिनाथ जो भगवान हैं, वह कौनसे भूमि के हैं साहब? भरतभूमि के! अभी जो चौबीस तीर्थंकर हैं उनमें, उनका कौनसा नंबर लगता है? *श्रोता: बीस, बाईस।* हां? चलो, सब लोग सब कुछ जानते हैं कि यह हमारे तीर्थंकर हैं, नंबर कोई नहीं जानता है, हां? *श्रोता: ओगणीस।* हां, ओगणीस-ओगणीस, उन्नीस – १९। तो देखो मल्लिनाथ जो हैं तो वे तो भरतभूमि के तीर्थंकर हैं और जो-जो भरतभूमि के तीर्थंकर हैं, भरतक्षेत्र कहो, भरतभूमि कहो एक ही बात है; उनके पांच कल्याणक अवश्य होते हैं। यह तो आपको बात मालूम है कि नहीं? तो पांच कल्याणकों में पहला कल्याणक कौनसा होता है? *श्रोता: गर्भकल्याणक।* तो जो तीर्थंकर होनेवाले जीव हैं, वे गर्भ में ही तीन ज्ञान के धारी होते हैं। कौनसे-कौनसे? सम्यक्-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान। वे सम्यक्त्वी होते हैं भाई! तो हमने पहले नियम कौनसा देखा था कि सम्यक्त्व के साथ जो कोई जन्मेगा उसको स्त्रीपर्याय हो ही नहीं सकती। तो क्या कहेंगे मुद्दई लाख बुरा चाहे तो क्या होता है? जो कुछ सोचना है सोचो न! वही होता है जो जिनेन्द्र भगवान के ज्ञान में झलका है। क्या कहा? पांच कल्याणक जिनके होते हैं, पांच कल्याणक में गर्भकल्याणक में, वह जीव सम्यक्त्व सहित गर्भ में आता है। तो वे स्त्रीपर्याय में जन्मे कि नहीं फिर? चलो, उसको छोड़ो।

वह जो मल्लिनाथ का जीव कौनसे स्वर्ग में से आया था आपको मालूम है? भाई, आप जानते हैं? कौन जानता है? कांतिभाई आप जानते हैं? कोई बात नहीं, हम बतायेंगे आपको। अपराजित नाम का जो स्वर्ग है, हां उस स्वर्ग में केवल सम्यग्दृष्टि ही जीव होते हैं; सम्यग्दृष्टि जीव ही वहां जन्मते हैं। तो वहां पर भी सभी देवों की पुरुषपर्याय ही होती है। क्यों? हम जानते हैं कि ऊपर के जो स्वर्ग हैं, ग्रैवेयक, अनुत्तर और अनुदिश, वहां कोई स्त्री जन्मती ही नहीं। जो स्त्रीपर्याय की देवियां हैं, वे तो पहले और दूसरे स्वर्ग में जन्मती हैं और जो ऊपर के सोलहवें स्वर्गों तक के देव हैं, वे अपनी-अपनी नियोगिनी स्त्री को लेकर अपने-अपने स्वर्गों में जाते हैं; लेकिन ग्रैवेयक, अनुत्तर और अनुदिश में कोई भी स्त्रीपर्याय का जीव रहता ही नहीं है; वहां के सारे जीव ब्रह्मचारी हैं और वह भी पुरुषपर्याय के। तो अपराजित स्वर्ग में भी वह पुरुषपर्याय के थे, अब अपराजित स्वर्ग में कौन जावे? यहां जो कोई कर्मभूमि के जीव हैं, जो मुनि अवस्था के भावलिंगी संत हैं, ऐसे जीव का अगर मरण हो जाये तो वह ऊपर के स्वर्गों में जावे। तो हमने क्या देखा? जो मुनि अवस्था है उसमें भी वह पुरुष, स्वर्ग में गया वहां भी पुरुष, स्वर्ग से यह मल्लिनाथ के रूप में जन्मा वह भी पुरुष।

इस बात का हमें पता नहीं है तो हमने उनको भी स्त्रीपर्याय बहाल कर दी और बोल दिया कि स्त्रीपर्याय में मोक्ष है। अरे! वे तीर्थंकर हो गये और आपको मोक्ष नहीं मिले? ऐसा कभी होता है? तो हम तो कैसे भोले, हां-हां बोल दिया। मैंने कहा भाई आकरी वात छे हो! यानी कड़क बात है। कांतिभाई-नाराजी नहीं लेनी। यहां क्या कह रहे हैं, देखो-देखो! स्त्री के शरीर से मुनिदशा एवं मोक्ष मानना यह क्या है? विपरीत मिथ्यात्व है। जैसा वस्तु का स्वरूप है, उससे विपरीत जानना, मानना यह मिथ्यात्व है। कैसा मिथ्यात्व है? विपरीत मिथ्यात्व है।

हमने तो शास्त्र की बात आपके सामने रखी है कि तीर्थंकर हुये उसके पहले से वह पुरुषपर्याय का जीव था, क्योंकि वह सम्यग्दृष्टि जीव था। तो मल्लिनाथ की पर्याय में भी वह निश्चितरूप से पुरुष ही होना चाहिये। यानी यह जो बातें हैं, वे मनगढ़ंत हैं, काल्पनिक हैं और यह जो अष्टपाहुड नामक शास्त्र है, उस अष्टपाहुड शास्त्र में जो कुछ बातें हैं, उसके ऊपर पंडित जयचंदजी छाबड़ा; वह आज से करीबन दो सौ-तीन सौ साल पहले हुये हैं, उन्होंने भी भावार्थ में यह बात लिखी है। यह आज की बात नहीं है नेमिचंदजी, गुरुदेवश्री की बात नहीं है; गुरुदेवश्री जन्मे नहीं थे, उसके पहले से यह बात आयी है। हम तो जो दिखे उसको पकड़-पकड़ कर हां, इन्होंने नया धर्म चालू किया, यह ऐसा करते हैं, वह ऐसा करते हैं। अरे भाई! तू शास्त्र का स्वाध्याय तो कर! फिर जबान चला, ख्याल में आया? हमें तो कुछ पढ़ना नहीं है, एक ने बताया हां तो दूसरे ने कहा...। तो कथा सुननी है क्या?

देखो जंगल में एक दफे क्या हुआ, तूफान आया; तूफान में क्या हो गया कि एक झाड़ का पत्ता गिरा; वहां खरगोश बैठा था। वह खरगोश के सामने वह गिर गया, तो वह डर गया। आप जो जानते हैं खरगोश कैसे होते हैं? बहुत डरते हैं, डरपोक होते हैं, तो उसने जोर-जोर से भागना चालू किया। वह समझा कि आकाश गिर रहा है; आकाश गिर रहा है; तो दूसरे ने पूछा क्या हो गया? अरे! आकाश गिर रहा है, वह भी उसके पीछे भागने लगा और जैसे आगे जाते गये; एक के पीछे एक, एक के पीछे एक भागने लगे। आकाश गिर रहा है, आकाश गिर रहा है; दौड़े-दौड़े-दौड़े फिर एक कोई मिल गया। भाई क्या हो गया आपको? हमारे जैसा बूढ़ा कोई मिल गया होगा उनको। उसने पूछा क्या हो गया? बोले अरे! यह आगे दौड़ता है, तो मैं उसके पीछे दौड़ता हूं; उसको पूछा,वह बोलता

है वह आगे दौड़ता है; ऐसा करते-करते... आकाश गिर रहा है, जरा ऊपर तो देख! ऐसी ही हमारी हालत हो गयी है। हम शास्त्र स्वाध्याय नहीं करते और जो कुछ मनगढंत बातें हैं उनको फॉलो करते हैं और वैसा मानते हैं। तो उसको क्या कहा है यहां? विपरीत मिथ्यात्व। अगर हमारी मान्यता में ऐसी कोई बात हो तो निकाल बाहर कर दो और नहीं हो तो बहुत बढ़िया और नये दूसरे मिथ्यात्व करने के लिये जगह है ना? क्या कहा, देखो-देखो!

दूसरी बात क्या बताते हैं? स्त्री के शरीर से मुनिदशा एवं मोक्ष मानना, उसका आगे का पॉइंट क्या है? केवली भगवान को ग्रासाहार मानना, यह भी विपरीत मिथ्यात्व है। ग्रासाहार यानी समझते हैं आप? नहीं? एक ग्रास यानी एक कवल; हम खाना खाते हैं न, तो एक-एक ग्रास यानी ग्रास यह संस्कृत, हिन्दी शब्द है; कवल, कवलाहार जिसको कहते हैं, ऐसा लेकर खाना, हां। *श्रोता: निवाला।* हां हिन्दी शब्द है निवाला यानी यह क्या कहते हैं, केवली भगवान को ग्रासाहार? यह क्यों बताया भाई ग्रासाहार? केवली भगवान खाना खाते हैं, तो हमको खाने में क्या तकलीफ है? तो अपनी साइड, अपनी बाजू सेफ करने के लिये केवली भगवान का ही स्वरूप बदल दिया। मैं आपसे पूछता हूं आपकी बात पूछता हूं हो! जब आपको भूख लगती है वहां साढ़े ग्यारह बजे भोजनालय खोलते हैं और वह साढे बारह, एक बजे तक नहीं खोलेंगे, तो आपको क्या होगा? *श्रोता: आकुलता होगी।* आकुलता होगी, है न? यानी भूख लगने से हमें दु:ख होता है या आनंद होता है, क्या कहते हैं आप? *श्रोता: दु:ख होता है।* दु:ख होता है। इसमें आपका कोई मंतव्य हो तो बताना हो, तो हमने केवली को कैसे समझा है? कैसे माना है? तो कहते हैं केवली अनंतसुखी है और जिसके अनंतसुख है उसको भूख का दु:ख बाकी रहना, यह कहां तक उचित बात है? मणिभाई! भाई, किसीका नाम लिया तो ऐसा मत समझना कि उनकी यह मान्यता है, यह तो इनकी और हमारी पहचान है इसलिये हमने इनका नाम लिया।

जिसको अनंतसुख है, उसको दु:ख? हां, और आगे क्या लिखते हैं देखो, केवली भगवान को ग्रासाहार, रोग, उपसर्ग, वस्त्र, पात्र, पाटादि सहित मानना! अभी आगे की बात रखता हूं यहीं, यानी देखो, रोग होगा तो वह जीव दु:खी रहेगा या सुखी रहेगा? महावीर भगवान को तो ऐसा बोलते हैं, मुझे तो पक्का मालूम नहीं है लेकिन मैंने सुना जो है कि उनको पेचिस हो गये! बोलते हैं, क्या होता है? यानी जुलाब लगना। भगवान को ऐसा?

अरे! तीर्थंकर होनेवाले जीव को तो जन्म से ही नीहार यानी मल-मूत्र नहीं होते और केवलज्ञान होने के बाद पेचिस? भगवान के स्वरूप को तूने नहीं जाना है। ख्याल में आया? तो क्या कहते हैं? उनको एक तो पहले कवलाहार है यानी ग्रासाहार है यानी वह खाना खाते हैं ऐसा तुमने माना यानी वह अभी भी वे पूर्ण वीतराग हुये नहीं हैं, सुखी हुये नहीं हैं क्योंकि उनके अभी यह सब मौजूद है। अब आगे बताते हैं उपसर्ग, रोग की तो बात बता दी आपको; उपसर्ग होना बात तो ऐसी है, मुनि अवस्था में किसी जीव के उपसर्ग हो जाये वह बात तो सही है, लेकिन जब केवलज्ञान हो जाये उस समय उसको उपसर्ग? यानी उनको कोई ऐसा हो ही नहीं सकता है क्योंकि बारहवें गुणस्थान तक उपसर्ग होता हो तो होवे, लेकिन जब केवलज्ञान प्राप्त होता है तो वे उपसर्ग से रहित हो जाते हैं। तो उन्हें उपसर्ग, रोग मानना भी विपरीत मिथ्यात्व है और क्या? वस्त्र, पात्र आदि सहित, अभी इसकी तो बहुत धुलाई हुयी है। करनी है अभी? मैं पूछता हूं वस्त्र की बात लेते हैं, पात्र को छोड़ो, अब केवली भगवान की बात तो छोड़ो हम मुनियों की लेते हैं।

मुनियों का स्वरूप कैसा होता है? यह अंतर्मुहूर्त में स्वरूप में लीनता करें वह सातवां गुणस्थान और अंतरंग में से बाहर आये, शुभ परिणाम होवे वह छठा गुणस्थान जिसको प्रमत्त दशा कहते हैं; तो ऐसे अंतर्मुहूर्त में हजारों बार स्वरूप में लीनता, स्वरूप से बाहर, स्वरूप में लीनता, स्वरूप से बाहर, ऐसी उनकी अवस्था होती है; ऐसे मुनियों को मुनि कहते हैं, भावलिंगी संत कहते हैं। तो यहां, क्या बात कर रहे हैं? अगर हम कोई वस्त्र रखें? कितने? मिनिमम कितने होने चाहिये साहब आपके हिसाब से? किसको? मुनि को नहीं, किसीको वस्त्र रखने हैं तो मिनिमम कितना रखेंगे? हां भाईसाहब? *श्रोता: दो, दो।* दो, दो यानी एक जोड़ी क्योंकि अभी हम पहने हैं तो वह गंदे हो गये तो धोयेंगे कि नहीं? धुलेंगे कि नहीं? तो वही गीले वस्त्र पहनेंगे क्या? तो उसके लिये एक स्पेअर होना चाहिये न? बराबर! अब वह स्पेअर हम रखते हैं। उसकी जो धुलाई होगी तो उसके लिये पानी चाहिये, उसके लिये साबुन चाहिये, उसके लिये अन्य - अनेक बातें चाहिये। तो ये सारी बातें कहां से लायेंगे वे? अब वस्त्र को सुखाये और सुखाते समय कोई उठाकर नहीं ले जावे, इसके लिये उसकी तरफ ध्यान देंगे या स्वरूप में लीनता करेंगे? ख्याल में आया? तो यह तो मुनियों को भी योग्य नहीं है वस्त्र, पात्र आदि रखना, तो केवली भगवान को वस्त्र, पात्र, पाट आदि सहित बोलना, समझना, मानना यह कहां तक उचित बात है? पाट यानी

जिस पर विराजमान होते हैं लेकिन अपने तीर्थंकर तो वह रत्नजड़ित सिंहासन होता हुआ उससे भी अद्धर रहते हैं। अद्धर समझते हैं आप? उसको छूते नहीं है, ऐसे ऊपर विराजमान होते हैं। तीर्थंकर का ऐसा स्वरूप होता है और ऐसे तीर्थंकरों को क्या कहते हैं? देखो, ग्रासाहार, रोग, उपसर्ग, वस्त्र, पात्र, पाट, आदि सहित; अभी आदि में सब ले लेना; क्या लेना है साहब आपको आदि में? कुछ भी नहीं? आंगी और बाकी सब बातें समझ लेना; मुकुट, हार आदि जो कुछ होता है वह।

और क्या कहते हैं? उनको क्रमिक उपयोगवाला मानना। क्रमिक उपयोग यानी समझ में आया? हां, बोलो बेन। *श्रोता: ज्ञान दर्शन का उपयोग छद्मस्थ के क्रमिक होता है।* हां, बहुत अच्छा है। अच्छी बात बतायी आपने, देखो इनको यह बताना है और जो असलियत में बात ऐसी ही है कि तुम-हम जो छद्मस्थ जीव हैं, यह छद्मस्थ क्या होता है, रश्मिबेन? *श्रोता: पूर्ण ज्ञान नहीं होता है।* बहुत अच्छा! बहुत अच्छा! बहुत अच्छी बात बतायी, जो सर्वज्ञ नहीं है, वह छद्मस्थ है। तो यह क्या हो गया? छद्मस्थ क्या होता है? छद्म यानी क्या है – आवरण और आवरण में जो स्थित है। आप कौन हो? हम गृहस्थ हैं क्योंकि हम घर में स्थित हैं और हम कैसे हैं? छद्मस्थ हैं। कौनसा आवरण है हमारे में? तो कहते हैं ज्ञानावरण और दर्शनावरण सहित जो हैं वे छद्मस्थ, आवरण सहित हैं, बात ख्याल में आयी? और जिनेन्द्र भगवान कैसे हैं? आवरण रहित हैं। तो मैं आपसे पूछूंगा कि जो जिनेन्द्र भगवान हैं यानी जो सर्वज्ञ हैं उनके मतिज्ञावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मन:पर्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरण में से कौनसा हट गया है? क्योंकि वे केवली भगवान हो गये हैं। हां जी? *श्रोता: चार।* चार – किसको रखा आपने? हमने तो पांच के नाम बताये – हां? हां, जी? *श्रोता: उनके केवलज्ञान प्रकट हुआ है, चार नहीं है।* आपने चार आवरण नहीं बताये न बहन? कोई बात नहीं, कोई बात नहीं, स्लिप ऑफ टंग। सुनो, सुनो, सुनो, हां जी अरे! कौन-कौन बोल रहे हैं यह ? *श्रोता: चारों हट गये।* चारों, कौनसा बाकी रह गया? *श्रोता: एक भी नहीं रहा।* एक भी नहीं, तो पांचों गये न बहन? *श्रोता: चारों हट गये, केवलज्ञान प्रकट हुआ है।* देखो आपका कहना है कि उनके मतिज्ञानावरण हट गया बराबर; श्रुतज्ञानावरण हट गया; अवधिज्ञानावरण हट गया; मन:पर्ययज्ञानावरण हट गया; चार हट गये, केवलज्ञानावरण बाकी है और फिर भी केवलज्ञान हो जाये, तो आपको बताना है पांचों ही आवरण नहीं है न! आप तो चार ही की बात बता रहे हैं हमें। भाभीजी

आपको बात ख्याल में आती है? हां। हमारे शरयुबेन की भाभी, मैं नाम तो भूल गया हूं आपका। देखो हम जो हैं न, पहले टू द पॉइंट समझें। इनके कोई आवरण ही नहीं है इसलिये छद्मस्थ नहीं है, वे तो सर्वज्ञ हैं, आवरण रहित हैं, कौनसा? ज्ञानावरण भी नहीं है और दर्शनावरण भी नहीं है। ख्याल में आया? तो उनको कहेंगे, आवरण रहित सर्वज्ञता जिनके प्रकट हुयी है वे सर्वज्ञ हैं।

जिसको हम दूसरी भाषा में कहेंगे कि वे क्षायिकज्ञानी हैं; क्षायिकज्ञानी का अर्थ क्या है? कोई भी ज्ञानावरण बाकी नहीं है – सबका क्षय हो गया है वे क्षायिकज्ञानी हैं; वही सर्वज्ञ हैं; उन्हींको हम केवली भगवान कहते हैं; उन्हींको हम जिनेन्द्र भगवान कहते हैं। तो क्या बात हुयी? ये जो छद्मस्थ जीव हैं, हम-तुम जो छद्मस्थ हैं, आवरण सहित हैं; मैं आपसे पूछूंगा, आपको केवलज्ञानावरण है कि नहीं साहब? हां या ना में जवाब दो भैया? *श्रोता: है। अन्य श्रोता: नहीं है।* है! आप नहीं बोलते हैं। अभी हमें झगड़ा नहीं करना है । सही बात को डिसाइड करना है न? अरे भाई! केवलज्ञानावरण हमें नहीं होगा तो केवलज्ञान अभी प्रकट होगा हमें। आवरण है न? कर्मों का आवरण निमित्तरूप की बात है। पल्लवी बात ध्यान में आती है?

तो हम छद्मस्थ हैं तो हमारा ऐसा होता है कि हमारा ज्ञानोपयोग, दर्शनोपयोगपूर्वक होता है। यानी पहले देखो यह उपयोग जो है, उस उपयोग के दो भेद हैं – एक दर्शनोपयोग और एक ज्ञानोपयोग; तो यह उपयोग यानी आत्मा का जो अटेन्शन है जिसको हम कहेंगे बिलकुल स्थूल बात मैं बता रहा हूं। यह अटेन्शन है यानी आत्मा का उपयोग लगना; किसी बात में उसका लक्ष जाना उसको उपयोग कहेंगे। देखो, मैं आपसे पूछता हूं, अभी आपका उपयोग किसमें लगा है? स्वाध्याय में, तो उस वक्त आपके रसोई बनाने का जो कोई ज्ञान होगा वह है कि गया? *श्रोता: है।* है, लेकिन जब आप रसोई बनायेंगे तब? शास्त्र स्वाध्याय की बात लब्धरूप रह जायेगी और रसोई बनाने में हमारा उपयोग लगेगा। भाई, इतना नमक डालना है इतना जो कुछ करना है। ख्याल में आया? तो यह उपयोग हमारा जो है, अभी किसी विशिष्ट वस्तु में लगा है, तब अन्य वस्तु में नहीं है। यहां कहते हैं दर्शनोपयोग पहले होता है और बाद में ज्ञानोपयोग होता है; यानी पहले सामान्य अवलोकन होता है फिर वहां विशेष अवलोकन चलेगा; तो यह क्रमिक उपयोग है, किनका? छद्मस्थों का; यानी छद्मस्थ के पहले दर्शनोपयोग होगा उसके बाद में ज्ञानोपयोग होगा।

यह ज्ञान की परिणति नहीं हो रही है, ऐसी बात नहीं कर रहे हैं, उपयोग वहां लगा है दर्शन में क्योंकि जीव चैतन्य स्वभावी है, तो चैतन्य उपयोग के दो भेद हमने देखे थे – एक दर्शनोपयोग और एक ज्ञानोपयोग। जब दर्शनोपयोग हो रहा हो उस समय ज्ञानोपयोग नहीं हो रहा है। अभी आप हिंदी सुन रहे हो। तो कांतिभाई आपका कच्छी भाषा की तरफ, या अन्य भाषा की तरफ उपयोग नहीं है न? हिंदी में लगा है। तो वैसे ही जब दर्शन में उपयोग लगा है, तब ज्ञानोपयोग नहीं हो रहा है। तो शास्त्र में ऐसा कहते हैं कि जो छद्मस्थ जीव हैं उनके क्रमिक उपयोग है, ज्ञानोपयोग-दर्शनोपयोगपूर्वक होगा। यह थोड़ीसी टेक्निकल बात है लेकिन ऐसे भोले जीव, ऐसी विपरीत मान्यता रखते हैं तो हमें तो उसको भी समझना चाहिये। तो यहां क्या कह रहे हैं देखो, कह रहे हैं कि क्रमिक उपयोगवाला मानना किसको? केवली भगवान को क्रमिक उपयोगवाला मानना यानी वास्तविकता क्या है कि उनके दर्शनोपयोग और ज्ञानोपयोग ये दोनों युगपत् होते हैं; युगपत् यानी एक साथ होते हैं क्योंकि उनको क्रम करने के लिये अभी कौनसी बात बाकी है कि जो अभी उनके जानने से रह गयी है? वे तो केवलज्ञानी यानी सर्वज्ञ हो गये हैं न! अभी कैसा हो रहा है, हम जब आपकी तरफ देख रहे हैं न तो उनकी तरफ नहीं देख रहे हैं, तो हमारा उपयोग यहां लगा है; हम उधर देखेंगे जब वह हमारे ज्ञान का ज्ञेय होगा; लेकिन उनके तो पूरे विश्व के सारे द्रव्य-गुण-पर्याय, सारे ही उनके ज्ञान के ज्ञेय हैं, कोई बात ऐसी शेष नहीं रहती है कि जो उनके ज्ञान में नहीं आती हो – तो उपयोग पलटाने का रहा ही किधर? और सारा विश्व जो सामान्यरूप से अवलोकित हो रहा है उसमें भी कोई क्रम नहीं पड़ेगा; यानी केवली भगवान जो होते हैं उनके ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग दोनों युगपत् एक साथ होता है, उसमें क्रम नहीं होता है और उसको क्रमिक उपयोगवाला मानना यह विपरीत मिथ्यात्व है। ख्याल में आयी बात? हां, अभी भूख लगी होगी तो शायद थोड़ा कम ख्याल आया होगा।

अब एक बात बाकी रह गयी है, उसको देखते हुये हम अभी बंद करेंगे। अभी क्या कहा, पुण्य से अर्थात् शुभराग से धर्म मानना यह भी कैसा है? विपरीत मिथ्यात्व है। इसकी बात तो थोडीसी हमने ली थी, कौनसी ली थी? कोई शुभराग करेगा तो उसको बंध होगा कि नहीं होगा? हां रिया, कोई जीव शुभराग करता है तो उसको बंध होगा कि नहीं होगा? हां, तू बोल, *श्रोता: होगा।* होगा, तो कैसा बंध होगा? *श्रोता: शुभबंध।* शुभबंध होगा। तो यहां शुभबंध होते हुये उसको धर्म मानना यह भी विपरीतता है। धर्म यानी क्या? जहां

शुद्धोपयोग होता है वहां निर्बंध अवस्था होती है, वीतरागता शुरू होती है उसे हम यहां धर्म कहते हैं, वो वह राग करते-करते धर्म होता है ऐसा मानना है यह मिथ्यात्व है। कैसा ?

देखो बम्बई में बहुत बारिश गिरती है। आप तो जानते हैं, बम्बई में, अधिकांश बम्बई के रहनेवाले लोग होंगे। नहीं तो आपके गांव में चलते हैं, हमको क्या है! वहां बहुत बारिश हो गयी, तो रास्ते में कीचड़ हो गया, तो हमने तो सफेद कपड़े पहने थे, तो हमारा पायजामा कीचड़ से भर गया। तो कीचड़ को साफ करने के लिये हम वह कीचड़ को ही उठाकर अगर पायजामा को घिसेंगे, तो साफ होगा कि नहीं साहब ? हां। *श्रोता: नहीं होगा।* हां, नहीं होगा ? और हम शुभराग जो है वह जो बंध का कारण है, उस बंध के कारण से ही अबंध दशा होगी ऐसा मानेंगे, तो हमने कीचड़ से ही कीचड़ को साफ करने की सोची है! हमें अगर कीचड़ साफ करना है तो निर्मल जल से हम धोयें तो ही वह साफ होगा। यह तो निर्मल जल क्या है ? तो अपने स्वरूप में जो लीनतारूप जो निर्मलता है, वह निर्मलता हम प्रकट करेंगे तो यह जो बंधन होना था वह होगा नहीं और जो पूर्व में हमने जो कर्म बांधे थे, वे भी निर्जरित हो जायेंगे। भाई, बात तो इतनी साफ-सुथरी है लेकिन हमने कोई विपरीत मान्यता रखी है।

देखो नितिन, तुमको मालूम नहीं, हम जब बच्चे थे तुम्हारे जैसे, तब हम क्या करते थे ? शिखरजी जाकर आये तो क्या करते थे ? सब अपने पहचानवाले जितने हैं; सबके घर में एक-एक इतनीसी क्या ? *श्रोता: कटोरी।* कटोरी, छोटी-छोटी, बड़ी नहीं, महंगीवाली नहीं; सबको देते थे और मानते थे कि हम प्रभावना कर रहे हैं। क्यों साहब ? हम इतना लंबा जाकर वापस आये, जिंदा लौट आये हैं, इसलिये खुशी में, वह जो कुछ प्रभावना देते थे उससे हम धर्म होता है ऐसा मानते थे और हम शिखरजी गये, पालीताणा गये, शत्रुंजय गये, तो हमने बहुत बड़ा धर्म किया ऐसा मानते थे। इसके लिये संघपति बनने में ही होड़ लगती है कि मैं संघपति बनूं। मैं हजार लोगों को रेलगाड़ी में इधर से उधर ले गया और मैंने बहुत बड़ा धर्म किया। तो शुभराग से धर्म मानना यह भी विपरीत मिथ्यात्व है क्योंकि जिस भाव से बंध होता हो, उस भाव से निर्बंध अवस्था की प्राप्ति होगी ऐसा मानना यह विपरीत मिथ्यात्व है। अभी एक मिनट है किसीके कोई प्रश्न हो तो पूछ लेना। आप इतने अच्छे हो कि किसीको कोई प्रश्न ही नहीं आते हैं। जो कुछ मैं बोलता हूं, चुपचाप सुन लेते हो, मेरे जैसा भाग्यवान कोई वक्ता नहीं हो सकता।

हां, आपका प्रश्न है बोलो, बोलो। *श्रोता: जो अभी वर्तमान अवस्था प्राप्त हुयी है, वह तो पूर्व के शुभकर्म के अनुसार ही हुयी है, तो फिर हम उसे क्यों बंध का कारण माने? क्योंकि अगर...* अभी वर्तमान अवस्था जो आपको प्राप्त हुयी है। *श्रोता: जिनवाणी मैं सुन सकता हूं, वह भी शुभकर्म के अनुसार ही हुयी है?* हां, शुभकर्म के अनुसार आपको आज जिनवाणी सुनने को मिली है यह कथन भी निमित्त का कथन है। अगर ऐसा हम मानेंगे कि हमारे कर्म के अनुसार हमारा परिणमन होता है, तो मैंने अभी आपको एक तावीज दिया था कौनसा? *श्रोता: एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता।* कर्म नामक जो पुद्‍गलद्रव्य है, वह जीवद्रव्य की अवस्था नहीं कर सकता। तो अभी जो कुछ हो रहा है वह मेरी उस समय की पर्याय की योग्यता के कारण हो रहा है, तो हम निमित्तरूप जो है उसको बतायेंगे कि भाई, इसके कारण तुझे हुआ है लेकिन कर्म कौनसा द्रव्य है साहब? पुद्‍गलद्रव्य और जीवद्रव्य इन दोनों द्रव्यों में अत्यंताभाव है।

अभी वह बात यहां हुयी नहीं है अपनी, लेंगे दो चार दिन में, थोड़ा धीरज रखो हो भाई। अभी सुनो तो सही! जैसे देखो अभी आप कौनसे गांव के हैं? *श्रोता: मुंबई।* बहुत बढ़िया। अभी यहां से पुलिस आये और कहने लगे कि हम आपको अरेस्ट करते हैं। क्यों साहब? आपने फलां-फलां जगह खून किया है, हम दौड़े-दौड़े आये हमको मालूम है आप इधर बैठे हो। क्या बात करते हो साहब हम वहां थे ही नहीं न। क्या सबूत है? देखो इतने सारे लोग बैठे हैं। तो कब खून हुआ है? तेईस तारीख को। कब? रात को बारह बजे। साहब हम तेईस तारीख को सुबह से यहां आये हुये हैं, यह देखो इतने सारे गवाह हैं तो आपको सजा होगी कि नहीं होगी? अरे! जहां मेरा अभाव ही है, जहां मैं हूं ही नहीं, तो मैं वहां खून करूंगा यह बात कहां से लायी आपने? तो आपको जज सजा देगा कि नहीं? *श्रोता: नहीं देगा।* नहीं देगा तो जैसा जीवद्रव्य है, उस जीवद्रव्य में पुद्‍गलद्रव्य का अस्तित्व ही नहीं है – उसका अत्यंत अभाव है तो कुछ कर्म के कारण मेरी यह हालत हुयी है ऐसा मानना यह विपरीत मिथ्यात्व है।

बोलो चौबीसों भगवान की जय।

३५. संशय, अज्ञान, विनय मिथ्यात्व

गये दो-तीन लेक्चर्स में हमने मिथ्यात्व के स्वरूप को जानने की कोशिश की है। यहां हम जानते हैं कि मिथ्यात्व के जो पांच भेद हैं, उन पांच भेदों में से हमने एकांत मिथ्यात्व और विपरीत मिथ्यात्व किसको कहना इसकी थोड़ी बहुत जानकारी लेने की कोशिश की है और मैं समझता हूं कि आपको उसके बारे में कोई प्रश्न नहीं होंगे। अगर कुछ होंगे तो आप पूछ सकते हैं, अभी हम आगे बढ़ेंगे, यह हमने देखा था कि जैसा द्रव्य का स्वरूप है या द्रव्य के गुणों का या द्रव्य के पर्यायों का स्वरूप है उससे विरुद्ध मानना इसको विपरीत मिथ्यात्व कहते हैं। विपरीत यानी बिलकुल जो वस्तुस्वरूप है, उससे विरुद्ध बात जो है, उसको विपरीत कहने में आता है।

तो यह विपरीत मिथ्यात्व की बात देखते हुये हम आगे का तीसरे नंबर का जो मिथ्यात्व है, तीसरे नंबर का प्रकार वह कौनसा है? *श्रोता: संशय मिथ्यात्व।* संशय मिथ्यात्व। यह संशय मिथ्यात्व को हम देखते हैं। देखो, आपके पास जो ये पुस्तकें दी हैं, उसमें ३५ नंबर का पेज है, उसमें १५० नंबर का प्रश्न है। उसमें कहते हैं कि संशय मिथ्यात्व किसे कहते हैं? तो उसका उत्तर दे रहे हैं **धर्म का स्वरूप इसप्रकार है या इसप्रकार है ऐसे परस्पर विरुद्ध श्रद्धान को संशय मिथ्यात्व कहते हैं**। देखो, क्या कहना चाहते हैं? अभी तो जरा मुश्किल है, लेकिन पहले के जमाने में घड़ी आती थी वॉल क्लॉक जिसको हम कहते हैं, तो उसके वॉल क्लॉक में पेंडुल, क्या बोलते हैं? *श्रोता: पेंड्युलम।* पेंड्युलम। *श्रोता: लोलक।* लोलक, लोलक, यानी वह क्या करता है; एक दफे इधर आता है, फिर दूसरी तरफ यानी उधर जाता है; फिर इधर-उधर, इधर-उधर ऐसा वह घूमता है, वैसे ही यह संशय मिथ्यात्वी है। वह संशय मिथ्यात्वी उसकी कोई निश्चिती नहीं है, कि यह वस्तु का स्वरूप ऐसा है या ऐसा है? कोई निश्चिती उसकी हो नहीं रही है और विपरीत मिथ्यात्वी का क्या हो रहा है कि वह तो निश्चित है, किस बारे में निश्चित है? कि विरुद्ध कोटि की जो कुछ उसकी मान्यता है, उसमें निश्चिंतता से निश्चित हो जाता है कि जो गलत बात है, वह बिलकुल सही है ऐसा समझकर, यह वस्तुस्वरूप ऐसा ही है, ऐसी मान्यता कर लेता है और यह संशय मिथ्यात्वी कैसा है? ऐसा है कि ऐसा है? कोई निश्चिती नहीं है। इसको कहते हैं संशय मिथ्यात्व यानी पक्का नहीं है; सर्वज्ञ होते हैं कि

नहीं होते हैं? किसने देखा है? होंगे या नहीं होंगे ऐसा जिसने, इसके बारे में कोई निर्णय नहीं किया है वह है संशय मिथ्यात्वी, अभी उसका भी स्वरूप देखेंगे हम।

क्या कह रहे हैं देखो, फिर से मैं पढ़ रहा हूं। धर्म का स्वरूप इसप्रकार है या इसप्रकार है ऐसे परस्पर विरुद्ध श्रद्धान को संशय मिथ्यात्व कहते हैं। जैसे आत्मा अपने कार्य का कर्ता है या पर वस्तु के कार्य का कर्ता है? क्या कहा? यह भी उसकी कोई निश्चिती नहीं हो रही है कि यह जो आत्मा है वह अपना स्वयं का भी कार्य करेगा और शरीर का भी करेगा कि नहीं? देखो मैंने यह हाथ उठाया, यह देखो, यह मैंने हाथ उठाया कि नहीं? जो मानता है कि मैंने उठाया है, उसका विपरीत श्रद्धान है। लेकिन यह मेरा कार्य है या यह पुद्‌गल का कार्य है? कोई निश्चिती नहीं हो रही है, वह कैसा मिथ्यात्व है? संशय मिथ्यात्व। तो वास्तविकता क्या है? क्या आत्मा हाथ उठा सकता है कि नहीं? बोलो-बोलो, कोई तो भी बोलो भाई। *श्रोता: नहीं कर सकता, नहीं-नहीं।* नहीं-नहीं, शाबास-शाबास, बिलकुल नहीं। अभी पूछूंगा क्यों नहीं? बोलो बेन। *श्रोता: नहीं-नहीं।* आपने जोर से बोला, हं? *श्रोता: आत्मा का जानने का ही कार्य है।* बहुत अच्छा, आप कहते हैं कि अरे भाई! इस आत्मा का कार्य जानना, जानना, जानना ही है; अन्य का कुछ करना-करना उसका कार्य ही नहीं है।

तो मैं आपसे पूछता हूं – कुछ करना नहीं है, यह सर्वथा कुछ करना नहीं है ऐसा होगा या कथंचित् कुछ करना नहीं है ऐसा होगा? हां साहब, हंसाबेन आप कुछ बोलना चाहते हैं। *श्रोता: आत्मा कुछ करता नहीं है।* हां। *श्रोता: आत्मा पर का कुछ करता नहीं है, मात्र जानता ही है।* बहुत अच्छा-बहुत अच्छा। *श्रोता: आत्मा अकर्ता स्वभावी है। अकर्ता स्वभाव से सदा विराजमान है।* बिलकुल सही है, आप कहते हैं कि आपने समयसार नहीं पढ़ा है? उसमें आत्मा को अकर्तास्वभावी कहा है। तो मुझे आपसे यह पूछना है कि अपनी पर्यायों का कर्ता भी है कि नहीं? *श्रोता: अपनी पर्यायों का कर्ता है।* मैं कहता हूं, अपनी पर्यायों का भी कर्ता नहीं है, सुनना। *श्रोता: पर्याय का कर्ता नहीं है अे पण छे। निश्चय से पर्याय का कर्ता पर्याय है-पर्याय का कर्ता पर्याय है।* देखो-देखो, मैं यही कहना चाहता हूं कि वह पर्याय का भी कर्ता नहीं है क्योंकि अगर हम आत्मा को पर्याय का कर्ता मानेंगे, तो कौनसी आपत्ति आयेगी? सुनना हो, यह विषय थोड़ासा कठिन है लेकिन हमने हाथ डाला

ही है तो हम उससे सही सलामत बाहर निकलेंगे। क्या कहना चाहते हैं? आत्मा कैसा है? त्रिकाल शुद्ध है, है न? इसमें तो दो राय तो है नहीं न? तो त्रिकाल शुद्ध है, तो उसकी परिणति अशुद्ध क्यों हो रही है? अभी जो अशुद्ध परिणमन हो रहा है, अभी राग-द्वेष के जो परिणाम हो रहे हैं, यह अशुद्धता है। मिथ्याज्ञान का जो परिणमन हो रहा है, मिथ्याश्रद्धा का परिणमन हो रहा है, तो फिर आत्मा क्या कर रहा है? तो यह तो आत्मा अपनी पर्यायों का कर्ता है यह कहना भी व्यवहारनय का कथन है। तो निश्चय क्या है? तो निश्चय से तो पर्याय अपने स्वयं का कर्ता है।

जिसको प्रवचनसार में जन्मक्षण कहा है और दूसरी भाषा में समझना हो तो तत्समय की योग्यता के कारण वैसा वह जीव का परिणमन होता है। तो आप जो कह रहे हैं कि भाई ऐसा कहेंगे जरूर हम कि आत्मा अपनी पर्याय का कर्ता है, किस अपेक्षा से? परद्रव्य की पर्याय का कर्ता नहीं है इस अपेक्षा से अपनी पर्याय का कर्ता है, लेकिन और एक स्टेप आगे जाकर हम कहेंगे कि भाई अपनी पर्याय का कर्ता है, तो कहते हैं कि नहीं-नहीं। तो निश्चय से क्या है? बस निश्चय से तो पर्याय का कर्ता स्वयं पर्याय ही है। देखो, जब अपने द्रव्य में, अपनी पर्याय का भी करने-धरने का कुछ सामर्थ्य नहीं है, तो परद्रव्य का कुछ कार्य करे यह बात कहां से आयी? तो यहां जो बात बता रहे हैं कि जैसे आत्मा अपने कार्य का कर्ता है या परवस्तु के कार्य का कर्ता हैं? अभी इसके कोई डेफिनेट, कन्फर्म्ड, अंडरस्टँडिंग नहीं है इसलिये उसको अभी डायलेमा पड़ा हुआ है कि ऐसा है कि ऐसा है? पर का कर्ता? अरे भैया! यहां तो बता रहे हैं कि तू स्वयं की पर्याय का भी कर्ता नहीं है।

जिस अपेक्षा से जो कथन किया जाता है वह अपेक्षा अगर हमारे ख्याल में आवे, देखो भाई! बात तो ऐसी है आत्मा पर का कर्ता नहीं है यह बताने के लिये कहेंगे कि तू अपने परिणामों का कर्ता है। लेकिन और आगे जाकर हम सोचेंगे तो यह बात भी हमारे बिलकुल ख्याल में आती है या आनी चाहिये कि अपनी पर्याय का कर्ता भी आत्मा नहीं है। अगर ऐसा होता तो अभी अपने आत्मा में जो अशुद्ध परिणमन हो रहा है वह किस कारण हो रहा है? देखो, आप जितनी गहराई में डूबो, उतना ही आपको आनंद अधिक आयेगा ऐसा वस्तु का स्वरूप है और मैं आज तक जानता नहीं हूं क्योंकि हमने तो ऐसा माना है कि मैं जहां लात मारूंगा वहां से पानी निकालूंगा यानी मैं कुछ भी कर सकता हूं। यहां तो

कहते हैं कि तू अपनी भी पर्याय का कर्ता नहीं है। लेकिन इस जीव को कुछ पता नहीं है न? तो यह मानता है कि मैं मेरा कर्ता हूं या शरीर का कर्ता हूं? अभी कुछ निश्चिती नहीं हो रही उसकी इसे क्या कहेंगे? कौनसा मिथ्यात्व का प्रकार देखा हमने अभी? *श्रोता: संशय मिथ्यात्व।* हां, जोरसे बोलना भाई। *श्रोता: संशय मिथ्यात्व।* संशय मिथ्यात्व, अब आगे बढ़ते हैं।

देखो क्या कहते हैं, निमित्त और व्यवहार के अवलंबन से धर्म होगा या अपनी शुद्धात्मा के अवलंबन से धर्म होगा? निमित्त यानी क्या? कि जब धर्म होना है यानी आत्मा का अनुभव करना; स्वरूप का संवेदन करना; वेदन करना, उसीको धर्म कहते हैं। ख्याल में आया? तो कहते हैं वह कैसा होगा? निमित्त यानी किसी की मेहरबानी से होगा, किसी के आशीर्वाद से होगा, व्यवहार से यानी यहां राग से धर्म होगा या अपनी शुद्धात्मा के अवलंबन से धर्म होगा? शुद्धात्मा का अवलंबन लेना इसका अर्थ यही है कि अपने स्वरूप में लीनता करना; अपने स्वरूप के अनुभव में मग्न रहना; दूसरी भाषा में कहो तो अपनी शुद्धात्मा का ध्यान करना। ख्याल में आया? अभी यहां बता रहे हैं कि हमें धर्म कैसे होगा इसके बारे में अभी हमें कोई निश्चिती नहीं है। हम तो मानते हैं कि भाई, ये जिनेन्द्र भगवान हैं, उनके ऊपर हमारा पूरा भरोसा है। वे कहेंगे तो हम जरूर ॲक्सेप्ट करेंगे। तो एक तरफ से तो कहते हैं कि भाई जो भगवान हैं वे जानने के अलावा कुछ काम ही नहीं करते, किसीके ऊपर मेहरबानी नहीं करते। अरे! इन्होंने हमारा समाजकार्य किया है, तो चलो उसको हम जल्दी मोक्ष दिला दें। निमित्त से कार्य होता है ऐसा मानते हैं न? अगर निमित्त से कार्य होता है, ऐसा अगर हम मानेंगे तो बहुत गड़बड़ी हो जायेगी। किसमें? हमारे जो प्रथमानुयोग है, उसमें जो कथायें आती हैं, ये सारी झूठी ठहरेगी।

देखो-देखो, आप जानते हैं हमारे पहले तीर्थंकर का नाम क्या है? कहां गये, सोनेवाले बच्चे, पहले तीर्थंकर का नाम क्या है? *श्रोता: आदिनाथजी।* आदिनाथजी, उनके बेटे का नाम? *श्रोता: उनके, उनके सौ बेटें, उसमें से एक बाहुबली।* हां, और दूसरा? *श्रोता: भरतजी।* भरतजी, बैठो, कोई बात नहीं, बैठकर बोलना, फटाफट बोलना, हां। खड़े रहकर बोलने के लिये यह स्कूल थोड़े ही है। तो स्कूल होते तो ऐसा मुंह पर हाथ रखना पड़ता है, आपस में बात नहीं करने मिलती, मालूम है? तो यहां क्या कहा? जो उनके बेटे

भरतजी, वे कौन थे? चक्रवर्ती थे, उनका बेटा कौन था? मारीची था। अगर निमित्त से ही कार्य होता तो वे भी समवशरण में हाजिर थे और भरतजी कहां गये थे जब समवशरण लगा था, हं? षट्खण्ड का अधिपत्य प्राप्त करने के लिये; एक नहीं, दो नहीं, साठ हजार वर्ष तो लड़ाई करने गये! क्या करने की बजाय? दिव्यध्वनि सुनने के बदले वे वहां गये। भरत मोक्ष चले गये उसी भव में और मारीची, कितने काल रखड़े, मालूम है? भाईसाहब आप जानते हैं? बोलो-बोलो। *श्रोता: चौथे काल के आखिर में मोक्ष गये।* कितने काल रहे यानी कितने काल के बाद मुक्त हुये? हां, आप बताइये, भाईसाहब। नहीं जानते? कोई बात नहीं, अच्छी बात है। बहिनों में कौन बताना चाहेगा? *श्रोता: कोड़ाकोड़ी सागर। श्रोता: एक कोड़ाकोड़ी सागर।* एक कोड़ाकोड़ी सागर में ४२ हजार वर्ष कम! हम तो परफेक्ट बोलेंगे न भाई!

आपका एक कोड़ाकोड़ी सागर जो है वह बिलकुल सही है क्योंकि देखो, एक कोड़ाकोड़ी सागर यानी क्या? कोड़ाकोड़ी किसको कहते हैं? तो कहते हैं, एक करोड़... एक करोड़ में कितने झिरो होते हैं अर्पलसाहब? *श्रोता: आठ।* आठ, अच्छा! तो हमको एक करोड़ देना आप आठ झिरोवाले, वह दस करोड़ हो जायेंगे भाई! एक करोड़ में एक के ऊपर सात झिरो होते हैं। ख्याल में आया? अरे! हम तुम गरीब आदमी, अपने को मालूम नहीं है, अमीर लोग होते हैं न अनिलभाई जैसे, वे ऐसे हंसते हैं; इसको करोड़ में कितने झिरो हैं मालूम नहीं है; तो एक अंक को निकाल के दस-पांच झिरो दे देंगे आपको, ऐसा बोलते हैं। क्यों? तो एक करोड़ मल्टिप्लाइड यानी गुणा एक करोड़। अभी एक के ऊपर कितने झिरो रहेंगे, पल्लवी? *श्रोता: चौदह।* एक के ऊपर चौदह झिरो आयेंगे। इसको एक कोड़ाकोड़ी कहते हैं और इतने सागर! ख्याल में आया? यह चौथा काल इतना बड़ा है! वे आदिनाथ तो पहले तीर्थंकर हुये थे और यह हुण्डावसर्पिणी काल होने की वजह से वे तीसरे काल में ही मोक्ष चले गये। हुण्डावसर्पिणी, जनरली क्या होता है कि चौथे काल की शुरुआत में पहले तीर्थंकर होते हैं अवसर्पिणी कालों में और अंत में यह बयालीस हजार वर्ष क्यों कम किये हैं? यह पांचवां काल जो है, वह इक्कीस हजार वर्षों का है और छठा काल है वह इक्कीस हजार वर्षों का है तो वह उसमें इन्क्लूड नहीं करते हैं। यह चौथा, पांचवां और छठा ये तीनों काल मिलकर एक कोड़ाकोड़ी सागर का होता है। एक कोड़ाकोड़ी सागर के आगे उसके कंपॅरिझन में यह बयालीस हजार वर्ष तो कुछ नहीं है भाई। ख्याल में

आया? तो आपने कहा वह बराबर है, एक कोड़ाकोड़ी सागर के बाद वह चौबीसवें तीर्थंकर हुये। अगर निमित्त से ही कार्य होता था, तो तीर्थंकर जैसा उत्कृष्ट निमित्त कहां मिले भाई? आपके नसीब खोटे हैं, तो हमारे जैसे कोई मिले आपको बतानेवाले। उनको तो निमित्त कौन मिला? साक्षात् तीर्थंकर की दिव्यध्वनि चल रही थी फिर भी वह कैसे रहे? बहुत काल के बाद मोक्ष चले गये; यानी यहां कह रहे हैं कि निमित्त और व्यवहार; व्यवहार यानी शुभभाव के अवलंबन से। हमने देखा था एक ही शब्द के अनेक अर्थ होते हैं, यहां व्यवहार कहने से यहां रागभाव लेना, हो। तो रागभाव से धर्म होगा या अपनी शुद्धात्मा के अवलंबन से धर्म होगा? ऐसी जिसके निश्चिती नहीं है उसके अभी भी संशय मिथ्यात्व चल रहा है। हमें तो मिथ्यात्व के स्वरूप को देखते हुये सोचना है कि – क्या इसमें कहीं हम अटके हुये हैं? अपनी तरफ देखना भाई, बाजूवाले की तरफ मत देखना। क्या? उसको यह नक्की-निश्चित है? यह तो संशय-मिथ्यात्वी है, अरे वह विपरीत मिथ्यात्वी, वह एकांत मिथ्यात्वी है! ऐसा अन्य की तरफ मत देखना।

स्वयं की तरफ देखो कि मेरेमें इसमें से कौनसा ऐब है, कौनसी खोट है? खोट मेरे में है ऐसा हम नक्की करेंगे तो उसको हम दूर हटायेंगे। लेकिन मैं तो धुले हुये तंदुल जैसा एकदम शुद्ध हूं ऐसा मानोगे तो कभी तेरी पर्याय में शुद्धता आनेवाली नहीं है क्योंकि स्वभाव से तो तू शुद्ध जरूर है लेकिन अभी पर्याय में उस अवस्था में जो बात हो रही है उस अवस्था को हमें देखना है और उसमें सुधार होगा। द्रव्य तो त्रिकाल जैसा है वैसा ही है, उसमें तो कोई सुधार-बिगाड़ तो करना है नहीं और ना ही पॉसिबल है। ख्याल में आया? तो अभी क्या बताते हैं यहां? इसतरह की जो कोई मान्यता है उसको संशय मिथ्यात्व कहते हैं।

अभी तीसरी बात, इसके बाद हम आगे की बात देखेंगे। १५१ नंबर का प्रश्न अज्ञान मिथ्यात्व किसे कहते हैं? **जहां हित-अहित के विवेक का कुछ भी सद्भाव नहीं हो**। क्या कह रहे हैं? हित या अहित, हित यानी क्या? अपने बारे में कौनसी बात अच्छी है? मेरे लिये हितकारक है यानी जिसको हम कहेंगे, मेरा जो कोई मकसद है; क्या मकसद है? सुख प्राप्त करने का। वह सुख कैसा होगा? जिसमें मेरा हित है, उसीका मैं अवलंबन लूंगा तो मुझे तो वह हितकारक होगा। अपनी अंग्रेजी में बोलते हैं बेनिफिशल होगा और अहित यानी नॉन-बेनिफिशल। यह किसमें? कि अपना जो प्रयोजन है उसको

साध्य करने में। तो कहते हैं जहां हिताहित के विवेक का कुछ भी सद्भाव नहीं हो। तो यह तो भाई, बिलकुल ऐसा है जो हमने अभी तक देखा है। बात यह देखी है कि शुभ से धर्म होगा या शुद्ध से? शुद्ध से यानी अपने स्वभाव का अवलंबन लेने से धर्म होगा? यह तो हो गया संशय मिथ्यात्व लेकिन उसके साथ-साथ अपने को ज्ञान ही नहीं कि किससे होगा। तो कहेंगे, यह अज्ञान मिथ्यात्व है। अरे! अज्ञान मिथ्यात्व की कितनी बातें बतायें भाई?

हम एक घर में गये थे, तो उनको पता लगा कि अपने घर में जैनदर्शन के बारे में बोलनेवाला कोई पंडित आ रहा है तो हमको तो बाहर बैठा दिया। वह कैसा घर था? आगे दुकान, पीछे मकान। बैठो, बैठो, हमें कहा, हम बैठे। तो पांच मिनट हो गये, दस मिनट हो गये, आधा घंटा हो गया, बाहर आवे ही नहीं। साहब क्या कर रहे हैं? अरे! वे तो स्नान कर रहे हैं। फिर अब क्या कर रहे हैं? अभी पूजा कर रहे हैं। फिर इतने में बाहर आये, अपने जैनी थे हो। आपको शायद मालूम नहीं होगा महाराष्ट्र में एक खासियत है कि बहुतांशी घरों में गृह चैत्यालय होते हैं, घर में ही मंदिर बनाते हैं। तो क्या हो गया, वे आये और आये तो क्या हुआ? हाथ में पांच दस अगरबत्ती लेकर आये और जो उनका दुकान में सामान था उस पर अगरबत्ती, ऐसी गोल-गोल घुमाने लगे, फिर वह गल्ला बाहर खींचा, तो गल्ले के अंदर ऐसा-ऐसा किया, टेलिफोन उठाया, उसको भी ऐसा-ऐसा किया। अब आगे की बात बोलूं कि नको? इसलिये मैं रुक गया। जिस गद्दी पर वे बैठे, उसपर भी घुमाया। तो यह हित किसमें है और अहित किसमें है? तो यह कैसा मिथ्यात्व है? ख्याल में आया? वह समझने लगा कि मैं कितना धार्मिक हूं ऐसा कम से कम इसको समझे तो सही! लेकिन पागल को यह पागल है ऐसा पहचानने के लिये, दूसरों को बताने की आवश्यकता नहीं होती। उसका पागलपन तो दिख जाता है, नहीं? आपको मालूम नहीं है? कथा बताता हूं, घबराना मत।

एक गांव था, उस गांव में एक लड़का था, अठारह-बीस साल का। सब उसको पागल-पागल कहते थे, वह सुनकर वह बहुत दुखी होता था। तो दुखी होता था तो क्या किया उसने? वह इतना गुस्से में आया और उसने सोचा कि मैं यह गांव छोड़कर दूसरे कहीं दूर, दूर जाऊं जहां मुझे कोई पहचानता ही नहीं होगा – क्योंकि उसने सोचा एकने पागल कहा तो दूसरा भी कहता है, दूसरे ने पागल कहा तो तीसरा भी कहता है, सारा गांव

मुझे पागल-पागल कह रहा है। तो जाते-जाते वह एक गांव में गया। उस गांव में जाने के बाद, वहां एक खेत था। उस खेत में आप तो जानते हैं कि वह कुयें का पानी ऐसा एक जगह से दूसरी जगह जाता है, तो ऊपर के भाग से, नीचे के भाग में गिर रहा था। तो वह दौड़-दौड़ के गया क्योंकि उसको बहुत प्यास लगी थी। तो क्या करे? जो पानी गिर रहा था, उसमें हाथ की अंजुली बनाकर पीने लगा, बहुत पानी पिया, उसकी तृप्ति हो गयी तो उसने गर्दन हिलाकर इशारा किया कि बस, बस, बस। वहां एक किसान की लड़की थी, बोली क्या पागल है? चौंक गया! क्या बात है, तुमको कैसे मालूम मैं पागल हूं? तो पागल का पागलपना समझने के लिये, किसी को कहने की आवश्यकता नहीं है। उसके आचरण से, उसके विचार से, उसके बिहेविअर से हम समझते हैं कि वह पागल है।

तो यह हित या अहित जो है वह नहीं समझे और कुछ भी समझे कि धार्मिक क्रिया करे ते लोग उसको बोलेंगे, अरे! कितना धार्मिक है, कितना धार्मिक है! जो मूर्ख हैं वे बोलेंगे और जो यह जानते हैं कि अगरबत्ती करने से – तो अगरबत्ती के बाद मोमबत्ती और मोमबत्ती के बाद मशाल लेकर करो न भाई – तो और और तरक्की होगी। क्या करे क्या? यह सारा अज्ञान मिथ्यात्व है। अरे! हम तो जिसको कुआं कहो, बावड़ी कहो उसकी भी पूजा करते हैं और दशहरा आता है तो क्या होता है? जो जिसका जो धंधा हो, वह सारे औजारों की पूजन करता है। साहब, हमारी रोजी-रोटी है, इसके ऊपर, तो उसका धंधा क्या था? टेलिफोन पर बात करने का जो कुछ होगा, टेलिफोन पर भी अगरबत्ती घुमाता है; तो यह सारा क्या है? अज्ञान मिथ्यात्व है। जो वस्तुस्वरूप को जाने नहीं, पहचाने नहीं और कुछ उलटा-पुलटा मान लेवे, तो वह है अज्ञान मिथ्यात्व। इसलिये कहते हैं जहां हित-अहित के विवेक का कुछ भी सद्भाव नहीं हो, तो क्या आगे बात बताते हैं? यहां तो पाप करेंगे और उससे धर्म होगा ऐसा मानेंगे। हिंसा करेंगे, झूठ बोलेंगे और मानेंगे हमने बहुत धर्म किया। तो यहां हित किसमें है? अहित किसमें है? पाप क्या है-पुण्य क्या है, इसी बात का जिसे कुछ पता नहीं है, वह क्या है? अज्ञान मिथ्यात्व है।

अब आगे बढ़ते हैं विनय मिथ्यात्व किसे कहते हैं? तो कहते हैं, **समस्त देवों और सर्वमतों में समदर्शीपने की मान्यता को विनय मिथ्यात्व कहते हैं**। देखो, क्या बता रहे हैं कि हमने तो देखा है कि लोग हम पर ऐसा आरोप करते हैं, भाई, तुम जैनी हो न और

वह भी दिगंबर जैन, बहुत नॅरो माइंडेड हो, जिसको कॉंझर्व्हेटिव्ह कहते हैं। क्या? अरे! दूसरों के भी भगवान होते हैं भाई? तुम देखते नहीं हो पेपर में, देखते नहीं टीव्ही में कि कोई क्या करते हैं? नेता होवे, वह यहां से किसी गांव में जाये; कौनसे? नेपाल में गया; चलो तो वहां की टोपी पहनता है; पंजाब में जावे तो वहां की पगड़ी पहनता है और जहां जावे वैसा वह वेष धारण करता है; जो भगवान दिखे सबको नमस्कार करता है; मस्जिद में जावे तो चादर चढ़ाता है; कितना समदर्शीपना है! समदर्शीपना यानी क्या? सबको ईक्वल माने, सब में समताभाव धरे, हम उसको तो बहुत बड़ा मानते हैं। लेकिन वह क्या है? कि विनय मिथ्यात्व है। तूने साचे को साचा और झूठे को झूठा माना नहीं है, ख्याल में आया? तो कहते हैं जो सच्चा है उसीको यानी सच्चे देव, सच्चे गुरु और सच्चे शास्त्र को ही तुझे नमन करना है।

अभी थोड़ीसी, क्या बोलते हैं जिसको आपको सुहाये नहीं, ऐसी बात जरूर कहूंगा। क्या कह रहे हैं कि अपने जैनदर्शन के अनुसार साचा देव, साचा गुरु और जिसको साचा शास्त्र-सत् शास्त्र कहते हैं, सत् देव, सत् गुरु और सत् शास्त्र इनकी ही अष्टद्रव्यों से पूजन होती है। तो यह देव में और गुरु में कितने परमेष्ठी आ गये साहब? यह तो बहुत आसान प्रश्न है। देव में और गुरु में कितने परमेष्ठी आ गये? *श्रोता: पांचों।* पांचों परमेष्ठी आ गये हैं। अभी कोई बाकी है? तो पांच परमेष्ठी के अलावा अन्य किसी – अरे सम्यग्दृष्टि क्यों न हो! पंचम गुणस्थानवर्ती क्यों न हो! उनकी अष्टद्रव्यों से पूजन नहीं होती है। अगर ऐसा कोई करता है तो वह विनय मिथ्यात्वी है। ख्याल में आया? देखो हमने तो ऐसा माना है कि चलो न साहब विनय करो, चलो उनको भी जरा, उनकी आठ द्रव्यों से पूजन करो; हम देखते हैं; मैं तो अपनी महाराष्ट्र की बात करूंगा। आपके गुजरात की या अन्य कहीं के लोग आये हैं, उनकी तो बात मुझे मालूम नहीं, क्योंकि मैं वहां गया नहीं हूं। कोई बड़ा-बड़ा फंक्शन करते हैं; अभी मान लो कि नया घर लिया है; शांति, क्या गृहशांति जो कुछ होता है, वहां क्या करेंगे? यक्षों को भी आवाहन करेंगे, इसको आवाहन करेंगे, उसको आवाहन करेंगे। करो, आवाहन करने में कोई दिक्कत नहीं है लेकिन उनकी भी अष्टद्रव्य से पूजन करेंगे तो? यह तो मिथ्यात्व है, गृहीत मिथ्यात्व है।

विनय मिथ्यात्व किसको कहा? अरे भाई, जो पांच परमेष्ठी हैं, उनके आप जरूर

अवश्य निश्चितरूप से पूजन करें। किससे? अष्टद्रव्यों से; लेकिन सम्यग्दृष्टि भी क्यों न हो, अभी ये यक्ष जो हैं वे क्या मालूम सम्यग्दृष्टि हैं या नहीं? क्योंकि वे तो जिनेन्द्र भगवान के सेवक हैं भाई! इंद्रों के सेवक हैं और एक सेवक जो जिनेन्द्र भगवान का सेवक है वह दूसरे सेवक की पूजा करे? या आवाहन करे, क्यों? इसलिये नहीं कि वह वहां जिनेन्द्र भगवान का संरक्षक है तो हमारे घर का भी संरक्षक बन जायेगा! तो कौनसी भूल की उसने? *श्रोता: तावीज भूल गया वह।* तावीज भूल गया। *श्रोता: एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का...* हां, हां, हां, देखो यह बात अगर आपके दिमाग में बैठ जाये, कौनसी? एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है, तो फिर वास्तुविशारद को बुलायेंगे कि नहीं आप? ख्याल में आया? यहां कोई वास्तुविशारद होगा, तो मेरेसे नाराज मत होना क्योंकि उसमें कोई उलट-पुलट करने से अगर किसीका भला होता हो तो यह क्यों कर रहा है? अपने घर का सुधार कर न? काहे को दूसरे के पास पैसा मांगने को जाता है? नहीं समझे आप? देखो भाई! हम अगर वस्तुस्वरूप को सहीरूप से समझने की कोशिश करेंगे तो हमारे दिमाग में जितने प्रॉब्लेम्स हैं, सब सॉल्व्ह होते जायेंगे, कोई प्रॉब्लेम रहेगा नहीं।

एक बात मैं बताना चाहता हूं जो असल में बनी हुयी है। हम वर्धा नामक गांव, नागपुर के पास मालूम है आपको, तो वहां पर हमें, मुझे और उज्ज्वला को दोनों को वहां, स्वाध्याय के लिये प्रवचनार्थ बुलाया था। वह एक मंदिर में प्रवचनार्थ जाती थी और मैं दूसरे मंदिर में जाता था। यह दशलक्षण में हमको बुलाया, तो हम वहां गये थे। वहां जाने के बाद क्या हो गया कि जिस भाईसाहब ने हमें इन्व्हाइट किया था, उनकी बहू बोली कि पंडितजी आज आपको हमारे घर में भोजन करने के लिये आने का है। तो कहा जरूर आयेंगे साहब, अगर आपने ऐसी कोई व्यवस्था रखी हो तो जरूर आयेंगे। तो वह बोली मुझे आपको मेरा घरमंदिर बताना है। मैंने कहा बहुत अच्छी बात है, आपके घर में मंदिर है, तब तो आने में हमें बहुत संतोष होगा। तो वे हमें लेने आये कि चलो, चलो, हम घर में गये तो यह जो यहां पर्दा दिख रहा है आपको, इतना पंद्रह फीट चौड़ाईवाला जो कुछ होगा, तो उन्होंने ऐसा हटा दिया। हटा दिया तो हमने देखा, वहां कौन नहीं था! हं? राम था, गणेश था, शंकर था और जो कुछ होते हैं वे सभी थे। तो उन्होंने कहा, आपको यह घरमंदिर कैसा लगा? मैंने कहा प्रश्न तो बहुत अच्छा है लेकिन प्रश्न का उत्तर देने के पहले मैं भोजन करना चाहूंगा। बोले क्या है, यह पंडित कैसा है? उत्तर देने के लिये भोजन की

आवश्यकता है इसको। मैंने सोचा, अगर मैं अभी उत्तर दूंगा, तो मुझे भोजन मिलने की कोई गॅरंटी नहीं है, इसलिये मैं बाद में कहूंगा। भोजन किया, तो मैं समझा आधा पौना घंटा निकल गया है अब यह बहन भूल गयी होगी। इतने में उन्होंने कहा पंडितजी आपने बोला था... आप भूल गये होंगे, मैं भूली नहीं हूं। हम तो धर्म संकट में, नहीं-नहीं बिलकुल बड़े संकट में अटके थे। तो हमने कहा आपने बहुत अच्छा काम किया। क्यों? आपको क्या अच्छा लगा? ये सारी इतनी तस्वीरें लगी हैं, इनमें तुमने महावीर को नहीं रखा, यही बात अच्छी की तुमने। अर्पलजी, आपको नाम चाहिये, तो मेरे को खानगी में पूछ लेना, मैं बता दूंगा, घबराना मत। ख्याल में आया? मैंने आगे कहा अगर आप उसमें रखते तो कौवों में हंस को रखे जैसा होता। अरे! आपने ये इतना सारा दरबार क्यों रखा हैं? उसने कहा, ये सबके भगवान हैं, अपने घर में रहे तो अपने को कितना अच्छा? तो यह कौनसा मिथ्यात्व हुआ? *श्रोता: विनय मिथ्यात्व।* तो उनकी सराहना करना कि नहीं करना, भोजन दिया था न, नमक खाया था न, *श्रोता: सच्ची बात बता दो न।* बतायी थी न मैंने। बहन कहती हैं कि सच्ची बात बतानी चाहिये, तो मैंने कहा यह दरबार क्यों लगाया? एक भी भगवान के ऊपर आपका भरोसा नहीं है क्या? आपने सब लोगों का यहां नंबर लगाकर रखा है? तो आपकी ऐसी तमन्ना है कि यह नहीं तो यह, यह नहीं तो यह, कोई न कोई एक तो माई का लाल मुझे सहारा देगा और मेरा संकट दूर करेगा। तो आपने महावीर को क्यों नहीं लगाया है? हमारे भगवान तो कुछ करते ही नहीं हैं, वे तो सिर्फ जानते ही हैं, तो उनको रखकर क्या फायदा है? तो मैंने कहा हमारे भगवान कुछ नहीं करते, तो अन्य के भगवान करते ही हैं, ऐसा आपको किसने बताया? हमें यही डर लगता है।

हम गांव-गांव में जाते हैं। तो हम एक गांव में गये वहां एक घर में पूछा कि भाई आपका बेटा नहीं दिख रहा है? कहां गया? अरे! वह साहब अभी नहीं है। क्यों-क्यों? आप नहीं समझते पंडितजी, किसने आपको पंडित बनाया? अभी ये पर्युषण के दिन चल रहें हैं तो गणपति के भी दिन चल रहे हैं। हैं कि नहीं? तो हमारा बड़ा बेटा वह फलां-फलां गणेशोत्सव का चेअरमन है। छोटा बेटा वह अभी गौरी जो बैठी है, वहां वह गया है। वह आप घर में गौरी क्यों रखते हैं? क्या कहें साहब? हमें तो डर लगता है कि हम इतने सालों से गौरी रखते आये हैं और अभी नहीं रखेंगे तो हमारे बच्चों का क्या होगा? यह भय से, लज्जा से, लोभ से, अगर हम कुदेव, कुगुरु और कुशास्त्र को नमन करते हैं तो यह विनय

मिथ्यात्व को कायम रखते हैं। तो ऐसे जीवों को निगोद के अलावा अन्य कोई गति नहीं है, ख्याल में आया? हमें तो विनय मिथ्यात्व में ऐसा लगता है, कि हम तो ऐसे चौड़ी छातीवाले हैं हम सबको बस एक जैसा मानते हैं, तो तूने सोना और पीतल एक माना है कभी? ख्याल में आया? लेकिन भगवान के बारे में? जय नारायण! हमें यह निश्चित करना है कि यह, कहां गये वे भाईसाहब, आप आगे आओ; आपको तो अगृहीत मिथ्यात्व निकालना है न? आपका प्रश्न था न? तो यह अगृहीत मिथ्यात्व तब ही जायेगा, जब हमने सच्चे देव, गुरु, शास्त्र का स्वरूप समझकर, ऐसी मान्यता करनी कि यही देव का स्वरूप होना चाहिये कि जो वीतरागी और सर्वज्ञ हैं; जो वीतरागी और सर्वज्ञ नहीं हैं वे कतई देव नहीं हो सकते। तो जो देव नहीं है, उसका इन्सल्ट करें, यह बात कहां से आयी? अगर तुम देव हो और हम तुम्हें देव नहीं कहें तो इन्सल्ट होगा। भाईसाहब, आप समझते नहीं हैं; हमारी इज्जत का सवाल है, हमें समाज में रहना है। तो हमने कहा, इज्जत का सवाल तो उसको होता है जिसके पास वह इज्जत होती है। अरे! जो देव नहीं है, उसको देव समझकर तुम पूजते हो! उसको देव बोलकर तुम नमते हो! मस्जिद में गये वहां सलाम किया, गुरुद्वारा में गया वहां सलाम किया, और कहां जाये वहां सलाम करे। क्या तुमको लीडर बनना है क्या? नेतागिरी करनी है?

अब देखो क्या है? अरे! हमें, जो मनुष्यभव प्राप्त हुआ है, वह मनुष्यभव तो अगले अनेक भवों का अभाव करने के लिये मिला है। सत्य स्वरूप समझने के लिये हमें यह मिला है और यह हमारा जो मनुष्यभव है, जो हम ऐसे आलतू-फालतू कामों में व्यतीत करते हैं, तो दुबारा मनुष्यभव मिलना महा कठिन है। देखो, मैं आपको एक बात बताना चाहता हूं। अनादिकाल से आज तक इस जीव ने मनुष्यपर्याय तो बहुत मुश्किल से प्राप्त की है, ख्याल में आया? कहते हैं यह मनुष्यपर्याय अनादि से आज तक तो अनंतबार प्राप्त की है। देखो, आपको अगर एक वाक्य मालूम होगा छहढाला का **मुनिव्रत धार अनंत बार ग्रैवेयक उपजायो**, हं? भाई इसके आगे क्या? *श्रोता: पै निज आतमज्ञान बिना, सुख लेश न पायो।* **पै निज आतम ज्ञान बिना, सुख लेश न पायो।** तो पहले में पहले मनुष्य तो कितनी बार बना होगा? सुनना हो, उसमें जैन कुल में कब-कब जन्मा होगा? और जैन कुल में जन्मा है, तो मुनिपना कितनों ने लिया है? तो इस जीव ने कैसा लिया? मुनिव्रतधार – कितनी बार? अनंत बार! यह अनंत बार मुनिपना कौन ले सकता है? जो द्रव्यलिंगी

मुनि होवे; वास्तव में जो मुनि नहीं हैं लेकिन मुनियोग्य ऐसे बाह्य आचरण जिनके यथोचित आगम के अनुकूल होवें, उनको द्रव्यलिंगी मुनि कहेंगे; जिनको आत्मानुभूति नहीं हुयी है अथवा जिनके तीन कषाय चौकडी के अभावपूर्वक वीतरागता प्रकट नहीं हुयी है। लेकिन बाह्य में आचरण तो एकदम आगमानुसार है उनको द्रव्यलिंगी कहेंगे। जिनके अट्ठाईस मूलगुण का कोई अता-पता ही नहीं हो उनको तो द्रव्यलिंगी भी नहीं कहेंगे। ऐसे जो द्रव्यलिंगी हैं, जो अट्ठाईस मूलगुण यथोचित पालन करते हैं, वे अधिक से अधिक ऊपर के स्वर्ग में यानी नौवें ग्रैवेयक में जाते हैं और ऐसे इस जीव ने अनंत बार भी मुनिव्रत धारण किये हैं, तो हमें क्या देखना है? यह आगम के आधार से यह बात मैं सिद्ध करना चाहता हूं कि इस जीव ने मनुष्यभव भी अनंत बार प्राप्त किया। कब से? *श्रोता: अनादिकाल से।* अनादिकाल से; यह अनादिकाल की जो मॅग्निट्यूड है, जो उसकी ह्यूजनेस है, वह समझने जैसी है; वक्त मिले तो उसकी भी बात करेंगे हम। ख्याल में आया? तो जितनी बार मनुष्यपर्याय प्राप्त की है, उससे असंख्यातगुणा बार तो नरक की पर्याय प्राप्त की है और जितनी बार नरक की पर्याय प्राप्त की है, उससे असंख्यातगुणा बार देव की पर्याय प्राप्त की है और जितनी बार देव की पर्याय प्राप्त की है, उससे अनंतगुणा बार तो तिर्यंचपर्याय प्राप्त की है, तो उसमें दुर्लभ में दुर्लभ कौनसी पर्याय रह गयी अभी बताओ। *श्रोता: मनुष्य।* मनुष्यपर्याय; यह मनुष्यपर्याय प्राप्त करते हुये, हम अगर अपने स्वरूप की पहचान करने में भी जरा आनाकानी कर रहे हैं तो तुम्हारे मनुष्यपने में और तिर्यंचपने मैं कौनसा अंतर रहा?

बच्चे पूछते हैं कि आखिर की क्लास में हम बाहर खेलें? यह मनुष्यपर्याय है आपकी! उसका कैसे युटिलाइझेशन करना, यह आपके हाथ की बात है भाई। यह हमें स्वयं को निर्णय लेना है कि यह जो शिबिर लगा है, इस शिबिर में जो कुछ बात चलेगी वह मेरे लिये है ऐसा समझकर अगर हम अटेंड करते हैं। मुझे तो बहुत दु:ख से कहना पड़ता है कि जैसे स्कूल में वह प्यून होता है न? वह आकर घंटी बजाता है, टन, टन, टन, टन, टन; तो वह जो खेलनेवाले जो बच्चे होते हैं वह पहली बेल हुयी न, तो रुको, रुको; जो यह आखिरी-आखिरी दांव खेलेंगे; फिर दूसरी बेल हो जावे तो अभी प्रिंसिपल खड़े होंगे; इसलिये तीसरी बेल होने के पहले अंदर क्लास में जाते हैं। वैसे जब तक यहां णमो अरिहंताणं चालू नहीं होता है, तब तक कोई आता नहीं है और जैसे ही णमो अरिहंताणं

शुरू हो गया तो चूहे बिल से बाहर निकलते हैं, वैसे धमा-धम, धमा-धम यहां आकर लोग बैठते हैं। तो यह क्या बताता है, आपको स्वयं को समझने की रुचि कितनी है? हम किसी के साथ आये हैं तो हमको आना ही पड़ता है। भैया, यह तो भाई, तुम तो जिनेन्द्र भगवान की वाणी की तो बात छोड़ो, लेकिन अपने स्वरूप की पहचान करने में इतनी आनाकानी कर रहे हो, तो यह अगृहीत मिथ्यात्व जावे कहां से? ख्याल में आया? तो हमें अगर यह सही बात समझनी है तो अंदर से धगस; धगस समझते हैं गुजराती शब्द है इसलिये मैंने वापरा; होवे तो ही बात हासिल होगी; केवल कहने-कहने से नहीं होगी। इसके लिये और एक बात बताता हूं, यह मैंने लास्ट यिअर भी बतायी थी। लेकिन क्या करें? रोज नये लोग आते हैं तो रोज वही हमें बताना पड़ता है।

एक राजा था, उस राजा के पास बहुत ऊंट थे – ऊंट; ये ऊंट क्यों रखते हैं मालूम है पल्लवी? जब लड़ाई पर जाते हैं, तो ये ऊंट दाना पानी के सिवा दस-दस, बारह-बारह दिन बिना खाये-पिये लड़ाई में काम आते हैं और हाथी? उसको तो मण-मण, मतलब अनेक मण खाना लगता है और दौड़ता भी आहिस्ते-आहिस्ते है और ऊंट तेजी से दौड़ता है, खाता-पीता कुछ नहीं। जब वह राजा लड़ाई जीतकर लौटता था तब अपने राज्य में ऐसा ऐलान करता था कि ये ऊंट जो हैं वे किसी के भी खेत में जाकर जो भी खाये, जितना भी खाये तो कोई अगर उनको वहां से उकसा दे, उसको मारे-पीटे तो उनको मौत की सजा देने में आयेगी। तो क्या करें? किसानों की फसल तो पककर तैयार हुयी थी; उस समय वे ऊंट वहां जाते थे और चाहे जितना वे खाते थे। तो वहां एक किसान, मेरे जैसा दुबला पतला, वह ऊंट को तो मार नहीं सकता था, लाठी भी नहीं लगा सकता था, तो वह क्या करता है? घर में जो कुछ पड़ा हुआ है, घासलेट (केरोसीन) का डिब्बा कहो या कोई थाली रहती है, उसको लेकर लकड़ी से टन-टन, टन-टन बजाये। कोई जो बच्चा होवे, तो वह भी घासलेट का डिब्बा लेकर आवाज करे। ऊंट तो क्या करते थे, बराबर अपने-अपने ढंग से खाते रहते थे और मन ही मन में सोचते अरे! यह क्या कर रहा है? यह कोई जैनदर्शन का वक्ता होना चाहिये। अरे! हमने तो जंग में बड़े-बड़े नगाड़े सुने हैं। उनके सामने यह टिन-टिन-टिन-टिन क्या है? वैसे हम तो अनंत बार समवशरण में जाकर साक्षात् तीर्थंकर को सुनकर आये हैं, फिर भी टस से मस नहीं हुये और यह वक्ता बोल रहा है। इसकी कौन सुनें? भैया, यह तो समझदार को इशारा...। *श्रोता: काफी है।* हां,

काफी है। अरे हम तो कहते हैं नेस्काफी है, इन्स्टंट। ख्याल में आया? तो भाई देखो मैं तो कभी-कभी ऐसा बोल लेता हूं। लेकिन जो आपकी मर्जी है वह करना हो। मेरे कहने के अनुसार परिणमने का कोई कारण नहीं है क्योंकि मैं जानता हू कि मैं पर का परिणमन कर नहीं सकता।

अब यहां तक हम आये हैं, जिसमें हमने यह देखा है, ये जो पांच प्रकार के मिथ्यात्व के हमने भेद देखे थे। तो उसमें से एकांत, विपरीत, संशय, अज्ञान और विनय मिथ्यात्व की बात हमने देखी। देखो, यहां एक बात मैं बताना चाहता था, समस्त देवों और सर्वमतों में समदर्शीपना; यह समदर्शीपना क्या होता है? यानी जिसको हम कहते हैं – समताभाव, नहीं, मैं दूसरा कोई शब्द वापरना चाहता हूं, हं? *श्रोता: सर्वधर्मसमभाव।* हां, सर्वधर्मसमभाव, सर्वधर्म में समभाव रखना चाहिये, ऐसा लोग कहते हैं। सर्वधर्मसमभाव यह शब्द अपने शास्त्रों में भी आता है हो! तो इसका अर्थ क्या हो गया? सर्वधर्मसमभाव यानी जो अनेक धर्म हैं, आप तो यह जानते ही होंगे – यहां, अपने यहां पहले तो केवल जैन धर्म ही था लेकिन जब समवशरण में यह बात पूछी गयी, आदिनाथ भगवान को कि यहां कोई जीव है जो आगे जाकर तीर्थंकर होनेवाले हैं? तो उन्होंने कहा यह जो मारीचि है, वह चौबीसवां तीर्थंकर होगा। वह तो उनका पोता था और वह चौबीसवां तीर्थंकर? मारीची को बहुत गुस्सा आया और उन्होंने आदिनाथ भगवान के काल में तीन सौ तिरसठ पाखंडी मत बनाये, पाखंडी यानी गलत। साक्षात तीर्थंकर के काल में, क्या कहा? ऐसे तीन सौ तिरसठ पाखंडी मत बनाये। तो वे सारे कैसे रहे हैं? अलग-अलग धर्म बनें। तो इन सब धर्मों में, सर्वधर्म – हमें समभाव रखना चाहिये ऐसा हम मानते हैं और ऐसा मनवाते हैं, करते भी हैं और अपने को गौरवशाली अनुभव करते हैं। हमने तो सबको साथ रखा, किसीके साथ झगड़ा नहीं करना। तेरा भगवान है तो उसको जय भगवान, तेरा भगवान है तो उसको भी जय भगवान – यह सर्वधर्मसमभावपना नहीं है।

अभी-अभी हमने एकांत मिथ्यात्व में धर्म का अर्थ क्या देखा था? *श्रोता: गुण।* हां जी, कौन बता रहा है? आपने बताया? बहुत अच्छा, गुण। तो मेरे आत्मा में जो अनंत गुण हैं, उन सर्व गुणों में जैसे सर्व धर्मों में समभाव, वैसे सर्व गुणों में समभाव धारण करना, यह सर्वधर्मसमभाव है। हमने उसका अर्थ क्या निकाला कि सारे धर्मों में हमें समताबुद्धि रखनी

चाहिये। ख्याल में आया? तो इसको क्या कहा विनय मिथ्यात्व कहा है। तो यह बता रहे हैं देखो, कि समस्त देवों और समस्त मतों में समदर्शीपने की मान्यता को यानी, हम सबको मानते हैं ऐसा कहते हैं तो उसको विनय मिथ्यात्व कहते हैं। अभी केवल पांच मिनट बाकी है, नया विषय चालू करने के पूर्व अगर किसी के कोई प्रश्न हो, तो आप पूछ लेना। *श्रोता: मिथ्या मतं मारीचीने... ।* हां जी। कौन बोल रहे हैं पहले मुझे यह तो पता लगे? आप बोल रहे हैं, हां बोलो साहब। *श्रोता: मारीचीने एकट्याने इतकी मिथ्या मतं कशी सुरु केली?* क्या बोल रहे हैं? *श्रोता: अकेले मारीची ने तीर्थंकर के काल में ही इतने मत कैसे बनाये?* ऐसा है कि उनके ऊपर आरोप आता है कि उन्होंने बनाये। उनके साथ-साथ अन्य मतवाले भी थे, तो एक ने चालू किया तो दूसरे ने चालू किया। जैसे हम देखते हैं कि स्कूल में किसी क्लास में कोई बहुत ऊधम करनेवाला बच्चा होगा तो वह ऊधम करना चालू करता है तो अन्य बच्चे भी उसके साथ-साथ उसीके जैसे उधम करना शुरू करते हैं। वैसे एक ने ख़ोटा मत स्टार्ट करने का ढाढ़स किया, अन्य ने भी चालू किया; तो उसके नाम पर आता है कि उसने किया है। हां, बोलो और कुछ?

श्रोता: गृहीत, अगृहीत के रिलेशन में था प्रश्न। जब मुनिव्रत धार अनंतबार ग्रैवेयक उपजायो – तब उसका गृहीत तो गया हुआ ही था। तब वर्तमान में उन्हें हम वापिस गृहीत पर ही फोकस कर रहे हैं? गृहीत जायेगा उसमें ही अटके हुये हैं, तो गृहीत और अगृहीत तो कार्यकारण संबंध है कि नहीं है?

नहीं है। आपका प्रश्न ऐसा है कि गृहीत और अगृहीत मिथ्यात्व में कारण-कार्य संबंध है क्या? बिलकुल नहीं है। गृहीत अलग ही मिथ्यात्व है और अगृहीत तो अनादि से चलता आ रहा है। तो जैसे-जैसे जीव की पर्याय बदलेगी वैसे-वैसे उसको वैसे शायद निमित्त भी मिल जायेंगे और उस कारण से उसको गृहीत मिथ्यात्व भी पनपेगा।

श्रोता: गृहीत मिथ्यात्व संज्ञी पंचेन्द्रिय को ही होगा?

हां, बहुत अच्छा प्रश्न है इनका, बहनजी पूछते हैं कि गृहीत मिथ्यात्व क्या सिर्फ पंचेन्द्रियों को ही होगा? मुख्यता उनकी है। जो अन्य हैं, उनको भी हम बता सकते हैं, लेकिन प्रूव्ह नहीं कर सकेंगे।

श्रोता: पुण्य भी बंध का कारण है, जरा उदाहरण देकर समझाइये? जरा जोर से बोलिये। *श्रोता: पुण्य भी बंध का कारण है, जरा उदाहरण देकर समझाइये?* हां, आपने प्रश्न दुबारा पूछा है, अच्छा है, कि पुण्य से भी बंध होता है। यह बात जब हम चारित्र गुण को देखने जायेंगे, कल ही शायद, इसमें इसका खुलासेवार उत्तर आयेगा। मैं सोचता हूं आप पांच दिन के लिये आये हो न? तो जरूर सुनायेंगे। क्या है, अभी मैं दो मिनिट में बताऊंगा तो पूरा-पूरा बोलने का मुझे मौका भी नहीं मिलेगा और आपको समझेगा भी नहीं। मैं तो इसीतरह समझाता हूं, बहुत बेसिक से, कि सबको बात ख्याल में आ जाये। ऐसी बात होती है न कि जो परिपूर्णतया कहने में आये तो बात कन्व्हीन्सिंग लगती है। लेकिन एक बात तो निश्चित है और वह तो आगम के अनुसार ही है कि कोई जीव पाप परिणाम करता है तो उसको पाप बंध तो होता ही है और पुण्य परिणाम करेगा तो उसको पुण्यबंध तो होगा ही होगा।

मूल बात क्या है? हमें मुक्त होना है। तो मुक्त काहे से होना है? जो हम बंध अवस्था में हैं, उससे हमें मुक्ति चाहिये। ख्याल में आया? हम बारंबार और नया-नया बंध करेंगे तो मुक्त कब होंगे? यानी शुभभाव भी शुभबंध का ही कारण है। शास्त्रों में तो उसको बहुत अच्छी तरह से समझाया है कि एक सोने की बेड़ी है और एक लोहे की बेड़ी है। तो अगर आपको यहीं-कहीं सोने की बेड़ी पहनाकर बंद कर दिया जाये, इस खिड़की से अटका दिया जाये तो आप आनंद मानोगे कि नहीं? तुझे तो लोहे की बेड़ी, अरे! मुझे देख! मुझे तो सोने की बेड़ी! ख्याल में आया न? तो हम उसमें भी अच्छा और बुरा मानते हैं लेकिन वह तो बंध का ही कारण है। कुछ जीवों की ऐसी मान्यता है, कुछ शुभभाव तो बंध के कारण हैं लेकिन दोनों की जाति एक ही है और उसमें हमें ऐसा डिफरन्शिअेट करना योग्य नहीं है। अब इसकी बात तो हम विस्तार से अगले टाइम में करेंगे। *श्रोता: मुझे भी एक प्रश्न है।* अभी का वक्त हो गया है, आप लिख कर दीजिये, अगले क्लास में हम उसका जरूर उत्तर देंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

३६. श्रद्धा और चारित्र गुण

इस जीव का जो श्रद्धा नाम का गुण है उस श्रद्धा गुण की बात हमने अभी तक देखी और उसका विभावरूप जो परिणमन हो रहा है, उस मिथ्यात्व नामक श्रद्धा गुण के विभाव परिणमन की ही बात हमने समझी। लेकिन जब इस जीव के श्रद्धा गुण में स्वभाव परिणमन शुरू होता है यानी मैं जीव हूं ऐसी जब उसकी पक्की मान्यता हो जाती है, तब उस जीव को सम्यग्दर्शन होता है ऐसा कहते हैं। यह सम्यग्दर्शन जो होता है वह तो तीन प्रकार का होता है और कई जगह तो सम्यग्दर्शन के दस प्रकार भी बताये हैं जो आत्मानुशासन नामक ग्रंथ में दिये हैं, लेकिन उसके डिटेल में नहीं जाते हुये हम यहां सिर्फ सम्यग्दर्शन के तीन ही प्रकार देखेंगे।

तो पहला जो प्रकार है उसका नाम है औपशमिक सम्यग्दर्शन। पहले ये सब नाम ध्यान में रखना, मैं पूछूंगा हो! कौनसे तीन देखे हमने? पहला नाम हमने देखा है औपशमिक सम्यग्दर्शन, दूसरा है क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन और तीसरा है क्षायिक सम्यग्दर्शन, ख्याल में आया? तो यह श्रद्धा गुण की स्वभाव परिणति जो है जिसको स्वभावपर्याय कहते हैं उस अपेक्षा से उसका वर्णन शास्त्रों में जो आता है तो वह इस प्रकार है। औपशमिक सम्यग्दर्शन यानी क्या होता है? हम तो जानते हैं कि सम्यग्दर्शन होने में यह मिथ्यात्व नामक जो कर्म है वह बाधा लाता है। देखो, अभी हम थोड़ासा करणानुयोग का अभ्यास कर रहे हैं, करणानुयोग में जो कोई कथन होता है वह कथन निमित्त का ही होता है। यानी वहां जीवद्रव्य ऐसे-ऐसे कर्मों को बांधता है और यह फलां-फलां कर्म जीव के गुणों को या पर्यायों को घातता है। तो वहां आप कहोगे एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है, तो यह बात कहां से आयी? लेकिन भाईसाहब करें क्या, जो चार प्रकार के अनुयोग हैं हमने देखे थे – द्रव्यानुयोग, चरणानुयोग, प्रथमानुयोग और करणानुयोग। तो हर एक की अपनी-अपनी भाषा है, हर एक की अपनी अपनी कथन पद्धति अलग-अलग है।

जैसे करणानुयोग में जीव ने कर्म को बांधा और कर्म ने जीव को सताया ऐसी बातें आयेगी। जैसे यह बात तो बहुत फेमस है कि चार घातिकर्मों को नष्ट करते हुये अरिहंत ने अनंतचतुष्टय की प्राप्ति की। क्या कहा? तो हमने सच मान लिया। वहां तो निमित्त का

कथन है और उसको हमने ऐसा ही वस्तुस्वरूप है ऐसा माना तो उसकी मान्यता में गलत बातें आयेगी। वहां तो निमित्त का कथन है, क्या कहते हैं? किसी जीव ने चार घातिकर्मों को नष्ट किया और अनंतचतुष्टय की प्राप्ति की। वास्तव में क्या होता है कि वे तो अपने स्वरूप में ही लीन रहते हैं। एक अंतर्मुहूर्त तक अंतरंग में लीनता होती है तब वहां कर्मों में अपनी-अपनी अकर्मरूप अवस्था सहजरूप से अपने स्वयं के कारण, अपने स्वयं के द्रव्य में, अपने स्वयं के क्षेत्र में, अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव में हो जाती है। दोनों बातें एक साथ होती हैं तो एक दूसरे का निमित्त-नैमित्तिक संबंध देखते हुये ऐसा कथन में आता है कि निमित्त से कार्य हुआ। तो वहां कहेंगे कि दर्शनमोहनीय कर्म का अभाव करके इस जीव ने सम्यक्त्व की प्राप्ति की। लेकिन शास्त्रों में ऐसे कथन आते हैं। यह तो हमने करणानुयोग की बात बतायी, वैसे अभी अन्य जो तीन अनुयोग हैं उनकी भी बात देखते हैं।

चरणानुयोग में तो बात ऐसी होगी कि इस जीव को अमुक-अमुक बात करनी चाहिये। जहां ऐसा करना चाहिये ऐसी बात आती है, तो यह समझना कि यह उपदेशात्मक भाषा है। यानी जब उपदेश करेंगे तब इसीतरह करेंगे कि आपको आलू-प्याज आदि नहीं खाने चाहिये। आप तो कह रहे हैं एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है। क्यों नहीं खाना चाहिये? भाई, उसमें जीवों की हिंसा होती है। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को छूता तक नहीं है ऐसा आप बोलते हैं और यहां दूसरे को मारने की बात कहां आयी? वे मरते होंगे तो अपनी आयु पूरी होने से मरते होंगे। यानी जहां जिसप्रकार से जो उपदेश दिया है उसको उसरूप से नहीं मानेंगे तो हमारे मस्तिष्क में अनेक प्रकार के प्रश्न खड़े होंगे। लेकिन चरणानुयोग में कथन की यह पद्धति ही ऐसी है कि आपको रात को भोजन नहीं करना चाहिये, आपको पानी छान कर पीना चाहिये। यह चाहिये-चाहियेवाली जो बातें हैं, आपको उपवास करने चाहिये, आपको दान देना चाहिये, आपको तीर्थयात्रा करनी चाहिये। यह सारी बातें किसमें आती है? चरणानुयोग में। जहां चाहियेवाली बात है, ऐसा-ऐसा करना चाहिये तो वह समझना कि यह चरणानुयोग का कथन है। वहां आप द्रव्यानुयोग के सिद्धान्त लगाने जायेंगे तो वह तो हमारे कन्व्हीनिअन्स के लिये हम सिद्धान्तों की बात पकड़ कर रखते हैं और सामनेवाले को विरोध करते हैं, उसको चुप बैठाने की कोशिश करते हैं।

देखो! हमने आपसे पूछा, यह हमारे मयंकभाई है न? क्यों साहब, कल आप स्वाध्याय

में नहीं आये? साहब, क्या करें? यह अंतराय कर्म आड़ा आया, हमारे घर में मेहमान आये हैं, इसलिये हम नहीं आये। यह अंतराय कर्म आड़ा आया तो अंतराय कर्म ने उनको रोका कि वे स्वयं रुके? मैं आपसे पूछता हूं कि आपके माथे में दर्द है तो आप क्या कहेंगे? भाई, वेदनीय कर्म का उदय है, मेरी तबीयत खराब हो गयी। यह कौनसे? असातावेदनीय का। मैं आपसे पूछता हूं यह सातावेदनीय, असातावेदनीय जो भी होवे या जो हमने अंतराय कर्म देखा, क्या उन्हें देखकर हम बोल रहे हैं? कर्म दिखते हैं कि नहीं? हां सवाईभाई बोलो-बोलो, कर्म दिखते हैं कि नहीं? हां जी? *श्रोता: कर्म तो नहीं दिखते।* हां, आपका कहना है कर्म दिखते नहीं। फिर हम तो बोलते हैं अंतराय कर्म आड़ा आया, वेदनीय कर्म का उदय है इसलिये हम साता में है और यहां तो बहुत सारी ऐसी पद्धति भी है हो! किसीने दो-चार उपवास भी किये हो, केम छो? सातामां छो ने? यानी आप साता में हैं न? तो यह कहने का मतलब क्या है वह तो अच्छी तरह से पूछताछ करते हैं। लेकिन अभी सातावेदनीय का उदय चल रहा है या असाता का चल रहा है? यानी आपकी तबीयत कोई ढीली-ढाली तो नहीं हो गयी है इसतरह पूछने की पद्धति है।

अभी यहां क्या कहते हैं, जब जिस अनुयोग का कथन होगा उस अनुयोग को उसरूप समझना चाहिये। प्रथमानुयोग में तो ६३ शलाका पुरुषों के चरित्र की बात आती है, ये ६३ शलाका पुरुष कौन हैं, मालूम है किसीको? आप जानते हैं? *श्रोता: थोड़ा।* थोड़ा! अच्छा थोड़ा ही बताओ, बाकी दूसरे कोई बतायेंगे। *श्रोता: चक्रवर्ती।* हां कितने? दो-तीन। *श्रोता: बारह।* शांति रखो बहन! *श्रोता: चक्रवर्ती, वासुदेव, प्रतिवासुदेव... संख्या मुझे बराबर नहीं आती।* अच्छा कोई बात नहीं, बहुत अच्छा! देखो, पहले तो २४ तीर्थंकर गिनना। उनको भूलना मत क्योंकि इनकी बात ही प्रथमानुयोग के ग्रंथों में आती है। २४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण और ९ बलभद्र – ये नौ त्रिक सत्ताईस; सत्ताईस और बारह कितने होते हैं? *श्रोता: उनतालीस।* अच्छा ३९ और २४ कुल मिलाकर ६३ हो गये। इनकी कथायें आती हैं, पुराण जिनको हम कहते हैं। उनमें तो वह राजा ऐसा था, यह हो गया, वह हो गया , ऐसी सारी उनकी कथायें आयेंगी। चक्रवर्ती की कथा में तो ऐसा आयेगा कि वह इतना वैभवशाली था, इतना संपन्न था, इतना उसके पास वैभव था, फिर भी उस वैभव को ठुकरा कर उसने मुनिदीक्षा धारण की और फिर ऐसा, ऐसा हुआ। यह सारी प्रथमानुयोग में बातें हैं। एक राजा ऐसा था, यह 'था' वाली बातें

सारी प्रथमानुयोग में आयेगी और द्रव्यानुयोग में जैसा वस्तु का स्वरूप है वैसा ही कथन होगा उसको हम द्रव्यानुयोग कहेंगे। अभी हमारी ऐसी गलती होती है कि हम जब द्रव्यानुयोग की बात करते हैं तो हम वहां चरणानुयोग चलाते हैं। चरणानुयोग की बात करते हैं तब उसमें द्रव्यानुयोग लगाते हैं।

यह अपनी बात कहां से निकली? मैं भूला नहीं हूं, आप भूल गये होंगे कि जो श्रद्धा गुण है उसके तीन प्रकार के स्वभाव परिणमन हमने देखे हैं। एक तो कौनसा था औपशमिक सम्यक्त्व, दूसरा? *श्रोता: क्षायोपशमिक सम्यक्त्व।* क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, तीसरा? *श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्व।* अब यहां तो कथन आयेगा निमित्त का। तो यहां जो है यह मिथ्यात्व नामक जो कर्म है, यह कैसा है? यह मोहनीय नाम का जो कर्म है उसके दो भेद हैं – एक दर्शनमोहनीय और एक चारित्रमोहनीय। अभी साहब आपका यह जो मुझे प्रश्न आया न, उस प्रश्न के संदर्भ में ही मैं आपको बता रहा हूं और यह भी हमारे लिये बहुत काफी इंटरेस्टिंग विषय है और यह हम आपका टाइम ऐसे ही बर्बाद नहीं कर रहे हैं। अपने विषय को लगते हुये ही हम आगे बढ़ रहे हैं।

तो यह औपशमिक सम्यक्त्व में क्या होता है? यह दर्शनमोहनीय कर्म जो है वह और अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ; अभी मैं डिटेल में न जाते हुये बिलकुल शॉर्ट में बोलता हूं। अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार और दर्शनमोहनीय कर्म – मिथ्यात्व नामक दर्शनमोहनीय कर्म – इन पांचों का यह जीव उपशम करता है और वह कैसा करता है, क्या करता है? वह बात अभी हम नहीं बतायेंगे लेकिन उसकी भी पद्धति है, रीति है, एक्स्प्लनेशन है। तो वह जब कर्मों को उपशमाता है यानी क्या? वह कर्म उदय में न आवे ऐसी अवस्था करता है। तो एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता, यह बात यहां अप्लाय नहीं होगी। मैं यह कहना चाहता हूं क्योंकि हम करणानुयोग का विषय ले रहे हैं, उसमें तो जीव ने कर्मों को उपशमाया, जीव ने कर्मों का क्षयोपशम किया, जीव ने कर्मों को खिपाया, नष्ट कर दिया, क्षय कर दिया ऐसा कथन आयेगा। तो यहां कह रहे हैं, जब कर्मों को उपशमाता है, यानी वह कर्म उदय में न आवे ऐसी जब अवस्था हो जाती है, तब यह जीव अपने स्वरूप में एकाग्र हो जाता है। उस समय उसका जो शुद्धोपयोग चल रहा है, द्रव्यानुयोग की अपेक्षा से उसको यहां औपशमिक सम्यक्त्व कहते हैं।

अभी कर्मों के डिटेल में नहीं जायेंगे। कर्मों का उदयाभावी क्षय, सदवस्थारूप उपशम और किसी का उदय, इसतरह जब क्षयोपशम होता है उस वक्त उस जीव के क्षायोपशमिक सम्यक्त्व रहता है और जब कोई जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करता है, अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि जीव पहले में पहले प्राप्त करेगा तो औपशमिक सम्यक्त्व ही प्राप्त करेगा और जब वह औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो उसके सत्ता में पड़ा हुआ दर्शनमोहनीय कर्म जो मिथ्यात्व नामक था उसके तीन भेद हो जाते हैं। वे तीन भेद कौनसे हैं? एक का नाम मिथ्यात्व है, दूसरे का नाम सम्यग्मिथ्यात्व है और तीसरे का नाम सम्यक्प्रकृति है। ऐसे एक से तीन प्रकृति उत्पन्न होती हैं और जो सम्यग्दृष्टि इन तीन कर्मों का, कौनसे? दर्शनमोहनीय के तीन भेद हैं वे और अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ हैं वे; इनका क्षय कर डालता है तो उसको क्षायिक सम्यग्दृष्टि कहते हैं। ख्याल में आया? तो यह तो हमने श्रद्धा गुण के तीन सम्यक् परिणमन को देखा।

श्रद्धा गुण को हम ले रहे थे न? यह जीव का विशेष गुण है तो उसके तो हमने विभावरूप परिणमन में अलग-अलग अनेक तरह से बातें देखी। जिसको हम मिथ्यात्व कहते हैं वह भी यह कौनसा, गृहीत मिथ्यात्व, अगृहीत मिथ्यात्व। एक भाईसाहब ने हमें प्रश्न पूछा था मैं जाते-जाते बोल ही देता हूं, उससे अन्य लोगों को भी फायदा होगा; कि हमने ऐसा सुना है कि अभी हुंडावसर्पिणी काल में यह विशेषरूप से गृहीत मिथ्यात्व की बात चल रही है इतने बड़े-बड़े पाखंडी मत तैयार हो गये, तो अन्य अवसर्पिणी कालों में या उत्सर्पिणी कालों में यह गृहीत मिथ्यात्व होता होगा कि नहीं होगा? तो जब शास्त्र में जो कोई कथन आता है मिथ्यात्व में, गृहीत मिथ्यात्व और अगृहीत मिथ्यात्व ऐसा भेद; तो अन्य के टाइम में, अभी जो हुंडावसर्पिणी काल चल रहा है उसके अलावा केवल अवसर्पिणी काल या उत्सर्पिणी काल उस समय भी ऐसे भेद होंगे ही; क्योंकि ये शास्त्रों में बताये गये भेद हैं न, पंचमकाल की अपेक्षा से हैं नहीं। सिद्धान्त होते हैं वह तो त्रिकाल होते हैं। वहां पर भी गृहीत मिथ्यात्व होगा लेकिन अभी जितने जोर शोर से चल रहा है और जैनियों का अभी जो सही मार्ग है उसका बोलबाला इतना नहीं है, उस अपेक्षा से उसको विशेषरूप से महत्व नहीं दिया जायेगा। लेकिन अभी भी मैं कहता हूं यहां तो अभी हुंडावसर्पिणी काल चल रहा है, स्वर्गों में कौनसा अवसर्पिणी चल रहा है या उत्सर्पिणी चल रहा है? हां जी, मालूम नहीं आपको? आपको मालूम है जयश्रीबेन? *श्रोता: काल तो एक ही है।* हां, आप

कहते हैं वहां कोई पहला काल, दूसरा काल, चौथा काल ऐसा होता ही नहीं, वहां तो चल रहा है वह चल रहा है। तो वहां पर भी गृहीत मिथ्यात्वी जीव होंगे कि नहीं? मान लो यहां का कोई हनुमान चालीसा रोज बोलता हो और वह हनुमान का भक्त हो; और समझो वह मरकर कोई व्यंतर बना हो तो वहां जाकर भी उसीके लिये सोचेगा और यहां आकर ऐसे कोई चमत्कार कर डाले क्योंकि देव तो कहीं भी जाते हैं न, तो उसके यहां के संस्कार चालू रहेंगे। यह तो मान्यता का दोष है भाई! यह स्वरूप के बारे में जो कुछ हमारी मान्यता में गड़बड़ी चल रही है उसका दोष है। तो उसका इतना विशेष प्रभाव अन्य समय में नहीं होगा लेकिन अभी तो निश्चितरूप से उसका अधिक प्रभाव है।

अब यह बात देखते हुये हम आगे बढ़ते हैं कि यहां हमने तीन प्रकार के जो सम्यक् परिणमन देखे। उसमें पहले का नाम है औपशमिक सम्यक्त्व, दूसरे का नाम है क्षायोपशमिक सम्यक्त्व, तीसरे का नाम है क्षायिक सम्यक्त्व। यह बात समझ में आयी? यानी श्रद्धा गुण में जो कुछ बातें हैं उसको हमने देखा। अभी यह बीच में एक प्रश्न आया है उसको लेकर हम आगे बढ़ते हैं, यहां की बात हम और आगे करेंगे। यह प्रश्न है कि *एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं कर सकता; यह सिद्धान्त हमारे प्रॅक्टिकल अनुभव से अलग है। जैसे कि प्यास लगती है तो जल से ही तृप्ति का अनुभव होता है, भूख लगती है तो भोजन से ही तृप्ति होती है, गर्मी लगती है तो वायु से शीतलता मिलती है। तो यह सिद्धान्त यहां कैसे अप्लाय करें? कृपया समझाइये।*

बहुत अच्छी बात है। तो पहले में पहले हम तो आपसे पूछते हैं, दो बातें पूछते हैं कि आत्मा खाता है या शरीर खाता है? आत्मा पानी पीता है या शरीर पानी पीता है? प्रश्न अपना यही है न भाई, मूल बात तो यही है। तो हमारा यह प्रश्न है आत्मा खाता है या शरीर खाता है? बहन आप कुछ हमें मदद करेंगे? हां बोलो-बोलो। *श्रोता: शरीर खाता है।* शरीर खाता है, बहुत अच्छा। आप क्या कहते हैं साहब? *श्रोता: आत्मा को हम शरीर से अलग डिफाइन नहीं कर सकते।* आपका कहना है आत्मा को हम शरीर से अलग डिफाइन नहीं कर सकते तो मैं आपसे पूछूंगा हो, आपने बहुत अच्छा बताया। यह कौनसा मिथ्यात्व का प्रकार होगा? *श्रोता: विपरीत मिथ्यात्व।* विपरीत मिथ्यात्व, आप स्वयं कहते हैं अज्ञान मिथ्यात्व कोई बात नहीं।

अरे भैया! देखो-देखो मैं मेरी बात नहीं बताऊंगा हो। यह गुरुदेवश्री के सामने यह

प्रश्न आया था। वहां पर एक गुरुकुल था आपको मालूम होगा तो। अभी भी होगा, मगर मैं जानता नहीं हूं, तो वहां बच्चों को सिखाते थे ऐसे ही छोटे-छोटे बच्चे हैं। तो कहते हैं कि आत्मा का अनुभव करना चाहिये, वह अनुभव कैसे किया जाता है? तो उसके बारे में हम सोचते हैं। ऐसे तो उनको आदत थी, आंख बंद हो जाती थी उनकी। तो वह लड़का बोला कि मैं आंख बंद करके देखता हूं तो मुझे कुछ नहीं दिखता, अंधेरा-अंधेरा दिखता है। तो गुरुदेवश्री ने पूछा यह अंधेरा है इस बात को किसने जाना? लड़के ने बोला मैंने जाना। तो जाननेवाला जो है वह तू है, आत्मा है और यह जो दिखता है वह क्या है? पुद्‌गल है! डिफरन्शिएट हो गया कि नहीं? अभी प्रश्न तो अधूरा रह गया हमारा, हम नहीं भूले हैं। आत्मा खाता है या शरीर खाता है यह तो नक्की करो। *श्रोता: कोई नहीं खाता है।* आपसे नहीं पूछा है। हां? जिनका प्रश्न है वे उत्तर देवें, हां बोलो साहब...। *श्रोता: आत्मा जानता है।* हां और शरीर खाता है? *श्रोता: खाने की क्रिया को जानता है।* भाई, क्रिया कौन करता है? यह मेरा प्रश्न है, क्या कर रहा है वह नहीं मैं पूछ रहा हूं। आत्मा खाता है या शरीर खाता है? यह पहले नक्की करो। आपने बताया आत्मा जानता है इसका अर्थ शरीर खाता है – यह आपका कहना है। *श्रोता: बराबर।* बराबर नहीं, आप बोलो। हम तो गलत ही बोल रहे हैं। देखो भैया, आपको समझना हो तो आपको उत्तर...। *श्रोता: मुझे आपसे मिलना है समझो, तो मैं आपके नाम के बारे में...।* आप बात मत बढ़ाओ, जो प्रश्न पूछा है उसका उत्तर दो क्योंकि अपने पास अधिक टाइम नहीं है। देखो पहले तो यह नक्की करो आत्मा जो द्रव्य है वह रूपी है या अरूपी? *श्रोता: अरूपी।* हां, अरूपीद्रव्य है और पुद्‌गलद्रव्य कैसा है? रूपी है।

तो क्या अरूपीद्रव्य में रूपीद्रव्य जा सकता है? दोनों के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव जुदे-जुदे हैं। ख्याल में आया? उसको अपनी शास्त्रीय भाषा में कहेंगे आत्मा और शरीर में अत्यंत अभाव है, यह बात आगे आनेवाली है हो! तो वह अगर आप सीखेंगे तो सारी बातें क्लिअर होंगी। तो कहते हैं, यह अन्न जो है वह ऐसा उठाकर हमने मुंह में डाला। पेट में गया न! तो कहते हैं यह पेट में डालने वगैरह का कार्य जो है, वह कौन करता है? *श्रोता: क्रियावती शक्ति।* हां, कौन बोल रहा है? आप बोल रहे हैं, आपको कहां पूछा हमने? ख्याल में आया? मुझे भूख लगी है ऐसा कौन, शरीर कहता होगा न? शरीर नहीं, आत्मा कहेगा। लेकिन आत्मा कहेगा कि मुझे भूख लगी है तो वह भूख लगी हुयी शरीर को

समझता होगा कि नहीं? अरे! इस आत्मा को भूख लगी है, चलो डालो पेट में, उसको ज्ञान ही नहीं है, पुद्‌गल को ज्ञान है क्या? ख्याल में आया न? तो यहां इतना सारा थाली में परोसा था वह गया कहां? इतना सारा हमने रखा था, गया कहां? तो वह तो पेट में गया, तो वह किसने डाला? यह बात अभी अधूरी रह गयी।

देखो-देखो! आप आओ मेरे साथ, यहां पेज नंबर आठ निकालिये। यहां नीचे फूटनोट में एक नंबर लिखा है। वह किसके लिये है? यह ऊपर जो लिखा है न? चारित्र, सुख, क्रियावतीशक्ति यह जीव के जो विशेष गुण बतायें हैं न? उसमें जीवद्रव्य में चैतन्य, दर्शन, ज्ञान, सम्यक्त्व, चारित्र, सुख, और क्रियावतीशक्ति इत्यादि के पहले एक लिखा है उसका एक्स्प्लनेशन नीचे है कि क्रियावतीशक्ति का कार्य क्या है? तो कहते हैं, क्रियावतीशक्ति के दो कार्य हैं, वे कौनसे हैं, बतायेंगे अभी; तो कहते हैं, जीव और पुद्‌गल में क्रियावतीशक्ति नाम का गुण नित्य है; तो गुण तो हमेशा ही होता है क्योंकि गुण उसीको कहते हैं कि जो द्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में रहता है। तो वह नित्य है उसमें, उसीको गुण कहते हैं। तो फिर इसलिये बताते हैं जीव और पुद्‌गल में क्रियावतीशक्ति नाम का गुण नित्य है तो दोनों में मिलकर एक गुण होगा कि नहीं क्रियावतीशक्ति नामक? हां जोर से बोलना! *श्रोता: हां।* हां, अर्पलजी आप क्या बोलते हैं? मोना आप कुछ बताना चाहती हैं? *श्रोता: दोनों में मिलकर एक गुण नहीं होगा।* हां, आपका कहना है दोनों द्रव्यों में मिलकर एक गुण नहीं होगा क्योंकि गुण उसीको कहते हैं जो अपने द्रव्य के संपूर्ण भागों में और अपने द्रव्य के संपूर्ण अवस्थाओं में रहे; तो दो द्रव्यों में मिलकर एक गुण रह सकेगा कि नहीं? *श्रोता: वही गुण दोनों द्रव्यों में होगा।* वही गुण – फिर गलत कह रहे हो, वैसा ही गुण कहो तो मैं समझूंगा। *श्रोता: क्रियावतीशक्ति नामक जो गुण है – वह दोनों में रहेगा।* वह दोनों में रहेगा, दोनों का अपना-अपना अलग-अलग गुण रहेगा क्योंकि यहां लिखा है देखो, उसके कारण अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार यानी वह क्रियावतीशक्ति की योग्यता के अनुसार कभी क्षेत्रांतररूप पर्याय होती है। क्षेत्रांतररूप यानी क्या? एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाना; आपने क्या किया? देशांतर किया। पहले आप गुजरात में रहते थे, अभी महाराष्ट्र में आये, तो आपने क्या किया? देशांतर किया, हमने तो भाषांतर किया। समझ में आता है? वैसे यहां क्या हुआ? क्षेत्रांतर हुआ यानी एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाना उसको क्षेत्रांतर कहते हैं।

यह जो एक जगह से दूसरी जगह जाना जीव का कार्य हो रहा है, वह उसकी अपनी क्रियावतीशक्ति से हो रहा है और पुद्‌गलद्रव्य में जो कुछ कार्य हो रहा है वह उसकी अपनी क्रियावतीशक्ति से हो रहा है। यहां क्या लिखा, क्रियावतीशक्ति यानी उस नाम का वह गुण है। शक्ति का अर्थ गुण भी होता है हो! तो उसके कारण अपनी-अपनी योग्यता अनुसार कभी क्षेत्रांतररूप पर्याय होती है तो कभी स्थिर रहनेरूप पर्याय होती है। तो क्रियावतीशक्ति का काम हमने क्या देखा? एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाना और कहीं एक जगह रुक जाना यानी स्थिररूप रहना; तो ऐसी शक्ति पुद्‌गलद्रव्य में भी है क्योंकि हमने देखा उसके अंदर भी देखो, यहां स्पर्श, रस, गंध, वर्ण और क्रियावतीशक्ति लिखा है; यानी वह क्रियावतीशक्ति नामक जो गुण है वह जीवद्रव्य में भी है, उसका अपना अलग है और पुद्‌गलद्रव्य में भी है, उसका अपना अलग है। लेकिन दोनों का मिलकर जब कार्य होता है तब तो हम कैसे हैं? ज्ञानवान हैं न! ज्ञान, आपकी भाषा में कहूं? हम दोढ ढाये हैं न! दोढ ढाये समझते हैं आप? – डेढ़ सयाने। तो हमने क्या माना? यह देखो मैंने चष्मा उठाया और यहां रखा। मैं ज्ञानवाला हूं न, इसको क्या समझता है? मैंने इसको उठाया।

तो यहां कहते हैं यह क्षेत्र से क्षेत्रांतर होना इस पुद्‌गलद्रव्य में जो अनंत परमाणु हैं, प्रत्येक परमाणु में क्रियावतीशक्ति नामक गुण है। तभी वे यहां से उठकर यहां तक आये तो अपनी क्रियावतीशक्ति से आये और यह हाथ भी जो पुद्‌गल है उसका भी वहां से यहां तक आना वह अपनी क्रियावतीशक्ति से हो रहा है और यह जो आत्मा है उसका भी एक जगह से दूसरी जगह हिलना यह भी अपनी क्रियावतीशक्ति से हो गया है। तीनों बातें एक साथ होती हैं तो हमने क्या माना? मैं स्वयं शरीररूप हूं, तो मैंने उठाया, अरे! मैंने पकड़ा न जोर से, किसकी ताक़त है इसको छुड़ाने की? मैं स्वयं को शरीररूप मान रहा हूं – पहली गलती, हं। आपने जो प्रश्न पूछा, अपना वह प्रश्न मैं कंटिन्यू करूंगा, खाना कहां गया, वह मैं भूला नहीं हूं, पेट ही में गया है। तो यहां कहते हैं, न जीव ने खाना खाया है और न शरीर ने खाना खाया है। हां, आप कौन बता रहे थे? आप बता रहे थे कि आप? दोनों ने नहीं खाया। *श्रोता: गया कहां?* पेट में गया। वह अपनी-अपनी क्रियावतीशक्ति से वहां से उठकर यहां गया और अगर आप ही खाना खाते हो तो जब कौर उठाते हो चावल का, उसमें से दो चार दाने नीचे गिरते हैं न, तो वह क्यों छोड़े? उसको भी पेट में डालना था न? आप ही के हाथ में वह क्रिया करने की थी और जो थाली है उसमें जो कुछ चिपकी हुयी

चीजें हैं उसको भी खाना था न! लेकिन उसका अभी स्थिरतारूप परिणमन हो रहा है और जो पेट में गये उनका क्षेत्रांतररूप परिणमन हो रहा है।

अर्पलसाहब यह बात ऐसी हुयी यहां, आप बहुत शांति से आये हुये हो इस वक्त बहुत अच्छा किया, नहीं तो आप तो नेता के जैसे इधर से उधर, उधर से उधर घूमते फिरते हो। स्वाध्याय करना भैया, बहुत आवश्यक है; मेरा मित्र है इसीलिये उसको मैं कह रहा हूं, ख्याल में आया? तो क्या कह रहे हैं? हम ऐसा मानते हैं लेकिन हमारी मान्यता के अनुसार जगत का परिणमन होता है क्या? जैसा है वैसा हम जाने तो हम सुखी, नहीं तो मेरी मान्यता के अनुसार विश्व का सारा परिणमन हो जाये तो मैं सुखी। कौनसा पॉसिबल है बोलो अभी? जैसा है वैसा मानना। तो आपका प्रश्न क्या है? एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं कर सकता, यह सिद्धान्त हमारे प्रॅक्टिकल अनुभव से अलग है; जैसे की प्यास लगती है तो जल से तृप्ति का अनुभव होता है। जब प्यास लगती है उस समय आपके ज्ञान का परिणमन और जब तृप्ति होती है उस समय आपके ज्ञान का परिणमन जुदा-जुदा है कि नहीं? आपने मैं शरीर हूं और मुझे प्यास लगती है, मुझे भूख लगती है, मुझे गर्मी होती है, तो आपने अपने को जीवद्रव्य माना या पुद्‌गलद्रव्य माना यह नक्की करो; मेन मिस्टेक – मूल में भूल वहां है। ख्याल में आया?

यह तो भैया हर समय ज्ञान का परिणमन जुदा-जुदा हो रहा है। यह जो हमने अभी रसगुल्ला खाया तो मीठा-मीठा मुझे लगा। तो रसगुल्ला खाया इसलिये मीठा लगा कि नहीं? अच्छा हो गया आप आगे बैठे हो, पीछे से सब लोग उत्तर दे रहे हैं। लेकिन मैं किसी को भी नहीं पूछ रहा हूं, आपको ही पूछना है मुझे। अगर हम मानते हैं कि मैंने रसगुल्ला खाया इसलिये मुझे मीठा लगा तो हमने ज्ञेय से ज्ञान हुआ ऐसा माना। भाई एक-एक मंत्र ऐसे हैं, एक-एक सिद्धान्त ऐसे हैं; अगर वह हमारे पल्ले पड़ जाये न, तो जैसे नाग के सामने बीन बजाते हैं तो वह ऐसा-ऐसा डोलता है; वैसे यह मिथ्यात्वरूपी सर्प अपने को छोड़कर भाग नहीं जाये तो मुझसे पूछना। हम सुनने को तैयार नहीं न? इधर बैठकर सुनना यह तो फालतू लोगों का काम है ऐसा हम समझते हैं, लेकिन जब तक हमारी मान्यता सही नहीं होती है तो मिथ्यामान्यता होती है, तो सम्यक्त्व होगा कहां से? और हमें तो अगृहीत मिथ्यात्व को टालना है, है न? आपका ही सवाल है न साहब? मैं आपको टोक नहीं रहा हूं

आपको सतर्क, सजग कर रहा हूं क्योंकि हमने तो देखा है लौकिक में जो मातायें होती हैं वे तो लोरी गा-गाकर अपने बच्चों को सुलाती हैं। लेकिन हमारी यह जिनवाणी माता ऐसी है कि वह लोरी गा-गाकर हमें जागृत-सजग करती है कि हे जीव तू मोहनिद्रा में अनादि से सोया हुआ है, जाग रे बेटा जाग! तू अपने स्वरूप को पहचान। ख्याल में आया?

तो हमारी यह जो मान्यता है कि मुझे भूख लगती है, इससे यह होता है, भैया, तुम्हारे हर समय राग का परिणमन जुदा-जुदा हो रहा है कि नहीं? कभी आकुलतारूप हो रही है, कभी आपको जरा थोड़ीसी कम आकुलता हुयी तो हमने माना कि मैं सुखी हो गया, मैं तृप्त हो गया, मैं भूख से परे हो गया। यह मेरी मान्यता है, क्योंकि हम भी रागी-द्वेषी हैं न भाई! तो राग का परिणमन तो हो ही रहा है, राग का परिणमन बंद हुआ नहीं है। जाननेवाला तो केवल एक ज्ञान गुण ही है और हम ऐसा मानते हैं कि ज्ञान गुण ने यह सब कुछ जाना तो ज्ञान ही सुखी हो गया, ज्ञान ही तृप्त हो गया। चारित्र नाम का जो गुण है वह जुदा है और ज्ञान गुण है वह जुदा है, दोनों जुदे हैं, दोनों का परिणमन जुदा-जुदा है। जैसे हमने देखा था ज्ञान गुण का कार्य जानना, जानना, जानना है, वैसे ही श्रद्धा गुण का कार्य मानना, मानना, मानना है। वैसे ही चारित्र गुण का कार्य क्या है? इसको भी समझना चाहिये न, क्योंकि यह चारित्र गुण कहां होता है? हां प्रतिभाताई आप बताइये। *श्रोता: आत्मा में।* आत्मा में होता है, किसके आत्मा में? केवली भगवान के? अरे भाई! उनको बोलने दो, हां पद्माताई आप पीछे से प्रॉम्प्टिंग मत करो हां। यह चारित्र गुण कहां होता है? *श्रोता: प्रत्येक जीवद्रव्य में होता है।* प्रत्येक जीवद्रव्य में होता है। क्या कहना है आपका? प्रत्येक जीवद्रव्य में होता है। श्रद्धा गुण कहां होता है? प्रत्येक जीवद्रव्य में अपना-अपना होता है, है न? तो चारित्र गुण का कार्य क्या है? यह हमें समझना है। तो चारित्र गुण का स्वभाव परिणमन जो है यानी सम्यक् परिणति जो है वह तो आत्मा में स्थिरता करना है। जिसको हम कहेंगे रममाण हो जाना, स्थिर हो जाना, एकाकार हो जाना, जो भी आप कहो। गुजराती में बोलते हैं, रममाण थवुं, स्थिर थवुं आदि आदि जो बात है, हमनें हिन्दी में वही बताया आपको। लेकिन जब यह जीव अपने स्वरूप में लीनता नहीं करता है, स्वरूप में गुप्त नहीं हो जाता है, तब वह क्या करता है? तो राग-द्वेषरूप विभाव परिणमन करता है।

तो यह जो चारित्र गुण है, उस चारित्र गुण की पर्यायों के भेद भी हम देखेंगे। जैसा हम

ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग ऐसा देखते हैं, वैसा द्रव्यानुयोग में एक शुद्धोपयोग नाम की भी टर्मिनॉलॉजि आती है, इसको हम उपयोग कहेंगे। उस उपयोग के भेद जो हैं, वह उपयोग के भेद दो हैं एक है शुद्धोपयोग। उपयोग का भेद – यह ज्ञानोपयोग, दर्शनोपयोग वाला उपयोग नहीं है, यह चारित्र की अपेक्षा से उसके भेद किये जाते हैं और जो शास्त्र में लिखे हैं। क्या कहा? शुद्धोपयोग और दूसरा है अशुद्धोपयोग, ख्याल में आया? अशुद्धोपयोग के भी दो भेद हैं – एक है शुभोपयोग और दूसरा है अशुभोपयोग। यह चारित्र गुण की बात चल रही हो, जीव अॅट अ टाइम चारित्र गुण की किसी एक पर्याय से युक्त होगा, वह या तो शुद्धोपयोग करेगा अथवा अशुद्धोपयोग करेगा। जब तक शुद्धोपयोग नहीं होता है तब तक वह जीव अशुद्धोपयोग में ही रहता है। वह अशुद्धोपयोग में क्या है? एक शुभोपयोग है और एक अशुभोपयोग है। जब तक उस जीव के शुद्धोपयोग नहीं होता है, यानी अपने स्वरूप में एकाग्रता नहीं होती है, स्वरूप में लीनता नहीं होती है, स्वरूप में वह गुप्त नहीं होता है, तब तक उसके अशुद्धोपयोग ही चलेगा और वह अशुद्धोपयोग में क्या-क्या बातें देखी हमने? एक शुभोपयोग और एक अशुभोपयोग और ऐसी स्वतंत्र व्यवस्था है कि यह जीव कभी भी एक अंतर्मुहूर्त से अधिक अशुभोपयोग में भी नहीं रहेगा और एक अंतर्मुहूर्त से अधिक शुभोपयोग में भी नहीं रहेगा और एक अंतर्मुहूर्त से अधिक शुद्धोपयोग में भी नहीं रहेगा।

यह अंतर्मुहूर्त क्या होता है उसको भी हम थोड़ासा देखेंगे। यह मुहूर्त को समझना है, तो मुहूर्त यानी कितना होता है यह मालूम है? *श्रोता: ४८ मिनट।* हां कौन बोल रहा है साहब? हां बोलो, आप बोल रहे हैं न? मुहूर्त कितने समय का होता है? सुनो-सुनो, कोई बात नहीं। मुहूर्त दो घड़ी का होता है, आपने शादी की है क्या? इसलिये मालूम नहीं है। शादी करने के पहले जो पंडित रहता है, भटजी होता है वह बोलता है – अरे! मुहूर्त निकळी जाय छे भाई! कन्याने लाओ, ऐसा बोलते हैं। कभी नहीं सुना आपने? कोई बात नहीं, तो यह जो मुहूर्त होता है, तो वह मुहूर्त क्या होता है? दो घड़ी का मुहूर्त होता है, एक घड़ी यानी २४ मिनट और दो घड़ी यानी ४८ मिनट। तो ४८ मिनट में १ समय कम वह अंतर्मुहूर्त है, ख्याल में आया? अंतर् यानी कम। किससे? मुहूर्त से अंदर जो है। वह ४८ मिनट में १ समय कम यह अंतर्मुहूर्त है। यह तो उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त हुआ हो और जघन्य यानी सबसे छोटा अंतर्मुहूर्त कितना होता है? तो कहते हैं; १ आवली + १ समय = जघन्य

अंतर्मुहूर्त। तो यह आवली कितने समय की होती है? तो कहते हैं, आपके पास घड़ी है न साहब कि नहीं है? देखो-देखो घड़ी है, उसके अंदर सेकंडवाली सूई है क्या? तो एक सेकंड में हजारों कोड़ाकोड़ी आवली होती हैं और एक आवली में असंख्य समय होते हैं। तो यह असंख्य समय कितने होते हैं, जानना चाहोगे? बोलो नलिनभाई। हां जी! *श्रोता: इतने हैं कि कॉम्प्युटर बंद पड गये हैं।* मैं बताता हूं, काहेको कॉम्प्युटर बंद करा रहे हैं? अपना दिमाग जितना काम करता है उतना कॉम्प्युटर काम नहीं करेगा भैया।

तो कहते हैं उसमें जघन्य युक्तासंख्यात, देखो हम एक का उत्तर देने जायेंगे तो और कहीं कुछ आफत खड़ी होती है, क्या करें? जैनदर्शन ही ऐसा है, उसको हम परिपूर्णता से नहीं जानेंगे तो कोई बात गले उतरनेवाली है नहीं, भाई। तो कहते हैं जघन्य युक्तासंख्यात वह है – छोटीसी आवली। यानी आवली + १ समय = जघन्य अंतर्मुहूर्त। एक आवली = जघन्य युक्तासंख्यात। अब जघन्य युक्तासंख्यात यानी क्या? जो परीतासंख्यात है। उसका हम... अभी बताऊंगा ठहरो-ठहरो, अभी आपको जरा और डिटेल में बतायेंगे न! नहीं तो आप समझेंगे हम लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका पढ़ने आये हैं, अब देखो लघु जैन सिद्धान्त में क्या-क्या बातें आती हैं। आपके पास ४ का अंक है उस चार को १, १, १, १ ऐसा विभाजन करते हैं, उसको शास्त्रीय भाषा में विरलन करना कहते हैं, क्या कहा? चार को – एक-एक-एक-एक ऐसा विभाजित किया और हर के माथे पर ४, ४, ४, ४ लिखा यानी एक-एक-एक ऐसे चार हुये और हर एक के माथे पर ४, ४, ४, ४ तो यह चार-चार कितने हुये? चार बार हुये। इन चारों को आपस में गुणा करो, कितने हो गये? ४ × ४ = १६; १६ × ४ = ६४; ६४ × ४ = कितने हुये? *श्रोता: २५६ ।* किसने बताया? आपने बताया, बहुत अच्छा!

४ का एक-एक में विरलन किया, तो ४ को विरलन करेंगे और हर एक-एक के प्रति ४ देंगे और आपस में गुणा करेंगे तो उसका उत्तर २५६ होता है, यह तो बात समझ में आयी न? अभी क्या बताते हैं तो जघन्य परीतासंख्यात नामक जो छोटे में छोटी असंख्यात की फिगर है, संख्या है, उसको एक एक-एक-एक-एक ऐसा बिखेर देना। हं? जैसे आपके पास १०० होंगे तो एक को सौ बार लिखो, १००० होंगे तो एक को हज़ार बार लिखो। वैसे ही यह जघन्य परीतासंख्यात को एक-एक करके विरलन करो और हर

एक के माथे पर जघन्य परीतासंख्यात, जघन्य परीतासंख्यात, जघन्य परीतासंख्यात ऐसे कितनी बार लिखना? जितनी बार उसको बिखेर दिया है। उसका आपस में गुणाकार करो तो जिसको आपके मॅथेमॅटिक्स में कहते हैं जप (जप यानी जघन्य परीतासंख्यात), जप रेज्ड टु जप – जो कोई उसका गुणाकार आयेगा वह जघन्य युक्तासंख्यात यानी आवली है। उसके अंदर एक समय ॲड कर दो तो हो गया जघन्य अंतर्मुहूर्त। जब तक हम 'अ' बोलते हैं उसमें तो असंख्यात समय निकल जाते हैं, तो एक समय कितना छोटा है, ख्याल में आया? तो यह जो जघन्य युक्तासंख्यात है उसको कहते हैं एक आवली और उसमें एक समय डाल दो तो हो गया जघन्य अंतर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कितना? सुनना यह जघन्य अंतर्मुहूर्त कितना हो गया जघन्य युक्तासंख्यात + १ समय + दूसरा १ समय + १ समय ऐसे जितने आप समय करते जाओ वैसे अगर और उतने जघन्य डालो तो २ आवली होगी, ऐसी हजारों कोड़ाकोड़ी आवली १ सेकंड में होती हैं।

सुरेशभाई, सॉरी प्रफुल्लभाई। इनके बड़े भाई का नाम सुरेशभाई है, वे भी हमारे यहां आते थे हां। तो क्या बात हुयी? तो ऐसे यथायोग्य अंतर्मुहूर्त में यह जीव शुभ से अशुभ, अशुभ से शुभ, शुभ से अशुभ, अशुभ से शुभ में आता-जाता है। कब तक? जब तक वह शुद्धोपयोग में नहीं जाता है। ख्याल में आया? तो यहां क्या देखा हमने, जो उपयोग है यह चारित्र की अपेक्षा से शुद्धोपयोग और अशुद्धोपयोग और शुद्धोपयोग नहीं होता है तो अशुद्धोपयोग में रहेगा। अशुद्धोपयोग यानी शुद्धोपयोग नहीं होता है यानी वह जीव मिथ्याचारित्री है, मिथ्यात्व दशा में है तो उसके हमेशा से शुभोपयोग या अशुभोपयोग, शुभोपयोग या अशुभोपयोग अंतर्मुहूर्त में बदलता है। कोई भी जीव एक अंतर्मुहूर्त से अधिक शुभोपयोग में नहीं रह सकता है, न कोई जीव अशुभोपयोग में रह सकता है। तुम यहां एक घंटा बैठते हो और मानते हो कि मैंने बहुत शुभोपयोग किया। दो मिनट में इधर ऐसा-ऐसा खुजलाते हैं वह भी क्या शुभोपयोग में लेंगे तुम? हां, इधर से ऐसी टांग हटाकर ऐसा हां – वह भी शुभोपयोग में लेंगे? यह तो बाह्य क्रिया है लेकिन क्रिया के अंदर पीछे जो द्वेष बुद्धि हो रही है यानी अरे यह टांग अटक गयी भाई, जरा उसको सीधा तो कर डाले, हां। उसको भी आप गिनेंगे शुभोपयोग में? हमें पता ही नहीं लगता कि हम शुभोपयोग में से अशुभोपयोग में कब गये और अशुभोपयोग में से शुभोपयोग में कब आये।

यह तालिबानी जो है वह भी इतना क्रूर आपको दिखता है, यह हिटलर भी इतना क्रूर दिखता है क्या वह निरंतर अशुभोपयोग में होते होंगे? अरे! खाना खाते वक्त कुत्ते को भी रोटी डालेगा तो शुभोपयोग में आ जायेगा! बात ख्याल में आती है? तो हम क्या देख रहे थे कि यह जीव अनादि से मिथ्यात्व में चला आ रहा है। मिथ्यामान्यता के कारण तब तक वह शुभोपयोग या अशुभोपयोग, शुभोपयोग या अशुभोपयोग होता है और इसके आगे की बात क्या है, जब किसी जीव को शुद्धोपयोग हो जाता है, वह शुद्धोपयोग भी अंतर्मुहूर्त का है, जरा सावधान होना! हो, यह अंतर्मुहूर्त है वह ४८ मिनट में १ समय कम वाला अंतर्मुहूर्त नहीं है। एक छोटे से अंतर्मुहूर्त में तो वह जीव श्रेणी मांड़कर केवलज्ञान की प्राप्ति करता है। ख्याल में आया?

तो यह बात हम क्यों देख रहे थे? हमें चारित्र गुण को देखना था न भाई! हां, तो चारित्र गुण की अवस्था क्या देखी थी हमने कि अपने स्वरूप में एकाग्र होना वह उसका स्वभाव परिणमन है और जब तक स्वभाव में नहीं जाता है तब तक यहां जो अशुद्धोपयोग में हमने देखा शुभोपयोग या अशुभोपयोग वह होता रहता है। राग के परिणाम या द्वेष के परिणाम; वह निरंतर करेगा; उसको कहेंगे कि वह जीव विभावरूप परिणमित हो रहा है। देखो, यहां विशेष एक बात ध्यान रखना, राग भी दो प्रकार के होते हैं हो – एक पुण्य राग और एक पाप राग। यह चारित्र गुण की अपेक्षा से मैं सब बता रहा हूं आपको। यह पुण्य राग क्या है? जो सच्चे देव, गुरु, शास्त्र हैं उनके प्रति हमारा जो शुभ परिणाम है यह सब किसमें आयेगा? पुण्य राग में और हमारे बाल बच्चों के प्रति जो कोई हमारा राग चल रहा है वह कैसा है? पाप राग है, बात ख्याल में आती है क्या? बहुत हेवी लग रहा है? देखो भाई! हमें तो अधिक से अधिक इस चारित्र गुण को समझने की अपेक्षा से हम इसको देख रहे हैं।

तो अभी क्या बात बतायी जा रही है, देखो, अभी किसीने मुझे प्रश्न पूछा था न कि भाई शुभ से बंध होता है इसके बारे में आप विशेष बताना? आपने पूछा था। कोई बात नहीं, इसमें आयेगा अभी; यह जो कुछ प्रश्न पूछा जाता है मेरे दिमाग में रहता है। जब उसका उत्तर आयेगा तो मैं जरूर बताऊंगा। तो अभी हमने क्या देखा? जब हम आचार्य उमास्वामीजी का तत्त्वार्थसूत्र पढ़ते हैं तब उसमें आठवें अधिकार में पहला एक सूत्र आता

है। कोई कहेगा कौनसा सूत्र है? हां, आप बतायेंगे? मैं आपको नहीं पूछ रहा हूं, मैं समझा कि हमारे सवाईभाई हाथ ऊपर कर रहे हैं, हां बोलो जयश्रीताई। *श्रोता: मिथ्यादर्शना-विरतिप्रमादकषाययोगा बन्धहेतव:।* बहुत अच्छा, उन्होंने बताया, जो सही-सही है कि **मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः।** यानी यह बंध के हेतु हैं, कारण हैं, कौन? मिथ्यात्व ही बंध का कारण है, किसने लिखा? आचार्य उमास्वामीजी ने लिखा। वे कौन थे? कुंदकुंदाचार्य के पट्टशिष्य थे! उन्होंने ऐसा कहा! पट्टशिष्य यानी समझा रे सोहम? पट्टशिष्य यानी समझा तू? फेवरिट स्टुडंट – तेरी भाषा में, तू कैसा मेरा फेवरिट है! वैसे, तो क्या बताया? उन्होंने बताया यह जो मिथ्यात्व है, अविरति है, प्रमाद है, कषाय है और योग है, यह सारे कैसे हैं? बंध के हेतु हैं। तो यह बंध के हेतु यानी बंध के कारण हैं – उनको हमको निकाल बाहर करना चाहिये कि नहीं? हां तो बोलो अथवा ना तो बोलो। जो जनरल प्रश्न पूछूंगा तो कोई बोलता नहीं और किसी विशिष्ट व्यक्ति को प्रश्न पूछूंगा तो सब लोग एक साथ चिल्लाते हैं!

हां, तो अभी हमने क्या देखा? हम तो पहले में पहले क्या करना चाहते हैं – योगा; योग को हटाना चाहते हैं भाई! जो आपको मालूम है अरिहंत जो होते हैं, वे दो प्रकार के होते हैं। कभी सुना है आपने? अरिहंत भी दो प्रकार के होते हैं, कौन बताना चाहेगा? हां कौन बता रहे हैं? *श्रोता: एक सयोगी और एक अयोगी।* हां एक है सयोगी, वह कौनसे गुणस्थानवर्ती हैं बहन? *श्रोता: तेरहवें गुणस्थानवर्ती।* तेरहवें गुणस्थानवर्ती और चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीव का क्या नाम है? *श्रोता: अयोगी।* अयोगकेवली। यानी जो अनंतचतुष्टय से युक्त हैं, अनंतवीर्य के धारक हैं, वे भी योग को नहीं हटा सकते, उनको शास्त्र में सयोगकेवली कहा है और हम तो ऐसे तीसमारखां हैं अभी तो मिथ्यात्व वहां का वहां साबुत है और हम योगा करना चाहते हैं और योग के माध्यम से योग को उड़ाना चाहते हैं।

लोग बोलते हैं भाई जरा कषाय ओछा करो-ओछा करो, हां, यानी कषाय कम करो-कम करो; बहुत बातें की आपने आत्मा-आत्मा की; दो-दो मिनट में गुस्से में आते हैं, पहले कषाय कम करो। तो मैं कहता हूं कषाय कम करना क्या यह जीव के हाथ की बात है? जीव के हाथ की बात समझते हैं न! यानी क्या उसका उसमें अधिकार है? क्या उसकी उसमें कपॅसिटि है कि वह कषायों को कम करें? यह कषाय क्या देखा था हमने?

राग-द्वेष जो देखा था, जो शुभ और अशुभ परिणाम था वह जीव का स्वभावभाव है या विभावभाव है? बोलो बहन? *श्रोता: विभावभाव है।* विभावभाव है। तो विभावभाव करना यह जीव का स्वभाव है? नहीं समझे आप? देखो राग-द्वेष करना यह विभाव है, तो उसको कम करना यह जीव का स्वभाव हो सकेगा कि नहीं? अगर वह कर्ता है और वह कार्य करेगा, तो वह उसका स्वभाव होगा तो ही करेगा न? क्या विभाव करना यह जीव का स्वभाव हो सकता है? मैं तो कहता हूं तुम ओछा करने की बात क्यों कर रहे हो, पूरा ही नष्ट कर दो अगर तुम्हारे हाथ की बात हो तो! मैं आपसे पूछूंगा कि शुभभाव, आप सोच-सोच कर करते हो कि नहीं? या अशुभभाव सोच-सोच कर करते हो? हां, क्या कहते हैं आप? बोलो बहन, शुभभाव सोच-सोच कर करती हो कि नहीं? *श्रोता: नहीं।* नहीं? तो अशुभभाव करती हैं? *श्रोता: नहीं।* क्यों नहीं करती? हां? *श्रोता: वह आता है।* अच्छा, बहुत अच्छा!

मैं आपसे पूछूंगा कि आप रोज पूजन में बैठते हो कि नहीं? नहीं बैठते तो बैठना हो। तो देवदर्शन करते हो, पूजन करते हो, तब आपको घर की याद आती है या कोई धंधे की बात याद आती है तो वह भाव करने पड़ते हैं या सहज हो जाते हैं? *श्रोता: सहज हो जाते हैं।* तो शुभभाव करते-करते जो यह अशुभभाव आते हैं, वे सहज आते हैं और शुभभाव? हम इतना नक्की करके आये कि कुछ भी हो वहां, बंबई में, आग भी क्यों न लग जाये, पांच दिन हम यह शिबिर अटेंड करेंगे ही करेंगे ऐसा शुभभाव करके हम आये हैं, तो यह सोचे बिना थोड़े ही होता है, हमने नक्की किया तभी तो ये होते हैं। यह अशुभ को तो हो जाते हैं मानता है और शुभ को हम करते हैं ऐसा मानता है! तो मानता है तो कम कर दे! अशुभभाव कम करने के लिये तो सभी तैयार है लेकिन शुभभाव कम करने को? क्यों साहब, हैं तैयार? यहां तो कहते हैं तू शुभ को भी छोड़ और अशुभ को भी छोड़ और शुद्ध में जा, ख्याल में आया? शुद्धोपयोग उसीको कहेंगे कि जो अशुभोपयोग और शुभोपयोग को छोड़ते हुये आगे जायेगा, स्वरूप में स्थिर होगा वह शुद्धोपयोग है।

तो यहां क्या बात हो रही है कि यह जीव पहले ऐसा समझता है कि राग-द्वेष तो कम कर। अरे! राग-द्वेष तो तभी कम होते हैं जब यह जीव शुद्धोपयोग में जाता है। जब यह जीव अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि है और उस मिथ्यात्व अवस्था में जब वह स्वरूप में लीनता

करता है, जब उसको चतुर्थ गुणस्थान की प्राप्ति होती है, तब एक कषाय चौकड़ी का अभाव हो जाता है। एक कषाय चौकड़ी यानी समझ में आया? अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार बातें हैं न? इसलिये उसको चौकड़ी कहते हैं। तो वह चौथे गुणस्थान में एक कषाय चौकड़ी का अभाव होता है तब उसके मिथ्यात्व निकल जाता है और यह जो अविरति है, चौथे गुणस्थान का नाम आप जानते हैं न बहन, आप जानती हैं? चौथे गुणस्थान का नाम, आप नहीं जानती है? हां आप! आप पुस्तक में देख रही हैं? बोलो-बोलो, सुलभाताई आप जानती हैं? नहीं। अच्छा कौन जानता है? हां, हां, हां, बोलो-बोलो, बहुत अच्छा! जनरल उत्तर देना सब लोग, जोरसे। *सभी श्रोता: अविरत सम्यक्त्व।* अविरत सम्यक्त्व। अविरत यानी क्या? जो असंयमी है, जिसके कोई व्रत नहीं है उसको अव्रती सम्यक्त्वी कहते हैं और ऐसा जो सम्यग्दृष्टि जीव है उसका नाम शास्त्र में अविरत सम्यग्दृष्टि कहा है। यानी उसका मिथ्यात्व गया है, एक कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है, अभी भी अविरत ही है। यह अविरत सम्यक्त्वी है, उसके अभी भी कोई व्रत नहीं हैं, प्रमाद बाकी हैं, कषाय बाकी हैं और योग बाकी हैं।

फिर आगे, जो चतुर्थ गुणस्थान से ऊपर के गुणस्थान में यानी पांचवें गुणस्थान में जाता है, तो उस पांचवें गुणस्थान में उसके जो बारह प्रकार की अविरति है उसमें से कुछ अविरति है और कुछ विरति हो गयी है। अभी वह उसका पर्सेंटेज वगैरह अभी बाद में देखेंगे हम, उसको विरताविरत कहते हैं; संयमासंयमी कहते हैं, क्या कहा? तो उसके मिथ्यात्व भी निकल गया है और अब अविरति भी थोड़ी निकल गयी हैं, थोड़ी हैं ऐसा कहेंगे। लेकिन अभी भी उसको प्रमाद और कषाय और योग बाकी हैं, ये सारे कैसे हैं? बंध के हेतु हैं – ख्याल में आया? ये तो क्रम से इसीतरह नष्ट होंगे और इस बात को हम कल सुबह विशेष, अच्छी तरह से और डिटेल में देखेंगे अभी हम यहीं समाप्त करते हैं।

बोलो चौबीसों भगवान की जय!

३७. चारित्र गुण – कषाय, नोकषाय

अभी तक जीवद्रव्य के विशेष गुणों में से सिर्फ श्रद्धा गुण की अवस्थायें जो-जो होती हैं, उसके बारे में हमने देखा और यह भी हमने कन्फर्म किया कि द्रव्यानुयोग की अपेक्षा से श्रद्धा गुण की दो ही पर्यायों की बात शास्त्रों में आती है एक तो विभावरूप परिणमन है उसको मिथ्यात्व कहेंगे और जो स्वभावरूप परिणमन है उसे सम्यक्त्व कहेंगे। लेकिन करणानुयोग की अपेक्षा से इसी श्रद्धा गुण की चार अवस्थाओं का वर्णन है; उस प्रकार के जीव के भी परिणाम होते हैं; उनमें से एक तो मिथ्यात्व है; दूसरा सम्यक्त्व तो है ही है; लेकिन बीच में दो अवस्थायें होती हैं – वे हैं सासादन और सम्यग्मिथ्यात्व। ये गुणस्थानों के भी नाम हैं लेकिन जीवों के परिणामों के अनुसार उनका नामकरण किया गया है, यह हमने देखा था। अब इसके बाद हम चारित्र गुण को देख रहे हैं।

चारित्र गुण को देखने के पहले उसके साथ-साथ कर्म जो है, कौनसा? मोहनीय कर्म; उस मोहनीय कर्म के भी हमने दो भेद देखे थे – एक दर्शनमोहनीय और एक चारित्रमोहनीय। देखो यहां तो ऐसी अच्छी बात है कि जो जीवों के परिणामों के नाम हैं वे ही चारित्रमोहनीय या दर्शनमोहनीय कर्मों के नाम हैं; यानी जो मूलप्रकृति है वह तो मोहनीय है, उसकी उत्तरप्रकृति हैं दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय। फिर उस दर्शनमोहनीय के जो भेद हैं जो हमने कल देखे थे। कौनसे? मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति; जीवों के परिणामों के भी इसी टाइप के नाम हैं।

वैसे चारित्रमोहनीय के भी जो भेद हैं, चारित्रमोहनीय के भेद कितने हैं कोई जानता हैं? चारित्रमोहनीय कर्म के कितने भेद हैं? हां जी। *श्रोता: चार।* चार। कौन बता रहे, आप? अच्छा कौनसे चार हैं बहन? *श्रोता: अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ; अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ; प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया लोभ; संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ।* हां कितने हो गये? सोलह हो गये न, आपने चार बताया, शास्त्र में तो उनके पच्चीस नाम आते हैं। सुलभाताई आप बताना चाहती हो? *श्रोता: अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ; अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ...*हां वे हो गये, सोलह के आगे। *श्रोता: नौ नोकषाय।* बहुत अच्छा, नौ नोकषाय। तो ये जीवों के

परिणाम हैं हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा और तीन वेद – स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। ये जीवों के परिणाम हैं, ऐसे ही कर्मों के नाम हैं, ख्याल में आया ? तो अभी हमें यह देखना हैं कि जब-जब यह जीव स्वरूप में रमणता करता है तब उस चारित्र गुण में सम्यक् परिणमन की शुरुआत होती है। उस समय जीवों के परिणाम कैसे होते हैं, उसको भी हम देखेंगे और उस समय कर्मों की क्या अवस्था होती है वह भी देखेंगे।

चारित्रमोहनीय कषाय कर्म

अनंतानुबंधी	–	क्रोध, मान, माया, लोभ
अप्रत्याख्यानावरण	–	क्रोध, मान, माया, लोभ
प्रत्याख्यानावरण	–	क्रोध, मान, माया, लोभ
संज्वलन	–	क्रोध, मान, माया, लोभ

नोकषाय कर्म

हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद

तो अभी हम पहले शुरुआत करते हैं कर्म की अपेक्षा से। कर्म की अपेक्षा से हमने यहां चार नाम लिखे हैं। कौन-कौन से ? मैं बोलूंगा आपको रिपीट करना है, अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ। *सभी श्रोता: अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ।* अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। *सभी श्रोता: अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ।* प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। *सभी श्रोता: प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ।* संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ। *सभी श्रोता: संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ।* यह अभी तो हमने सिर्फ कषायों के नाम देखे हैं। देखो साहब, आपको अगर मालूम होगा तो इन सब का एक नाम है, वह है कषाय; और कषाय के अभी हम दूसरी तरह से भेद करेंगे तो राग और द्वेष; राग और द्वेष के और भेद करेंगे तो क्रोध, मान, माया, लोभ। क्रोध, मान, माया, लोभ के और भेद करेंगे तो अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन इसतरह के क्रोध, मान, माया, लोभ।

अभी यह डिफिकल्ट प्रश्न नहीं है फिर भी सोचने लायक है – यह जो क्रोध, मान, माया और लोभ इनमें रागरूप कितने हैं और द्वेषरूप कितने हैं? ऐसा अपना सवाल है।

ख्याल में आया? हां-हां, हंसाबहन आप तो पचास सालों से यह सुनते हैं और हम इधर हवा भरते हैं फुग्गे में-बलून में और आप उसको टांचनी-पिन लगा रही हो! लोगों को जरा सोचने दो, आपका तो बहुत अभ्यास है मैं जानता हूं। हमारा दुर्भाग्य हैं कि आपसे हम सुन नहीं पा रहे हैं। तो मैं यह कहना चाहता हूं कि रागरूप कौनसे हैं और द्वेषरूप कौनसे हैं? क्रोध, मान, माया, लोभ में रागरूप कौन-कौनसे हैं, डॉक्टर साहब आप बतायेंगे? हां, जोर से, द्वेषरूप कौनसे हैं और अपना क्या बोलते हैं रागरूप कौनसे हैं? *श्रोता: सभी क्रोधरूप और सभी मानरूप।* सभी क्रोधरूप हैं और सभी मानरूप हैं और सभी, सॉरी – तो सभी द्वेषरूप हैं और सभी रागरूप ऐसा कहेंगे हम? रुक, रुक, रुक, पहले तेरी मम्मी को पूछते हैं फिर तुझे, बोलो। *श्रोता: क्रोध और मान द्वेष हैं।* क्रोध और मान-द्वेष हैं और माया और लोभ-रागरूप हैं, ख्याल में आया?

देखो, जब भी हमें द्वेष होता है किसी के प्रति, तो क्रोध आता है कि नहीं? जैसे यह डॉक्टर साहब को मेरे लिये आ रहा है। अंदर मन में, मैं देख रहा हूं। तो वह क्या हो गया? वह द्वेष होता है और क्रोध के साथ क्या है मान, मान भी द्वेषरूप है। तुम क्या समझे, मेरी गली में आ जाओ फिर बताऊंगा। यह कैसा है? मान कषाय है; यह भी द्वेषरूप होता है और जब जीव मायाचारी करता है तो वह क्यों मायाचारी करता है? तो उसको कुछ न कुछ चाहिये, राग है और लोभ भी वैसा ही है; लोभ भी कैसा है? रागरूप है। हमें पैसे का लोभ है न? तो हमें पैसे के प्रति द्वेष है, इसलिये हम उसको इकट्ठा कर रहे हैं कि नहीं? ख्याल में आया? ऐसे हर बात में लेना, खाना भी खाते हैं। मैं आपसे पूछता हूं, बिल्ली देखी है न आपने। तो बिल्ली जो है वह चूहों को खाती है तो द्वेष से खाती है या राग से खाती है? *श्रोता: राग से खाती है।* ख्याल में आया न?

तो ऐसे हमें सोचना है और आगे जायेंगे हम – हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद यह जो नौ नोकषाय हैं, अभी नौ नोकषाय; तो क्या होता है क्या? आज कल के बच्चे हैं न? सारे इंग्लिश्तानी हैं। नोकषाय यानी कषाय नहीं है ऐसा मानते हैं, लेकिन नोकषाय का अर्थ है नो यानी एन + ओ = नो नहीं, नो का अर्थ किंचित्। किंचित् यानी कुछ समय के लिये होते हैं अधिक काल के लिये नहीं होते हैं इसलिये उनको किंचित् कषाय कहते हैं, उसका नाम है नोकषाय। देखो-देखो, हास्य भी

एक नोकषाय है तो आपको हंसने को कहा तो कितने दिन तक लगातार आप हंसते रहोगे? कि थोड़े टाइम के लिये? यह हमें किसी के प्रति समझ लो रति होती है, शोक होता है, अपने घर में कोई गुजर जाये, तो एक दिन, दो दिन शोक करें, फिर खाना खायें कि नहीं? ख्याल में आया न? तो यह जो कषाय है अभी सबमें आप लगा लेना, सबमें लगाते बैठेंगे तो टाइम बहुत जायेगा। तो किंचित् कषाय का अर्थ है बहुत शॉर्ट पिरिअड के लिये होते हैं ऐसे जो नौ नोकषाय हैं उनमें रागरूप कौनसे और द्वेषरूप कौनसे हैं? तो अभी कौन बतायेगा? जयश्रीताई की बेटी मैं नाम भूल गया। *श्रोता: शमा।* शमा-शमा, रागरूप कौनसे होंगे और द्वेषरूप कौनसे होंगे? सोचना है, उसमें क्या है? बहुत आसान बात है। पद्माताई आप बतायेंगे? सोचना, प्रतिभाताई? पुरुषों में कोई बताना चाहेगा? मयूरभाई आये थे न? कहां बैठे हैं आप, कही शकशो? नहीं? बहु सारुं, त्रिशला आवी छे? क्यां छे? अच्छा कोई बात नहीं, अभी देखो मैं आपसे, हां बोलो-बोलो। *श्रोता: हास्य, रति।* हास्य, रति। *श्रोता: पुरुषवेद, स्त्रीवेद।* पुरुषवेद और स्त्रीवेद। ये क्या हैं? *श्रोता: रागरूप हैं।* रागरूप हैं और नपुंसकवेद? *श्रोता: रागरूप है।* रागरूप है। देखो, बहुत अच्छा बताया उन्होंने, फिर से हम सोचते हैं। देखो, हमें जो हास्य होता है और जो रति, रति यानी कोई चीज हमें अच्छी लगना, उसके प्रति प्रीति होना यह रति है; जेसे आजकल आपको रति किसमें है? हापूस की केरी में। अभी यहां से कोई लेकर जाता है न? अरे, केटलामां लाव्या, केटलामां लाव्या? हां! आटला रुपया किलो? में तो आटलामां लाव्या। तो यह कैसी है रति? यह रागरूप है, रति और हास्य और तीन वेद यह कैसे हैं? रागरूप हैं और चार कौनसे रह गये – अरति, शोक, भय और जुगुप्सा; यह सारे द्वेषरूप हैं।

जुगुप्सा का अर्थ आपको शायद नहीं मालूम होगा, जो यहां गुजराती लोग आये हैं उनको समझाना तो बहुत आसान है। गुजरातीमां जेने केहवाय चीतरी चडे, एने जुगुप्सा कहेवाय, चीतरी चडे एटले शुं? अभी मैं बताता हूं, आप बम्बईवासी लोग हैं या अन्य गांव के हैं आप एसटी स्टँड के उधर खड़े हैं और बिलकुल बस आकर खड़ी हो जाये और आप अपनी जगह किधर है देखने के लिये खिड़की के पास जायें और इतने में कोई वहां से व्हॉमिट करे और वह अपने हाथ पर आ जाये तो आपके परिणाम कैसे होते हैं? इसको जुगुप्सा बोलते हैं। ख्याल में आया? और क्या रह गया? अरति, शोक, भय, जुगुप्सा; भय तो मालूम है आपको – देखो वहां चूहा है – यह सारा भय है। यह सारे कैसे हैं? द्वेषरूप

हैं। हमने जो चार देखे न? तो अभी क्या देखा? देखो, देखो, यह चार में से क्रोध, मान यह द्वेषरूप हैं और अरति, शोक, भय, जुगुप्सा ये चार ऐसे ये द्वेषरूप हो गये, और वह पांच हास्य, रति, तीन वेद और ये दो माया, लोभ ये सात कैसे हैं? रागरूप हैं। यह हमने कषायों के भेद देखे। देखो शास्त्र में जब-जब कषाय कहने में आयेगा तो कषाय का अर्थ राग-द्वेष है ऐसा समझना और राग-द्वेष की जब बात चलेगी तब उसमें क्रोध, मान, माया, लोभ इन्क्लूडेड हैं; यहां तक की बात समझ में आयी?

अब आगे, तो क्रोध, मान, माया और लोभ जो हैं इनको चार में विभाजन किया है, उनका नाम है, अभी आपने बोला था फिर भी मैं आपको बोलकर दिखाऊंगा। अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ; अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ; प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ और संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ। अभी इनके अर्थ को देखना हम चालू करेंगे।

देखो, अनंत-अनुबंध यानी अनंत कर्मों का अनुबंध करते हैं, ऐसे जो जीवों के परिणाम हैं, उसको अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ कहते हैं। दूसरा नाम क्या है? भाईसाहब, दूसरा नाम क्या है? *श्रोता: अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ।* अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। अभी इसका अर्थ समझने की कोशिश करते हैं। प्रत्याख्यान का अर्थ जानते हैं आप? जयश्रीताई आप जानती हैं न? बोलो। *श्रोता: त्याग।* बहुत अच्छा प्रत्याख्यान का अर्थ है त्याग; अप्रत्याख्यान यानी थोडा त्याग और अप्रत्याख्यानावरण यानी जिस कारण से जरा भी त्याग नहीं हो सकता ऐसे जीवों के जो परिणाम हैं और उनमें निमित्तरूप से अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ कर्म हैं। अब यह पहले थोड़ा-थोड़ा सुन लेना फिर हम आपको बात क्लिअर कर देंगे। अब प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ यानी क्या? प्रत्याख्यान यानी त्याग – मुनियोग्य संयम उसमें बाधा डालनेवाले ऐसे प्रत्याख्यानावरण टाइप के जीवों के परिणाम और वैसे ही कर्म। अब चौथा जो है वह है संज्वलन, ज्वलन यानी क्या? जलना और संज्वलन यानी मंद-मंद जलना यानी कि कैसे हैं? तो मंद-मंद परिणाम हैं, उसको कहेंगे संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ – यहां तक बात समझ में आयी? साक्षी! बहुत अच्छा! अब आगे बढ़ते हैं, तो यह क्या बताना चाहते हैं? हम थोड़ासा इसको उदाहरण के माध्यम से समझने की

कोशिश करेंगे। देखो, यह कषायों की जो उपस्थिति है जिसको वासनाकाल कहते हैं; वासनाकाल का अर्थ जो लौकिक में वासना है वह नहीं है; वास – आप कहो निवास करते हो यानी कहां रहते हो? वैसे ही! वासनाकाल का अर्थ, वे कितने काल तक टिकते हैं। किनकी बात चल रही हैं? कषायों की; तो कषायों की जो टिकने की जो कोई अवस्था है हर समय नयी-नयी बदलती है; लेकिन वैसे के वैसे परिणाम आगे-आगे चलते हैं और कर्म भी वहां चल रहे हैं; तो इस अपेक्षा से कहा है कि किसीके प्रति जो क्रोध, मान, माया, लोभ के परिणाम हैं, वह छह महीने से अधिक टिकते हैं, उनको क्या कहेंगे? अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ। इसका उदाहरण मैं देता हूं। क्या कहा कि यह भाईसाहब हैं न? यह गये वर्ष आये थे और मुझे गाली देकर गये। कब की याद आयी? *श्रोता: एक साल पहले की।* एक साल पहले की, तो छह महीने से अधिक हो गया कि नहीं? अरे! यह जो है न, यह माणकचंद मेरी बेटी की शादी में आया था। उस समय उसने इतना खाना खाया, इतना खाना खाया सब लोगों को कम पड़ा! अभी उस बेटी के बेटे की शादी आने लगी बोलो। अभी इस टाइम तो उसको बुलायेंगे नहीं, तो हमने कितने साल की बात याद रखी? बीस-बाईस साल की। केवल याद आया ऐसा नहीं जब-जब याद आये, तब-तब मैं उसके प्रति वैसे ही क्रोधरूप परिणमता हूं। यह क्या है? अनंतानुबंधी। यह मैं आपको अनंतानुंबधी क्रोध, मान – यह इसने मुझे पचास साल पहले गाली दी थी, देखो आज उसकी क्या हालत हो गयी देखो? और हमने चुप-चाप सुन ली; कुछ बोले नहीं, हम देखो कहां चढ़ गये; ऐसा होना चाहिये भाई – यह मान! इसतरह सब में लगा लेना।

यह जो घड़ी पहनी है न? मैंने पिनांग की यह घड़ी तीस साल पहले चोरी की है; आज तक उसको पता नहीं। यह जीव चोरी कब करता है? लोभ होता है तभी करता है और रोज उसको देखता है – तो मैंने चोरी की, मैंने चोरी की, मैंने चोरी की; परिणाम चालू हैं। यह कैसे हैं? अनंत-अनुबंध करनेवाले हैं और हर समय, यह ऐसे परिणाम हैं कि जो इस जीव को संसार में रखड़ाने के लिये कारणभूत हैं। इसलिये कहते हैं यह मिथ्यात्व जो है, और अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ जो है, वह जीव को सम्यक्त्व नहीं होने देते। जीव के परिणाम भी ऐसे ही हैं, और कर्म भी वैसे ही हैं – ये दोनों साथ में समझ लेना कि जब तक इस जीव के अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ बाकी हैं, तब तक उसके सम्यग्दर्शन नहीं होगा। हमें तो अगृहीत मिथ्यात्व निकालना है न भाई? तो इसलिये शास्त्रों

में भी कथन आता है, और लोग भी एक दूसरे को मांहो-मांहि ऐसा ही उपदेश देते हैं कि तुम कषाय कम करो, कषाय कम करो; लेकिन कषाय कम करना यह जीव के अधिकार की बात नहीं है। उसको कषाय कम करने हैं तो क्या कर सकता है कि वह जीव अपने स्वभाव का, स्वरूप का यथार्थ निर्णय करके उसीमें एकाग्रता करेगा, तो वहां जो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभरूप जो कोई उसके कर्म हैं वे वहां उपस्थित नही रहेंगे; उसका अनुदय होगा; द्रव्यानुयोग कहेगा उसका अभाव हो गया; करणानुयोग कहेगा, अभाव नहीं, अभी सत्ता में हैं, अभी उपशमित हैं, अभी अनुदय है उनका। देखो, जहां जो कथन होगा उस कथन को हमें समझना चाहिये।

हमने खाली एक द्रव्यानुयोग ही पढ़ कर रखा है और दूसरा कोई बात करता है तो कहता है ऐसा है नहीं! ऐसा मत करना, अन्य भी अनुयोग हैं और अन्य अनुयोग भी जिनेन्द्र भगवान की दिव्यध्वनि में आये हैं, ख्याल में आया? देखो, मज़े की बात बोलता हूं, आप लोग बहुत टेन्स हो गये ऐसा लग रहा है आपके चेहरे पर से। कुछ साल पहले हंसाबहन आप भी थी शायद यहां पर, उज्ज्वला करणानुयोग का विषय ले रही थी। इतने में एक महिला आयी, उनको कहने लगी कि तमे... अभी हिंदी में बोलता हूं कि आपने गुरुदेवश्री को कभी सुना है? क्या एक बार भी सुना है? हां, बहनजी, बहुत बार सुना है। तो गुरुदेवश्री ने करणानुयोग की बात कभी छेड़ी नहीं थी आप खुद को बहुत सयानी समझती हैं क्या? कि आप करणानुयोग की बात कर रही हैं? उज्ज्वला ने कहा आपकी बात तो सही है लेकिन मैं आपसे पूछूं? क्या पूछना है? कि गुरुदेवश्री भविष्यकाल में तीर्थंकर होनेवाले हैं इस बात पर आपको भरोसा है कि नहीं? क्या बात करते हैं अमे गुजराती छीओ, अमे हिंदी थोडाज छीओ। ऐसा बोली वह। हम जरूर मानते हैं। तो उज्ज्वला ने कहा वे तीर्थंकर होंगे तो उनकी दिव्यध्वनि तो होगी कि नहीं? हां बिलकुल होगी। तो उसमें कौनसे अनुयोग की बात करेंगे? *हंसाबेन: गुरुदेवना प्रवचनमां तो एक ना एक वार करणानुयोगनी वात आवे ने आवे ज, कोई वखत तो वधारे आवे।* वात साची छे, तो अपने को यही बात बतानी है, जो कोई तीर्थंकर हैं वे कौनसे अनुयोग में बोलेंगे? अरे! वे तो अनुयोग में बोलते ही नहीं भाई, उनकी तो दिव्यध्वनि खिरती हैं; ॐकार ध्वनि खिरती है और उसमें अठारह महाभाषा और सात सौ लघुभाषा में वह ऑटोमॅटिकलि ट्रान्स्फर हो जाती है। वह निरक्षरी ॐकार ध्वनि कान में पड़ती है और कान में पड़ते ही वह अक्षररूप

हो जाती है, उसका ट्रान्स्लेशन हो जाता है फटाफट। *श्रोता: अठारह भाषाओं में?* हां जी। *श्रोता: अठारह भाषाओं में?* अठारह महाभाषा; मेन-मेन स्ट्रीम और सात सौ लघुभाषा। अरे! समवशरण में तो तिर्यंच भी आते हैं, वाघ आता है, सिंह आता है, सर्प आता है, गाय आती है, और कौन? नकुल आता है, कौन नहीं आता है? सारे पंचेन्द्रिय आयेंगे।

मैं आप से पूछूंगा। चारों गति के जीव आते होंगे कि नहीं? डॉक्टरसाहब, हं? *श्रोता: हां।* बहुत अच्छा, आप क्या कहते हैं? भाईसाहब, चारों गति के आते हैं। *श्रोता: हां।* आप क्या कहती हैं? *श्रोता: तीन गति के ही आते हैं।* अरे, एक को छोड़ दिया। आप कह रही हैं, तीन गति के जीव ही आते हैं। कौनसे गति के नहीं आते हैं? *श्रोता: तीन गति के ही आते हैं।* अरे! नरकगति की इतनी-सी मिट्टी यहां लाकर रखो तो बारह कोस तक ऐसी दुर्गन्ध फैलेगी कि हम जिन्दा नहीं रहेंगे, क्या बात करते हो! ऐसा कभी हो सकता है क्या? जा-जा भोपाल में जाकर देख, गॅसकांड हुआ था न? वह तो हां बराबर है, तो मिट्टी भी वैसी ही है वहां, ख्याल में आया? तो वहां समवशरण में देवगति के, मनुष्यगति के और तिर्यंचगति के, सब मिलकर असंख्यात जीव होते हैं। देखो, जगह तो कितनी छोटी और कितने असंख्यात जीव! तो क्या कहा? यह सुनते हैं तो उनमें सात सौ लघुभाषा हैं और अठारह महाभाषा हैं यह ऑटोमॅटिक ट्रान्स्लेट हो जाती हैं। *श्रोता: सातशे का?* सेव्हन हंड्रेड...। तो अपनी बात क्या चल रही थी? हां साहब? *श्रोता: अठारह महाभाषा कौनसी होगी?* अभी उस समय जो होंगी, वह अभी उसमें क्या है? उस समय अंग्रेजी भी नहीं होंगी शायद, है न, फ्रेंच नहीं होगी और वह जो होगी, वह आप और हम भी नहीं जानते होंगे। ढाई हजार साल पहले जो निकली होगी, संस्कृत होगी, प्राकृत होगी और कोई जो भी होगी। जो अप्रयोजनभूत बातें हैं, उसमें हम टाइम नहीं गवायेंगे, जो जिनवाणी तो इतनी अगाध है बहन और सच कहूं तो मैं भी नहीं जानता हूं। मुझे मेरा अज्ञान प्रगट करने में कोई कमी नहीं लगती है। लेकिन यह बात तो निश्चित है कि शास्त्र में तो इसका स्पष्टत: उल्लेख है।

अगर आप को चाहिये तो देव-गुरु-शास्त्र की द्यानतरायजी की जो पूजन है उसको आप पढ़ लीजिये। उसमें बिलकुल है आठ या बारह लाइन की जयमाला है और उस जयमाला में यह बात निश्चितरूप से लिखी है। तो द्यानतरायजी तो स्वामीजी के फॉलोअर

नहीं थे। इतना तो आप जानती हैं न? कोई बात नहीं। अपनी क्या बात चल रही थी कि यह जो कुछ चल रहा है – वह दिव्यध्वनि जब निकलेगी उस दिव्यध्वनि में कोई अनुयोग का कथन नहीं होगा। लेकिन गणधरों ने यह सारी बात सुनी और उन्होंने बारह अंग की रचना की। तो उसमें करणानुयोग आया होगा कि नहीं? अरे! उसके बाद नेमिचंद सिद्धांत चक्रवर्ती, कौन? आचार्य नेमिचंद, कैसे हैं? सिद्धांत चक्रवर्ती यानी चक्रवर्ती जो होते हैं वे षट्खंड का अधिपत्य प्राप्त करते हैं और इन्होंने तो षट्खण्डागम ग्रंथ का अध्ययन करके उसमें वे विशारद हो गये – सिद्धान्तों के चक्रवर्ती हो गये भई! वे कैसे थे? तो कहते हैं कि वे सत्य महाव्रत के धारी थे तो उन्होंने अपने घर की यानी मन की बात लिखी होगी या जिनेन्द्र भगवान की बात लिखी है? जो उन्होंने बात बतायी वह लिखी है।

भाई, हमें किसीका पक्ष होवे, तो बात आगे सूझती नहीं। इसलिये पं. दौलतरामजी का एक पद भी ऐसा आया है – अरे जिया जग धोखे की टाटी। क्या कहते हैं, अरे जिया जग धोखे की टाटी। झूठा उद्यम लोग करत हैं, आंखन बांधी पाटी। अरे जिया जग धोखे की टाटी। इफ यू आर प्रेज्युडाइज्ड माइंडेड, आंख में पट्टी बांधी है तो समझना गड्ढ़े में गिरनेवाले हो, ख्याल में आया? भाई, तुम प्रेज्युडाइज्ड माइंड मत रखो न, कोई पक्ष के मत रहो, जिनवाणी बहुत अगाध है; उसमें सभी बातें आयेगी; इसीलिये तो उनको सर्वज्ञ कहते हैं। ख्याल में आया? तो अभी अपनी बात यह हो रही थी कि करणानुयोग की अपेक्षा कथन अलग आयेगा; द्रव्यानुयोग की अपेक्षा से कथन अलग आयेगा; लेकिन एक ही अनुयोग पढ़ते हुये हमें ऐसा नहीं होना चाहिये कि इसके अलावा अन्य कुछ है ही नहीं। तो हमने यह देखा था अनंत अनुबंध करे, ऐसे परिणामों को अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ कहेंगे और वह जो कर्म हैं उनको अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ ही कहेंगे। उन कर्मों का नाम भी वही है और वे कैसे हैं छह महीने से अधिक काल तक जो टिके रहते हैं। देखो, एक ही परिणाम छह महीने तक नहीं टिकेगा हो। वैसे के वैसा, हर समय पर्याय पलटती है और हर समय पर्याय में वैसे के वैसे या उससे अधिक तीव्रता, थोड़ी-बहुत कम-ज्यादा लेकिन वह क्वॉलिटि कौनसी है – अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ, उसके बाद है अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। तो क्या कहा – अप्रत्याख्यानावरण यानी उस जीव के जो परिणाम हैं वे परिणाम जीव को किसी भी प्रकार के व्रत पालन करने में बाधा लाते हैं।

जीव के परिणाम ही ऐसे हैं सामने कर्मों का उदय भी कौनसा है? अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। इसलिये जो चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव हैं उस चतुर्थ गुणस्थान का नाम क्या देखा था कल हमने? अविरत सम्यक्त्व या असंयम जिसको हम कहेंगे यानी जिनके कोई व्रत नहीं होते, संयम नहीं होता, ऐसे जो सम्यग्दृष्टि जीव हैं तो उनके कितने कषाय चौकड़ी का सद्भाव है? यह जो अनंतानुबंधी वे तो निकल गये, तब ही तो उनको सम्यक्त्व हो जायेगा। लेकिन इस जीव को अभी एक कषाय चौकड़ी का अभाव है और उस जीव के सम्यक्त्व होते हुये भी किसी भी प्रकार का संयम नहीं है, किसी भी प्रकार के व्रत नहीं हैं इसलिये जिनेन्द्र भगवान ने उस गुणस्थान का नाम अविरत सम्यग्दृष्टि ऐसा बताया है। ये संयम किसको होता है मालूम है? संयमी किसको कहेंगे? कौन बताना चाहेगा? *श्रोता: पांचवां गुणस्थान।* हां-हां बोलो-बोलो। पांचवां गुणस्थान, आप बता रहे हैं, पांचवां गुणस्थान संयमी का है, बराबर, तो संयमासंयमी कौन हैं? हां जी? *श्रोता: चौथा भी असंयमी।* अच्छा, चौथा भी संयमासंयमी है। *श्रोता: असंयमी।* असंयमी है और मैंने पूछा आपने बताया संयमी पांचवें गुणस्थानवर्ती है। है न, तो मैं आपसे पूछता हूं कि संयमासंयमी किसको कहेंगे? *श्रोता: पांचवें गुणस्थानवाले जीवको जो कुछ कहेंगे...।* देखो, आप मैं प्रश्न जितना पूछ रहा हूं उसका उत्तर देना। आपने संयमी पांचवें गुणस्थानवर्ती जीवों को बताया तो मेरा आपसे यह प्रश्न है कि संयमासंयमी कौनसे गुणस्थानवर्ती जीव है? यानी कहीं न कहीं आपकी भूल हो रही हैं न? देखो, सुनना-सुनना, कोई बात नहीं। देखो, पांचवें गुणस्थानवर्ती को संयमासंयमी कहते हैं और जो छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती जो जीव हैं उनको संयमी कहते हैं यानी छठे गुणस्थान से संयम की शुरुआत होती है। जो जीव पहले से पांचवें के ऊपर के गुणस्थान में जायेगा तो सातवें ही गुणस्थान में जायेगा, उसीके व्रत होते हैं और पांचवें के अणुव्रत होते हैं। ख्याल में आया?

हमें तो पता ही नहीं और हमने तो रविवार का व्रत रख लिया और माना कि मैं बहुत व्रती हूं; हमने शुक्रवार का व्रत रखा, हमने और क्या-क्या होता है भाई? जयश्रीबहन कौन-कौनसे व्रत होते हैं? हर वार का कोई व्रत होता है और हमने अपने को व्रती समझा-माना; हमने रात का भोजन छोड़ दिया तो हमने समझा हम बड़े व्रती हो गये; हमने आलू प्याज आदि खाना छोड़ दिया तो हमने कंदमूल आदि का त्याग किया और हमने बहुत व्रत धारण किये। अरे! जा-जा, वह तो सदाचार है; जो जैनी होता है वह तो अष्टमूलगुण का धारक

होता है; वह सदाचार है भाई, वह व्रत नहीं है। मद्य, मांस और मधु इनका त्याग यह तो सदाचार में आता है। हमें असलियत ही मालूम नहीं न? और हम तो एकदम ऐसे चौड़े छातीवाले हो जाते हैं। क्या हो गया देखो ?

तो यहां तो कह रहे हैं जो किंचित् भी त्याग नहीं होने देता, ऐसे जो जीवों के परिणाम हैं उनको अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ कहते हैं। उसके बाद की चौकड़ी कौनसी है? प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। तो यहां क्या हो गया? प्रत्याख्यानावरण का उदय जो है वह जीव को प्रत्याखान यानी सकल संयम को धारण करने नहीं देते। यह मैं पहले आपको बहुत स्थूलरूप से बता रहा हूं और डिटेल में जायेंगे हम, घबराना मत। यानी जो मुनिराज होते हैं उनके कितने कषाय चौकड़ी का अभाव होता है? हमने तो बहुत बार बताया था। शमा आप जानती हैं? *श्रोता: एक ही कषाय चौकड़ी का अभाव है।* एक ही कषाय चौकड़ी का अभाव है मुनिराज को? अरे! ठहरो-ठहरो, यह मम्मी देखो? कैसा प्रेम है, यह अनंतानुबंधी है हो! पीछे से आप हाथ भले रखो न, आपकी आंख बोलती हैं कि आप क्या बोल रही हैं। इसीलिये हमेशा वक्ताओं को जरा ऊपर की जगह दी जाती है क्योंकि लोगों के मन में कौनसी बात चल रही है दिखे और खास करके मेरेसे तो कोई छुप नहीं सकता है।

हां, बोलो बेटा, उन्होंने बताया तीन कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है, एक कषाय चौकड़ी की मौजूदगी है, विद्यमानता है, हयाती है। ये तीन जो हैं न, एक, दो, तीन तो जिसके अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ है उसको सम्यक्त्व नहीं होगा; तो उस मिथ्यात्वी को चारों ही कषाय चौकड़ी मौजूद हैं। जिसके अनंतानुबंधी निकल गया है, और अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन हैं ऐसे जीवों के व्रत नहीं हैं, सम्यक्त्व है, वे अविरत सम्यग्दृष्टि हैं। फिर जिनके अनंतानुबंधी भी निकल गया और अप्रत्याख्यानावरण भी निकल गया, लेकिन प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन का उदय है, उन जीवों के अणुव्रत धारण करने के परिणाम होंगे वे संयमासंयमी हैं। जिनके प्रत्याख्यानावरण, अप्रत्याख्यानावरण और अनंतानुबंधी तीनों का उदय नहीं है ऐसे जीवों के संज्वलन का उदय है ऐसे जीव सकलसंयमी हैं; वह मुनि अवस्था है और यह जो संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ है वह जीव को यथाख्यातचारित्र की प्राप्ति नहीं होने देते यानी परिपूर्ण वीतरागता होने नहीं देते।

अब इसको मैंने बहुत स्थूलरूप से आपको समझाया। अभी हम थोड़ासा उसको उदाहरण के माध्यम से समझेंगे देखो। आपमें से बहुतांशी लोग श्रवणबेलगोला गये होंगे कि नहीं? यह जो श्रवणबेलगोला में बाहुबलीजी की मूर्ति है वह कब बनायी थी मालूम है आपको? किसको मालूम है? करीब एक हज़ार वर्ष पूर्व। तो जहां वह भगवानजी की मूर्ति है उसके बाजू में ऐसी जो शिला है उसके ऊपर लिखा है, क्या लिखा है – श्री चामुण्डराये करवियले, श्री गंगाये सुत्ताले करवियले। वह खुदा हुआ है। क्या बोलते हैं इंग्लिश में, क्या बोलते हैं, कार्व्ह, कार्व्ह, कार्व्हिंग किया हुआ है। आज भी जाकर देखो तो हमको लगेगा कि कल ही तो यह खुदा हुआ है। तो मैं आपसे पूछूंगा, वह जो खुदाई की है जिसको कार्व्हिंग कहते हैं वह कब मिटेगी? पहले जैसा पत्थर कब होगा? हां साहब, होगा तो जरूर, बहुत काल के बाद। तो यह बहुत काल से नष्ट होते हैं ऐसे जो जीवों के परिणाम हैं उसको अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ कहते हैं। देखो, अभी आपने कभी नहीं होंगे बताया न, तो उसके लिये में थोडासा डिटेल आपको बताना चाहता हूं।

देखो, यह दर्शनमोहनीय कर्म यानी मिथ्यात्व कर्म है। अगर उसका अधिक से अधिक कोई बंध करेगा तो कितने काल का होगा? मम्मी आप बतायेंगी? दर्शनमोहनीय कर्म जो है मिथ्यात्व अगर कोई जीव अधिक से अधिक, उत्कृष्ट स्थिति कोई बांधेगा तो कितनी बांधता है? पिनांग तू बता! *श्रोता: सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर।* सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर। गुजराती में सित्तेर-मराठी में सत्तर, हिंदी में सत्तर, इंग्लिश में सेव्हन्टी कोड़ाकोड़ी सागर। ख्याल में आया? और चारित्रमोहनीय कर्म जो है उसकी उत्कृष्ट स्थिति कितनी बांधेगा? चालीस कोड़ाकोड़ी सागर, चालीस कोड़ाकोड़ी के बाद तो अनंतानुबंधी जायेंगे कि नहीं? जायेंगे जरूर, लेकिन हर समय और नये-नये भी तो बांधता रहता है। तो हमने क्या देखा – जैसे पत्थर पर हम लकीर खींचते हैं और वह बहुत काल तक रहती है, टिकती है वैसे ही यह अनंतानुबंधी – यह कंपॅरिझन है हो उसमें जो हार्शनिस जो है या जो अधिक काल टिकने की जो क्षमता है उसकी बात हम कर रहे हैं। जो अप्रत्याख्यानावरण हैं वे कैसे हैं? तो आप किसी गार्डन में गये होंगे। वह बोरीवली में कौनसा है? नॅशनल पार्क। तो उसमें कई झाड़ों के ऊपर लिखा रहता है कि फलां, उसके बाद एक हार्ट उसमें से एक बाण जाता है और वह फलां यानी समबडी लव्हज् समवन इसतरह के; तो वह खुदाई कितने दिन तक टिकेगी? बहुत काल टिकेगी। वह झाड़ पर लिखा हुआ पत्थर की

लकीर जितना तो नहीं रहेगा, झाड़ जैसे-जैसे बड़ा होते जायेगा वैसे-वैसे वह वॉश अप हो जायेगा। तो वे परिणाम कैसे हैं? यह अनंतानुबंधी तो बहुत सख्त हैं, उससे यह अप्रत्याख्यानावरण थोड़ेसे नरम हैं और यह प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ कैसे हैं? कि जैसे रेत होती हैं न रेत। चौपाटी पर आप जाते हैं न? तो रेत में अगर कोई ऐसी लकीर खींच दे लकड़ी से तो कितने टाइम रहेगी? जल्दी नष्ट हो जायेगी इन कंपॅरिझन विथ अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ।

संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ कैसे हैं? तो कहते हैं कि आप कोई स्विमिंग पूल पर जाओ और हाथ में बड़ी लकड़ी ले लो और उस तरफ से ऐसी लाइन खींचो तो वहां से यहां तक आओगे तो जहां शुरुआत की थी वहां की लाइन मिट जायेगी। ख्याल में आया? तो वह है संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ जो मुनिराजों के होते हैं; तो उनके परिणाम कितने कोमल होते हैं, उनके परिणाम कितने थोड़े वक्त के लिये होते हैं। उनके पात्र जीवों के लिये लिखने के परिणाम होंगे; शास्त्र लिखने के परिणाम होंगे; उपदेश देने के परिणाम होंगे; तो वे ऐसा सत्कार्य करेंगे। लेकिन कितने? दो-तीन घंटे लगातार? नहीं, हर अन्तर्मुहूर्त में स्वरूप में लीनता करेंगे, ख्याल में आया? अरे! शास्त्र में एक स्टान्झा लिखना है जिसको गाथा कहते हैं, वह लिखते-लिखते न मालूम कितनी बार स्वरूप में गुप्त होते हैं, स्वरूप में लीनता करते हैं, तो यह ऐसी बातें हैं। वे कैसे हैं? संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ। अभी जब-जब हम कहते हैं यह जो पत्थर की लकीर है, यह जो झाड़ के ऊपर हमने जो यह खुदाई की है और उसके बाद जो रेती पर हमने जो लाइन खींची है – ये ऐसे टाइप के परिणाम मुनिराजों को होते ही नहीं। ऐसा ही मुनियों का स्वरूप है। परंतु मुनि का बाह्य वेष धारण करनेवाला कोई कहता है कि अरे! मुझे बुलाया नहीं और तुमने यहां अभिषेक चालू कर दिया, क्या समझ रखा है तुमने? अरे भगवान! बोलनेवाले को कोई नहीं बोलते हैं लेकिन बोलनेवाला क्या बोलता है, यह बतानेवाले का कान पकड़ते हैं क्योंकि हमें सच्चे देव, सच्चे गुरु और सच्चे शास्त्र का जब तक सही निर्णय नहीं होता है तब तक वह जीव सम्यक्त्व धारण करने में असमर्थ है। हमें किसी के प्रति कोई द्वेष नहीं है लेकिन हम खड्डे में न गिरें, इसके लिये सचेत कर रहें हैं यानी चेतावनी दे रहे हैं।

देखो, जिनवाणी माता का हमारे ऊपर ऐसा उपकार है, देखो, अभी हमको तो यह

सारा अननोन एरिया है और रात में हम यहां से वहां जा रहे हैं कुछ काम के लिये और हाथ में हमारे पास एक टॉर्च है, टॉर्च समझते हैं न? अथवा लालटेन, जो भी समझो तो वह जो टॉर्च है, वह टॉर्च हमें क्या सिखायेगा? सामने जो गड्डा है वह बतायेगा। वह बतायेगा नहीं कि तुम गिरो या मत गिरो; लालटेन या टॉर्च बतायेगा आपको? अभी गिरो-नहीं गिरो, क्या बतायेगा? अरे वह तो दिखायेगा कि यहां गड्डा है; गिरना-नहीं गिरना, उसको लांघ के जाना या बाजू से जाना यह तुम्हारा काम है। वैसे जिनवाणी हमें वस्तु का स्वरूप बताती है; सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का स्वरूप बताती है; सात तत्त्वों का स्वरूप बताती हैं; निश्चय-व्यवहार का स्वरूप बताती है; निमित्त-उपादान का स्वरूप बताती है; चार अभावों का स्वरूप बताती है; छह सामान्य गुणों का स्वरूप बताती है; उसको हमें आत्मसात करना या नहीं करना यह हमारे अक्ल के ऊपर डिपेंडंट है। कोई तुम्हे बतानेवाला नहीं कि ऐसा करो कि वैसा करो; यह तुम्हारा डिसिजन होगा कि हमें क्या करना चाहिये। इसलिये दौलतरामजी कहते हैं 'जो चाहो अपनो कल्याण'। अगर तुझे अपना कल्याण करना है तो जिनवाणी का इन डिटेल अभ्यास करो; हित-अहित की बात सोचना यह तेरा कार्य है। जिसके हित-अहित की पहचान नहीं है – वह कैसा है? हमने देखा न? अज्ञान मिथ्यात्व है उसको। ख्याल में आया?

भाई, मैं फिर से कहता हूं हो! किसी व्यक्ति विशेष की बात यहां नहीं चल रही। ये जीवों के जो परिणाम हैं उन परिणामों से वह जीव कैसा है यह हम सोच सकते हैं। हम किसीको सर्टिफाय नहीं कर सकते कि तू मिथ्यात्वी है, तू सम्यक्त्वी है, तू पांचवें गुणस्थानवर्ती है, तू फलां है, तू फलां है, ख्याल में आया? यह तो परिणामों को समझने का जो थर्मामीटर आपके हाथ में दिया जा रहा है, वह अपने बगल में लगाना, जो रास्ते में मिलता है सबको लगाते मत बैठना। यह कैसा है? वह कैसा है? वह कैसा है? क्योंकि यह जिनवाणी का अभ्यास तो अपने स्वयं के लिये करना है; ना कि पर को समझने-समझाने के लिये, ख्याल में आया?

तो अभी क्या बात हो रही थी? ये चार प्रकार के परिणाम हमने देखे। तो अभी यह अनंतानुबंधी आदि के ये चार हैं न? क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार हैं, इसलिये उसको चौकड़ी कहते हैं। यहां महाराष्ट्र के लोग आये हैं, यह तो जानते होंगे चांडाल चौकड़ी होती

हैं न? हिंदी लोग भी जानते हैं अच्छा, हां जी, यह चौकड़ी है। ये चार कौनसे हैं? क्रोध, मान, माया, लोभ और इन चौकड़ी के भी चार अलग-अलग प्रकार हैं। एक अनंतानुबंधी, एक अप्रत्याख्यानावरण, एक प्रत्याख्यानावरण और एक संज्वलन। अब हम यह थोड़ा और डिटेल में समझना चाहेंगे।

देखो यहां पर क्या बात बताते हैं? यहां पर कहते हैं कि जब-जब किसी जीव के अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ मौजूद हैं, उदय में आ रहे हैं, यह कर्म की भाषा है और उसके परिणाम भी वैसे हैं तो उसके साथ में यह अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन भी हैं, हैं और हैं। देखो, कभी भी क्रोध का उदय किसीके आता होगा तो और वह मिथ्यात्वी है तो उसके निश्चितरूप से अनंतानुबंधी क्रोध, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, प्रत्याख्यानावरण क्रोध, अैर संज्वलन क्रोध इन चारों ही क्रोध का उदय एक साथ आयेगा और हम कहेंगे कि उसका क्रोध का उदय हो रहा है लेकिन वह बांधेगा कितने चारित्रमोहनीय कर्म को? बोलो-बोलो बहन। मैं पूछ रहा हूं कितने कर्मों को बांधेगा? *श्रोता: चार।* चार, कौनसे चार? अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन – बस यही मैं चाहता था। आप बांधोगे तो सोलह के सोलह को बांधोगे! क्रोध का उदय है और जीव क्रोध कर रहा है; बांध रहा है क्रोध, मान, माया, लोभ और कौनसे? अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन। कितनी पॉवर है बोलो आपके पास! उदय एक का और बांध रहा सब; उसमें वे नोकषाय भी लेना हो! लेकिन अभी हम उसको गौण करते हुये बात कर रहे हैं। बात ऐसी है जिनके अनंतानुबंधी नहीं हैं, उनके यह अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, प्रत्याख्यानावरण क्रोध और संज्वलन क्रोध का उदय है और वे बांध रहे हैं बारह।

इसतरह सब नीचे समझ लेना। यह अनंतानुबंधी जो है वह अनंतानुबंधी को डबल एजंट कहते हैं। क्या कहते हैं? यह शब्द-संबोधन मैंने दिया है हो! शास्त्र में नहीं मिलेगा। डबल एजंट का अर्थ क्या होता है कि इसके साथ भी मिले और उसके शत्रुपक्ष से भी मिले। दोनों के साथ में रहे; शत्रुपक्ष यानी आपके शत्रु है यानी आपका कोई अपोनन्ट है उसके साथ भी मिलना; दोनों का काम करेगा, यानी क्या? वह तो चारित्रमोहनीय यानी जीव के परिणामों को भी ऑब्स्टॅकल करता है, घातता है कहो और सम्यक्त्व को भी

घातता है यानी वह मिथ्यात्व करने के लिये कार्यकारी है। ॲक्चुअलि उसका काम क्या है? क्रोध, मान, माया, लोभ की उत्पत्ति करना। लेकिन यहां क्या कहते हैं उसके कारण जीव सम्यक्त्व से भ्रष्ट भी हो जाता है। कैसे? तो जो जीव औपशमिक सम्यग्दृष्टि है उसके तो मिथ्यात्व कर्म के तीन भेद हो गये न वे। कौनसे-कौनसे? तीन भेद दर्शनमोहनीय के – मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति; ये तीन और अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ इनका वहां उदय नहीं है वे उपशमित हैं। लेकिन कभी-कभी क्या होता है कि अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ में से किसी एक का उदय आवे और वह जीव सासादन सम्यक्त्व में आ जाये यानी दूसरे गुणस्थान में नीचे आवे और वहां से नियम से मिथ्यात्व में जाये, इसलिये वह दोनों भी काम करता है – सम्यक्त्व को घातने का भी काम करता है और क्रोध, मान, माया, लोभ यानी कषाय उत्पन्न करने का भी कार्य करता है।

मैं समझता हूं यह थोड़ासा आपको इस वक्त जल्दी समझ में आया होगा। मैंने कल यह विषय इसलिये नहीं लिया कि सुबह आप जरा फ्रेश रहते होंगे तो बहुत सारी बातें समझोगे। दूसरे पिरिअड में हम इसको और खोल कर बतायेंगे। तो मैं समझता हूं कि मान लो यहां कोई बीस-पच्चीस महिलायें, आयी हैं पचास, तो दूसरे लेक्चर में भाग मत जाना, क्योंकि बात तो ऐसी है, देखो हॉस्पिटल में आप कभी दाखिल हुये हैं कि नहीं? नहीं! अच्छा है। लेकिन आपके पहचान के, घर के किसीको तो ॲडमिट किया होगा कि नहीं? तो वहां पेशंट होता है एक, डॉक्टर होते हैं चार-पांच, उसके असिस्टंट, नर्सेस, वार्डबॉय आदि जो होते हैं, चार-पांच और। यानी एक का ऑपरेशन करना है तो दस बारह का स्टाफ होता है। लेकिन मैंने आपके सबके पेट खोल कर रखे हैं; स्ट्रेचर पर सुलाया है; इतने पेशंट हैं और मैं अकेला एक डॉक्टर हूं। अभी आप स्ट्रेचर छोड़ कर भाग जाओगे तो बचाये भगवान तुम्हें, वह मेरी जिम्मेवारी नहीं क्योंकि ऑलवेज हाफ नॉलेज इज़ डेंजरस। ख्याल में आया? अगर हम दूसरे क्लास में दुबारा आयेंगे तो उसमें आपको अधिक उसका खुलासा मिलेगा और बात आपके गले जरूर उतरेगी। अभी आपको नक्की करना है आपको आना है कि नहीं। ख्याल में आया?

तो देखो फिर से हम देखते हैं, इसीको हम और अच्छे तरीके से समझने की कोशिश करते हैं। यह क्या है? आपके गुणस्थान का अभ्यास नहीं है इसलिये थोड़ासा

डिफिकल्ट लगेगा। कोई बात नहीं, उसको हम समझायेंगे न? कल हमने देखा था कि अभी भी जिसके मिथ्यात्व बाकी है, यह देखो ऊपर लिखा है न, जिसके मिथ्यात्व बाकी है तो उसके अविरति भी है, प्रमाद भी है, कषाय भी है और योग भी है। जिसके मिथ्यात्व निकल गया है, उसके अविरति है यानी वह अविरत सम्यग्दृष्टि है न? उसके मिथ्यात्व गया है सम्यक्त्व है, फिर भी उसके अविरति है, प्रमाद है, कषाय है और योग है। फिर उसके बाद जिसके विरति और अविरति है वह संयतासंयत है। उनके प्रमाद है, उसके कषाय भी है और उसके योग भी है। जिसके प्रमाद निकल गया है, उसके कषाय भी है और योग भी है। जिसके कषाय निकल गये हैं उसके योग बाकी है।

कल आपने बहुत अच्छा उत्तर दिया था पीछे से किसी ने, कि योग होते हैं, ऐसे जीव कौनसे देखे थे हमने? *श्रोता: तेरहवें गुणस्थान के जीव।* हां जी, तेरहवें गुणस्थानवर्ती अरिहंत अवस्था के जीव। वे कैसे हैं? तो कहते हैं कि सयोगी, लेकिन उनके योग है तो नीचे के चार होंगे कि नहीं उनमें? *श्रोता: नहीं।* नहीं, कि हैं? नहीं हैं! उनके कषाय नहीं है क्योंकि वे परिपूर्ण वीतरागी हैं। वे प्रमादी नहीं हैं क्योंकि छठे गुणस्थान में नहीं हैं और उसके नीचे के गुणस्थान में नहीं हैं अविरति नहीं हैं क्योंकि वे ऊपर के गुणस्थानों में हैं। इसतरह से हमें ध्यान में रखना है।

अभी मैं आपको एक बात बताना चाहता हूं वह एक उदाहरण के माध्यम से। आपने गिरीषभाई नाम बताया न? एक दफे क्या हो गया मुझे पैसे की बहुत गरज पड़ी। तो मैंने सोचा किसके पास जायें? सवाईभाई के पास जायें? नलिनभाई के पास जायें? बल्लूभाई के पास जायें? इतने में आप दिखे। आपने पूछा क्यों पंडितजी क्या बात हैं? आप बहुत चिंतित लग रहे हो, कोई प्रोब्लेम है क्या? हां साहब बहुत बड़ा प्रोब्लेम है। क्या है मुझे कुछ पैसे की जरूरत है। क्या बात करते हो? आप और रोती सूरत, शोभा नहीं देता। कितना एक लाख रुपया दूं? मैंने कहा नहीं साहब, एक लाख रुपया तो नहीं चाहिये मुझे। कितने चाहिये? तो हमने कहा हमें पांच नौ चाहिये यानी ९९९९९ रुपये मुझे चाहिये। कितने? ९९९९९ उसमें क्या है अभी देता हूं, ठहरो। इतने में ऐसा बोल रहे थे तो घर में से पीछे से आवाज़ आयी। पीछे से आवाज़ आयी तो कहा पंडितजी जरा रुक जाओ। वे अंदर गये, क्या पागल हो गये हो? किसको पैसा दे रहे हो, पंडित को? कोई भरोसा है क्या उसका?

यह पंडित लोग कब पलट जायेंगे उसका कोई अंदाजा नहीं है, ठिकाना नहीं है। उन्होंने मन में सोचा नहीं-नहीं, मैंने प्रॉमिस किया है मैं तो दूंगा। आये साहब बाहर, पंडितजी आपको मैं पैसा तो दे रहा हूं, लेकिन आप मुझे यह बताओ, आप वापस कब करोगे? हमने कहा साहब एक महीने के अंदर आपको चाहिये तो ब्याज के साथ सब पैसा वापस कर दूंगा। नहीं ब्याज नहीं चाहिये मुझे, मूल रकम भी आवे तो बहुत हो गया। हमने कहा ठीक है तो उन्होंने ९९९९९ रुपये दिये। तो मैंने कहा आपने कितने दिये? पांच नवडे दिये? क्या बोला, गुजराती समझते हैं न, पांच नवडा आप्या, पांच नौ, ९९९९९ – पांच ९ आये न?

पांच छह दिन जाने के बाद एक ९ रुपया लेकर मैं उनके पास गया और उनको बोला कि साहब आपसे हमने पांच ९ लिये थे, यह एक ९ वापस ले लो। तो मैं आपसे पूछता हूं बहन इसमें से कौनसा ९ काटोगे? इस कॉर्नर का, बीचवाला या उस कार्नर का? मैं आपसे पूछ रहा हूं जो आप बोलो वह काटेंगे क्योंकि पांच दिये थे, एक दिया न आपको हमने, बीचवाला काट दूं कि इस साइडवाला कि उस साइडवाला? बोलो-बोलो फट से, इधर का, लेगी आप? यह नहीं बोलती और आप तो बहुत उदार हैं। अजी साहब एक ९ को हटायेंगे तो आपका ९०००० का नुकसान होगा उसमें, क्यों एक ९ को आप काट दो तो रहे कितने? ९९९९। लेंगे कि नहीं अभी? यही फर्क है और हम क्या करना चाहते हैं? यह जो मिथ्यात्व है यह मिथ्यात्व की व्हॅल्यू ९०००० है; यह जो अविरति है उसकी व्हॅल्यू ९००० है; यह जो प्रमाद है उसकी व्हॅल्यू ९०० है, यह कषाय है उसकी व्हॅल्यू ९० है और योग की व्हॅल्यू है ९ और हम तो ऐसे शूरवीर हैं कि पहले योगा करना चाहते हैं, अयोग होना चाहते हैं जो कि तीन काल में पॉसिबल नही है। क्योंकि जो अनंतवीर्यधारी, ऐसे जो अनंतचतुष्टय से युक्त ऐसे जो हमारे भगवान हैं, सर्वज्ञ हैं, केवली भगवान हैं, वह योग को टाल नहीं पाये और तू कौनसा तीसमारखां आया कि तू योग का हटाता है?

अच्छा-अच्छा योग नहीं हट सकता, चलो ठीक है हम तो कषायों को कम करेंगे। अरे! भगवान! अरे! कषायों की विद्यमानता कहो या कषाय का सद्भाव कहो, वह तो दसवें गुणस्थान के अंत तक रहता है। ये जो मुनिराज हैं छठें-सातवें गुणस्थानवर्ती उनके भी

संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ नामक कषाय मौजूद हैं और हम तो कषाय ओछा करना चाहते हैं; कषाय कम करना चाहते हैं। अरे! तेरे पास कषाय कम करने की ताकत है तो पूरे ही घटा दे न? पूरे हटा दे। क्यों, कम क्यों करना चाहता है, पूरा ही नष्ट कर दे न! लेकिन वह नष्ट करने के लिये तुझे श्रेणी मांड़नी पड़ेगी, श्रेणी मांड़ने के लिये तुझे मुनि अवस्था धारण करनी पड़ेगी, मुनि अवस्था धारण करने के लिये तुझे सम्यक्त्व की प्राप्ति करनी पड़ेगी, और सम्यक्त्व प्राप्त करने के लिये तुझे लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका पढ़नी पड़ेगी। हम तो अपने ही गाने गायेंगे साहब, ख्याल में आया? भाई, यह तो गुरु-किल्ली है, मास्टर-की जिसको कहते हैं। चाहे जो शास्त्र को लगाओ, खोलो और पढ़ो और आनंद लूटो और अपने स्वयं का निर्णय करो कि मैं तो ज्ञानस्वभावी हूं; राग करना यह मेरा स्वभाव नहीं है। समयसार में राग को तो पुद्‌गल कहा। ख्याल में आया? क्यों कहा? क्योंकि पुद्‌गल को देख-देख कर इसको राग-द्वेष होते हैं। अरे! यह कैसा कुर्ता पहना है तुमने, क्या यह सफ़ेद है? अरे! तेरा क्या जा रहा है भाई? लेकिन उसको कुछ नीचा दिखाना है। उसको कुछ खराब बोलना है। कुर्ता भी क्या उसका है क्या, कुर्ता किसका है भाई? आपका है कि आपके बड़े भाई का है? बोलना भाई। यह तो मैं कह रहा था कि जो कुर्ता आप कह रहे हैं मेरा है वह तो आपका है ही नहीं, वह तो कॉटन का है।

श्रोता हंसाबेन: पंडितजी एक वात कहुं, आपे आ पांच नवडानी वात करी ने? बहु ज सुंदर वात करी छे। आपणा जेवाओ आ वात वारंवार करवा जेवी छे।

हां जी, हंसाबेन, गुरुदेवश्री के जमाने की आप स्वाध्यायी हो और आप सराहना कर रही हो। यह सब तो हमारे ऊपर गुरुदेवश्री के ही अनंत उपकार हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

३८. चारित्र गुण की पर्यायें

विषय को शुरू करने से पहले यहां दो-तीन प्रश्न आये हैं, उनको शॉर्ट में देखते हुये हम आगे बढ़ेंगे। यहां किसीका प्रश्न ऐसा है कि – *मेरा यह सवाल है कि कल आपने जो बताया था कि सरागी देवी-देवताओं की पूजा करने से नरक या निगोद का बंध होता है, तो वर्तमान में इस पृथ्वी पर जो बाकी के जाति धर्म के लोग हैं तो क्या वे सब नरक और निगोद की पर्याय में जायेंगे?* मज़ाक की बात है हमें तो पर की चिंता लगी है; मेरा क्या होगा? इस बात की चिंता है क्या हमें? ठीक है, यह अच्छी बात है कि नॉलेज के हिसाब से पूछना। मैं उस व्यक्ति को और आपको भी पूछना चाहता हूं कि आपने सिनेमा देखा है कि नहीं कभी? फॉर एक्झाम्पल 'कल, आज और कल' यह तीन घंटे में तीन पीढ़ी बतायी हैं, थ्री जनरेशन्स; तीन घंटे में पॉसिबल है कि नहीं यह? फिल्मों में? यहां जो बात बतायी जाती है, वह परंपरा निगोद का कारण है। उसको शॉर्ट करके बतायेंगे तो निगोद में जायेंगे। ऐसा इमीजिएट्लि उसको बंध होगा; वह तो निगोद का भी बंध हो सकता है, नरक का भी बंध हो सकता है; डायरेक्ट निगोद से नरक का बंध नहीं होगा, डायरेक्ट नरक में से निगोद का बंध नहीं होगा; यह तो मनुष्य, तिर्यंच की पर्याय में से बंध होगा। यह बात आपके ख्याल में आ गयी?

अब आगे, किसीने पूछा है कि *अगर निमित्त से कार्य नहीं होता तो फिर यह जिनवाणी-जिनबिम्ब का क्या उपयोग है?* यह बहुत अच्छा प्रश्न है और जब हम निमित्त-उपादान की बात देखने जायेंगे तब इसके बारे में चर्चा करेंगे क्योंकि उसकी अभी चर्चा करेंगे, तो उस वक्त हम क्या सोचेंगे? और अभी हम चर्चा करने से तो उत्तर तो हम जरूर दे पायेंगे, लेकिन आपका समाधान नहीं होगा क्योंकि मूल बात जब हमारे ज्ञान में आती है तो उसके ऊपर आधारित सिद्धान्तों को हम अधिक स्पष्टतया समझ सकते हैं।

तीसरा प्रश्न ऐसा है, यहां लिखा नहीं है लेकिन मुझसे पूछा गया था कि *आप बारबार कहते हो कि राग को आप कम कर नहीं सकते, तो यह आप ऐसा क्यों कहते हैं?* बहुत लोग ऐसा उपदेश देते हैं कि राग कम करना चाहिये, राग कम करना चाहिये। यह राग कम करना यह भी निमित्त का कथन है; मूल बात तो हमें देखनी है, मैं आपसे पूछूंगा, जीव

का स्वभाव जो है वह स्वभावरूप परिणमने का है या विभावरूप से परिणमने का है? हां साहब? *श्रोता: स्वभावरूप परिणमने का है।* स्वभावरूप परिणमने का है। देखो-देखो! स्वभाव किसको कहते हैं, आप जानती है पल्लवी? स्व-भाव, स्व का यानी मेरा भाव यानी मेरे जो कोई गुण हैं, मेरी जो कोई पर्यायें हैं वे जो हैं उसको स्वभाव कहेंगे। तो हम यहां गुण की बात लेते हैं, पर्याय को गौण करते हैं। तो स्वभाव उसीको कहेंगे जो तीनों काल रहता है, जो बदले तो वह स्वभाव हो ही नहीं सकता। ख्याल में आया? तो जीव का स्वभाव राग-द्वेष करना है ऐसा अगर हम मानेंगे तो विभावभाव करना कभी किसीका छूटेगा कि नहीं छूटेगा? ख्याल में आया? विभाव करना यानी राग-द्वेष करना यानी कषाय करना यह जीव का स्वभाव हम मानेंगे, तो आज तक जितने वीतरागी होकर सिद्ध अवस्था को प्राप्त हुये हैं, तो क्या स्वभाव से विरुद्ध परिणमित हो गये? बात ख्याल में आती है शमाजी, तो हम तो कहते हैं, भैया कषाय कम कर! खाली आत्मा-आत्मा करने से पेट भरनेवाला नहीं है; तो कषाय करने से पेट भरनेवाला है? क्या कम कषाय करने से ज्यादा डायजेशन होनेवाला है? बात नक्की क्या है?

भाई! बात तो ऐसी है कहीं-कहीं शास्त्रों में निमित्तों का कथन आता है। लेकिन एक बात, यह दूसरा तावीज आपको देता हूं 'कथनी तो होती है निमित्त से, लेकिन करनी होती है उपादान से' – क्या कहा? कथन तो निमित्त की अपेक्षा से किया जाता है और कार्य तो उपादान से यानी निज शक्ति से होता है और यह निज शक्ति प्रत्येक द्रव्य में मौजूद है, ख्याल में आया? जब वह कार्य होता है तब उसके निमित्त की ओर से बताया जाता है कि जिनबिम्ब या जिनदर्शन से इस जीव को सम्यक्त्व हुआ, तब तो समवशरण में जितने सारे जीव बैठते हैं उनके सामने तो साक्षात् तीर्थंकर विराजमान हैं, जिनबिम्ब भी नहीं है – ओरिजिनल जिनेन्द्र भगवान हैं, तो सबको सम्यग्दर्शन होना चाहिये। क्यों, ख्याल में आती है बात? अपनी क्या बात चल रही थी, यह एक पत्थर में दो पंछी उड़ा दिये मैंने! कि यहां बताते हैं कि राग कम करो, राग कम करो। अरे भाईसाहब! राग कम करना यह तेरा स्वभाव नहीं है, पहले मूल बात को तो पकड़ो फिर कहने में जरूर आयेगा। तो यह राग कम कैसे होता है? देखो, मैं आपसे पूछूंगा आत्मा का क्या कार्य है? जानना-जानना-जानना या राग कम करना-राग कम करना यह है? तो यह जानने-जानने में किसको जानने से क्रोध कम होगा? किसको जानने से कषाय कम होंगे? तो कहते हैं निज आत्मा

को। अपने स्वरूप का अनुभव करेगा, कल की भाषा में हमने जो सीखा था कि जब शुद्धोपयोग होता है, तब अशुद्धोपयोग नहीं होता। यह स्थूल कथन है हो! अभी आज उससे डिटेल में बात आनेवाली है, क्या कहा?

जब शुद्धोपयोग होता है तब अशुद्धोपयोग नहीं होता है और वह अशुद्धोपयोग यानी राग या द्वेष, पुण्य या पाप के परिणाम नहीं होते हैं तो उस समय जब हम कहते हैं कि किसी जीव ने सम्यग्दर्शन की प्राप्ति की है। तो सम्यग्दर्शन की प्राप्ति कब होती है? जब अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ की वहां अनुपस्थिति रहती है, अनुदय रहता है; यह करणानुयोग की भाषा है। द्रव्यानुयोग कहेगा उसका अभाव होता है, शॉर्ट में बोलते हैं उसे। ख्याल में आया? जो अभी तक हमने अधिक से अधिक जो टफ ऐसे जो कषाय देखे जो बरसों तक चले, छह महीने से अधिक काल तक चले, ऐसे अनंतानुबंधी ही नष्ट हुये। अब तीन रह गये, कौनसे-कौनसे? *श्रोता: अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन।* तो कहा जाता है कि इसने राग-द्वेष को कम किया। लेकिन एक बात बिलकुल ध्यान से सुनना कि कोई भी जीव कषायों को कम कर ही नहीं सकता; अरे! कषाय नहीं कर सकता, क्योंकि विभावभाव करना यह जीव का स्वभाव ही नहीं है। अगर हम उसको स्वभाव मानेंगे तो आज तक कोई वीतरागी हुआ है, उसने कोई उलटा ही काम किया है ऐसा मानना पड़ेगा। बात ख्याल में आती है साहब? देखो, कड़वी है लेकिन कड़वी दवा खाने से आदमी जल्दी सीधा होता है, मतलब अच्छा होता है। कई लोगों के पास शुगर कोटेड पिल्स होती हैं, लेकिन मुझे ऐसा मीठा-मीठा बोलने को आता नहीं है।

इसका अनुभव तो हमारे नेमिचंदजी को हो गया है, हां बोलो! *श्रोता: अगर राग जीव का स्वभाव नहीं है तो वह राग अपने आप होता है?* हां, आपका पूछना है कि जीव का स्वभाव राग-द्वेष करना नहीं है तो वह राग-द्वेष अपने आप होता है? तो हमने देखा था चारित्र गुण जो है, उस चारित्र गुण का जो स्वभावरूप परिणमन नहीं होता है, तो वह विभावरूप परिणमन तो उसका चलता ही रहेगा और वह विभावरूप परिणमन यानी राग-द्वेष के परिणाम क्रोध, मान, माया, लोभ के परिणाम। वे होते हैं तो जीव में ही हो! लेकिन जो होते हैं वे – तत् समय की योग्यता के कारण से होते हैं, जीव उसको करता है ऐसा मत समझना। *श्रोता: होते हैं जीव में, फिर भी जीव उसको करता नहीं?* बिलकुल! आप,

बम्बई में रहते हो न! तो बम्बई में जाते-जाते लोकल ट्रेन पकड़ते-पकड़ते बाय चान्स ऐसा भी हो सकता है कि आपका धक्का किसी महिला को लग जाये, तो आप चाहते थे क्या? फिर भी होता है न, वैसे यह है। यह तो अभी पता ही नहीं है कि राग-द्वेष से मैं भिन्न हूं। देखो साहब, सभी धर्म यही करते हैं! क्या? कि वे पाप से हटाकर पुण्य तक लाकर आपको खड़ा करते हैं, लेकिन एक जैनदर्शन ही ऐसा अद्वितीय दर्शन है कि वह कहता है कि पाप से और पुण्य से, दोनों से तू जुदा है। यह शरीर से तो मैं जुदा हूं ही हूं, लेकिन ये राग-द्वेष के परिणाम जो हैं उनसे मैं जुदा हूं यह बात तो केवल जैनदर्शन ही बता पायेगा। तो जिससे तू जुदा है उसे तू कम करे, ओछा करे यह कहां से लाया? क्या कहेंगे? जब स्वरूप में लीनता होती है तब वहां कषायों की उपस्थिति नहीं है तो कहने में आयेगा कि इस जीव ने कषाय कम किये और अन्यों को उपदेश देंगे कि आपको कषाय कम करना चाहिये।

ऑक्चुअलि क्या हो रहा है कि अपने स्वभाव में यानी अपने स्वरूप में लीनता नहीं है इसलिये ये राग-द्वेष जो होते हैं, उस राग-द्वेष का यह जीव ज्ञाता है। उसका लक्ष कहां गया है? राग को जानने में और जानना यह उसका स्वभाव है। तो कहते हैं कि तू अपने आत्मा को जान क्योंकि जानने के अलावा अन्य दूसरा कुछ तेरेसे होता ही नहीं है। तो जो ज्ञेय बदली करके अपने स्वरूप को जानेगा; अपने स्वरूप में एकाग्र होकर जानते रहेगा; तो वहां राग-द्वेष की उत्पत्ति नहीं होगी, तो कहेंगे कि उसने राग-द्वेष कम कर दिये। देखो भाई! कथन एक प्रकार से होता है अभिप्राय दूसरा ही रहता है।

मैं एक कथा सुनाता हूं, क्योंकि हमारे बच्चों को कथा सुनने को बहुत अच्छा लगता है और इतना अच्छा लगता है कि जब मुझे टाइम मिलता है हमको कथा सुनाओ ऐसा बोलते हैं, तो यहां मौका है, विषय भी है। एक बूढ़ी बाई थी, क्या बोलते हैं आप लोग? ग्रँड मदर थी, उसके एक छोटा पोता था छठी-सातवीं में पढ़नेवाला। तुम कौनसे स्टँडर्ड में हो? सिक्स्थ में हो न! तो तुम्हारे जितना ही वह लड़का मतलब पोता था। तो वह रोज स्कूल जाता था और शाम को पांच बजे स्कूल से वापस घर आता था, तो एक दिन ऐसा हुआ कि पांच बज गये, सव्वा पांच बज गये, साढ़े पांच बज गये, छह बज गये – बच्चे का घर आने का नामोनिशान नहीं। वह महिला – ग्रँड मदर चिंता करने लगी, क्या हुआ-क्या हुआ?

उसके अन्य कोई नहीं था, एक वही पोता था और खुद कहीं इधर-उधर काम करके कैसे भी करके अपना पेट भरती थी। तो इतने में साढ़े छह-पौने सात बजे, वह लड़का घर पर आया। कहां गया था रे तू? मैं सिनेमा देखने गया था। अरे वाह! कितना सयाना है? जा, अभी दूसरा शो भी देख कर आ जा! बहुत सयाना है जा-जा, क्यों इधर रुका है? तो वह लड़का इतना खुश हुआ कि क्या बोला वह? ग्रँड मदर हो तो ऐसी! कि मुझे एक सिनेमा के बदले दो सिनेमा देखने को अलाउ कर रही है। तो यह कथन उसने बराबर ग्रहण किया कि नहीं किया? हां, हम कहेंगे कि तुम बहुत सयाने हो तो आपने समझा कि मैं बहुत सयाना हूं। ख्याल में आया? यह जो अभिप्राय है, आचार्यों का कथन जो है, उस कथन पद्धति को हमें आत्मसात करने में अपनी होशियारी रखनी चाहिये। ख्याल में आया?

तो यहां तो कहेंगे कि यह बात ऐसी है कि राग कम करो यानी क्या? तुम राग को जानते रहते हो, उससे अच्छा तो अपने स्वरूप को जान लो। अपने स्वरूप को जानते रहोगे, तो तुम्हारे राग अपने आप कम हो जायेंगे। तो उसको कहेंगे कि तुम्हें राग को कम करना है। तो हमने तो ऐसा ही माना कि नहीं-नहीं-नहीं, चलो हम राग को कम करेंगे। क्या करेंगे? चुपचाप बैठेंगे, क्या हो गया साहब तुमको? बहुत क्रोध आ रहा है, तो मैं आपको बताता हूं न, आयडिया बताता हूं। क्या करने का है मालूम है आपको? तुम्हे गुस्सा आ गया तो तुरंत मुंह में पानी रख कर निगलना नहीं है, बाहर छोड़ना नहीं! गुस्सा ठंडा हो जायेगा – ठंडे जल से। दूसरा बोलता है ऐसा नहीं करनेका, वह आकाशयान भेजते हैं न! क्या बोलते हैं तुम, रॉकेट-रॉकेट। तो क्या करते हैं, टेन, नाइन, एट, सेव्हन – ऐसे तुमको गुस्सा आ गया, तो मन में ही मन में दस, नौ, आठ, सात ऐसी उलटी-उलटी गिनती करो, देखो गुस्सा ठंडा होता है कि नहीं; तो क्या यह सही इलाज है? यह तो टेम्पररी मलमपट्टी है भाई! ख्याल में आया? राग कम करने का एक ही तरीका है कि अपने स्वरूप में गुप्त हो जाये, अपने स्वरूप में लीनता हो जाये, स्वरूप का अनुभव करें तो उस समय एक-एक कषाय चौकड़ी का अनुदय होता जायेगा। अब यही बात को हम बढ़ाते हुये आगे चलते हैं।

अभी तक हमने चारित्र गुण देखा था और उस चारित्र गुण का विभाव परिणमन देखा था। जिन्होंने प्रश्न पूछा था वह है कि नहीं है मुझे मालूम नहीं है लेकिन अगर आये हो तो सुन लिया होगा और नहीं आये हो तो अन्य लोग उनको सुना देना। वस्तुस्थिति जो है यानी

इन रिॲलिटि, जिसको हम कहते हैं निश्चय से जो बात है क्योंकि व्यवहार की बात यानी व्यवहारनय की बात तो इस जीव ने अनंतों बार सुनी है, निश्चय की भी बात सुनी है लेकिन वह ॲक्सेप्ट नहीं हो रही है और जब तक ऐसी हमारी मान्यता नहीं होती – ॲक्सेप्टन्स यानी मान्यता यानी सही मान्यता नहीं होगी, सही श्रद्धान नहीं होगा तो उसके आत्मानुभव का कोई सवाल ही नहीं है। ख्याल में आया? बहुत सिरिअस हो गये साहब आप! हं, बहुत सोच रहे हैं। आपको मालूम है? गुरुदेवश्री के समय में जब उनके प्रवचन चलते थे और उन्होंने बताया कि राग से तू भिन्न है, राग का तू कोई नहीं है। वहां पर निहालचंदजी सोगानी करके एक व्यक्ति आये थे उन्होंने वह बात सुनी। जिंदगी में पहली बार उन्होंने स्वामीजी को सुना था। तब तक बहुत जगह जाकर घूम-फिरकर वे आये थे उनके कहीं सॅटिसफॅक्शन नहीं हुआ था। जहां बात बतायी गयी, राग से तू भिन्न है तो वे अपनी कोठी में गये यानी अपने रूम पर गये और रात में ऐसा विचार करते-करते सुबह तक उनको सम्यक्त्व भी हो गया।

हम अपने को राग से भिन्न नहीं मानते, हम तो अपने को राग का कर्ता मानते हैं भाई! राग मेरा स्वभाव है ऐसा मानते हैं; तत्त्व की बात में कहें तो आस्रवतत्त्व को जीवतत्त्व है ऐसा मानते हैं। यह बात मैं अभी नहीं उठाता हूं क्योंकि मुझे सात तत्त्व भी सिखाने है आपको, ख्याल में आया? देखो भाई, जो वास्तविकता है जो वस्तुस्वरूप है उसको हम पहले जानेंगे फिर बाद में औपचारिक कथन करना वह बात जुदी है; लेकिन लौकिक में औपचारिक कथन को तो हम बराबर समझते हैं। एक दफा, क्या नाम है आपका? नाम क्या है? *श्रोता: धीमंत।* हेमंत? नहीं कुछ दूसरा है, सीमंत? जो भी है चलो जो भी है, अच्छा धीमंत! यानी बुद्धिमंत? बहुत बढ़िया! इस धीमंतभाई के घर में हम गये, हां बम्बई में रहते थे। उन्होंने बोला एक दिन हमारे यहां आना, हम गये। यह कथा सच्ची नहीं है, तो उन्होंने कहा पंडितजी विराजिये-विराजिये! अपना ही घर समझना साहब, ऐसी कोई चिंता नहीं है; ठीक है। जो कुछ चाहिये मांग लेना, अपना ही घर समझना; बहुत अच्छा साहब, आपने हमारे ऊपर बहुत कृपा करी। क्यों भाई, क्या बात है? कुछ नहीं, एक कागज़ लाओ और एक पेन लेकर आओ। क्यों क्या बात है? अरे! लाओ तो सही! उन्होंने लाया और हमें दिया। तो हमने बोला कागज़ पर नीचे साइन कर दो। क्यों साहब? मैं ऊपर लिखनेवाला हूं यह घर आपने मुझे दिया है। आपने कहा यह घर तुम्हारा ही समझो, तो

आप साइन करोगे कि नहीं? *श्रोता: नहीं।* नहीं करेंगे न। उसमें तो हम बहुत होशियार हैं। क्या? यह व्यवहार का कथन है मूरख, मैंने तो आपका सम्मान करने के लिये ऐसा कहा था कि अपना ही घर समझो। तू तो उसके ऊपर कब्ज़ा करने लगा? वहां लौकिक में तो बराबर बोलते हैं और समझते भी हैं।

लेकिन आगम की बात हो तो कहता है देखो, इसमें ऐसा लिखा है कि नहीं कि सम्यग्दर्शन होने में जिनबिम्ब और जिनदर्शन निमित्त है। तो उसका क्या उपयोग? अरे! जब-जब होता है तब उसमें निमित्त होता है। तुम्हें मालूम है? नरक में असंख्य वेदनायें होती हैं, वे वेदनायें भी सम्यक्त्व का कारण बनती हैं। उसका क्या उपयोग? हर गति में अलग-अलग कारण है, वह भी बाह्य कारण है, बहिरंग कारण जिसको कहेंगे। अभी यह कारण और निमित्त-नैमित्तिक संबंध में आयेगा – अंतरंग निमित्त और बहिरंग निमित्त; लेकिन सभी बातें मैं एक दिन मैं कैसे बताऊं क्योंकि चालू विषय रह जाता है।

अभी हमने क्या देखा है कि यह जो चारित्र गुण है, उस चारित्र गुण की दो अवस्थायें हैं – एक है मिथ्याचारित्र और एक है सम्यक्चारित्र। अब मिथ्याचारित्र तो आप जानते हैं कि जो स्वरूप में लीनता नहीं है और बाह्य में जो जीव के परिणाम हो रहे हैं उसको कहेंगे मिथ्याचारित्र। मुझे एक जाते-जाते आपसे प्रश्न करना है, सब लोग ध्यान से सुनना फिर बोलना मत हमने सुना नहीं साहब। यह बाहर आपको कोई झाड़ दिख रहा है क्या? उस झाड़ में चारित्र है कि नहीं? उस वृक्ष में चारित्र है कि नहीं? यह मेरा प्रश्न है। कौन बताना चाहेगा महिलाओं में? बोलो बहन! अब आप पीछे मत देखना, औरंगाबाद की है न आप? आप उत्तर नहीं दोगी तो पूजाजी बहुत नाराज होगी। बोलो-बोलो, झाड़ में चारित्र है कि नहीं? हं, आप क्या बोलते हैं? आप क्या बोलते हैं, आप? *श्रोता: है।* कौनसा चारित्र है? हं, बोलो अवि। *श्रोता: मिथ्याचारित्र।* मिथ्याचारित्र है, हम तो चारित्र यानी ऐसा समझते हैं कि छान के पानी पीना, रोज देवदर्शन करना, रोज भगवान को नमस्कार करना। मुझे जाते-जाते एक विकल्प आया है, मुझे माफ़ करना। मैं आपसे पूछूंगा जो समवशरण में साक्षात् तीर्थंकर विराजमान हैं, उनको आप हाथ लगाकर नमस्कार करते हैं, उनके पैर में माथा चिपकाते हैं ऐसा करते हैं? हां, मैंने कहा साक्षात् भगवान जो समवशरण में विराजमान हैं उनको हाथ लगा-लगाकर दो, चार, दस बार माथा लगाये, ऐसा माथा टेके ऐसा करते हैं

क्या? तो हमारे यहां मंदिरों में जो जिनप्रतिमा है, वह जिनप्रतिमा है जिन सारखी यानी साक्षात् जो समवशरण में विराजमान वहां जिनेन्द्र भगवान हैं उनकी हमने हूबहू यहां पर मूर्ति स्थापित की है। भाई मूर्ति को एक जगह से उठाकर दूसरी जगह रखना बात अलग है। लेकिन उनको अभी तो क्या बतायें, हमने तो किसी-किसी जगह ऐसा देखा है कि माथा भी टेकते हैं और ... अच्छा पैर भी दबाते हैं? अच्छा, वह आपने देखा है, यह बहुत खोटी बात है। सोचना, मैं बोलता हूं इसलिये मेरी बात मत सुनना। अरे! जब हम कहते हैं कि जो साक्षात् भगवान हमने विराजमान किये हैं और उनसे हम इसतरह से इन क्रियाओं को करेंगे क्या? आप सोचना।

हां तो अपनी क्या बात हो रही थी कि चारित्र की जो बात थी, उस चारित्र में हमने देखा कि मिथ्याचारित्र यानी यह चारित्र जो है उसमें सम्यक्पना आया नहीं है। ऐसी अवस्था में उस जीव को मिथ्याचारित्र ही रहता है, लेकिन यह चारित्र क्या है, बाह्य जो क्रिया हो रही है, जीवों के बाह्य जो परिणाम हो रहे हैं, उसमें हमने चारित्र को फिक्स कर दिया। बिलकुल निष्चारित्र हो, जरा भी भगवान की बात नहीं सुनते हो, तुम रात्रिभोजन करते हो, अनाप-शनाप खाते हो, तुम्हारा चारित्र अच्छा नहीं है। अरे! क्रिया में चारित्र है या उस द्रव्य में चारित्र है? यह झाड़ जो है दिखता है वह तो पुद्गल है, लेकिन वहां कोई वनस्पतिकायिक जीव है न! तो उस वनस्पतिकायिक जीव में जो चारित्र है उसकी बात चल रही है और एक नियम बता देता हूं आपको – एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के जीवों को सम्यग्दर्शन होता ही नहीं है। क्या बताया?

एकेन्द्रिय पर्याय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के जितने जीव हैं, इनमें किसीको सम्यग्दर्शन होता ही नहीं है। तो सम्यग्दर्शन जिसके नहीं है उसको सम्यक्चारित्र कहां से होगा, ख्याल में आया? तो यह वनस्पतिकायिक जो जीव है वह कितनी इन्द्रियवाला है? बोल, *श्रोता: एकेन्द्रिय,* तो उसको सम्यक्चारित्र होगा कि नहीं? *श्रोता: नहीं।* तो कौनसा होगा? हां जी, आपने क्या बताया पहले? कोई बात नहीं, अच्छी है! यह बच्ची जब इतनी छोटी थी न, डेढ़-दो साल की हमारे घर पर आती थी। वही है न यह? और उसके नानी को बोलती थी तुम्हारी टीचर अच्छी है, ऐसी-ऐसी लाइन सिखाती है। वह टीचर यानी उज्ज्वला निषेक रचना बताती थी, वह खुश होती थी, बिलकुल गड़बड़ नहीं करती थी। ऐसे संस्कार

सभी ने अपने बच्चों को देना चाहिये। ख्याल में आया ऋतु? इन महिलाओं को तो बिलकुल ध्यान में रखना चाहिये। अभी जो ये यंगर जनरेशन है अपने बच्चों को स्वाध्याय में हमेशा लायें। जो चीज हमें मिलने में तीस-पैंतीस साल, पचास साल, साठ साल जो भी गये हैं, अगर उनको यही बात इतनी छोटी उम्र में मिले तो इनसे भाग्यवंत कौन होगा?

चलो आगे, तो हमने क्या देखा कि मिथ्याचारित्र है तो हम गुणस्थान की अपेक्षा से बात करेंगे। तो पहले से तीसरे गुणस्थान तक के जीवों के मिथ्याचारित्र रहता है और पहले से तीसरे गुणस्थान तक के जीवों को मिथ्यादर्शन ही होता है। यहां दर्शन गुण की बात नहीं चल रही है, चारित्र की बात चल रही है।

– चारित्र गुण की पर्यायें –

मिथ्याचारित्र	–	१ ला, २ रा, ३ रा गुणस्थान
स्वरूपाचरणचारित्र	–	४ था गुणस्थान – अनंतानुबंधी चौकडी का अनुदय
देशचारित्र	–	५ वां गुणस्थान – दो कषाय चौकडी का अनुदय
सकलचारित्र	–	६ से १० गुणस्थान – तीन कषाय चौकडी का अनुदय
यथाख्यातचारित्र	–	११ से १४ गुणस्थान – पूर्ण वीतरागता

अब कहते हैं जब वह जीव अपने स्वभाव में एकमेक हो जाता है यानी जैसा मेरा स्वभाव है वैसा ही मैं हूं ऐसी निश्चिती, निर्णय और श्रद्धान हो जाता है, तब वह जीव पहले से डायरेक्ट चौथे गुणस्थान में जाता है। उस समय उसके चारित्र की जो अवस्था है उसको कहते हैं स्वरूपाचरणचारित्र। क्या कहते हैं भैया? किधर लिखा है? अरे यहां लिखा है भाई, डरता क्यों है! हां, यह कहां लिखा है देखो यह स्वरूपाचरणचारित्र और जब वह स्वरूपाचरणचारित्र होता है तब उस जीव के अभी हम केवल चारित्र की बात ही कर रहे हैं न; तो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ जो हैं, ये जो कषाय हैं उनका वहां अनुदय रहता है और उस वक्त उसके तीन कषाय चौकड़ी का सद्भाव होता है। यहां लिखा है, वह कौनसा है? चौथा गुणस्थान; क्या लिखा है? स्वरूपाचरणचारित्र। इसका एक दूसरा नाम भी आता है, उसका नाम है सम्यक्त्वाचरणचारित्र। दोनों ही जीव के चारित्र की अपेक्षा से, सम्यक्चारित्र की अपेक्षा से दिये गये दो अलग-अलग नाम हैं, क्वॉलिटि एक ही है।

क्या कहा? जो जीव कौनसी दशा में? मिथ्यात्व अवस्था में अपने स्वरूप का निर्णय करेगा और मैं यही हूं, मैं तो ज्ञायक ही हूं, मैं तो शरीर से भिन्न ही हूं, मैं तो राग-द्वेष से भिन्न ही हूं ऐसा जब निर्णय करता है। लोगों का प्रश्न है न, आत्मानुभव कैसे करना? तेरे स्वभाव का प्रथम तू निर्णय कर और उसरूप ही मैं हूं ऐसा ज्ञान होते ही श्रद्धान कर और ज्ञान-दर्शन के साथ स्वरूप में एकाग्रता कर, तो तुझे सम्यग्दर्शन हुये बिना रहेगा नहीं। अभी यह देवलाली की ही बात है, एक बहन हमें मिली थी तो वह कहती हैं कि मैं रोज़ भक्तामर स्तोत्र बोलती हूं, कैसे बोलना चाहिये उसके उच्चारण तो सही होने चाहिये न? बिलकुल! सही तो होने ही चाहिये। लेकिन मैं कौनसी दिशा में मुख करके बैठूं? कौनसे वस्त्र पहनूं? ग्रीन साड़ी, ग्रीन चूडियां, ग्रीन क्या बोलते ब्लाउज, ऐसे मुझे पूर्व दिशा में मुख करना या उत्तर दिशा में मुख करना? अरे! तुझे अपने आत्मा में स्थिर होना है, बाह्य में ऐसा कोई नाटक करके सम्यग्दर्शन होता होगा कि नहीं? लोगों को ऐसी कोई क्रिया करने से ऐसा लगता है कि मुझे अब सम्यग्दर्शन हो ही जायेगा।

बहुत लोग पूछते हैं हमने तो अभी तक तीस-चालीस ग्रंथ पढ़े हैं, अभी हम कौनसा ग्रंथ पढ़े ताकि हमको सम्यग्दर्शन हो जाये। अरे! कोई ग्रंथ पढ़ने की तेरेको अभी आवश्यकता नहीं। जो ग्रंथ तूने पढ़े हैं, उनका सार ही यह है कि तू स्वयं शुद्ध है, तू स्वयं त्रिकाली जो तू टिकनेवाला है, तू तो ज्ञानस्वभावी है और ज्ञानस्वभावी – कहां लिखा है साहब? गुजराती में बोलूं तो पटपट बोला जावे – **हुं एक शुद्ध सदा अरूपी** ऐसा तू निर्णय कर; मैं एक हूं, शुद्ध हूं, सदा यानी नित्य हूं और अरूपी हूं – ऐसा निर्णय कर। तो आप कहेंगे यह तो अच्छा हो गया, लेकिन घबराना मत आगे एक बात रह गयी है – **ज्ञान-दर्शनमय अरे!** यानी जब तक मैं ज्ञातादृष्टा हूं, ज्ञान-दर्शनमय हूं, ऐसा तेरा निर्णय नहीं होता है तब तक तो तुझे कुछ हासिल होनेवाला है नहीं। ख्याल में आया?

जब यह जीव शास्त्र स्वाध्याय के माध्यम से अपने स्वरूप को समझने की कोशिश करेगा और इसरूप ही मैं हूं, बस यही मैं हूं – ऐसा उसका निर्णय यानी ज्ञान और श्रद्धान हो जायेगा, तो उसको स्वरूपाचरणचारित्र की प्राप्ति होगी, होगी और होगी; उसमें निमित्तरूप से जो कोई बाह्य में होंगे, देव-शास्त्र-गुरु का उपदेश होगा या देव के प्रतिबिम्ब का दर्शन होगा या बाह्य में असंख्य वेदना होगी – जो कुछ होगा सो होगा; उनसे कोई लेना देना नहीं

क्योंकि वे तो निमित्तरूप से हैं। हां, यहां तो जब वह स्वरूप में लीनता करता है तभी उसको सम्यग्दर्शन होगा। *श्रोता: उसको वैराग्य बोलेंगे?* अभी वह विषय मत निकालना, हम बाद में बात करेंगे, क्योंकि मेरी लिंक टूट जावे न, तो मैं भूल जाता हूं क्या बोलना है। अभी क्या है थोडासा डिस्टर्ब हो जावे न! आपके जो भी प्रश्न हैं लिखितरूप से दीजिये। उसको वैराग्य नहीं कहते इतना समझ लेना; स्व-स्वभाव का निर्णय करना यह वैराग्य है क्या? अरे! अतीन्द्रिय आनंद का उसको वहां वेदन है। ख्याल में आया? यह स्मशान वैराग्य की बात मत लेना, यह बाह्य सामाजिक जो वैराग्य कहते हैं वह बात यहां नहीं है। अरे! घर में बैठे-बैठे तुम्हें सम्यग्दर्शन हो सकता है।

क्या बात हो रही थी अपनी कि जब जीव यह निर्णय करता है तो सहजरूप से उसके पहले गुणस्थान से चौथा गुणस्थान प्राप्त होता है। तब क्या होता है? यह तो रॉयल मार्ग जिसको हम राजमार्ग कहते हैं, उसकी मैं बात करता हूं। क्यों? मैं यह भी जानता हूं पहले गुणस्थान में अधिक पुरुषार्थ करेगा तो वह पांचवें गुणस्थान में भी जायेगा, उससे भी अधिक पुरुषार्थ करेगा तो सातवें गुणस्थान में जायेगा; लेकिन वह बात हम यहां नहीं ले रहे हैं, हम तो यहां सिर्फ चौथे गुणस्थान की बातें कर रहे हैं। तो कहते हैं स्वरूप में जब लीनता होती है तब एक कषाय चौकड़ी निकल जाती है और तीन कषाय चौकड़ी बाकी रहती है। ऐसे समय में जीव के जो परिणाम होंगे उन परिणामों को स्वरूपाचरणचारित्र कहेंगे; वह चारित्र गुण का स्वभाव परिणमन है। बात समझ में आ रही है न? बहुत हेवी तो नहीं लग रहा है न हां! भाई यह बात आज नहीं तो कल तो समझनी है हो। गुजराती में बोलूं? आ समझ्या विना छूटको नथी, अभी यह कैसे इसको ट्रान्स्लेट करूं? भावभासन नहीं होगा। यह समझे बिना अपना कल्याण नहीं, यह समझे बिना दूसरा कोई रास्ता ही नहीं है। छूटको नथी, यह छूटको नथी क्या है? मैं यह आज तक नहीं समझा, भावभासन तो होता है बोल नहीं पाता हूं।

चलो, अब आगे बढ़ते हैं, जब जीव चौथे गुणस्थान में जाता है, उस समय जो सम्यक्चारित्र की अवस्था है उसको स्वरूपाचरणचारित्र कहेंगे। ऐसी अवस्था में यह जीव जब उसको ऐसा अतीन्द्रिय आनंद का वेदन हुआ है, तो उसको बारबार आत्मिक आनंद लेने की तमन्ना होती है, चाह होती है और बारबार वह प्रयत्नशील रहता है, उद्यमशील

होता है और अधिक पुरुषार्थ करके स्वरूप में लीनता धारण करने का प्रयास करता है। तब उस जीव को ऐसा उग्र पुरुषार्थ होता है कि उसके कारण से वह ऊपर के गुणस्थान में यानी पांचवें गुणस्थान में जाता है, तो उस समय उसको देशचारित्र नामक चारित्र की दशा प्रगट होती है, यह चारित्र गुण की दूसरी स्वभाव अवस्था है। देखो भाई! द्रव्यानुयोग की अपेक्षा से यह श्रद्धा गुण में जो कोई अवस्था पलटती है, वह जैसे हम, आपने क्रिकेट मॅच देखी होगी न? तो उसमें पहले दोनों कॅप्टन आते हैं और टॉस करते हैं। एक कॉइन लेकर टॉस करते हैं, तो उसको चित या पट यानी आपकी भाषा में किंग या स्केल कहते हैं। तो वैसा इस श्रद्धा गुण में या तो मिथ्याश्रद्धा या तो सम्यक्श्रद्धा; लेकिन चारित्र गुण में ऐसा है नहीं, वह तो स्टेप बाय स्टेप, हफ्ते-हफ्ते से – नहीं समझे? बाय इन्स्टॉलमेंट यानी किश्तों में – पहले स्वरूपाचरणचारित्र, बाद में देशचारित्र ऐसी वीतरागता बढ़ती जाती है।

तो देशचारित्र में क्या विशेषता है? तो कहते हैं उस समय दो कषाय चौकड़ी का अभाव हो गया है। लताबेन तो ये दो कषाय चौकड़ी कौनसी हैं? जिनका अभाव हुआ है? *श्रोता: अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ और अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ।* बहुत अच्छा! बहुत अच्छा! हमने समझा कि आप भूल गयी सब बातें, याद है। बहनजी ने ऐसा बताया कि दो कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ तो उस वक्त उस जीव के साथ अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभरूप जो कोई परिणाम थे; जिसको हम पहली चौकड़ी कहते हैं और दूसरी चौकड़ी कौनसी है? अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। इन दोनों का वहां सद्भाव नहीं है; अभाव हो गया समझो या अनुदय हो गया उसका। तो दो कषाय चौकड़ी मौजूद है वह कौनसी होगी? हां साहब! देशचारित्रवर्ती जो जीव है उसके दो कषाय बाकी रह गये हैं, वह कौनसे होंगे? नितिनभाई आप, नेमिचंद बोलो। *श्रोता: प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ और संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ।* प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ तो उसको कहेंगे देशचारित्र की प्राप्ति होती है। यहां जीव को पांचवां गुणस्थान प्राप्त होता है। अब जब यह पांचवां गुणस्थान है तब देखो, दो बातें साथ-साथ चल रही हैं, चौथे गुणस्थान से ही यह बात चालू होती है। क्या होता है? कि जब से जीव को सम्यक्त्व हुआ है वहां चारित्र गुण में दो धारायें चलती हैं। कैसी? एक सरागधारा और एक वीतरागधारा। ख्याल में आया? तो चौथे गुणस्थान में से पांचवें गुणस्थान में जीव जाता है, वहां पर भी सरागधारा भी है, वीतरागधारा भी है; यानी

वहां जब शुद्धोपयोग में है सो तो है, लेकिन जब शुद्धोपयोग से बाहर आता है, जब उसके शुभ परिणाम चल रहे हैं तब भी वहां शुद्ध परिणति तो चल ही रही है।

वैसे यह जो चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जो जीव है उसको शुद्धोपयोग तो कभी-कभी होता है, मान लो, छह महीने में एकाध बार जस्ट, मतलब जिसको हम कहते हैं बताने के लिये, क्योंकि हमने वह वासनाकाल देखा था छह महीने से अधिक रहता है वह अनंतानुबंधीवाला, उसके पहले छह महीने से पहले वह नष्ट हो जाता है, वह अप्रत्याख्यानावरण है तो बात क्या हुयी, जब यह जीव बारंबार अपने स्वरूप का अनुभव करेगा, उग्र पुरुषार्थ से अपने स्वरूप में अधिक-अधिक स्थिरता करेगा, तो उसको सहजरूप से दूसरे कषाय चौकड़ी का अभाव हो जाता है और अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, माया, लोभ वहां नहीं रहते, तो उस जीव को देशचारित्र, यह देशचारित्र यानी क्या? पूरा हिंदुस्तान देश है उतना बड़ा चारित्र होता होगा कि नहीं? उस चारित्र का क्षेत्र कितना होगा शमा? क्षेत्र प्रदेशों में बताना है आपको। मम्मी को दूर बिठाया न! किधर है, बोलो बहन आप? चारित्र गुण का क्षेत्र कितना बड़ा होगा? वह कितना है? वही तो पूछते हैं। आप बताओ बहन आप? *श्रोता: असंख्यात प्रदेश।* बहुत अच्छा! देखो बहनजी ने कितना सरस उत्तर दिया। वह कहती है असंख्यात प्रदेश क्योंकि प्रत्येक जीव का क्षेत्र तो असंख्यातप्रदेशी ही होता है। वह असंख्यात प्रदेश का माप क्या है? मोना बोल-बोल हां जी! *श्रोता: अपने-अपने जीवद्रव्य के अनुसार।* असंख्यात प्रदेश का माप चाहिये पल्लवी, कौन बतायेगा? हां असंख्यात के भी असंख्यात भेद हैं हा! वह बात अभी नहीं उठा रहा हूं मैं, नहीं तो और अपना टाइम निकल जावे; असंख्यात के भी असंख्यात भेद होते है। नितिनभाई बोलते हैं हमको कुछ समझ में नहीं आया है। कोई बात नहीं, बता ही देता हूं क्योंकि हमें तो कुछ समझे बिना आगे बढ़ना ही नहीं है, केवल बात-बात नहीं करनी, समझ कर यहां से उठना है।

देखो! किसी के पास ९९,९९९ रुपये और ९९ पैसे हैं, तो उसको आप लखपति कहोगे कि नहीं? लक्षाधीश जिसको कहते हैं, कहोगे न? बोलो-बोलो, हां या ना में जवाब दो? *श्रोता: नहीं कहेंगे,* बिलकुल सही बात है, लेकिन जिसके पास एक लाख रुपया होवे तो? आप के पास एक लाख रुपया है तो उसको लक्षाधीश कहेंगे कि नहीं? इनके पास एक लाख रुपया एक पैसा, इनके पास एक लाख दो पैसा, आपके पास एक लाख तीन,

चार, पांच ऐसे गिनते जाओ। एक लाख एक रुपया एक वार, अपाय छे भाई, ऐसा नहीं आगे जाओ तो एक लाख एक रुपया एक पैसा से लेकर आगे तक कितना हो गया? ९९,९९,९९९ रुपये और ९९ पैसेवालों तक के सबको आप लक्षाधीश ही कहेंगे, उसको कोई करोड़पति नहीं कहेगा। तो यह कितने लक्ष हो गये? एक लक्ष से अधिक लक्ष के भेद हो गये न? वैसे असंख्यात के भी असंख्यात भेद हैं और ये जो जीवों के प्रदेश असंख्यात हैं वे कितने असंख्यात हैं, वह समझने के लिये शास्त्र में उसका ऐसा कथन आता है – लोकप्रमाण असंख्यात। यह लोकप्रमाण असंख्यात का अर्थ क्या है? एक लोकाकाश जो है वह ३४३ घन राजू है, उसमें जो असंख्यात प्रदेश हैं, वे जितने कोई आकाश के प्रदेश हैं – लोकाकाश के, उनको लोकप्रमाण असंख्यात कहते हैं और इतना बड़ा क्षेत्र प्रत्येक जीव का है। ख्याल में आया।

देखो साहब, सब बात समझनी चाहिये न अपने को। तो अपनी क्या बात हुयी? तो हमने यह पूछा यह चारित्र गुण कितना बड़ा? तो आप समझ गये, ये भूल गया होगा, किधर भटक गया, नहीं, तो चारित्र गुण कितना बड़ा, तो बहन ने बताया कि जितना बड़ा जीव। अरे! जीव कितना बड़ा? वह चाहे चींटी होवे, निगोद हो या पांच सौ धनुषवाला हो, फिर भी वह असंख्यातप्रदेशी ही है; जो केवली समुद्घात करता है वह भी असंख्यातप्रदेशी है। अब पूछना मत केवली समुद्घात क्या होता है? क्योंकि हमें तो चारित्र को देखना है न। यहां अपनी बात जो चल रही यह देशचारित्र जो है, उस समय इस जीव के शुभ परिणाम भी चल रहे हैं, कौनसे शुभ परिणाम चल रहे हैं? तो प्रतिमा धारण करने के परिणाम चल रहे हैं और उसी समय दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक जो वीतरागता वर्तती है उसका नाम है देशचारित्र। देशचारित्र यानी एकदेश चारित्र, एकदेशचारित्र का अर्थ होता है पार्शल; जो परिपूर्ण चारित्र नहीं है, लेकिन जो एकदेश है, पार्शल, आंशिक चारित्र है, उसका नाम क्या देखा हमने – देशचारित्र। उस देशचारित्र में क्या होता है? दो कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है और दो कषाय चौकड़ी की विद्यमानता है। इस समय भी उस जीव के भले वह शुद्धोपयोग में हो या शुभोपयोग में हो या अशुभोपयोग में हो, तब भी उसकी शुद्ध परिणति चालू है, उसका सम्यक्त्व टूटा नहीं है।

इसमें एक बहुत खतरनाक बात है यानी लोगों की मान्यता की बात कर रहा हूं हो! शास्त्र में जो कुछ बातें हैं वह तो सही है लेकिन हमने तो पांचवीं प्रतिमा धारण की है, हमने

तो सातवीं प्रतिमा धारण की है, तो हम पांचवें गुणस्थान में हैं – ऐसे माननेवाले माई के लाल इस भरतभूमि में कम नहीं हैं! क्या कहा? यहां कह रहे हैं कि तेरे आत्मानुभूतिपूर्वक तुझे दो कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक अगर तेरेमें वीतरागता वर्तती है तो तू पांचवां गुणस्थानवर्ती है और उसके साथ-साथ कोई ऐसा कहे कि मुझे तो दो कषाय चौकड़ी का अभाव है, मैं तो बिलकुल वीतरागी हो गया हूं आधा-अधूरा, लेकिन यह जो प्रतिमा वगैरह धारण करने के जो शुभ परिणाम हैं न, वे मुझे आते ही नहीं साहब; तो वह भी समझना गप मार रहा है, यह गुजराती शब्द है – गप मार रहा है, झूठ बोल रहा है। क्या बताना चाहते हैं जब देशचारित्र की विद्यमानता होती है, उस समय उस जीव के शुद्धोपयाग में देशचारित्र की अवस्था होगी और परिणति में भी वह होगी और साथ-साथ शुभराग भी होगा और जब-जब शुभराग होता होगा तब-तब उसको शुद्ध परिणति भी हो रही है। वह सम्यक्त्व से जीव हटा नहीं है, यहां वीतरागधारा और सरागधारा दोनों एक साथ वर्तती हैं।

थोड़ासा आगे बढ़ेंगे, जब यह जीव पंचम गुणस्थान में आता है और उसको कहने में आता है हो, ऐसा कुछ, यह तो क्या बोलते हैं कर्मों की जो विद्यमानता है उसकी अपेक्षा से यह कथन कहा जा रहा है कि वह जीव पंद्रह-पंद्रह दिन के अंदर स्वरूप में लीनता धारण करता है और हम जानते हैं कि तीसरी प्रतिमा है वह सामायिक प्रतिमा है; तो सामायिक प्रतिमा में वह जीव दिन में दो बार, तीन बार, दो-दो घड़ी, तीन-तीन घड़ी, छह-छह घड़ी सामायिक करने की कोशिश करता है। सामायिक करना यानी एक जगह बैठकर सामायिक पाठ बोलना वह नहीं; सामायिक यानी जो समतावृत्ति है उसका लाभ करना और समतावृत्ति का लाभ कब होगा? जब यह जीव अपने स्वरूप में एकाग्र हो जायेगा, तो वह सच्चा सामायिक। देखो, सामायिक के बारे में एक बहुत मज़े की बात बताता हूं क्योंकि आप बहुत टेन्स हो गये न? यह सत्यकथा है बेटा, कथा सुननी है न तुझे? तो सुन, बाकी तो नहीं सुनेगा तो चलेगा; सत्यकथा तो सुन! हम अमेरिका में प्रवचनार्थ जाते थे, तो वहां एक घर में ठहरे, तो वहां के कोई वृद्ध गृहस्थ ८०-८५ वर्ष के जो भी होंगे, वहां थे। तो उनकी तीन-तीन बहुयें थी, तो सारी बहुयें बोलती थी कि हवे अे सामायिकमां बैठा छे। हमने पूछा सामायिक यानी वे क्या करते हैं? कुछ बोलते नहीं हैं, एक जगह बैठते हैं, सामने टीव्ही लगाते हैं और बीबीसी न्यूज चॅनल पर दुनियाभर की खबरें सुनते हैं यह सामायिक हैं। क्यों? सामायिक यानी एक जगह बैठना, हिलना नहीं, एक जगह छोड़कर दूसरी जगह

जाना नहीं, क्या इसको सामायिक कहेंगे? सुनना हो! और हम एकासन भी ऐसे ही समझते हैं, एकासन समझते हैं आप? एकाशन यानी क्या होता है? दिन में एक बार भोजन करना; तो हम मुश्किल से बारह बजे, साढ़े बारह बजे, एक बजे, एक बजे तक कुछ भी नहीं खाते-पिते हैं, फिर क्या करते हैं? अरे भाई! आने दे, अभी आने दे जल्दी, तो पहले चाय मंगाते हैं, क्योंकि सुबह की चाय नहीं हुयी है; फिर नाश्ता लेते हैं; फिर नाश्ते के बाद भोजन लेते हैं; तो अभी दोपहर की चाय रह गयी साहब वह भी! हिला नहीं न मैं एक जगह से, एक आसन पर मैं स्थित हूं, शाम का भोजन भी आ जावे, फिर अभी नाइट, क्या बोलते हैं – नाइट ट्रीट – आईस्क्रिम भी खायी। क्या इसको भी एकासन कह सकते हैं? यह ऐसी सामायिक की और एकासन की अवस्था हो गयी आज के ज़माने में।

यहां तो कह रहे हैं सामायिक यानी अपने स्वरूप में लीनता करने की, जिसको हम खोटी भाषा में कहेंगे रियाज़ करते हैं, जैसे कोई बड़ा गायक होगा दो-दो, चार-चार घंटे गाने की प्रॅक्टिस करता है। वह तुम्हारा तेंडुलकर वगैरह जैसे जो होते हैं वह चार-चार घंटे, छह-छह घंटे धूप में क्रिकेट की प्रॅक्टिस करते हैं। वैसे यह स्वरूप में लीनता करने की जो प्रॅक्टिस है और उसमें वह सक्सेसफुल भी होते हैं भाई! ऐसा पंचम गुणस्थानवर्ती जो जीव है उसके स्वरूप में लीनता तो होगी ही होगी, साथ में उस स्वरूप में लीनता के योग्य प्रतिमा धारण करने के उनके शुभ परिणाम भी होंगे। ख्याल में आया?

तो यह कौनसा है, तो कहते हैं – देशचारित्र; तो ऐसे वक्त में वह जीव पंद्रह-पंद्रह दिन के बदले, कोई जल्दी-जल्दी, कोई ऐसी अवस्था हो जाये कि उनको अभी पक्की ग्यारहवीं प्रतिमा भी जिन्होंने धारण की है, ऐसे जीव को अभी ऐसा निश्चय हो जाये की अभी मैं मुनि अवस्था प्राप्त कर सकता हूं। तब वह जीव किसी मुनिराज के पास जाकर निर्ग्रन्थ मुनि होने की ठान लेते हुये उनको अॅप्रोच होते हैं। उनको रिक्वेस्ट करते हैं कि मुझे मुनिदीक्षा दीजिये, जिनदीक्षा दीजिये और उनको योग्य देखकर वे जो आचार्य होंगे वे उन्हें मुनिदीक्षा देते हैं। जब उनको मुनिदीक्षा देते हैं तब वह जीव अभी भी पांचवें गुणस्थानवर्ती है, मुनि बना नहीं है। लेकिन पहले में पहले तो नग्नदशा लेंगे, बाद में अंतरंग में ऐसी उग्रता से स्वरूप में लीनता करेंगे तो उनको सहज ही पंचम गुणस्थान से सातवां गुणस्थान प्राप्त होगा और वे सातवें गुणस्थान में अंतर्मुहूर्त रहकर छठे गुणस्थान में आते हैं फिर छठे-सातवें, छठें-सातवें ऐसे झूलते रहेंगे। जब वे अपने स्वरूप में अधिक काल नहीं टिकते हैं, उस

समय उनको छठा गुणस्थान आता है और उस छठे गुणस्थान में अट्ठाईस मूलगुणों का पालन करने के परिणाम होते हैं। केवल बाह्य में अट्ठाईस मूलगुणों का पालन करना यह मुनिपना नहीं है क्योंकि वह बाह्य अवस्था है, जीव के परिणामों की अवस्था नहीं है। जीव के परिणामों की अवस्था तो सकलचारित्र है, जहां तीन कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक वीतरागता वर्तती है वह वीतरागता ही मुनिपना है। अरे! जिनके अभी अट्ठाईस मूलगुणों का भी यथोचित पालन नहीं होता, आगमानुसार पालन नहीं होता, उनके बारे में तो क्या कहना, जितना न कहे उतना अच्छा-हितकर है। जितनी चुप्पी धारण करे उतने हम सही सलामत बचेंगे, नहीं तो हॉल के बाहर नहीं जाने मिलेगा। ख्याल में आया?

वे पांच महाव्रत धारण करते हैं, जिसमें एक पहला तो अहिंसा महाव्रत है। अहिंसा महाव्रत का अर्थ क्या है कि जो त्रस जीव या स्थावर जीव किसी भी जीव की हिंसा उनसे नहीं होती है, ऐसे परिणाम जो हैं वह अहिंसा महाव्रत है और उस अहिंसा महाव्रत में तो ऐसा मुनिराज का स्वरूप है, शाम होते ही जहां शाम हुयी उसके पहले एक स्थान में स्थित हो जाते हैं, बोलना, चलना, फिरना, घूमना बंद हो जाता है वह अहिंसा महाव्रत है। वह अहिंसा महाव्रत का सच्चा पालन है। ख्याल में आया? बाकी बात तो मैं बोलूंगा नहीं, आप समझदार हो और समझदार को इशारा काफी है। लोग कहते हैं हमें क्या करना है? वे जो कार्य करेंगे उसका फल वे भोगेंगे, हम तो सच्चा समझकर उनको नमस्कार करे न! तेरी अनुमोदना हो रही है, कृत-कारित-अनुमोदना इन तीनों का उतना ही पाप है, जितना तू स्वयं करेगा या अन्य से करवायेगा या अनुमोदना देगा। तेरे अभी निर्णय नहीं कि सच्चा कौन है और झूठा कौन है? जब तक तेरा निर्णय सच्चा नहीं होता है, किसके बारे में? सच्चे देव, सच्चे गुरु, और सच्चे शास्त्र के बारे में तब तक तुझे आत्मानुभूति नहीं होगी। हमें तो आत्मानुभूति करनी है न भैया! यह बात है, चाहे मानो-मत मानो, लेकिन तुम्हारे मानने से, नहीं मानने से वस्तुस्वरूप बदलता नहीं है। वस्तुस्वरूप जो है सो है, उसमें कोई रंच मात्र भी फेरफार नहीं कर सकता। अरे नहीं साहब! आप समझना अभी पंचमकाल आया न! काल के अनुसार तो बदलना चाहिये कि नहीं? तुम्हारे पिताजी तो धोती पहनते थे तुम तो पँट पहनने लगे, जरा अमेरिका जाओ तो वह क्या बरमूडा पहनते हैं। क्या होता है? जमाने के अनुसार बदलना चाहिये तो जमाने के अनुसार अग्नि भी ठंडी-ठंडी होगी कि नहीं, हं? नमक भी अपना खारापना छोड़ देगा कि नहीं? सोना भी अपना सोनापन छोड़कर

पीतल हो जावे कि नहीं? क्यों साहब, छठे काल में होगा कि नहीं ऐसा? पांचवें काल में, तीसरे काल में, सोना-सोना ही रहेगा और तू पीतल को सोना समझकर पहनता हो, समझकर पहनता हो तो ठीक है लेकिन उसको सोना ही माने और पहने, तो खतरे में कौन है?

दूसरा महाव्रत सत्य महाव्रत है। मुनिराज जब भी बोलेंगे हित-मित-प्रिय वचन बोलेंगे। उनके कारण किसीका मन दुखे, किसीको तकलीफ होवे, ऐसी बात नहीं करेंगे। भैया यह मुनियों का स्वरूप हमें पता नहीं है। मैं तो कहूंगा अष्टपाहुड़ आप जरूर पढ़ना, उसके ऊपर गुरुदेवश्री के प्रवचन भी हैं। समझो तो सही, वस्तुस्वरूप को तो देखो, वह कुंदकुंद आचार्य ने दो हजार साल पहले लिखी हुयी बात है। हमारे घर में हम स्वाध्याय करते हैं अष्टपाहुड़ का। वहां एक भाईसाहब हमको पूछते हैं इन जनरल यह पुस्तक कहीं चलती नहीं है, आपने क्यों चलायी? अब आपने क्यों चलायी? हमारे घर में प्रवचनसार हुआ है, समयसार हुआ है, नियमसार हुआ है और अरे! पांच परमागम में अभी कौनसा रह गया? पंचास्तिकाय हुआ है, अभी यहां पांचवां परमागम रह गया है उसको चलायेंगे और अब हम तो अपने घर में बैठे हैं, कोई हमें गोली मारनेवाला आनेवाला नहीं है उधर और उसके लिये बिना डरे वहां तो स्वाध्याय करते ही हैं हम, यहां पर भी वही बात बोल रहे हैं।

जो सत्य है उससे क्यों डरना? नहीं, लोग नहीं मानते हैं। सत्य को संख्या की आवश्यकता नहीं है और जो असत्य को सत्य समझे, उसकी मर्जी। सत्य बोलने में डरना नहीं और सत्य कभी छुपाना नहीं, वह असत्य बोलने जैसा है, ख्याल में आया? तो बात क्या चल रही थी? ऐसे पांच महाव्रतधारी जो जीव हैं उन जीवों में जो वीतरागता वर्तती है, वह वीतरागता ही मुनिअवस्था है। बाह्य में जो अट्ठाईस मूलगुण पालने के जो परिणाम होते हैं, वे तो सहजरूप से होते हैं लेकिन वे पालन करना यह मुनिपना नहीं है। अब बाकी की बात तो हम बाद में करेंगे। मैं तो समझ रहा था यह विषय यहीं मैं ख़तम करूं, लेकिन क्या करूं, मैं बहुत आगे बढ़ गया।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

३९. चारित्र गुण – स्वभावपर्यायें

जीवद्रव्य के विशेष गुणों को देखते हुये हम जीवद्रव्य में असाधारण कहो या विशेष कहो, ऐसा जो चारित्र नामक गुण है, उसके बारे में हमने यहां थोड़ी बहुत चर्चा की थी। उस चर्चा में कई लोगों के कुछ प्रश्न हैं उसकी तरफ विशेष ध्यान न देते हुये एक ही जो विशेष बात है, उसका उल्लेख करते हुये आगे बढ़ेंगे। बात ऐसी है, हमने यह देखा था कि चारित्र गुण यह स्टेप बाय स्टेप यानी किश्तों में अधिक-अधिक-अधिक स्वभावरूप परिणमित होता है; उसके चार स्टेजेस बताये गये थे। पहला था स्वरूपाचरणचारित्र, दूसरा था देशचारित्र, तीसरा था सकलचारित्र और चौथा था यथाख्यातचारित्र।

देखो, चारित्र का जो पहला भेद है, सम्यक्‌चारित्र का पहला भेद, उसमें कहा है, स्वरूप में आचरण; स्वरूप में आचरण का अर्थ होता है स्वरूप में लीनता, स्वरूप में स्थिरता, स्वरूप में रमणता, स्वरूप में एकमेक हो जाना, ख्याल में आया? आचरण का अर्थ हम कुछ अलग करते हैं, आचरण यानी हमारा बाह्य आचरण जो है इसलिये चारित्रवान जब कहने में आता है तो; बाह्य बातों की बात ध्यान में रखते हुये यह तो चारित्रवान है ऐसा कहने का रिवाज़ है। लेकिन जब हम आगम का अभ्यास करते हैं, तब आगम के अभ्यास में यह बात आती है; आचरण यानी चरना, रमना, स्थिर होना। इसीको दूसरी भाषा में रममाण हो जाना, वह तो स्वरूप में रमण करना जो है, वह चारित्र गुण की स्वभाव परिणति है, ख्याल में आया? अब आगे क्या बताते हैं, दूसरा है वह देशचारित्र है। देशचारित्र यानी एकदेशचारित्र वहां भी चारित्र की परिपूर्णता हुयी नहीं है और थोड़ा आगे जायेंगे, तो कहते हैं सकलचारित्र यानी इस जीव के सकलचारित्र हो गया है। तो वहां वह जीव संयमी है, व्रती है, ऐसे ही जीवों के, कौनसे जीव? कि जिनके तीन कषाय विद्यमान नहीं हैं, उनका अनुदय है और सिर्फ एक कषाय चौकड़ी का उदय है ऐसे जीवों को कहेंगे सकलचारित्र है। वह तीन चौकड़ी के अभावपूर्वक जो वीतरागता है, जो स्वरूप में रमणता है, उसको कहेंगे सकलचारित्र। उसके बाद यथाख्यातचारित्र यानी जैसा चारित्र का स्वरूप कहा गया है, वैसा। देखो, भाई, यह चरणानुयोग की अपेक्षा कहो या द्रव्यानुयोग की अपेक्षा कहो, यह यथाख्यातचारित्र की प्राप्ति इस जीव को ग्यारहवें और बारहवें गुणस्थान में होती

है यानी ११ वे से १४ वे गुणस्थान तक यथाख्यातचारित्र पाया जाता है फिर भी करणानुयोग कहता है कि चारित्र की पूर्णता चौदहवें गुणस्थान में होती है, ऐसा झगड़ा है क्या? कॉन्ट्रडिक्शन है क्या?

दो अनुयोग, दो भिन्न-भिन्न आचार्यों ने जो बात प्रतिपादित की है, क्या उनमें भी कॉन्ट्रव्हर्सी है? नहीं भाई! वे तो समतावृत्ति धारण करनेवाले ऐसे आचार्य हैं, उनमें एक-दूसरे में कोई विरोध नहीं है। फिर भी अपेक्षा जो है वह जुदी-जुदी है; कौनसी अपेक्षा है? कि करणानुयोग कहता है कि बंध के हेतु कौनसे हमने देखे थे, याद है कि नहीं? कौनसे देखे थे भैया? *श्रोता: मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग।* मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग। तो अभी यहां पीछे जो बहन बैठती है तो उन्होंने हमेशा उत्तर दिया है, तेरहवें गुणस्थानवर्ती जीव को भी सयोगी कहा है। तो यह योग जो है न, पहले गुणस्थान से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक विद्यमान रहता है, तो योग है और वहां बंध हो रहा है। देखो-देखो, ग्यारहवें, बारहवें गुणस्थान के शुरू से कषाय तो है नहीं, ग्यारहवें गुणस्थान से आगे, कषाय तो है नहीं, लेकिन वहां योग का कंपन है तो योग के निमित्त से वहां कर्म बंध हो रहा है। किसे? अरे! तेरहवें गुणस्थानवर्ती अरिहंत को, लेकिन वह कैसा है? ईर्यापथ आस्रव जिसको कहते हैं, उस कारण से यानी जिसमें कषाय तो विद्यमान नहीं है। योग है, योग के कारण प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध होता है; लेकिन स्थितिबंध और अनुभागबंध नहीं होता इसलिये वह बंध हुआ तो वह एक समय मात्र टिकता है यानी जिस समय बंध हुआ उसके दूसरे समय में वह नष्ट भी हो जाता है।

तो वह बंध का हेतु तो है, कारण तो है इसलिये कहते हैं चौदहवें गुणस्थान में चारित्र की पूर्णता होती है और द्रव्यानुयोग कहता है कि जब यह जीव के कोई कषाय ही बाकी नहीं है, दसवें गुणस्थान के अंत में ही सारे कषाय निकल जाते हैं क्योंकि दसवें गुणस्थान का नाम आप बहुत सारे लोग जानते होंगे, सूक्ष्मसांपराय यह उसका नाम है; सूक्ष्म यानी बिलकुल एकदम सूक्ष्म और सांपराय का अर्थ है कषाय। तो वहां जो सूक्ष्मलोभ की विद्यमानता है वह दसवें गुणस्थान के अंत में ख़तम हो जाती है और उपशम श्रेणी चढ़कर जो ग्यारहवें गुणस्थान में जाता है, वहां एक अंतर्मुहूर्त के लिये ऐसा जीव पूर्ण वीतराग हो जाता है और बारहवें गुणस्थान से जो वीतरागता शुरू होती है वह तो सिद्ध होने के बाद भी

कभी फिर से दोबारा सरागता नहीं आयेगी, यह बात हमने देखी थी। अभी देखो, यह हमने जो अभी तक देखा है, अभी यहां हम बोर्ड की तरफ देखेंगे तो यहां बताते हैं, स्वरूपाचरणचारित्र जो है उस समय क्या हो गया है, एक कषाय चौकड़ी वहां नहीं है और तीन कषाय चौकड़ी की विद्यमानता है, अब यह बात समझ में आ रही है कि नहीं? हां? पाटनीसाहब? हां, अब आगे बताते हैं। देशचारित्र में वहां दो कषाय चौकड़ी निकल चुकी हैं, अभी हम निकल चुकी हैं ऐसा ही बतायेंगे; अभी उसकी विद्यमानता है कि नहीं, सत्ता में है कि नहीं, वगैरह-वगैरह बाकी सब बात भूल जायेंगे और दो कषाय चौकड़ी की विद्यमानता भी हैं और दो कषाय निकल भी चुकी हैं – ऐसा जीव पांचवें गुणस्थान में होता है। अब यहां जो प्रश्न अपने को पूछा गया था उसके बारे में, थोड़ीसी चर्चा करना चाहता हूं।

यहां पूछते हैं यह पांचवां गुणस्थान होता है, तो यह पांचवें गुणस्थान में हमने ऐसा सुना है कि ग्यारह प्रतिमायें होती हैं। तो ये ग्यारह प्रतिमाओं का नाम आप बतायेंगे? देखो, पहले में पहले, हम ऐसी बात को देखना चाहेंगे, उदाहरण के माध्यम से देखेंगे पहले, कोई व्यक्ति छोटा बालक चौथी पास होकर पांचवीं कक्षा में गया हो, तो पहले दिन वह कक्षा में जाकर बैठा है और कोई बच्चा पांचवीं की क्लास में बैठा है और उसके अभी कल परीक्षा है और वह अभी आखरी दिन में स्कूल में बैठा है। तो दोनों के ज्ञान में कुछ अंतर होगा कि नहीं? हां? दोनों पांचवीं में हैं! एक पहले दिनवाला, एक आखरी दिनवाला; यह ज्ञान की अपेक्षा से हमने तुलना की है, वैसे ही यहां तो स्वरूप में लीनता की अपेक्षा से भेद हम करेंगे। जिन्होंने चौथा गुणस्थान लांघकर यानी उसके आगे बढ़कर, पांचवां गुणस्थान अभी-अभी प्राप्त किया है, ऐसे जीव के पहली प्रतिमा होगी। उन्होंने पूछा है कि ये ग्यारह प्रतिमा के नाम क्या हैं? कौन-कौन जानता है? हां, आप जानती हैं? ऋतु? ग्यारह प्रतिमा के नाम, रिया? याद किया था न आपने एक बार? हां, बोलो बहन। *श्रोता: दर्शनप्रतिमा, व्रतप्रतिमा, सामायिकप्रतिमा, प्रोषधोपवासप्रतिमा, सचित्तत्यागप्रतिमा, रात्रिभोजनत्यागप्रतिमा, ब्रह्मचर्यप्रतिमा, आरंभत्यागप्रतिमा, परिग्रहत्यागप्रतिमा, अनुमतित्यागप्रतिमा और उद्दिष्टत्यागप्रतिमा।* आरंभत्याग, अनुमतित्याग और उद्दिष्टत्याग, बहुत अच्छा! यह मेरा शागिर्द है, नहीं समझे आप? यह बहन पहले अपने यहां आती थी हं, अब यह लन्दनवासी हो गयी है, तो यहां क्या कह रहे हैं? उन्होंने बताया दर्शनप्रतिमा, व्रतप्रतिमा, सामायिकप्रतिमा,

प्रोषधोपवासप्रतिमा, सचित्तत्यागप्रतिमा, रात्रिभोजनत्यागप्रतिमा सुनना, फिर कहते हैं सातवीं है ब्रह्मचर्यप्रतिमा, आठवीं है आरंभत्यागप्रतिमा, नौवीं है परिग्रहत्यागप्रतिमा, दसवीं है अनुमतित्यागप्रतिमा और ग्यारहवीं है उद्दिष्टत्यागप्रतिमा।

देखो, यहां क्या कहना चाहते हैं, जैसे-जैसे चौथे गुणस्थान में जीव गये हैं, चौथे से पांचवें में गये हैं, तो वहां बारंबार वे स्वरूप में एकाग्र होने का पुरुषार्थ करते हैं और उसमें जैसे-जैसे वे सक्सेसफुल होते रहते हैं, वैसे-वैसे उनके स्वरूप में अधिक-अधिक गाढ़ दृढता होती जाती है, स्थिरता होती जाती है, तो सहजरूप से इनके शुभभाव भी बढ़ते जाते हैं। यह ऐसा कैसे होता होगा? ऐसा आपके मन में प्रश्न आयेगा, लेकिन मैं आपको पूछता हूं, आप लोगों में से ऐसे कई लोग होंगे कि जिन्होंने जैनदर्शन का अभ्यास नहीं किया था, उस समय आलू, प्याज़, कंदमूल आदि वे खाते थे। जैसे-जैसे ज्ञान हुआ, अरे! इसमें तो भयंकर हिंसा का पाप हमें लगता है; हम तो अनंत जीवों की हिंसा अपने कारण करते हैं; अपने ही स्वाद की लोलुपता के कारण हम यह सब करते हैं; तो वह खाना-पीना सहज छूट जाता है। यह कैसे होता है साहब? यहां तो स्वरूप का जो अतीन्द्रिय आनंद का जो वेदन हो रहा है, तो यहां पाप परिणामों की हीनता होती जाती है। अशुभ परिणाम कम-कम-कम हो जाते हैं और शुभ परिणामों की अधिकता-अधिकता हो जाती है और उससे क्या होता है? स्वरूप में जितनी उग्रता से लीनता बढ़ती जाती है वैसे अधिक-अधिक उच्च प्रकार के शुभभाव होते हैं और उस प्रकार की प्रतिमा धारण करने के परिणाम इस जीव को सहजरूप से हो जाते हैं, ख्याल में आया? इसीलिये मैंने आपको बताया था कि केवल कोई बाह्य जो प्रतिमायें हैं, हमने ऐसी प्रतिमा धारण की, वैसी प्रतिमा धारण की, ऐसा कहना बात अलग है; लेकिन उसके साथ-साथ में शुद्धोपयोग भी होना चाहिये।

केवल मुझे तो शुभभाव आते हैं, प्रतिमा धारण करने के भाव आते हैं, लेकिन वह क्या है? आत्मानुभव है कि नहीं? वह तो कर डालेंगे भाई उसमें क्या है! कौनसी बात है, जो हम नहीं कर सकते हैं? देखो, इसके लिये आपको एक कथा सुनाता हूं। यह असल में बनी हुयी बात है और डॉ. हुकुमचंदजी भारिल्ल ने ही हमें बतायी है। आप जानते हैं कि वे टोडरमल स्मारक जो जयपुर में है, वहां उनके पास एक व्यक्ति आयी। जैसे अपने यहां देवलाली में कोई भी आता है हमको भोजन खिलाओ, यह लो बीस रुपया। नहीं, तुम्हें यहां

शास्त्र स्वाध्याय में बैठना चाहिये; यहां की जो गतिविधियां हैं वे सारी पूरी आत्मसात करनी चाहिये; तो ही तुम्हे भोजन मिलेगा। ऐसा कहते हैं न? वैसे उन्होंने कहा कि मैंने तो साहब ब्रह्मचर्यव्रत धारण किया है, मैंने तो सब घरबार का त्याग किया, तो आप मेरा यहां खाने-पीने का, रहने का इंतजाम करें। उस व्यक्ति ने बताया कि भाई, मैंने तो ब्रह्मचर्यप्रतिमा ली है, बहुत अच्छी बात है साहब! आपने ब्रह्मचर्यप्रतिमा ली है तो बहुत अच्छी बात है। तो आपने सातवीं प्रतिमा धारण की है? क्या नेमिचंदजी? तो आपने मिथ्यात्व का भी त्याग किया ही होगा? क्या बात करते हो भाई? यह मिथ्यात्व क्या होता है? हमने तो हमारा घरबार को त्याग दिया है, तुम कहो तो मिथ्यात्व को भी त्याग देंगे, उसमें क्या बड़ी बात है? क्या? तो वह प्रतिमाधारी है कि नहीं? आप नक्की करो हो! भाई, मैं कुछ नहीं बोलूंगा।

ऐसे मैं पहले ही आपको बताता हूं जिसके अंतरंग में स्थिरता होगी, उसके साथ-साथ उसको वहां शुभ परिणाम भी उस टाइप के होंगे उस प्रकार के होंगे। जैसे-जैसे अधिक-अधिक स्थिरता होगी, देखो! जो ग्यारहवीं प्रतिमाधारी जीव होते हैं न? ग्यारहवीं प्रतिमा के भी दो भेद हैं हो – एक क्षुल्लक और एक ऐलक। ये क्षुल्लक और ऐलक क्या होते हैं? तो क्षुल्लक जो होते हैं वे दो वस्त्र के धारी होते हैं, एक लंगोटी और एक खंड वस्त्र जिसको कहते हैं। ऐलक केवल लंगोटी पहनते हैं। दोनों की लंगोटी तो होती है; उनके पूर्णतः मुनि के अनुसार, मुनि के योग्य नग्नता होती नहीं है। खंड वस्त्र यानी जिससे मान लो सोते वक्त पैर ढक दिये तो यहां छाती तक आवे, पुरा क्या बोलते हैं, पूरा चेहरा या गर्दन ढक नहीं जाये और उसको ढांक दिया तो पैर खुले रह जाये, इसको खंड वस्त्र कहते हैं। लंगोटी और एक खंड वस्त्रधारी जो होते हैं वे होते हैं क्षुल्लक और ऐलक यानी केवल लंगोटी होती है उनके और कुछ नहीं होता है।

ऐसे जो जीव ग्यारहवीं प्रतिमाधारी हैं उस प्रतिमा का नाम क्या देखा था भाईसाहब अभी हमने? अच्छा आप बतायेंगे ग्यारहवीं प्रतिमा का नाम अभी मैंने बताया था? *श्रोता: उद्दिष्टत्यागप्रतिमा।* उद्दिष्टत्यागप्रतिमा; तो यह उद्दिष्टत्याग में क्या-क्या बात आती है? वह ऐसे है जो पंचम गुणस्थानवर्ती जीव हैं, उनके उद्देश्य से अगर भोजन बनाया हो, वसतिका बनायी हो, तो उसका वह सेवन नहीं करेंगे यानी उसको वे नहीं लेंगे। ख्याल में आया? जो अभी पंचम गुणस्थानवर्ती जीव हैं, मुनियोग्य तीन कषाय के चौकड़ी का अभाव भी जिनके

नहीं है, केवल दो कषाय ही उनके हैं नहीं और दो कषाय जिनके विद्यमान हैं, ऐसे जीव भी उनके उद्देश्य से भोजन बनाया हो, तो उसका ग्रहण नहीं करेंगे। ख्याल में आया? उसके पहले की प्रतिमा कौनसी होती है? जो दसवें नंबर की प्रतिमा है वह अनुमतित्यागप्रतिमा बतायी है; यानी ये अनुमतित्यागप्रतिमाधारी जो जीव होते हैं, वे तो मठ में भी रह सकते हैं या घर में भी रह सकते हैं। मान लो मेरे जैसा कोई वयस्क गृहस्थ घर में रहता है और वह दसवें प्रतिमा का धारी है, तो इनके बच्चों के बच्चों का विवाह का प्रसंग आवे और उनको पूछा जाये कि दादा-दादा, इस घर की लड़की से संबंध करना या उस घर की लड़की से करना? आपकी क्या राय है? तो चुप, बोलेंगे ही नहीं। क्यों? पापा हम यह धंधा करे या वह धंधा करें? इसमें अधिक प्रॉफिट है कि उसमें अधिक प्रॉफिट है? चुप, बोले ही नहीं क्योंकि किसी बात की अनुमति का त्याग उस प्रतिमाधारी के होता है। उसके पहले प्रतिमा कौनसी है? तो कहते हैं परिग्रहत्यागप्रतिमा।

उसके पहले क्या है? आरंभत्यागप्रतिमा; यानी किसी भी प्रकार के आरंभजनित जो कोई हिंसा होती है, उसके वे कृत, कारित, अनुमोदना से त्यागी हैं क्योंकि अपने जैनदर्शन के अनुसार क्या कहते हैं? कि कोई भी चीज़ स्वयं करना, उसको कहते हैं कृत, कारित यानी दूसरे से करवाना और अनुमोदित यानी अनुमोदना देना, ये तीनों ही ईक्वल, बराबर के पाप हैं। अरे, अपने लौकिक में भी ऐसी बात है। मान लीजिये ये हमारे नेमिचंदजी हैं, उन्होंने आपको सुपारी दी मुझे मारने की, अभी यह उदाहरण है हो! सत्य बात नहीं है, क्या? तो पकड़े गये – आप पकड़े गये तो – आपको किसने बताया यह? भाई उन्होंने बताया। तो आपको सजा होगी और वे चुपचाप छूटेंगे? तो उनको सजा होगी कि नहीं? हां? हांजी-हांजी? *श्रोता: सजा उनको कैसे होगी? काम तो मैंने किया।* यहीं तो मार खा गया न जैन, हिंदुस्तान नहीं; कि भैया तुम करो, दूसरे से करवाओ या अनुमोदना दो, तीनों ही ईक्वली जबाबदार हैं उसके लिये। अभी मैं कहता हूं, तेलगी जो है जिसने स्टॅम्प का घोटाला, क्या-क्या किया कि इन्होंने बेचा, ये पकडे गये, इनको सजा हुयी और वह छूट जायेगा? क्या यह न्याय है? यह कृत-कारित-अनुमोदना का पाप बहुत बड़ा है भैया; तीनों ईक्वल पाप हैं। यह हम नहीं जानते हैं, तो भाई वह जो मरा हुआ प्राणी था न, मैंने थोड़ी मारा था हम खाली खा रहे हैं, अलाउड है न? वहां तो नहीं कहता है।

मैंने तो शराब नहीं पी साहब, अरे! उसने मेरे को मुफ्त में दी, तो क्या करूं? नहीं चलेगा, ख्याल में आया? वैसे यहां कहते हैं कि मेरे लिये बनाया हुआ अगर कोई भोजन है और मुझे मालूम हुआ कि यह मेरे उद्देश्य से बनाया है, तो वे पांचवें गुणस्थानवर्ती क्षुल्लक और ऐलक जीव जो हैं ग्यारहवीं प्रतिमाधारी, जिनके उद्दिष्टत्यागप्रतिमा है, वे उस भोजन का ग्रहण नहीं करेंगे, क्यों, क्या तकलीफ है भाई? अरे! जो भोजन बनावें, उसके द्वारा कोई हिंसा होगी कि नहीं? आप घर में भोजन बनाते हैं, तो सोलर सिस्टिम में बनाते हैं कि नहीं? कि गॅसस्टोव्ह, कुछ भी रॉकेल वगैरह वापरते हैं; तो जो अग्नि जलाते हैं तो उसमें हिंसा होती है कि नहीं? क्यों पल्लवी, तुम्हारा क्या कहना है? हम अधिक से अधिक तो उसकी खबरदारी लेते हैं, लेकिन फिर भी हिंसा हो सकती है। जो कुछ हिंसा हो रही है उसकी अनुमोदना हुयी की नहीं उनकी? तो इसलिये ग्यारहवीं प्रतिमाधारी पांचवें गुणस्थानवर्ती जीव के भी उद्दिष्टत्याग है; उनके उद्देश्य से कोई वसतिका बनायी हो, वहां वे नहीं रहेंगे।

भाई जैनदर्शन का हमें हार्द मालूम नहीं है, ख्याल में आया? जो कितना मतलब जिसको हम कहते हैं कि अधिकतर सूक्ष्म वर्णन है उसमें कि वैसा हम जब देखते हैं, तो हम कहेंगे नहीं रे बाबा! हमें पांचवीं प्रतिमा वगैरह कुछ लेनी नहीं है, मुनि? बिलकुल नहीं साहब, अरे! धूप में नंगे पैर चलना पड़ता है, दिन में एक बार आहार लेना पड़ता है वह भी अपने उद्देश्य से बनाया है तो नहीं चलेगा, ख्याल में आया न? हमको तो डायरेक्ट केवलज्ञान चाहिये। कभी नहीं होगा, तीन काल में यह पॉसिबल नहीं है। तो वे कैसा सहन करते हैं? तूने अपनी आंखों के ऊपर जो चश्मा लगाया है, उसको निकालकर रख दे। तूने तो अपने को – 'मैं' जो भी आपका नाम हो मान लो, क्या नाम है आपका? *श्रोता: महावीर।* महावीर, नहीं साहब आपके बारे में नहीं बोल सकता, हं। चलो, आपका सरनेम तो होगा न कुछ, हां? *श्रोता: सोनटक्के।* हां, मैं सोनटक्के हूं। ऐसा माना है। लेकिन मैं जीव हूं ऐसा माना नहीं है; यह शरीररूप मैं हूं, ऐसा माना है। वहां इतनी ठंडी है, इतनी गर्मी है, इतनी बारिश है, मैं कैसे सहन करूं? मेरे लिये कोई रेनकोट नहीं है, कोई छाता नहीं है, बीमार पड़ जाऊं तो? लेकिन वे जो मुनिराज हैं, तो श्रद्धा में तो उनकी परिपक्वता है कि मैं शरीर से भिन्न हूं, राग से भिन्न हूं। मैं तो जानन-देखन स्वभावी आत्मा हूं। ऐसे उनके श्रद्धा

में तो सौ टका है और स्वरूप में रमणता करने से वह जो मान्यता है, वह तो और मजबूत हो जाती है।

चारित्र में भी मजबूतायी होती है और श्रद्धा में भी मजबूतायी चौथे गुणस्थान से थी। तो ऐसा जीव, जान जाये लेकिन ऐसा उसके उद्देश्य से बनाया हुआ आहार खायेगा नहीं। यह तो किसकी बात चल रही है साहब? पंचम गुणस्थानवर्ती की, ख्याल में आया? तो पंचम गुणस्थानवर्ती ग्यारहवीं प्रतिमाधारी जीव उद्दिष्टआहार नहीं लेगा तो उसके आगे के गुणस्थानवर्ती जो जीव हैं, वे लेंगे की नहीं? भाई, आप सोचना हो! मुझे दोष मत देना। जो जिनेन्द्र भगवान ने हमें वस्तुस्वरूप बताया है, उसके अनुसार हमें विचार करना है। इसलिये क्या कहा था, हमने यह पहले ही बताया था, तीन कषाय के चौकड़ी के अभावपूर्वक जो वीतरागता वर्त रही है, वह वीतरागता ही मुनिपना है। ख्याल में आया? बाह्य में जो आचरण चल रहा है, वह मुनिपना है नहीं। क्यों? शुभराग यह जीव का स्वभाव है न? क्यों शमाजी? वह तो विभाव है, जीव का स्वभाव है नहीं और उन शुभभावों से हम बाहर से माप निकाल रहे हैं। देखो, अभी जरा शांति से और बिलकुल सतर्क, मतलब ख्याल देकर सुनना। यहां हम यह बता रहे हैं कि सामनेवाले जीव के कितनी वीतरागता है यह हमारे ज्ञान का विषय हो ही नहीं सकता है। खास कर कि जो मिथ्यादृष्टि जीव है हमारे जैसे, उनको तो बिलकुल नहीं।

शायद हो सकता है कि सम्यग्दृष्टि, अन्य जीव सम्यग्दृष्टि है कि नहीं, इतना उनके साथ कोई कॉन्व्हर्सेशन होगा, उनके मतों की एक दूसरे से लेन-देन होगी तो समझ सकें। लेकिन ऐसा सिर्फ चेहरा देखकर यह जीव सम्यग्दृष्टि है, यह मिथ्यादृष्टि है, ऐसा कोई भी कन्फर्म नहीं कर सकता है। तो मैं यह कहता हूं अगर हमारे सामने कोई ऐसे मुनिराज आयें कि जिनके बाह्य में जो अट्ठाईस मूलगुणों का पालन हो रहा है, बिलकुल आगम के अनुसार है। तो हमें उनका भावलिंगी संत के अनुसार आदर-सत्कार नियम से करना ही चाहिये क्योंकि उनमें जो वीतरागता है, उनमें जो स्वरूप में स्थिरता है, उसका हमें कोई अंदाज़ा नहीं आयेगा। लेकिन जब हम देखते हैं कि इनके अट्ठाईस मूलगुण में ही कोई गड़बड़ी है, तो आप उनको नमस्कार नहीं करो, तब भी चलेगा। लेकिन हमारे सामने कोई मुनिराज नये आये हैं और हमें पता ही नहीं है उनके बारे में तब हम उनको अवश्य

नमस्कार करेंगे। उनके आहार आदि की व्यवस्था रखेंगे, ख्याल में आया? यानी हम, उनके बाह्य में जो आचरण चल रहे हैं उनके द्वारा, हम उनका आदर-सत्कार करें; मुनिवत् उनसे व्यवहार रखें। देखो भैया, यह बहुत खतरनाक बात है। खतरनाक इसके लिये है कि इसके लिये हमें पहले आगम का अभ्यास चाहिये।

ये अट्ठाईस मूलगुण कौन-कौनसे होते हैं, ये कितने जन जानते हैं? अट्ठाईस मूलगुणों के नाम, जो जानते हैं वे आपस में बात करते हैं, कोई बात नहीं, अच्छी बात है। स्थूलरूप से सुलभाताई आप अभी बोल सकेंगे, अट्ठाईस मूलगुण? हां पुस्तक बंद कर देना। हां बोलो... *श्रोता: पांच महाव्रत, पांच समिति, छह आवश्यक।* पांच महाव्रत, पांच समिति, छह आवश्यक, आप बोल रहे हैं? देखो, आपने बताया पांच महाव्रत, पांच समिति – दस और छह आवश्यक सोलह; *श्रोता: सात शेष गुण।* हां, कितने हो गये सोलह और सात तेईस; अभी पांच बाकी हैं। कोई बात नहीं, हां, आप बताना चाहते हैं? देखो, पांच महाव्रत, पांच समिति, पांच इन्द्रियविजय, षट् आवश्यक और सात शेष गुण। हां जी! तो ये षट् आवश्यक कौनसे होते हैं? देखो मैं आपको सता नहीं रहा हूं। हमें पहले तो ये मुनियों के जो बाह्य गुण हैं, जिनको हम अट्ठाईस मूलगुण कहते हैं, उनके नाम हमें ही मालूम नहीं हैं और हम इन्हें तपासने जा रहे हैं कि भाई ये मुनि हैं कि नहीं है? अरे! पहले आगम का अभ्यास तो कर, मुनियों के स्वरूप को तो जान, उनके स्वरूप में जो स्थिरता है उसको तो समझ; वह कुछ नहीं और गये थर्मामीटर लेकर सबके बगल में डालने को, ताव कितना है, क्या है? यह तेरी हैसियत नहीं है।

हमें मुनियों के स्वरूप को इसलिये समझना है कि आज नहीं कल, मुझे स्वयं को मुनित्व यानी मुनिपना धारण करना है और अगर मैं उनका स्वरूप नहीं जानता हूं और देखा-देखी मुनिपना लूं तो मेरी भी ऐसी दशा न हो इसलिये हमें यह जानना है। यह ज्ञान जो करना है सच्चे देव का, सच्चे गुरु का यानी मुनि का और सत् शास्त्र का, वह तो अपने लिये करना है, दुनिया को तपासने के लिये नहीं करना है। यह साचा है, यह खोटा है, यह आधा खोटा है, यह आधा साचा है, नहीं-नहीं। हमें दुनिया से कोई लेना देना है नहीं; जो समाज में चलता है वह चलने दो, उससे तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ेगा। तुम्हारा जो बिगड़ेगा, वह तुम्हारे परिणामों से बिगड़ेगा; तुम्हारा जो सुधार होगा, वह तुम्हारे परिणामों से सुधरेगा

क्योंकि मैंने आपको एक तावीज दिया था याद है? पहने हो? बोलो कौनसा? *श्रोता: एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता।* अरे, वाह-वाह-वाह। भाईसाहब कह रहे हैं हमारे नेमिचंदजी, एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है और तुम समाज के सारों को सुधारने निकले, क्यों साहब? भाई जिसका जो परिणमन होना है, वह निश्चित है।

देखो, हम पूजन में भी बोलते हैं है, 'जो होना है सो निश्चित है केवलज्ञानी ने गाया है'; केवलज्ञानी गाते नहीं हैं – यह तो कविता में ऐसा लिखा है, काव्य में। 'उसपर तो ध्यान दिया न प्रभु, विकथा में समय गंवाया है।' हम पूजन भी बोलते हैं न, तो पूजन हमें एक-एक सही तत्त्व की बातें बताता है। ऐसा वस्तु का स्वरूप है; मैं पर का परिणमन कर नहीं सकता हूं, जान तो सकता हूं कि नहीं भाई? और वह जानकर हमें पर के परिणमन में कोई सुधार नहीं करना है लेकिन मेरेमें कोई ऐसी खोट हो, तो उसको हम सुधार सकते हैं क्योंकि गलती मैंने की है और उसका सुधार मैं ही कर पाऊंगा। अन्य कोई कर नहीं पायेगा, क्यों? तावीज निकालना है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं कर सकता है, बात ख्याल में आ गयी? इसतरह हमने यह जो देशव्रतवाले जीव हैं उनके बारे में थोड़ा-बहुत देखा, उनकी ग्यारह प्रतिमाओं के नाम भी देखे और उनका स्वरूप भी देखने की कोशिश की।

अभी हम जरा गुणस्थान की अपेक्षा से सोचेंगे। मैं जानता हूं कि आपको इसलिये लिखवाया है कि स्वरूपाचरणचारित्र जो सम्यक्‌चारित्र का प्रकार है वह चौथे गुणस्थान में होता है। उस चौथे गुणस्थान में एक कषाय चौकड़ी का अभाव हुआ है और तीन कषाय चौकड़ी विद्यमान हैं। अब इसमें क्या होता है, चौथे गुणस्थान से लेकर दसवें गुणस्थान तक चारित्र गुण की दो धारायें चलती हैं। कौनसी दो धारायें? एक सरागधारा यानी रागधारा और एक वीतरागधारा। यानी देखो, जो जीव चौथे गुणस्थान में शुद्धोपयोग कर रहा है, तब उसे बंध होता होगा कि नहीं होगा? त्रिशला तुम बताओ। जोर से बोलना बेटा, यह अपना घर थोड़े ही है कि आहिस्ता से बोले। *श्रोता: बंध नहीं होगा।* और जब शुद्धोपयोग नहीं है, दुकान-धंधे में बैठा है, अशुभोपयोग करता है उस समय उसको बंध होगा? *श्रोता: बंध होगा।* शुद्धोपयोग के समय नहीं होगा? अच्छा! आपका कहना हम समझ गये, आपका कहना ऐसा है कि जब वह जीव – चौथे गुणस्थानवर्ती जीव है, वह शुद्धोपयोग में होता है

तब उसको बंध नहीं होता, लेकिन शुद्धोपयोग से निकलकर शुभोपयोग में जाये, अशुभोपयोग में जाये तो उसको बंध चालू होता है। अभी उनकी बात छोड़ो, हम और थोड़ा आगे बढ़ते हैं। जो मुनिराज हैं, उनके तो तीन कषाय के चौकड़ी के अभावपूर्वक वीतरागता वर्त रही है, तो सातवें गुणस्थान में शुद्धोपयोग में हैं और छठे गुणस्थान में शुभोपयोग में हैं। तो मेरा यह पूछना है कि सातवें गुणस्थान में उस जीव को बंध होगा कि नहीं होगा? हां, हमारे क्या नाम है भूल गया मैं, पद्माजी, बोलो-बोलो, जल्दी बोलो टाइम नहीं है अपने पास। अरे! दो में से एक को तो गोली मारना है, हां या ना बोलने का न, हां? शुद्धोपयोग में होंगे तब उनको बंध होगा कि नहीं? *श्रोता: शुद्धोपयोग में नहीं होगा।* शुद्धोपयोग में नहीं होगा, छठे गुणस्थान में आयेंगे तो होगा। ऐसा सबका कहना है या इससे कोई अलग बात कोई बताना चाहते है? हां बोलो साहब। *श्रोता: उन्हें बंध होगा।* उन्हें बंध होगा। उन्हें बंध होगा, कौनसी अवस्था में? *श्रोता: सातवें गुणस्थान में।*

देखो, अभी यहां महिला व्हर्सेस पुरुष झगड़ा चल रहा है। तो हमें किसीको तो जज बनाना चाहिये। हां? अब हम देखते हैं। मैंने पहले ही आपको बताया था, सुनना हो! यहां जब हमने बोर्ड पर लिखा था, किसी जीव को शुद्धोपयोग होता है तब अशुद्धोपयोग नहीं होता, यह बात बिलकुल स्थूल है। सुनना, वह तो पहले हमने बताया था, इसके आगे की बात मैं आपको समझाना चाहता हूं और समझाऊंगा। तो आप कहते हैं, महाराज पहले से ही क्यों नहीं समझाया? पहले हमको खोटे रास्ते ले जाते हो और बाद में यह गलत है–यह सही है, यह ऐसा बताते हो, तो यह आपका कौनसा तरीका है? ऐसा है, पहले ही समय में हम आपको डिफिकल्ट बात बता देवें, तो आज कितना आठवां प्रवचन, नौवां प्रवचन है? नौवां न! तो आप यहां बैठते ही नहीं, कब के घर भाग जाते। क्यों? मैं आपसे पूछता हूं कि आपके घर में, क्या नाम मयूरभाई जब हमारी त्रिशला छोटी थी ऐसी दो-तीन महीने की, हां, तब उसको आप पुरणपोली खिलाते थे कि नहीं? हां, नहीं खिलाते थे, लेकिन अभी? समझो दस-बारह साल की हो गयी है, तो उसको पुरणपोली खिलायेंगे कि नहीं? कुल्फी-मलाई खिलायेंगे कि नहीं? तो जैसा छोटा बालक होता है, उसको तो सिरियल (बेबी फूड) दिया जाता है, थोड़ा-थोड़ा दूध दिया जाता है और दूध नहीं पचता, तो पानी डालकर दूध पिलाते हैं बच्चों को; क्यों? हज़म करने की ताकत नहीं न भाई, वैसे शुरू में आपको जितना हज़म होता है, वही बतायेंगे। अब यहां क्या बता रहे हैं, सुनना।

चौथे गुणस्थान से लेकर आगे दसवें गुणस्थान तक दो धारायें चलती हैं, एक वीतरागधारा और एक रागधारा जिसको सरागधारा हमने कहा था। सुनना, चौथे गुणस्थान में जब जीव शुद्धोपयोग में होगा तभी उसको बंध होगा कि नहीं होगा? हमारी, ऐसी मान्यता है कि शुद्धोपयोग में होता है सब उसको बंध नहीं होता, तो वह बालक की जैसे हज़म करने की शक्ति क्या बोलते हैं? डायजेस्टिव्ह पॉवर – वैसी उसकी है। अभी वह आगम का अभ्यासी नहीं हुआ है, इसलिये उसकी प्राथमिक स्टेज है यानी प्रायमरी स्टेज है। तो क्या कहते हैं? जिस समय वह शुद्धोपयोग में है, उस समय भी अबुद्धिपूर्वक राग चल रहा है। यह अबुद्धिपूर्वक राग और बुद्धिपूर्वक राग यानी क्या? इसको हम पहले समझते हैं। तो हमने आपको यह उदाहरण दिया था, आप घाटकोपर से सायन आ रहे थे – ट्रेन से, तब प्लॅटफॉर्म पर किसी महिला से टक्कर हो गयी तो, शुं थयुं भाई? सीधुं चलातुं नथी बराबर? माफ करजो बेन, में जाणी जोईने कर्युं नथी। ऐसा बोलते हैं न आप लोग? क्या बोलते हैं? नहीं, मैंने जान-बुझकर धक्का दिया ऐसा कहेंगे क्या? हां? जूते पड़ेंगे, ऐसा मत बोलना। तो यह जाणी जोईने यानी जान-बूझकर, यह जो शब्द है, ऐसा बुद्धिपूर्वक का अर्थ यहां नहीं है।

बुद्धिपूर्वक राग यानी क्या? जो राग हो रहा है वह राग स्वयं के ज्ञान में भी आ रहा है और हो सकता है कि पर के भी ज्ञान में आ सकता है। यानी अब यहां बच्चे उधम मचाते थे, तो उनकी मातायें उनको चुप, चुप, चुप! तो उनके भी राग हो रहा था और अन्य को भी आस-पासवाले लोगों को भी डिस्टर्बन्स ज्ञान में आता था। तो वे भी जानते थे कि इसका राग चल रहा है, ख्याल में आया? तो वह राग कैसा है? बुद्धिपूर्वक राग है और अबुद्धिपूर्वक राग यानी जो राग कर रहा है, उसके भी ज्ञान में नहीं आ रहा है और अन्य किसीके ज्ञान में भी नहीं आ रहा है, लेकिन केवली भगवान जानते हैं क्योंकि केवली भगवान के ज्ञान से कौनसी बात जाने बिना रह सकती है, ज्ञान में नहीं आ सकती है? केवली भगवान तो सारे द्रव्यों के सारे गुणों की तीन काल की पर्यायों को जानते हैं, तो उनके ज्ञान से कोई परे हो जाये ऐसी कोई बात नहीं रहेगी। तो जो राग कर रहा हो, उसे भी पता नहीं है कि मेरे राग-द्वेष के परिणाम हो रहे हैं, ऐसे परिणामों को अबुद्धिपूर्वक राग कहते हैं और जो चौथे गुणस्थानवर्ती जीव है, वह शुद्धोपयोग में होगा तब भी उसके अबुद्धिपूर्वक राग चल रहा है और जो अबुद्धिपूर्वक राग चल रहा है उसका उसे बंध होगा, होगा और होगा। अगर ऐसा हम नहीं मानेंगे तो उस समय वह, बिलकुल पूर्ण वीतराग हो जायेगा। तो चौथे गुणस्थान में

ही वीतरागता आ जाये तो, चौथे से लेकर बारहवें गुणस्थान के बीच के गुणस्थान ही उड़ जायेंगे क्योंकि चौथे में भी वीतरागता है और बारहवें में भी वीतरागता है। त्रिशलाबेन, समझाय छे, हां?

देखो, दूसरी तरफ से देखते हैं – अभी छठे गुणस्थान में कोई जीव आया है तो उसके शुद्ध परिणति रहेगी कि नहीं रहेगी? चौथे गुणस्थान की बात ले लो, जब शुद्धोपयोग से हटकर वही जीव खाना खाने बैठा है, पूजन करने बैठा है, धंधा-पानी कर रहा है, नौकरी कर रहा है, तब उसका सम्यक्त्व टिका रहेगा कि नहीं? सम्यक्त्व नहीं टिका रहेगा तो मिथ्यात्व में जायेगा क्या? तो जब शुद्धोपयोग में होगा तो सम्यक्त्व हो गया, शुद्धोपयोग से बाहर आया तो मिथ्यात्व में जायेगा, ऐसा नहीं होता है। तो वहां वीतरागधारा चालू है, ख्याल में आया? सात तत्त्वों की भाषा में बोलना हो, तो चौथे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा ये चारों ही चालू हैं, ख्याल में आया? क्या बताया? कि वहां चौथे गुणस्थान में शुद्धोपयोग में होते हुये भी, उसको बंध हो रहा है, अबुद्धिपूर्वक राग है यानी आस्रव भी हो रहा है उसी समय। अब अगर वह जीव शुद्धोपयोग से हटकर, अन्य उपयोग में जायेगा, शुभोपयोग में या अशुभोपयोग में तब भी उसकी वीतरागधारा चालू है और उसका सम्यक्त्व टिका हुआ है। यह बात समझ में आती है कि बहुत हेवी हो रही है साहब, मयंकभाई, आसान है न? वसंतभाई, समझाय छे, हां? किसीको नहीं समझता है तो अभी आप पूछ सकते हो क्योंकि यह कभी पूर्व में हमने नहीं सुनी थी ऐसी बात है।

देखो, छठे गुणस्थान में जब जीव ये अट्ठाईस मूलगुण आदि पालन कर रहा है, तो उनके वीतरागता है कि चली गयी? हा, प्रतिभाताई आप क्या बताते हैं? *श्रोता: है।* है न? अगर नहीं मानेंगे, वीतरागता नहीं मानेंगे तो वह तो जीव मुनि योग्य रहा ही नहीं क्योंकि जो वीतरागता है; कैसी वीतरागता? तीन कषाय की चौकड़ी के अभावपूर्वक जो वीतरागता है, वह छठे गुणस्थान में जब शुभोपयोग में है तब भी है और सातवें गुणस्थान में जब शुद्धोपयोग में है तब भी है। तो छठे गुणस्थान में वीतरागता है, तो सातवें गुणस्थान में सरागता भी है और वह बंध का कारण है। बात ख्याल में आयी? *श्रोता: तो क्या चौथे गुणस्थान से लेकर दसवें गुणस्थान के अंत तक आस्रव, बंध, संवर और निर्जरा ये चारों ही चालू हैं?* चालू है, बहुत अच्छा! हां, आपका कहना है कि चौथे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान

के अंत तक, आस्रव, बंध, संवर और निर्जरा ये चारों ही चालू हैं। दसवां गुणस्थान लांघकर अभी हम ग्यारहवें को इग्नोर करते हैं, बारहवें में जीव आयेगा तो वहां आस्रव-बंध रुक गया है। किसका? कषायों के द्वारा जो हो रहा था। वहां योग के कारण जो हो रहा है, वह है। लेकिन उसका, वह बंध कैसा है? जो जाने के लिये आता है यानी एक समय मात्र टिका और निकल गया; जैसे है वैसा, शास्त्र में तो ऐसा कथन है कि सूखी दीवार पर हम रेत डालते हैं तो कितने काल टिकती है? उसपर कितना समय तक टिकेगी? झट से नीचे गिर जायेगी क्योंकि उसमें चिकनाहट नहीं है। ख्याल में आया? वैसे यहां स्थिति और अनुभाग नहीं बंधते।

यह पहले आपको एक नियम बताता हूं, हमेशा कर्म जब-जब बंधता है इन जनरल, तो उसमें चार प्रकार के बंध होते हैं। एक प्रकृतिबंध, एक प्रदेशबंध, एक स्थितिबंध और एक अनुभागबंध। तो ये चार प्रकार के बंध जो हैं, उनमें जो प्रदेशबंध है और प्रकृतिबंध है वह योग के निमित्त से होता है और जो स्थितिबंध है और अनुभागबंध है वह कषायों के कारण से होता है। स्थितिबंध यानी क्या अभी हमने ऐसे तीव्र कषाय किये कि हमको मिथ्यात्व का ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध हुआ। अनुभाग यानी उसके फल देने की जो शक्ति है वह भी बहुत तीव्र हो गयी, ऐसे जो कुछ है; बहुत शॉर्ट में बता रहा हूं आपको। प्रकृतिबंध यानी ज्ञानावरण बंधेगा, मोहनीय बंधेगा ये जो सारी प्रकृतियां हैं उनका बंध और प्रदेशबंध यानी नंबर ऑफ़ परमाणु, कितने परमाणु एक साथ हमारे बंधते हैं, उसको प्रदेशबंध कहेंगे। तो ये प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध तो योग के कारण से होते हैं। बारहवें गुणस्थान में कषाय नहीं है, वहां सिर्फ योग है; तो योग के कारण तो प्रकृति और प्रदेशबंध होगा; स्थितिबंध यानी उसका वहां रुकना नहीं है और उनमें फल देने की शक्ति भी नहीं है। वह बंधे और नहीं बंधे दोनों एक समान है। ख्याल में आया? तो यहां क्या बताया जा रहा है? देखो, यह जो चौथे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक, कषाय की मौजूदगी है, इसलिये वहां चारों प्रकार के बंध हो रहे हैं लेकिन उसके बाद सिर्फ प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध हैं। योग है न अभी, तो कर्म तो बंधेंगे, लेकिन उनकी स्थिति कुछ नहीं होगी, उनके अनुभाग कुछ नहीं होगा। ऐसी बात जब हम देखते हैं, तो हमें ख्याल में आता है कि चौथे गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक जीव के सरागधारा और वीतरागधारा दोनों साथ चल रहे हैं।

वहां जीव के पूर्व में बंधे हुये जो कोई कर्म हैं, वे भी झड़ रहे हैं और नये कर्म भी बंध रहे हैं। सरागधारा के कारण से नया कर्म भी बंध रहा है। कभी? शुद्धोपयोग में भी। अगर ऐसा हम नहीं मानते हैं तो जितना टाइम शुद्धोपयोग में है उतने टाइम में वह अबंध दशा हो जायेगी, ख्याल में आया? और ऐसा कभी नहीं होता है। देखो, एक चारित्र गुण को जब हम देखने जाते हैं तो चारित्र गुण में एक ऐसी विशेष व्यवस्था है कि मोक्षमार्ग का सारा नक्शा हमारे सामने आ जाता है। अभी इसके लिये थोड़ा बहुत आपको गुणस्थान का अभ्यास भी होवे तो बहुत बढ़िया है। लेकिन इतनी बात तो समझते हैं। उसमें क्या बड़ी बात है? अब आगे बढ़ेंगे। क्या कोई प्रश्न है किसीके? हां? अभी यह जो है, यथाख्यातचारित्र, यानी उस समय क्या होता है? चार ही कषाय चौकड़ी का वहां अभाव है। कोई भी चौकड़ी वहां विद्यमान नहीं हैं। अभी एक बात बीच में ध्यान रखना, यह आठवें और नौवें गुणस्थान के बीच में यह जो नौ नोकषाय हैं वे सारे नष्ट हो जाते हैं, रहते नहीं हैं। तो उनकी बात यहां ली नहीं है। केवल क्रोध, मान, माया, लोभरूप जो चार कषाय देखे हैं, उनकी बात हमने देखी है क्योंकि यह तो करणानुयोग का विषय है न, इसीलिये जो स्थूल बात है वह आपको मैं बता रहा हूं।

आपके मन में शायद ऐसा प्रश्न उठे कि भाई यह नौ नोकषाय का क्या हो गया? वे तो दसवें के पहले ही नववें गुणस्थान के पहले भाग तक सब खत्म हो गये। दसवें तक सूक्ष्म लोभ बाकी है और वह सूक्ष्म लोभ जब तक है तब तक वहां चारों ही प्रकार का बंध हो रहा है। ये चार प्रकार कौनसे बताये थे मैंने, कौन बतायेगा? बंध के चार प्रकार? हां कौन बता रहे हैं साहब? हां बोलिये, बोलिये। *श्रोता: प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध।* प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, आप मेरे साथ बोलेंगे तो अच्छा है। हां, प्रकृतिबंध, फिर से, प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध और अनुभागबंध। ये चारों ही जो बंध हैं वे ॲट ए टाइम होते हैं। पहला प्रकृतिबंध, बाद में प्रदेशबंध ऐसा नहीं, एक समय में यह सारा कुछ होता है। जब यथाख्यातचारित्र की प्राप्ति होती है तो गुणस्थान की अपेक्षा से देखा जाये, तो वहां पूर्ण वीतरागता है और पूर्ण वीतरागता कौनसे-कौनसे गुणस्थान में होगी? हां, कौन बता रहा है? हां साहब? *श्रोता: ग्यारहवां और बारहवां।* ग्यारह, बारह? हां, हां... *श्रोता: पूर्ण वीतरागता ग्यारह और बारह में रहेगी।* तो आपका कहना है कि पूर्ण वीतरागता ग्यारह और बारह में रहेगी बराबर न? ऐसा ही आपका कहना है न? तो हमारी रश्मिबेन क्या

बोलती हैं? *श्रोता: ग्यारह, बारह।* ग्यारह, बारह? अच्छा-अच्छा! तेरहवें में क्या होता होगा, सरागता आती है? हां, तो हम पूछ रहे हैं वीतरागता कहां तक होती है? तो आप तो बोलते हैं, ग्यारह, बारह। सुनना-सुनना, देखो, ग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें और चौदहवें, चारों ही गुणस्थानों में पूर्ण वीतरागता है। सिद्ध अवस्था में तो है ही है। हां, थोड़ी शांति से हम सोचें न, कोई बात नहीं-कोई बात नहीं, देखो भाई, कई वांधो नथी बेन! तो देखो, अभी यह चारित्र गुण की अपेक्षा से हम सोचते हैं, तो हमें यह पता लगता है कि भाई, हमारी अभी क्या पोझिशन है?

हम पहले किसको चारित्र मानते थे और चारित्र क्या है? देखो, पहले में पहले यह चारित्र द्रव्य है, गुण है या पर्याय है, यह हमें नक्की करना है। हां, भाईसाहब आप बोलना चारित्र क्या है? आप केसरी रंग का जो शर्ट पहन कर आये, नाम तो भूल गया भैया। द्रव्य है, गुण है, या पर्याय है चारित्र? हां, बोलो-बोलो-बोलो, अच्छा आप येलो शर्टवाले बोल रहे हैं? यह क्या होता है? दोपहर के टाइम में लाइट वहां से रिफ्लेक्ट होती है न, यहां चेहरे किसीके दिखते नहीं हैं। *श्रोता: गुण है।* तो गुण है, हैं न? तो गुण है तो कौनसे द्रव्य का है? *श्रोता: जीवद्रव्य का है।* जीवद्रव्य का है तो वह जीवद्रव्य में रहेगा या जीवद्रव्य के बाहर रहेगा? क्योंकि हमने गुण की परिभाषा यह सीखी थी कि जो द्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्था में रहे उसको गुण कहते हैं। तो चारित्र जब हम देखते हैं तो चारित्र तो जीव में होगा या शरीर की क्रिया में होगा? यह हमें पहले नक्की करना है।

यह मेरी भाषा में कहो तो मॉरल ऑफ़ द स्टोरी यह है कि चारित्र यह गुण जीव का है और चारित्र जीव में होगा, जीव के साथ रहनेवाले शरीर में नहीं होगा और जीव के साथ में रहनेवाले जो राग, द्वेष, मोह के परिणाम हैं, चारित्र गुण की विभावपर्याय है उसमें चारित्र नहीं है, ख्याल में आया? इन सब बातों से हमें यह पता लगना चाहिये कि चारित्र मेरा गुण है और वह मेरेमें पनप रहा है यानी उसकी जो परिणति हो रही है, वह मेरेमें हो रही है, अन्यत्र नहीं हो रही है, ख्याल में आया? हां, अब देखते हैं – पहला, दूसरा और तीसरा गुणस्थान है, उसमें कौनसा चारित्र रहेगा? हां? अर्पलजी के पीछे बैठे हैं न भाईसाहब, हां-हां? स्वरूपाचरणचारित्र रहेगा, देशचारित्र रहेगा कौनसा चारित्र रहेगा? *श्रोता: तीनों रहेंगे।* तीनों रहेंगे? कौन-कौनसे तीन? हां साहब? अरे! चुप बैठो। हां, बोलो-बोलो, हां, अच्छा,

बहुत अच्छा! आप दोपहर, इसकी पहली क्लास में बैठे थे? अभी आये? हां, पहले में बैठे थे? तो हमने बताया था, देखो, यहां पर लिखा भी है भाईसाहब! यह मिथ्याचारित्र जो है, इधर नहीं लिखा है। चलो-चलो-चलो, हां मिथ्याचारित्र है वहां, क्या है? पूर्ण सरागता है। पूर्ण सरागता यानी क्या? वहां वीतरागता रंचमात्र भी नहीं है। किसमें? पहले गुणस्थान में, दूसरे गुणस्थान में और तीसरे गुणस्थान में और चौथे से वीतरागता और सरागता ऐसी चारित्र की दो धारायें हो जाती हैं, ख्याल में आया?

तो पहले गुणस्थान में मिथ्याचारित्र है और हम तो, हमने जरा कोई व्रत लिये, कोई ऐसा आचरण किया तो हम अपने को मानते हैं हम चारित्रवान हो गये। यहां हमें अपने को संभालना है, हो भाई! अन्य की बात यहां करनी ही नहीं है। हां, अब इसके आगे अब दो मिनट बाकी हैं, किसीके कोई प्रश्न हो तो फटाफट पूछना, मैं फटाफट उत्तर दूंगा। हां, कोई प्रश्न नहीं है? क्या है? हां, बोलो-बोलो हां।

श्रोता: प्रतिमा क्या होती है?

हां, प्रतिमा यानी क्या है? वे भी पांचवें गुणस्थान की स्टेजेस हैं। जैसे-जैसे इस जीव की वीतरागता बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे जीव के ये जो उच्च प्रकार के शुभभाव होते हैं, जैसे पहले क्या है? दर्शनप्रतिमा है तो दर्शनप्रतिमा का हम लोग क्या अर्थ करते हैं? कि रोज़ उठकर भगवान के दर्शन करें, उसने दर्शनप्रतिमा ली ऐसा नहीं है। दर्शनप्रतिमा इटसेल्फ उस जीव को सम्यक्त्व होना चाहिये; सम्यग्दर्शन निरतिचार होना चाहिये। फिर दूसरी है व्रतप्रतिमा; वह व्रतों को अंगीकार करे – अणुव्रतों को अंगीकार करे। फिर सामायिकप्रतिमा, यानी ये स्टेजेस् हैं शुभ और शुद्ध परिणामों के तो उनका नाम प्रतिमा दिया है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

४०. चार अभाव – प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव

अभी हमने चारित्र गुण के बारे में देखने की कोशिश की, इसमें और भी बहुत कुछ कहने लायक है लेकिन आप लोगों को देखकर ऐसा लग रहा है कि आप ऊब गये हैं। हैं न? कोई भी 'हां' भी नहीं बोलता है और 'ना' भी नहीं बोलता है, लेकिन आपके चेहरे तो जरूर उत्तर दे रहे हैं। तो इसलिये अभी कोई एकदम लाइट लेकिन जो महत्वपूर्ण ऐसा विषय है, बहुत हलका-फुलका है, उसको लेने की कोशिश करेंगे। जाते-जाते इतनी बात आप ध्यान में रखना कि जिस गुणस्थान में जितने कषाय बाकी हैं, यानी जितनी कषाय चौकड़ी बाकी हैं, उसके अनुसार उस जीव के बंध होगा; यानी चौथे गुणस्थान में अनंतानुबंधी कर्म नहीं बंधेंगे। पांचवें गुणस्थान में अनंतानुबंधी और अप्रत्याख्यानावरण कर्म नहीं बंधेंगे। इसतरह सब में लेना।

अभी हम आज इस वक्त अभाव की चर्चा करेंगे, जो अभाव होता है उसकी चर्चा करेंगे। तो आप कहेंगे जो अभाव है, उसकी चर्चा क्या करना है? अभाव का अर्थ तो 'नहीं होना है'; तो जो है नहीं, उसकी क्या चर्चा करनी? लेकिन मैंने यह बताया कि जो अभाव होता है, जो 'है' उसकी हम चर्चा करने जा रहे हैं, ख्याल में आया? तो अभाव का अर्थ होता है कि 'नहीं होना' यानी जिसको हम आगम की भाषा में कहेंगे नास्ति। तो यह जो अभाव है, उसका शास्त्र में चार प्रकार से कथन-वर्णन आता है।

इसमें से कुछ अभाव जो हैं, वे पर्याय में ॲप्लिकेबल होते हैं और बाकी के जो हैं वे द्रव्य में ॲप्लिकेबल होते हैं; देखेंगे अभी हम। तो शास्त्र में चार प्रकार से इनका वर्णन किया गया है, तो आपके सामने जो ये बोर्ड रखे हैं, उन बोर्ड पर वे नाम लिख दिये गये हैं। तो मैं उन नामों को पढ़ूंगा और आपको वह रिपीट करना है। क्योंकि क्या है, ये सारी नयी बातें हैं न? हमारे लिये तो फ्रेंच लँग्वेज है, कभी हमने ये सुने ही नहीं, सुने ही नहीं तो समझे ही नहीं और समझे नहीं तो उसका अर्थ भी भासित नहीं होगा। तो अभी मैं बोलूंगा तो आप कृपया रिपीट करेंगे। तो जो पहला अभाव है उसका नाम है प्रागभाव। *सभी श्रोता: प्रागभाव।* दूसरा है प्रध्वंसाभाव। *सभी श्रोता: प्रध्वंसाभाव।* अन्योन्याभाव। *सभी श्रोता: अन्योन्याभाव।* और अत्यंताभाव। *सभी श्रोता: अत्यंताभाव।*

देखिये एक बात आपके ख्याल में आयी होगी कि आपको लगता होगा कि यह तो भाव की बात चल रही है और आप तो अभाव की बात करनेवाले थे। ख्याल में आया न? यहां लिखा भी वैसा ही है, प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव और अत्यंताभाव। लेकिन यह शब्द कैसे तैयार हो गया? तो प्राक्, क् आधा, गुजराती में जिसको बोलते हैं, क ने खोडो। बराबर है न? क् हलंत, तो प्राक् प्लस अभाव – तो यह क् और अ साथ में आते हैं, तो उसका ग होता है यह व्याकरण का नियम है। तो क्या कहा? प्राक् यानी पूर्व; आप में, गुजराती में तो बहुत होते हैं न प्राची, पूर्वा ऐसे कुछ नाम होते हैं न? तो प्राक् यानी पूर्व में जो हो; और उसका अभाव; क्या नाम है उसका? प्राक्-अभाव यानी क्या कहेंगे? प्रागभाव; लेकिन है क्या वह? प्राक् प्लस अभाव, वह प्रागभाव। तो दूसरा जो है प्रध्वंस अधिक अभाव; वह क्या हो गया? प्रध्वंसाभाव; स और अ मिलकर 'सा' हुआ; तो यहां लिखा है प्रध्वंसाभाव। तीसरा क्या है? अन्योन्य अभाव; वह अन्योन्याभाव और जो चौथा है अत्यंत अभाव वह – अत्यंताभाव। इसतरह से हमने ये चार प्रकार के अभावों के नाम देखे हैं। चार प्रकार के नाम जो हमने देखे, वह कौन रिपीट कर पायेगा? त्रिशला तुम बोलोगी? *श्रोता: प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव और अत्यंताभाव।* बहुत अच्छा! आपने बहुत अच्छा कहा कि प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव और अत्यंताभाव।

तो दूसरे नंबर के अभाव का नाम क्या है भाईसाहब? नेमिचंद के पीछे बैठे हैं। *श्रोता: प्रध्वंसाभाव।* देखकर बोला कि बिना देख कर बोला? कोई बात नहीं। मैंने इसलिये कहा कि यह नाम हमारे लिये बिलकुल नये हैं। जैसे हम यहां से मद्रास में चले जायें और वहां की भाषा सुनने पर क्या बोल रहे हैं कुछ पता ही नहीं लगे वैसे ही यहां शास्त्र में शब्द आयेंगे कि जो हमने पहले कभी सुने न हो शायद, इसलिये उसको समझने में हमको दिक्कत होगी। तो देखो यह प्रागभाव क्या होता है, इसको हम समझने की कोशिश करते हैं। तो यहां क्या कहते हैं यह बात पहले समझ लेना। तो यह प्रागभाव है वह द्रव्य की पर्यायों में लागू होता है। क्या कहा? प्रागभाव जो है वह द्रव्य की पर्यायों में लागू होता है; तो पर्याय जब-जब होती है, तब कार्य होता है ऐसा कहने में आता है। पर्याय की परिभाषा किसीको याद है? *श्रोता: गुणों के विशेष कार्य को पर्याय कहते हैं।* गुणों के विशेष कार्य को पर्याय कहते हैं।

यह गत वर्ष हमने सीखा था और अभी कितनी बार सीखा भी होगा कि यह कार्य कहो या पर्याय कहो, दोनों का अर्थ एक ही है। तो इस विश्‍व में हर समय कितने कार्य होते होंगे ? हां, बोलो प्रफुल्लभाई ? *श्रोता: अनंत होते हैं।* कैसे ? *श्रोता: हर एक का कार्य...,* हर एक का कार्य नहीं बोलना है, आपको ऐसा बोलना है... आप क्या कहना चाहते हैं मैं समझ गया। इस विश्‍व में द्रव्य अनंत हैं, कैसे अनंत हैं, जीवद्रव्य अनंत हैं उनसे भी पुद्‌गलद्रव्य अनंतानंत हैं, तो थोड़ा अभी हम यह अनंतानंत क्या होता है उसको समझने की कोशिश करेंगे क्योंकि हमें विश्‍व में कितने कार्य होते हैं, उसको भी समझना है न भाई ?

तो देखो, हमने दो अंक लिया-दो आंकड़ा लिया। तो दो का स्क्वेअर यानी मराठी और हिंदी में, दो का वर्ग कितना होता है ? हां जी ? *श्रोता: चार।* चार पक्का ? चार का वर्ग कितना है ? सोलह। सोलह का वर्ग कितना है ? हां जी ? *श्रोता: दो सौ छप्पन।* दो सौ छप्पन। *अन्य श्रोता: चौंसठ।* सोलह इन टु सोलह, सोलह इन टु फोर नहीं। कितना हुआ ? दो का वर्ग चार, चार का वर्ग सोलह, सोलह का वर्ग दो सौ छप्पन; दो सौ छप्पन का वर्ग ? हां, यहां क्या बोलती है यह बहन बोलनेवाली है, लेकिन मैंने चुप किया उसको। आप बतायेंगे ? ६५५३६। इसको शास्त्र में पणट्ठी कहते हैं, पणट्ठी। प, ण, ट्, ठी – पणट्ठी। यह पणट्ठी ६५५३६ तो पांच डिजिटवाली संख्या हो गयी, उसका जो वर्ग है, वह संख्या ४२ से शुरुआत होती है और वह १० अंक प्रमाण है उसको बादाल कहते हैं। यह बादाल, जो दस अंक प्रमाण संख्या है उसका जो वर्ग है उसको इकट्ठी कहते हैं; वह १८ से चालू होती है और वह २० अंक प्रमाण है।

तो आप बोलेंगे, लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका की क्लास में कहां आप हमें गणित की क्लास में बैठा रहे हैं ? नेमिचंदजी, ऐसा ही लगा कि नहीं आपको, सच बोलना। हमें क्या देखना था ? जो जीवद्रव्य है वह अनंत हैं, तो पुद्‌गलद्रव्य उससे अनंतानंत हैं, तो वह अनंतानंत की मॅग्निट्यूड – विशालता क्या है यह हमें देखना था। तो यहां जो हमने दो अंक रखा है तो इसके पांच बार हम वर्ग करते हैं, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, तो हमारे कॅल्क्युलेटर्स भी फेल हो जाते हैं। बड़े-बड़े कॅल्क्युलेटर होंगे तो भी।

तो अभी हमें क्या देखना है, यह जो दो संख्या ली है उसकी जगह विश्‍व के जीव जो

हैं, वह कितने देखें थे हमने? जीवों की संख्या कितनी देखी थी? *श्रोता: अनंत।* अनंत। तो यहां अनंत को रखना और अनंत का जो वर्ग होगा, उसका जो वर्ग होगा, यानी जो संख्या आयेगी उसका वर्ग, जो संख्या आयेगी उसका वर्ग। ऐसे कितनी बार वर्ग करना? अनंतबार और जो संख्या आयेगी उतने अनंत पुद्‌गलद्रव्य हैं! ख्याल में आया?

अब प्रत्येक द्रव्य में हमने कितने गुण देखे? अनंत देखे। तो जीवद्रव्य अनंत, पुद्‌गल को हम अनंतानंत कह देते हैं, तो छुट्टी हो गयी कि चलो, अनंत मल्टिप्लाइड बाय अनंत। अरे! पर अनंत मल्टिप्लाइड बाय अनंत को अनंत बार एक दूसरे से मल्टिप्लाय करो, तब इस विश्व में पुद्‌गलद्रव्य की संख्या आती है। यहां पर हम रुकते हैं क्योंकि आगे बहुत है। तो मुझे यह बताना था तो जो अनंत पुद्‌गलद्रव्य हैं, तो प्रत्येक पुद्‌गलद्रव्य में अनंत गुण हैं। तो अनंतानंत-अनंतानंत जो पुद्‌गलद्रव्य हैं, तो उनके प्रत्येक के अनंत गुण तो कितने हुये? और उसकी हर समय में एक-एक पर्याय जो हो रही है तो नया-नया कार्य हो रहा है। हां? अब यहां क्या कहते हैं, पर्याय यानी कार्य यहां तक तो हो गया। पर्याय कहो या कार्य कहो, अर्थ एक ही है। तो ऐसे कितने कार्य होते हैं? तो कहते हैं अनंत। अगर मुझे आपसे पूछना है, यह विषय नहीं है अभी अपना, लेकिन यह याद आ गया और आप याद रखना मुझे याद दिलाना, कि निमित्त से ही कार्य होता होगा तो इतने अनंत कार्य एक-एक समय में हो रहे हैं! एक-एक समय में! एक समय कितना छोटा है, उसका भी हमने स्वरूप देखा है। एक सेकंड में हजारों कोड़ाकोड़ी आवली और एक आवली में जघन्य युक्तासंख्यात यानी युक्त असंख्यात इतने समय! तो एक समय कितना छोटा और एक समय में आप निमित्त ढूंढ़ने को जाओ। तब तक तो कितने असंख्यात समय निकल जायेंगे।

कार्य आपको करना है न निमित्त से? खाना खाकर भूख मिटानी है न। अपनी क्या बात हो रही है यहां पर? मूल बात को भूलना नहीं, मैं बीच-बीच में यहां-वहां दौडूंगा, क्योंकि अपने जो भ्रम चल रहे हैं न, उसको हटाने की हम कोशिश करेंगे। तो यहां कह रहे हैं प्रत्येक पर्याय यानी कार्य। अभी यह आपके पर्चे में इस विषय के प्रश्नोत्तर है क्या देखते हैं। हां, देखो पेज नंबर है २२, उसमें ११७ नंबर का प्रश्न है। वहां कहते हैं कि **एक पदार्थ में दूसरे पदार्थ के न होने को अभाव कहते हैं।** यहां पदार्थ का अर्थ द्रव्य लेना। वह द्रव्य कैसा है? गुण और पर्याय सहित है। तो यहां कह रहे हैं कि इस अभाव के कितने

भेद हैं? तो ये चार भेद दिये गये हैं। कौन-कौनसे हैं? प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव और अत्यंताभाव।

तो प्रागभाव किसे कहते हैं? यह प्रश्न अपना चल रहा है। तो यहां दिया है, **एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का उसी द्रव्य की पूर्व पर्याय में अभाव सो प्रागभाव है।** क्या कहा? एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय, तो वर्तमान पर्याय में क्या हो रहा है? पर्याय में क्या होता है अभी हमने देखा। *श्रोता: परिणमन।* परिणमन; कार्य हो रहा है, बराबर है न? तो वर्तमान में जो कार्य हो रहा है, उस कार्य का उसी द्रव्य की भूतकाल की पर्याय में जो अभाव, उसको प्रागभाव कहेंगे। देखो-देखो, यहां यह समझाना चाहते हैं कि यह कौनसे द्रव्य की बात चल रही है? प्रतिभाताई आप बतायेंगे? जीवद्रव्य की है या धर्मद्रव्य की? हां जी? *श्रोता: जीवद्रव्य की।* जीवद्रव्य की। आप क्या कहती हैं त्रिशला? जोर से बोलना बेटा, खाना नहीं खाया? मयूरभाई उसको जरा चाय-वाय पिलाकर लाना दोपहर में। *श्रोता: सभी द्रव्यों की।* हां सभी द्रव्यों की। देखो यहां परिभाषा में क्या दिया है? देखना हो! आपके पास यह पर्चा है क्या? अभय उनको एक पर्चा दिला दे। *श्रोता: है।* है? सामने रखना साहब। जिनवाणी हाथ में रखने में कोई अपराध नहीं है, हो, 'नहीं रखना' अपराध है। यह परंपरा तो गुरुदेवश्री ने हमको दी है कि जब हम स्वाध्याय करते हैं, तो हर व्यक्ति के सामने शास्त्र या जो कुछ विषय चल रहा है, वह अपने हाथ में होना चाहिये और हाथ में दिया, तो उससे हवा नहीं लेना हो।

हां, तो यहां क्या कह रहे हैं? देखो, एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का..., देखो, हम क्या कह रहे हैं कि यहां वर्तमान में कुछ न कुछ कार्य हो रहा है, उस कार्य का भूतकाल की पर्याय में अभाव उसको कहा प्रागभाव। देखो, इसको हम उदाहरण के द्वारा समझने की कोशिश करते हैं। आज कौनसा वार है? *श्रोता: मंगलवार है। अन्य श्रोता: रविवार है।* अच्छा हां? रविवार है? ठीक है। जो भी है, हमको क्या है हम मंगलवार समझते हैं। हां, तो आज मंगलवार है, यह तो उदाहरण है, हो। यह मंगलवार का, सोमवार में अभाव, उसको क्या कहेंगे? *श्रोता: प्रागभाव।* प्रागभाव, ख्याल में आया? उसीतरह हम देखते हैं, अभी हम इसको आपकी पर्याय पर घटित करेंगे, कौन है यहां पर? अभी मेरे पहचान के तो कोई है नहीं, चलो आप, मैं नाम नहीं जानता हूं लेकिन क्यों हमने आपको लिया? हम यह कह रहे

हैं कि तुम्हारी वर्तमान यौवन अवस्था का, तुम्हारी बाल्य अवस्था में जो अभाव है उसको प्रागभाव कहेंगे। किसी भी जीव के यानी अभी मान लो आपकी जो उम्र है; मतलब अभी हम समझते हैं, आपका अभी बुढ़ापा चल रहा है; नहीं चल रहा है, पर मैं उदाहरण के लिये बोल रहा हूं; तो आपका जो बुढ़ापा है उस पर्याय का, आपके जवानी की पर्याय में अभाव है, ख्याल में आया? उसको क्या कहेंगे? प्रागभाव। यह तो स्थूल उदाहरण दे रहे हैं, इसीतरह हम आगे देखते हैं।

यहां तो देखो भाई! द्रव्य के अभाव की बात चल रही है न? हां? क्या कहते हैं? हां, आप बोलती है? यहां द्रव्य के अभाव की बात चल रही है क्या? नहीं, वर्तमान पर्याय के अभाव की बात चल रही है। यह बिलकुल ध्यान रखना क्योंकि आगे हम प्रश्न पूछेंगे तो आप गड़बड़ा नहीं जाना। तो यहां बता रहे हैं, यहां **वर्तमान पर्याय का उसी द्रव्य की भूतकालीन पर्याय में अभाव उसको हम यहां प्रागभाव कहेंगे।** अभी हम मान लेते हैं कि यहां सामने एक कटोरा है और उस कटोरे में दही है; दही यह उसकी वर्तमान अवस्था है; तो उसमें प्रागभाव घटित करना हो, तो कैसा करेंगे? आप बोलेगी? हां बोलो। *श्रोता: दही का पूर्व पर्याय दूध में अभाव है।* हां, आपका यह कहना है, यह जो दही है उस दही का... वह द्रव्य है न? कौनसा? गोरस है। उसकी पूर्व पर्याय कौनसी थी? *श्रोता: दूध।* दूध, तो दही का दूध में अभाव है। उसको क्या कहेंगे? *श्रोता: प्रागभाव।* प्रागभाव। यह बात समझ में आती है? हां जी? *श्रोता: यह बेस्ट एक्झाम्पल है।* यहां सब बेस्ट ही काम चल रहा है साहब! देखो-देखो अभी कोई सिद्ध है, है कि नहीं कोई सिद्ध? तो उनका पर्याय में सिद्धत्व होता है। तो सिद्ध अवस्था का, आगे का कौन पूरा करेगा? बोलो मोना। उनकी संसार अवस्था जो पूर्व पर्याय थी अभी एक समय हो गया भाई, वे सिद्ध हो गये हैं। उनकी पूर्व अवस्था कौनसी थी? *श्रोता: संसार अवस्था।* संसार अवस्था, यानी सिद्ध पर्याय का संसार अवस्था में जो अभाव है, उसको हम प्रागभाव कहेंगे। यह बात आपके ख्याल में आती है कि नहीं अभी? और भी उदाहरण चाहिये आपको?

देखो-देखो अभी हम मनुष्यपर्याय में हैं, और भूतकालीन जो पर्याय होगी किसीकी नरक की होगी, किसीकी तिर्यंच की होगी, किसीकी देव की होगी; तो अभी हम तिर्यंच लेते हैं क्योंकि वे क्वाँटिटि में अधिक होते हैं न? तो कहते हैं मनुष्यपर्याय का, भूतकालीन

तिर्यंचपर्याय में जो अभाव है, उसको कौनसा अभाव कहेंगे ? प्रागभाव; बात ख्याल में आ रही है लताबेन ? अब आगे बढ़ते हैं। अभी कह रहे हैं, अभी किसी जीव को सम्यक्त्व प्राप्त हुआ है, सुलभाताई, आपको हम सम्यक्त्वी बनाते हैं, टेम्परी उदाहरण के लिये; अभी आप सम्यक्त्वी हैं, तो आपको अभाव बताना हैं, प्रागभाव बताना है, तो आप कैसे बतायेंगे, हां ? *श्रोता: मिथ्यात्व का अभाव।* मिथ्यात्व का अभाव हुआ, अच्छा! निखिलभाई, यह बहन बराबर बता रही है कि गलत है ? मुझे यह चाहिये कि वह बहन बराबर बता रही हैं या गलत बता रही हैं ? अभी वर्तमान में सम्यक्त्व है, तो उन्होंने कहा मिथ्यात्व का अभाव हो गया; तो इसमें अभाव लगेगा कि नहीं लगेगा ? वर्तमान पर्याय का भूतकालीन पर्याय में अभाव है; तो आपको क्या बताना है ? सम्यक्त्व का, मिथ्यात्व में अभाव है। मिथ्यात्व 'में' चाहिये बेन, मिथ्यात्व 'का' नहीं।

देखो, आप कहेंगे भाई कि हमने 'में' और 'का' में जरासा आगे पीछे किया, तो इसमें क्यों आप नाराज हो रहे हो ? तो अभी हम क्या कह रहे हैं हमने क्या देखा ? अभी वर्तमान में कौनसा कार्य चल रहा है ? वर्तमान में जिसकी अस्ति है, है न ? कार्य हो रहा है न ? उस कार्य का भूतकालीन पर्याय में अभाव है; यानी ऐसा अगर मानेंगे, कि नहीं-नहीं यह वर्तमान पर्याय का वह पहले हमारे संस्कार थे, उस संस्कार के कारण अभी हमको सम्यक्त्व हुआ है; तो हमारी मान्यता गलत ठहरेगी। यहां तो कहते हैं कि वर्तमान पर्याय का, भूतकाल की पर्याय में अभाव है; यानी अभी वर्तमान पर्याय में सम्यक्त्वरूपी कार्य हो रहा है, तो मिथ्यात्व अवस्था में भी वह कार्य है ऐसा मानना पड़ेगा। तो उसके पहले कि जो पर्याय थी, उसमें भी यह पर्याय है ऐसा मानना पड़ेगा। तो यहां आपके पास जो लिखा है उसमें दिया है देखो।

क्या कहते हैं, ११९ नंबर का जो प्रश्न है कि **एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का उसी द्रव्य की पूर्व पर्याय में अभाव सो प्रागभाव है। इसे न माना जाये तो कार्य अनादि का ठहरे।** यानी हमने अगर माना कि अभी हमारी वर्तमान पर्याय में, पूर्व पर्याय का अभाव, तो हमारे अभी किसकी बात चल रही है ? वर्तमान पर्याय की; तो हम कहेंगे कि वर्तमान पर्याय का भूतकाल की पर्याय में अभाव। यानी यह जो वर्तमान पर्याय है, उसका भूतकाल की पर्याय के साथ कोई लेना-देना है नहीं। अगर हम ऐसा मानते हैं कि यह सम्यक्त्व पहले भी था, यहां क्या कह रहे हैं सम्यक्त्व का अभाव, पूर्व पर्याय में, पूर्व

पर्याय कौनसी थी? मिथ्यात्व की थी। तो उस मिथ्यात्व में उसका अभाव नहीं मानेंगे, तो दूध में भी दही है ऐसा मानना पड़ेगा; सोमवार में भी मंगलवार है ऐसा मानना पड़ेगा। सुनना हो, मंगलवार में सोमवार का अभाव मानेंगे, तो हम किसकी अस्ति बता रहे हैं? सोमवार की; हमें अस्ति किसकी बतानी है? मंगलवार की। अभी यहां कार्य की अपेक्षा से जब हम देखते हैं, तो यहां कार्य कौनसा घटित हो रहा है? सम्यग्दर्शन का कार्य हुआ। तो यह जो वर्तमान में सम्यग्दर्शन का कार्य है उसका भूतकाल की पर्याय में अभाव है, तो यहां पहले हम जिसकी बात कर रहे हैं उसकी अस्ति हमको एस्टॅब्लिश करनी है।

तो हम अगर सम्यक्त्व में मिथ्यात्व का अभाव कहेंगे, 'में' यहां लगाया, लगाना क्या चाहिये? सम्यक्त्व 'का' मिथ्यात्व में अभाव और हमने कहा सम्यक्त्व 'में' मिथ्यात्व का अभाव, तो हम किसको इम्पॉर्टन्स दे रहे हैं, मिथ्यात्व को या सम्यक्त्व को? *श्रोता: मिथ्यात्व को।* मिथ्यात्व को; हमें क्या बताना है वर्तमान पर्याय जो है, वह वर्तमान पर्याय, पिछली पर्याय से कोई संबंध नहीं रखती। तो हम तो इतने भोले हैं, हम तो कहते हैं, मैं जरा गुजराती में बोलूंगा, मुझे विशेष मज़ा आता है। बेन, आपणे तो संस्कार रेडवा पडे ने। क्या कहते हैं? अभी तो हमें भविष्यकाल के लिये संस्कार करने हैं ना? यह हमारे पूर्वभव के संस्कार अभी हमको काम में आयेंगे कि नहीं? अगर कोई गलती से नहीं बोलेगा, फिर उसकी पिटाई देखो। हां? अरे! क्या बात करते हो? हमें पूर्व भव के संस्कार थे, इसलिये तो अभी हमको यह मिला है ऐसा हम कहते हैं, यहां शास्त्र में तो ना पाड़ते हैं। क्या बोलते हैं कि वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में अभाव है; तो उसके पूर्व पर्याय में वर्तमान पर्याय का अभाव होगा कि नहीं? देखो, यह सांकल होती है न ऐसे, साखळी, क्या बोलते हैं आप लोग? *श्रोता: चेन।* हां चेन-चेन, हां, अंग्रेजी में बात करें तो जल्दी समझ में आता है। तो उसमें से एक कड़ी टूट गयी, तो पिछले किसीसे संबंध रहेगा कि नहीं रहेगा? नहीं रहेगा। तो यहां कहते हैं कि वर्तमान पर्याय जो है, उस वर्तमान पर्याय का भूतकालीन पर्याय में अभाव। उसके पूर्व की जो भूतकालीन पर्याय है उसमें अभाव, उसके पूर्व, उसके पूर्व, अनादि तक जाओ; अगर ऐसा नहीं मानेंगे, तो अभी वर्तमान में जो कार्य हो रहा है, वह अनादि से चलता आ रहा है, चलता आ रहा है, चलता आ रहा है, ऐसा मानना पड़ेगा। तो यहां जो लिखा है ब्रॅकेट में कि कार्य अनादि का ठहरेगा इसका अर्थ क्या है? कि हमने ऐसा मान रखा है कि हमारे संस्कार काम में आते हैं। तो यहां जिनेन्द्र भगवान कहते हैं कि तेरी

यह मान्यता गलत है, वस्तुस्वरूप को समझ। तू संस्कार पर ही क्यों समाधानी रहता है? संस्कार में ही क्यों समाधान मानता है?

अभी इसी वक्त, इसी भव में, इसी पर्याय में, सम्यक्त्व को धारण करे ऐसी तेरेमें क्षमता है। तो संस्कार से ही क्यों पेट भरता है तू? मैंने पहले ही बोला, यह तो दिमाग फिरानेवाली बात है क्योंकि आज तक हमने यही माना है और एक-दूसरों को मांहो-मांहि यानी परस्पर ऐसा ही उपदेश दिया है कि संस्कार तो करने चाहिये कि नहीं? अरे! मां को अपने बच्चों पर संस्कार करने चाहिये कि नहीं, पल्लवी? तो मैं कहता हूं हमारे घर में चार भाई हैं हम, हमारे माता-पिता ने हम सब पर संस्कार किये हैं, तो तीन भाई तो शास्त्र की तरफ देखने को ही तैयार नहीं है और एक मैं ही उल्लू हूं कि शास्त्र की तरफ देख रहा हूं। तो हमारे माता-पिता के संस्कारों में कुछ डिफरन्स हो गया होगा कि नहीं? मैं मेरे पर ही घटित कर रहा हूं, आप अपने बच्चों पर घटित करना भाई। क्यों? अरे! संस्कार तू दूसरे पर करेगा, यह तो लौकिक में कहा जाता है और करने भी चाहिये, यह भी बताता हूं; लेकिन हम अगर मानते हैं कि हम इतना प्रयत्न करें, फिर भी यह नहीं सुनते हैं, तो हम क्या करें? तू जान बस। क्या करें? यह तेरे राग का जो तू पोषण कर रहा है कि मेरे बच्चों को यह बात आनी चाहिये और उन्हें सीखनी चाहिये। भाईसाहब, अगर वह सीखेगा तो अपने पुरुषार्थ से सीखेगा; लेकिन उसके पूर्वभव के संस्कार भी काम नहीं आनेवाले हैं और तेरे वर्तमान के जो अभी प्रयत्न हैं वे भी काम आनेवाले नहीं हैं क्योंकि हमारे पास वह तावीज नंबर एक, हां? *श्रोता: एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता।* एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है। तो तू तेरे बच्चों पर संस्कार करेगा, यह तेरी मान्यता कितनी सही है? जिनेन्द्र भगवान का जो उपदेश है, उससे बिलकुल विरुद्ध तेरी मान्यता है।

भाई हम एक-एक सिद्धान्त को देखेंगे तो हमारी आंखों पर पड़ी हुयी जो मिथ्यात्व की पट्टियां हैं, वे फटाफट-फटाफट निकल जावें, ऐसी बात है। वस्तुस्वरूप को निष्पक्ष रीति से समझने की कोशिश करो। आज तक हमने ऐसा माना था और तुम अभी कहते हो तो हम वैसा माने? मैं कहता हूं इसलिये मत मानना! यह तो जिनेन्द्र भगवान ने बतायी हुयी बात है। यह शास्त्र में लिखी हुयी बात है प्रागभाव की। आप जानते हैं ये समंतभद्र आचार्य थे, उन्होंने एक गंधहस्तिमहाभाष्य नामक ग्रंथ लिखा था। उसमें ये ११४ श्लोक मंगलाचरण

के हैं, हां, जी? *श्रोता: देवागम स्तोत्र।* वे देवागम स्तोत्र नाम से प्रसिद्ध हैं। उसमें यह अभाव की बात लिखी है बोलो, किसमें? जिनेन्द्र भगवान की स्तुति कर रहे हैं, वहां तो कह रहे हैं; 'हे भगवान तुम धोखे में मत रहना कि तुम्हारे पास यह सारा समवशरण आदि का वैभव है इसलिये मैं तुमको नमस्कार करता हूं' ऐसा चॅलेंज कर रहे हैं, हो! कौन? समंतभद्र आचार्य, जिन्होंने यह रत्नकरण्ड श्रावकाचार आदि ग्रंथ लिखे हैं। वे कहते हैं कि आपकी तरफ देखकर आपमें जो वीतरागता है, आपमें जो सर्वज्ञता है, उसको हम प्रणाम करते हैं; उनको हम नमन करते हैं। लेकिन ऐसा कोई देवगति का जीव होगा तो वह भी समवशरण की रचना करके वहां ऐसा खोटा-खोटा दिखावा तैयार कर सकता है क्योंकि वे जानते हैं न कि समवशरण की रचना किसने की साहब? देवों ने की है न? कुबेर की आज्ञा से हो गयी वे सारी बातें, कुबेर ने बनायी सब। तो कहने का मकसद यह है कि उस देवागम स्तोत्र में – एक सौ चौदह गाथाओं का वह मंगलाचरण है, उसमें इन अभावों की बात आयी है, बोलो। तो जो आचार्य बात लिखते हैं, जो सत्य महाव्रत के धारी हैं, वह गलत-खोटी बात लिखेंगे? वह जो जिनेन्द्र की, जिनवाणी की परंपरा से उन तक बात आयी थी वह उन्होंने लिखी है और वह खोटी? और हमारी मान्यता – 'ना, ना, संस्कार काममां आवे हो!' देखो तो, सर्वज्ञ कहे वह खोटा और अल्पज्ञ माने वह साचा?

देखो भाई! पहले में पहले तो हमें वस्तुस्थिति समझनी चाहिये। फिर हम अपने पर कन्ट्रोल करें कि अरे रे यह मेरी मान्यता थी, लेकिन यह कौनसे पंडित हमारे पल्ले पड़ गये? हमारी खोटी-खोटी बातों को उड़ा रहे हैं। हम तो उसको छोड़ेंगे नहीं, जान जाये लेकिन हमारी मान्यता नहीं छोडेंगे। देखो, यहां क्या कह रहे हैं? अगर हम ऐसा मानते हैं कि पूर्व की पर्याय अभी हमारे काम में आयेगी, तो यह बात सही नहीं है। क्योंकि हमने क्या देखा? मैं फिर से बोलूंगा आपके सामने यह पर्चा है उसमें भी वह लिखा है, हम सब लोग रिपीट करेंगे क्योंकि हमें प्रागभाव समझना अत्यंत आवश्यक है। यह प्रागभाव जो है यह पर्याय में लगता है और यह सभी द्रव्यों की सभी पर्यायों में लगता है। तो क्या कह रहे हैं? देखो भाई, एक समय की जो पर्याय है पूर्व की, वह भी अगले पर्याय के लिये कुछ कार्यकारी नहीं है। तो परद्रव्य की पर्याय तुम्हारे में आकर तुम्हारा कार्य कर देवें यह बात कहां से लायी आपने? जो हमने अपने एक सिद्धान्त को सीखा है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है। यहां तो कहते हैं कि पूर्व पर्याय भी तेरे वर्तमान पर्याय का

कार्य नहीं करेगी। बोलो, बोलो कैसी विचित्र स्वतंत्रता है! विचित्र का अर्थ ऐसी कोई ऐसी चमत्कारी नहीं, अद्भुत स्वतंत्रता है! हमें उस बात का पता नहीं है और हम तो चले..., कैसे?

वह हमारे महाराष्ट्र में ऐसा होता है वह एक नंदी बैल होता है, हां, और उसके साथ एक आदमी होता है, उसके पास क्या बोलते हैं उसको? ढोलक होता है, तो वह आदमी ढोलक पर बुगु-बुगु ऐसी आवाज करता है और वह बैल से पूछता है बारिश गिरेगी कि नहीं? सब धान वगैरह अच्छा पकेगा कि नहीं? उसके हाथ में डोरी रहती है, वह इस तरफ से डोरी खींचे तो वह बैल गर्दन से 'हां' कहे और उस तरफ से डोरी खींचे तो..., उस नंदी बैल जैसा हमें नहीं करना चाहिये। हां, हमें वस्तुस्वरूप का ज्ञान होना चाहिये। क्या कह रहे हैं? यहां तो कह रहे हैं कि वर्तमान पर्याय का भूतकालीन पर्याय में जो अभाव, कौनसी भूतकालीन पर्याय? उसी द्रव्य की भूतकालीन पर्याय में अभाव उसको प्रागभाव कहते हैं।

हमारा यह समझने का मकसद, प्रयोजन यह है कि हम जो समझ रहे हैं कि भाई एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कार्य न करें वह तो बात अलग, एक द्रव्य में रहनेवाला गुण भी दूसरे गुण का कार्य नहीं करता है – यह बात हमने वस्तुत्व गुण के माध्यम से गत वर्ष सीखी है। यहां तो कह रहे हैं, कि एक समय की वर्तमान पर्याय जो है वह भी भूतकाल की पर्याय के अनुसार परिणमन करें ऐसा नहीं है। अगर हमारे संस्कार हमारे काम में आते हैं, तो मैं तो कहता हूं मिथ्यात्व के संस्कार कब से हैं आपके? हां साहब? बोलो बेन। हंसाबेन तमे उत्तर आपो। किसी जीव के, आपकी नहीं बात कर रहा हूं, हो। किसी जीव के मिथ्यात्व के संस्कार कितने साल से चल रहे हैं? *श्रोता: एक समय, एक समय के लिये मिथ्यात्व है।* हां, पर उसके संस्कार कब से चल रहे हैं? *श्रोता: अनादि से।* अनादि से, तो वह जोरदार होंगे या तुम्हारे एक-दो भव के जो संस्कार है, वे स्ट्रॉंग होंगे? तो उसको तो हम निग्लेक्ट करते हैं। हां और अभी हमने बच्चों को कुछ सिखाया या हमने खुद ने स्वयंने सीखा तो वह संस्कार हमारे काम में आये? भाई देखो, बात ऐसी होती है, जो हमें इस वक्त आगम का सही ज्ञान उपलब्ध है अगर हम उसका सही इस्तेमाल करते हैं अभी यथार्थ पुरुषार्थ करते हैं तो कहने में आता है कि इसके पूर्वभव के संस्कार काम में आये, ख्याल

में आया? और हम उसरूप परिणमन नहीं करेंगे तो संस्कार किधर गये भाई? क्योंकि प्रत्येक पर्याय स्वतंत्र है।

यहां क्या बता रहे हैं? देखो देखो, अभी आप पढ़ो तो और मज़ा आयेगा। वही-वही मैं बार-बार पढ़ रहा हूं, प्रागभाव किसे कहते हैं? ११९ नंबर का प्रश्न, **एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का उसी द्रव्य की पूर्व पर्याय में अभाव है।** यानी यहां हर समय नयी-नयी पर्याय होती जा रही है, लेकिन पूर्व पर्याय से अगले पर्याय का कोई संबंध नहीं या वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय से कोई संबंध नहीं है। देखो, पर्याय-पर्याय की अनंत स्वतंत्रता का यह उद्घोष है। यहां तो बता रहे हैं कि द्रव्य तो स्वतंत्र है ही है, गुण स्वतंत्र है ही है, पर्याय भी स्वतंत्र है। देखो, ऐसी अनंत स्वतंत्रता की बात जिनवाणी में भरी पड़ी है। तो यह बात अभी आपके समझ में आयी कि नहीं आयी? हां साहब! प्रागभाव की बात समझ में आयी कि नहीं? जिनको समझ में नहीं आयी वे हाथ उठायें उनको हम और उदाहरण देकर समझायेंगे। आप इतने अच्छे हैं, सबको बात समझ में आयी है। अच्छा ठीक है अब आगे। इसके साथ-साथ हम यह दूसरा जो अभाव है न प्रध्वंसाभाव? उस प्रध्वंसाभाव की जो परिभाषा है उसको भी देखेंगे। पहले में पहले एक बात हमें ध्यान में रखनी है। यह जो पर्याय होती है वह पर्याय कितने समय टिकती है? हां, पर्याय कितने समय टिकती है? रमाबेन ने तो उत्तर दे दिया फट से। वह मौन रखती हैं फिर भी उत्तर दे देती हैं; हां उन्होंने एक उंगली बता दी, हां, सबका मालिक एक बताया उन्होंने।

उन्होंने कहा, पर्याय एक समय टिकती है; कोई भी पर्याय दो समय टिकती ही नहीं, दो समय टिके वह पर्याय ही नहीं है, ख्याल में आया? तो पर्याय का ड्युरेशन है, उसकी जो स्थिति है, टिकना जो है, वह एक समय पुरता है। यह बात ध्यान में रखते हैं। तो हमारी जो वर्तमान पर्याय है उसका ड्युरेशन, उसकी स्थिति कितनी होगी पल्लवी? *श्रोता: एक समय।* एक समय, अब यह ध्यान में रखते हुये हम आगे बढ़ते हैं। अभी क्या कहा देखो, प्रागभाव के बाद १२० नंबर का प्रध्वंसाभाव का प्रश्न है, उसमें लिखते हैं कि **एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का**, यह ऊपर जो लिखा है वैसे ही नीचे लिखा है, तो **एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का, उसी द्रव्य की** क्या? यहां ऊपर प्रश्न ११९ में क्या लिखा था? *श्रोता: पूर्व।* और यहां क्या लिखा है? *श्रोता: आगामी।* आगामी का अर्थ क्या है? हां,

भविष्यकाल में जो होनेवाली, आनेवाली जो है, तो वह **आगामी पर्याय है उसमें जो अभाव है, उसका नाम प्रध्वंसाभाव है।** देखो, यहां पर क्या बताना चाहते हैं? पहले तो हमने क्या देखा था? वर्तमान पर्याय का, यह वर्तमान पर्याय को यहां रखो, यह **वर्तमान पर्याय का भूतकाल की पर्याय में अभाव सो प्रागभाव।** अभी यह वर्तमान पर्याय है वही है, **वर्तमान पर्याय का भविष्यकालीन, आगामी पर्याय में अभाव है सो प्रध्वंसाभाव है।** इसका अर्थ क्या हो गया?

यह जो वर्तमान पर्याय है उसका कोई संबंध, उसका कोई रिलेशन, उसका कोई कनेक्शन, पूर्व पर्याय से नहीं है। यह विद्यमान, यहां जो कार्य हो रहा है वह यहां हो ही रहा है, वह पूर्व पर्याय के कारण यह कार्य होता हो ऐसी बात है ही नहीं। अब यह जो वर्तमान पर्याय है, उसका भविष्यकालीन पर्याय में अभाव है। तो इसका इसके साथ कोई संबंध नहीं, तो इसके कारण भविष्य की पर्याय हो जाये, ऐसी भी बात नहीं है; तो यह वर्तमान पर्याय जो है वह टोटल स्वतंत्र है; परिपूर्णतः स्वतंत्र है; ना किसीसे उसका जुड़ान है, ना किसीसे कोई लगाव है, ना किसीसे कोई संबंध है। यह दो अभाव अगर हमारे ख्याल में आते हैं, कौन-कौनसे? दो अभाव कौनसे बेन? *श्रोताः प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव।* प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव, उससे क्या सिद्धि होती है त्रिशला? प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव समझने से कौनसी सिद्धि की अभी हमने? *श्रोताः पर्याय एक समय से ज्यादा टिकती नहीं।* उसका हमने निष्कर्ष क्या निकाला? वर्तमान पर्याय जो है, उसका पूर्व पर्याय से और भविष्यकालीन पर्याय से कोई संबंध नहीं है। यहां पर्याय यानी जो वर्तमान समय में जो कार्य हो रहा है उस कार्य का पिछले और अगले, कोई भी पर्याय से, कोई भी कार्य से कोई संबंध नहीं है, है न? यह हमने नक्की किया।

तो पहले हमने क्या देखा था? मंगलवार का सोमवार में अभाव उसको क्या कहेंगे? *श्रोताः प्रागभाव।* और मंगलवार का बुधवार में अभाव उसको क्या कहेंगे? *श्रोताः प्रध्वंसाभाव।* जोर से बोलना भाई! *श्रोताः प्रध्वंसाभाव।* समझ में आता है? हां? ख्याल में आया? अब कह रहे हैं यह तो हमने देखा प्रध्वंसाभाव। तो फिर आगे बढ़ते हैं हम। तो अभी आपकी यौवन अवस्था का वृद्धावस्था में अभाव है, यह कौनसा अभाव लगा? हां साहब? *श्रोताः प्रध्वंसाभाव।* देखो, तुम्हारा अभाव है ऐसा नहीं बता रहे हैं, वृद्धावस्था में तुम्हारा अभाव है

ऐसा नहीं बताया। अभी तुम्हारी जो यौवन अवस्था है वह पर्याय है, वर्तमानकालीन जो तुम्हारी अवस्था है, उस अवस्था का भविष्यकालीन अवस्था में, पर्याय में अभाव बता रहे हैं। तुम्हारा ही अभाव बतायेंगे तो क्या होगा? बुढ़ापे में मर जाओगे। अरे! वह भी तो पर्याय है। तू तो स्वतंत्र है, कायम टिकनेवाला है यह तो पर्याय की बात चल रही है न साहब! इसीलिये मैंने आपको बार-बार बताया यहां हम पर्याय की बात सीख रहे हैं।

हां, तो यह प्रध्वंसाभाव में हमने देखा, कि हमारी जो वर्तमान पर्याय, जो हमारी यौवन अवस्था है, उस यौवन अवस्था का भविष्यकालीन पर्याय में जो अभाव है उसको हम क्या कहेंगे? प्रध्वंसाभाव। *श्रोता: दही का दूध में अभाव।* हां, आप कह रहे हैं, यह जो हमने दही का कटोरा रखा था, हां, उसका क्या हो गया? तो कहते हैं उसको प्रध्वंसाभाव में घटित करना है, तो कौन करना चाहेगा? आप ही? बोलो। वर्तमान पर्याय में दही है यहां, तो उसको प्रध्वंसाभाव में घटित करना है, कैसे करेंगे? हां, बोलो-बोलो। *श्रोता: ... अन्य श्रोता: छाछ छाछ... कढ़ी बनायेंगे।* हां, हां, हां, बहुत अच्छा! यहां एकदम आगे दौड़ रहे हैं, आपने बीच में रुका दिया, बहुत अच्छा! यह कह रहे हैं अभी जो वर्तमान पर्याय है, वह वर्तमान पर्याय दहीरूप है, तो उसकी भविष्यकालीन जो पर्याय होगी वह है छाछ। भाईसाहब बोलते हैं, नहीं-नहीं हम उसका मक्खन बनायेंगे। दूसरा बोलता है, हम कढ़ी बनायेंगे। तीसरा बोलता है, उसका घी बनायेंगे। अरे भाई! वह आगे-आगे की पर्याय है, तो यही बात हम कहना चाहते हैं, वर्तमान पर्याय का यानी कार्य क्या है? वर्तमान पर्याय की बात करेंगे। उसका भविष्यकालीन पर्याय में यानी अभी भविष्यकालीन जो पर्याय है वह छाछ है, उस छाछ अवस्था में, वह दही अवस्था है कि नहीं? तो वर्तमान पर्याय का भविष्यकालीन पर्याय में जो अभाव है सो प्रध्वंसाभाव है। ऐसे उसके आगे की जो-जो पर्याय होगी, आप उसका घी बनाओ, मक्खन से घी करो या मक्खन खा लो, जो भी करने का है उन सारी भविष्यकालीन पर्यायों में इस वर्तमान पर्याय का अभाव है। जैसे हमने यहां से सांकल तोड़ कर पूर्व की सभी पर्यायों में अभाव, अभाव, अभाव किया, वैसे अभी हमारे वर्तमान पर्याय के आगे जो भविष्यकालीन एक पर्याय में अभाव है, तो आगे की सभी पर्यायों में अभाव, अभाव, अभाव है ऐसा घटित होगा।

तो कहते हैं, अभी किसी जीव की संसारी अवस्था है, तो उसको प्रध्वंसाभाव में

घटित करना है। आप करेंगे? बोलो-बोलो। *श्रोता: अभी जीव की जो संसारी अवस्था है, उसके बाद जो मुक्त अवस्था है, उसमें अभाव।* कौनसी अवस्था? *श्रोता: मुक्त अवस्था।* बहुत अच्छा! बहुत अच्छा! मुक्त अवस्था! यानी अभी संसारी अवस्था वर्तमान पर्याय में है, उस वर्तमान पर्याय का भविष्यकालीन जो सिद्ध अवस्था है, मुक्त अवस्था है उसमें अभाव है। यह क्या हो गया? प्रध्वंसाभाव। यह बात समझ में आ रही है? या डिफिकल्ट लगता है? कितना आसान है, क्यों श्लोका? पक्का है ना? हां, अब आगे बढ़ते हैं। तो कहते हैं कोई जीव छद्मस्थ है, तो उसके छद्मस्थ अवस्था का प्रध्वंसाभाव कौन लगायेगा बहनों में? यह आपके बगल में बैठी हैं उनको बोलना। छद्मस्थ अवस्था का, बोलना मत-बोलना मत, अरे! दोनों तरफ से प्रॉम्प्टिंग है, क्या बात है? हां, पहले के ज़माने में ऐसा होता था कि नाटक चलता था और नाटक में पर्दे के पीछे प्रॉम्प्टर्स रहते थे। हां? अभी यहां तो पर्दा-फ़र्दा कुछ है नहीं तो हमें सब पता लग रहा है कि कौन-कौन किसको प्रॉम्प्टिंग कर रहा है। तो दोनों ने प्रॉम्प्टिंग किया कुछ याद आ गया? छद्मस्थ का अर्थ नहीं मालूम है? छद्मस्थ यानी जो परिपूर्ण ज्ञानी नहीं है, यह बात परसों ही बतायी थी कि जो अभी आवरण में स्थित है वह छद्मस्थ है। तो उसके भविष्य में कौनसी पर्याय होगी? अरे भाई! इतना टाइम अपने पास नहीं है हां, बोलो बहन? *श्रोता: सर्वज्ञता प्राप्त होगी।* हां सर्वज्ञता प्राप्त होगी तो वर्तमान पर्याय का भविष्यकालीन पर्याय कौनसी? वर्तमान पर्याय अपनी छद्मस्थ की है, तो भविष्यकालीन पर्याय सर्वज्ञ की है तो वर्तमान पर्याय का भविष्यकालीन पर्याय में अभाव सो..., कौनसा अभाव है? *श्रोता: प्रध्वंसाभाव।* प्रध्वंसाभाव, यह बात अभी समझ में आ रही है कि नहीं?

अब मान लो हमारी कौनसी पर्याय चल रही है अभी? मनुष्यपर्याय चल रही है तो इस मनुष्यपर्याय को प्रध्वंसाभाव में घटित करना हो, तो कैसा घटित करेंगे? आप बतायेंगे साहब? *श्रोता: वर्तमान मनुष्यपर्याय का जो पर्याय होनेवाली है उसमें अभाव है।* हां-हां बहुत अच्छा, तो आप एक उदाहरण देकर बोलेंगे, उदाहरण देना है न, हमको थोड़ी पूछना है कि आप कहां जा रहे हैं? *श्रोता: कार्य के अनुसार जो गति प्राप्त होती है...।* हां-हां, अरे! इतना लंबा मत बोलो, एक ही बोलो कि वर्तमान पर्याय जो मनुष्यपर्याय है, वह भविष्यकालीन तिर्यंचपर्याय में उसका अभाव है; नहीं तो अभी इसको गधा मानना पड़ेगा। किसको? अरे! वर्तमान पर्याय को। अरे! भविष्यकालीन पर्याय में उसका अभाव है, ख्याल में आया?

आप देवगति भी ले लो; तो वर्तमान पर्याय मनुष्य है तो मनुष्यपर्याय का, देव की पर्याय में अभाव है। यह हमें तो उदाहरण के माध्यम से समझना है। हम आपको पूछेंगे नहीं, आप कौनसे परिणाम कर रहे हो, ऐसा क्यों कर रहे हो, ऐसा नहीं करना चाहिये, बिलकुल नहीं। यहां तक बात आपके समझ में आयी? तो अभी यहां पर हम यह बार-बार बता रहे थे कि यह अभाव है। अभाव था या अभाव होगा, ऐसी बात नहीं बतायी जा रही है। यहां तो कह रहे हैं वर्तमान पर्याय का भूतकालीन पर्याय में अभाव है; या वर्तमान पर्याय का भविष्यकालीन पर्याय में अभाव है। यहां अभाव 'है' कहा, अभाव था या होगा, ऐसी बात नहीं है। तो यह दोनों ही जब हम अभाव देखते हैं तो यह हमें बिलकुल ख्याल में आता है कि हमारी जो वर्तमान पर्याय, अब दूसरी भाषा में कहे तो वर्तमान में जो कुछ कार्य हो रहा है, उस कार्य का ना किसी पिछले कार्य से संबंध है, ना किसी भविष्यकालीन कार्य से संबंध है।

तो आप कहेंगे कि भाईसाहब इतना गला फाड़-फाड़ कर हमें सीखा रहे हैं, तो यह सीखने से क्या फायदा? ऐसा लगा कि नहीं? जो हंस रहे हैं उनको तो जरूर लगा है। हां, और जो बिलकुल हंस नहीं रहे हैं, वे तो आराम से नींद ले रहे हैं। क्यों? देखो हम आगे बढ़ते हैं। देखो इसीमें लिखा है, देख लेते हैं, यह पेज नंबर २३, क्वेश्चन नंबर १२३, **इन चार अभाव को समझने से क्या लाभ है?** तो कहते हैं अब यहां प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को ही समझेंगे, पहले प्रागभाव को देखेंगे। **प्रागभाव से ऐसे समझना चाहिये कि अनादिकाल से किसी जीव ने अज्ञान अथवा मिथ्यात्व आदि दोष किये हों, धर्म कभी नहीं किया है तो भी वह वर्तमान में नये पुरुषार्थ से धर्म कर सकता है। क्योंकि वर्तमान पर्याय का यानी अवस्था का, पूर्व पर्याय में अभाव है।** क्या सीखा हमने?

हमने प्रागभाव में यह देखा कि यह जो वर्तमान पर्याय है, उस वर्तमान पर्याय का भूतकालीन पर्याय से कोई संबंध नहीं है। तो अभी तक मैंने धर्म किया नहीं है, बहुत पाप किये हैं परंतु धर्म नहीं किया है, तो अधर्म ही किया होगा न भाई? यह धर्म और अधर्म की, बात समझ में नहीं आयी आपके? देखो, अभी आपके गांव की बात मुझे पता नहीं है हम जहां रहते हैं, वह कॉस्मोपॉलिटन एरिया है; कैसा एरिया है? कॉस्मोपॉलिटन। यह हमारी जयश्रीताई रहती थी न? उनसे पूछा कि आपकी बिल्डिंग में कौन-कौन रहता है? तो उन्होंने कहा, एक मुसलमान है, एक हिन्दू है, एक ख्रिश्चन है, एक सिक्ख है ऐसे-ऐसे। तो

उन्होंने इतना ही नहीं बताया, कहा कि अरे! हम अकेले ही जैन हैं बाकी सब अजैन हैं। तो अजैन हैं यानी क्या? जो जैन नहीं हैं वे अजैन हैं। वैसे आज तक हमने धर्म नहीं किया है, तो क्या किया है? हम केवल बतायेंगे तूने अधर्म किया है, तो कितना गुस्सा आयेगा, कितना गुस्सा आयेगा? लेकिन जब हम बताते हैं कि धर्म नहीं किया है, तो अधर्म ही किया है। तो अभी कुछ गलती हुयी ऐसा लगता है कि नहीं? लगना चाहिये भाई और लगेगा तो ही वह धर्म के लिये प्रवृत्त होगा, बात ख्याल में आ गयी? देखो, क्या कहते हैं, यहां कहा कि आज तक इस जीव ने धर्म कभी किया नहीं है तो हमको ऐसा खराब नहीं लगना चाहिये। अब कहते हैं वर्तमान पर्याय में वह पुरुषार्थ करेगा तो क्योंकि यह वर्तमान पर्याय जो है वह भूतकालीन पर्याय से कोई मतलब नहीं रखती है। अब इस समय, मैं निश्चितरूप से धर्म कर सकता हूं। ऐसा अगर अंदर से विश्वास आये, कब आयेगा? कि जब हमने यह प्रागभाव सीखा है और वहां हमने यह बात नक्की की है कि वर्तमान पर्याय का भूतकालीन पर्याय से कोई संबंध नहीं है तो अभी हम पुरुषार्थ करेंगे तो धर्म हो सकता है। मैं तो कहता हूं हमारे तुम्हारे जैसे भोले जीव या तो वर्तमान छोड़कर, भूतकाल में ही रममाण होते हैं या भविष्यकालीन के सपनों में ही जीते हैं।

मैंने हमारे प्रफुल्लभाई से पूछा कि साहब आप स्वाध्याय कब चालू करोगे? तो कहते हैं चिंता क्यों करते हो, अभी साल-डेढ़ साल में हम रिटायर हो जायेंगे, तो हम जरूर स्वाध्याय करेंगे। तो किसमें जी रहे हो? भविष्यकालीन पर्याय में और जो भूतकाल में जीनेवाले, अरे! हमारे शिवाजी महाराज ने ऐसा किया था, हमारे शिवाजी महाराज ऐसे थे। अरे! तू क्या है वह तो बता; वे ऐसे हैं, वे ऐसे थे, तो तुम कहां जी रहे हो? भूतकाल में। कोई वर्तमान में जीना नहीं चाहता। यहां तो कह रहे हैं कि तूने अभी तक भूतकाल में कोई ऐसा अच्छा कार्य नहीं किया है, धर्म की प्राप्ति करने का प्रयत्न नहीं किया है, अब इस वक्त, इस समय, तू धर्म की प्राप्ति कर सकता है क्योंकि तेरी जो वर्तमान पर्याय है वह भूतकालीन पर्याय से कोई संबंध रखती नहीं है। तो यह प्रागभाव समझने से कुछ तो अभी फायदा हुआ कि नहीं?

यह जिनवाणी जब हम पढ़ते हैं, तो वह तो अपने स्वयं के लिये पढ़ रहे हैं न भाई? तो उससे हमें सीख लेनी चाहिये, ऐसा उपदेश लेना चाहिये, समझना चाहिये कि आज तक

मैंने धर्म नहीं किया, कोई बात नहीं। जो सुबह से भटका हुआ-भूला हुआ शाम को घर में वापस आता है तो उसको भी अॅक्सेप्ट किया जाता है। ऐसा कुछ है न भूला-भटका वापस आया तो उसको, वैसे हमने भी आज तक कोई धर्मरूप कार्य नहीं किये हैं तो अभी वर्तमान में कर सकते हैं। यह बात जब हमें ज्ञान में आती है तो हमारा पुरुषार्थ और प्रबल हो जाता है और हम धर्म करने में प्रवृत्त हो जाते हैं। तो यह प्रध्वंसाभाव समझने से पहले किसीके कोई प्रश्न हो तो पूछ लेवे। हां साहब? जोर से बोलना हो भाई!

श्रोता: हर पर्याय आती है और जाती है, तो दूसरी पर्याय का भी अभाव है और सामने की पर्याय का भी अभाव है? वर्तमान पर्याय में देखो-देखो, वर्तमान पर्याय 'का' की बात चल रही है। फिर से-फिर से, आपका कहना है वर्तमान पर्याय में पिछली पर्याय का अभाव है तो, आप कौनसी पर्याय को इम्पॉर्टन्स दे रहे हैं? भूतकाल की पर्याय की बात कर रहे हैं या वर्तमान पर्याय की बात कर रहे हैं? अगर आपको वर्तमान पर्याय की बात करनी है तो आपको बताना है कि वर्तमान पर्याय का, भूतकालीन पर्याय में या भविष्यकालीन पर्याय में अभाव है; तब आप वर्तमान पर्याय को मुख्य करके बात कर रहे हैं। जो बीत चुकी है उसमें तुम क्या ऑल्टरेशन-बदल करेंगे?

हां, तो हमेशा जो अस्तित्वरूप है, अस्ति जो कार्य अभी वर्तमान में हो रहा है उसकी तरफ हमें ध्यान देना है। वर्तमान पर्याय में भूतकाल की पर्याय का अभाव अगर हम कहते हैं तो भूतकाल की पर्याय हो चुकी है या हो रही है? तो जो मर गया है उसके बारे में बातचीत करने से क्या फायदा है? और जो अभी पैदा ही नहीं हुआ है उसके बारे में बातचीत करने से कौनसा तुम्हारा मकसद हल होनेवाला है? तो यहां बता रहे हैं वर्तमान पर्याय का, ये जो **'का'** और **'में'** प्रत्यय हैं उन्हें बराबर योग्य जगह पर लगाना चाहिये।

श्रोता: वर्तमान पर्याय जो निकलती है वह चली जाती है, नयी पर्याय आती है। तो यह 'है' वाली पर्याय कहां जाती है?

हां, अब यह प्रश्न यहां पर नहीं है, फिर भी इसका उत्तर मैं आपको अगले प्रवचन में दूंगा, क्योंकि अभी समय हो गया है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

४१. चार अभाव – अन्योन्याभाव

हमने चार अभावों को देखते हुये, दो अभावों का स्वरूप जानने की कोशिश की थी। आपको याद ही होगा कि हमने प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को देखा था और प्रागभाव में हमने यह देखा कि एक ही द्रव्य की वर्तमान पर्याय का यानी वर्तमान में जो कार्य हो रहा है, उस कार्य का उसी द्रव्य की पूर्व पर्याय में यानी भूतकालीन पर्याय में अभाव है; यानी जो अभी वर्तमान में कार्य हो रहा है, वह पूर्व में नहीं था, ख्याल में आया? तो यह पूर्व में नहीं था इसका अर्थ क्या हो गया? कि अभी जो हो रहा है, वह नया कार्य होगा यानी हर समय नया कार्य होगा, हर समय नया कार्य। इसका अर्थ क्या हो गया कि वह जानने से कौनसा हमें लाभ है? तो कहते हैं, यह कार्य जो हर समय नया होता है, तो एक बात निश्चित हो गयी कि पूर्व पर्याय में जो कुछ बात हो रही थी उसका अभी इस वर्तमान पर्याय में कोई नामोनिशान नहीं है क्योंकि इस वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में अभाव है इसलिये पूर्व पर्याय में वर्तमान पर्याय नहीं है; यानी पूर्व काल में जो कार्य हो रहा था, उसमें वर्तमान पर्याय उपस्थित नहीं है। अभी जो अपनी वर्तमान पर्याय है वह बिलकुल नयी है।

देखो, अगर हम यह बात समझते हैं, तो कितनी बड़ी बात हमारे ख्याल में आती है कि केवलज्ञानी जो होते हैं, वे क्या करते हैं केवलज्ञानी? हां साहब? *श्रोता: जानते हैं।* हां, जानते हैं। क्या जानते हैं? *श्रोता: सभी को जानते हैं।* सभी को जानते हैं। तो हर समय जानते हैं कि नहीं? *श्रोता: एक समय में हर बात को जानते हैं।* हां, एक समय में हर बात को जानते हैं। तो मेरा यह पूछना है कि वे तीन काल की बातों को जानते हैं, तो अभी नया परिणमन हुआ, क्योंकि उनके भी केवलज्ञान की पर्याय हर समय बदलेगी कि नहीं बदलेगी? *श्रोता: बदलेगी।* तो बदलेगी तो फिर नयी पर्याय जो हुयी है, वह पूर्व पर्याय जो है वही होगी या अलग होगी? हां जी? क्या होगा साहब? हां? *श्रोता: अलग होगी।* अलग होगी। अलग तो होगी, लेकिन जो हुयी थी, तीन लोक और तीन काल की सारी वस्तुयें जानते थे, वही पर्याय अगले समय में होगी कि नहीं? *श्रोता: वैसी की वैसी होगी।* हां, भाईसाहब ने बहुत सही कहा, वह कहते हैं कि वैसी की वैसी होगी, लेकिन वही की वही नहीं होगी। एक समय में तीन काल को जानें, दूसरे समय में तीन काल को जानें, तीसरे समय में तीन काल को जानें। अभी वे भाईसाहब कहां गये जिन्होंने प्रश्न पूछा था? – प्रश्न पूछते ही गायब हो

जाते हैं। उन्होंने कहा यह पर्याय का क्या होता होगा? *श्रोताः पर्याय को ढूंढ़ने गये हैं।* ढूंढ़ते रह गये होंगे। चलो, ऐसी ही बात है भाई! अगर हम सहीरूप से जिनवाणी को नहीं समझेंगे तो अपने स्वरूप को ढूंढ़ते रह जायेंगे। ख्याल में आया?

तो यहां तो कह रहे हैं कि हर समय नयी पर्याय होती है इसका अर्थ ही यह है कि वही की वही पर्याय नहीं होती है वैसी की वैसी हर समय नयी पर्याय हो सकती है। ख्याल में आया? यह हमें समझना कितना आसान है। मान लो कोई जीव अभी वर्तमान में मिथ्यात्वी है और अगले समय में वह सम्यक्त्वी हो जाये; तो जो एक समय पहले, यानी हम समझते हैं कि भाई, हमें समझने के लिये दसवें नंबर की पर्याय में कोई जीव मिथ्यात्वी है, तो वर्तमान में केवलज्ञानी क्या जानेंगे? कि यह फलाना जीव वर्तमान में मिथ्यात्वी है। अगले समय में केवलज्ञान भी नया उत्पन्न हुआ और वह जीव का भी परिणमन मिथ्यात्व से सम्यक्त्वरूप से हो गया। तो अभी क्या जानेंगे? यह जीव वर्तमान में कैसा है? हां? क्या कहते हैं कैसा है यह वर्तमान में? सम्यक्त्वी है और भूतकाल में मिथ्यात्वी था। तो ज्ञान में, ज्ञान के जानने में फर्क हुआ कि नहीं? ख्याल में आया कि नहीं?

तो यह जो हम एक-एक समय की जो पर्याय, यानी नये-नये कार्य को देखते हैं, वह कार्य को समझने से क्या फ़ायदा होगा? तो कहते हैं अनादिकाल से तूने कोई अच्छा काम नहीं किया; कोई धर्म का कार्य नहीं किया, तो अभी वर्तमान में पुराने सब तेरे जो कार्य हैं, उससे कोई संबंध नहीं है, तो तू वर्तमान में धर्म कर सकता है। प्रध्वंसाभाव में हमने क्या देखा? कि अभी अनादि से आज तक यानी अभी के वर्तमान पर्याय तक मैंने धर्म नहीं किया है, तो घबराओ मत, क्योंकि वर्तमान पर्याय का भविष्य काल की पर्याय में अभाव है। तो अभी जो तेरी अधर्मरूप अवस्था हो रही है वह नष्ट होकर भविष्य में तुझे धर्म की पर्याय उत्पन्न हो सकती है, यानी तू धर्म कर सकता है। देखो, ये दो अभाव समझने से हमें बिलकुल निराकुलता होनी चाहिये कि भाई हमारी भूतकालीन और भविष्यकालीन पर्याय से हमारी वर्तमान पर्याय का कोई कनेक्शन नहीं है, संबंध नहीं है, कोई रिलेशन नहीं है।

तो अभी वर्तमान में मैं तो बिलकुल स्वतंत्र हूं और मैं मेरा अनुभव कर सकता हूं। अब यहां वर्तमान में नहीं हो रहा है, तो भविष्य में चले जायें। भविष्य में भी पूर्व की पर्याय से तेरी उस समय की पर्याय का कोई संबंध नहीं है। तो वहां पर भी भविष्यकालीन पर्याय,

जो अभी वर्तमान हुयी है, उसका भी भूतकालीन पर्याय में अभाव है। इसतरह यह वस्तु की स्वतंत्रता हमारे ज्ञान में आती है और हमें बिलकुल पता लगता है कि प्रत्येक पर्याय स्वतंत्र है।

कोई कहता है, हम प्रध्वंसाभाव को नहीं मानेंगे तो क्या होगा? तो कहते हैं, प्रध्वंसाभाव को नहीं मानेंगे तो वह कार्य अनंतकाल तक चलता रहेगा। तो जो कोई रोगी है वह रोगी ही रहेगा क्योंकि जो कार्य वर्तमान में हो रहा है, वही आगे चलते जायेगा, चलते जायेगा। तो कहते हैं, जो बच्चा है वह बच्चा ही रहेगा; जो बूढ़े हैं वे बूढ़े ही रहेंगे, मरेंगे नहीं; आफत हो जायेगी न? कोई मिथ्यात्वी है वह मिथ्यात्वी ही रहेगा; किसीको चिंता नहीं है। लेकिन, तू निर्धन है, तो निर्धन ही रहेगा सधन नहीं होगा; हां! हां! हां! हम अभी प्रध्वंसाभाव मानेंगे-मानेंगे। ख्याल में आया? लेकिन द्रव्य कैसा है? परिणमनशील है। हर समय नयी-नयी पर्याय होवे ऐसे प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है लेकिन उस द्रव्य के स्वभाव के साथ पर्याय की भी कैसी विशेषता है? कि जो वर्तमान पर्याय है, वह बिलकुल स्वतंत्र है, यह अभी तक हमने प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को देखा है। इसके बारे में किसी के कोई प्रश्न हो, तो पूछना, कुछ है? लाओ।

श्रोता: आपने यह कहा था कि एक पर्याय का दूसरी पर्याय से संबंध नहीं होता, तो फ़िर हमारे वर्तमान भव को हमारे पिछले कर्मों का फल क्यों मानते हैं? इसका एक-दूसरे से संबंध कैसे आता है?

देखो भाई, बात तो दो प्रकार से कही जाती है; जिसको हम कहेंगे, जो यथार्थ कथन होता है, उसको निश्चय का कथन कहते हैं और जो उपचार का कथन होता है वह व्यवहार का कथन होता है। व्यवहार कथन का अगर हम निश्चय कथन के साथ तुलना करेंगे, तो व्यवहार का कथन यानी औपचारिक कथन उपचार से किया गया कथन, हमेशा झूठा ही ठहरेगा। ख्याल में आया? तो शास्त्रों में ऐसे अनेक प्रकार से व्यवहार के कथन आते हैं और हमें निश्चय की बात मालूम नहीं हो तो हम व्यवहार के कथन को ही सच्चा मानकर वैसा ही वस्तु का स्वरूप है ऐसा मानते हैं तो हमारे मस्तिष्क में भ्रमणा चालू रहती है।

जैसे मैंने बहुत बार आपको बताया और आप जानते भी हैं, हमने तो देखा है कि किसी जीव ने चार घातिकर्मों को नष्ट किया और अनंतचतुष्टय की प्राप्ति की। तो मैं

आपसे पूछता हूं, यह जो घातिकर्मों को नाश करनेवाला कौनसा द्रव्य है बोलो? *श्रोता: जीवद्रव्य।।* जीवद्रव्य, जोर से बोलो! खाना नहीं खाया क्या? घबराते क्यों हो भाई? मैंने तुमको बहुत जोर से चिल्लाते हुये देखा है। जीव। बोलो, कर्म कौनसा द्रव्य है? *श्रोता: पुद्गल।* पुदगलद्रव्य है। दोनों द्रव्य भिन्न हैं कि नहीं? *श्रोता: हैं।* हैं। बहुत अच्छा! तो मैं आपसे पूछता हूं, यह जो जीवद्रव्य है, उसका स्वभाव जुदा है और पुद्गलद्रव्य का स्वभाव जुदा है। यह हमने पहले एक दिन देखा था कि जीवद्रव्य के विशेष गुण हैं वह उसका स्वभाव है। तो जीवद्रव्य के विशेष गुण कौनसे हैं? तो ज्ञान, दर्शन, श्रद्धा, चारित्र, सुख, क्रियावती शक्ति इत्यादि और पुद्गल के स्पर्श, रस, गंध, वर्ण इत्यादि। तो इसका अर्थ है दोनों ही द्रव्य जुदे-जुदे हैं, तो जीव की अस्ति जीव में है, पुद्गल की अस्ति पुद्गल में है। फिर भी ऐसा एक-दूसरे का संबंध करके कथन आता है तो उसको व्यवहार कथन कहते हैं।

ऐसे व्यवहार के कथन शास्त्रों में बहुत आते हैं तो हम वैसा ही मानते हैं। क्या लिखा आपने, पिछले कर्मों का फल क्यों मानते हो यहां तो अभी ऐसा मान लो हम दरिद्री हैं, रोग से बहुत पीड़ित हैं। यह जो हम अपनी योग्यता से ऐसे विचार से कि यह शरीर मैं हूं और मैं बहुत रोगी हूं और उसमें ममत्व होने से हम अधिक आकुलता करते हैं। तो यह जो आकुलता हो रही है, वह जीव का परिणाम है। तो यह आकुलता होने में कौन निमित्त है? तो कहेंगे कि पिछले भवों में बांधे हुये उसके कर्म निमित्त हैं। तो हमने तो माना कि कर्मों ने ही हमको पीड़ा दी, कर्मों ने ही हमको दु:ख दिया। उस समय आपको क्या करना है? मुझे याद नहीं करना, उस तावीज को याद करना है। कहां गये तावीजवाले हमारे अर्पलभाई? हां? तावीज ढूंढ़ने गये? *श्रोता: लेकिन वह जो अवस्था प्राप्त हुयी रोग की,* किसकी? *श्रोता: रोग जो हुआ।* रोग की अवस्था तो शरीर की है। यह जीव मैं स्वयं शरीररूप हूं – ऐसा मानता है और दुखी होता है। *श्रोता: रोग की जो अवस्था प्राप्त हुयी उसका कारण तो जीव ने पूर्व परिणाम जो किये हुये थे, उसका फ़ल है न?* हां, ऐसा कहने में आता है। *श्रोता: नहीं, वैसा ही स्वरूप है।* नहीं। वही फिर दो द्रव्यों की आपने गड़बड़ी कर दी न, मिक्श्चर कर दिया न? कहने में जरूर आता है। अभी यह जब हम अन्योन्याभाव देखेंगे तब और अच्छी तरह से आपको समझ में आयेगा। अब यह दूसरा प्रश्न क्या है? *श्रोता: भूत और वर्तमान पर्याय के बीच कौनसा संबंध होता है?*

'संबंध नहीं है' यही तो बता रहे हैं। किसने प्रश्न पूछा है? देखो-देखो! भूत और वर्तमान पर्याय के बीच कौनसा संबंध होता है? तो कह रहे हैं कि अभाव है, तो संबंध कहां का? भाव ही नहीं है। ख्याल में आया?

श्रोता: आपने जो संस्कार के विषय में कहा, वह बात समझ में नहीं आयी। यदि संस्कार नहीं माने जाये, तो हमें अभी सम्यग्दर्शन तो हुआ नहीं। किंतु ऐसा लगता है, इस भव में यह संस्कार डालेंगे, तो अगले भव में सम्यग्दर्शन कर सकते हैं। दूसरे पुराणों में संस्कार के कई उदाहरण देखने मिलते हैं। राम-सीता के कई भवों के संबंध थे, कमठ-भगवान पार्श्वनाथ का प्रकरण। तो क्या इसमें भी संस्कार काम नहीं करते? कृपया विस्तार से समझाइये।

बाप रे बाप, प्रश्न ही इतना बड़ा है, तो उत्तर कितना होना चाहिये? देखो, अभी मैंने दो दिन पहले आपको एक उदाहरण दिया था। फिर से बताऊंगा। हम आपके घर पर आये थे न? *श्रोता: हां, आये थे।* और आपने कहा कि घर अपना ही समझो, तो यह आप निश्चय से बोल रहे थे या उपचार से बोल रहे थे? *श्रोता: उपचार से।* निश्चय से? *श्रोता: उपचार से।* उपचार से और वह उपचार को ही हमने निश्चय समझ लिया, सत्य समझ लिया तो मूरख कौन है कहनेवाला या माननेवाला? *श्रोता: माननेवाला।* हां, ख्याल में आया न? ऐसे शास्त्र में कथन बहुत आयेंगे। क्या? कि इसके संस्कार से ऐसा हुआ। लेकिन वास्तविकता क्या है? **वर्तमान पर्याय का भूतकालीन पर्याय में अभाव है,** यह वास्तविकता है। जिसको निश्चय का सच्चा ज्ञान है, उसीको व्यवहार का भी सच्चा ज्ञान होगा; व्यवहार यानी व्यवहार कथन का। यह नय जो होते हैं, वे कथनात्मक होते हैं अथवा ज्ञानात्मक होते हैं। अभी यह थोड़ासा डिफिकल्ट टॉपिक है लेकिन क्या करें? आप ऐसा पूछ रहे हैं, तो समझाने का दूसरा कोई तरीका ही नहीं है। तो यहां जो कह रहे हैं कि संस्कार हमें काम में आयेंगे, तो पहले में पहले हम आपसे ऐसा पूछते हैं दोबारा कि यह संस्कार आप के अभी के चल रहे हैं। एक भव से, दो भवों से, दस भवों से चलो न, लेकिन मिथ्यात्व कब से चल रहा है बहन? *श्रोता: अनादि से।* तो उसके संस्कार अधिक पॉवरफुल होंगे या अभी दो-तीन भव के अधिक पॉवरफुल होंगे। हां जी? *श्रोता: मिथ्यात्व के।* क्योंकि वह अनादि के हैं न भाई? उसके बारे में हम सोचते नहीं। मैं कहता हूं, संस्कार डालने तक ही आप क्यों

सीमित रहती हो या रहते हो या जिसने पूछा है? हां? अभी यहां से पर्ची आयी तो मैं समझता हूं, स्त्रियों की तरफ़ से यह पर्ची आयी है। तो हम तो पूछ रहे हैं कि आप संस्कार डालने तक ही अपने को क्यों सीमित रखते हो? अभी, इसी भव में, पंचमकाल में, मुनिअवस्था तक प्राप्त करें, इतना पुरुषार्थ यह जीव कर ही सकता है।

आगम में ऐसा वचन है कि पंचमकाल के अंत तक जैन धर्म में मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका उनके नाम तक दिये हुये हैं, जो मुझे याद नहीं हैं, उनकी विद्यमानता है। अब आपके देवलाली में कोई नहीं मिलता है तो उसका अर्थ ऐसा थोड़े ही है कि पूरे भरतक्षेत्र में नहीं है? यह हमारा पूरा भारत भी भरतक्षेत्र नहीं है, भरतक्षेत्र में तो षट्खण्ड हैं। वे जो म्लेच्छखण्ड हैं उनकी बात छोड़ो, लेकिन जो आर्यखण्ड है, वह भी हमें मालूम नहीं है कितना है क्योंकि यह जो जम्बूद्वीप है, उसका १९० वां पार्ट हमारा भरतक्षेत्र है। वह कितना विशाल है अभी कैसे बतायें आपको? क्योंकि हमें भूगोल का थोड़ा बहुत उसमें ज्ञान आवश्यक है। तो अपनी बात क्या हो रही थी? तो भरतक्षेत्र में होगा। हमारे महाराष्ट्र में नहीं है, हमारे हिन्दुस्तान में नहीं है। अरे! हिन्दुस्तान इतना ही भरतक्षेत्र है क्या? तेरे ज्ञान का विषय नहीं है, तुझे ज्ञान में नहीं आ रहा है कितना है और कितना नहीं है। इसका अर्थ तूने नक्की कर दिया कि कोई सर्वज्ञ नहीं है करके? तो तू अभी छद्मस्थ अवस्था में ही सर्वज्ञ हो गया क्या? ख्याल में आया न?

तो अभी इस वर्तमान पर्याय में तुझे सम्यग्दर्शन हो सके ऐसा तू पुरुषार्थ कर सकता है उसके ऊपर ध्यान न देते हुये अभी कम से कम संस्कार तो करें! तो संस्कार यह पर्याय है न? तो अपना उपयोग कहां लगा है? पर्याय पर या स्वभाव पर? *श्रोता: द्रव्य पर।* द्रव्य पर है? संस्कार करना यह द्रव्य का स्वभाव है? लक्ष किधर है? *श्रोता: पर्याय, पर्याय, पर्याय।* अरे, अरे, अरे! मणिभाई एम केम करो छो, तो पर्याय पर नज़र रखना छोड़कर, द्रव्य स्वभाव पर लक्ष ले जाओ। उपयोग वहां लगाओ, देखो मैं अभी आपसे पूछता हूं कम से कम अभी संस्कार तो करो यह जो भाव है वह शुभभाव है या अशुभभाव है? हां, जिसने पूछा है उसीको उत्तर बताता हूं मैं। किसने पूछा है बोलो, बोलो। अच्छा, कोई बात नहीं। मैं आपसे पूछता हूं कि यह शुभभाव है या अशुभभाव है? शमाजी, आप क्या कहती हैं? *श्रोता: शुभभाव है।* शुभभाव है। शुभभाव है, वह स्वभावभाव है या विभावभाव है? *श्रोता:*

विभावभाव है। विभावभाव है। तो यहां हम कर रहे हैं विभाव और उसका फल चाहते हैं स्वभाव? क्या यह न्यायपूर्वक बात है? ख्याल में आया? भाई, यह संस्कारवाली जो बात हैं न, बहुत डेलिकेट है, बड़े-बड़े लोगों के छक्के छूट जाते हैं जिन्होंने प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, चार अभाव को सहीरूप से नहीं माना है। क्योंकि हमें, ऐसे बोलना नहीं चाहिये, अज्ञानता के कारण से ऐसी मान्यता होती आयी है कि संस्कार तो ओछामां ओछा थवा जोईअे। मैं गुजराती में इसलिये बोलता हूं कि गुजरातियों से मैंने यह संस्कार की बात अधिक सुनी है। मणिभाई, वात खोटी के साची? *श्रोता: साची बात।* साची बात। क्या करें? हम तो थोड़े में संतुष्ट होना चाहते हैं। यहां तो कह रहे हैं, भैया, तू सम्यग्दर्शन प्राप्त करे ऐसी अभी तेरेमें लायकात है तो तू आगे की बात क्यों सोचता है? अभी की बात नक्की कर न! देखो क्या कहते हैं यहां पर, देखो-देखो, क्या बोल रहे हैं यदि संस्कार नहीं मानें जाये, तो अभी सम्यग्दर्शन तो हुआ नहीं किन्तु ऐसा लगता है कि इस भव में संस्कार डालेंगे तो अगले भव में सम्यग्दर्शन कर सकते हैं। यही हो गया न? अभी हम विभाव करेंगे और उसका फल हमें स्वभावरूप परिणमन हो जाय?

दूसरे पुराणों में संस्कार के कई उदाहरण देखने को मिलते हैं, यह तो उपचार के कथन हैं। ख्याल में आया? क्योंकि यह पुराण यानी क्या हो गया? प्रथमानुयोग। प्रथमानुयोग में ऐसी बातें मिलेंगी; प्रथमानुयोग क्यों, अनेक ग्रंथों में व्यवहार के या उपचार के औपचारिक कथन तो बहुत मिलते हैं और यह जीव पढ़ता है और यह भोला जीव ऐसा मानता है कि ऐसी ही बात सच्ची है। लेकिन जब उसको सत्य बात बतायेंगे उसको तो इग्नोर करता है, दुर्लक्षित करता है और निर्णय नहीं कर पाता है कि कौनसी बात सच्ची है और कौनसी बात झूठी है। इसलिये मैंने यह भी बताया था, जो सत्य महाव्रत पालन करनेवाले ऐसे जो आचार्य समंतभद्र उन्होंने यह बात देवागम स्तोत्र नामक मंगलाचरण में लिखी है। यह कोई तुमने-हमने ऐसे किसीने लिखी हुयी है ऐसी बात नहीं है। क्योंकि उसके मूल में क्या है? सत्य महाव्रत यानी क्या होता है? बिलकुल झूठ नहीं बोलेंगे भैया। क्या बोलते हैं – रत्तीभर भी, तो ही उनका सत्य महाव्रत होगा और उन्होंने यह चार अभावों की बात की है और वह चार अभावों की बात अभी हम सीख रहे हैं।

अभी यह जो कहा न, कमठ का - पार्श्वनाथ का जो प्रकरण है, क्या इसमें भी

संस्कार काम नहीं आये? कौनसे संस्कार काम आये, बताओ आप? एक तो झगड़ता रहा और एक तो माफ़ करता रहा। तो उसके झगड़ने के संस्कार बढ़ गये और इसके माफ़ करने के संस्कार बढ़ गये। कैसा हुआ? और ऐसे में जिसने अपने स्वरूप में गुप्तता की, स्वरूप में लीनता की, उसने मोक्ष पा लिया। और दूसरा? देखो भैया, हम तो कहीं से कहीं जोड़ देते हैं, उसका एक दूसरे से कोई संबंध नहीं है। ऐसे आगम में कथन आते हैं व्यवहार के-उपचार के, उससे हम मिस्लीड नहीं होने चाहिये। इसके लिये गुरुदेवश्री की बात तो हमें बहुत बार याद आती है, ओछामां ओछा बे चार कलाक तो स्वाध्याय जोईअे। चार छह बोलते थे, अभी मुझे याद नहीं है वह, चार तो पक्का याद है। समझ गये? कहां गयी बहनें? हां, बोलो बहन, क्या बोलते थे? चार, छह कलाक स्वाध्याय जोईअे छे बोलते थे? कितना बोलते थे? *श्रोता: बे-चार कलाक।* बे-चार कलाक, चलो चार तो पक्का है। बे होवे या छह होवे, जाने दो न! बे-चार कलाक स्वाध्याय जोईअे।

अरे! हम दो-चार मिनट स्वाध्याय नहीं करते। हमें एक भाईसाहब मिले थे, यहां का कोई नहीं हो! नहीं तो मैंने हाथ किया तो आप उसको देखेंगे, ऐसा नहीं है। बोले हमने व्रत लिया है साहब! क्या व्रत लिया है? हम किसीके पास गये थे, उन्होंने कहा कि आप स्वाध्याय का व्रत लो। सत्य बात है, तो व्रत लिया। क्या व्रत लिया साहब? उन्होंने बोला कम से कम एक घंटा स्वाध्याय करो। साहब हमें पॉसिबल नहीं होगा। आख़िर हम दोनों ने मांडवली करी। अच्छा, कम से कम दस मिनट तो स्वाध्याय करो। तो हम तो बिलकुल, ऐसे नहा-धोकर, दर्शन वगैरह करके पलाटी मारकर बैठते हैं। किसके सामने? बोले, घड़ी के सामने। दस मिनट कब होते हैं यह हम कम से कम दस बार तो देखते हैं। बोले। हो गया स्वाध्याय! यह स्वाध्याय होता है? यानी दस मिनट पन्ने पढ़ लेना, वह स्वाध्याय है? अरे! स्वाध्याय तो स्व की तरफ़ झुकते हुये, स्व को समझते हुये पढ़ना, वह स्वाध्याय है और वास्तविक स्वाध्याय तो स्वरूप में लीनता वह स्वाध्याय है। वह तो हमें हो नहीं रहा है तो कम से कम शास्त्र में जो लिखा है, वह मेरे लिये लिखा है और मेरे बारे में लिखा है, इतना तो समझ। लेकिन हम तो किस बात की पूर्ती करने के लिये – हां, हो गया स्वाध्याय। ख्याल में आया? चलो! अब यह तो निपट गया है। और कुछ प्रश्न रह गया? नहीं न!

अभी तक हमने ये दो अभाव देखे – प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव। यह तो क्या बात

होती है कि हम जितना अधिक जल्दी-जल्दी आगे बढ़ेंगे, तो बातें खुलती जायेगी। देखो तीसरे का नाम क्या देखा था हमने? अन्योन्याभाव। यह अन्य, अन्य इनका आपस में जो अभाव है, उसको अन्योन्याभाव कहते हैं। लेकिन एक बात ध्यान में रखना यह अन्योन्याभाव भी पर्यायों में ही लगता है। अभी तक हमने क्या देखा था? एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का उसी द्रव्य की भूतकालीन पर्याय में जो अभाव है, वह प्रागभाव है और भविष्यकालीन पर्याय में जो अभाव है वह प्रध्वंसाभाव है। पर्याय में ही अभाव लगाया था, लेकिन एक ही द्रव्य की वर्तमान पर्याय का भूतकालीन और भविष्यकालीन पर्यायों में अभाव लगाया था। अभी जो हम यह अन्योन्याभाव लगा रहे हैं, वह दो भिन्न द्रव्यों की वर्तमान पर्याय में लगा रहे हैं। अभी तक तो एक द्रव्य की ही भिन्न-भिन्न पर्यायों में लग रहा था यह देखा। यहां, पुद्गलद्रव्य के – कौनसा द्रव्य? *श्रोता: पुद्गल।* अन्य कोई भी द्रव्य की यहां बात नहीं हो रही है। तो कह रहे हैं, पुद्गलद्रव्य की, हां, कौनसे? **एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में जो अभाव है, वह अन्योन्याभाव है।**

देखो, आप के पास वह पर्चा है न? देख लो, देख लो, पढ़ लेते हैं। उसमें है न? यह है पेज नंबर २२, क्वेश्चन नंबर १२१। देखो, क्या कह रहे हैं? **एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का अन्य पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में अभाव,** उसका नाम क्या है? हां जी? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव। तो मैंने क्या बताया? यह अन्योन्याभाव किसमें लगता है? हां, जोर से बोलना भाई! *श्रोता: दो द्रव्यों में।* दो द्रव्यों में। क्या यह बात सही है, अनिलजी? *श्रोता: सब द्रव्यों में।* नहीं, एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का, दूसरे पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में अभाव। एक धर्मद्रव्य की वर्तमान पर्याय का, अधर्मद्रव्य की वर्तमान पर्याय में अभाव होगा कि नहीं? *श्रोता: होगा।* तो उसका नाम क्या है? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* उसका नाम अन्योन्याभाव नहीं है। यह पुद्गलद्रव्य में ही लगता है, यह मैंने चार बार बताया और यह भिन्न-भिन्न पुद्गलद्रव्यों की वर्तमान पर्याय की बात है और पहले दो जो हमने अभाव देखे, वह किसमें लगते हैं? एक ही द्रव्य की वर्तमान पर्याय का भूतकालीन पर्याय में और एक ही द्रव्य की वर्तमान पर्याय का भविष्यकालीन पर्याय में। यानी एक ही द्रव्य में, वर्तमान और भूत-भविष्य की पर्यायों में अभाव लगा रहे थे।

यहां दो भिन्न-भिन्न पुद्गलद्रव्यों की वर्तमान पर्याय का यानी एक की वर्तमान पर्याय का, दूसरे की वर्तमान पर्याय में अभाव है। यानी क्या बताना चाहते हैं? देखो-देखो! अभी हम क्या करेंगे? थोड़ेसे उदाहरण के माध्यम से इसको समझने की कोशिश करेंगे। यह जो आपके हाथ में पेन है न? तो क्या कर रहे हैं उससे आप? *श्रोता: लिखते हैं।* लिखते हैं। किस पर लिखते हैं? *श्रोता: कागज़ पर लिखते हैं।* कागज़ पर लिखते हैं। तो कौन लिखता है? *श्रोता: मैं लिखता हूं।* मैं लिखता हूं। बहुत अच्छा। आप क्या कहते हैं? *श्रोता: पुद्गल लिखता है।* अच्छा! वे बोलते हैं, पुद्गल लिखता है। यह कौनसा पुद्गल लिखता है। हाथ लिखता है, पेन लिखता है, अंदर की स्याही लिखती है या कागज़ लिखता है? पुद्गल है न सब। देखो, हमने क्या माना? यह हाथ जो है, हाथ में क़लम हमने पकड़ा है, क़लम के अंदर स्याही है और उस स्याही से कागज़ पर हम लिखते हैं और वह लिखना कौन करता है? मैं, मैं, मैं – यह क्या करता है? बकरी जैसा मैं, मैं, मैं करता है क्योंकि उसको वस्तु के स्वरूप का पता नहीं है। ख्याल में आया?

आप नाराज़ नहीं होना, मेरी स्टाइल ही ऐसी है, हां? क्योंकि मुझे डबल काम करना पड़ता है। एक तो सिखाना भी पड़े और सब को जागते रखने के लिये भी कोशिश करें। देखो, हमारे एक ऐसे पंडितजी थे, वे हमेशा बोलते थे, अरे भाई! पड़ोसी का ध्यान रखो। यानी क्या? पड़ोस में कोई सोता हो तो उसको जगाओ। ये पंडित अलवर के हैं न? क्या नाम है उनका? *श्रोता: पं. किशनचंदजी।* हां पं. किशनचंदजी, इनका यह फेवरिट वाक्य है। भाई, पड़ोसी का ध्यान रखो ऐसा बोलेंगे तो समझ लेना पड़ोसी सो रहा है। मैं कहता हूं हमारी क़िस्मत ही इतनी अच्छी है कि हमें ऐसे एक से एक बढ़कर पंडित मिले और सबसे हमने थोड़ा-थोड़ा कुछ सीख लिया। तो मैं तो दूसरों को तो नहीं बोलता हूं कि आप बाजूवाले को जगाओ क्योंकि हमने एक ही मंत्र दिया है न भाई पहले! कौनसा दिया था साहब? नेमिचंदजी? कौनसा तावीज दिया था? *श्रोता: एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं कर सकता।* तो आप बाजूवाले को उठा सकते हैं कि नहीं?

देखो-देखो! हमने क्या देखा, हाथ और क़लम, हाथ यह क्या है? पुद्गलद्रव्य है। क़लम क्या है? *श्रोता: पुद्गलद्रव्य है।* तो हाथरूप जो पुद्गल है, उसकी वर्तमान पर्याय में और क़लमरूप पुद्गल की वर्तमान पर्याय में क्या है? अभाव है। उस अभाव का नाम क्या

है? अन्योन्याभाव है। वह क़लम है और उसमें जो स्याही है, उन दोनों में कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव है।* अन्योन्याभाव है और स्याही और जो कागज़, उनमें कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव है।* इतना सारा होते हुये भी, अभी मेरेमें और हाथ में क्या है? वह बात अभी नहीं बताऊंगा; थोडे टाइम से बताऊंगा। तो जब एक वस्तु का दूसरी वस्तुओं में नहीं होना इसीको हमने अभाव कहा है, तो मैंने हाथ से, स्याही से, पेपर पर लिखा, यह अगर हमारी मान्यता होगी, तो क्या हम सम्यग्दर्शन के काबिल हैं? बोलो भाई! आप वस्तुस्वरूप को जानना चाहते थे न भाई? यह गृहीत मिथ्यात्व है! हो। मैं पर का कुछ कर सकता हूं, हम एक-एक जो विषय लेंगे, इस हर विषय से मैं आपको यह बताना चाहूंगा कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कतई कुछ नहीं कर सकता है। हमें तो वही देखना है और जो हम देख रहे हैं, उसको हम प्रूव्ह करते-करते आगे बढ़ेंगे। गुजराती में बोलते हैं, आ कांई पोपाबाईनुं राज नथी। इसका अर्थ मैं आज तक नहीं समझा। बोलो साहब, क्या होता है? *श्रोता: गुरुदेवश्री खुद बोलता हता आ कांई पोपाबाईनुं राज नथी।* बेन, अमे तो गुरुदेवश्रीथी ज सीख्या छीअे, अमे क्यां पोतानुं कहीअे छीअे? लेकिन उनके एक-एक शब्द जो कानों में गूंजते हैं, छाती में – हमारे हृदय में जो बैठे हैं, वे कहीं न कहीं बाहर आये बिना नहीं रहते हैं। अरे! हमारे रोम-रोम में कानजीस्वामी बैठे हैं लेकिन कानजीस्वामी के रोम-रोम में जिनेन्द्र भगवान की वाणी बैठी है, और वह वाणी हम तक आयी है।

यह कोई अपने घर की बात नहीं बता रहे हैं हम। यह जो दिव्यध्वनि में जो बात निकली थी, जो उनके पास आयी, जो हमारे धर्म में, हमारे शास्त्रों में जो बात लिखी है, वह बाहर के आदमी ने आकर हमको सिखायी है और उसको झेलकर यहां हम बता रहे हैं आपको। बाहर का आदमी यानी वे पहले दिगंबर थोड़े ही थे? वे तो मुंहपट्टी यानी स्थानकवासी संप्रदाय के थे। लेकिन उस आदमी ने ऐसा कोई अद्‌भुत कार्य किया है कि आज के ज़माने में कोई ऐसा मिले नहीं आप को! (*श्रोता तालियाँ बजाते हैं।*) रहने दो। भाई! हम तो कहते हैं, वे जो महान आत्मा थे, उनके लिये केवल ताली बजाने से अपनी जबाबदारी ख़त्म नहीं होती है। उन्होंने जो मार्ग हमें दिखाया है, उस मार्ग पर हम चलकर दिखायें, उसके अनुसार हम अनुसरण करें, तो हमने उनके लिये ताली बजायी है क्योंकि यहां तो यह बताने जा रहा हूं कि तुम ताली बजा नहीं सकते और ताली बजाने से आवाज़ नहीं निकलती है, ऐसी अनंत स्वतंत्रता इस विश्व में है। यह हाथ जो है, यह दूसरे हाथ को स्पर्श तक नहीं करता

है। बोलो, यह बात कौन मानने को तैयार है? दो मिनट में आपको मैं मनवाकर दिखाऊंगा, मनवाकर बताऊंगा। दो मिनट यानी? आठ बजे तक। भाई, यह बात जो है न, यह बात हमारे गले उतरनी चाहिये और गले से उतरेगी तो हृदय में जायेगी। कोई भावनावश होकर मत सुनना, दिल और दिमाग से काम लेना। ख्याल में आया?

देखो अभी मैं इसी टॉपिक को और अन्य तरह से आपको समझाना चाहता हूं। यहां देखो, हमने चार बातें बतायी हैं। यह अभी बात आपको नयी समझाने की आवश्यकता नहीं है, जिनको मालूम नहीं है, वह मुझे माफ़ करे; लेकिन मुझे आगे बढ़ना है कि जब हम गुण की परिभाषा देखते हैं कि गुण की परिभाषा तो ऐसी है कि जो द्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्था में रहता है, उसको गुण कहते हैं। यानी जो गुण की परिभाषा है वह चार बातें सिखाती है हमें। जो द्रव्य के यानी वहां कोई विशिष्ट द्रव्य, पर्टिक्युलर द्रव्य है, वह बात वहां बतायेंगे; द्रव्य के संपूर्ण भागों में यानी उस द्रव्य का अपना-अपना क्षेत्र है, वह क्षेत्र की बात बतायेंगे; और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में वह उसका काल बताता है, प्रत्येक द्रव्य का अपना-अपना स्वतंत्र काल है उसे गुण कहते हैं। वह उस भाव हो गया, गुण-स्वभाव हो गया, तो प्रत्येक द्रव्य में अपना-अपना स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभाव होता है।

जिसको आता है, वह फट से उत्तर देवें। यह जीव जो है, वह कौनसा द्रव्य है, भाई, कौन बतायेगा? जीव है वह कौनसा द्रव्य है? अरे! बोलो-बोलो। *श्रोता: जीवद्रव्य।* जीवद्रव्य। और उसका क्षेत्र कितना है? *श्रोता: असंख्यातप्रदेशी।* असंख्यातप्रदेशी। उसका काल कितना है? *श्रोता: अनादिअनंत।* अनादिअनंत और उसका भाव है ज्ञान-दर्शन। समझ लो, अभी हम अधिक डिटेल में नहीं जाते हैं। ज्ञान-दर्शन वह उसका स्वभाव है और पुद्‌गल जो है, उसका द्रव्य कौनसा है भाई? बोलो नलिन। *श्रोता: पुद्‌गलद्रव्य।* पुद्‌गलद्रव्य है। परमाणु कितना प्रदेशी है? *श्रोता: एकप्रदेशी।* एकप्रदेशी है। उसका काल? *श्रोता: अनादिअनंत।* अनादिअनंत। और उसका भाव क्या है? स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, वगैरह, वगैरह। तो हमने देखा, दो द्रव्यों में दोनों द्रव्य भिन्न-भिन्न हैं, दोनों के क्षेत्र भिन्न-भिन्न हैं, दोनों का काल भी भिन्न-भिन्न हैं! क्या? अरे! दोनों ही अनादिकाल से हैं, अनंतकाल तक रहनेवाले हैं; लेकिन अपने-अपने द्रव्य का अपना-अपना काल है। यह कैसे हम समझेंगे साहब? यह हमें समझ में नहीं आ रहा है तो हम आपको बताते हैं।

यहां कोई परीक्षा चल रही है, कोई तीन घंटे का पेपर चल रहा हो। तो हर विद्यार्थी कितने टाइम में वह पेपर लिखेगा? तीन घंटे में लिखेगा। तो हर एक के अपने-अपने तीन घंटे अलग हैं कि नहीं? कि सभीके मिलकर तीन घंटे हैं? वैसे ही, यह द्रव्य का काल भी अनादिअनंत है, वह अपना-अपना प्रत्येक का अलग-अलग है और भाव भी अलग-अलग हैं। यानी दो द्रव्यों में – द्रव्य अलग हैं, क्षेत्र अलग हैं, काल अलग हैं और भाव अलग हैं। यानी दोनों के स्वचतुष्टय भिन्न-भिन्न हैं। स्वचतुष्टय में कौनसी बातें आयी? स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभाव – यह बात नक्की हो गयी। अब यहां ऐसा कहते हैं, यह हाथ जो है न, हाथ क्या है? *श्रोता: पुद्गल।* पुद्गलद्रव्य है, यह तो स्कंध है हो! पहले जरा शांति से सुनना, परमाणु नहीं है। तो इस हाथ में अनंत पुद्गल परमाणु हैं; उनमें से प्रत्येक परमाणु का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव भिन्न-भिन्न है, ख्याल में आया? हम तो पहले बहुत स्थूल बात देख रहे थे – हाथ, पेन, कागज़, स्याही। लेकिन उसमें परमाणु-परमाणु जो हैं, वह एक-एक परमाणु की जो अपनी-अपनी पर्याय है, वह अन्य परमाणु की पर्याय से जुदी है। नहीं समझ में आयी बात?

मणिभाई के चेहरे पर इतना बड़ा प्रश्नचिन्ह है। मैं समझता हूं, कोई बात नहीं। भाईसाहब, हम तो समझने के लिये आये हैं, समझ कर ही वापस लौटेंगे। यहां पर हमारे शरीर पर एक फुंसी होती है, फुंसी समझते हो? फोड़ा। क्या बोलते हैं? *श्रोता: फोड़।* फोड़, चलो न, माथाफोड़ मत करो, समझ जाओ। तो क्या कहा? तो हमें यहां फुंसी हो जाये, वह पीली-पीली हो जाये, पक जाये, तो इधर दुखता है कि नहीं? इधर? इधर तो दुखेगा कि नहीं? हृदय में? नहीं। अरे! उसके बाजू की जो स्किन है, उसको भी हाथ लगावे, तो उधर दर्द नहीं होता। तो यह तुम्हारा शरीर है, वह शरीर का एक पार्ट है, फिर भी बाजूवाला जो पुद्गलद्रव्य है, बाजूवाला जो स्कंध है, बाजूवाला जो परमाणु है, उसमें उसका असर नहीं है। ख्याल में आया? यानी प्रत्येक द्रव्य का यानी यहां तो प्रत्येक परमाणु जो है, उसकी वर्तमान पर्याय जो है, वह दूसरे पुद्गलद्रव्य के वर्तमान पर्याय से जुदी है क्योंकि जिसकी अपने स्वयं में अस्ति है, उसकी पर में नास्ति है। जिसका स्व में सद्भाव है, उसका पर में अभाव है। तो जिसका जिसमें अभाव हो, वह परद्रव्य का कार्य करें यह बात कहां से आयी? क्यों साहब? बात कुछ समझ में आती है? तो क्या देखा हमने? यहां जो हमने देखा, यह तो हमने भिन्न द्रव्यों की बात की।

अब दो पुद्गल परमाणु लेते हैं। तो एक पुद्गल परमाणु का द्रव्य जो है और दूसरे पुद्गल परमाणु का जो द्रव्य है, वह एक है या जुदा-जुदा है? हां जी? *श्रोता: जुदा-जुदा है।* जुदा-जुदा है न? पक्का? क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का अपना स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभाव है। परद्रव्य, परक्षेत्र, परकाल और परभाव में स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभाव ये सारे यानी स्वचतुष्टय हैं वे प्रवेश नहीं करते; न परद्रव्य स्वद्रव्य में प्रवेश कर सकता है; न स्वद्रव्य परद्रव्य में प्रवेश कर सकता है। तो अभी हमने क्या देखा? एक पुद्गल परमाणु जो है, उसका द्रव्य अलग। दूसरा पुद्गल परमाणु है, उसका द्रव्य अलग; दोनों के क्षेत्र अलग-अलग; दोनों के काल अलग-अलग और दोनों के भाव अलग-अलग हैं।

तो अनादिअनंत काल की जो पर्यायें हैं न, उसमें अभी हम केवल वर्तमान पर्याय को लेंगे। उस वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में जो अभाव है, उसको क्या कहा हमने? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव। अभी मैं आपसे पूछता हूं, यह जो शब्द निकल रहे हैं, जो आवाज़ निकल रही है, वह कौनसी वर्गणा का कार्य है? यहां बहनों में कोई उत्तर दें। *श्रोता: भाषावर्गणा।* भाषावर्गणा और यह जो हाथ है यह कौनसी वर्गणा है बहन? *श्रोता: आहारवर्गणा।* आहारवर्गणा। तो आहारवर्गणा और भाषावर्गणा एक-दूसरे का कार्य करेगी कि नहीं? हां बहन, मैं आपसे पूछ रहा हूं। मैंने क्या पूछा? जो आहारवर्गणा है वह आहारवर्गणा, भाषावर्गणा का कार्य करेगी कि नहीं? हां जी, *श्रोता: नहीं करेगी।* तो मैं बोल रहा हूं न? तो बोल कैसे रहा हूं? तो मेरी जीभ है वह दांत को जाकर टकराती है; यह कंठ है, वह ऐसे-ऐसे ध्रुजता है; ऐसे ये होंठ हैं, जो ऊपर-नीचे होते हैं; जीभ इधर-उधर जाती है। तो यह सारा क्या है? आहारवर्गणा का कार्य हो रहा है।

आवाज कैसे हो रही है? तो यह शरीर के जो कोई अवयव हैं, उनको हिलाने से आवाज़ निकलती है कि नहीं? हां बोलते हैं कि ना बोलते हैं? *श्रोता: हां।* हां? यह देखो, मैंने ताली बजायी। तो यह जो आहारवर्गणा है, उसने भाषावर्गणा का कार्य किया कि नहीं? बोलो अभी, किया कि नहीं? *श्रोता: नहीं किया।* क्यों नहीं किया? *श्रोता: अलग-अलग है।* क्या अलग-अलग है? *श्रोता: द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव।* शाब्बाश! अरे! दोनों में अन्योन्याभाव है। जहां जिसका पर में अभाव है, वह आहारवर्गणा भाषावर्गणा का कार्य करे, यह बात

कहां से लायी? यह मिथ्यात्व की उपज है, खोटी मान्यता की उपज है। ख्याल में आया? तो मैंने जो अभी आपको फ़रमाया था कि दो मिनट में आपको समझाता हूं, अभी आप ही बोलना। गुरुदेवश्री की जय बोलने से, उनका कल्याण होना है या अपना कल्याण होना है? माफ़ करना हो, मैं गुरुदेवश्री के फोटो के नीचे बैठकर यह बात कह रहा हूं और उन्होंने जो हमें बात सिखायी है, वह मैं आप को बता रहा हूं। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि आप गुरुदेवश्री की जय मत बोलो, लेकिन मान्यता में तो यह रखो कि केवल जय बोलने से अपनी रिस्पॉन्सिबिलिटि ख़त्म नहीं होती है। चलो फिर, दिन के तेईस घंटे और पचपन मिनट इधर-उधर घूमने जायें। अरे! उन्होंने जो बात बोली है वैसा हम हमारे में परिणमन करते हैं, तो हमारी गुरुदेवश्री की जय बोलने की बात सच्ची हुयी। मैं उनका अपमान नहीं कर रहा हूं। मैं उनको नीचा दिखाना नहीं चाहता हूं, लेकिन उन्होंने जो बात बतायी है, वह आपको समझाना चाहता हूं और सौभाग्य से मुझे यहां जगह मिली है। ख्याल में आया न? और मैं यह मेरी मन की बात आपके सामने रख रहा हूं।

मैं जानता हूं बहुतों को यह पसंद नहीं आयेगी लेकिन उनको पसंद नहीं आयेगी इसलिये मैं सत्य बोलना नहीं छोडूंगा। क्योंकि मुझे मालूम है, सत्य बोलनेवाले को हाथी के पैर के नीचे कुचल डाला था। मालूम है आपको? हां जी? *श्रोता: पंडित टोडरमलजी।* पंडित टोडरमलजी। हमें भी ऐसे सत्य बात बोलते-बोलते मरण आये तो भी उसका कोई भय नहीं है। देखो! मैं फिर से कहता हूं हमें गुरुदेवश्री ने जो बातें सिखायी हैं, वे बातें सीखकर हम उसरूप परिणमन करें, तो हमारा, उनके बारे में जय बोलना बहुत सार्थक है। नहीं तो यह केवल देखादेखी औपचारिक बात हो गयी कि गुरुदेवश्री का नाम आया और आपने चालू किया ताली बजाना। मैं ताली बजाने का निषेध नहीं कर रहा हूं, उससे भी एक कदम आगे बढ़कर हमें वास्तविकता का भान होना चाहिये। इसलिये यहां जो अन्योन्याभाव जो हम सीख रहे हैं, यहां तो हम आज तक ऐसा मानते थे कि मेरे जैसा सुंदर अक्षर कोई नहीं निकालता है, मेरी जैसी अच्छी रोटी कोई नहीं बनाता है, मेरे जैसे फर्स्ट क्लास सब्जी कोई नहीं बनाता है।

यह हमारा सोहम है कि गया? सोहम है? वह उसकी नानी को बोलता है, तुम इतना अच्छा खाना बनाती हो, एक होटल क्यों नहीं खोलती? यानी उसको इतना अच्छा लगता है

और उसकी नानी भी बोलती है कि देखो, मेरे जैसा खाना बनानेवाला कोई है ही नहीं। वह मानती नहीं है, मैं भी जानता हूं; लेकिन अगर कोई हमारी स्तुति करे और हम समझें कि हां-हां यह बराबर है, तो हम धोख़े में है भाई! ख्याल में आया न? यहां तो कहते हैं, बाई रोटी ही नहीं बना सकती क्योंकि जो हाथ है और वह जो लोई है, वह जो अडनिया-पाटला है, वह जो जमीन है, इनका आपस में अन्योन्याभाव है। जिसका दूसरे में अभाव हो और वह दूसरे का कार्य कर दे यह बात तीन काल में शक्य नहीं है।

मैं एक प्रश्न पूछता हूं आपको। ये चार दीवारें जो हैं, उनके ऊपर जो छत है, वह दीवारों के कारण से टिका हुआ है कि नहीं? हां? *श्रोता: नहीं।* अरे जोर से बोलो। *श्रोता: नहीं।* सब पागल हो गये कि नहीं, बोलो अभी। इतने बड़े-बड़े इंजिनिअर आये हैं। अरे! वह इंजिनिअर को यह पता नहीं है, ये चार दीवारें और छत इनमें कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* देखा? मैंने बताया न, एक-एक बात हम सीख जायेंगे, तो छक्के छूट जायेंगे हमारे। हमें क्या लघु सिद्धान्त प्रवेशिका सिखाने आनेवाला है – कौन है वह उल्लू का पठ्ठा? मैं ही हूं वह उल्लू का पठ्ठा! सच बात कहता हूं भाई। आज तो इसकी क़ीमत, कहां गया वह पुस्तक? इस पुस्तक की क़ीमत चार रुपया है। जिस ज़माने में हम यह लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका सीखे थे, उस समय उसकी क़ीमत केवल चार आना थी, चार आना यानी आज के पच्चीस पैसे। तो चार आने को पुराने ज़माने में क्या कहते थे मालूम है? पावली। पावली समझते हैं? जो नहीं समझता उसे पावली कम है ऐसा कहते थे। तो हम जब यह पढ़कर सीखें और हमें बहुत बड़ा चान्स दिया गया कि आप अन्यत्र जाकर अभी सिखाना चालू करो, तो मैं जहां-जहां जाता हूं, वहां लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका ही पढ़ाता हूं। आज मैं इ. स. १९८० से पढ़ाते आया हूं, कितने साल हो गये, गिन लेना भैया और मैंने मैं जहां जाऊं – कहां? अमेरिका में भी जाऊं तो मैंने, दुबई में भी जाऊं तो मैंने, लंदन में भी जाऊं तो मैंने लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका ही सिखायी है क्योंकि नींव के जो पत्थर होते हैं, वह किसीको दिखते नहीं, ऊपर की इमारत दिखती है। लेकिन वह इमारत जो टिकी है, वह नींव के पत्थर पर टिकी है, ऐसा तुम मानते हो तो वह बात गलत है, क्योंकि नींव के पत्थर में और इमारत में? *श्रोता: अन्योन्याभाव है।* ख्याल में आया?

तो हमने जो देखा, यह अन्योन्याभाव अगर हमारे ख्याल में आ जाये, तो कितनी

बड़ी हमारी भ्रामक कल्पनायें छूट जाती हैं। अगर किसी बाहर के आदमी को जाकर आप बताना, तुम जो जमीन पर चल रहे हो तो तुम्हारे पांव जमीन को स्पर्श ही नहीं करते। हां! तो सारे चमार तुम्हारे विरुद्ध हो जायेंगे। क्यों, साहब? अरे! हमारे जूते बिकने बंद हो जायेंगे भाई। लेकिन बताओ क्या हमारे पैर जमीन को स्पर्श करते हैं? यह जो आप लोग जो चटाई पर बैठे हैं तो चटाई को आप स्पर्श भी नहीं करते क्योंकि यह जो शरीर है, उस शरीर में और चटाई में... *श्रोता: अन्योन्याभाव है।* अन्योन्याभाव है। आप में और शरीर में जो अभाव है, वह बाद में बतायेंगे। तो यहां बता रहे हैं, यह जो टेबल है, वह टेबल जमीन पर टिका नहीं है; टेबल के ऊपर जो ट्रायपॉड है, वह ट्रायपॉड टेबल के आधार से नहीं है; ट्रायपॉड के आधार से वह कॅमेरा नहीं है। तो फिर क्यों लाते हो इतनी सारी बातें?

देखो भाई, यह एक-एक जो सत्य वस्तु है, हमारे दिमाग़ में अभी तक नहीं आयी हो, और अभी आयी हो, तो हम उसके ऊपर विचार करें और यह जो हम बता रहे हैं आपको, वह क्या वास्तविकता है या कोई मेस्मरिझम है? मेस्मरिझम समझते हैं? हिप्नॉटिझम। हमको लोग बोलते हैं कि तुम बात-बात में लोगों को चकमा देते हो और वे आप जो कहें, वे मानना चालू करते हैं। (माइक से आवाज़ आनी बंद हो गयी...) देखो, मैंने भाषावर्गणा की आवाज़ बंद कर दी कि नहीं? यह जो बातें हम सीखते हैं न भाई, कदम-कदम पर उसको हम इस्तेमाल करें। देखो, एक वास्तविकता बताता हूं जो मैंने आपको लास्ट टाइम भी बतायी थी। हमने पुणे में दो साल में कम से कम आठ शिबिर लगाये थे और वहां पर भी हमने यह बात कही। वहां तो हमने निमित्त से कार्य नहीं होता है, ऐसी बात बतायी। तो यहां मैं दूसरी तरह से बताता हूं। दवा खाने से रोग ठीक होता है कि नहीं? *श्रोता: नहीं।* हां? *श्रोता: नहीं।* क्यों? क्यों? अरे, डॉक्टर लोग चिल्लायेंगे यहां के। तो कहते हैं, दवाइयां खाने से, दवाखाने से नहीं, रोग मिटता है कि नहीं? ऐसा भोले लोग समझते हैं। अभी यहां चाहे जितना बड़बड़ायें, लेकिन बीमार पड़ें तो डॉक्टर के पास जाते हैं। भाई, वास्तविकता तो यह है, यह जो शरीर है, वह जो पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय – वहां तो अनेक परमाणु हैं, हो! हम उस स्कंध को एक पुद्गलद्रव्य मानते हैं। तो उसमें और जो दवा है, जो टिकिया है आपकी, उसमें अन्योन्याभाव है।

एक का दूसरे में अभाव होगा, तो क्या होगा? तो वह टिकिया शरीर को बराबर

करे? तो हमें पुण्य करना चाहिये। क्यों साहब हमें संयोग बहुत अच्छे मिलेंगे। तो पुण्य करना चाहिये, यानी पुण्यबंध करना चाहिये। तो हम क्या बांध रहे हैं? कर्म और संयोग क्या है? पैसा है, मोटरकार है, बंगले हैं, यह सारा क्या है? आहारवर्गणा है। तो कार्माणवर्गणा आहारवर्गणा का कार्य करती है कि नहीं? क्यों साहब? यह अभी जो प्रश्न पूछा न आपने? उसका उत्तर इसमें है। यह किसीने पूछा न? क्योंकि बात ऐसी है न, हमें आपको समझाने के लिये कुछ फूटिंग्ज तो चाहिये; कुछ बेस तो चाहिये कि जिसके आधार से हम आपको बात समझा पायेंगे। अभी आपको अन्योन्याभाव ही मालूम नहीं, अत्यंताभाव ही मालूम नहीं, तो हम उसकी बात ही नहीं कर सकते। करने से न उसमें आपका कोई समाधान-फ़ायदा होनेवाला है, न आप कुछ समझनेवाले हो। अभी हम कहेंगे कि आप कुर्सी पर बैठे हैं ऐसा आप समझते हैं, लेकिन कुर्सी को उस शरीर ने – आपने तो नहीं ही नहीं लेकिन उस शरीर ने भी स्पर्श नहीं किया है।

तो कोई नया आदमी अभी आया होगा तो मानेगा यह क्या पागल जैसा बोल रहा है और सब लोग उसको हां, हां, हां, हां, कर रहे हैं। तो ये भी मेस्मराइज्ड हो गये – हिप्नोटाइज्ड हो गये। सच कहना भाईसाहब! आप हिप्नोटाइज्ड हो गये क्या? हां? तो मेरे कहने से आपके ज्ञान में अधिकता हुयी कि नहीं? बोलो त्रिशला। *श्रोता: नहीं।* नहीं? तो जो ज्ञान में बढ़ोतरी हुयी, वह किस कारण हुयी? हां? *श्रोता: अपने कारण हुयी। खुद के कारण हुयी।* क्या बोलते हैं? *श्रोता: अपने कारण हुयी। खुद के कारण हुयी।* कोई बात नहीं। तुम क्या बोलते हैं? *श्रोता: ज्ञान गुण के कारण हुयी।* अपने ज्ञान गुण के कारण। बहुत अच्छा! इन्होंने सुना, मैंने नहीं सुना। ख्याल में आया? देखो, यह ज्ञान गुण का परिणमन ज्ञान गुण करेगा। यह भाषावर्गणा है न! वाणी है, वह वाणी ज्ञान गुण का कार्य करेगी? ख्याल में आया न? दोनों अलग-अलग द्रव्य हैं, इसतरह से अभी हमने अन्योन्याभाव को देखने की कोशिश की और भी विशेष बात और होगी, अगले पीरिअड में।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

४२. अत्यंताभाव, प्रश्नोत्तर

गये दो-तीन लेक्चर्स से इस विश्व में जो अभाव नामक वस्तु है; यानी अभाव है उसकी हम चर्चा कर रहे हैं; यानी जो है नहीं उसकी चर्चा नहीं है। जो है, उसकी चर्चा हो रही है और वह क्या है? तो कहते हैं, अभाव है और उस अभाव का यहां वर्णन हो रहा है। उसकी हम बात देख रहे हैं। देखो भाई, जब हमने यह देखा है कि प्रत्येक द्रव्य का अपना स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभाव जुदा-जुदा है, अलग-अलग है यानी इसका अर्थ क्या हो गया? प्रत्येक द्रव्य का अस्तित्व अपने में है, पर में उसका नास्तित्व है। यानी मेरी अस्ति मेरेमें है, मेरी अस्ति पर में नहीं है। पर की अस्ति पर में है, पर की नास्ति मेरेमें है। यानी यह जो अस्ति है और यह जो नास्ति है, वे दोनों एक ही पर्याय पर अथवा एक ही द्रव्य पर लगते हैं। ख्याल में आया? और अगर हम अलग तरीके से उसका इस्तेमाल करते हैं तो बात गलत साबित होती है।

देखो, अभी तक हमने अन्योन्याभाव देखा था। उसके पहले प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को भी हमने देखा था। तो यह बात निश्चित हो गयी है कि यहां द्रव्य में तो ठीक, पर्याय-पर्याय में स्वतंत्रता है और उस स्वतंत्रता का हम स्वरूप जानकर अपने में अगर कोई भ्रान्ति है, मिथ्यामान्यता मौजूद है, तो उसको हम स्वयं ही दूर करें और वह दूर करने का इलाज़ एक ही है कि वस्तुस्वरूप का सही ज्ञान हमें हो जाये। ज्ञान होते ही श्रद्धान हो जायेगा और श्रद्धान और ज्ञान होते ही आचरण हो जायेगा। देखो, मैं आपको एक काल्पनिक उदाहरण से एक बात सिद्ध करना चाहता हूं।

क्या हो गया कि हमें यहां लेक्चर करना था और उसकी व्हिडिओ शूटिंग भी करनी थी। तो हमें यह पर्दा लगाना था। तो हमने माणिकचंदजी को कहा भैया वह बाहर देखो, वहां एक रस्सा पड़ा हुआ है। वह जाड़ा ऐसा चाहिये, पतलावाला नहीं चाहिये। वह जाड़ा रस्सा उधर पड़ा है वह लेकर आना। हां, मुझे मालूम है। मैं तो इधर दिन-रात काम करता हूं न? नहीं, पर उधर बहुत लकड़ी वगैरह पड़ी हैं, तो उसके उस ओर है। हां-हां, मुझे मालूम है। वे यहां से बाहर गये और स्टेअर केस उतर कर नीचे गये, इतने में... देवलाली है न? कब लाइट जावे उसका कोई भरोसा नहीं। तो लाइट गयी। लेकिन वे इतने एक्स्पर्ट

हैं, दिन-रात काम करते हैं, उनको तो मालूम था। वहां से एक रस्सा उन्होंने उठाया, और लेकर आये, और यहां हॉल में आये और बोले पंडितजी यह लो और इतने में क्या हुआ? *श्रोता: लाइट आ गयी।* लाइट आ गयी। यह देखो, प्रफुल्लभाई भी थे हो! माणिकचंदजी ने ऐसा हाथ उठाया और देखा तो हाथ में क्या था? हां, साहब? नाग था, काला! तो सत्य का ज्ञान हुआ और श्रद्धान भी हुआ कि यह तो नाग है। तो मैं आपसे पूछता हूं, वह कितने घंटे के बाद उसको छोड़ेंगे? हां, सवाईभाई क्या कहते हैं आप? *श्रोता: तुरंत।* तुरंत? वैसे ही, जिनवाणी में बतायी गयी जो सत्य बात है, उसका हमें सही ज्ञान हो जाये और सही श्रद्धान हो जाये तो आचरण भी यानी स्वरूप में स्थिरता इमीजिएट होगी और जो हमारी मिथ्यामान्यता, मिथ्याज्ञान और मिथ्याआचरण चल रहा था, वह क्षणभर में मिट जायेगा।

लेकिन हम ऐसे मिट्टी के बने हुये हैं, जो अनादि से बातें हमने मान कर रखी हैं, उनको हम छोड़ने के लिये कतई तैयार नहीं हैं। इज्ज़त का सवाल है न? इतने साल से हम यह मानते आये हैं और यह कौन टिकोजीराव आया और हमको सिखाकर गया और हम गल-ढल जायें? क्यों? देखो भाई, यह बात ऐसी है कि हम स्वयं अपने को सुधार सकते हैं। हम स्वयं अपने को बिगाड़ सकते हैं। तो बिगड़ने के तो अनेक रास्ते हैं और सुधरने का तो एक ही रास्ता है। श्रीमद्जी बोलकर गये हैं। क्या बोले हैं हंसाबेन? एक होय त्रण काळमां, परमारथनो पंथ। *श्रोता: जे प्रेरे...* बस, बस, अपने को आगे की जरूरत नहीं। तीन काल में एक ही मार्ग है और वह जिनेन्द्र भगवान ने बताया हुआ जो मोक्षमार्ग है, वही तुम्हें अनंत सुखी करनेवाला मार्ग है और उसे हमें आत्मसात करना है और उसकी शुरुआत तो अपने स्वरूप में लीनता करने से अपने स्व-स्वभाव का अनुभव करने से होनेवाली है। मोक्षमहल की वह प्रथम सीढ़ी है। लेकिन उसके लिये हमें थोड़ी मेहनत करनी पड़ेगी। शास्त्रीय भाषा में बोलना हो, तो पुरुषार्थ करना पड़ेगा। ख्याल में आया? तो यहां पुरुषार्थ क्या है? कि स्वरूप की हमें पहचान करके, स्वरूप का निर्णय करके, स्वरूप में लीन होना, यही पुरुषार्थ करना है। ख्याल में आया?

तो इसके लिये यह बात हम सीख़ रहे हैं चार अभाव की। तो इसमें से ये तीन अभाव तो आपके ज्ञान में आये होंगे, ऐसा समझकर, क्यों? आये हैं कि नहीं? अरे! कोई हां तो बोलो भाई! *श्रोता: हां।* मेहरबानी! हम आगे बढ़ेंगे। अभी हम चौथे अत्यंताभाव को देखेंगे।

यह कौनसे पेज पर था? *श्रोता: २३।* २३, अच्छा, यह क्या कहते हैं? अत्यंत अभाव किसे कहते हैं? तो उसका उत्तर है, **एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य में त्रिकाल अभाव है, उसे अत्यंताभाव कह रहे हैं।** यह जो अभाव है, वह किसमें लग रहा है? हां, बोलो-बोलो। *श्रोता: दो द्रव्यों में।* किसने बताया? जयश्रीताई ने? क्या बताया? दो द्रव्यों में। अभी तक हमने कितने अभाव देखे थे? *श्रोता: तीन।* और अभी? *श्रोता: चौथा।* चौथा।

तो ये चार अभाव जो हैं, ये चारों ही अभाव किसमें-किसमें लगेंगे? कौन बतायेगा? निखिलभाई, आप बतायेंगे? हां, अनिलजी? *श्रोता: प्रागभाव तो लगेगा एक द्रव्य की पूर्व पर्याय में।* हां। यानी आपको बताना है, पहला जो अभाव-प्रागभाव है, वह पर्याय में लगेगा। दूसरा, प्रध्वंसाभाव वह भी? *श्रोता: पर्याय में लगेगा।* पर्याय में लगेगा। तीसरा? *श्रोता: पर्याय में।* पर्याय में लगेगा और चौथा? *श्रोता: द्रव्य में लगेगा।* द्रव्य में लगेगा। यानी पहले तीन अभाव जो हमने देखे हैं, वे पर्याय में लगते हैं। अब किस पर्याय में, कैसी पर्याय में, वह तो हमने दस बार देखा है। लेकिन तीन अभाव जो हैं, वे पर्याय में लगते हैं, और चौथा अभाव है वह द्रव्य में लगता है।

विश्व में जाति अपेक्षा से कितने द्रव्य हैं? भाई तमे कहेशो? व्हाइट शर्ट, लास्ट पर्सन। हां। विश्व में जाति अपेक्षा से द्रव्य कितने हैं, आप जानते हैं? कोई बात नहीं। कम से कम एक है, वह मैं हूं, ऐसा तो बोलो भाई! मैं जीवद्रव्य हूं। उसको भी नकारते हैं। कोई बात नहीं। आप बोलेंगे? हां। *श्रोता: छह।* उंगलियों से ऐसा पांच बताते हो और मुंह से छह बोलते हो। *श्रोता: ख्याल नहीं था।* अच्छा-अच्छा, कोई बात नहीं।

हां, तो छह द्रव्य हैं। तो एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य में अभाव है, उसे अत्यंताभाव कहते हैं। तो यह अत्यंताभाव परस्पर सर्व द्रव्यों में लगेगा। परस्पर यानी हमें सीधी भाषा में समझना है तो इसतरह से कहेंगे कि जीवद्रव्य का पुद्गलद्रव्य में अभाव है, जीवद्रव्य का धर्मद्रव्य में अभाव है, जीवद्रव्य का अधर्मद्रव्य में अभाव है, जीवद्रव्य का कालद्रव्य में अभाव है और जीवद्रव्य का आकाशद्रव्य में अभाव है। तो यह इसीतरह सबमें लेना। पुद्गलद्रव्य का जीव में, पुद्गलद्रव्य का धर्म, अधर्म आदि में; एक जीवद्रव्य का दूसरे जीवद्रव्य में और एक पुद्गल परमाणु का अन्य पुद्गल परमाणु में भी अभाव है। यह सभी द्रव्यों का आपस में जो अभाव है, तो अभाव है यह हम क्यों कह रहे हैं? क्योंकि प्रत्येक

द्रव्य का स्वचतुष्टय भिन्न है। यह स्वचतुष्टय क्या होता है? आप बतायेंगे बहन? स्वचतुष्टय किसको कहना? तुम्हारी बड़ी दीदी किधर गयी? हां, बोलो। *श्रोता: स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभाव।* हां, बहुत अच्छा। देखो, उन्होंने क्या बताया? स्वचतुष्टय; चतुष्टय यानी समझे? चार बातें। तो यह चार बातें कौनसी हैं? सुबह में हमने चार बातों का नाम देखा था। क्या बोला था उसको? *श्रोता: चौकड़ी।* चाण्डाल चौकड़ी! चौकड़ी बोला था। अभी यहां चतुष्टय बोल रहे हैं अर्थ तो एक ही है, हां बिलकुल। चार बातें हैं न? हां, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव; यह प्रत्येक द्रव्य का अपना-अपना स्वचतुष्टय, स्वचतुष्टय कहने से अपना द्रव्य, अपना क्षेत्र, अपना काल और अपना भाव। हमने देखा था कि एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य में अभाव होना, वह क्या है? अत्यंताभाव है। यानी यह क्या बताता है? यह जीवद्रव्य जो है, वह पुद्‌गलद्रव्य में है नहीं। जीवद्रव्य अपने द्रव्य में है, पुद्‌गलद्रव्य में नहीं है क्योंकि दोनों में अत्यंत अभाव है।

कोई इंजिनिअर ऐसा मानता है कि मैंने यह जो बाजूवाली बिल्डिंग है न, जिसका अभी कन्स्ट्रक्शन हो रहा है, वहां एक ईंट के ऊपर दूसरी ईंट, दूसरी ईंट के ऊपर तीसरी ईंट, ऐसा एक ईंट के उपर ईंट रख़ते हुये मैंने उस बिल्डिंग को ऐसे मज़बूत खड़ी की है। कौनसा सीमेंट वापरा है? *श्रोता: अम्बुजा।* अच्छा, अम्बुजा। अपना क्या जाता है? अम्बुजा सीमेंट वापर के हमने किया है। तो यहां तो कहते हैं, भैया... इंजिनिअर साहब से हम पूछते हैं, तू कौनसा द्रव्य है? बोले, अरे! मैं जीवद्रव्य हूं और तूने किसका काम किया? ईंट का काम किया? सीमेंट का काम किया? काहे का काम किया? वे तो पुद्‌गलद्रव्य हैं। तेरे और पुद्‌गलद्रव्य में कोई अभाव है कि नहीं? बोलो, हां है साहब। कौनसा है? अत्यंताभाव है। जहां तेरा सद्‌भाव नहीं है, उसका तू कार्य करे, यह बात कहां से आयी?

तो दूसरे इंजिनिअर खड़े हो जाते हैं। बोलते हैं, साहब हमारा तो इलेक्ट्रिक का काम होता है, हमारे इधर से इलेक्ट्रिक कनेक्शन देवें, तो उधर तक पहुंच जाता है, तो तुम्हारा बल्ब जलता है। यहां तो कहते हैं, जो बल्ब है और जो इलेक्ट्रिसिटी है, जो कुछ इलेक्ट्रिक कनेक्शन आ रहा है और जो बटन है, इन तीनों में कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव है। देखो, सब लोग सीख़ गये अभी। तो मैंने इलेक्ट्रिक का काम किया यह बात कहां से आयी? नहीं-नहीं, हमारा पूरा सायन्स ही उसके ऊपर डिपेंडंट है साहब। अरे

भाई उपचार से ऐसा कहेंगे। कहने में कोई तकरार नहीं है। लेकिन यहां दोष कब आयेगा? ऐसा ही है ऐसा मानेंगे, तो मानने में दोष है। ख्याल में आया?

लेकिन पूरे लौकिक में जो बातें हैं और अलौकिक-आध्यात्मिक बातें हैं, उसमें हमेशा छत्तीस का आंकड़ा है। छत्तीस का आंकड़ा समझते हैं न? मराठी लोग तो जल्दी समझ जायेंगे। हिंदी लोग भी समझेंगे और गुजराती का तो मुझे मालूम नहीं। वे तो और समझदार हैं, जल्दी समझ जायेंगे। छत्तीस का आंकड़ा यानी बिलकुल विरुद्ध बातें हैं। अभी तक हमने माना था, क्या? यह दीवार जो है, उसके आधार से छत रहती है, ऐसा माना था कि नहीं? बोलना। यह अन्योन्याभाव समझने के पहले ऐसा ही हम मान रहे थे कि नहीं? लेकिन जब अन्योन्याभाव का स्वरूप हाथ में आया! अरे! आ तो में घणी मूर्खाई करी, मैं तो कुछ और ही समझ रहा था। तो अब इस जीव को ऐसा लगेगा कि अरे! इस बात की तो मुझे खबर ही नहीं थी, ऐसे जब उसको अंदर से बात आयेगी उछलकर, तो वह टकटकी लगाकर यह अध्यात्म की बात सुनेगा और अपने स्वरूप को समझेगा। आपके प्रश्न का उसके अंदर उत्तर आ गया है। देखो, भाई! लौकिक में जो बातें होती हैं न? वे सब निमित्त-नैमित्तिक की बातें हैं, हां। वहां तो बहुत सारे औपचारिक कथन ही होते हैं। जैसा, मुनीम ने सेठ का काम किया, ऐसा कहते हैं न? तो हमने ये चालीस लाख रुपये दिये तभी तो यह मंदिर खड़ा हुआ। मंदिर यानी जो एक्स्टेन्शन हो रहा है। ऐसा सुनने में आता है कि किसी बड़े, अमीर सेठ साहिब ने चालीस लाख रुपये दिये हैं, वह अभी बन रहा है। तो चालीस लाख देने से यह पुद्गल का परिणमन चालू हो गया कि नहीं? कैसे हुआ?

अरे! एक-एक परमाणु जो है, उसका परिणमन निश्चित है। अरे! जो सिमेंट डालते हैं न? उसमें से जितना गिर जाना था, वह तो बाजू रह जाता है और जो दीवार पर चढ़ना था, वह चढ़ जाता है। तो अगर तू ही करता है तो रास्ते में इतना सिमेंट गिरा है, उसका क्या हो गया अगर तू परिणमन करता है तो? ख्याल में आया? यह बात शांति से समझना। हम बिल्डिंग बनानेवाले को भी नहीं कोस रहे हैं और चालीस लाख रुपये देनेवाले को भी कुछ नहीं बता रहे हैं। लेकिन हमें वास्तविकता ध्यान में आनी चाहिये। बहुत लोग कहते हैं, अभी तो हमने ऐसी तरक्की की है साहब, आप तो कहीं इ.स. १८५७ के साल

में घूम रहे हैं या २००० साल पहले की बातें कर रहे हैं। अभी तो हमने क्लोन बनाया है। क्लोन समझते हैं न आप लोग? हां? नहीं समझते हैं। क्लोन यानी एक आदमी है, मान लो, यह हमारी बेटी है, उसके जैसी दस बेटियां तैयार करें वे क्लोन हैं। एक बकरा है, तो उसके जैसे सारे बकरे बना देवें, उनको क्लोन कहते हैं। ख्याल में आया? यानी कोई बहुत सुंदर है, तो उसके जैसे सारों को सुंदर-सुंदर बना देवें, किसीको बहुत ताक़तवर बना देवें। तो मैं आपसे पूछता हूं क्या उसने किसी नये जीव को पैदा किया है? नहीं? क्यों नहीं? *श्रोता: नहीं।* बोलो साहब! मेरे प्रश्न का जो ढ़ंग है पूछने का, उसके अनुसार आपने उत्तर तो सही दिया। लेकिन आपने उत्तर सही दिया, तो उसका उत्तर ऐसा ही क्यों दिया, इसका भी आपको ज़वाब देना पड़ेगा। *श्रोता: उसका स्वभाव ही नहीं है।* हां, किसका? *श्रोता: पुद्गल का।* हां, ठीक है, हमने ऐसा बोला, क्या उसने कोई नया जीव पैदा किया? पुद्गल की बात तो अभी बाद में उठायेंगे। यहां तो कहते हैं कि विश्व में जो अनादिकाल से जितने जीवद्रव्य हैं, वे अनंतकाल तक उतने ही रहेंगे। उसमें कोई भी कम या अधिक नहीं हो सकते क्योंकि जो अस्तित्व नाम का गुण है, वह गुण हमें यह बताता है कि जिस शक्ति के कारण कोई द्रव्य नया उत्पन्न भी न हो, और जो है, उसका नाश भी न हो। तो जो उत्पन्न न हो और नाश भी न हो और जो कायम टिके, ऐसा वस्तु का स्वरूप है। तो उसने कौनसा नया द्रव्य, कौनसा नया जीव बनाया? जो है, उसीको यहां-वहां से कहीं से लाया होगा? तो अभी पुद्गल तो बनाया कि नहीं उसने? अरे, जो अनादिकाल से इतने पुद्गल हैं, वे के वे हैं, कोई नये बननेवाले हैं नहीं; उनकी अवस्थायें बदलेंगी, उनके परिणमन बदलेंगे लेकिन वह पर का परिणमन भी नहीं कर सकता है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का अपना-अपना स्वचतुष्टय भिन्न है।

लोग तो जरा कुछ हो गया, अपने दिमाग के बाहर की बात आयी, तो अरे! हमने इतना बड़ा शोध किया, खोज की। इतनी बड़ी तरक्की की। मैं आपसे पूछता हूं कि किसीने क्लोन बनाया है, फॉर द टाइम बिइंग ऐसा मान लेते हैं । यह बात महावीर भगवान जानते होंगे कि नहीं? *श्रोता: जानते होंगे।* जानते होंगे। आदिनाथ भगवान? *श्रोता: वे भी जानते हैं।* वे भी जानते हैं और अनादिनाथ भगवान? अनादिनाथ नहीं समझे? अरे! जो अनादिकालीन तीर्थंकर हैं हमारे, हमने तो इतना ही सुना है – वर्तमान चौबीसी, भूत

चौबीसी, भविष्य चौबीसी, बस। तीस चौबीसी के सात सौ बीस तीर्थंकरों का मंदिर बना दिया। क्यों साहब? तीस चौबीसी कैसी यह प्रश्न है न? एक भरतक्षेत्र की तीन चौबीसी, ऐसे पांच भरतक्षेत्र और पांच ऐरावतक्षेत्र इन दस क्षेत्रों की तीन-तीन मिलाकर तीस हुयी। अरे! यहां भरतक्षेत्र की बात कर रहा हूं। हर अवसर्पिणी काल में और उत्सर्पिणी काल में चौबीस-चौबीस तीर्थंकर तो भरतक्षेत्र में होते हैं। ख्याल में आया? तो आज तक कितने हुये? अनंत हुये। जो अनंत हुये, तो अनंत चौबीस तीर्थंकर हुये। तो यह अनादिकाल से यह सिलसिला चल रहा है। कोई उसमें आदि है ही नहीं। ख्याल में आया?

तो वह जो कोई अनादि का जो कोई तीर्थंकर होगा, केवली भगवान होगा, वह जानेगा कि नहीं? इतने-इतने अनंतकाल के बाद कोई मनुष्य ऐसा कोई क्लोन बनायेगा। तो उसने कौनसी बात बनायी? हां? *श्रोता: नहीं, बनायी नहीं।* नहीं बनायी, वही तो हम कह रहे हैं। तो यहां तो यह जीवद्रव्य, परद्रव्य का कुछ कर नहीं सकता। या परद्रव्य इस जीव का कुछ नहीं कर सकता। क्योंकि दोनों में कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* हां, अन्योन्याभाव? कौनसा है? *श्रोता: अत्यंताभाव।* जोर से बोलना, भाई! *श्रोता: अत्यंताभाव।* अत्यंताभाव है। देखो, यह चार अभाव जब हम देखते हैं, तो वस्तुस्वरूप में कितनी स्वतंत्रता है और आज तक मैंने कितना झूठा-झूठा मान रखा है इस बात का ख्याल आता है। क्यों? अभी अपना जो पहलेवाला उदाहरण था कि मैंने हाथ में पेन ली और पेन से, पेन के अंदर जो स्याही थी, उसके द्वारा कागज़ पर मैंने अच्छे अक्षर-मोती समान अक्षर निकालें। तो उसने कौन-कौनसे अभावों को नहीं माना? बोलो-बोलो, लताबहन, आप बोलो। *श्रोता: अत्यंताभाव।* अत्यंताभाव, बस एक नहीं माना? हां। *श्रोता: प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव और अत्यंताभाव यह तीन को नहीं माना।* अच्छा! प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव और अत्यंताभाव इन तीन को नहीं माना। तो प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव कैसा लगायेंगे आप? बोलो-बोलो, कन्सल्ट मत करो। क्योंकि मम्मी तो उस तरफ बैठी है। *श्रोता: अन्योन्याभाव में ही...।* अन्योन्याभाव की तो बात ही नहीं निकाली। अत्यंताभाव बताया। *श्रोता: एक पुद्‌गलद्रव्य का दूसरे पुद्‌गलद्रव्य में अभाव।* हं, हं, तो आपने प्रध्वंसाभाव और प्रागभाव बताया, वह कैसे अप्लाय करेंगे, यह मैं आपसे पूछ रहा हूं। क्योंकि आपने अन्योन्याभाव की बात ही नहीं की थी। हो। चलो, कोई बात नहीं, देखो, हम देखते हैं। मेरेमें और इस हाथ में कौनसा अभाव है? बोलो, पल्लवी। *श्रोता: अत्यंताभाव।* अत्यंताभाव है। हाथ में और पेन में?

श्रोता: अन्योन्याभाव है। कौनसा है भाई? बोलो-बोलो। *श्रोता: अत्यंताभाव है।* अत्यंताभाव नहीं, अन्योन्याभाव है। हाथ भी पुद्‌गलद्रव्य है, पेन भी? *श्रोता: पुद्‌गलद्रव्य है।* तो यह चीज़ यहां से उठाकर यहां रखी, तो मेरी मान्यता साची है या झूठी है?

व्यवहार से तो कहेंगे यह साची है क्योंकि इसमें किसीने नहीं उठायी, तुमने उठायी लेकिन असल में देखा जाये, वास्तविकता देखा जाये, अध्यात्म की दृष्टि से देखा जाये, तो क्या मैंने इस चश्मे की डब्बी को यहां से उठाकर यहां लाया? ऐसा अगर मैं मानता हूं तो मैंने किसको-किसको नहीं माना? अत्यंताभाव और अन्योन्याभाव को नहीं माना। मैं एक जीवद्रव्य हूं यह शरीर पुद्‌गलद्रव्य है; उसमें और मेरेमें अत्यंताभाव है और इस शरीर में यानी जो हाथ है अभी ले लो... हाथ से मैंने डब्बी को उठाया, तो हाथ में और डब्बी में अन्योन्याभाव है। तो साहब, यहां से तो यह हाथ यहां आया न? बिलकुल आया है। लेकिन वह जो आया है, वह अपनी क्रियावती शक्ति से यहां आया है और जीव के भी जो आत्मप्रदेश हैं, वे भी क्रियावती शक्ति से यहां से यहां आये।

मैंने सोचा कि मैं डब्बी उठाऊं और डब्बी, हाथ यहां आये और मैंने जाना ये तीन बातें एक साथ होती हैं और हम मानते हैं कि हमने यह क्रिया की है। यह पहला ही उदाहरण था अपना यहां का। अभी क्या हो रहा है? पेन से मैंने कागज़ पर लिखा, तो हाथ में और पेन में अन्योन्याभाव, पेन में और उसके स्याही में अन्योन्याभाव, स्याही में और कागज़ में अन्योन्याभाव, तो तूने क्या किया? क्यों साहब? अरे! हमने चालीस लाख रुपया दिया। तो तू पैसे को छू सकता है? का करत है बबुवा! पैसे में और तेरेमें कौनसा अभाव है? हां, जी? *श्रोता: अत्यंताभाव है।* अत्यंताभाव है। मैंने जेब से पैसे उठा कर आपको दिये भाई। तूने उठाये नहीं, इस शरीर में और इस पैसे में अन्योन्याभाव है। पैसे में और हाथ में अन्योन्याभाव है और मैंने तुम्हारे पास दिये, तो तुम्हारे हाथ में जो आया, उसमें भी अन्योन्याभाव है। हम तो मानते हैं कि हम पैसा देते हैं, इसीलिये यह कार्य होता है। देखो, साहब! यह मैं किसीको लक्ष्य करके नहीं बोल रहा हूं। यह तो हम आपको, एक-दूसरे को समझने की बात कह रहा हूं कि जो जीव दान करता है, वह दान ऐसा करे कि उससे उसको मान कषाय नहीं चढ़े। ऐसा दान देवे कि उसमें कार्य भी हो जाये और बहुत उसकी ॲडव्हर्टाइजमेंट भी नहीं होवे।

तो अगर वह मंद कषाय से दान देता है, तो उसको उत्कृष्ट पुण्य का फल मिलता है। हम कहीं शिबिर में गये थे वहां हमें एक ऐसे भाई मिले थे, तो बोलते हैं, साहब देखो, हम आये हैं, पंद्रह दिन रुके हैं, परंतु हमने तो बिलकुल यहां का मुफ्त में भोजन नहीं खाया है। आज की बात नहीं, अट्ठाईस साल पहले की बात है। हमने तो सौ रुपया गुप्तदान तरीके दिये। क्या दिया? *श्रोता: गुप्तदान।* गुप्तदान। तो भैया, तू मुझे क्यों बता रहा है? कि गुप्तदान यानी कहीं न कहीं, वह बात छुपी है कि मेरा नाम हो जाये। तो अभी लोग भी यहां के होशियार हैं। गुप्तदान नहीं चलेगा। हस्ते... सुमनभाई दोशी। तो हस्ते बीच में डाल दिया। देगा तो वही, लेकिन नाम लगायेगा हस्ते। ख्याल में आया?

तो यहां तो पहले हमें यह समझना क्या है? कि यह जो चार अभाव देखते हैं, तो यह अभाव जानने के बाद हमारे में जो कोई कषाय है, जो कोई कर्तृत्वबुद्धि है, अहंबुद्धि है कि मैं यह कर सकता हूं, मैं वह कर सकता हूं तो कहते हैं, तेरेमें और परद्रव्य में तो अत्यंताभाव है और पुद्गल की जो पर्यायें हैं वर्तमानकालीन, उनमें आपस में अन्योन्याभाव है और जो एक ही द्रव्य की जो वर्तमान पर्याय है उसका पूर्व पर्याय में प्रागभाव है और भविष्यकालीन पर्याय में प्रध्वंसाभाव है। तो ऐसा अत्यंताभाव या अत्यंत यानी एक्स्ट्रीमलि जो, ऑब्हिअस्लि जो ऐसे अभाव दिखायी देते हैं और हम तो मानते हैं, हम पर का कार्य कर सकते हैं!

तो जो बात हमने सीखी थी कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ परिणमन नहीं करता है तो उसके लिये जो जीव चार अभावों को सहीरूप से जानेगा और मानेगा तो वस्तुस्वरूप उसके ज्ञान में आये बिना रहेगा नहीं। ख्याल में आया? तो इसतरह से, हमने यह भी देखा कि इन अभावों के माध्यम से, विश्व की जो स्वतंत्रता है, उस स्वतंत्रता का ख्याल हमें आता है। अगर हम यह अन्योन्याभाव जो है वह नहीं मानते हैं, तो यह एक पुद्गलद्रव्य दूसरे पुद्गलद्रव्य का कार्य करना चालू करेगा। तो जिसको हम अंग्रेजी में कहते हैं, देअर विल बी अ बिग केऑस यानी एक दूसरे में जो संमिश्र बात होती है, तो कौन किसका कर्ता है यह बात समझ में नहीं आयेगी। इसलिये इस अन्योन्याभाव की बात चल रही है और उसके जो बाद हमने देखा अत्यंताभाव, तो अत्यंताभाव समझने से हमें प्रत्येक द्रव्य की स्वतंत्रता भी ख्याल में आती है। तो अत्यंताभाव जानने से एक बात निश्चित होती है कि

प्रत्येक द्रव्य अपने स्वरूप से है और पररूप से नहीं है। इसतरह हमने इन चार अभावों को देखा है। अभी उसमें से कुछ हम आपके सामने प्रश्नरूप से उदाहरण देंगे। उसमें आपको कौन-कौनसे अभाव अप्लाय होते हैं, उसको नक्की करना है। यहां कह रहे हैं, तीन कटोरियां हैं अलग-अलग। उनमें से एक में दूध है, एक में दही है और एक में छाछ रखा हुआ है। तो उनमें कौन-कौनसे अभाव हैं यानी कितने अभाव हैं? क्या-क्या रखा? एक में दूध, दूसरे में दही, तीसरे में छाछ। तो इनमें कितने अभाव लगेंगे? कौन कहना चाहेगा, हाथ उठाना। हां मणिभाई बोलो, हां! *श्रोता: प्रागभाव।* क्या बताया आपने? *श्रोता: प्रागभाव।* प्रागभाव। अच्छा और दूसरा? *श्रोता: प्रागभाव।* प्रागभाव एक ही लगेगा। कैसे लगायेंगे? *श्रोता: दही का दूध में... ।* हां, कोई बात नहीं, अच्छा। आपने प्रयत्न किया, कोई बात नहीं। उत्तर नहीं आवे तो चलेगा। हां, प्रफुल्लभाई, आप बतायेंगे? *श्रोता: दोनों हैं, पहले दो लगेंगे, प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव।* कैसे बताइये? *श्रोता: पहले, दही में दूध का अभाव है, पूर्व पर्याय।* दही में नहीं बोलना, दही का। *श्रोता: दही का और छाछ में... छाछ का दही में अभाव है।* तो वही लग गया। छाछ का अरे! छाछ का नहीं बताना है आपको। आप बीच में वर्तमान पर्याय दही है ऐसा हम समझ रहे हैं, तो दही का दूध में अभाव वह प्रागभाव लगायेंगे और दही का छाछ में प्रध्वंसाभाव लगायेंगे। लेकिन हमने तीनों एक साथ विद्यमान रखे हैं। हां बोलो, भाई। हां? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव लगेगा क्योंकि पुद्गलद्रव्य तीनों हैं, वर्तमान में रखे हैं आपके सामने, ख्याल में आया? इसतरह से हम सोचेंगे, विचार करेंगे।

अभी महिलाओं के लिये यह प्रश्न पूछता हूं। अभी ऐसा देखा जाये, तो छाछ में कहो या दूध में कहो, यह सब छाछ, दही और दूध कौनसा द्रव्य है? *श्रोता: पुद्गल।* पुद्गलद्रव्य है। तो छाछ में अनंत परमाणु हैं, उनका आपस में कौनसा अभाव होगा? *श्रोता: अत्यंताभाव।* अत्यंताभाव होगा। देखो, हमने परमाणु बताये न? कितने परमाणु होंगे? तो, अनंत परमाणु। परमाणु यानी द्रव्य है ना भाई! तो एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य में...। देखो, एक जीवद्रव्य का दूसरे द्रव्य में क्या होगा? *श्रोता: अत्यंताभाव।* अत्यंताभाव। यह माना है क्या हमने? नहीं माना है या माना है? क्योंकि हम, वह शोमन राजकपूर की बात जब सुनते हैं, दो ज़िस्म मगर इक जान हैं हम... कितने पागल होते थे, कितने पागल होते थे। अरे पागल! तेरेमें और तेरे बीवी में अत्यंताभाव है। तेरेमें और तेरे प्रेयसी में अत्यंताभाव है और हम तो मोही,

रागी जीव ऐसे उछलते थे, वाह! वाह! वाह! क्या बात है! यह अत्यंताभाव हमने नहीं माना है भाई। यह मैं बताना चाहता हूं। ये सारी बातें जो होती हैं, यह जब अभाव को हम देखते हैं, तो पर के प्रति जो हमारे ममत्व परिणाम हैं, मोह परिणाम हैं, उसको ब्रेक लगे बिना नहीं रहेगा और जो ब्रेक लगेगा, तो ही समझना कि तूने, यह जिनवाणी पचायी है। नहीं तो यहां से सुना और वहां से? *श्रोता: निकल गया।* ख्याल में आया?

इसलिये मैंने कहा, दो पुद्‌गल परमाणु हैं, अनंत पुद्‌गल परमाणु हैं, तो उनका आपस में कौनसा अभाव होगा? *श्रोता: अत्यंताभाव।* अत्यंताभाव होगा। ऐसा हम सोचें, वही बात है। उसे अलग तरीके से हम रिप्रेझेन्ट करते हैं, तो उसमें क्या बात नयी निकलती है, उसको हम देखेंगे। अब आगे पूछते हैं, जो भगवान महावीर हैं... कहां गये? महावीर सोनटक्के? हां, अभी आपको नहीं भूलूंगा भैया। हं, तो यहां पर आप की बात नहीं चल रही हो, भगवान महावीर की बात चल रही है। तो जो भगवान महावीर है, उनकी वर्तमान में जो केवलज्ञान पर्याय है, उसमें प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव कौन लगायेगा? बहुत आसान है। आप लगायेंगे, निखिलभाई? हां। नलिन, आप बोलो, बोलो। *श्रोता: वर्तमान पर्याय केवलज्ञान की है, उस पर्याय का भूतकालीन पर्याय में अभाव है।* हां, और? *श्रोता: उनकी सिद्ध पर्याय में उनकी केवलज्ञान की पर्याय का भविष्यकालीन सिद्ध पर्याय में अभाव है।* अभी यहां केवलज्ञान की बात चल रही है न साहब? तो अभी सिद्ध तक नहीं पहुंचे हैं हम। आपको कहना कि केवलज्ञान वर्तमान पर्याय का, भविष्यकालीन केवलज्ञान की पर्याय में अभाव है, तो वहां प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव लगता है। यह थोडीसी प्रॅक्टिस हो जाये न? उसमें कोई डिफिकल्ट बात नहीं है भाई। मैं तो कहूंगा, हमारे जैसा बुद्धु आदमी भी यह सीख गया है, तो आप जैसे होशियार लोग क्यों नहीं सीखेंगे? तो यहां आगे फिर देखते हैं अभी हम।

यह तो बात हो चुकी है, फिर भी पूछूंगा। यह जो छत है और यह छत में लटकता हुआ पंखा है, इनमें कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* हां? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव। बहुत अच्छा। अभी देखो, मणिभाई एकदम फिट हो गये हैं। अच्छा, अच्छा। महिलाओं में अभी उत्तर देना, अभी यह तो सब होशियार हो गये। हो! महिलाओं को देखते हैं, वे उनसे होशियार हैं हम जानते हैं। कार्माणशरीर और तेजसशरीर, यानी कर्म और तेजसशरीर इसमें कौनसा अभाव है? हां, जोर से बोलो। *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव।

बहुत अच्छा! और कार्माणशरीर यानी कर्म और आत्मा, इसमें कौनसा अभाव है? *श्रोता: अत्यंताभाव।* तो कर्म इस जीव को रुलाते हैं कि नहीं? *श्रोता: नहीं रुलाते।* संसार में रखड़ाते हैं कि नहीं? *श्रोता: नहीं रखड़ाते।* अरे, नरक में तो लेकर जाते होंगे? *श्रोता: नहीं।* क्यों, कहां गये नरक में ले जानेवाले हमको? जो भी होवे। अरे भैया! कर्म में और जीवद्रव्य में... अरे! बनारसीदासजी तो कहते हैं, कर्म बिचारे कौन, भूल मेरी अधिकाई। मैं मूर्ख हूं, मेरी भूल अधिक है। कर्म कौन हैं? उसके तो अक्ल भी नहीं है। नहीं है? अरे ज्ञान गुण ही नहीं, तो अक्ल कहां की होगी?

तो मैं आपसे पूछूंगा, आप की अक्ल कहां है बताओ? बोलो? यहां ब्रेन में है न? क्या इधर है कि घुटने में है? *श्रोता: दिमाग में।* हं, बोलो, बोलो? *श्रोता: ब्रेन में हैं।* ब्रेन में है। तो क्या ब्रेन जानता है? बच्चा है न, कोई बात नहीं। अब ऐसे बच्चों को एकदम मजबूत बना देंगे। बेटा, मेरे घर पर आना पड़ेगा हो। मैं झूठ नहीं बोलता हूं, मेरे पास सिन्स इ.स. १९९२ आज कौनसा चल रहा है? इ.स. २००८। सोलह वर्ष से रोज़ाना मेरे घर में स्वाध्याय करनेवाले लोग आते हैं और इसके गवाह यहां एक नहीं, दस जन हैं। यह जो भाई बैठे हैं नलिनभाई। कितने साल से आ रहे हैं साहब आप? आठ साल से। यह मयंकभाई, केटला वरस थई गया बापा? *श्रोता: आठ साल।* आठ साल। यह हमारी लताबेन भी आती थी। अभी वह तो अभी बड़ी हो गयी न, अभी लंदन-वंदन घूमती है न, बंद हो गया भाई। और कितने हैं? यह जयश्रीताई जब बम्बई में रहती थी, हमारे घर रोज़ाना सुबह-शाम आती थी। अब औरंगाबाद में है, कोई बात नहीं। लेकिन एक बार जो बीज अंदर उतर गया है, उस बीज का वृक्ष बननेवाला ही है, फलने-फूलनेवाला भी है। ख्याल में आया? तो यहां क्या बात हो रही है? यहां तो बात यह हो रही है कि यह ब्रेन में ज्ञान है कि नहीं? हां? *श्रोता: नहीं।* अरे, ब्रेन दिखता है कि नहीं? तुम्हें नहीं दिखता है तो खोपड़ी फोड़ कर देखना, दिखता है कि नहीं? दूसरे की हो! अपनी नहीं। तो जो दिखता है, वह पुद्‌गल है भाई। तो पुद्‌गल में ज्ञान होगा कि नहीं? लेकिन हम तो इतने भोले हैं, क्या बोलते हैं कि मेरा हृदय तो आनंद से समा गया-भर गया है। तो यह आनंद तेरे सिर्फ हृदय में है? अन्त:करण से बोल रहा हूं। ऐसा सब बोलते हैं और कोई पिता अपने बच्चे पर गुस्सा होगा, बोलेगा तेरेको अक्ल है कि नहीं? भेजा कहां गया? घुटने में चला गया? तो वह भी मानता है कि भेजा यानी ज्ञान, ज्ञान यानी अक्ल, वह यहां ही है। यह ज्ञान जो है, वह

आत्मा के संपूर्ण भागों में होगा या कोई पर्टिक्युलर भाग में होगा? सुख जो होगा, वह कोई पर्टिक्युलर भाग में होगा या पूरे आत्मप्रदेशों में होगा? क्योंकि उसने गुण की परिभाषा याद नहीं की है और गुण की परिभाषा यह बताती है कि जो द्रव्य के संपूर्ण भागों में और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में रहता है उसे गुण कहते हैं। तो ज्ञान गुण को पूछा जाये, तू कहां रहता है? तो ज्ञान गुण कहेगा कि मैं जीवद्रव्य के संपूर्ण भागों में यानी असंख्यात प्रदेशों में रहता हूं और उसकी सभी अवस्थाओं में रहता हूं। ख्याल में आया? देखो, यह बेसिक बात अगर हमारे ख्याल में आती है तो सारी बातें फटाफट सुलझ जाती हैं। इसतरह से हमने यह चारों ही अभावों का स्वरूप देखा है।

इसके आगे भी बहुत है, जो हम देखते थे न कि इस जीव ने घातिकर्म का नाश किया और अनंतचतुष्टय की प्राप्ति की, तो घातिचतुष्क का किसीने नाश किया है? बताये। यह तो कथन पद्धति है, शास्त्रों में ऐसा वचन आता है। लेकिन वह तो औपचारिक कथन है, व्यावहारिक कथन है। ख्याल में आया? अभी दो मिनट है, मैं बोलूंगा। *श्रोता: पंद्रह मिनट हैं।* हां? *श्रोता: सवा नौ बजे तक है।* सवा नौ बजे तक है? अच्छा-अच्छा। कोई बात नहीं, बहुत बढ़िया! हां। तो हमने यह देखा था कि जब यह मूल बातें हमारे ज्ञान में आती हैं, तो हमारी जो खोटी-खोटी मान्यतायें हैं कि यहां ब्रेन में ही बुद्धि है यानी ज्ञान है। तो पहले तो शरीर में ज्ञान नहीं होता है। नहीं इसका कोई प्रूफ बताओ साहब। आप खाली बोले और हम हां-हां करे ऐसे थोड़ी हैं हम? हमें तो बताओ तो हम आपको बतायेंगे कि कोई मृत कलेवर आपने देखा होगा। नहीं देखा होगा तो जाकर देखना, स्मशान घाट में। हाथ में इतनी बड़ी सूई लेकर जाना और उसको भोंकना। वह चिल्लायेगा कि नहीं? क्यों नहीं? उसको समझेगा नहीं, मेरेमें सूई भोंकी जा रही है? अरे, अगर मुर्दे में भी ज्ञान होता तो उसके चिता पर जलाने से चुपचाप जल लेता क्या? उठकर भाग जाता भाई। उसकी पांचों इन्द्रियां दिख रही हैं, फिर भी इन्द्रियां ज्ञान नहीं करती। इन्द्रियों के पीछे जो आत्मा के प्रदेश हैं वे जानते हैं क्योंकि ज्ञान है, वह आत्मा के संपूर्ण भाग में, असंख्यात प्रदेशों में और उसकी संपूर्ण अवस्था में होते हैं। ख्याल में आया?

कुछ अभी गुत्थियां सुलझ रही हैं कि वैसी की वैसी बाकी हैं? वैसी की वैसी हैं? *श्रोता: सुलझ रही हैं।* अरे वाह, वाह, वाह! देखो, अभी और एक प्रश्न पूछता हूं मैं। देखो,

अभी जिसको आता है वह हाथ उठाये और जो हाथ नहीं उठायेंगे, वे आलसु हैं; जानते हैं लेकिन हाथ उठाना नहीं चाहते, ऐसा समझकर मैं उनको ही प्रश्न पूछूंगा। इच्छा और भाषा इनमें कौनसा अभाव है? अच्छा, बोलो साहब। एक मिनट-एक मिनट, हां बोलो। *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव। हां क्या वह कह रहे हैं, अन्योन्याभाव सच्चा है? इच्छा और भाषा में? *श्रोता: बराबर है।* बराबर है, शाब्बाश! आप क्या कहते हैं सोनटक्के साहब? वह बराबर है कि नहीं पूछा आपको तो आप अपनी बात चला रहे हैं। *श्रोता: बराबर है।* बराबर है? हां! *श्रोता: अत्यंताभाव।* गांगजीभाई? *श्रोता: अत्यंताभाव।* अत्यंताभाव है। क्यों? सुनना, सुनना। अभी अपने पास टाइम कम है न? यह झगड़ा नहीं करने का अपने को। इच्छा यह क्या है? *श्रोता: जीवद्रव्य।* जीवद्रव्य का परिणमन है न? जीवद्रव्य में है न? और भाषा यह क्या है? *श्रोता: पुद्‌गल।* पुद्‌गलद्रव्य है न? तो दो भिन्न द्रव्यों में कौनसा अभाव होगा? *श्रोता: अत्यंताभाव।* तो जिन्होंने अन्योन्याभाव है ऐसा कहा है उनके बात सही समझ में नहीं आयी है, बुरा नहीं मानना हो। अभी आगे पूछते हैं? चश्मा, आंखें और ज्ञान। शमा, आप बतायेंगी? चश्मा क्योंकि आप के पास चश्मा भी है, आंखे भी हैं, और ज्ञान भी है। तो इनमें कौन-कौनसे अभाव होंगे? *श्रोता: अत्यंताभाव।* किसमें-किसमें? शांति रखो भाई! आपको पूछा नहीं जा रहा इसलिये आपको बोलने की पर्मिशन नहीं है। सोहम चुप। *श्रोता: चश्मे में और ज्ञान में अत्यंताभाव है।* हां, और ज्ञान में और आंख में? *श्रोता: ज्ञान में और आंख में भी अत्यंताभाव है।* वह भी बताना चाहिये न? कोई बात नहीं। आपने सही फ़रमाया है। चश्मा है और आंखे हैं, इन दोनों में अन्योन्याभाव है। चश्मे में और ज्ञान में? *श्रोता: अत्यंताभाव है।* अत्यंताभाव है और आंखों में और ज्ञान में? *श्रोता: अत्यंताभाव है।* तो फिर चश्मा लगाने से ज्ञान होता है यह बात सही है कि नहीं है? देखो! कैसी बात है, हम क्या-क्या मानते थे? अरे साहब चश्मे से देखे बगैर बराबर समझ नहीं आ रहा है। अभी जरा ज्ञान हो गया कि यह क्या लिखा है। तो हमने माना क्या? चश्मे से ज्ञान होता है। तो हमारी मान्यता सही है कि गलत है? आगे।

शरीर और वस्त्र इसमें कौनसा अभाव है? हां जी, बोलो साहब? *श्रोता: अन्योन्याभाव है।* अन्योन्याभाव है और आगे, शरीर और जीव में? *श्रोता: ...* क्या खाना नहीं खाया क्या? बोलो, जोर से बोलो। *श्रोता: अत्यंताभाव है।* अत्यंताभाव है। इसतरह हमें अन्य

बातें देखनी है और आपको और भी देखना है तो फिर और बात करते हैं। तो देखो। कुम्हार ने चक्र, लकड़ी आदि के द्वारा घड़ा बनाया। क्या किया? एक कुम्हार है, उसने चक्र, चक्र यानी समझे–चाक और चाक के साथ क्या है? एक उसके हाथ में एक लकड़ी होती है और क्या कह रहे हैं? इनके द्वारा और अन्य भी अनेक बातें हैं, इनके द्वारा घड़ा बनाया, तो यह बात अभावों के माध्यम से सच्ची है या झूठी है? कोई भी उत्तर देना और उसका कारण भी बताना। हां, कौन बताना चाहता है? तुम बताओगी? जोर से बोलना, चिल्लाना। *श्रोता: झूठी है।* झूठी है। क्यों? *श्रोता: एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता।* वह कहां पूछ रहे हैं हम? अभावों के माध्यम से बताना है आपको। हां, प्रतिभाताई, आप बतायेंगी? *श्रोता: कुम्हार यानी जीव और घड़े में अत्यंताभाव है।* कुम्हार और घड़े में, कुम्हार और चाक में, कुम्हार और लकड़ी में और इत्यादि जो कुछ साहित्य होगा, इनमें कौनसा अभाव है? *श्रोता: अत्यंताभाव।* अत्यंताभाव है और जो कुम्हार का हाथ है, और जो लकड़ी है, इनमें? *श्रोता: अन्योन्याभाव है।* अन्योन्याभाव है। वह लकड़ी है और वह चाक है, उनमें? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* तो हमने माना कुम्हार घड़ा बनाता है। तो हमारी मान्यता कितने पर्सेंट में सही है? हां जी? मणिभाई, केटला पर्सेंट? *श्रोता: झिरो।* झिरो, अरे वाह! ख्याल में आया? ये ऐसी सीधी-सादी बातें हैं न?

तो जब हम बटन लगाते हैं–इलेक्ट्रिकल बटन, तो पंखा घूमने लगता है। तो क्या यह बात साची है कि झूठी है? झूठी है। क्यों झूठी है? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव। किसमें-किसमें? *श्रोता: बटन और पंखा।* हां, जोर से। एक मिनट-एक मिनट, हां। *श्रोता: बटन में और पंखे में अन्योन्याभाव है।* हां, पंखे में और बटन में, और? *श्रोता: हाथ में और बटन में...,* अरे भैया, इलेक्ट्रिसिटी में और पंखे में भी अत्यंताभाव है। दो पुद्गलद्रव्य अलग-अलग है न? अब वर्तमान पर्याय की अपेक्षा से देखेंगे तो अन्योन्याभाव है। देखो भाई, यह तो अध्यात्म की बात है, इसको आप अपने लौकिक में अप्लाय जरा भी मत करो। यह तुम्हारा जो कुछ पांच-पचास हजार रुपये का पगार है वह भी तोड़ देंगे और तुम कोई कॉन्ट्रॅक्टर होंगे तो कोई कॉन्ट्रॅक्ट नहीं देगा। हमें तो वस्तुस्वरूप समझकर, अपनी मान्यता को संवारना है। अपनी मान्यता को संभालना है। ये बातें लौकिक व्यवहार में नहीं लगेगी। तो क्या सीखने से फ़ायदा है? बिलकुल फ़ायदा है। क्योंकि हमारा मस्तिष्क जो खोटी-खोटी बातों में अटका है वह सब छूट जायेगा। अब आगे।

ये घातिकर्म जो हैं और जो अघातिकर्म हैं, वे तो एक साथ रहते हैं। तो उनका आपस में कोई अभाव होगा कि नहीं होगा? घातिकर्म और अघातिकर्म इन दोनों में अभाव है क्या वे एक हैं? *श्रोता: अभाव है।* कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव है।* अन्योन्याभाव है और वे जीव को संसार में रखड़ाते हैं। तो उसने कौनसे अभाव को नहीं माना? *श्रोता: अत्यंताभाव।* अत्यंताभाव को नहीं माना। तो देखो, हम तो ऐसा मानते हैं न? कर्म ही हमको इधर-उधर घुमाते हैं, कर्म ही हम पर हावी होते हैं। आप शास्त्र में क्यों नहीं आ पाये? साहब, वह घातिकर्म आया न बीच में, कौनसा? अंतराय कर्म आया। यहां तो कहते हैं, तेरेमें और उसमें अत्यंताभाव है। वह तुझे रोके, इतना तू नबळा-कमज़ोर है? अब आगे।

बहनें बतायेंगी, रोटी को आत्मा ने नहीं पकड़ा, परंतु हाथ ने तो पकड़ा है न? तो क्या यह सही है या गलत है? कौनसे-कौनसे अभाव को नहीं माना? आप बता रही हैं? हां, रोटी को आत्मा ने नहीं पकड़ा, तो हाथ ने तो पकड़ा है न? हां, कौनसे अभाव को नहीं माना? कौन बताना चाहेगा? *श्रोता: अन्योन्याभाव है।* अन्योन्याभाव? *श्रोता: अत्यंताभाव।* अच्छा! अत्यंताभाव किसका किसमें लगेगा? *श्रोता: बाई अने रोटी।* हां, आत्मा और रोटी। *श्रोता: इसमें अत्यंताभाव।* बरोबर। *श्रोता: रोटी और हाथ इनमें अन्योन्याभाव।* बहुत अच्छा! अभी क्या बताया बहनजी ने? कि बताते हैं, आत्मा में और रोटी में अत्यंताभाव और हाथ में और रोटी में? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* तो कौर लेकर हमने खाया। तो कल बात निकली थी न? आत्मा ने रोटी खायी या शरीर ने खायी? तो रोटी और शरीर में कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* तो शरीर रोटी खाता है या आत्मा? अभी बात आ गयी न लाइन पर? भैया, अभी जगह रह गयी न आपको समझाने के लिये, हमें कोई बेस मिल गया न? जो बात आप नहीं जानते उसके माध्यम से हम कैसा समझायेंगे?

देखो, अब आगे देखें क्या होता है। हवा के कारण ध्वजा लहराती है न? हां? क्या यह बात सही है? वह तुम्हारा दोस्त नहीं बोलता है। क्यों नहीं है? हां, जोर से। *श्रोता: अन्योन्याभाव।* किसमें-किसमें? *श्रोता: हवा में और ध्वजा में।* बहुत अच्छा! यह गुजराती में बोलते हैं न? हवा से वहाण चलता है। वहाण यानी जहाज़। हम भी मानते हैं और वह जो चलानेवाले हैं, वे भी मानते हैं कि हवा होगी तो वह जहाज़ आगे बढ़ेगा। आजकल का वह

स्टीम इंजिन नहीं। हां? हां, पहले ऐसी वह कपड़ावाली निकलती थी न नाव। हां, वहाण-बोट कहा न अभी – जो भी है, आप समझदार हो, समझ लेना।

देखो, गुरुदेवश्री कहते थे कि पेट्रोल से गाड़ी नहीं चलती। बोलते थे कि नहीं? अगर कोई मानता है कि गाड़ी में पेट्रोल भरा होगा तो गाड़ी अवश्य चलेगी; तो मैं तो कहूंगा अगर यह सिद्धान्त होगा, तो हमारे बम्बई में आकर शिवडी में देख लेना। वहां तो ऐसी बड़ी-बड़ी, लाख-लाख, दो-दो लाख गॅलन पेट्रोल से भरी हुयी ऐसी बड़ी-बड़ी टंकियां हैं। वे तो एक ही जगह पर हैं, मैं बचपन से देखते आया हूं। चली ही नहीं हैं एक इंचभर भी। तो पेट्रोल से गाड़ी चलती होगी कि नहीं? अगर चलती है ऐसा माना तो कौनसा अभाव नहीं माना? हां जी? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव नहीं माना। देखो, एक नहीं, हम अनेक इसतरह के उदाहरण देख कर इन चारों अभावों को सहीरूप से समझेंगे तो हमारे ज्ञान का विकास होगा या ज्ञान ख़तम हो जायेगा? ख्याल में आया?

चलो, अभी किसीके कोई प्रश्न हो तो पूछ लें, नहीं तो हम विश्राम लेंगे। हां, बोलो। क्या था? *श्रोता: पहलेवाली पर्याय...।* हां-हां। आपका प्रश्न ऐसा था कि जो पर्याय एक समय तक रुकती है और एक समय के बाद उसका नाश हो जाता है, तो वह कहां जाती हैं? ऐसा आपका प्रश्न था। तो मैं आपसे पूछूंगा, आप कभी बम्बई में आये हैं? *श्रोता: नहीं।* नहीं? आना कभी। चौपाटी पर जाना, हमारे घर मत आना। तो जहां आप चौपाटी पर जायेंगे तो वहां समुद्र दिखेगा उसमें एक के बाद एक लहरें आती हैं। वहां से एकदम बड़ी-बड़ी लहर आती है, किनारे पर आते-आते-आते और? दूसरे समय में वह... दूसरे समय नहीं, कुछ टाइम के बाद निकल जाती है। तो वह जो लहरवाला पानी है यानी जो वेव्ह जिसको हम कहते हैं, वह पानी कहां जाता है? समुंदर में वापस समां जाता है। वैसे ही यह पर्याय निकलती कहां से है? *श्रोता: द्रव्य में से।* द्रव्य में से निकलती है और जब वह द्रव्य में से निकलकर वापस नष्ट होती है तो द्रव्य में पारिणामिक भाव के रूप से रहती है। अब यह पारिणामिक भाव क्या है यह मत पूछना क्योंकि टाइम खत्म हो गया है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

४३. चार अभाव, निमित्त-उपादान

कल हमने विश्व के प्रत्येक द्रव्य की उन द्रव्यों के प्रत्येक गुण की और उन गुणों के प्रत्येक पर्याय की जो स्वतंत्रता है, वह किसतरह से हो सकती है, यह देखने की हमने कोशिश की। हमने चार अभाव देखे हैं। नाम याद हैं न भाई? हां, बोलो-बोलो। *श्रोता: प्रागभाव ।* प्रागभाव। *श्रोता: प्रध्वंसाभाव।* प्रध्वंसाभाव। *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव। *श्रोता: अत्यंताभाव।* और अत्यंताभाव, हम ये चार अभाव नहीं मानेंगे तो क्या आपत्ति आ सकती है? इसका थोड़ासा हम विचार करेंगे। कल तो यह बात की थी लेकिन फिर से दुबारा हम उसको देखते हुये आगे बढ़ेंगे।

आप बोलेंगे कि भाई टाइमपास क्यों कर रहे हैं? लेकिन आप तो जानते हैं, आप तो इक्कीसवीं सदी के लोग हैं। तो बीसवीं सदी में क्या होता था? लोग सिनेमा देखने को जाते थे और जब तक हाउसफुल नहीं होता था, क्योंकि बाहर बैठकर लोग, क्या? क्योंकि अंदर धूम्रपान निषेध रहता है, तो बाहर चालू रहता है, इसलिये ये थिएटरवाले ट्रेलर दिखाते थे, नेक्स्ट अॅट्रॅक्शन दिखाते थे और जब सब लोग आ जाय तो मूल विषय स्टार्ट करते थे। वैसे हमें भी करना पड़ता है। क्या करें? लोग टाइम पर नहीं आये तो फिर किसके साथ बोलें और बाद में आयेगा उसके पल्ले कुछ नहीं पड़नेवाला है। क्यों जो पहले इंट्रोडक्शन होती है, शुरू में वह अगर हमारे ज्ञान में नहीं आयेगी तो आगे की बात ध्यान में नहीं आती है।

तो हम देख रहे थे, चार अभावों को हम नहीं मानेंगे तो क्या-क्या आपत्ति आ सकती है? किसमें, विश्वव्यवस्था में? हां? किसमें आपत्ति आयेगी? अपनी मान्यता में भाई! और हमें अपनी मान्यता को सुधारना है, विश्व को सुधारने का कार्य कोई कर ही नहीं सकता है; ख्याल में आयी बात? तो यहां पर यह बात हम देख रहे थे। प्रागभाव नहीं मानने से क्या होगा? तो कहते हैं कार्य अनादि का ठहरेगा। यानी वही कार्य, वही कार्य, वही कार्य, क्योंकि जो वर्तमान पर्याय है उसका भूतकालीन पर्याय में अभाव नहीं मानेंगे, तो वह कार्य पहले भी था तो वहां जो कार्य वह उसके पहले पर्याय में भी था, उसके पहले पर्याय में भी था। ऐसा करते-करते कार्य अनादि का ठहरेगा, जो कि वस्तुव्यवस्था से तद्दन विरुद्ध बातें हैं।

अब कहते हैं, प्रागभाव तो हमने देख लिया। प्रध्वंसाभाव को नहीं मानने से क्या होगा? तो कहते हैं अभी जो कार्य हो रहा है वही अगले समय में भी होगा, वह जो हो रहा है वही अगले समय में भी होगा। ऐसे कार्य अनंतकाल तक वही का वही, वही का वही, वही का वही ठहरेगा। तो यह तो ऐसा नहीं है, तो कैसा है? कि वर्तमान पर्याय का भविष्यकालीन पर्याय में अभाव है। यानी वर्तमान पर्याय में जो कार्य है, वह भविष्यकाल में जो होनेवाला कार्य उससे कोई संबंध नहीं रखता है। देखो हम पर्याय की ही बात करते हैं लेकिन पर्याय का अर्थ ही कार्य है। यह कार्य के लिये शास्त्र में अलग-अलग शब्द आते हैं, जहां जो आयेंगे उसको हम देखेंगे।

अब अन्योन्याभाव नहीं मानेंगे तो क्या होगा? तो कहते हैं कि अन्योन्याभाव किसको कहते हैं, उसको देखेंगे पहले। **एक पुद्‌गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का, दूसरे पुद्‌गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में अभाव है**। अगर ऐसा नहीं मानेंगे तो सारे यानी जितने पुद्‌गल परमाणु हैं उनका आपस में एक दूसरे में टकराव होगा। एक परमाणु दूसरे परमाणु का कार्य करेगा। ख्याल में आया? यानी उसकी वर्तमान पर्याय में बहुत गड़बड़ी हो जायेगी। इसलिये कहते हैं अन्योन्याभाव भी समझने की आवश्यकता है। नहीं समझेंगे तो हमारा घोटाला हो जायेगा। अब चौथा जो है वह कौनसा है? अत्यंताभाव। देखो कल बोलते-बोलते एक बात रह गयी थी इसलिये थोड़ासा कन्फ्यूजन भी किन्हीं लोगों को तैयार हुआ था । वह ऐसा है –

यहां कह रहे हैं कि प्रत्येक द्रव्य का, अन्य द्रव्य में अभाव है। तो हमने तो जाति अपेक्षा देखा था लेकिन संख्या अपेक्षा बताना रह गया था। अभी क्या है? एक से अधिक संख्या में कितने द्रव्य हैं? कौन बताना चाहेगा पुरुषों में? एक, दो, हां मणिभाई आप बतायेंगे हां, बोलो। *श्रोता: असंख्य।* कौन-कौनसे द्रव्यों में एक से अधिक क्वाँटिटि है? हां, हां, बोलो, बोलो! मयूरभाई आप बतायेंगे? *श्रोता: पुद्‌गलद्रव्य।* पुद्‌गलद्रव्य। कितने हैं वे? *श्रोता: अनंतानंत।* अनंतानंत और कोई अधिक संख्यावाला द्रव्य है? *श्रोता: जीवद्रव्य।* जीवद्रव्य, वे भी अनंत हैं। और कोई? *श्रोता: कालद्रव्य।* कालद्रव्य, देखो-देखो यहां से जोर-जोर से आवाज आ रही है! ये तैयार हैं लोग। बोलतें हैं कि कालद्रव्य। कालद्रव्य कितने हैं? आपको अभी बताना था कौन हां, कालद्रव्य कितने हैं संख्या में! हां जी?

श्रोता: संख्यात, अनंत, असंख्यात। कुछ तो एक बोलो न, तीन बोल रहे हैं आप, एक दफे संख्यात बोल रहे हैं आप, एक दफे असंख्यात बोल रहे हैं, एक दफे अनंत बोल रहे हैं। नक्की क्या हैं? *श्रोता: असंख्यात हैं।* असंख्यात हैं।

तो अभी हम जब अत्यंताभाव देखते हैं तब हमने ऐसा घटित किया था, जाति अपेक्षा से जीवद्रव्य का पुद्‌गलद्रव्य में, धर्मद्रव्य में, अधर्मद्रव्य में, आकाशद्रव्य में और कालद्रव्य में अभाव है। एक पुद्‌गलद्रव्य का दूसरे पुद्‌गलद्रव्य में और एक जीवद्रव्य का दूसरे जीवद्रव्य में अभाव है, यह बात भी मैंने बतायी थी। यह भी बताया था कि शोमन राजकपूर का जो गाना है दो जिस्म मगर इक जान हैं हम, उसको सुनते हुये हम कितने खुश होते थे लेकिन ऐसा नहीं है। एक जीवद्रव्य का दूसरे जीवद्रव्य में भी अभाव है। यह संख्या अपेक्षा से हम देखते हैं न? तो यहां जैसे हमने देखा एक जीवद्रव्य का, द्रव्य हो! एक जीवद्रव्य का दूसरे जीवद्रव्य में अभाव है उसको अत्यंताभाव कहेंगे। एक पुद्‌गलद्रव्य का दूसरे पुद्‌गलद्रव्य में जो अभाव है उसका नाम क्या है? जोर से बोलना! *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव? क्या बोल रहे हैं आप? *श्रोता: अत्यंताभाव।* हां, कोई बात नहीं। अत्यंताभाव है। अन्योन्याभाव किसमें होगा? *श्रोता: एक पुद्‌गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्‌गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में अन्योन्याभाव है।* बहुत बढ़िया।

आपको कहना है, मैं आपको इसलिये रुकाया हूं कि आपका उत्तर सही है लेकिन आप बोलेंगे वह इस माइक में नहीं आयेगा इसलिये मैं बोल रहा हूं कि एक पुद्‌गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्‌गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में जो अभाव है, उसको हम अन्योन्याभाव कहते हैं और एक पुद्‌गलद्रव्य का दूसरे पुद्‌गलद्रव्य में अभाव है सो अत्यंताभाव है। तो जैसे एक जीवद्रव्य का दूसरे जीवद्रव्य में अत्यंताभाव है। एक पुद्‌गलद्रव्य का दूसरे पुद्‌गलद्रव्य में अत्यंताभाव है, वैसे एक कालद्रव्य का दूसरे कालद्रव्य में अत्यंताभाव है। वैसे एक धर्मद्रव्य का दूसरे धर्मद्रव्य में अभाव है कि नहीं? और कौनसा अभाव है वह? एक धर्मद्रव्य का दूसरे धर्मद्रव्य में अभाव होगा कि नहीं होगा? और होगा तो कौनसा होगा? *श्रोता: अत्यंताभाव।* अत्यंताभाव होगा, मयूरभाई आप क्या बोलते हैं? *श्रोता: एक ही है।* हां भाईसाहब बोल रहे हैं हमने कच्ची गोलियां नहीं खाई हैं। ऐसा वे बालते हैं। धर्मद्रव्य तो एक ही है, अधर्मद्रव्य एक ही है और आकाशद्रव्य भी एक ही है तो किसमें

उसका अत्यंताभाव? उनका तो अन्य द्रव्यों में अभाव लगेगा और वह भी अत्यंताभाव लगेगा, बात ख्याल में आयी?

देखो, कल मैंने यह बताया था लेकिन कुछ कारणवश किसीके ज्ञान में नहीं आया है, फिर से। हमें तो बात समझनी ही है। हां, तो क्या बताया कि एक जीवद्रव्य का दूसरे जीवद्रव्य में अत्यंताभाव है। तो जहां मेरा मेरे पुत्र में अभाव है, तो मैं मेरे पुत्र का कार्य करूं कि नहीं करू? करूं कि नहीं करूं पूछा मैंने। मैं कर सकता हूं ऐसी मान्यता होगी, तो वह महा मिथ्यात्व है। तो फिर क्या हम बच्चों को खाना नहीं खिलायें? दूध नहीं पिलायें? स्कूल नहीं भेजें? शिक्षा नहीं दें? भैया! पहले तेरी श्रद्धा सही कर। हम जब श्रद्धा की बात करते हैं, तो आप आचरण के बारे में सोचते हैं। वास्तव में देखा जाये तो एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य में अभाव है तो परद्रव्य का कार्य तू कर सकता है, ऐसी तेरी मान्यता हटी कि अभी है बाकी? कहेंगे, मैंने तुझे छोटे से बड़ा किया और मुझको सिखाता है अभी! बात ऐसी हुई। हो! क्या बात हुई? मैं बताता हूं।

अमेरिका में हम गये थे न्यूयॉर्क में। तो वहां एक बहन बोली, अभी मैं हिंदी में बोलूंगा, गुजराती में बातचीत हुई थी। यह मेरा छोकरा है, मेरा डिकरा है, यह मेरा लड़का है, अब देखो कितना ऊंचा-पूरा हो गया है। पच्चीस साल तक मैंने उसको पाला पोसा और बड़ा किया। मालूम है? यह पच्चीस साल का है अभी। आपका लड़का है? मैंने पूछा। अरे! मैं बोल रही हूं न, मेरा लड़का है। तो आपका लड़का है, आपने उसको बड़ा बनाया, तो इतने पच्चीस साल क्यों लिये? पांच साल में इतना बड़ा बना देती न? क्यों? कोई बना सकेगा कि नहीं? हम नहीं तो नहीं, कम से कम कोई भगवान तो बना देंगे कि नहीं? हे भगवान! मेरे बच्चे को तू ठीक कर दें, मेरी आयु उसको दे दे। हम बोले वाह वाह! कितनी ममता है, कितनी ममता है! वाह रे वाह! अरे, यह ममता नहीं मूर्खता है। महामूर्ख, मोही जीव है तू! जितनी आयु बांधकर वह आया है, उतना ही वह टिकेगा या तेरी दुआ से? अरे! अभी दवा कोई काम नहीं करती है, दुआ दे दो। अरे! न दवा से काम हो रहा है न दुआ से काम हो रहा है। देखो हमारी जो मान्यतायें हैं, उन मान्यताओं पर प्रहार है। जब कोई श्रद्धा की बात करते हैं, तो लोग आचरण में घुसते हैं, तो बच्चों को उछेरना कि नहीं उछेरना? गुजराती शब्द है हो! यानी उनको पालपोस कर बड़ा करना या नहीं करना? ख्याल में आया?

तो हम यहां देखने जा रहे हैं, अत्यंताभाव जब हम देखते हैं, उसको अगर हम नहीं मानते हैं तो क्या आपत्ति होती है? कि सब द्रव्यों कि जो अनंत स्वतंत्रता है, उसको हम ठोकर लगाते हैं। ख्याल में आया? देखो ये सब पदार्थ जो हैं इन वस्तुओं में यानी प्रत्येक पदार्थ में, द्रव्य में, अपनी-अपनी स्वतंत्र शक्ति है। अपना-अपना कार्य करने की शक्ति है। उस शक्ति को हम नहीं पहचानते, इसलिये उसका अन्यथा अर्थ करते हैं और इस जीव के तो क्या है? कर्तृत्वबुद्धि इतनी है, पर का मैं करूं, करूं, करूं, करूं ऐसी मान्यता बहुत है। मैं तो घर को सम्हालता हूं, सब मैंने एकदम ठीक-ठाक रखा है। हमारे घर में जरा भी झगड़ा नहीं होता है; हमारे घर में हम चार भाई हैं; हमारे घर में हम चार भाई की एक-एक औरत है ऐसी चार बहुयें हैं; उनके सबके बच्चे हैं; कोई आपस में नहीं झगड़ता। क्यों? मैंने सबको कंट्रोल किया है। कैसे कंट्रोल किया? तुम नहीं समझते हो, सबको रोज उठकर एक-एक हजार रुपये देंगे, गुपचुप मानते हैं, हम जो बोले वह करते हैं। अगर कल पैसा खत्म हो गया तो? मानेंगे की नहीं मानेंगे? *श्रोता: नहीं मानेंगे।* ऐसा ही लोग समझते हैं। ब्राइब करने से काम होता है। अरे तेरा नसीब होगा तो होगा, नहीं होगा तो नहीं होगा, समझ तो सही! लेकिन यह अभाव को जब हम देखते हैं, तो द्रव्यों की जो स्वतंत्रता है, द्रव्यों का जो अपना-अपना परिणमन है, वह ख्याल में आये बिना रहेगा नहीं।

अभी देखो! यह सब जानकर अगर हम इन्हें नहीं मानेंगे तो हमारी श्रद्धा में क्या गलतियां होती हैं, उसको देखा। अगर हम उसे मानते हैं, किसे? इन चार अभावों को मानते हैं तो उसका अर्थ क्या होगा? यानी उसका फायदा क्या होगा? तो कहते हैं, प्रागभाव समझने से यह बात ख्याल में आती है कि जो कार्य मुझे करना था, कौनसा कार्य करना था? कि बेटी की शादी करनी थी, पैसा कमाना था, डिग्री मिलानी थी, हमारा वंश आगे बढ़ाना था। प्रफुल्लभाई हंस रहे हैं। पाटनी साहब! मुझे दो ही बेटियां हैं। तो हमको ॲडव्हाइस देनेवाले इतने मिले। अरे! तेरा वंश खूट जायेगा हां, एक लड़का तो कम से कम एक, ट्राय करो, ट्राय करो। ऐसे भीष्म उपदेश देनेवाले इतने लोग मिले। मैंने कहा, ठीक है साहब आप कहते हैं, मैं मान्य करता हूं। मैं आपके पिताजी का नाम जानना चाहता हूं। पिताजी का नाम – कोई भी होगा नाम – मगनलाल, माणिकलाल या हमारे मणिभाई जो भी होगा। हां! सब मणि रतन ये सब इधर पड़े हुये हैं। उनके पिताजी का नाम? रतनचंद। उनके पिताजी का नाम? माणकचंद। उनके पिताजी का नाम? जवाहरलाल।

उनके पिताजी का नाम? शायद गांडालाल होना चाहिये, मुझे याद नहीं है। उनके पिताजी का नाम? अरे! गांडालाल का नाम याद नहीं है तो उनके पिताजी का नाम कहां याद होगा? उनके पिताजी का नाम ? अरे! सात पुश्तों के भी नाम तुझे मालूम नहीं है और तू तेरे वंश की काहे को चिंता करता है? आज उठकर कोई भी बोलेगा मैं शिवाजी महाराज के वंश का हूं, इधर-उधर का हूं, क्या प्रूफ है तेरे पास? ख्याल में आया न? अरे तूने तो आज तक मनुष्यभव अनंत बार प्राप्त किया है, कितने-कितने को याद रखेगा बता? ख्याल में आया न?

यहां तो कहते हैं एक समय की जो वर्तमान पर्याय है वह भूतकालीन पर्याय से कोई संबंध रखती नहीं है, तो तू तो तेरे वंश की सोच रहा है यानी तेरे तो अभी भी पर्यायदृष्टि ही है; स्वभाव पर तेरी दृष्टि कतई गयी नहीं है। ख्याल में आया? तो यहां बता रहे हैं कि हमें प्रागभाव समझने से क्या लाभ होता है? तो आज तक मैंने कोई जो कार्य करना था, कौनसा कार्य करना था? कि स्व को पहचानना था, स्व में लीनता करनी थी, स्व का निर्णय करना था, यह धर्मरूप कार्य मैंने आज तक नहीं किया। कोई बात नहीं है क्योंकि जो पुरानी जितनी पर्यायें हैं, उन पर्यायों का वर्तमान पर्याय से कोई संबंध नहीं है। यह वर्तमान पर्याय का भूतकालीन पर्याय में जो अभाव है उसको प्रागभाव कहते हैं। तो यह वर्तमान पर्याय में मैं पुरुषार्थ करके मेरे स्वरूप का-स्वभाव का अनुभव कर सकूं, ऐसी मुझे अभी बहुत बड़ी सुवर्णसंधी प्राप्त हुयी है यानी अच्छा अवसर मिला है।

वैसे ही प्रध्वंसाभाव को जब हम देखते हैं, तो प्रध्वंसाभाव को जानने से क्या है कि जो वर्तमान पर्याय है उसका भविष्यकालीन पर्याय में अभाव है। भूतकाल में और वर्तमान पर्याय में आज तक, मैंने बहुत नालायकी की है। वर्तमान पर्याय में भी मैंने धर्म को प्राप्त नहीं किया है। मैंने बहुत अधर्म किया है लेकिन घबराने की, चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि इस वर्तमान पर्याय का भविष्यकाल की पर्याय में अभाव है। तो वर्तमान में भले ही मैंने कुछ नहीं किया हो, लेकिन भविष्य में मैं धर्म कर सकता हूं। ऐसे हमें अपने को ही हम स्वयं, सहारा दे सकते हैं। अरे, जहां एक पर्याय दूसरे पर्याय को मदद, असर, प्रेरणा कुछ नहीं कर सकती है, सहाय कुछ नहीं कर सकती। सजातीय पर्याय, अपने पर्याय को कुछ मदद नहीं करती है, तो जीव पुद्गल का करें या पुद्गल जीव

का करें, कर्म जीव का करें जीव कर्म का करें, यह बात कहां से आयी? देखो देखो! जब ऐसी बात ख्याल में आती है तो हमें शास्त्राभ्यास करके अपने स्वरूप को पहचानने की धगस-तीव्र इच्छा जागृत होती है।

अब कहते हैं अन्योन्याभाव समझने से यह बात ख्याल में आती है कि एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का, दूसरे पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में अभाव है। तो एक पर्याय जो है, कौनसी? पुद्गल की, वह दूसरे पुद्गलद्रव्य की पर्याय में कोई भी असर, मदद, प्रभाव, सहायता, प्रेरणा कुछ नहीं कर सकती है। देखो जब ऐसा पता लगता है और एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य में अत्यंताभाव है, तब देखो इतनी स्वतंत्रता हमारे ज्ञान में आती है। तो इन चार अभावों को जानने से हमें कुछ फायदा हुआ कि नहीं हुआ? हां, बोलो बेन! आपने सुने चार अभाव? आप ही को मैं पूछ रहा हूं। कुछ फायदा हुआ कि नहीं आपको? आपको नहीं पूछ रहा हूं, आपके आगे की, आगे की लाइन तक पूछ रहा हूं। आपका मौन है मेरे ख्याल से? बेन हां-हां! उधर मत देखना इधर, इधर, इधर हां। बोलो, बोलो! नहीं बोलोगे तो कोई फायदा नहीं। मुनि होने के बाद तो मौन लेना ही है। शाम होने के बाद, जब सूर्यास्त होता है तो, ना तो मुनि चलते हैं, ना किसी से बात भी करते हैं। वैसे अभी से प्रॅक्टिस चालू हो तो बहुत अच्छी बात है। भाई शरमा के कोई नहीं बोलेंगे तो वे आगे बढ़ेंगे नहीं, वहीं रुके रहेंगे। ख्याल में आया?

अब यहां तक तो हमने देखा था तो यह बात हम निश्चितरूप से अभी समझ गये होंगे कि एक जीवद्रव्य का दूसरे जीवद्रव्य में अत्यंताभाव है। एक पुद्गलद्रव्य का दूसरे पुद्गलद्रव्य में अत्यंताभाव है और बाकी आप कॉम्बिनेशन्स लगा लो, कालद्रव्य में भी ऐसा ही होगा। इसतरह से हमने चार अभाव देखे हैं, तो इन चार अभाव में और कोई प्रश्न हो तो अभी पूछ लेना, नहीं तो हम अगला विषय चालू करेंगे। कोई प्रश्न है क्या?

हां, चलो अभी हम आगे बढ़ते हैं। देखो अभी हम देखेंगे यह जो हमेशा हमारे मन में, हमारे ज्ञान में जो कोई निमित्त-नैमित्तिक संबंध कहो कि निमित्त कहो तो हमारी ऐसी ही मान्यता है कि निमित्त से ही कार्य होता है। जैसा निमित्त मिलता है, वैसा ही कार्य होता है ऐसी बहुत भोले जीवों की मान्यता है। क्या कहा? एक बात समझो कि हर समय कार्य होता ही है। कार्य होता है यानी क्या होता है? बोलो साहब। *श्रोता: परिणमन।* हां, हां जी।

बहुत अच्छा! आप मराठी में जवाब दो, कोई बात नहीं, गुजराती में बोलो, हिंदी में बोलो। *श्रोता: पलटना।* हां। कार्य होना यानी पर्याय पलटना। किसकी पर्याय पलटती है भाईसाहब? हां, बोलो। *श्रोता: द्रव्य की।* कौनसे द्रव्य की? *श्रोता: जो द्रव्य होगा उसकी पर्याय, जीव होगा तो उसकी पर्याय पुद्‌गल होगा तो पुद्‌गल की।* कौनसे द्रव्य की मैं पूछ रहा हूं? आप बताना चाहते हैं लेकिन शब्द नहीं आ रहे हैं। आपको ऐसा बताना है हर द्रव्य के हर गुण की, हर समय पर्याय होती है यानी हर द्रव्य में हर समय कार्य होता ही है। जब-जब कार्य होता है तब-तब उसको कारण अवश्य होता ही है, यानी कारण के बिना कार्य होता ही नहीं। ख्याल में आया? तो कारण दो प्रकार के कह गये हैं। (१) उपादान कारण, (२) निमित्त कारण।

अभी मैंने किसीसे सुना कि अपादान कारण बताया वह अपादान नहीं है, उपादान है। देखो मैं आपको बताता हूं। एक बहुत मज़े की बात है जब हमने जैनतत्त्व परिचय पुस्तक छापी थी। वहां उसमें उपादान कारण ऐसा हमने लिखा था। तो जो डीटीपी करनेवाले हैं न टाइप करनेवाले, वे समझे कि यह कौन लिख रहा है, कि उज्ज्वला शहा। तो इनको मराठी नहीं आती है। तो उन्होंने उपादान की जगह उत्पादन लिखा। हमने कहा हम जो लिखते हैं पूरे होश हवास में लिखते हैं। जहां चारित्र लिखते थे, चारित्र गुण, चारित्र की जगह चरित्र करते थे। अरे भाई! हम जानते हैं न हमें क्या लिखना है? हम जैसा लिखते हैं वैसा आप टाइप करो। अपना अभिजीत जहां काम करता था न? हां-हां, उसका पार्टनर उसकी यह बात बतानी है। यानी यह अपादान नहीं है, यह उपादान है, हम अर्थ देखेंगे। हमारे लिये ये सारे नये शब्द हैं। कोई बात नहीं, जरूर समझेंगे हम। तो क्या कहते हैं कारण दो प्रकार के होते हैं। कौन-कौनसे? मैं बोलूंगा आपको रिपीट करना है।

उपादान कारण। *सभी श्रोता: उपादान कारण।* फिर से, जरा जोर से, उपादान कारण। *सभी श्रोता: उपादान कारण।* निमित्त कारण। *सभी श्रोता: निमित्त कारण।* यह दो कारण; वैसे देखा जाये तो कारण अनेक होते हैं। एक कार्य होने में अनेक कारण होते हैं लेकिन मुख्यत: उनके दो भेद किये गये हैं। एक है उपादान कारण और दूसरा है निमित्त कारण।

अभी उपादान कारण यानी क्या? यह हमें समझना है। तो प्रत्येक द्रव्य में स्वयं

की शक्ति होती है। कैसी ? पर्यायरूप परिणमने की यानी कार्य करने की शक्ति, उसको कहते हैं निज शक्ति। क्या कहा पल्लवी ? निज शक्ति यानी स्वयं की शक्ति। देखो आचार्य उमास्वामीजी ने हमें जो सूत्र दिया है कि द्रव्य कैसा है, तो द्रव्य को **उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्** ऐसा कहा है। यानी प्रत्येक द्रव्य में कायम टिकते हुये कायम बदलना, ऐसा उसका स्वभाव है। क्या कह रहे हैं ? टिकने का भी, बदलने का भी ? हां-हां ! कायम टिकते हुये कायम बदले ऐसा प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है। कौनसे ? जीवद्रव्य का स्वभाव है, पुद्‌गलद्रव्य का, अरे ! सारे द्रव्यों का ऐसा स्वभाव है कि वह टिकता हुआ कायम बदले। हं ? रिया, समझ में आ रहा है ?

हां, तो क्या कहा ? यहां कह रहे हैं कि प्रत्येक द्रव्य में निज शक्ति है, कैसी ? कार्य करने की, यानी पर्यायरूप परिणमने की। ख्याल में आया ? तो अभी हम देखते हैं यह जो उपादान कारण यानी निज शक्ति है, **द्रव्य स्वयं कार्यरूप परिणमता है ऐसी जो शक्ति है उसको उपादान कारण कहेंगे** और निमित्त कारण यानी क्या ? हां जी ? निमित्त कारण किसको कहना ? तो आपके पास यह पर्चा दिया हुआ है। निकाल कर देखते हैं। उसके पहले मैं आपसे पूछूंगा कि यहां निमित्त कारण किसको कहना ? निमित्त किसे कहना ? चलो न, कारण को हटाओ। इसकी परिभाषा कौन बोल सकेगा यहां पर ?

निमित्त किसे कहते हैं ? कोई एक बतावें, अच्छा। हां, बोलो बेन । *श्रोता: कार्य करने में जिसकी उपस्थिति हो।* कार्य करने में ? *श्रोता: जिसकी उपस्थिति हो उसको निमित्त कारण कहते हैं।* हां, आपने क्या बताया याद रखना हो। कार्य होने में जो उपस्थित रहता है उसको निमित्त कारण कहते हैं। बराबर ? यही आपने बताया न ? तो यह कहां तक सच है वह भी हम देखेंगे। आपने प्रयास किया बहुत अच्छा किया है लेकिन थोड़ासा अधूरा है। कोई बात नहीं, उसमें कोई चिंता करने का कारण नहीं है। हम उसको देखेंगे। हां। *श्रोता: स्वयं तो न परिणमे परन्तु कार्य की उत्पत्ति में जो निमित्त है।* कोई बात नहीं। *श्रोता: उपस्थिति है।* देखो आपको सुनना है, तो हम बतायेंगे। नलिनभाई बताओ। *अन्य श्रोता: जो कार्य करने में...।* फिर से, मैं बताऊंगा, आप बताना चाहते हैं ? *श्रोता: कार्य करने में जो मदद करता है उसको निमित्त कहते हैं।* नहीं, नहीं। हां साहब। *श्रोता: साथ में रहते हैं।* नहीं, नहीं, नहीं मैं बताता हूं – आप इसमें देखना, किसमें ? पेज नंबर २२,

क्वेश्चन नंबर १४१। **जो पदार्थ स्वयं तो कार्यरूप न परिणमें**... कोई बात नहीं, देखो। *श्रोता: लेकिन कार्य करने में आरोप जिस पर आ सके।* बहुत अच्छा! देखो क्या कहते हैं **जो पदार्थ यानी जो द्रव्य स्वयं तो कार्यरूप न परिणमें** इसका अर्थ क्या हो गया? जो निमित्त है, जो निमित्त कारण है, वह स्वयं तो कार्य करता नहीं है उसको निमित्त कहते हैं। फिर देखना, अभी तो आपका नंबर गया। अभी तो हमने शुरुआत की है। जो पदार्थ स्वयं तो कार्यरूप न परिणमें लेकिन क्या कहते हैं आगे? *श्रोता: कार्य करने में...।* नहीं, नहीं, नहीं, नहीं, नहीं! **परंतु कार्य की उत्पत्ति में, अनुकूल होने का आरोप जिस पर आ सके, उसको निमित्त कारण कहते हैं**। ख्याल में आया? देखो दो बातें हो गयी, कार्य हो रहा है। कार्य कहां हो रहा है? अरे हर पर्याय में कार्य हो रहा है। तो कार्य तो निज शक्ति से हो रहा है, क्या कह रहे हैं?

जो कार्य होने में अनुकूल है, आप उपस्थित कह रहे थे। तो मैं बताता हूं उपस्थित की बात भी, अभी देखो यहां मैं बोल रहा हूं – यह कार्य हो रहा है। तो उसमें निमित्त कौन है? आप लोग जो शिबिर में आये हैं, वे निमित्त हैं। बराबर? अब ऐसे भी कोई महाभाग होंगे? वीर अतिवीर। जो बाहर इधर-उधर घूम रहे होंगे, वे उपस्थित हैं, वे निमित्त गिने जायेंगे कि नहीं? *श्रोता: नहीं-नहीं।* बोलो! जो रूम में बैठे हैं, सोते हुये होंगे कोई, हां शिबिर में आये हैं, उनको हम निमित्त कहेंगे कि नहीं? जो अपने यहां का स्टाफ है, वह भी यहां उपस्थित है। उनको हम निमित्त गिनेंगे कि नहीं? *श्रोता: नहीं-नहीं।* क्या कह रहे हैं कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होने का आरोप, जिन पर आ सके।

देखो यह बात समझाने के लिये मैं आपको एक स्टोरी सुनाता हूं, सच्ची स्टोरी। सुनो, एक कुम्हार था, तो क्या हो गया? कुम्हार क्या करता है बेटा? *श्रोता: घड़ा बनाता है।* घड़ा बनाता है। तो वह घड़ा बना रहा था, तो उसके पास एक चाक था, उधर एक डोरी थी, एक डंडा था ऐसा सब कुछ था और मिट्टी भी थी। उसके वहां बाजू में, उसका एक नन्हासा पोता खेल रहा था। उसके बाजू में उसका गधा भी था। क्या हो गया? कुम्हार को थोड़ीसी शारीरिक तकलीफ थी और उसके चार बेटे जानते थे कि अपना पापा का कभी न कभी, राम नाम सत्य होगा लेकिन वह तो अभी इक्कीसवीं सदी का था न! बहुत पैसेवाला था। तो उसको तकलीफ हो रही थी फिर भी वह घड़ा बनाने में मग्न था। उसको ज्यादा

ऐसी कुछ तकलीफ होने लगी। तो एक लड़का दौड़ा-दौड़ा गया। किधर गया? डॉक्टर को बुलाने को गया। डॉक्टर आ गया। दूसरा लड़का उससे होशियार था। वह दौड़ा-दौड़ा गया उसने एक वकील को लाया कि मरने के पहले कोई विल-बिल लिख देवें तो अपना काम हो जायेगा न भाई? तो एक वकील आया, एक डॉक्टर आया, तीसरे ने और एक किसी अपने सगेवाले को साथ में लाया। ऐसे सबने एक-एक को लाया और वह घड़ा बनाता रहा। अभी मुझे बताओ जो घड़ा बन रहा है, उसमें वह गधा निमित्त है? वह डॉक्टर निमित्त है? वह वकील निमित्त है कि वह छोटा पोता निमित्त है?

वह जो घड़ा बनने का कार्य हुआ, उसमें ऐसा कौन था कि जिसके ऊपर अनुकूल होने का आरोप आ सके कि उसने घड़ा बनाया? बोलो साहब आप क्या बोलते हैं? हां! *श्रोता: कुम्हार।* कुम्हार, बहुत अच्छा! हम उसके लिये सब्स्टिट्यूट बोलेंगे। वह चाक था, वह डोरी थी उसका डंडा था वगैरह। यह सारे निमित्त कारण होंगे, मिट्टी छोड़कर बाकी। लेकिन घड़ा बनने की योग्यता, निज शक्ति किसमें थी? *श्रोता: मिट्टी में।* हां, तो जो शक्ति, निज शक्ति स्वयं कार्यरूप परिणमें वह तो है उपादान कारण और बाकी सब कैसे हैं? निमित्त कारण। अब निमित्त कारण भी उसीको कहेंगे कि जो अनुकूल है। जो अनुकूल नहीं हैं, वह डॉक्टर भी था, वकील था और साथ में गधा भी था, अच्छा! उनके ऊपर आरोप आयेगा कि नहीं? ख्याल में आया?

बेन, आपने जो परिभाषा बतायी उसमें थोड़ीसी बात रह गयी थी। यह निश्चित होता है कि जब-जब कार्य होता है, तब-तब निमित्त अवश्य होता ही है। निमित्त नहीं होगा ऐसी बात नहीं है; निमित्त होगा अवश्य लेकिन निमित्त कार्य में कोई असर, मदद, सहाय कुछ नहीं करता। क्यों नहीं करता? यह घड़ा जो बन रहा है, वह घड़ा किससे बन रहा है? कुम्हार से? कुम्हार घड़ारूप परिणमा है? घड़ारूप कौन परिणमा है? *श्रोता: मिट्टी।* मिट्टी, तो मिट्टी यह उपादान कारण है। वह मिट्टी स्वयं परिणमित होते-होते घड़ारूप हो गयी है। लेकिन वह कुम्हार ने तो ऐसा हाथ लगाया न? जरा ऐसे ऐसे उसको किया, क्या चाक घुमाया। चाक में और डंडे में कौनसा अभाव है भाई? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव है और वह हाथ में और मिट्टी में लताबेन, कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव है और कुम्हार में और हाथ में। *श्रोता: अत्यंताभाव है।* अत्यंताभाव है, तो कुम्हार ने घड़ा बनाया, यह बात कहां से लायी?

देखो एक-एक जो हम फकरें (पोर्शन) देखेंगे, अरे! हमें तो निमित्त किसे कहते हैं, इसकी परिभाषा तक याद नहीं है और हम छाती ठोक कर बोलते हैं कि निमित्त के बिना कार्य नहीं होता है। अगर हम जाकर किसीको बतायेंगे निमित्त के बिना कार्य होता है तो यह एकांती है, एकांती है हटाओ, हटाओ, हटाओ, क्या? पद्मजाबेन, क्या नाम भूल तो नहीं गया न, पद्माबेन? जाकर पूछना कविताबेन को, एकांती डिक्लेअर किया था। ख्याल में आया? यहां तो कह रहे हैं कि अगर कुम्हार में और हाथ में अत्यंताभाव है, हाथ में और मिट्टी में अन्योन्याभाव है। मिट्टी में और वह चाक में? हां अन्योन्याभाव है, चाक में और डंडे में अन्योन्याभाव है, लेकिन घड़ा तो बना? हां, घड़ा बना लेकिन वह जो पुद्‌गल परमाणु थे, जो स्कंधरूप से वहां विद्यमान थे, वह भी द्रव्य है न प्रभु! तो द्रव्य का हर समय परिणमन होगा कि नहीं होगा? तो हर समय उसका नया, नया, नया, नया कार्य होते-होते वह घड़ारूप परिणमा ।

एक बात निश्चित समझना कि पर्याय जो है उसको कर्म कहते हैं, कार्य कहते हैं। अभी हमने बताया कार्य के लिये अलग-अलग शब्द-नाम आते हैं। तो यह कार्य को कर्म भी कहते हैं और वे आठ कर्म हैं उनको भी कर्म कहते हैं, लेकिन वह बात यहां नहीं है। यहां तो हमने क्या देखा? यह जो हर समय कार्य हो रहा है, हर समय कार्य हो रहा है, वह कार्य को कर्म कहेंगे और कर्ता जो है वह निज द्रव्य है और द्रव्य का और पर्याय का कर्ता-कर्म संबंध है। ख्याल में आया? कर्ता-कर्म संबंध प्रत्येक द्रव्य का अपनी पर्याय के साथ होता है और निमित्त-नैमित्तिक संबंध जनरली दो भिन्न द्रव्यों में होता है, ऐसा कहते हैं और डिटेल में जायेंगे तो दो भिन्न द्रव्यों की पर्यायों में एक समय पुरता होता है, लेकिन वहां तक हम पहुंचे नहीं हैं। पल्लवी बात ख्याल में आती है? हां, क्या कुछ गड़बड़ी है? आगे बैठो, आगे खिसक कर बैठो और आगे एकदम आगे, चार फूट अंतर रखो दोनों में।

क्या कहा? जो कार्य हो रहा है, जो पर्याय है वह उस द्रव्य की है तो द्रव्य अगर कर्ता है तो पर्याय उसका कार्य है। कार्य कहो, कर्म कहो। कर्ता-कर्म संबंध द्रव्य का अपनी पर्यायों के साथ होता है, और हमने क्या माना? कुम्हार ने घड़ा बनाया तो हमारी मान्यता सही है या गलत है? *श्रोता: गलत है।* अरे! अपने आप-स्वयं नक्की करो भाई! बोलना मत, क्यों! हम क्या करें? हमें स्कूल में सिखाया गया न? जो कपड़ा सिलावे वह दर्जी, जो

जूता सिलावे वह चमार, घड़ा बनावें वह कुम्हार और शिक्षा दे वह शिक्षक और क्या है? यह स्कूल में हमें सिखाया न? यानी देखो हम तो बहुत बार कहते हैं जो कथन होता है वह निमित्त से होता है, लेकिन कार्य होता है वह उपादान से होता है। जब-जब कार्य होता है तब-तब निमित्त अवश्य होता ही है। निमित्त नहीं है, ऐसी बात नहीं है, लेकिन निमित्त से कार्य होता नहीं है, क्योंकि जिस द्रव्य में कार्य हो रहा है और जो सामने निमित्त है, इन दोनों द्रव्यों में, कौनसा अभाव है, बोलो-बोलो, सोनटक्के साहब, बोलो-बोलो। *श्रोता: अन्योन्याभाव।* हां, दो द्रव्यों में? दो भिन्न द्रव्यों में अत्यंताभाव है महावीरजी, गड़बड़ कर गये। ख्याल में आया? मैंने पहले बताया यह बात हमने सुनी नहीं है। सुनी हो तो, नहीं सुनी जैसी है और अभी भी सुनी है कि नहीं भगवान जाने, केवली जानेंगे न, हम क्या जानेंगे?

क्या कहते हैं देखो समयसार में बात ऐसी आती है दो द्रव्य मिलकर एक कार्य नहीं होता है यानी एक पर्याय के दो कर्ता नहीं होते हैं। एक निमित्त कारण है और एक उपादान कारण है–वह बात जुदी है, लेकिन एक पर्याय के कर्ता दो द्रव्य नहीं होते। तो यह जब हम समयसार पढ़ते हैं तो हमारे ख्याल में नहीं आता है यह क्या बता रहें हैं? कोई बात नहीं। हम तो देखो भाई, हम एअरोप्लेन से कभी प्रवास नहीं करते, हम तो खटारा गाड़ी से... रेल्वे से मत समझना। यानी बेसिक से हम समझेंगे, तो समयसार आदि ग्रंथ भी हमें बिलकुल ख्याल में आ जायेंगे। तो अभी हमने क्या देखा कि कार्य होता है वह उपादान से और उसमें निमित्त परद्रव्य होता है, बहुतांशी हो। कभी-कभी एक ही द्रव्य में एक गुण निमित्त है और दूसरे गुण का कार्य हो रहा है। तो देखो-देखो, अस्तित्व गुण की परिभाषा किसको याद है? शमाजी आपको याद है? अच्छा इनको याद है, बोलो? पुस्तक में मत देखना।

श्रोता: जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कभी नाश नहीं होता और द्रव्य कभी किसीसे उत्पन्न भी नहीं होता, उसको अस्तित्व गुण कहते हैं। इन्होंने क्या बताया – जिस शक्ति के कारण से द्रव्य का कभी नाश नहीं होता और द्रव्य कभी किसीसे उत्पन्न भी नहीं होता, उसको अस्तित्व गुण कहते हैं। देखो एक ही द्रव्य में उसकी जो सत्ता है वह सत्ता कायम टिकती है। तो मैं पूछता हूं, द्रव्य ही कायम टिकता है या उसके गुण भी कायम टिकेंगे? हां बेटा बोल, जोर से बोलना। *श्रोता: गुण भी कायम टिकेंगे।* गुण भी कायम

टिकेंगे। तो अस्तित्व गुण है, उसके कारण से ज्ञान गुण भी टिका है। अस्तित्व गुण है उसके कारण से यानी यह एक ही द्रव्य में अलग-अलग गुण एक दूसरे में निमित्त हैं। लेकिन यह डिटेल में बात अभी हम नहीं लेते हुये दो द्रव्यों की भिन्नता जो है और एक द्रव्य, दूसरे द्रव्य में निमित्त है ऐसी जो बात आती है, उसको हम अभी देख रहे हैं। ख्याल में आया?

अभी क्या बताया आपको कि कार्य होता है। देखो-देखो एक बात याद रखना कि जो निमित्त नहीं हैं ऐसा कहते हैं उनका ज्ञान खोटा है और जो निमित्त से कार्य होता है ऐसा मानते हैं उनका श्रद्धान खोटा है। फिर से – जो निमित्त है ही नहीं ऐसा कहते हैं उनका ज्ञान खोटा क्योंकि निमित्त तो होता ही है। लेकिन जो निमित्त से कार्य होता है, निमित्त आये तो कार्य होता है ऐसा मानते हैं उनका श्रद्धान खोटा। आप तो जानते हैं यह चौबीसवें तीर्थंकर उनका नाम क्या था साहब? *श्रोता: महावीर भगवान।* पक्का? तो महावीर भगवान को केवलज्ञान हुआ। तो उनकी दिव्यध्वनि कब खिरी? बोलो? मालूम नहीं, कोई बात नहीं। नाम से महावीर हो, ऐसे काम से भी महावीर हो जाओगे, डरते क्यों हो? हां बोलो साहब? *श्रोता: निमित्त कारण गणधर की उपस्थिति।* अरे भाई हमने पूछा कब खिरी? देखो आप ग्यारह अंग और नौ पूर्व के पाठी हो, जो हो तो यहां मत बताना, मैं जितना पूछता हूं उतना ही बताना। बोलो। *श्रोता: जब उनके गणधर आये तब।* मैंने ऐसा पूछा कि उनकी दिव्यध्वनि कब खिरी, कितने दिन के बाद खिरी? चलो। *श्रोता: छियासठ दिन के बाद।* हां-हां। तो छियासठ दिन के बाद, तो छियासठ दिन क्यों न खिरी? अभी आप उत्तर दो। हां, बोलो-बोलो हां...। *श्रोता: गणधरजी की उपस्थिति नहीं थी।* हां! गणधरजी की उपस्थिति नहीं थी। यानी निमित्त कारण ही नहीं था। तो वाणी कैसे खिरेगी? ऐसा निमित्त से कार्य होता है, यह बतानेवाले की यह दलील है। क्या है? देखो आप शास्त्र नहीं पढ़ते हैं, क्या लिखा है? छियासठ दिन तक दिव्यध्वनि नहीं खिरी, क्यों साहब? क्योंकि वहां गणधर की उपस्थिति नहीं थी।

अच्छा! तो गणधर की उपस्थिति हुयी, पहले यह तो हमें समझाइये आप कि यह जो दिव्यध्वनि है वह किसका कार्य है? बोलो मयूरभाई। *श्रोता: भाषावर्गणा।* भाषावर्गणा बहुत अच्छा! आप सही उत्तर देते हो, लेकिन बहुत देरी-देरी से देते हो और एकदम स्लोलि देते हो, घबराना मत। अरे गलत हो जाये तो हो जाये, गलत होनेवाला नहीं है आपसे! यह

भाषावर्गणा का कार्य है। भाषा मतलब आवाज निकलना, ध्वनि खिरना या बोलना, यह किसका कार्य है? तो भाषावर्गणा का कार्य है। यह भाषावर्गणा कौनसा द्रव्य है साहब? *श्रोता: पुद्‌गलद्रव्य।* पुद्‌गलद्रव्य है तो यह पुद्‌गलद्रव्य में ज्ञान है कि नहीं? प्रतिभाताई, पुद्‌गलद्रव्य में ज्ञान है न? *श्रोता: नहीं है।* नहीं है, अच्छा।

तो मैं आपसे पूछता हूं कि उस भाषावर्गणा को कैसे पता लगा कि गणधर पधारे हैं करके? हां? नहीं हमें कुछ मालूम नहीं, हम आपसे जानना चाहते हैं। यह निमित्तवाले जो होते हैं न? निमित्तवाले यानी क्या? निमित्त से ही कार्य होता है, ऐसा माननेवाले, वे क्या कहतें हैं? देखो शास्त्र में लिखा है तुम शास्त्र पढ़ते नहीं हो और पढ़े तो उसका उलटा अर्थ करते हो। यहां क्या लिखा है? छियासठ दिन तक दिव्यध्वनि नहीं खिरी और छियासठ दिन होने पर जब गणधरजी पधारे तब दिव्यध्वनि खिरना चालू हो गयी। ख्याल में आया? तो छियासठ दिन तक दिव्यध्वनि नहीं खिरी। तो ये जो अनंतवीर्य धारी थे, कौन? जिनेन्द्र भगवान महावीर, जो अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख और अनंतवीर्य से युक्त थे, तो उनको भाषा को जल्दी परिणमाने की ताकत नहीं थी? हां? थी कि नहीं? *श्रोता: थी।* थी? तो क्यों नहीं परिणमायी? छियासठ दिन तक रुके क्यों? *श्रोता: परिणति-परिणमन नहीं हुआ।* अरे वाह रे वाह! भाषावर्गणा में और महावीर में कौनसा अभाव है? *श्रोता: अत्यंताभाव है।* अत्यंताभाव है। रश्मिबेन वात साची कि खोटि? हां हाव हाची (साव साची) केम? हां और हमने क्या माना? वह जो भाषावर्गणा है वह तो तद्दन पुद्‌गल है, पुद्‌गल को एक रत्ती भर की अक्ल यानी ज्ञान नहीं है। तो उसको कहां से पता लगे कि अभी गणधरजी आये हैं। लेकिन जब वह भाषावर्गणा खिरनी थी, तब सामने निमित्तरूप से गणधर हाजिर थे।

अनुकूल होने का आरोप जिस पर आ सके उसको निमित्त कारण कहते हैं। लेकिन निमित्त कार्य में कुछ नहीं करता, क्योंकि निमित्त तो हम उसीको कहते हैं कि जो स्वयं तो कार्यरूप न परिणमें लेकिन कार्य की उत्पत्ति होने में अनुकूल होने का आरोप जिस पर आ सके उसे निमित्त कहते हैं। देखो शास्त्र की बात ही हमको समझाये कोई, हां लेकिन उसने शास्त्र को सहीरूप से समझा ही नहीं और माना कि निमित्त से कार्य होता है। बहुत सारी बातें हैं, कितनी बातें बतायें? ख्याल में आया न? तो अभी हम देखते हैं और आगे बढ़ते हैं, इसीमें आगे बढ़ेंगे। देखो, अभी हम क्या देख रहे हैं, हमने देखा कि जब-जब कोई कार्य

होता है तो वहां कारणों की चर्चा होती है। नहीं समझ में आया? कोई व्यक्ति बीमार पड़ गया, तो हम क्या बोलते हैं? बीमार पड़े? कौनसे हॉस्पिटल में ॲडमिट किया आपने उनको? तो कोई बोलता है जसलोक में। अरे! उधर काहे को ॲडमिट किया? क्योंकि जो जसलोक में ॲडमिट होता है, वह परलोक सिधारता है। बोले, कौनसे डॉक्टर को दिखाया? वो फलां-फलां डॉक्टर। अरे! उसके पास क्यों गये? इस डॉक्टर को क्यों नहीं कन्सल्ट किया? क्यों साहब? अरे वह जल्दी ठीक नहीं करेगा।

अब मुझे बताओ आप उन्हें घर में भी रखो और उसकी आयु पूरी होनी है और हॉस्पिटल में भी रखो और उसकी आयु पूरी होनी है, तो हॉस्पिटल यह निमित्त हो सकता है कि नहीं? और निमित्त होगा, मैं तो कहता हूं तो – निमित्त कार्य में कुछ करता है कि नहीं? बात ख्याल में आती है? तो जब जब कोई कार्य होता है, तो पहले हम निमित्तों की चर्चा करते हैं। यह फलां डॉक्टर के पास नहीं जाना था, उसने यह-यह दवा दी। अरे यह काहेको दी? यह फलां-फलां आपको दवा देनी थी, कौनसा आपने वह ॲलोपथी की दी? अरे! पागल हो होमिओपथी ट्रीटमेंट करनी चाहिये थी क्यों? यानी निमित्तों की तरफ से ही देखने की हमें अनादि से आदत लगी है। हम तो निमित्तों को सुधारने की कोशिश करते हैं, लेकिन जो निज शक्ति है, उपादान शक्ति है, उसकी तरफ हम देखते ही नहीं। जो निमित्त है वह परद्रव्य है। मेरेमें और उसमें अत्यंताभाव है, तो मैं परद्रव्यों को जुटाऊं या हटाऊं, यह बात कहां से सच्ची है बताओ? अभी तो हमने निमित्त और उपादान की शुरुआत भी नहीं की है हो! यह तो बहुत स्थूलता से हमने बात बतायी है।

तो यहां तो कह रहे हैं जब कोई कार्य होता है तो उसमें कारणों की हम चर्चा करते हैं। तो उसमें से हमने दो कारणों को यहां लिया है – एक तो है उपादान कारण और दूसरा है निमित्त कारण। देखो सब लोग कहते हैं कि कुम्हार ने घड़ा बनाया लेकिन आचार्य कहते हैं जो घड़ा बना है वह अपने उपादान कारण से बना है, तो यह उपादान कारण कहां है? तो कहते हैं मिट्टी में वह उपादान कारण है। देखो मिट्टी भी तो ऐसी खास चाहिये, रेती से घड़ा बनेगा कि नहीं कि जिसमे हम पानी रख सकें? तो वह मिट्टी भी वैसे ही खास क्वॉलिटि की होनी चाहिये जिस कारण पानी ठंडा बने। अब आगे कहते हैं। यहां जब घड़ा बनता है तब मिट्टी की निज शक्ति होगी, तो ही वह घड़ा बनेगा, अन्यथा वह नहीं बनेगा। अब जब-जब

कहते हैं कि कुम्हार ने वह घड़ा बनाया है, तब वहां निमित्त की अपेक्षा से वह कथन होता है कि निमित्त से कार्य हुआ ऐसा कहने में आता है, कहने में कोई दोष नहीं है, लेकिन ऐसा ही मानने में दोष है।

देखो! बहुत लोगों में ऐसी मान्यता है। कौनसी मान्यता है? कि गुरु बिन ज्ञान नहीं। अब मणिभाई को तो मालूम होगा क्योंकि वह हमारी उम्र के हैं न। तो उन्होंने बैजू बावरा देखा ही होगा। तुमने भी देखा है? अच्छा ठीक है तो उसमें गाना गाया है गुरु बिना ज्ञान नहीं तो सब लोग कहते हैं, ओहोहो! कितनी गुरु की महिमा! कितनी गुरु की महिमा!! पर वह मान्यता सही है या गलत है? *श्रोता: गलत है।* हां, बोलो बेन। गुरु से ज्ञान होगा कि नहीं? नहीं, तो फिर उन्हें गुरु काहेको बोलना, उनसे ज्ञान नहीं होता है तो। *श्रोता: गुरु निमित्त है।* हां, बहुत अच्छा! आपका कहना है कि गुरु निमित्त है, तो निमित्त से ज्ञान होगा कि नहीं? हां? *श्रोता: निमित्त बिना ज्ञान नहीं होगा।* निमित्त बिना ज्ञान नहीं होगा, ऐसे ही आपका कहना है न? तो वही गुरु बिन ज्ञान नहींवाली बात, हो गयी न?

देखो-देखो! अभी हम देखते हैं, एक क्लास लगी है क्लास याने कॉलेज में, स्कूल में जो भी आपको जहां बैठाना हो, बिठा दो। वहां शिक्षक है, बिलकुल निस्पृह शिक्षक है। यानी इसको अच्छी तरह से सिखाऊं उसको नहीं सिखाऊं ऐसी टेंडन्सी है नहीं, जो आजकल में देखने में आती है, बच्चों को सिखायेंगे नहीं, फिर ट्यूशन रखेंगे, वैसा शिक्षक हमें लेना नहीं है। कैसा शिक्षक है? कि बिलकुल सीधा-सादा मेरे जैसा! तो कहते हैं, वहां पचास विद्यार्थी हैं और परीक्षा लेते हैं, सबको सिखाया-सबको एक जैसा सिखाया। परीक्षा में सभीका पहला नंबर आना चाहिये कि नहीं? सौ में से सौ मार्कस्, हां? *श्रोता: नहीं।* नहीं आयेगा, क्यों? ऐसा क्यों? सबको तो ईक्वलि सिखाया। निमित्त कारण तो एक ही था, सबको अच्छी तरह से सिखाया, हां? *श्रोता: ज्ञानगुण की ग्रहण करने की शक्ति अलग-अलग होती है, सबकी एक जैसी नहीं होती है।*

आपका क्या कहना है कि पचास विद्यार्थी थे। प्रत्येक का अपना-अपना ज्ञानगुण था। उस ज्ञानगुण के ग्रहण करने की शक्ति यानी समझने की शक्ति है। लौकिक में कहेंगे। हम कहेंगे उनके ज्ञान की परिणति वैसी उतनी ही हाय-लो क्वॉलिटि की होनी थी, सो हुयी। क्या वह गुरु के कारण हुयी? अभी मान लो उसमें से दस विद्यार्थी फेल हो गये और दस विद्यार्थी

फर्स्ट नंबर आये। तो जो दस विद्यार्थी पहले नंबर में पास हुये तो कहेंगे इस फलां-फलां शिक्षक ने उनको सिखाया इसलिये वे फर्स्ट आये हैं और जो दस विद्यार्थी फेल हो गये उनको कोई कहेंगे कि इनको फलां-फलां वही शिक्षक ने सिखाया इसलिये फेल हो गये, क्या ऐसा है?

देखो-देखो, हम भगवान के दर्शन करने मंदिर जाते हैं। भगवान महावीर के मंदिर में दर्शन करने जाते हैं तो हमें भक्ति भाव उमड़ता है, शुभभाव आता है। वहां हम देखते हैं कि उनके ऊपर छत्र है, चामर है, यह है, वह है और हमारे बगल में ऐसा कोई व्यक्ति है तो वह तो भगवान को तो देखता ही है, लेकिन साथ-साथ में भगवान के ऊपर जो छत्र है, चांदी है, यह है, वह है। लोक कहते हैं कि मंदिर में जावे तो परिणाम बहुत अच्छे होते हैं और मन्दिर में तो अहो! चोरी भी होती हुयी देखने में आती है। अरे! वह तो जाने दो, बाहर रखी हुयी चप्पल की भी चोरी हो जाती है भाई! तो भगवान को हम कहेंगे न वे निमित्त बने इसलिये चोरी हुयी? ऐसा बोलेंगे कि नहीं?

देखो, मैं क्या कहना चाहता हूं? निमित्त से कार्य नहीं होता, कार्य तो उपादान से होता है। यहां हमने जो शिक्षक और विद्यार्थियों का जो उदाहरण देखा था, उसमें प्रत्येक विद्यार्थी की जो निज शक्ति थी, आपने बताया – ज्ञान ग्रहण करने की जो निज शक्ति थी, उसके अनुसार उनको क्रमांक मिले, नंबर्स मिले और यहां जो चोरी करने को जो आया था वह भगवान की उपस्थिति में भी चोरी करे और उसने तो ऐसा बताया अपने घर में जाकर, मैंने तो ऐसी चोरी की, किसीको पता भी नहीं लगे। तो क्या यह बात सच है? हां कितने जन जानते थे बताओ? उत्तर आ गया इधर से। हां, बताइये साहब, कितने जन जानते हैं? आपके बाजू में? बोलो धीमंत, *श्रोता: ...* बोलो पद्मजाबेन। *श्रोता: अनंत।* कितने? अरे अनंत को ही बताना है आपको, अनंत केवली भगवान हैं। कौन? सिद्ध, वो जानेंगे कि नहीं? देखो, जिसको जैनदर्शन का अभ्यास है और जिसे पता है कि सर्वज्ञ भगवान सभी बातें जानते हैं, वह तो खोटा काम करने के पहले दस बार सोचेगा। ख्याल में आया?

तो अभी हम उपादान की और निमित्त की बात देख रहे थे। तो हम कहां तक आये थे कि भाई, यहां यह फलां-फलां निमित्त था इसलिये कार्य हो गया, यह बात गलत है, यह तो कार्य जो होना है वह अपने स्वयं के निज शक्ति से होगा। इस बात की और पुष्टि हम

अगले पीरियड में करेंगे। अभी कोई किसीके प्रश्न हो तो पूछना, मैं हमेशा दो मिनट रखता हूं। कोई प्रश्न हो तो पूछें, हां।

श्रोता: सिद्ध अवस्था में हर पर्याय निकलती है जानने-जानने की, वहां निमित्त कारण क्या है? हां, आपका प्रश्न ऐसा है; सिद्ध अवस्था में या केवली भगवान के हर समय जानने-जाननेरूप जो ज्ञान की पर्याय हो रही है, वह तो अपने निज उपादान शक्ति से हो रही है, तो उसमें निमित्त कौन है? बराबर यही प्रश्न है न? तो वहा क्या जान रहे हैं? तो हम फॉर एक्झाम्पल लेते हैं, लोकालोक को जान रहे हैं न? तो लोकालोक निमित्त है। निजस्वरूप को जान रहे है, तो वह स्वरूप अपना निमित्त है।

हां जी बोलो। *श्रोता: कारण के ये दो भेद हैं।* हां। कारण के यह दो भेद हैं; उपादान कारण और निमित्त... क्या, क्या, क्या? *श्रोता: वह उपादान कारण और निमित्त कारण अलग-अलग दो कारण के भेद हैं या अलग व्यवस्था से रखा है?* देखो, हमने पहले ही आपको बताया था, आपका प्रश्न मैं फिर से दोहराता हूं, यहां जो बोर्ड पर लिखा है, उपादान कारण और निमित्त कारण, ये कारण के भेद हैं, यह किस अपेक्षा से हमने दो अलग-अलग किये हैं? तो पहले में पहले हमने देखा था जब-जब कोई कार्य होता है, तब-तब वहां कारण अवश्य होता ही है। उन कारणों के ये दो भेद बताये हैं। एक उपादान कारण और एक निमित्त कारण। आम तौर पर सारे भोले जीवों की ऐसी ही मान्यता है कि निमित्त से ही कार्य होता है या उपादान से होता होगा लेकिन निमित्त के बिना नहीं होता। तो निमित्त के बिना नहीं होता, यह बात तो बिलकुल सच्ची है लेकिन कार्य में निमित्त कुछ नहीं करता, यह बात भी उतनी ही सच्ची है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

४४. निमित्त-उपादान

यह जो हम निमित्त उपादान का प्रकरण देख रहे हैं, इसमें बहुत कॉन्ट्रव्हर्सी यानी आपस में मुफ्त के झगड़े बहुत होते हैं और उसका एकमेव कारण यही है कि निमित्त किसको कहना, इस बात का ही हमें पता नहीं है। इसलिये हम अपनी भ्रामक कल्पनाओं से – कल्पित मान्यताओं से – इसमें अपने-अपने मत के अनुसार वस्तु का स्वरूप ऐसा ही है, ऐसा मानते हैं। देखो, बात यह है कि हमें वस्तुस्वरूप ख्याल में नहीं आता है, तो अपनी भ्रामक कल्पनायें होती हैं। इसलिये उसका एक ही उपाय यह है कि जो वास्तविकता है, वस्तु का स्वरूप जैसा है वैसी हमारी मान्यता होनी चाहिये।

जैसा हमने देखा था, हमें स्कूल में या अपने बचपन में शिक्षकों ने जो कुछ बातें बतायी हैं, वे जैनदर्शन के अनुसार तो नहीं बतायी हैं। वे तो निमित्त की अपेक्षा से ही बताते हैं, ख्याल में आया? तो हमारी ऐसी ही आदतसी हो गयी है कि हम ऐसा ही मानते हैं कि निमित्त से ही कार्य होता है और निमित्त होगा तो ही कार्य होता है। बात ऐसी है, विश्व में जो जाति अपेक्षा से छह द्रव्य हैं, उनमें से कौनसे द्रव्य निमित्त हैं और कौनसे द्रव्य उपादानरूप से हैं, यह हम प्रथम सोचें। तो कोई बता सकेगा कि विशिष्ट द्रव्य को ही निमित्त द्रव्य कहने में आता है? हां कौन बताना चाहेगा? *श्रोता: कालद्रव्य।* कालद्रव्य। यह कालद्रव्य क्या है, निमित्त है? तो उसमें कुछ कार्य होता है कि नहीं? *श्रोता: नहीं।* अच्छा, आपका कहना है कालद्रव्य में कुछ कार्य नहीं होता है। आप उसे द्रव्य तो कहते हो और द्रव्य कभी भी पर्याय रहित – पर्याय के सिवाय हो ही नहीं सकता क्योंकि द्रव्य उसीको कहते हैं कि जो गुण और पर्याय सहित होता है। ख्याल में आया?

तो आपने ऐसा माना कि काल में कुछ परिणमन नहीं होता है, लेकिन वह अन्य द्रव्यों के परिणमन में निमित्त है ऐसा आपका मानना है। लेकिन बात ऐसी है कि कालद्रव्य है तो कालद्रव्य की पर्याय भी होनी ही चाहिये। तो जो उसकी पर्याय है यानी जो उसका कार्य हो रहा है तो उसका कार्य क्या है कि उसमें परिणमनहेतुत्व यह उसका स्वभाव है। इसका अर्थ क्या? जो अनेक अन्य द्रव्य हैं, उनका जो कार्य हो रहा है, उनमें यह परिणमन होने में निमित्त है। वह उसका स्वभाव है। देखो, इसका अर्थ क्या हो गया? हमें छह द्रव्यों के, अभी

आपके पास तो जो पर्चा दिया है न, उसमें यह बात नहीं है फिर भी पुस्तक के माध्यम से हम देखेंगे। अच्छा हो गया, आपने अच्छा प्रश्न किया है। यह देखो, हमने यह अन्य-अन्य द्रव्य किसको कहते हैं और उनका क्या-क्या कार्य है? यह हम देखेंगे, तो हमारे मन में जो कुछ अलग भाव चल रहे हैं, वे भी हमें ख्याल में आयेंगे। देखो, आपके पास तो यह नहीं है, लेकिन मेरे पास है यह पुस्तक, जिनके पास है उनको मैं बताऊंगा।

देखो, मेरे इसमें पेज नंबर १० और क्वेश्चन नंबर ३६ है। अब सुनना अभी आप, जिनके पास पुस्तक नहीं है, चिंता नहीं करना। यहां कहते हैं कि धर्मद्रव्य किसे कहते हैं? तो कह रहे हैं, **स्वयं गमन करते हुये जीव और पुद्गल को गमन करने में जो निमित्त है उसे धर्मद्रव्य कहते हैं।** इसमें क्या मुख्य बात है? यह गमन करने की शक्ति, गमन करने की कपॅसिटि, जिसको हम कहेंगे निज शक्ति कौनसे-कौनसे द्रव्यों में है? हां, शमा? *श्रोता: जीवद्रव्य और पुद्गलद्रव्य में।* जीवद्रव्य और पुद्गलद्रव्य में। तो जीवद्रव्य और पुद्गलद्रव्य में ही गमन करने की शक्ति है, अन्य द्रव्य में नहीं है – यह हमने कैसे नक्की किया? हां चुप बैठो, कौन बोल रहा है? *श्रोता: धर्मद्रव्य के कारण।* हां, धर्मद्रव्य के कारण। यानी आपने यह नक्की किया कि धर्मद्रव्य निमित्त है और निमित्त से कार्य होता है। है न? सुनना, कोई बात नहीं। यह हमारे दिमाग में जो कुछ बातें चल रही हैं न, यह भाईसाहब ने बहुत अच्छा काम किया, मेरा काम हलका कर दिया। हमें मूल में बात समझ में आयेगी।

देखो, हमने इसके पहले जो ८ नंबर का पृष्ठ है, ८ नंबर के पृष्ठ में जो फूटनोट है, उसमें क्या बताया? क्रियावती शक्ति–वह सिर्फ जीवद्रव्य में और पुद्गलद्रव्य में है। यानी क्षेत्र से क्षेत्रांतर होना यह जिसमें निज शक्ति है। अब हम देखते हैं, इसके लिये थोड़ासा पीछे भी क्यों न जाना पड़े। यह जो धर्मद्रव्य है, यह प्रश्न किसीने पूछा था और वह कौन था मुझे याद नहीं है। तो धर्मद्रव्य कितना बड़ा है? तो कहते हैं, असंख्यातप्रदेशी है; जितना बड़ा लोकाकाश है उतना बड़ा धर्मद्रव्य है, उतना बड़ा अधर्मद्रव्य है। धर्मद्रव्य भी एक है और अधर्मद्रव्य भी एक है। अगर हम ऐसा मानते हैं कि धर्मद्रव्य में भी क्षेत्रांतर करने की क्षमता है, तो मान लो एक इंच भी वह हट जाये तो लोकाकाश के बाहर जायेगा। तो अनंत जिनेन्द्र भगवानों ने जो बात बतायी है; कौनसी बात बतायी है? कि यह लोकाकाश

उसीको कहेंगे कि जिसमें छह द्रव्य पाये जाते हैं। तो अलोकाकाश किसे कहना? तो कहते हैं जो लोकाकाश के अलावा जो अनंत आकाश है दसों दिशाओं में, जहां सिर्फ आकाशद्रव्य ही है, अन्य कोई द्रव्य नहीं है, वह अलोकाकाश है। अगर धर्मद्रव्य एक इंच भी बाहर जावे तो अलोकाकाश में जायेगा कि नहीं जायेगा? तो जिनेन्द्र भगवान की बात सच्ची रहेगी या झूठी होगी? ख्याल में आया?

देखो, ये द्रव्य कौनसे, जीवद्रव्य और पुद्गलद्रव्य इन दोनों में ही क्रियावती शक्ति है और वे एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाते हैं, यानी यह लोकाकाश में कहीं पर भी वे भ्रमण करते हैं। लेकिन अन्य चार द्रव्य जो हैं; धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और कालद्रव्य इनको निष्क्रिय द्रव्य कहने में आता है; निष्क्रिय यानी उनमें क्रिया नहीं होती ऐसी बात नहीं है लेकिन उनमें क्षेत्र से क्षेत्रांतर नहीं होता है, क्रियावती शक्ति नहीं है, इस अपेक्षा से उन्हें निष्क्रिय द्रव्य कहने में आता है। यह बात समझ में आयी? अगर हम ऐसा मानते हैं कि धर्मद्रव्य जीव और पुद्गलों को गमन कराता है तो कहते हैं, नहीं, ऐसी बात नहीं है। देखो यहां फिर से हम परिभाषा पढ़ते हैं। आपके पास पर्चा है न यह? पुस्तक है, बहुत बढ़िया। देखो १० नंबर के पेज में ३६ नंबर का प्रश्न। क्या कहते हैं?

धर्मद्रव्य किसे कहते हैं? तो कह रहे हैं कि स्वयं, स्वयं यानी खुद, क्या कर रहे हैं? गमन करते हुये कौन-कौन हैं? जीव और पुद्गल। यानी जीवद्रव्य और पुद्गलद्रव्य इनमें स्वयं में गमन करने की योग्यता है, कपॅसिटि है, वह कार्य वे स्वयं निज शक्ति से कर रहे हैं, तब गमन करने में जो निमित्त है, उसे क्या कहते हैं? उसको धर्मद्रव्य कहते हैं। तो धर्मद्रव्य, अभी जरा हम पीछे जाते हैं इसके। यह ७ नंबर के पृष्ठ में लिखा है विशेष गुण में। धर्मद्रव्य, देखो-देखो निकाला आपने? १६ वें नंबर के प्रश्न के उत्तर में तीसरी लाइन। धर्मद्रव्य में गतिहेतुत्व यह उसका विशेष गुण है। यानी गति में हेतु बनना, गति में निमित्त बनना ऐसा उस धर्मद्रव्य का स्वभाव है। गमन कौन कर रहा है साहब? *श्रोता: जीव और पुद्गल।* जीव और पुद्गल। तो धर्मद्रव्य के कारण से गमन कर रहा है कि नहीं? हां जी? *श्रोता: निमित्त से।* हां, धर्मद्रव्य निमित्त है। लेकिन जीव और पुद्गल में स्वयं में ऐसी योग्यता है कि वे स्वयं गमन करें। तो यहां क्या कहा, धर्मद्रव्य में यह बात हो गयी। फिर हमें तो जाना है कालद्रव्य तक। लेकिन इन सारे द्रव्यों के स्वरूप को देखते हुये हम आगे बढ़ेंगे।

तो कह रहे हैं अधर्मद्रव्य किसे कहते हैं? तो कह रहे हैं स्वयं गतिपूर्वक, तो गति करनेवाले कौन-कौनसे द्रव्य हैं सुलभाताई? हां सुलभाताई? गति करनेवाले द्रव्य कौन-कौनसे हैं? *श्रोता: जीव और पुद्गल।* जीव और पुद्गल। तो क्या कह रहे हैं स्वयं गतिपूर्वक स्थितिरूप परिणमन करनेवाले। यह ऐसी कंडिशन क्यों डाली? पहले जा रहे थे और अभी रुक गये। किसने रुकाया उसको? *श्रोता: अधर्मद्रव्य ने।* हां साहब, अधर्मद्रव्य ने? यही बात आपके दिमाग से निकालने के लिये मैं पूछ रहा हूं। क्या कह रहे हैं – स्वयं गतिपूर्वक स्थितिरूप परिणमन करनेवाले; तो जाना, गमन करना और स्थितिरूप रहना, वह जीव का और पुद्गल का निज स्वभाव है, ख्याल में आया? तो अगर गमनपूर्वक स्थिति नहीं करते, तो हमें धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य, कालद्रव्य इनमें भी उसको निमित्त मानना पड़ता। लेकिन वह निमित्त किसमें है? गमनपूर्वक स्थिति करनेवाले जीव और पुद्गलों में वह निमित्त है।

देखो, यह हमको लगता है सिद्धान्त प्रवेशिका क्या सीखना, क्यों सीखना? अरे! धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, जीवद्रव्य इसका स्वरूप हमारे ज्ञान में नहीं है, तो हमारी कितनी बड़ी गलतफहमियां होती हैं। तो क्या कह रहे हैं? फिर से देखो आपके सामने पर्चा है न? ११ नंबर पृष्ठ पर ३७ का प्रश्न है, अधर्मद्रव्य किसे कहते हैं? स्वयं गतिपूर्वक स्थितिरूप परिणमन करनेवाले जीव और पुद्गल को ठहरने में जो निमित्त हो उसे अधर्मद्रव्य कहते हैं।

देखो, इसके पहले हम यह धर्मद्रव्य की परिभाषा के आगे उदाहरण जो दिया है, उसको देखते हैं। जैसे गमन करती हुयी मछली को गमन करने में पानी। यह जो पानी होता है उसमें मछली होती है। तो मछली चलती है, एक जगह से दूसरी जगह जाती है तो पानी उसको चलाता है कि नहीं? *श्रोता: नहीं, खुद चलती है।* खुद चलती है, स्वयं चलती है। क्यों साहब? मछली नामक जो कोई जीवद्रव्य है वहां और उसका जो शरीर है, वह भी पुद्गलद्रव्य है, दोनों में अपनी-अपनी क्रियावती शक्ति है। यह हमारे अभी वीरेशभाई आये हैं बम्बई से। तो अपनी कार लेकर आये हैं न साहब आप? *श्रोता: ट्रेन से आये हैं।* तो ट्रेन लेकर आयी आपको यहां? हां, ठहरो-ठहरो, उनको बोलने दो। ट्रेन लेकर आयी न आपको? वे 'ना' बोलते हैं, 'ना' बोलते हैं। आप यहां कैसे आये? हवाई जहाज से। तो हवाई जहाज आपको लाया? बस से आये, तो बस लेकर आयी? मोटर से आये। तो

मोटर लेकर आयी? अरे! मोटर अपनी क्रियावती शक्ति से यहां आयी और मैं भी अपनी क्रियावती शक्ति से यहां आया और मैंने कहा कि मुझे मोटर यहां लेकर आयी। क्यों? जिसने जैनदर्शन को सही समझा है, वह ऐसी गलती नहीं करेगा। क्यों? यहां कहते हैं मछली जो है वह स्वयं गमन करती है, उसमें पानी निमित्त है। अगर पानी ही उसको गमन कराता होगा तो मछली को एक समय मात्र भी विश्रांति नहीं मिलती! गमन करना, गमन करना – क्यों? पानी में है न! पानी के बाहर आवे तो मर जावे और पानी में रहे तो रुकने को फुरसत नहीं मिले। क्यों? पानी उसको गमन कराता है। ऐसा अगर धर्मद्रव्य जीवद्रव्य को गमन करावे तो यहां हम शांति से बैठ भी नहीं पायेंगे। ख्याल में आया?

तो यह निमित्त कार्य नहीं करता है, जब स्वयं जीव परिणमित होता है, एक जगह से दूसरी जगह जाता है तो वह जाने में धर्मद्रव्य निमित्त है और गमन करने में धर्मद्रव्य निमित्त है और जो गमनपूर्वक स्थिति करते हैं, आप अपने-अपने रूम्स में बैठे थे, वहां से यहां आये और बैठे, तो अधर्मद्रव्य ने आपको ऐसा पकड़ कर बिठाया कि नहीं? अधर्मद्रव्य है, उसने पकड़ कर बिठाया कि नहीं? आप स्वयं बैठे। तो निमित्त कौन है? देखो भाई, अगर हम ऐसा मानेंगे न? मैं मनुष्य हूं ऐसा मान लेते हैं एक दो मिनट के लिये; तो यह धर्मद्रव्य जो है वह पूरे लोकाकाश में है, एक ही द्रव्य पूरे लोकाकाश में है; अधर्मद्रव्य पूरे लोकाकाश में, एक ही है, दोनों ही असंख्यातप्रदेशी हैं। जैसा जीवद्रव्य भी असंख्यातप्रदेशी है, वैसे ये दो द्रव्य जो धर्म और अधर्मद्रव्य हैं दो, वे भी असंख्यातप्रदेशी हैं। तो यहां लोकाकाश का एक भी ऐसा पोर्शन नहीं है कि जहां धर्मद्रव्य और अधर्मद्रव्य नहीं हैं। हर क्षेत्र में, लोकाकाश के हर क्षेत्र पर, हर प्रदेश पर धर्मद्रव्य भी है और अधर्मद्रव्य भी है। तो क्या होगा? कोई मनुष्य, मेरी बात लेता हूं न? तो यह धर्मद्रव्य मुझे चलो-चलो बोलकर मेरी एक टांग पकड़ कर खींचे और अधर्मद्रव्य, रुक जाओ, रुक जाओ, रुक जाओ कहकर मेरी दूसरी टांग खींचे। तो क्या होगा? अरे! दो टुकड़े हो जायेंगे। लेकिन मुझे जब जाना है तब मैं स्वयं के निज शक्ति से, उपादान कारण से मैं चलूंगा और मैं अपने उपादान कारण से रुकूंगा; इसमें धर्मद्रव्य और अधर्मद्रव्य निमित्त हैं। ख्याल में आया?

देखो-देखो, यहां क्या कहते हैं? अधर्मद्रव्य किसको कहते हैं? **स्वयं गतिपूर्वक स्थितिरूप परिणमन करनेवाले जीव और पुद्गल को ठहरने में जो निमित्त हो, उसे**

अधर्मद्रव्य कहते हैं। जैसे पथिक को, पथिक यानी समझ में आया? राहगीर, चलनेवाला कोई व्यक्ति। क्या आप अंग्रेजी में क्या बोलते हो? *श्रोता: पेडेस्ट्रिअन।* पेडेस्ट्रिअन चलो ठीक है, चलनेवाला व्यक्ति। तो कहते हैं पथिक को, चलनेवाले व्यक्ति को, ठहरने में वृक्ष की छाया। अभी हम जा रहे हैं, बहुत गर्मी है तो हम दौड़े-दौड़े जाकर, छांव में जाकर खड़े रहते हैं। यहां के पहले के जमाने की बात है तो रास्ते पर जाते-जाते झाड़ होते थे। तो झाड़ के नीचे से जाये, तो झाड़ पकड़कर रखता है न अपने को? उसमें भूत है इसलिये? क्या है? अगर वृक्ष की छाया हमें रुका दे तो वहां से बाहर कौन निकालेगा? वैसे अधर्मद्रव्य हर एक जीव, पुद्गल को बिठा दें, तो उनका गमन रुक जायेगा। तो यहां क्या कह रहे हैं? स्वयं जीव और पुद्गल गतिपूर्वक स्थित हो जाते हैं, गमनपूर्वक रुक जाते हैं। जब रुकते हैं, तो स्वयं अपनी योग्यता से रुकते हैं और उस रुकने में अधर्मद्रव्य निमित्त है।

तो अभी निमित्त से कार्य होता है कि नहीं! हां साहब? *श्रोता: नहीं होता है।* नहीं होता है, बहुत अच्छा! इतना तो कम से कम सीख गये आप। क्या कह रहे हैं? निमित्त से कार्य नहीं होता है? लेकिन जब-जब कार्य होता है, तब-तब निमित्त अवश्य होता ही है। अब आगे। आकाशद्रव्य किसे कहते हैं? **जो जीवादिक पांचों द्रव्यों को रहने के लिये स्थान देता है उसे आकाश द्रव्य कहते हैं।** आकाशद्रव्य सर्वव्यापक है, सर्वत्र है यानी यह आकाशद्रव्य का गुण कौनसा है? तो जिसको हम कहेंगे अवगाहनहेतुत्व। अवगाहनहेतुत्व यानी जिस किसीको जगह देना, ऐसा जिसका स्वभाव है। यह उसका स्वभाव है दूसरे को अवगाहना देना; किसको? तो कहते हैं जीवादि पांच द्रव्यों को।

अब वह बीचवाले जो ४० और ४१ प्रश्न को छोड़ते हुये हम आगे बढ़ते हैं क्योंकि हमें देखना है न कि कालद्रव्य क्या करता है? मणिभाई ४२ नंबर का प्रश्न है। कहते हैं कालद्रव्य किसे कहते हैं? तो उत्तर क्या दिया? अपनी-अपनी अवस्थारूप से, अवस्थारूप यानी क्या? पर्यायरूप से स्वयं परिणमते हुये यानी स्वयं कौन परिणमन कर रहा है? तो कहते हैं जीवादिक। तो जीवादिक, आदिक में किसको-किसको लेना? हां, बोलो? हां बोलो तुम बोलो, हां जी? द्रव्यों के नाम बोलो भैया। *श्रोता: पुद्गलद्रव्य।* पुद्गलद्रव्य और? *श्रोता: धर्मद्रव्य।* धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और कालद्रव्य। तो कालद्रव्य परिणमन में निमित्त है। लेकिन स्वयं के परिणमन में भी कालद्रव्य स्वयं निमित्त है। आकाशद्रव्य

में दूसरों को अवगाहना देने की शक्ति है तो स्वयं को अवगाहना देगा कि नहीं? यह थोड़ी सूक्ष्म बात है, लेकिन इतनी बात ध्यान रखना कि कालद्रव्य जो अपनी-अपनी अवस्थारूप से। तो कालद्रव्य है, तो उसका परिणमन होता होगा कि नहीं वह अपनी-अपनी अवस्थारूप से जो परिणमें। स्वयं परिणमते हुये जीवादिक द्रव्यों में–तो जीवादिक में जीव के साथ अन्य पांच द्रव्य ले लेना–पुद्गलद्रव्य, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और कालद्रव्य – **परिणमन में जो निमित्त हो उसे कालद्रव्य कहते हैं। जैसे कुम्हार के चाक को घूमने के लिये लोहे की कीली।**

यह बच्चों को तो नहीं समझेगा क्योंकि आपने घर-घंटी देखी है? जिसको हम मराठी में जातं बोलते हैं। गुजरातीमां शुं केहवाय, घंटी ज केहवाय ने। हां? जो भी है आप समझ लो। हिंदी में क्या कहते हैं, मैं नहीं जानता हूं। *श्रोता: चक्की।* चक्की-चक्की। वह जो चक्की होती है, इसमें नीचे एक पत्थर होता है, वह फिक्स्ड् होता है और उसके बीच में एक कीली होती है, लोहे की ऐसी एक डंडी होती है और उसके ऊपर ऐसा एक दूसरा पत्थर होता है जिसको ऊपर से सुराख होता है, बाजू में ऐसा, हॅण्डल होता है वह गोल-गोल ऐसा घुमाते हैं। वह बीच में कीली है, जिसके बाजू में अनाज डाला जाता है।

तो यहां क्या कह रहे हैं? देखो, कह रहे हैं जैसे कुम्हार के चाक, यह कुम्हार के पास जो चक्का होता है उसको भी कीली पर रखते हैं, कुम्हार चाक को घुमाता है लेकिन कीली निकाल दें और चाक को घुमावें तो क्या होगा? *श्रोता: चाक घूमता रहेगा।* चाक घूमता रहेगा? अरे! जगह छोड़कर कहीं भाग जायेगा अपनी भाषा में और वह कीली जो है उसके कारण वह वहीं रहता है, कहीं भागता नहीं। तो क्या कह रहे हैं? देखो, ऐसा समझा रहे हैं कुम्हार के चाक को घूमने के लिये लोहे की कीली; तो लोहे की कीली है वह कुम्हार के चाक को घुमाती है कि नहीं? हां या ना में जवाब चाहिये हमें। *श्रोता: नहीं।* नहीं, लेकिन वह निमित्त है। वह घुमाती नहीं है।

तो घुमाता कौन है? वह डंडा? अरे! वह भी निमित्त है, चाक अपनी योग्यता से घूम रहा है। यह देखो, बारीक-बारीक बातें होती हैं न? उसमें हमें बराबर ख्याल रखना चाहिये। अभी यहां जो आप कह रहे हैं कि कालद्रव्य है। तो कालद्रव्य है, तो वह गुण-पर्याय सहित होना चाहिये। उसमें अनंत गुण हैं और अनंत गुणों की एक-एक समय में

एक-एक पर्याय हो रही है। पर्याय रहित द्रव्य होता ही नहीं। तो यहां बता रहे हैं हम, यह अपना प्रश्न क्या चल रहा था, यह १० वें नंबर पर आये थे न हम? कहां आये थे? नहीं, नहीं, नहीं, यह कालद्रव्य आपने बताया था निमित्त है, तो मैंने पूछा था कि कालद्रव्य निमित्त है या उसकी पर्याय निमित्त है? तो आपने कहा उसकी पर्याय नहीं होती है। वहां से बात यह निकली। चलो, तो हम देखते हैं कि यहां हमने देखा है कि निमित्त से कार्य नहीं हो रहा है इस बात की पुष्टि के लिये यह हमने द्रव्यों का स्वरूप देखा और द्रव्यों का जब हम स्वरूप देखते हैं, उनके विशेष गुण हैं, वह भी पर का कार्य तो कुछ नहीं करते लेकिन निमित्त होते हैं। तो मैंने आपसे पहले पूछा था कि ऐसा कौनसा द्रव्य है कि जिसको हम निमित्तरूप द्रव्य कहेंगे? ऐसा कोई विशिष्ट द्रव्य होगा न छह द्रव्यों में? तो उसका उत्तर यह है कि प्रत्येक द्रव्य एक दूसरे को निमित्त है, ख्याल में आया? यानी हम ऐसा मानते हैं कि कोई विशिष्ट द्रव्य होगा वही निमित्त का कार्य करता है, ऐसी बात नहीं है।

अभी देखो अभी हम जरा बोर्ड की तरफ देखेंगे, उसमें क्या लिखा है?

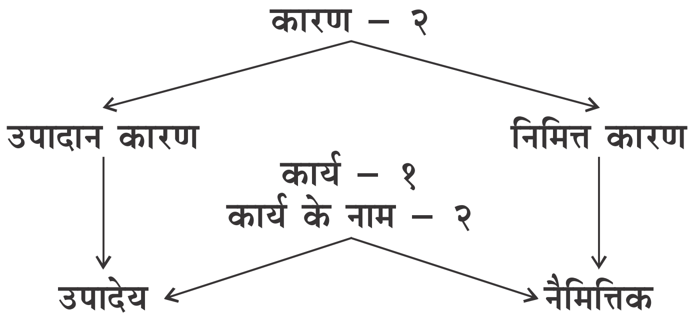

कारण कितने होते हैं? *श्रोता: दो।* और कार्य कितने होते हैं? *श्रोता: एक।* दो कारणों में जो उपादान कारण है, निज शक्ति है, उससे ही कार्य होता है और जब-जब उसका कार्य हो रहा है तब-तब निमित्त कारण वहां होता ही होता है। लेकिन उसमें विशेषता क्या है? निमित्त कारण होता ही है, लेकिन वह कार्य में कुछ नहीं करता। कार्य में मदद करें, कोई उसको इफेक्ट करें या असर करें या उसको प्रेरणा दे, परोपकार करें, ऐसी कोई बात है नहीं। तो कहते हैं कार्य होता है तो मैं पूछूंगा कि ये जो अनंत द्रव्य हैं, तो अनंत द्रव्यों की अनंत गुणों की एक-एक समय में एक-एक पर्याय हो रही है, वह द्रव्य का जो स्वभाव है, उसके लिये उसका कार्य हमेशा निरंतर होता है और उसको रिस्पेक्टिव्हलि जो

कोई निमित्त होगा। आप जानते हैं एक समय में कितने जीव क्षेत्र से क्षेत्रांतर करते होंगे? बोलो त्रिशला? यू डोंट नो, गुड! *अन्य श्रोता: अनंत।* क्या कहा उसने? अनंत द्रव्य एक जगह से दूसरी जगह जाते हैं। बिलकुल सही बात है, क्योंकि ये निगोदिया जीव हैं न, एक साथ मरकर इधर से उधर जायेंगे, दूसरे कहीं निगोद अवस्था जहां होगी वहां जायेंगे, तो अनंत जाते हैं। तो इतने अनंत एक साथ गमन करते हैं तो उनको निमित्त कौन होगा? *श्रोता: धर्मद्रव्य।* धर्मद्रव्य। तो हमको अनंत धर्मद्रव्य ढूंढ़ने की जरूरत नहीं है, एक धर्मद्रव्य अनंत जीव और अनंत पुद्‌गलों को निमित्त होता है। तो अपना कितना काम हलका हो गया कि नहीं? निमित्त को ढूंढ़ने की गरज है क्या? जब-जब कार्य होता है तब-तब निमित्त अवश्य होता ही है। इसकी कथा सुनाते हैं।

जब मारीचि अवस्था का जीव जो था, कब था? आदिनाथ भगवान के समवशरण में वह था। वही जीव आगे बढ़ते, बढ़ते, बढ़ते सिंह की पर्याय में आया। तो सिंह की पर्याय में क्या विशेषता हुई पल्लवी? *श्रोता: उन्हें सम्यग्दर्शन हुआ।* उन्हें सम्यग्दर्शन हुआ, उस सिंह की पर्यायवाला जो जीव था, जो मारीचि का ही जीव था। उसे क्या हुआ? सम्यग्दर्शन हुआ। तो कार्य कौनसा हुआ साहब? सम्यग्दर्शन यह एक कार्य हुआ, तो उस कार्य में निमित्त तो कोई चाहिये कि नहीं? तो कौन निमित्त थे? *श्रोता: दो चारणऋद्धिधारी मुनि थे।* दो चारणऋद्धिधारी मुनि थे। उन्होंने आकर उसको उपदेश दिया और उस जीव ने अपने स्वरूप में लीनता की। कौनसी अवस्था में? तिर्यंच अवस्था में और उसे सम्यग्दर्शन हुआ। तो जब सम्यग्दर्शन होने का समय आया—पांच, दस, पंद्रह, बीस क्या सेकंड नहीं, समय बाकी रहे, तो ढूंढ़ते फिरते होंगे कि नहीं, कि कहां से, कौन आ रहा है? निमित्त कहां से आ रहा है, कहां से आ रहा है? कहते हैं जब कार्य होना होता है, तब निमित्त आकाश से उतरता है। आकाश से उतरता है का अर्थ क्या है? सहजरूप से उपलब्ध होता है। इसलिये हमें निमित्त ढूंढ़ने में व्यस्तता नहीं करनी चाहिये। ख्याल में आया? यह तो सहज ऐसा निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। निमित्त-नैमित्तिक क्या होता है, वह भी देखेंगे। जो कार्य होता है उसको नैमित्तिक कहते हैं और वह जो कार्य है उसमें जो बाह्य कारण है उसको निमित्त कहते हैं।

जैसा हमने देखा था कुम्हार ने घड़ा बनाया, ऐसा हम कहते हैं। तो इसमें कार्य

कौनसा हुआ ? घड़ा बना, यह कार्य हुआ। तो उसमें निमित्त कौन है ? हां, कुम्हार। कुम्हार निमित्त है, कार्य क्या हुआ ? तो घड़ा बना यह नैमित्तिक है और उसमें कारण कौन है ? निमित्त कारण कुम्हार है। तो देखो यही बात यहां पर बतायी जा रही है। यह जो कारण है उसके दो भेद बताये। कौन-कौनसे ? एक उपादान कारण और एक निमित्त कारण। कार्य क्या हुआ तो घड़ा बना। तो यह घड़ा बनने का जो कार्य है, इसके भी दो नाम हैं। कौन-कौनसे ? एक कार्य के दो नाम–एक नाम है उपादेय और दूसरा नाम है नैमित्तिक। हां, तो देखो, जब इस कार्य को निमित्त की अपेक्षा से कहने में आता है तो उसी कार्य का नाम नैमित्तिक है और जो कार्य हुआ, किससे हुआ ? उपादान कारण से हुआ। तो उसी कार्य को उपादान की अपेक्षा से उपादेय कहते हैं। यह बात ख्याल में आती है ? लोगों को भूख तो नहीं लगी है न ? कोई हां या ना में जवाब नहीं देवे तो हम क्या समझे ?

कार्य एक, कार्य के नाम दो; कारण दो; एक उपादान कारण और एक निमित्त कारण। उपादान की अपेक्षा कार्य को हम उपादेय कहेंगे लेकिन निमित्त की अपेक्षा से उसी कार्य को हम नैमित्तिक कहेंगे। अभी यहां हमने क्या देखा ? घड़ा बना। घड़ा बना, यह कार्य हुआ तो वह किससे हुआ ? तो हमने कहा कुम्हार से हुआ। तो कुम्हार यानी निमित्त की अपेक्षा से उसी कार्य को नैमित्तिक कहेंगे। तो हम बार-बार देखते हैं, गुरु से ज्ञान हुआ, ऐसा जब हम कहते हैं तो ज्ञान होना यह कार्य हुआ। उसमें निमित्त कौन है ? गुरु। तो उस गुरु की अपेक्षा से जो ज्ञान होने का कार्य हुआ उसको नैमित्तिक कहेंगे। तो शास्त्र में ऐसे निमित्त-नैमित्तिक संबंध के कथन बहुत आते हैं और उसी कार्य को उपादान की अपेक्षा से जब हम देखते हैं, तो उसको उपादेय कहने में आता है।

यहां ज्ञान हुआ, तो वह जीव की स्वयं की जो निज शक्ति थी, उसके कारण उसे ज्ञान हुआ। तो निज शक्ति यह उपादान है तो उसकी अपेक्षा से, जो ज्ञान होनेरूप कार्य हुआ, वह उपादेय है। अभी आपने शायद सात तत्त्व भी पढ़े होंगे; उन सात तत्त्वों में ज्ञेय, हेय और उपादेय ऐसे शब्द भी आपने सुने होंगे। तो वहां ज्ञेय का अर्थ होता है जानने योग्य, हेय का अर्थ होता है त्यागने योग्य और उपादेय का अर्थ है ग्रहण करने योग्य या आश्रय करने योग्य जो भी हो। वह जो उपादेय का वहां अर्थ है, वह अर्थ यहां नहीं है। यहां उपादेय का अर्थ क्या है ? जो कार्य बना उसको यहां उपादान की अपेक्षा से हम उपादेय कहेंगे। यह बात समझ में

आती है? हमने पहले आपको बताया कि धर्म ऐसा कहेंगे तो धर्म के भी अनेक अर्थ होते हैं। लेकिन जहां जो योग्य अर्थ है वह हमें लेना है। उसीतरह क्या कह रहे हैं? उपादेय के भी अनेक अर्थ हैं। लेकिन यहां उपादेय का अर्थ, कार्य जो हुआ है उसको उपादेय कहने में आ रहा है। यह बात कुछ समझ में आ रही है? श्लोका को तो आ गयी, बहुत अच्छा! तो देखो, शास्त्र में निमित्त-नैमित्तिक के कथन बहुत होते हैं लेकिन हम उसको ऐसा मानेंगे कि निमित्त से ही कार्य हुआ तो गलती किसकी है? कथन करनेवाली की? *श्रोता: माननेवाले की।* माननेवाली की। बहुत अच्छा। तो यहां क्या कह रहे हैं कि कोई ऐसा कहेगा कि भाई जब निमित्त से कार्य ही नहीं होता है तो यह निमित्त का झमेला काहे को आपने खड़ा कर दिया है? उसकी बात ही नहीं करते तो कितना अच्छा होता, हमारा कन्फ्यूजन कम होता। हमारी मान्यता में घोटाले जो हो रहे हैं वे कम होते। तो मैं आपसे पूछता हूं आपका स्वभाव क्या है? हां साहब? *श्रोता: सर्वज्ञ स्वभाव है, उसमें जानना, जानना, जाननारूप कार्य हो रहा है।* तो स्वभाव अगर हमारा सर्वज्ञ है, सर्वज्ञता ऐसा जो अपना स्वभाव है तो उसमें हम निमित्त को छोड़कर सब कुछ जानोगे तो पर्याय में सर्वज्ञता प्राप्त होगी कि नहीं?

अरे! जो है, उसका तो हमें ज्ञान होना ही है और वह सच्चा ज्ञान होगा उसीको सम्यग्ज्ञान कहा था, आपको याद होगा तो। तो सच्चा ज्ञान किसको कहना? कि जो कम भी नहीं जाने, अधिक भी नहीं जाने, संशयरूप भी नहीं जाने और विपरीत भी नहीं जाने, जैसा है वैसा जाने। तो विश्व में जब-जब कार्य होता है तब-तब उपादान से होता है और वहां निमित्त होता है यह ज्ञान अगर किसीको नहीं होगा तो क्या वह सर्वज्ञ बन सकेगा? बात ख्याल में आ रही है? तो अभी यहां क्या बता रहे हैं कि निमित्त का कथन ही क्यों करते हैं? जो है उसको बतायेंगे। लेकिन हमें हमेशा याद रखना है कि कार्य तो उपादान से यानी निज शक्ति से ही होता है लेकिन जब-जब कार्य होता है तब-तब निमित्त अवश्य होता ही है।

अभी निमित्त की परिभाषा किसीको याद हो गयी है क्या? कौन बता पायेगा? आपको याद है? दोपहर की क्लास में सुनूंगा मैं, याद करके आना। त्रिशला तुम्हें याद है? नहीं। कौन बताना चाहता है? आपने हाथ उठाया था? बोलो-बोलो। रश्मिबेन मैं आपसे पूछ रहा हूं। *श्रोता: कार्य होता है, उसमें निमित्त होता है।* कोई बात नहीं, बहुत अच्छा! आपने प्रयास तो बहुत अच्छा किया है। यहां कोई बताना चाहता है? *श्रोता: जो पदार्थ*

कार्यरूप परिणमता नहीं है परंतु कार्य में अनुकूल होता है। अच्छा-अच्छा, देखो-देखो मैं आपसे, आपने भी सही बताने की कोशिश की है लेकिन मैं तो बिलकुल वर्ड टू वर्ड जैसा है, ऐसा सबको कण्ठस्थ हो जाये इसके इंतज़ार में रहूंगा। क्योंकि जब तक हम उसकी परिभाषा याद नहीं करते हैं तब तक उसका जो अर्थ है, वह हमें भासित नहीं होगा। देखो-देखो, आप बोलना चाहती हैं? हां, बोलो-बोलो शाबाश। *श्रोता: जो पदार्थ कार्यरूप न परिणमें, कार्य की उत्पत्ति में... ।* कौन बोल रहा है, पीछे से कोई बोल रहा है? हां कौन बोल रहा है? हां बोलो बहन? इसने तो करीबन बता दिया है। आप बोलिये आगे। *श्रोता: जो पदार्थ स्वत: कार्यरूप परिणमित होत नाहीं परंतु कार्याच्या उत्पत्तिमध्ये अनुकूल होण्याचा आरोप ज्याच्यावर येतो।* बहुत अच्छा! बहुत अच्छा! आपने मराठी में जवाब दिया और कोई बात नहीं। आपको यही कहना है कि जो पदार्थ यानी जो द्रव्य उसकी क्या विशेषता है? स्वयं तो कार्यरूप न परिणमें, इसको हम कार्य में दाखिल करते हैं। अरे! वह तो कह रहे हैं, निमित्त हम उसीको कहेंगे कि **जो स्वयं तो कार्यरूप न परिणमें लेकिन कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होने का आरोप जिस पर आ सके उसे निमित्त कहेंगे।**

देखो यह परिभाषा याद हो जाती है तो यह निमित्त का जो कन्सेप्ट है, वह बिलकुल हमारे ज्ञान में आये बिना रहेगा नहीं। लेकिन हम थोड़ीसी, मतलब ऐसी जिसको हम कहेंगे, प्रयत्नपूर्वक कोशिश करेंगे तो यह याद हो जायेगी, उसमें कोई रटने की जरूरत नहीं है। तो निमित्त किसको कहना? जो स्वयं कार्यरूप नहीं परिणमें। फिर उसको क्यों रखा? लेकिन कार्य की जो उत्पत्ति हो रही है, कब हो रही है? हमेशा हो रही है, हर समय हो रही है। उसमें जो अनुकूल लगता है, जो चलने में निमित्त है, कौन? अधर्मद्रव्य? नहीं, धर्मद्रव्य, तो हमको कैसे जल्दी याद आ गया, ख्याल में आया न? चलने में धर्मद्रव्य निमित्त है, वह अनुकूल है और रुकने में? *श्रोता: अधर्मद्रव्य।* वह स्वयं तो गतिरूप नहीं हो रहा है, न स्वयं स्थितिरूप हो रहा है। अरे! परंतु अधर्मद्रव्य तो है न, वह स्थितिरूप है न? नहीं, जो स्वयं गतिपूर्वक स्थिति करता है उसके लिये वह निमित्त है। गतिपूर्वक स्थिति करनेवाला कौन है? जीवद्रव्य और पुद्गलद्रव्य। निमित्त कौन है? अधर्मद्रव्य। अधर्मद्रव्य तो एक ही जगह रुका है। ऐसे हम सोचेंगे, इसतरह हम याद करेंगे, बहुत आसान है, इसमें क्या बड़ी बात है। क्योंकि निमित्त का कन्सेप्ट, अपनी भाषा में निमित्त क्यों है, किसलिये बताया है? वह होता है तो उसको बतायेंगे ही बतायेंगे; अगर नहीं होता है उसको क्यों बतायेंगे?

तो यहां हमने देखा कि यह जो उपादेय है, उसीका दूसरा नाम है नैमित्तिक। तो नैमित्तिक जो कहा जाता है, उस कार्य को जो नैमित्तिक कार्य हम कहेंगे तो वह उसमें कौनसी अपेक्षा है? निमित्त की अपेक्षा है और उसी कार्य को उपादेय भी कहेंगे, वह किसकी अपेक्षा से? उपादान की अपेक्षा से। यह बात ख्याल में आती है? समझ में आती है? भले ही आप बोल नहीं पायेंगे, लेकिन कम से कम समझते तो हैं कि नहीं?

हां, चलो अब आगे बढ़ते हैं। आपने तत्त्वार्थसूत्र पढ़ा होगा? पढ़ा है कि नहीं? तो तत्त्वार्थसूत्र में एक बात आती है। कौनसी? परस्परोपग्रहो जीवानाम्। क्या लिखा? परस्परोपग्रहो जीवानाम्। तो यहां जो उपग्रह शब्द जो है, वह किस अर्थ में है? निमित्त के अर्थ में। क्या कहा? और हम कहते हैं कि एक को दूसरे का उपकार करना चाहिये। उपग्रह का अर्थ क्या किया? तो कहते हैं उपकार करना चाहिये, तो लौकिक में उपकार करना ऐसा उसका जो अर्थ है वह यहां नहीं है। यहां तो कहते हैं परस्पर एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को निमित्त होता है क्योंकि आपने ठीक तरह से पढ़ा होगा तो उसमें बात ऐसी आती है। कैसी आती है?

वहां ऐसा लिखा है कि पुद्गलद्रव्य जीव के सुख में, दुःख में, उपदेश आदि में, जन्म देने में व मरण में उपकारी है। तो यह उपकारी का अर्थ क्या है? निमित्त है। तो यहां ऐसा कह रहे हैं कि मरण में निमित्त है यह उपकार है या अपकार है? तो कहते हैं कि आप इसको उपकार क्यों मान रहे हो? तो कहते हैं, वह उपकार का अर्थ तुमने गलत लिया है। यहां क्या कहते हैं? यह जो पुद्गल है वह भी जीव के, जन्म में भी उपकारक है और मरण में भी उपकारक है। तो मरण होने में उसका उपकार कहेंगे क्या हम? तो उपकार का अर्थ यहां पर निमित्त तरीके से कहा गया है क्योंकि वह सूत्र जो है न उसके पहले के अगर चार-पांच सूत्र हम देखेंगे, तो वहां आचार्यों ने ही बताया है कि उपकार का अर्थ निमित्त ऐसा है। जीवों को एक दूसरे की मदद करनी चाहिये, ऐसा इस सूत्र का अर्थ नहीं है। तो कैसा है?

जिसतरह अन्य द्रव्य, जीवों के कार्यों में निमित्त हैं, उसीतरह एक जीव, अन्य जीव को निमित्त है। निमित्त है का अर्थ क्या है? वह उसमें कुछ नहीं कर रहा है। जो कुछ हो रहा है वह अपने-अपने द्रव्य में, अपने-अपने निज शक्ति से हो रहा है, उसमें अन्य द्रव्य निमित्त हैं। परंतु इसका अर्थ ऐसा कदापि नहीं है कि एक द्रव्य, दूसरे द्रव्य का कार्य करता हो,

कार्य में मदद करता हो, प्रेरणा देता हो। उपकार अर्थात् निमित्त कहना, वह द्रव्य की सहज उपस्थिति दर्शाता है, अन्य कुछ नहीं है। ख्याल में आया? क्या होता है कि अगर हम सही अर्थ का अन्यथा ही कुछ अर्थ कर देते हैं, तो हमारी मान्यताओं में गड़बड़ी हो जाती है, तो इसलिये यह बात बता रहे हैं।

हम लिखते हैं कि जिओ और जीने दो। तो तू पर को जिला सकता है क्या? यह तो नक्की करो! वह जो जी रहा है उसमें तुम निमित्त हो सकते हो। जैसे हमारे घर में बच्चें हैं, वे बड़े-बड़े होते जा रहें हैं, तो उनको खाना आदि देना। वह तो उनके पुण्य के उदय से उनको मिल रहा है लेकिन उसमें निमित्त हम हैं। हम ही गधे के जैसा काम कर रहे हैं चौबीस घंटे, हमारे बच्चों के लिये। क्या करें, उनके पुण्य का उदय ऐसा है उसमें निमित्त हम हैं। लेकिन हम उनको बड़ा कर रहे हैं, हम उनको खिला पिला खिला रहे हैं, ऐसी बात नहीं है। इसतरह यहां पर बता रहें हैं कि एक-दूसरे में निमित्त हो सकता है। इसतरह से हमने यह बात देखी है।

गुरु से ज्ञान होता है यह भी निमित्त का कथन है। तो मेरा आपसे एक प्रश्न है कि दिव्यध्वनि से ज्ञान होता होगा कि नहीं? *श्रोता: नहीं होता है।* हां, नहीं होता है। उसका कोई कारण बता पायेंगे हम? बोलो नेमिचंदजी। *श्रोता: दोनों भिन्न हैं।* हां, तो उसको प्रूव्ह करो न भाई! आपने कहा वह सही कहा कि दोनों भिन्न हैं। क्या-क्या भिन्न हैं? भाषावर्गणा और जीवद्रव्य का ज्ञान गुण। कौनसा अभाव है दोनों में? *श्रोता: अत्यंताभाव है।* अत्यंताभाव है। देखो, हम एक-एक जो स्टेप्स आगे बढ़ते हैं, तो यह जो द्रव्यों की स्वतंत्रता है और जो हमें सिद्धान्त सिखाये जा रहें हैं या हम सीख रहें हैं, उनको बल मिलते जाता है। कहेंगे हम जरूर कि शास्त्र पढ़ने से ज्ञान होगा, सच्चा उपदेश सुनने से हमें ज्ञान होगा। कहना बात जुदी है, लेकिन ऐसा ही मानना, वह गड़बड़ी का काम है। इसीतरह जो शास्त्र में अनेक सिद्धान्त आते हैं उनका सही अर्थ समझना चाहिये।

यह क्या कहते हैं कि जो केवली होते हैं या श्रुतकेवली होते हैं उनके पादमूल में ही किसी जीव को क्षायिक सम्यग्दर्शन होता है। आपने नहीं सुना है? क्या कह रहे हैं? जो तीर्थंकर हो या केवली हो या श्रुतकेवली हो, उनके सान्निध्य में ही, पादमूल में का अर्थ क्या है? उनके सान्निध्य में ही, किसी जीव को क्षायिक सम्यक्त्व होता है। तो क्षायिक सम्यक्त्व

प्राप्त करना जो है वह उस जीव की स्वयं की योग्यता से होगा या सामनेवाला कोई केवली उसको दे देवे? केवली को क्या हर्जा है? *श्रोता: स्वयं की योग्यता है।* केवली तो अनंतवीर्य के धारक हैं, उनको दूसरों को क्षायिक सम्यग्दर्शन देने में क्या तकरार है? कहते हैं, जो केवली हैं, वे पहले वीतरागी हैं और वे, मैं इसको क्षायिक सम्यक्त्व दे दूं, इसको नहीं दूं; ये दो अच्छे हैं, चलो, उनको दे देवें, ये, ये, ये बराबर नहीं, इनको नहीं देवें – ऐसे उनके परिणाम होंगे कि नहीं? ख्याल में आया? यानी वे कैसे हैं? वीतरागी हैं और इसलिये वे दूसरों को दे भी नहीं सकते, यह भी तो अलग बात है। पहले तो उनको वीतरागता है कि नहीं, वह तो बात जुदी क्योंकि श्रुतकेवली शायद परिपूर्ण वीतरागी नहीं होवें, लेकिन वे तो यह जानते हैं न कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता क्योंकि स्वचतुष्टय को छोड़कर परचतुष्टय में किसी जीव का कोई गुण या कोई पर्याय जा ही नहीं सकती, ख्याल में आया? इसतरह जब-जब हम यह सोचते हैं, तो हमें सही सोचना चाहिये।

अब इसमें और एक बात आती है, निमित्त के भी दो भेद बताये गये हैं। निमित्त के दो प्रकार - दो भेद बताये हैं। उसमें से एक भेद है अंतरंग निमित्त और दूसरा है बहिरंग निमित्त। तो अंतरंग निमित्त और बहिरंग निमित्त यानी क्या? अभी तो हम उपादान की बात बाद में देखेंगे, अभी हम निमित्त की बात पहले देखेंगे। तो निमित्त के भी दो भेद हैं, कौन-कौनसे? एक अंतरंग निमित्त और दूसरा? *श्रोता: बहिरंग निमित्त।* बहिरंग निमित्त। तो अंतरंग निमित्त किसको कहना और बहिरंग निमित्त किसको कहना? इसको भी थोड़ा समझने की हम कोशिश करेंगे। कोई यहां जानता है? अंतरंग निमित्त किसे कहते हैं? आप बहन जानती हैं? हां बोलो-बोलो। *श्रोता: जो दिखायी नहीं देता है वह अंतरंग निमित्त।* जो दिखायी नहीं देता है, वह? *श्रोता: अंतरंग निमित्त।* अंतरंग निमित्त और जो दिखायी देता है वह? *श्रोता: बहिरंग निमित्त।* बहिरंग निमित्त, क्या यह बात सच्ची है? और कोई बतावे, हंसाबेन आप बतायेंगे? *श्रोता: क्रोध आवे छे... क्रोधनो भाव आवे त्यारे अंतरंग निमित्त तो ते कर्मनो उदय-अंतरंग निमित्त।* आप उदाहरण दे रहे हैं कि भाई, किसीको क्रोध आया, तो उसमें अंतरंग निमित्त तो वह क्रोध कर्म का उदय है। यानी आपने सही उदाहरण दिया, उसमें कोई दो राय नहीं है।

लेकिन हमें अंतरंग निमित्त किसे कहते हैं? इसकी परिभाषा, व्याख्या, डेफिनिशन

चाहिये। आपने उदाहरण बिलकुल सही दिया। *श्रोता: बहिरंग संयोग, बहिरंग निमित्त संयोग।* नहीं। हां, कौन बताना चाहेगा, आप बतायेंगे? *श्रोता: जो नियमरूप से होता ही है उसे अंतरंग निमित्त कहते हैं।* हां, देखो, ये भाईसाहब यहां फ़रमा रहे हैं जो निमित्त नियमरूप से होता ही है, उसको अंतरंग निमित्त कहेंगे और जो कार्य तो हो रहा है लेकिन उसके निमित्त में व्हेरिएशन, मतलब उसमें बहुत से अलग-अलग निमित्त होवे, तो उसको कहेंगे बहिरंग निमित्त। यह अंतरंग निमित्त हो या बहिरंग निमित्त हो, दोनों ही निमित्त, कार्य में कुछ नहीं करते, यह पहले हम नक्की करेंगे। फिर भी उसके दो भेद बताये हैं, कौन-कौनसे? एक अंतरंग निमित्त और एक बहिरंग निमित्त। इसको दो मिनट में हम समझ जायेंगे। जैसा आपने बताया कि जब-जब किसीको क्रोध आता है तो वहां कर्मों का उदय होता है। कौनसे? क्रोध कर्म का उदय होता है। तो क्रोध कर्म का उदय हुये बिना किसीको क्रोध होगा ही नहीं। तो यह हो गया डेफिनेट मतलब जो नियमरूप निमित्त। लेकिन किसीके बाह्य में बच्चों ने नहीं माना, किसीके मनपसंत खाना नहीं मिला, किसीके अन्य कुछ कारण से क्रोध आया तो ये सब बहिरंग निमित्त हैं।

उसीके आधार से हम दूसरी बात करेंगे। यहां कार्य कौनसा हुआ? सम्यक्त्व की प्राप्ति हुयी यानी सम्यग्दर्शन हुआ। तो सम्यग्दर्शन होने में अंतरंग निमित्त क्या है? कि दर्शनमोहनीय कर्म का अनुदय। किसीको, मनुष्य को क्यों नहीं होवे, तिर्यंच को क्यों नहीं होवे, नारकी को क्यों नहीं होवे और कौन रह गया अभी? *श्रोता: देव।* देव को, सम्यग्दर्शन जब-जब होगा किसी भी जीव को, अरे! अनंत जीवों में से किसी भी जीव को जब-जब सम्यग्दर्शन होगा, तब-तब वहां दर्शनमोहनीय कर्म का अनुदय होगा। अभी हम उपशम होगा या क्षयोपशम होगा, इसकी बात नहीं कर रहें हैं। अनुदय यानी उसका उदय नहीं है, यह मिथ्यात्व कर्म जो है उसका उदय वहां नहीं है। अब मान लीजिये कोई सातवें नरक का नारकी है, उस सातवें नरक के नारकी को सम्यग्दर्शन होगा, उस समय उसको निमित्त कौन होगा? तो कहते हैं वहां जो उसे भयंकर वेदना हो रही है, वह वेदना उसका बहिरंग निमित्त है। अंतरंग निमित्त क्या है? कर्मों का उपशम या कर्मों का अनुदय।

अभी देवगति के जीवों को सम्यग्दर्शन हो जाये, तो उसके लिये जिनबिंब दर्शन या साक्षात् जिनेन्द्र भगवान का दर्शन, वह उनके लिये बहिरंग निमित्त है। अंतरंग निमित्त क्या है, तो नियमरूप से कर्म का अनुदय। *श्रोता: नियमरूप से।* हां, नियमरूप कहना। जब-जब

वह उस टाइप का कार्य होता है, तब-तब यह नियमरूप से होगा ही होगा। लेकिन अब किसी मनुष्य को सम्यग्दर्शन हुआ, तो उसको किसी गुरु से, जो सम्यग्दृष्टि हैं, जो मुनिराज हैं, जो पंचम गुणस्थानवर्ती हैं, कोई चौथे गुणस्थानवर्ती हैं, ऐसे जीवों से देशना मिलें और उसको सम्यग्दर्शन होवे तो उसको निमित्त, देव-गुरु-शास्त्र में कोई भी हो सकता है। तिर्यंच में भी ऐसे ही घटित करो, ख्याल में आया? ये तो बहिरंग निमित्त हैं। उनमें भी अंतरंग निमित्त तो कर्मों का अनुदय ही है। इसका मतलब क्या हुआ? चारों गतियों के जीवों में सम्यग्दर्शनरूपी कार्य का अंतरंग निमित्त कर्मों का अनुदय है, उनके लिये बहिरंग निमित्त अलग-अलग हो सकते हैं।

यानी जब-जब कोई कार्य होता है, तब-तब नियमरूप से जो निमित्त होता है उसे अंतरंग निमित्त कहते हैं। हम तो ऐसा मानते हैं, अंतरंग निमित्त यानी अंदर से होगा, बहिरंग निमित्त यानी बाहर से होगा। क्या करें? शब्द तो कम हैं लेकिन उनके भाव बहुत हैं। तो एक ही शब्द के अनेक विविध प्रकार से अर्थ हो जाते हैं। लेकिन शास्त्रों में जैसे हमने कल देखा था बुद्धिपूर्वक और अबुद्धिपूर्वक राग वैसे यहां अंतरंग निमित्त और बहिरंग निमित्त की बात है। इसके साथ-साथ एक प्रेरक निमित्त और एक उदासीन निमित्त ऐसे भी निमित्त के दो भेद किये जाते हैं। वे क्या हैं वह हम दोपहर में देखेंगे। इसके पहले एक डेढ़ मिनट बाकी है, किसीके कोई प्रश्न हो तो पूछ लेना। जोर से हां...

श्रोता: पंचेन्द्रिय जीवांना सम्यग्दर्शन होतं। मग सिंह जो आहे त्याला सम्यग्दर्शन होतं तेव्हा त्याला निमित्त कोण? आपका पूछना है कि पंचेन्द्रिय जीव जो सिंह की पर्यायवाला जीव था, उसके सम्यग्दर्शन हुआ तो उसमें निमित्त कौन था? तो उसमें अंतरंग निमित्त तो वहां तो कर्मों का अनुदय गिनेंगे हम और बहिरंग निमित्त तो चारणऋद्धिधारी मुनिराज आये थे और उन्होंने उनको उपदेश दिया वह निमित्त कारण बहिरंग निमित्त रहेगा। *श्रोता: इसको निश्चय कारण और व्यवहार कारण ले सकते हैं हम?* नहीं, जो शास्त्र में जैसा बताया न वैसा ही हम बतायेंगे, अपने मन से हम आपको कोई नाम नहीं बतायेंगे, आपको भी ऐसा नहीं करना चाहिये।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

४५. निमित्त-नैमित्तिक संबंध

हमने कारणों की चर्चा करते समय दो प्रकार के कारण देखे थे। एक है उपादान कारण और दूसरा है निमित्त कारण। बात तो यह है कि कार्य होने में अनेक कारण जुटते हैं लेकिन निश्चितरूप से कार्य किससे होता है, इस बात का हमें निर्णय करना है, है न? हमने ऐसा देखा था कि कार्य होने में अनेक कारण लगते हैं। अपना यहां अभ्यास हुआ नहीं है लेकिन आगम में इसका विवेचन इसतरह से आता है कि कार्य होने में पांच समवाय होते ही हैं। पांच समवाय में पांच कारण बताये हैं उन पांच कारणों में भी एक निमित्त कारण है और बाकी जो चार कारण हैं वे उपादान में चले जाते हैं। अभी उसकी चर्चा हम यहां नहीं करेंगे। केवल आपको थोडीसी इन्फॉर्मेशन दे रहा हूं ताकि हमें आगे चल कर कहीं अन्य बात समझनी है, तो यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि कार्य होता तो है उपादान से, लेकिन आरोप आता है निमित्त पर। ख्याल में आया न?

इसका उदाहरण हम देखेंगे, किसीको क्रोध आया तो क्रोध का कारण क्या है? हो सकता है बच्चों ने बहुत शोर किया हो, बच्चे कुछ मानते नहीं हो; या तो क्रोध क्यों आया? तो सचिन झिरो पर आऊट हो गया, क्रोध आता है कि नहीं? आप तो हंस रहे हैं, हम तो क्रोध की बात कर रहे हैं। यहां बता रहे हैं क्रोध जो आया है, तो क्रोध में ये सारे बहिरंग कारण हैं। हमने दो प्रकार के निमित्त देखे थे न? कौन-कौनसे? अंतरंग निमित्त और बहिरंग निमित्त। तो ये जो बाकी सारे जो हमने देखे वे कैसे हैं, तो बहिरंग निमित्त हैं। लेकिन मूल में क्रोध होने में अंतरंग निमित्त क्या है? कौन बता पायेगा? प्रतिभाताई आप बतायेंगी? *श्रोता: दर्शनमोहनीय कर्म का उदय।* दर्शनमोहनीय कर्म का उदय? अच्छा, आपको बताना है? हां बोलो। *श्रोता: क्रोध कर्म का उदय।* बहुत अच्छा! यह चारित्रमोहनीय में जो क्रोध कर्म नामक जो कर्म है; क्योंकि हमने देखा था, ये पच्चीस जो कषायें हैं उनके नाम और कर्मों के नाम एक जैसे ही हैं। तो यहां तो इस जीव को क्रोध हुआ तो क्या कारण है? तो कहते हैं क्रोध कर्म का उदय था। यह क्या है? अंतरंग निमित्त है। बहिरंग निमित्त तो कुछ भी होगा कि बच्चे हमारी सुनते नहीं हैं, बच्चे उधम कर रहे हैं तो हमें गुस्सा आता है। बच्चों को कहे चलो-चलो, स्वाध्याय में आकर बैठो और वे नहीं बैठें। तो क्या हो गया? हां ऋतु, क्या होगा? *श्रोता: क्रोध होगा।* क्रोध होगा तो तुम्हें क्रोध करवाना है दूसरों

को? *श्रोता: नहीं।* नहीं, अच्छा, बहुत अच्छा। देखो यहां पर तो यह बात बतायी जा रही है कि जब बच्चे नहीं सुनते हैं, तो बच्चों पर क्रोध करना या कर्मों पर क्रोध करना? क्रोध किस पर करना? बोलो साहब? अरे! क्रोध करना तो यह तेरा अपराध है। यह क्रोध नामक जो जीव के परिणाम हुये उसका कर्ता तो वह स्वयं है।

एक दफे क्या हुआ? एक राहगीर यानी पथिक, एक गांव से दूसरे गांव जा रहा था। पहले ज़माने की बात है भाई, आजकल तो एक गांव से दूसरे गांव जाना हो तो एअरोप्लेन में जाते हैं; वह तो पैदल जा रहा था। तो पैदल जाते-जाते उसको बहुत प्यास लगी। तो बहुत प्यास लगने से वह यहां-वहां ढूंढ़ता रहा। तो उसका नसीब इतना अच्छा रहा, उसको एक साथ तीन कुयें दिखायी दिये। कितने? *श्रोता: तीन।* तीन, और उन कुओं में एक-एक डोरी और एक-एक बाल्टी सब व्यवस्था उधर थी। तो उसने क्या किया, पहले कुयें में बाल्टी अंदर डाली। देखता है तो क्या है, जब बाल्टी ऊपर खींची तो खाली ही खाली थी, उसमें पानी ही नहीं आया; उसे बहुत गुस्सा आया। फिर उसने दूसरे कुयें में बाल्टी डाली, तो जरा ऐसा खींचा तो वजन लगा, कुआं बहुत ऊंडा मतलब बहुत डीप था। तो उसने खींचा, तो खींचने से क्या हुआ? बाल्टी में पानी तो आया, देखता तो क्या है उसमें कचरा भरा पानी था, गन्दा पानी था। फिर उसने तीसरे कुयें में बाल्टी डाली तो उसमें निर्मल जल आया। तो क्या हुआ? कुयें में से जो पानी जैसा था वैसे बाल्टी में आया। तो हमारे में गुस्सा है अंतरंग में, विभावरूप परिणम रहा है, वह विभावरूप परिणति कर रहा है तो उसको गुस्सा आयेगा। तो गुस्से का कारण कौन है? स्वयं है। लेकिन हम तो पहले निमित्त को देखते हैं, अंतरंग निमित्त! अरेरे! क्रोध कर्म का उदय आया। दूसरा कहेगा कि नहीं, नहीं, बच्चों ने शोर मचाया, तीसरा कहेगा और कुछ हो गया, पड़ोसी ने हमें बहुत त्रास दिया।

लेकिन वास्तव में तो क्या है? कि जैसे कुयें में पानी होगा ही नहीं तो आयेगा क्या? तो जो वीतरागी होंगे उनको गुस्सा आवे कि नहीं आवे? और जिसके मन में कूड़ा-कचरा भरा हुआ है, बार-बार क्रोध करता है तो उसको ऐसा गन्दा पानी मिलेगा। हां और जो समझ लो गुस्सा तो करे, कैसा? संज्वलनरूप उसको तो निर्मल जल जैसा। तो यहां मूल क्या है कि स्वयं हम ही क्रोधरूप परिणमते हैं और हम निमित्त पर आरोप करते हैं कि यह कर्म का उदय आया साहब इसलिये हमें गुस्सा आया, नहीं तो नहीं आता। दूसरा कहेगा बच्चों ने हमें बहुत हैरान किया इसलिये हमें गुस्सा आया, नहीं तो हम गुस्सा नहीं करते थे।

तो जब हम यह निमित्त और उपादान की बात देखते हैं तब हमें पता लगता है कि यह निमित्त जो है वह उपादान में कुछ कार्यकारी नहीं है, तब हमें आकुलता होगी कि नहीं होगी? जब यह जीव, क्या कह रहे हैं, पर की तरफ देखता है या निमित्त की तरफ देखता है तो उसको आकुलता हुये बिना रहेगी नहीं। ख्याल में आया न? तो हमें तो निराकुल स्वभाव का अनुभव करना है। तो हमारी पर्याय में अशान्ति और आकुलता रहेगी तो निराकुल स्वभाव का अनुभव होगा न? ख्याल में आया न? तो यह वस्तुस्वरूप जब हम देखते हैं तो उस वस्तुस्वरूप से हमें यह ज्ञात होता है और होना चाहिये कि यह जो कुछ क्रोध वगैरह या मान, माया, लोभ जो कुछ हैं वे मेरे स्वयं के कारण से हो रहे हैं और वे नष्ट होने का एकमेव मार्ग यही है कि मैं अपने स्वरूप को जानते हुये उसमें लीनता धारण करने की कोशिश करूं और उसमें मैं सक्सेसफुल हो जाऊं।

देखो, यह निमित्त उपादान को जानने से यह फ़ायदा हो रहा है भैया। हमने आज क्या देखा था? दो प्रकार के कारण हमने देखे थे। कौन-कौनसे कारण देखे थे? *श्रोता: उपादान कारण और निमित्त कारण।* जो निमित्त है न, उसके दो भेद देखे थे हमने। *श्रोता: एक अंतरंग निमित्त और एक बहिरंग निमित्त।* अंतरंग निमित्त और बहिरंग निमित्त। तो दोनों ही निमित्त कार्य में कुछ भी कार्यकारी नहीं होते। कार्यकारी यानी किसमें? जो कार्य हो रहा है उसमें कोई मदद, असर, प्रेरणा, सहाय कुछ नहीं करते। एक भाई ने प्रश्न पूछा था कि आपने जो बताया, इन्होंने पूछा न कि तत्त्वार्थसूत्र में जो बात आयी है वह हमें बराबर समझ में नहीं आयी। तो उसको भी हम देखेंगे। तत्त्वार्थसूत्र में जो बात कही गयी है, क्योंकि हम मूल शास्त्र को देखेंगे तो अच्छा रहता है। यहां पर भी तो वही कथन किया है, लेकिन मूल शास्त्र में से हम सूत्र देखेंगे तो हमें थोड़ा बहुत पता लगेगा कि भाई यहां क्या बात कहने में आ रही है। यहां तत्त्वार्थसूत्र नहीं है, देखो, मिले तो ठीक है, तब तक हम दूसरा विषय चलायेंगे।

देखो, दूसरे प्रकार से भी निमित्तों के भेद किये जाते हैं। एक होता है प्रेरक निमित्त और दूसरा होता है उदासीन निमित्त। तो यह प्रेरक निमित्त किसको कहना इसके बारें में भी हम थोड़ा बहुत सोचेंगे। तो प्रेरक निमित्त जो होते हैं वे प्रेरणा करते हैं और उदासीन निमित्त हैं वे उदासीन रहते हैं, ऐसा बिलकुल है नहीं। तो प्रेरक निमित्त किसे कहना, किसीको

मालूम है? मणिभाई अेमां नथी। अहीं आप ध्यान आपो तो वधारे जल्दी ख्याल आवशे। प्रेरक निमित्त उसको कहते हैं जो इच्छावान है और जो क्रियावान है; और जो इच्छावान भी नहीं है या क्रियावान भी नहीं है उसे उदासीन निमित्त कहते हैं। तो यह जो कह रहे हैं कि इच्छावान यानी इच्छा सहित। इच्छा किसको हो सकती है, कौनसे द्रव्य में हो सकती है? हां जी, जोर से बोलना भैया। *श्रोता: जीवद्रव्य।* जीवद्रव्य में हो सकती है और क्रियावान कितने द्रव्य हैं? *श्रोता: एक पुद्‌गल।* हां, एक पुद्‌गल? आप क्या कहते हैं भाईसाहब? *श्रोता: जीव और पुद्‌गल।* जीव और पुद्‌गल और तीसरे को पूछोगे तो और कोई अॅड कर देगा क्या? हां, या दो ही हैं? हमने देखा था क्रियावती शक्ति कितने द्रव्यों में है? *श्रोता: दो द्रव्यों में है।* दो द्रव्यों में है तो वे क्रियावान द्रव्य हुये और इच्छावान कितने द्रव्य हैं? एक ही है।

देखो, अभी हम उसका उदाहरण देखेंगे। शिक्षक ने विद्यार्थियों को ज्ञान दिया ऐसा कथन आता है। तो यह जो ज्ञान हुआ यह क्या है? कार्य हुआ। तो ज्ञान होना यह कार्य हुआ तो वह शिक्षक ने दिया कि नहीं? नहीं। तो ज्ञान जो हुआ वह उस जीव की स्वयं की निज शक्ति से ज्ञान हुआ। लेकिन उसमें निमित्त कौन है? अध्यापक कहो, शिक्षक कहो। तो उस कारण को हम क्या कहेंगे? *श्रोता: प्रेरक निमित्त।* प्रेरक निमित्त। क्यों प्रेरक निमित्त? क्योंकि शिक्षक है वह इच्छावान है लेकिन उसने क्रिया तो कुछ नहीं की। अभी मैं दूसरी बात बताता हूं। यह जो कल जहाज की बात आयी थी न? जो शीड के साथ यानी कपड़े के साथ जहाज होता है, तो हवा आयी और जहाज आगे गया तो कार्य कौनसा हुआ? हां जी? *श्रोता: जहाज आगे गया।* जहाज आगे गया। उसमें निमित्त कौन है? *श्रोता: हवा।* हवा, तो यह हवा को कैसा निमित्त कहेंगे हम? *श्रोता: उदासीन।* हां जी? आप कह रहे हो उदासीन। आप क्या कह रहे हैं साहब? हां, उदासीन। यह दोनों ही उदासीन आश्रम से आये हुये लगते हैं। क्यों? क्या कह रहे हैं बहन आप? आपके गांव में उदासीन आश्रम है न? वहां से आये हैं ये लोग। आप क्या कहती हैं? *श्रोता: प्रेरक।* क्यों? क्योंकि दो ही निमित्त हैं। इनके उत्तर को तो उड़ा दिया हमने, तो आपने प्रेरक को पकड़ा। क्यों प्रेरक है यह भी तो बताना चाहिये न? जवाबदारी आपकी है। देखो, देखो यह पुद्‌गल है न, वह कैसा है? क्रियावान है क्योंकि उसमें क्रियावती शक्ति है। धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और कालद्रव्य कैसे हैं? निष्क्रिय द्रव्य हैं यानी उनमें क्रियावती शक्ति नहीं है, इसलिये वे जिस-

जिस कार्य में निमित्त होंगे तो उनको उदासीन निमित्त कहेंगे और जहां-जहां जीव और पुद्‌गल निमित्त होंगे तो उनको प्रेरक निमित्त कहेंगे। ख्याल में आया?

लेकिन एक मूल बात हमें कौनसी ध्यान में रखने की है? निमित्त प्रेरक हो या उदासीन हो, कार्य में कुछ भी नहीं करता। क्या नहीं करता है? ना मदद करता है, ना असर करता है, ना सहाय करता है, ना प्रेरणा करता है। इस मूल बात को भूले बिना इन निमित्तों के डिव्हिजन यानी भेद को देखना चाहिये। यह बात ख्याल में आती है सबके? क्या इसमें और कोई प्रश्न हैं? सारे उदासीन हो गये हैं, है न! नहीं समझे तो पूछ लेना हो, उसमें कोई चिंता नहीं करने की।

देखो, कोई लड़का बहुत गरीब है। वह रात में स्ट्रीट लाइट में पढ़ रहा है। क्या कर रहा है? परीक्षा आयी है। स्ट्रीट लाइट समझते हैं ना? तो वह पढ़ रहा है वह कार्य हो रहा है, तो वह किसमें पढ़ रहा है। प्रकाश में। तो वह जो स्ट्रीट लाइट है, वह कैसा निमित्त है? *श्रोता: उदासीन।* हां किसने बताया? हां आप क्या बताते हैं साहब? *श्रोता: प्रेरक निमित्त है।* प्रेरक निमित्त है या उदासीन निमित्त है? अच्छा आप क्या कहते हैं? कोई यहां पर कहेगा? हां, आप बतायेंगे? *श्रोता: प्रेरक।* प्रेरक, त्रिशला बोलती है प्रेरक। क्यों? जो प्रकाश है, वह अभी यहां से वहां जा रहा है ऐसा मत सोचो। वह कौनसा द्रव्य है? पुद्‌गलद्रव्य है। तो पुद्‌गलद्रव्य क्रियावान है कि नहीं? ख्याल में आया न? इसतरह से हमें सोचना है। तो यह हमने इन ऑल निमित्त के दो प्रकार से भेद रखे थे। पहले प्रकार के भेद कौनसे हैं? अंतरंग निमित्त और बहिरंग निमित्त। तो सुनना अभी अंतरंग निमित्त हो, बहिरंग निमित्त हो, प्रेरक निमित्त हो, उदासीन निमित्त हो—वह कार्य में कतई कुछ नहीं करता।

तो आप कहेंगे जहां-वहां देखो आप निमित्त की धुलाई करने बैठे हैं, तो निमित्त की बात ही क्यों करते हैं? निमित्त का इतना निषेध कर रहे हैं तो निमित्त की बात ही क्यों सिखाते हैं? लेकिन यहां तो यह बताया जा रहा है, निमित्त होता है, लेकिन निमित्त से कार्य होता है ऐसी मान्यता का निषेध किया गया है। निमित्त का कर्तृत्व जो है उसका निषेध हो रहा है क्योंकि हमें, जैसा वस्तुस्वरूप है वैसा समझना है न? कि जैसा नहीं है वैसा समझना और मानना है? क्योंकि हमें ज्ञान सच्चा होगा तो ही श्रद्धान सच्चा होगा। इसलिये शास्त्रों में बहुत बार निमित्त की ओर से कथन आता है। क्योंकि क्या करें? सीधी बात करें तो लोगों को समझ में नहीं आती। अब शास्त्र में तो उसके लिये ऐसा उदाहरण दिया है हो कि म्लेंच्छ

को म्लेंच्छ की भाषा में समझायें तो वह समझता है। नहीं समझे? आप कौनसे गांव से आयें साहब? अमरावती? *श्रोता: अहमदनगर।* अहमदनगर, चलो अच्छा है; तो आपको अगर कोई तामिल भाषा में सिखायें, तो आप समझोगे कि नहीं? लेकिन हिंदी में सिखायें या मराठी में सिखाये या अंग्रेजी में सिखायें तो आप तुरंत समझ जायेंगे। तो जो म्लेंच्छ है उसको म्लेंच्छ की भाषा में यानी उसकी अपनी भाषा में सिखाया जाये।

तो यहां हम डायरेक्ट किसी बात को कहेंगे तो हमें बात समझ में नहीं आती है। तो कहेंगे कि निमित्त की ओर से कथन करके समझाते हैं, लेकिन साथ में यह भी समझायेंगे कि निमित्त से कार्य होता नहीं है। देखो, क्या है कि विश्व में निमित्त-नैमित्तिक संबंध बहुत हैं, वह निमित्त-नैमित्तिक क्या है यह बात आज सुबह चलायी थी हमने। जो निमित्त होता है, दो कारण हैं न? एक उपादान कारण और दूसरा निमित्त कारण। तो वह जो कार्य हुआ उसमें एक निमित्त कारण है और एक उपादान कारण है। हां, तो वह कार्य जो हुआ है, उसका अगर हम कथन करेंगे तो कारण की अपेक्षा से कथन करेंगे तो ॲकॉर्डिंगलि उसका नाम जुदा-जुदा होगा। कार्य तो एक ही हो रहा है; तो निमित्त की ओर से उस कार्य को संबोधित करना है तो हम उसको कहेंगे यह नैमित्तिक है और उपादान की ओर से उसी कार्य को संबोधित करना है तो उसको क्या कहेंगे? उपादेय। कार्य एक ही है, नाम दो हैं। कौन-कौनसे हैं? हां बोलो? हां तुम बोलो बेटा? *श्रोता: उपादेय।* उपादेय। *श्रोता: और नैमित्तिक।* और नैमित्तिक। बोलो, हां उपादेय और नैमित्तिक। इन बच्चों को रोज क्लास में बिठाना चाहिये। क्यों? यहां आते हैं तो मुंह खुलता नहीं है, और घर में ले जाये तो इतने जोर-शोर से चिल्लाते हैं फिर गुस्सा आता है। क्यों? तो बच्चों के कारण गुस्सा आता है कि नहीं?

तो यह बताया जा रहे है कि जिनागम में हमेशा निमित्त-नैमित्तिक संबंध को देखते हुये बहुत कथन आते हैं इसलिये निमित्त की ओर से ही कथन किया जाता है। देखो, इसमें और एक विशेष बात ऐसी है कि निमित्त से ही कार्य होता है ऐसी अगर हमारी मान्यता हो जाये तो यह जीव की निमित्ताधीन दृष्टि कभी छूटेगी ही नहीं। मान लो कि मेरा भला आपसे ही होगा ऐसी मेरी निमित्ताधीन दृष्टि होगी, तो आप कहेंगे खड़े रहो, तो खड़ा रहूंगा, बैठो तो बैठा रहूंगा। क्यों? कि आपसे भला होगा ऐसा मैं मान रहा हूं। तो जैसा अभी बहुत बार बताया न कि डॉक्टर के पास जाते हैं तो हम क्या-क्या नाटक नहीं करते? जैसा बोले,

कपडे उतारो तो उतार दिया, पेट फुलाओ तो पेट फुलाया, छाती फुलाओ तो छाती फुलायी, बड़ी सांस लो तो बड़ी सांस ली, नीचे देखो तो नीचे देखा। यह क्यों? कि डॉक्टर मेरा भला करेगा, निमित्ताधीन दृष्टि है। तो क्या होगा? जब तक इस जीव की निमित्ताधीन दृष्टि है, अपने कार्य के लिये अन्य व्यक्ति तथा कर्म की ओर इसकी दृष्टि होगी तो उसको आत्मानुभूति होगी कि नहीं होगी? क्योंकि उसका उपयोग तो बाहर में लगा हुआ है, अपने स्व की तरफ नहीं आ रहा है। तो उसको आत्मानुभूति होगी कि नहीं होगी?

देखो, उसीतरह मैं पर का कुछ कर सकता हूं ऐसी जब तक मान्यता होगी तब उसको अहंकार रहेगा। देखो-देखो, बहुत लोगों की ऐसी वृत्ति है कि कुछ कार्य हो जाये तो उस कार्य का कर्ता वे अपने को मान लेते हैं। तो वे कहते हैं भाई हम इन गरीबों को दान देवें कि नहीं देवें? तो हमने कहा, नहीं साहब, आप दान दे ही नहीं सकते हैं। सुनना हो! दान देना कि नहीं देना उसकी बात नहीं कह रहा हूं। अच्छा, दान की बात छोड़ो, अभी दूसरा चालू विषय लेंगे। यहां शिबिर अरेंज किया गया है, बराबर? क्योंकि लोगों के कुछ हम उदाहरण देने जाते हैं तो उसका गैर अर्थ निकालते हैं। तो इससे अच्छा तो हम अपना जो व्यवस्थित विषय होगा उसका उदाहरण लेंगे। यहां शिबिर आयोजित किया गया है, तो यहां का कोई रिस्पॉन्सिबल व्यक्ति है उसने कहा देखो साहब, यह शिबिर कैसा अरेंज किया है? यहां सारी व्यवस्था वगैरह सब ठीक-ठाक है न? तो हमने कहा नहीं साहब, यह आपने कुछ नहीं किया है, आपसे पुद्गल का परिणमन नहीं होता है। यह आज आपको क्या मिला है? मालूम है भोजन में? क्या खाया तुमने? हां, अभी भी मुंह नहीं खुल रहा है। हां, आमरस अभी भी मुंह में ही रखा है? तो क्या कहेंगे? आपने यह सारी व्यवस्था नहीं की है, यह तो उस पुद्गल का जिसरूप परिणमन हो रहा था तो उसमें आप निमित्त हो। कोई बात नहीं, लेकिन निमित्तकर्ता तो हम हैं न? तो वह किसी भी प्रकार से अपने को कर्ता मानना छोड़ता नहीं है। भाई! हम निमित्त हैं लेकिन व्यवस्था तो बराबर हुयी ना? ऐसा करके वह क्या कहता है कि मैं निमित्त कर्ता तो हूं न!

तो जब तक इस जीव की कर्ताबुद्धि नहीं छूटती है, यहां तो कहते हैं प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है। प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना परिणमन करे ऐसी उसमें योग्यता है। देखो, जरा हम पहलेवाली बात को याद करते हैं यानी गत वर्ष जो अपना यहां अभ्यास हुआ था, उसकी ओर से मैं आपसे बात करूंगा। वहां तो कहते हैं ये जो छह सामान्य गुण हैं, उन सामान्य

गुणों की हमें अगर याद आती है, तो उसमें ऐसा है कि प्रत्येक द्रव्य अनादिअनंत रहे ऐसी उसमें अपने अस्तित्व गुण के कारण से योग्यता है; और वस्तुत्व गुण यह बताता है कि प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना प्रयोजनभूत कार्य करे, और द्रव्यत्व गुण कहता है कि यह कार्य निरंतर चालू रहे, ऐसी उसमें द्रव्यत्व गुण के निमित्त से व्यवस्था है। तो प्रत्येक द्रव्य कायम टिकता हुआ, कायम बदले ऐसी उसमें योग्यता है, निज शक्ति है। तो परद्रव्य आकर वह कार्य करे यह बात कहां से आयी। ख्याल में आया? लेकिन हम तो समझते हैं कि साहब हम निमित्त तो हैं न? अभी कोई बड़ा मंदिर बन रहा है तो इंजिनिअर कहेगा उसमें हम निमित्त तो हैं न? क्यों? लेकिन जिस पुद्गल का जिसरूप से परिणमन होना है, उस पुद्गल का उसरूप परिणमन अवश्य होगा।

पुद्गल का परिणमन करने में अन्य कोई भी द्रव्य समर्थ नहीं है क्योंकि हमने देखा है कि एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में जो अभाव है उसका नाम अन्योन्याभाव है। तो सजातीय जो पुद्गल है वह दूसरे पुद्गल का कार्य नहीं कर रहा है और मैं तो विजातीय जीवद्रव्य हूं और मैं पुद्गल का कार्य करूं? तो ऐसा किसीको कहने में आया तो हमारे यहां जो इलेक्ट्रिशिअन है वह गुस्से में आ गया। बोला, कैसी बात करते हो? अभी मैं यह कनेक्शन तोड़ देता हूं, फिर देखो, तुम माइक पर कैसे बोलते हो? तो अभी मैं पर का कुछ करता हूं यह उसकी मान्यता बची है या निकल गयी है? क्यों? निखिलभाई, बची है न? तो यह योग्य मान्यता है या अयोग्य मान्यता है यह हमें सोचना है। हमें तो अपनी गलत मान्यताओं में सुधार करना है। ख्याल में आया? इसलिये यहां कहते हैं कि हम जब तक पर के कर्ता हैं ऐसा मानते हैं, तो यह कर्ताबुद्धि के कारण मैं जाननस्वभावी आत्मा हूं यह बात हम भूल जाते हैं।

देखो, हम देखते हैं कि शास्त्रों में निमित्त-नैमित्तिक संबंध की बात बहुत बार कही जाती है लेकिन उससे हम ऐसा ही मानते हैं कि मैं उसका कर्ता हूं। अभी हम दूसरी एक बात भी ध्यान में रखेंगे कि निमित्त जो है, उसको ढूंढ़ना पड़ेगा कि नहीं पड़ेगा? निमित्त को हम ला तो सकेंगे कि नहीं ला सकेंगे? *श्रोता: नहीं।* क्यों नहीं? हां क्यों नहीं बहन? *श्रोता: पर छे।* हां निमित्त यह परद्रव्य है और देखो, हम निमित्त को ढूंढ़ भी कैसे सकते हैं? क्योंकि जब कार्य हो रहा है उस समय जो अनुकूल हो उसको निमित्त कहेंगे। लेकिन यहां कार्य ही नहीं बन रहा है; कार्य बनने के लिये हम निमित्त को ढूंढ़ने जा रहै हैं, वह निमित्त कौनसा है

कैसे पता लगेगा? क्योंकि अनुकूल कौन है वह जब कार्य हो रहा है तब के जो संयोग में जो अनुकूलता होगी उसके ऊपर आरोप आयेगा कि यह निमित्त है। तो इसलिये क्या कहते हैं कि निमित्त को हम ढूंढ़कर ला भी नहीं सकते। क्योंकि परद्रव्य को लाना या परद्रव्य को रोकना क्या हमारे बस की बात है? तो यह जब हम निमित्त-नैमित्तिक को देखते हैं तो हमें तो ऐसा ही निमित्त चाहिये। देखो, अभी हमें ऐसा लगता है कि हम यहां से मर कर विदेहक्षेत्र में जायें। क्यों साहब? और विदेहक्षेत्र में कहां जाना है आपको? पूर्व विदेहक्षेत्र में ही जाना है। किसके पास? सीमंधर परमात्मा के पास। क्यों? अन्य कोई परमात्मा नहीं चले हां, युगमंधर, बाहु, सुबाहु? इनमें कौनसे चाहिये? सीमंधर, क्योंकि साक्षात् उनके समवशरण में हम जायेंगे और वहां जिनवाणी सुनेंगे तो वे हमारे कार्य में निमित्त ठहरेंगे। क्यों? तो पहले से हम निमित्त को ढूंढ़ते हैं। अभी एक व्यक्ति हमारे घर पर आये थे। अभी मैं नाम किसीका भी नहीं बताऊंगा, न उस व्यक्ति का, न वह किसके साथ में थे, उनका। वे कहते हैं मेरा यह फलां-फलां व्यक्ति पर बहुत भरोसा है, उनके ऊपर मेरा बहुत विश्वास है और मेरे सम्यग्दर्शन में नक्की मुझे उनकी मदद होगी। तो उनके ऊपर की जो मेरी श्रद्धा है वह श्रद्धा बढ़ाने के लिये मैं क्या करूं? तो उसने पहले ही निमित्त नक्की किया है कि इस निमित्त से ही मुझे सम्यग्दर्शन होगा। तो क्या यह बात सही हो सकती है?

देखो जब-जब यहां कार्य होगा, तब-तब सामने से निमित्त उपस्थित होता ही है। बिना निमित्त का कार्य होता ही नहीं है। यह ऐसी बात है, कैसी? कि जिसके बिना कार्य नहीं होता और कार्य में वह कुछ कार्यकारी नहीं होता वह निमित्त है। क्या कहा? जिसके बिना कार्य नहीं होता और जो कार्य में कुछ कार्यकारी नहीं है उसको निमित्त कहेंगे। जीवद्रव्य और पुद्गलद्रव्य इसमें कौनसा रूपी द्रव्य और कौनसा अरूपी द्रव्य है? हां कौन उत्तर दे रहा है साहब? हां, पुद्गल रूपी है और? *श्रोता: आत्मा अरूपी है।* आत्मा अरूपी है, बहुत अच्छी बात है। आपको भी यही कहना था कि जीवद्रव्य या आत्मा है वह अरूपी है और पुद्गल रूपी है और अनादिकाल से इस जीव के साथ कोई न कोई शरीर है। कोई न कोई शरीर यानी क्या? कभी मनुष्य बना है, कभी देव बना है, कभी नारकी बना है। तो कोई भी संसारी जीव शरीर के बिना नहीं रहता। तो यहां दिखता क्या है? शरीर और जीव में क्या क्या बातें देखने में आती हैं? कि जब-जब यह जीव हंसता है तो गाल फूलते हैं, आंखों में चमक दिखती है; जब-जब वह रुदन करता है, रोता है तो आंखों से पानी आता

है, चेहरा म्लान हो जाता है; वह चलता है तो साथ-साथ शरीर भी चलता है; वह बैठता है तो शरीर भी बैठता है। ऐसा कभी हो सकेगा कि नहीं कि आपको रूम से यहां जल्दी आना है और शरीर नहीं साथ में आ रहा है, तो आप अकेले शरीर बिना आ जाओगे कि नहीं? शरीर भी साथ में आता है। तो यह क्या है? ये निमित्त-नैमित्तिक संबंध घने हैं, घने यानी बहुत, देखने में आते हैं। दोनों के कार्य एक साथ होते हैं, किसके-किसके? इन अनंत पुद्‌गल परमाणुओं के पिंडरूप शरीर का और इस आत्मा का, दोनों के कार्य एक साथ देखने में आते हैं और शरीर रूपी है इसलिये हम ऐसा मानते हैं कि मैं शरीर का कार्य करता हूं।

देखो-देखो यह जो अंगुली है, यह अंगुली ऐसी-ऐसी उपर-नीचे हम हिलाते हैं और हमने नक्की किया है कि देखो, मैं जब तक चाहूं इसको हिलाऊं, मैं जब चाहूं तब इसको रोक दूं। मैं आपसे पूछता हूं क्या यह आत्मा अंगुली को हिला रहा है? हां जयश्रीताई? तो फिर अंगुली तो हिल रही है। *श्रोता: क्रियावती शक्ति के कारण।* हां बहुत अच्छा! किसने बताया? हां, अंगुली जो हिल रही है वह किस कारण? क्रियावती शक्ति के कारण और उसमें अंतरंग निमित्त कौनसा है? हां किसने बताया? क्या बताया? *श्रोता: इच्छाशक्ति।* जीव की इच्छाशक्ति। अच्छा? आप क्या कह रहे हैं? कुछ नहीं। नेमिचंदजी? यह अंगुली जो हिल रही है उसमें अंतरंग निमित्त कौन है? शमा आप बतायेंगी? *श्रोता: जीव।* जीव? अच्छा, अच्छा हां, जीव? और आप? *श्रोता: जीव की इच्छा।* हां और कुछ बता रहे हैं कोई? इनका भी कहना है जीव की इच्छा, जीव, जीव की इच्छा। मैंने क्या पूछा? यह जो हिल रहा है, यह अंगुली हिल रही है, ऐसा-ऐसा हिलाओ, ऐसा-ऐसा हिलाओ जो भी चाहिये तो उसमें पुद्‌गल है न? पुद्‌गल के हिलने में? *श्रोता: क्रियावती शक्ति।* अभी कैसा जोर आया। देखो, मैं आपसे पूछता हूं, कोई पॅरॅलिटिक पेशंट है, उसके भी हाथ हैं और वह चाहता है, इच्छा करता है कि मैं अंगुली को हिलाऊं – नहीं हिलेगी। तो इच्छा से हिलती है कि नहीं? समझ में आया? अरे! इच्छा से हिलती भी नहीं और इच्छा से रुकती भी नहीं। हिलना रुकता नहीं, आपको मालूम है, वह कौनसा रोग होता है? *श्रोता: पार्किन्सन।* पार्किन्सन। किसने बताया? अच्छा! डॉक्टर साहब कह रहे हैं, अच्छा। तो पार्किन्सन में क्या होता है, किसीकी अंगुलियां ऐसी-ऐसी हिलती हैं, किसीके गर्दन ऐसी-ऐसी हिलती है, किसी के पैर में कोई ऐसी हलन-चलन रहती है। वह चाहता है कि रोकूं मैं, लेकिन रोक

सकता है कि नहीं? क्यों नहीं? जीव की इच्छा है न भाई? ख्याल में आया न? वह जो हिल रहा है, कौनसा? शरीर; वह शरीर जो हिल रहा है उसमें धर्मद्रव्य यह अंतरंग निमित्त है और हमने अभी यह हाथ हिलाना बंद कर दिया मान लो, तो उसमें अधर्मद्रव्य निमित्त है। तो ऐसे निमित्त-नैमित्तिक संबंध घने हैं यानी बहुत हैं। किसके-किसके? इस जीव के और शरीर के। यानी उनकी जो-जो क्रियायें होती हैं, दोनों की एक साथ होती हैं और कभी-कभी जीव इच्छा करता है और उसके अनुसार वह शरीर भी परिणमित होता है, तो यह जीव गुमान करता है कि देखो, मैं इस शरीर को जैसा चाहूं वैसा कर सकता हूं।

यह अभी आपको मालूम नहीं है, आप बहुत अभी के मॉडर्न ज़माने के हैं। हम जब छोटे थे आपसे भी, तब हमारे सोलापुर में एक गामा और एक गूंगा नाम के दो पहलवान थे। तो गामा, गूंगा में से एक कोई भी लो; गामा नाम का पहलवान था वह ऐसे दो ट्रकों को डोरी बांधकर ऐसा पकड़ता था और दोनों तरफ ट्रक्स चलायी जाये तो एक इंच भी हिले नहीं, ऐसी उसमें ताकत थी और कुछ साल के बाद, हम बड़े हो गये और वे बूढ़े हो गये। तो उनके नाक पर मक्खी आकर बैठे उसको भी उड़ा नहीं पाये, क्योंकि पॅरेलिसिस हो गया उनको। कहां गयी ताकत वह? तो आप कहेंगे जिस ज़माने में ताकत थी उस समय तो थी कि नहीं? बिलकुल नहीं क्योंकि उनके हाथ में और ड़ोर में कौनसा अभाव है? हां बोलो, बोलो? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव है। डोरी में और उस ट्रक में? ट्रक में और उस डोरी में? अन्योन्याभाव। तो जहां एक का दूसरे में अभाव है, तो वह चली तो नहीं न साहब? अरे! उसकी उस समय वैसी ही योग्यता थी और जब चली – ऐसा भी देखने में आता है न? कोई बहुत जोर-शोर से गाड़ी चलाता है तो क्या कंट्रोल है! कभी ऐसा कुछ हो जाता है कि अन्कंट्रोल हो जाता है और दूसरे गाड़ी को जाकर ठोकता है, तो कहां गया वह कंट्रोल? ख्याल में आया? देखो, जब-जब हम देखते हैं तो ऐसे निमित्त-नैमित्तिक संबंध बहुत देखने में आते हैं और उससे हम मिस्लीड होते हैं कि यह जीवद्रव्य शरीर का कार्य करता है या शरीर जीवद्रव्य का कार्य करता है। तो इसतरह अब आगे बढ़ते हुये यह निमित्त-नैमित्तिक संबंध की बात देखेंगे।

देखो, यह जो निमित्त को हटाने की या जुटाने की जो चेष्टा होती है वह भी कितनी व्यर्थ है, इसकी बात शास्त्र में भी बहुत बार आती है। आपको मालूम है, नेमिनाथ भगवान जो थे, वह कितने नंबर के तीर्थंकर है? नेमिनाथ भगवान? हां पच्चीसवें या छब्बीसवें?

श्रोता: बावीसवें। बावीसवें थे। तो उनका समवशरण लगा हुआ था। उस समय किसीके मन में ऐसा प्रश्न खड़ा हो गया कि यह जो द्वारका नगरी है, वह कब तक टिकेगी? तब नेमिनाथ भगवान की ॐ ध्वनि में उसका उत्तर आया कि बारह वर्ष के बाद यह नगरी जलेगी। साक्षात् जलती हुयी नेमिनाथ देख रहे थे; इतना ही नहीं, तो उन्होंने उसका निमित्त भी बताया। कौनसा? कि वहां के जो यादववंशी राजकुमार थे, वे मद्य पीकर द्वीपायन मुनि को सतायेंगे, उनको गाली-गलोच करेंगे, जो भी होता हो और उसके कारण द्वीपायन मुनि से वह द्वारका नगरी जलेगी। कोई भी नहीं बचेगा, वगैरह, वगैरह। तो यह जिनवाणी सुनकर उस द्वारका नगरी के जीव जो थे उनमें से कितनों ने तो वैराग्य के साथ मुनिदीक्षा ली, कितनों ने तो अणुव्रत धारण किये, कितनों को तो सम्यग्दर्शन हुआ। यह ऐसा जो हुआ, तो इनके सर्वज्ञ पर विश्वास था या नहीं था? था। द्वीपायन मुनि के द्वारा वह जलनेवाली थी न? तो द्वीपायन मुनि ने सोचा अरे! मेरे कारण यह द्वारका नगरी जले, मैं तो ऐसा करता हूं यहां से कहीं दूर चला जाता हूं। कहां से? द्वारका नगरी से इतना दूर जाऊं कि मैं इसमें निमित्त भी न बनूं और जो यादव राजा थे उन्होंने सोचा कि हमारे राजकुमार मदिरा पीनेवाले हैं और मदिरा में बेहोश होकर द्वीपायन मुनि को वे टोकेंगे, उनको सतायेंगे, तभी तो वे गुस्सा करेंगे। तो हम क्या करेंगे, दारू पीना ही छोड़ देंगे, मद्यपान करना ही छोड़ देंगे। तो उन्होंने क्या किया? नेमिनाथ भगवान कहां थे मालूम है आपको? सौराष्ट्र में, वही गिरनार सौराष्ट्र में आता है। तो अभी-अभी यह सौराष्ट्र के जो लीडर हमारे महात्मा गांधी उन्होंने भी दारूबंदी की थी और उस समय वहां पर भी दारूबंदी की गयी। तो उन्होंने क्या किया? जो कुछ उसका जो मटीरिअल था, दारू थी वह ऊपर पहाड़ पर जाकर नीचे ढकेल दी। कहां? खाई में। तो खाई में ढकेल दी।

तो ऐसे होते-होते बहुत समय गुज़र गया, बहुत समय गुज़र गया और बारह वर्ष होने को आये। तो द्वीपायन मुनि ने सोचा, अरे! बारह वर्ष तो निकल गये! चलो हम जाकर तो देखते हैं कि द्वारका का क्या हो गया है? जरा देखे तो सही। वे आये। वहां से आते-आते एकाध महीना हो गया, इतने दूर गये थे। उस वक़्त क्या हो गया कि वे जो राजकुमार थे वे तो बड़े-बड़े हो गये, लेकिन जो छोटे थे वे भी बड़े हो गये। तो उन्होंने सोचा चलो न! हम वन में क्रीड़ा करने को जायेंगे। तो राजकुमार इधर-उधर घूमते-घूमते रास्ता भूल गये। सबको बहुत प्यास लगी, तो पानी ढूंढ़ते-ढूंढ़ते वे उस खाई तक पहुंचे। वहां देखा तो वहां जलाशय

था। अरे! वाह कितना अच्छा! तो वह जलाशय में जो कुछ था वह पीने को चालू किया। तो इतने बारह साल से वहां जो कोई मटीरिअल डाला हुआ था वह और सड़-गल के और पक्का, हां जी, क्या बोल रहे हैं? *श्रोता: और पॉवरफुल हो गया।* अच्छा! वह बोलते हैं, यह भाईसाहब बोलते हैं, मुझे मालूम नहीं कि जितने अधिक सड़ा-गला हुआ दारू का अंश होगा वह अधिक पॉवरफुल होता है। यानी उसकी किक बहुत जोर से होती है, ऐसा बोलते हैं। ऐसे ही बोलना था न आपको? हां, तो उन्होंने पी और सबको मस्ती चढ़ गयी और इतने में सामने से वे द्वीपायन मुनिराज आये। तो द्वीपायन मुनिराज को आते हुये उन्होंने देखा – यह देखो, यह आया, अभी यह जलानेवाला है। किसको? द्वारका को; तो इसको मारो, पीटो; तो सबने वह पत्थर वगैरह लेकर उनको मारने की कोशिश की। मुनिराज बोले, भाई अभी बारह वर्ष हो गये तुम क्या बात कर रहे हो? लेकिन द्वीपायन इस बात को भूल गये जो अधिक मास होता है वह गिनना भूल गये और जिस समय वे वहां आये तब बारह वर्ष पूर्ण होनेवाले थे। तो उनको इतना गुस्सा आया कि उनके लेफ्ट शोल्डर से अशुभ तेजसशरीर निकला और पूरी द्वारका नगरी उन्होंने जला दी।

तो देखो, जब बताते हैं कार्य होना है, तब यह निमित्त सहजरूप से आता है, बुलाना नहीं पड़ता है और जिन्होंने उस निमित्त को हटाने की कोशिश की वे कहां तक सक्सेसफुल हुये? यादवों की जो अवस्था होनी थी वैसी हो गयी; द्वीपायन को गुस्सा आना था सो आ गया। तो हम निमित्त को न जुटा सकते हैं न हटा सकते हैं। ख्याल में आया? लेकिन जब-जब कार्य होता है तब-तब वहां उस प्रकार का निमित्त जो निश्चित है, वही निमित्त आता है। किसी का मरण आ जाये तो हमने बोला था कि मत जाना। तो बोले वह तुम ट्रेन से क्यों गये। प्लेन से जाते तो। लेकिन उसकी मौत ट्रेन में ही होनी थी तो ट्रेन में ही होगी। ऐसा नहीं कि ट्रेन में नहीं मौत हो गयी तो प्लेन में मौत होगी, ऐसा कभी नहीं होता है। ख्याल में आया न? तो जो घटना होती है उस घटना घटने में निमित्त भी निश्चित है। वह निमित्त को कोई हटा भी नहीं सकता और जुटा भी नहीं सकता है, यह बात उतनी ही सच्ची है। ऐसे निमित्त-नैमित्तिक संबंध अनेक हैं और वह शास्त्रों में बताये हैं। तो यह बात भी साथ में थी कि वह जो तेजसशरीर होता है न? वह तेजसशरीर वापस लौटकर उस मूल शरीर में जाता है और वे मुनि भी भस्मसात् हो जाते हैं, यह अशुभ तेजसशरीर है। चलो, इसतरह से हमने यह बात देखी और भी आपको बात मालूम होगी शायद।

यह एक विशिष्ट प्रकार के पक्षी होते हैं, उनका नाम होता है चकवा। चकवा पक्षी जानते हैं आप? तो यहां ऐसा कहते हैं कि जब रात हो जाती है, तब नर और मादा चकवा पक्षी एक दूसरे से बिछड़ जाते हैं और सूर्योदय होता है तो एक दूसरे से मिलते हैं। तो क्या वह रात जो निमित्तरूप से है, वह उन चकवा-चकवी को दूर कर देती हैं और सूरज उनको मिला देता है? वैसे ही कोई कमल ऐसे होते हैं कि वे रात में खिलते हैं और कोई कमल दिन में खिलते हैं; तो क्या रात और दिन उनको खिलने में कुछ मदद, असर करते होंगे? यह जो सहज उस कमल की जैसी योग्यता है, शक्ति है, निज शक्ति, तो कोई तो रात में खिलेंगे तो कोई तो दिन में खिलेंगे; लेकिन उसमें निमित्त तो ये रात या दिन हैं। ऐसे निमित्त-नैमित्तिक संबंध तो हम बहुत देखते हैं और हम ऐसे भोले हैं कि निमित्त से ही कार्य होता है ऐसा मानते हैं। अब आगे बढ़ते हुये देखेंगे कि एक बात हमें विशेषरूप से ध्यान में रखनी चाहिये कि जो कोई कर्ता है यानी जो कोई कार्य होता है वह कार्य का कर्ता वह द्रव्य ही होता है। यानी जो कोई कर्ता है वह अपने भावों का ही कर्ता होता है; भाव यानी पर्याय। पर भावों में और परद्रव्य के भावों में जो होता है वह सिर्फ निमित्त-नैमित्तिक संबंध होता है। इसलिये कोई द्रव्य परभावों का कर्ता या भोक्ता हो ही नहीं सकता।

अभी इतने सारे हमने निमित्त-नैमित्तिक संबंध देखे। अभी और एक आपको प्रश्न मैं पूछता हूं। मान लो कि यहां एक दर्पण रखा है और सामने अग्नि है। तो दर्पण में जो अग्नि दिख रही है वह किसकी पर्याय है? नेमिचंदजी? *श्रोता: दर्पण की पर्याय है।* हां आप क्या कह रहे हैं? दर्पण की पर्याय है और आप क्या कह रहे हैं? दर्पण की। क्यों? हां साहब? *श्रोता: द्रव्य ही उसका कार्य करता है।* बरोबर! हम ऐसा मानेंगे कि देखो-देखो, जब-जब हम सुबह उठते हैं न? तो पहले दर्पण के सामने जाते हैं। हर एक के घर में वॉश बेसिन होता है, उसके साथ दर्पण होता है। तो मैं पूछता हूं पहले आप जाते हो या दर्पण में प्रतिबिंब पहले आता है? *श्रोता: दोनों एक साथ होते हैं।* दोनों एक साथ होते हैं, तो यहां दर्पण का उसरूप परिणमन हो रहा है। दर्पण में जो अग्नि दिख रही है वह दर्पण की ही परिणति है वह अग्नि से हुयी है ऐसा नहीं है। इसमें जो दर्पण में जो कोई परिणति हो रही है, उसमें निमित्त कौन है? बाह्य जो अग्नि है वह। इसीतरह हम जब दर्पण के सामने जाते हैं तो दर्पण के सामने जाने से जो दर्पण में प्रतिबिंब आता है वह दर्पण की परिणति है। अपनी यानी इस शरीर की परिणति नहीं है इतनी बात ध्यान में रखनी चाहिये।

जब हम ये सारी बातें देखते हैं कि जीव के और शरीर के इतने निमित्त-नैमित्तिक संबंध होते हैं तो शरीर की जो परिणति हो रही है वह अपनी ही परिणति है ऐसा मानकर, जानकर, यह जीव शरीर में एकत्वबुद्धि करता है। क्या करता है? शरीर में एकत्वबुद्धि करता है यह शरीर ही मैं हूं ऐसी अहंबुद्धि करता है; और शरीर मेरा है ऐसी ममत्वबुद्धि करता है; शरीर का मैं कर्ता हूं ऐसी कर्तृत्वबुद्धि करता है और शरीर का मैं भोक्ता हूं ऐसी भोक्तृत्वबुद्धि करता है। तो इसतरह से वस्तुस्वरूप की सही मान्यता नहीं होने के कारण यह जीव कर्तृत्वबुद्धि कहो, भोक्तृत्वबुद्धि कहो, अहंबुद्धि कहो या ममत्वबुद्धि कहो, करता है। जब उसको पता लगेगा कि हमने अभी तक इतने जो सिद्धान्त देखे हैं, कौनसे-कौनसे? कि अभावों के जो सिद्धान्त देखें हैं, तो शरीर में और मेरे में अत्यंताभाव है। तब मैं इस शरीर का कर्ता नहीं हूं, ना शरीर मेरा कर्ता है, ऐसी बात हमारे ख्याल में आती है। तो कहते हैं इस जीव की मान्यता में सुधार होने के चान्सेस हैं। अगर हम जानते ही नहीं तो मानने का सवाल ही किधर आयेगा। तो यह हमें क्या करना है कि ये सारे निमित्त-नैमित्तिक संबंध को देखते हुये पर से संबंध प्रस्थापित करना अपना प्रयोजन नहीं है। क्या कहा? यह पर से जो संबंध है उसको हमें एस्टॅब्लिश नहीं करना है। तो अपना प्रयोजन क्या है? तो इन सब बातों से मैं जुदा हूं ऐसा भेदज्ञान करना यह अपना प्रयोजन है।

देखो इसका एक बहुत मज़े का उदाहरण मैं आपको दूंगा कि हम रास्ते में चलते-चलते केले के छिलके के ऊपर पैर पड़ेगा तो केवल शरीर ही गिरेगा या आत्मा भी साथ में गिरेगा? बोलो धीमंत? *श्रोता: दोनों साथ में गिरेंगे।* दोनों साथ में गिरेंगे। तो देखो, क्या बात होती है कि ये साथ में गिरते हैं तो जीव की तो इच्छा नहीं है गिरने की लेकिन शरीर और आत्मा के ऐसे निमित्त-नैमित्तिक संबंध हैं तो शरीर गिरे तो आत्मा भी गिरेगा और इसलिये हम क्या मानते हैं कि अब मैं थोड़ा बहुत तंदुरुस्त हो गया हूं या मैंने बॉडि बिल्ट की है, मैंने इस शरीर को मेंटेन किया है या शरीर है इसलिये मैं गिर गया हूं। इसतरह की यह बातें जो हैं वे निमित्त-नैमित्तिक संबंध की बात हैं। हम तो शरीर में एकत्वबुद्धि ही करते आ रहे हैं। तो शरीर से मैं जुदा हूं, भिन्न हूं यह बात हमारे ख्याल में आनी चाहिये। हमने क्या देखा था कि प्रत्येक द्रव्य अपनी पर्याय का कर्ता है। परद्रव्य या संयोग में जो कोई बातें हैं वे मेरे स्वद्रव्य का कोई कर्ता नहीं हैं। अभी इसके आगे उपादान की बात

है अब हम उपादान के भेद देखेंगे और उसमें जो वस्तुव्यवस्था है, उसको भी देखने की कोशिश करेंगे।

अभी दो, तीन मिनट बाकी हैं, किसीके कोई प्रश्न हों तो पूछ सकते हैं आप। *श्रोता: पेज नंबर ३४ में निमित्त-नैमित्तिक संबंध का जो दृष्टांत दिया है लोकालोक का... ।* इस पर्चे में? बहुत अच्छा! *श्रोता: पेज नंबर ३४, आपके कागज में है, ३४ नंबर पर।* पेज नंबर ३४ हां। *श्रोता: निमित्त-नैमित्तिक संबंध के दृष्टांत।* अच्छा-अच्छा! यहां देखते हैं, हां पहले में निमित्त-नैमित्तिक संबंध के दृष्टांत। केवलज्ञान नैमित्तिक है और लोकालोकरूप सब ज्ञेय निमित्त हैं। तो इसमें आपको क्या चाहिये? *श्रोता: समझ में नहीं आया,* कोई बात नहीं, तो अभी तो एक ही प्रश्न का उत्तर होगा। देखो यहां कार्य कौनसा हुआ, यह पहले हम नक्की करेंगे। नैमित्तिक यह नाम किसका है? *सभी श्रोता: कार्य का।* कार्य का, तो यहां कार्य कौनसा हुआ? *श्रोता: केवलज्ञान।* केवलज्ञान में कुछ न कुछ झलका, तो क्या झलका? तो केवलज्ञान हुआ तो लोकालोक के कारण से हुआ क्या? बोलो-बोलो? आप हां बोल रहे हैं या ना बोल रहे हैं? तो आप जरा मुंह से बोलना भैया।

किसी जीव को केवलज्ञान हुआ यह कार्य हुआ, तो किस कारण से हुआ? उपादान कारण, स्वयं के कारण से। तो उसमें निमित्त कौन है? *श्रोता: लोकालोक है।* लोकालोक है। तो लोकालोक है इसलिये केवलज्ञान हुआ क्या? *श्रोता: नहीं।* अभी ख्याल में आया न। हां देखो, परसों मैंने ऐसा बताया था कि यह बोर्ड आपको दिखाया तब आपको इसका ज्ञान हुआ कि नहीं? बोलो प्रफुल्लभाई? देखो, ज्ञेय से ज्ञान होता नहीं। ज्ञान का परिणमन तो ज्ञान में स्वयं में हो रहा है लेकिन जिस समय मुझे इसका ज्ञान होना था उस समय यह वस्तु मेरे सामने आयी वह निमित्तरूप से आयी। निमित्त से नैमित्तिक में कार्य नहीं होता यही बात है। तो यहां लोकालोक तो अनादि से है तो केवलज्ञान क्यों नहीं हुआ आज तक? बात ख्याल में आती है? अब बाकी की बात हम बाद में देखेंगे। अभी इसके बाद दूसरा लेक्चर है इसमें भी उसको देखेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

४६. उपादान कारण

अभी हमने निमित्त-नैमित्तिक संबंध के बारे में थोड़ी बहुत बात देखने की कोशिश की। इसमें ऐसा प्रश्न आया है, यह तो निमित्त नैमित्तिक संबंध के दृष्टान्त के बारे में पूछा गया है; इसके बारे में तो हम बात करेंगे ही करेंगे। यहां पूछ रहे हैं कि *आपने बताया कि उंगली हिलने में उसकी क्रियावती शक्ति है।* उसकी क्रियावती शक्ति क्या है? *श्रोता: निमित्त है।* अरे! वह उसका उपादान है। भाई, यह उसका उपादान है। क्रियावती शक्ति से वह हिल रही है। कांतिभाई! आपको बता रहा हूं, जीव की इच्छा निमित्त है, सुनना। *तो फिर मृत शरीर कार्य क्यों नहीं कर रहा है?* ऐसा उनका प्रश्न है। लेकिन आप यह भूल रहे हैं कि क्रियावती शक्ति का परिणमन कौन-कौनसा होता है? सुनना। क्षेत्र से क्षेत्रांतर यानी, यह निकालो ८ नंबर का पृष्ठ। यहां नीचे देखो, यहां फूटनोट में देखते हैं हम।

जीव और पुद्‌गल द्रव्य में क्रियावती नाम का अपना-अपना गुण नित्य है, उसके कारण अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार कभी क्षेत्रांतररूप पर्याय होती है तो कभी स्थिर रहनेरूप पर्याय होती है। देखो भाई, हम केवल एक जगह से दूसरी जगह गमन करनेवाली क्रियावती शक्ति मानते हैं, लेकिन वह शक्ति यानी गुण जो है वह आत्मा में हमेशा रहेगा या कभी-कभी रहेगा या कभी नहीं रहेगा? *श्रोता: हमेशा रहेगा।* हमेशा रहेगा। तो अभी वह जो शरीर है, आप जिसको मृतक शरीर कह रहे हैं, उस शरीर में अभी क्रियावती शक्ति है कि निकल गयी है? *श्रोता: है, स्थिरतारूप है।* हां? अभी है या नहीं है, इसको पूछ रहे हैं, कैसा है किधर पूछा है, हां? है। उसका परिणमन कैसा हो रहा है? *श्रोता: स्थिरतारूप।* अभी मैं आपसे पूछता हूं यह जो क्रियावती शक्ति नाम का जो कोई गुण है, वह सिद्धों में होगा कि नहीं होगा? *श्रोता: होगा।* हां, तो जीवद्रव्य की बात पूछ रहे हैं हम। तो उनका कौनसा परिणमन हो रहा है? *श्रोता: स्थिरतारूप।* स्थिरतारूप। अभी बात ख्याल में आयी?

अभी मैं आपसे पूछता हूं, यहां तक तो आपने हमसे पूछा, अब हम आपसे पूछते हैं। यह किसीके घर में किसीका मरण हो गया तो उसको चार जन उठाये बिना वह शरीर यहां से स्मशान तक नहीं जाता है न? क्यों? उठाये बिना तो नहीं जायेगा कि जायेगा? क्या, 'हां' या 'ना' में बोलो भैया। *श्रोता: नहीं जायेगा।* नहीं जायेगा। आचार्य कहते हैं कि वह

अपनी क्रियावती शक्ति से जायेगा; निमित्तरूप से तो चार जन के कंधे आ जायें। भैया यह जैनदर्शन है हो, यहां तो अपनी मान्यता सही होनी चाहिये। हां, बोलो-बोलो। *श्रोता: उसको वैसे ही दो दिन रहने देंगे तो चला जायेगा अपने आप?* जिस समय जाना है वह उस समय वह जायेगा। तुम उसकी क्रियावती शक्ति का परिणमन कैसा होनेवाला है कब जानेंगे? केवलज्ञानी हो जाओगे तो जानोगे न। पर अभी तुम्हारे ज्ञान का वह विषय नहीं है, इसलिये जो सर्वज्ञ भगवान ने बतायी हुयी बात है, वह गलत है यह कैसे साबित करेंगे? ख्याल में आया? अरे! कहां केवलज्ञानी का केवलज्ञान और कहां हम अल्पज्ञानी, मति-श्रुतज्ञान धारी? आपको अवधिज्ञान है कि नहीं? कम से कम मन:पर्यय भी होगा कि नहीं? हां दोनों ही नहीं हैं न। हां, मन:पर्यय ज्ञान है? हां साहब? वह तो भावलिंगी मुनियों को ही होता है। अच्छा, बहुत अच्छा! चलो तो आपके प्रश्न का उत्तर आ गया हां? अब आगे बढ़ते हैं।

इसके ऊपर बोलने के लिये तो बहुत है लेकिन अपना विषय न रह जावे, इस डर से हम आगे बढ़ते हैं। देखो भैया! यह जो मुर्दा जिसको हम कहते हैं, वह जो एक जगह से दूसरी जगह जाता है, उसको हम चिता पर रखते हैं। हम रखते हैं ऐसा मानते हैं। तो वह जो शरीर है भले मृतक हो, अरे! अभी भी यह मृतक ही है, इसमें कहां जान है? जान तो आत्मा में है, जो जीता है वह आत्मा है उसको जीव कहेंगे। जो जीता था, जी रहा है और जीयेगा उसको जीव कहेंगे। यह तो क्या है? अभी भी मुर्दा ही है। नहीं समझे? अभी इसको क्या कहेंगे यह जो मुर्दा पड़ा है? उसको निर्जीव कहते हैं और यह कैसा है सजीव यानी जीव के साथ है, इसीलिये उसको सजीव कहते हैं, लेकिन है तो..... *श्रोता: निर्जीव।* मुर्दा नहीं बोलते हम, निर्जीव कहते हैं चलो। हमारे जैसे बोलने को नहीं सीखे हो। कोई बात नहीं कम से कम मर्म तो पकड़ लिया। अरे! हम जब इसको मुर्दा कहेंगे तभी जो उसके प्रति हमारे जो कोई मोह के परिणाम हैं वे कम होंगे, ख्याल में आया? अरे! नहीं-नहीं निर्जीव है, निर्जीव है। अच्छा, मेरा बेटा-मेरा बेटा ऐसा करके पंपालोगे तो उससे मोह नहीं हटनेवाला है। जो वस्तुस्थिति है वह जानोगे तो ही उससे अपना मोह दूर होनेवाला है।

यहां जो हमने निमित्त-नैमित्तिक संबंधों के दो-तीन दृष्टान्त दिये थे, उसमें हमने देखा था कि केवलज्ञान नैमित्तिक है और लोकालोकरूप सब ज्ञेय निमित्त है। ज्ञेय जो निमित्त है,

उस निमित्त से जो नैमित्तिक केवलज्ञान है, उसमें कार्य होगा कि नहीं होगा? समझ में आया? वह ज्ञेय है, निमित्त है, लेकिन निमित्त से केवलज्ञान होता हो, तो यह ज्ञेय जो लोकालोक है वह कब से है? अनादि से है, तो अनादि से सब जीवों को केवलज्ञान हो गया कि नहीं? जिनके केवलज्ञान हुआ है वह अपनी निज शक्ति से हुआ है। अपने उपादान कारण से हुआ है। उपादान कारण की बात हम चलायेंगे अभी, लेकिन वह निमित्त से नहीं हुआ है। अब आगे की बात पढ़ने की बाकी है, आपको पढ़ाना है, समझाना है कि समझ गये अभी? हां भाईसाहब? *श्रोता: समझाना चाहिये।*

चलो-चलो देखो, सम्यग्दर्शन नैमित्तिक है, कार्य कौनसा हुआ है? सम्यग्दर्शन का और सम्यग्ज्ञानी के उपदेश आदि निमित्त हैं। यानी सम्यग्ज्ञानी ने उपदेश दिया, देशना दी, वह क्या है? निमित्त है और निमित्त से कार्य होता हो, तो सभी को सम्यग्दर्शन होना चाहिये। हमारी तुम्हारी तो बात छोड़ो, जो तीर्थंकर भगवान हैं, समवशरण में विराजमान हैं और वे सम्यग्दृष्टि हैं कि नहीं? हां? हैं, पक्का? अच्छा, तो वहां कितने जीव हैं? समवशरण में? हां पल्लवी तुम जानती हो? जोर से बोल। उं-उं-उं-उं ऐसा क्या कर रही हो? जोर से कौन बोलेगा? त्रिशला तू बोल। मालूम नहीं, कभी गयी नहीं है? हां-हां कौन बतायेगा? *श्रोता: असंख्यात हैं।* असंख्यात हैं, तो उनके दिव्यध्वनि के निमित्त से अगर कार्य होता हो, तो सभी जीव कम से कम सम्यग्दृष्टि तो होते? लेकिन निमित्त से कार्य नहीं होता है, यह बात यहां पर बता रहे हैं। देखो, हम कॉन्फिडन्ट नहीं होते न, तो मुंह नहीं खुलता है। हम तो कहते हैं जोर से चिल्लाओ। अपनी गलती हो, तो सबको मालूम पड़े, तो हमें शर्म आये कि हम गलत हैं तो हम सुधरेंगे और हम जितनी उसको ढांकने की-दबाने की कोशिश करेंगे उतनी वह गलती पनपेगी और कभी सुधरेगी नहीं। नाराज नहीं होना हो! यह हम अपने को कैसा सुधार सकते हैं, इसकी तरफ ध्यान देना। मैंने एक ही बात पहले बतायी थी अरे! हम गलत हो जायेंगे तो हमारी इज्ज़त जायेगी न, सबके सामने। तो हमने पहले ही बताया था। जिसके पास इज्ज़त होती है, उसीकी जाती है, क्यों? तेरे पास कितनी इज्ज़त है? चलो आगे बढ़ते हैं। देखो भाई, यहां मैं बैठा हूं तो किसीकी टीका-व्यंग करने के लिये, या किसीका दिल दुखाने के लिये बिलकुल नहीं बोलता हूं। हम लोग कैसे स्वयं सुधर जायें इसका रास्ता बता रहा हूं और मेरे जैसा, मैं तो स्वयं प्रवचनकार तो हूं ही नहीं, ख्याल में आया? लेकिन मैं जब सिखाता हूं तो मैं प्रश्नोत्तर के रूप में ही सिखाता हूं। बुरा लगे

किसीको तो भाग जाते हैं और जिनको अच्छा लगे वे रुक जाते हैं यह मुझे मालूम है। लेकिन जो सीखकर जाते हैं वे जो सीखा हुआ कभी भूलते नहीं।

अब यहां क्या कह रहे हैं? देखो, सम्यग्दर्शन यह नैमित्तिक यानी सम्यग्दर्शन यह कार्य हुआ, उस समय सम्यग्ज्ञानी के जो उपदेश आदि जो कुछ हैं वे निमित्त हैं। आत्मानुशासन नामक जो शास्त्र है; उसके श्लोक दस की टीका में यह बात आयी है। अब उसके आगे बात ऐसी है, सिद्ध दशा नैमित्तिक है। यानी कौनसा कार्य हुआ? तो सिद्ध दशा प्राप्त होना यह कार्य हुआ तो कब हुआ होगा? पुद्‌गलकर्मों का अभाव निमित्त है, तो पुद्‌गलकर्म के अभावरूप जब कार्य होता है तब वहां निमित्त सहजरूप से उपस्थित होता है। कौनसा? वहां आत्मस्थिरतारूप जीव का पुरुषार्थ वह निमित्त है। यहां क्या बता रहे हैं? सिद्ध दशा हुयी, यह नैमित्तिक है और निमित्त क्या है? आठ कर्मों का अभाव हो गया। तो कर्मों का अभाव होने से सिद्ध दशा प्राप्त हुयी होगी कि नहीं? बात ख्याल में आती है? वह तो निमित्त है निमित्त से कोई कार्य नहीं होता है। अब आगे।

यह प्रश्न जरा थोड़ासा टेढ़ा है, लेकिन आपने पूछा ही है तो समझाऊंगा। तो यही समझने के लिये आपने पूछा न? मुझे मालूम है। कौनसे गांव के हैं आप? वाशिम अरे वाह! बहुत बढ़िया। जैसे..., क्योंकि महाराष्ट्र में इस बात से लोग बहुत उत्तेजित हो जाते हैं लेकिन आपने हाथ डाला है, सुनना तो पड़ेगा साहब। यह उद्देशिक आहार और एक अध:कर्म आहार, ये दो बातें होती हैं। उद्देशिक आहार का अर्थ क्या है? जिनके उद्देश से वह भोजन-आहार बनाया होगा और वह सामनेवाला जीव वह आहार ग्रहण करता है तो उसको उद्देशिक आहार कहते हैं। यह उद्दिष्टत्याग प्रतिमा हमने कौनसे गुणस्थान में देखी थी याद है किसीको? हां? कौनसे गुणस्थान में? *श्रोता: ग्यारहवीं प्रतिमा है, पांचवें गुणस्थान में।* पांचवें गुणस्थान में ग्यारहवीं प्रतिमा है। वहां क्या है? उद्दिष्टत्याग प्रतिमा है यानी किसी, मान लिजिये ऐलक है या क्षुल्लक है, तो हम ऐलक की बात करेंगे।

तो ऐलक ऐसे जो कोई श्रावकजीव हैं, श्रावकोत्तम हम उनको कह पायेंगे तो उनके उद्देश से अगर किसीने भोजन बनाया हो और उनको पता चले कि मैं यहां आनेवाला हूं और मेरे उद्देश से यह भोजन-आहार बनाया है; अगर वह सच्चे श्रावक होंगे तो उस आहार का वे ग्रहण नहीं करेंगे क्योंकि उनके उद्दिष्टत्याग प्रतिमा है। यह तो अभी श्रावक की बात

है भाई, और यही बात आगे चलकर मुनियों के बारे में भी होती है। वे भी उनके उद्देश से बनाया हुआ जो आहार होगा उसका ग्रहण नहीं करेंगे, उनके उद्देश से बनायी कोई वसतिका होगी तो वहां नहीं रहेंगे। कि हम वहां आ रहे हैं; हमारे लिये एक बड़ा बंगला रखो; उसको ए सी बनाओ, ऐसा नहीं होगा, क्या? तो यहां कहते हैं वह उद्देश से बनाया हुआ आहार की बात है। यहां क्या कह रहे हैं? अध:कर्म से उत्पन्न, अध:कर्म यानी क्या? भाईसाहब? समझ लो कि मैं मुनि हूं, समझ लो और मैं कह रहा हूं आपके गांव में आ रहा हूं कहां रहते हैं आप बम्बई में? तो आपके वहां आ रहा हूं। मैं आपके यहां आहार लूंगा लेकिन मेरे लिये तो ढोकळा बनाना, मद्रास में जाऊंगा तो इडली बनाना, हां पंजाब में जाऊंगा तो। *श्रोता: परांठा।* अच्छा, परांठा बनाना। यह अपने उद्देश से आहार, नहीं तो आपसे कहलवाना कि महाराजसाहब को साहब पुरणपोली तो बहुत पसंद है, यह सामने से सजेस्टिव्ह अपने चाहा, वह आहार बनाकर लेना, उसको कहते हैं अध:कर्म। कैसा कर्म है? गया बीता।

क्या कहते हैं देखो, जैसे अध:कर्म से उत्पन्न और उद्देश से उत्पन्न, यह दो अलग बातें हो गयी न? कि वे स्वयं कहे कि उनके लिये यह भोजन बनायें और स्वयं न कहते हुये उन्हें पता लगे कि उनके कारण से यह बन रहा है, तो वहां वे आहार नहीं लेते हैं ऐसा मुनियों का और ऐलक, क्षुल्लक का स्वरूप है। तो क्या कह रहे हैं? ऐसे अपने उद्देश से उत्पन्न हुये निमित्तभूत आहारादि पुद्‌गलद्रव्य का प्रत्याख्यान न करना, यानी त्याग न करना। द्रव्य का प्रत्याख्यान न करता हुआ आत्मा (मुनि) नैमित्तिकभूत बंध का साधकभाव का प्रत्याख्यान नहीं करता। तो यहां ॲक्चुअलि नैमित्तिक यानी कार्य क्या हुआ? तो उस जीव ने बंध होनेवाला ऐसा जो भाव है, कौनसा? कि प्रत्याख्यान यानी त्याग नहीं करना, ऐसा जो जीव का परिणाम है वह नैमित्तिक है और अध:कर्म से उत्पन्न या उद्देश से उत्पन्न ऐसे आहार का ग्रहण करना वह निमित्त है। यहां पहले क्या हुआ? उस भाव का उसने त्याग नहीं किया वह नैमित्तिक और ऐसे आहार को ग्रहण करना वह निमित्त। उसी प्रकार समस्त परद्रव्य का प्रत्याख्यान न करता हुआ, समस्त परद्रव्य का त्याग न करता हुआ आत्मा, उसके निमित्त से होनेवाले भाव को नहीं त्यागता।

अब यह उलटी बात बता रहे हैं। कौनसी? यहां बता रहे हैं कि उस जीव ने क्या किया? समस्त परद्रव्य का त्याग न करते हुये यानी यह जो दस प्रकार के बहिरंग परिग्रह

हैं, उसका त्याग नहीं किया। उससे क्या हुआ? निमित्त क्या है? कि वह जो भाव है उसका त्याग नहीं किया। समझ में आया? पहले बात उधर से की, अब इधर से की, इससे इसमें परद्रव्य निमित्त है। यह बात समयसार की गाथा २८६ और २८७ की टीका में बतायी है। यह बात समझ में आयी क्या? हां तो बोलो भाई। हां, चलो, ऐसी बातें हैं न। जब कोई मुनिराज की बात आती है और वह भी मुनिराज जो नहीं हैं, उनकी बात आती है तो बहुत खलबली मचती है। लोगों को बहुत क्रोध होता है। कहने में आता है – तुम तो दिन में दस बार खाते हो। वे तो एक बार खाते हैं, तुम तो अपने बीबी, बाल-बच्चों के साथ रहते हो, उन्होंने तो घरबार छोड़ा है। तुम तो दस-पांच कपड़े पहनते हो, वे तो नग्न हैं। तुमको कौनसा अधिकार है उनके बारे में बोलने का? क्या हैसियत है तुम्हारी? अरे! भाई, हम नहीं बोल रहे हैं, इसलिये तो वहां बारंबार हर फकरे के नीचे कौनसे शास्त्र का कथन है वह बताया है। पहले बताया है प्रवचनसार गाथा २६ की टीका, दूसरे आत्मानुशासन श्लोक १० की टीका, समयसार गाथा ८२ की टीका, समयसार गाथा २८६, २८७ की टीका। यह जो आचार्यों ने ग्रंथ लिखे हैं उनके ऊपर, अन्य आचार्यों ने जो टीका रची है उसके कोटेशन दिये हैं और उसको हम समझा रहे हैं, यही हमारा अपराध है अगर आप मानते हो तो और आपके मानने से वह अपराध होता है, ऐसा भी नहीं है, ख्याल में आया? क्यों चिंतामणि, चिंता मत करना बेटा। बात तो ऐसी है साहब, जो शास्त्र के अनुसार कथन करें, उसे किसी भी प्रकार का भय नहीं होना चाहिये। लेकिन शास्त्र से विरुद्ध बात करेगा तो उसको परंपरा निगोद होगा। परंपरा निगोद की बात निकली थी न? वहां तुरंत नहीं जायेगा, लेकिन जायेगा अवश्य।

अब आगे बढ़ते हैं। अभी तक हमने निमित्त की बात देखी और निमित्त-नैमित्तिक की बात देखी। अभी हमें उपादान की बात देखनी है। तो यहां बोर्ड पर आपके सामने लिखा है। इधर भी लिखा है; उधर भी लिखा है; जहां जिसको कन्व्हीनिअंट होवे, वह देख लेना। यहां जो कहते हैं उपादान कारण, अभी तक हमने निमित्त कारण की बात देखी थी। अभी यहां किसकी बात चल रही है? उपादान कारण। तो उपादान कारण भी दो प्रकार के होते हैं।

उपादान कारण

त्रिकाली उपादान　　　　　　　　　　**क्षणिक उपादान**

(१) अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्यय, (२) तत्समय की योग्यता

तो हमने पहले उपादान कारण में क्या देखा? कि जो निज शक्ति है, वह निज शक्ति से ही कार्य होता है। तो यहां कहते हैं वह निज शक्ति भी दो प्रकार की है। तो कौन-कौनसी है? तो कहते हैं एक है त्रिकाली उपादान और दूसरी है क्षणिक उपादान। यह त्रिकाली उपादान क्या होता है? द्रव्य होता है। जैसे हमने देखा घड़ा बना। उसकी निज शक्ति क्या है? घड़ेरूप परिणमने की। तो उसका त्रिकाली उपादान क्या है? वह तो मिट्टी है। तो आप कहोगे कि यह मिट्टी तो यहां अनादि से पड़ी हुयी है, तो उसका घड़ा क्यों नहीं बना? ख्याल में आता है? तो कहते हैं यह त्रिकाली उपादान है, वह हमें यही बात बताता है कि यह घड़ा मिट्टी से ही बनेगा अन्य किसीसे नहीं बनेगा। ख्याल में आया? कार्य उसी द्रव्य में होगा, अन्य में नहीं यह त्रिकाली उपादान बताता है। तो कहते हैं साहब वह तो बात बराबर है, घड़ा मिट्टी से ही बनेगा, लेकिन वह कब बनेगा? तो कहते हैं हम त्रिकाली उपादान के बाद क्षणिक उपादान की तरफ देखेंगे तो बात समझ में आयेगी।

तो शास्त्र में क्षणिक उपादान भी दो प्रकार से बताये गये हैं। तो पहले का नाम क्या है? मैं बोलूंगा आपको भी रिपीट करना है। हां, जोर-शोर से बोलो कोई चिंता नहीं, आप कोई प्रायमरी स्कूल में नहीं बैठे हैं। आप तो जिनेन्द्र भगवान की वाणी सुनने को बैठे हैं और उन्होंने जो बात बतायी, वह अपने मुख से निकले इससे सौभाग्य की बात क्या हो सकती है? यहां क्षणिक उपादान जो देख रहे हैं उसमें पहला जो नाम है वह कहते हैं अनंतरपूर्व। *श्रोता: अनंतरपूर्व।* फिर से क्या बोलते हैं? वह ट्रेन निकल गयी न, मैं सुन नहीं पाया। अनंतरपूर्व। *सभी श्रोता: अनंतरपूर्व।* क्षणवर्ती पर्याय। *सभी श्रोता: क्षणवर्ती पर्याय।* का व्यय। *सभी श्रोता: का व्यय।* तो हमें कैसा पढ़ना है? अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्यय, बोलो। *सभी श्रोता: अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्यय।* अभी यह क्या है? उसका अर्थ क्या है? वह भी देखेंगे और क्षणिक उपादान कारण का दूसरा प्रकार, क्या है उसका

नाम? तो कहते हैं तत् समय की योग्यता। *सभी श्रोता: तत् समय की योग्यता।* अभी इसका अर्थ हम देखेंगे। तो यहां क्या कह रहे हैं? पहला शब्द कौनसा है अनंतर। तो यह अनंतर क्या होता है?

रिया जानती हो तुम? नहीं जानती न, मैं बताऊंगा। अनंतर का अर्थ अन् यानी नहीं, अंतर यानी बीच में कोई गॅप नहीं, यानी इमीजिएट नेक्स्ट। तो यह नेक्स्ट कौनसा है? प्रायर यानी एक समय पूर्व की बात है। अन्-अंतर क्षणवर्ती, अनंतर पूर्व, यानी अभी हम समझते हैं हो। ऐसे समझने के लिये बताते हैं कि एक, दो, तीन, चार, ऐसे समय हम गिनेंगे। कहीं तो शुरुआत करेंगे और ११० नंबर की पर्याय में जो कोई कार्य हुआ, कौनसी पर्याय? ११० नंबर की पर्याय में घड़ा बना। तो उसमें क्या हो गया कि अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्यय हुआ तो ११० नंबर के समय में घड़ा बना। तो उसकी पूर्व पर्याय कौनसी होगी, अनंतरपूर्व पर्याय कौनसे नंबर की होगी? हां जी? *श्रोता: १०९*, तो जो ११० नंबर का कार्य हुआ तो उसके पहले की जो १०९ नंबर की पर्याय है वह अनंतरपूर्व वह कितने काल टिकती है? *श्रोता: क्षणवर्ती।* क्षणवर्ती, एक समयवर्ती। तो अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय उसका क्या हुआ? *श्रोता: व्यय हुआ।* जो हमने पहले देखा था जिस समय अंधकार का व्यय होता है उसी समय प्रकाश का उत्पाद होता है। तो यहां उत्पाद किसका हुआ? घड़ा बना वह उत्पाद है। घड़ा बना वह कार्य है, तो वह कार्य कब होगा? तो उसके पूर्व की जो पर्याय थी उसका व्यय हुआ; तब वह कार्य हुआ ११० नंबर का। ख्याल में आया?

अब आगे तत् समय की योग्यता। यह तत् यानी उस समय की। तत् यानी वह, उस समय की जो योग्यता है, जिस समय कार्य होना है उसी समय वह कार्य होगा उसको कहते हैं तत् समय की योग्यता। अभी यह कार्य कौनसे समय में हुआ साहब? समय नंबर कौनसा था? निखिलजी, ११०। तो ११० में क्या बातें हुयी? कि ११० पर्याय का उत्पाद हुआ और उसी समय १०९ नंबर की पर्याय का व्यय हुआ, ख्याल में आया? तो यहां क्या कह रहे हैं? देखो, कार्य और उसका कारण क्या है? तो **अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्यय सहित जो द्रव्य है वह है कारण और तत् समय की योग्यता जो ११० नंबर की पर्याय का उत्पाद है – वह कार्य है**। यह बात ख्याल में आती है? नहीं आयी तो पूछना हो। कोई बात नहीं। हां जी? फिर से बोलना। *श्रोता: ११० नंबर की*

पर्याय में ही व्यय हुआ? ११० नंबर की पर्याय में ही कार्य हुआ और पूर्व पर्याय – १०९ नंबर की पर्याय का व्यय हुआ। क्योंकि पहले हमने देखा था कि द्रव्य का लक्षण कैसा है? सत् लक्षण, वह सत् कैसा है? तो वह द्रव्य सत् है उत्पाद भी सत् है, व्यय भी सत् है और ध्रुवता भी सत् है। उसको यह कहा गया है कि उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्। सत् द्रव्यलक्षणम् यानी क्या कहना चाहते हैं कि यहां उत्पाद का और व्यय का और ध्रुवता का तीनों का समय एक ही है।

तो ११० नंबर की पर्याय में घड़ा बनने का कार्य हुआ। अभी हम नंबर नहीं देते हैं; पहले मिट्टी पड़ी थी, उस मिट्टी में उसने पानी डाला, फिर उसका ऐसा कुछ गोला-पिंड बनाया, फिर उसके हाथ में जो डंडा था उससे चक्के को घुमाया, उस गोले को उस पर रखा, फिर उसको ऐसा-ऐसा-ऐसा जो कुछ किया जाता है वह किया और पीछे से डोरी डालकर उसको उठाया, जो भी होता हो, मैंने कभी किया नहीं है, लेकिन जितना जानता हूं सब बता रहा हूं। उसको उठाकर भट्टी में डाल दिया, तब वह घड़ा हो गया। तो यह क्रम से होगा न? कि एक साथ सारा होगा? देखो-देखो, अभी हम देखते हैं। आप यहां से अमेरिका चले गये। सब लोगों को मैं भेज रहा हूं हो, तो वहां तो बड़ी-बड़ी अनेक मंजिलों की बिल्डिंगें होती हैं, तो वहां १३० माले की बिल्डिंग है। कितने? १३०, और आपको ११० नंबर के माले पर जाना है, तो क्या करोगे? एकदम डायरेक्ट १०५ और ११० ऐसा जायेंगे कि नहीं? क्रम से एक के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा, तीसरे के बाद चौथा, ऐसा जब हम चढ़ते-चढ़ते जायेंगे, तो १०९ नंबर के फ्लोअर से आप ११० नंबर पर जायेंगे। यह तो फ्लोअर की बात समझने के लिये बतायी, यहां तो समयों की बात है। तो कहते हैं ११० नंबर की पर्याय में घड़ा बना वह भट्टी से निकला हुआ घड़ा बना, जो भी हमें मानना है।

तो वह जो ११० नंबर की पर्याय में घड़ा बना, उसके पूर्व पर्याय जो थी...। यानी हमारे यहां १०९ नंबर के फ्लोअर का व्यय हुआ और ११० नंबर के फ्लोअर का उत्पाद हुआ लेकिन इसमें टाइम लगता है। क्योंकि यह उदाहरण है न! क्योंकि एक समय इतना सूक्ष्म है तो उसका वर्णन हम नहीं बता सकेंगे कि उस समय में कौनसी अवस्था थी, ख्याल में आया? लेकिन हम गणित के उदाहरण के माध्यम से देखते हैं कि ११० नंबर

में कार्य हुआ तो वह कार्य कब होगा? कि जब १०९ नंबर की पर्याय का व्यय होगा तभी होगा। वह १०८ नंबर की पर्याय का व्यय होगा तो उत्पाद किसका होगा? १०९ का होगा, ख्याल में आया? तो यहां क्या बता रहे हैं अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्ययरूप कारण और तत् समय की योग्यतारूप कारण। ये दोनों कारण एक ही समय में होते हैं। ये भाईसाहब को जरा पूछो, समझ में आता है साहब? आपने बताया था कि उपादान कारण में जरा हमको समझा दीजिये, तो यह हम इसीतरह से समझने की कोशिश करेंगे कि यहां कहते हैं कि उपादान क्या है? कि त्रिकाली द्रव्य है उसी द्रव्य में से वह पर्याय निकलेगी, मिट्टी में से ही घड़ा बनेगा। सोने में से ही अलंकार बनेंगे। तो जो सुनार है, वह उस अलंकार का कर्ता है कि नहीं? क्या बोलते हैं आप? *श्रोता: निमित्त कर्ता है।* अरे! कर्ता है कि नहीं पूछ रहे हैं निमित्त कर्ता की कहां बात चल रही है? कर्ता है कि नहीं?

हम तो मानते हैं साहब। आपके पास कौनसा कारीगर है? उसीसे यह हमारे गहने बनवाओ, लास्ट टाइम हमने लिये थे न। कब? पंद्रह साल पहले, अरे! वह तो कब का मर गया। यहां तो कहते हैं यह जो सोनी है उसके हाथ में यह जो औजार है, तो वह सोनी और उसके हाथ में अत्यंताभाव है। हाथ में और औजार में अन्योन्याभाव है। सोने में और उस औजार में... *श्रोता: अन्योन्याभाव।* तो किसी सोनी ने वह अलंकार बनाये हैं, तो आग्रह मत रखना। यह जो हम बात सुनते हैं, तो दिमाग थोड़ासा आउट हो जाता है, चकरा जाता है। क्या करें? क्योंकि भाई मैं आपसे यह बात पूछूंगा कि क्या हमें सर्वज्ञ के ज्ञान पर भरोसा है? या जो अज्ञानी है, सम्यग्दृष्टि भी नहीं है, ऐसे बड़े-बड़े सायंटिस्ट होंगे उनके सायन्स के सिद्धान्तों पर हमें विश्वास रखना है? आपका चॉइस है हो! हम कोई आग्रह नहीं रखते हैं। यानी हम सर्वज्ञ की बात माने या छद्मस्थ की बात माने? छद्मस्थ, वह भी कैसा? वह भी सम्यग्दृष्टि भी नहीं है सम्यग्दृष्टि होगा तो वह आग्रह ही नहीं करेगा कि पर से कार्य होता है।

जो आग्रह करता है कि पर से यह कार्य होता है, सुनार से ही यह दागिना बना हुआ है तो समझना कि जिनेन्द्र भगवान की वाणी से विरुद्ध बात है। तो हमें किस पर भरोसा रखना है? जो सत्य है, उसके ऊपर या जो हमारे लिये कन्व्हीनिअंट है, ऐसे असत्य के ऊपर? निखिलभाई बात ख्याल में आती है? आपका प्रश्न था न? क्या करें साहब, देखो

आपको मालूम है सायंटिस्ट किसको कहते हैं? शास्त्रज्ञ-वैज्ञानिक-संशोधक किसको कहते हैं? जिसकी खोज पूरी नहीं हुयी है वह संशोधन करता है उसको वैज्ञानिक कहते हैं और जिसको खोजने को कुछ बाकी नहीं, सभी ज्ञात है उसको सर्वज्ञ कहते हैं। तो आप नक्की करो किस पर आपको भरोसा रखना है? ख्याल में आया? तो अभी हमने इसमें क्या देखा, देखो कार्य होगा वह तो त्रिकाली उपादान में ही होगा, वही उसका कर्ता है। तो कहते हैं वह तो अनादि से पड़ा हुआ है, क्यों नहीं हो रहा है? तो कहते हैं कि वह जो अनादिकाल से मिट्टी पड़ी है, उसकी हर समय पर्याय बदलते-बदलते-बदलते ऐसी पर्याय जब आयेगी कि जिस समय घड़ा बना उसके पूर्व की जो अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय है, उसका जब तक व्यय नहीं होता है; तो वह घड़ा बनने की तत् समय की योग्यता उसकी नहीं आती है तब तक वह कार्य नहीं होगा। कुछ बात समझ में आ रही है क्या? हां, मोना, पल्लवी आपको?

श्रोता: तत् समय की योग्यता यानी? हां, तत् समय की यानी उस समय की योग्यता। कार्य तो होता ही है न। देखो-देखो कोई द्रव्य है, वह पर्याय बिना हो सकेगा क्या? तो उसकी पर्याय-पर्याय, हर समय नयी पर्याय, हर समय नयी पर्याय, हर समय नयी पर्याय, तो कोई विशिष्ट कार्य हुआ। अभी मान लो आप हैं और आपका अस्तित्व कब से है? अनादि से। तो आप में श्रद्धा गुण है कि नहीं? वह कब से है? अनादि से है। तो उसमें परिणमन निरंतर चल रहा है कि नहीं? लेकिन अभी आपको साढ़े चार बजकर पांच मिनट में सम्यग्दर्शन होना है। तो यह साढ़े चार बजकर पांच मिनट में सम्यग्दर्शनरूप परिणमने की योग्यता द्रव्य में है, यह तत् समय की योग्यता है। तो वह कब होगी? अभी एक-एक मिनट में गिनते हैं हम। चार बजकर चौंतीस मिनट नहीं हो रहे हैं तब-तक आपको सम्यग्दर्शन नहीं होगा। तो चार बजकर चौंतीस मिनट का व्यय कब होगा? चार बजकर पैंतीसवें मिनट में। उस समय श्रद्धा गुण के सम्यग्दर्शनरूपी नयी पर्याय का उत्पाद और वह पुरानी जो कोई पर्याय है मिथ्यात्व की, उसका व्यय होगा।

तो वह तत् यानी उस समय की योग्यता के अनुसार ही कार्य होता है। तो यह कार्य का नियामक कौन है? तो कहते हैं – तत् समय की योग्यता। तो हम क्या कहेंगे? चलो! अच्छा हो गया, आपने बताया कि जिस समय जो कार्य होना है उस समय ही होगा उसके आगे पीछे नहीं होगा, तो हमें कभी सम्यग्दर्शन होना है? चार बजकर पैंतीस मिनट में न।

तो हम जरा एक सिनेमा देखकर आते हैं। आजकल तो घर-घर में सिनेमाघर है भाई। बटन दबाओ तो वह क्या बोलते हैं। तो टीव्ही, टीबी चालू होता है। नहीं समझे? यह उत्तर प्रदेश के, मध्य प्रदेश के लोग व को ब बोलते हैं और ब को व बोलते हैं। तो टीव्ही के बदले हमने टीबी बोला तो आप क्यों नाराज़ हो गये? ओ, बसंती अरे! वह वसंती है, बसंत ऋतु है, या वसंत ऋतु है नक्की करना। जिसका नाम विजय है उसको बोलेंगे बिजय। सुना है क्या कभी आपने? अभी तो सुना न? ना क्यों बोल रहे हैं? देखो यहां क्या बता रहे हैं? यह जो कार्य हो रहा है उसका नियामक-कंट्रोलर कौन है? तो कहते हैं तत् समय की योग्यता वह उसका नियामक कारण है और वह नियामक कारण कौन है? तो कहते हैं उपादान कारण। तो उपादान कारण में तीन बातें बतायी हैं, एक त्रिकाली उपादान कारण, वह कार्य का नियामक नहीं है। लेकिन किसमें, कौनसे द्रव्य में कार्य होगा वह बतानेवाला है और यह अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय जो है वह यह बताती है कि इसके बाद यह कार्य होनेवाला है। वह काल सूचक है और नियामक जो है यानी जो नक्की करनेवाला है वह है तत् समय की योग्यतारूप क्षणिक उपादान कारण।

अभी इसमें किसीके कोई प्रश्न हो तो पूछ लेना। है किसीके कोई प्रश्न? अभी हमने जो बात की थी कि किसीको सम्यग्दर्शन कोई पर्टिक्युलर टाइम पर होना है, तो उसके पूर्व में जो पर्याय होनी है वही होगी। अभी फॉर एक्झाम्पल किसीको सम्यग्दर्शन होना है तो सम्यग्दर्शन होने के पूर्व, उसके करणलब्धि क्या है जानते हैं आप? अध:करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण यह करण परिणाम जीवों के होते हैं। तो जैसे हमने ११० नंबर पर अभी हम एक-एक समय में घटित कर रहे हैं हो, वैसे तो अंतर्मुहूर्त लगता है एक-एक करण परिणाम में। तो क्या कहा? जिस समय सम्यग्दर्शन हुआ उसके पूर्व में अनिवृत्तिकरण परिणाम होंगे। उसके पूर्व में कौनसा हो गया? अपूर्वकरण उसके पूर्व में अध:करण, उसके पूर्व में प्रायोग्यलब्धि होगी, उसके पूर्व में देशनालब्धि होगी, उसके पूर्व में विशुद्धिलब्धि होगी, उसके पूर्व में, कौनसी? जोर से। *श्रोता: क्षयोपशमलब्धि होगी।* क्षयोपशमलब्धि होगी। और हम तो मानते हैं कि नहीं, अभी सम्यग्दर्शन होने में कुछ टाइम बाकी है। हम तो पिक्चर देखकर आते हैं और बाद में अभी और कुछ समय बाकी हैं, ठहरो-ठहरो अब थोड़ासा खाना खा लेते हैं, ऐसा होगा कि नहीं? जैसे हमने देखा कि ११० नंबर के फ्लोअर पर हमें जाना है तो उसके पूर्व में १०९ नंबर का फ्लोअर आयेगा-आयेगा और

आयेगा। उसके पूर्व में १०८, उसके पूर्व में १०७, उसके पूर्व में ऐसा गिनते जाना, वैसे सारी पर्यायें निश्चित हैं क्योंकि विशिष्ट पर्याय हुये बिना अगली पर्याय नहीं होती है। इस सिद्धान्त से क्रमबद्धपर्याय का निर्णय हो जाता है। क्रमबद्धपर्याय समझ में आया न? यानी एक के बाद दूसरा जिस क्रम से जो पर्याय होनेवाली है वे सारी निश्चित हैं। देखो, हम जैन धर्म के एक-एक छोटे-छोटे सिद्धान्तों को देखते हैं, तो वे बड़े-बड़े सिद्धान्तों के प्रूफ बन जाते हैं।

तो क्या कहा? इसमें तो और बहुत सारी बातें हैं। तो यहां बता रहे हैं कि त्रिकाली उपादान है वह स्वभाव का नियामक है। यानी किसमें वह कार्य बनेगा? अन्य किसी द्रव्य में नहीं बनेगा। यानी जो सम्यग्दर्शन होगा तो पुद्गलद्रव्य को होगा कि नहीं? तो धर्मद्रव्य को धर्म तो होता है ना भाई! धर्मद्रव्य में धर्म नहीं? तो कहते हैं आकाशद्रव्य को? नहीं। तो कहते हैं त्रिकाली उपादान है, वह बताता है कि इसी विशिष्ट द्रव्य में वह कार्य होना है, कौनसा? सम्यग्दर्शन की बात करते हैं। अगर घड़े की बात करनी है, तो मिट्टी में से ही घड़ा होगा। मिट्टी से इसलिये कहते हैं कौनसे द्रव्य में और कौनसे गुण में यह कार्य होगा, इसे निश्चित करनेवाला यह कारण है। अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय युक्त द्रव्यरूप क्षणिक उपादान कारण विधि का अर्थात् प्रक्रिया का अर्थात् पुरुषार्थ का नियामक है। यह क्या बात कहना चाहते हैं? हां, यह विधि यानी जो कुछ प्रोसेस है उस प्रोसेस को कौन बताता है? अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय। उसके पहले क्या था? उसके पूर्ववर्ती अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय, ऐसे जो कोई प्रोसेस है जिस प्रोसेस से, जैसा अभी हमने देखा कि पहले तो क्षयोपशमलब्धि, बाद में विशुद्धिलब्धि, बाद में देशनालब्धि, फिर प्रायोग्यलब्धि, फिर करणलब्धि उसमें भी तीन करण। यह सारे कैसे हैं? एक के बाद, एक के बाद होनेवाले हैं इसको विधि कहेंगे। तो यह जो पहले नंबर का **क्षणिक उपादान है वह विधि का अर्थात् प्रक्रिया यानी पुरुषार्थ का नियामक है**। यानी वह पुरुषार्थ को नक्की कराता है।

और तत् समय की योग्यता है,यानी **तत् समय की पर्याय की योग्यतारूप जो क्षणिक उपादान कारण है, वह काल का अर्थात् कार्य का नियामक है**। इसतरह से हमने यह देखा है। तो यहां कह रहे हैं जब-जब कार्य होता है, तब-तब निमित्त की सहज उपस्थिति होती है, निमित्त को ढूंढ़ना नहीं पड़ता। निमित्त कैसे और कहां से मिलेगा इस चिंता से व्यग्र होने की जरूरत नहीं है। निमित्तानुसार कार्य नहीं होता, परंतु कार्य होता है

उसके अनुसार निमित्त संज्ञा दी जाती है। इस बात को भी हमने बहुत बार देखा था कि जब कार्य होता है, तब कार्य के समय निमित्त हाजिर होता है, उसको ढूंढ़ने जाना नहीं पड़ता है और जब कार्य होगा और उसके अनुकूल कोई अन्य द्रव्य होगा, पदार्थ होगा तो उसको हम निमित्त कहेंगे। जब कार्य ही नहीं होता है तब निमित्त कहने की कोई आवश्यकता ही नहीं है। तो इसलिये यहां पर बता रहे हैं, कार्य एक समय का होता है और उसमें निमित्तरूप होती है परद्रव्य की पर्याय।

अभी तक हमने क्या देखा था? कि परद्रव्य निमित्त होता है, लेकिन वास्तविक में क्या कह रहे हैं? कार्य जो बन रहा है वह कार्य बनने में कितना समय लगता है? हां जी? एक समय। तो कार्य एक समय है तो निमित्त भी एक समय का ही होगा और इसलिये कहते हैं निमित्त एक समय का है वहां भी परद्रव्य की पर्याय जो है वह निमित्त है। तो कह रहे हैं कि कार्य एक समय का होता है और उसमें निमित्तरूप होती है परद्रव्य की पर्याय, जो स्वयं एक समय की होती है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि **निमित्त-नैमित्तिक संबंध दो द्रव्यों की विशिष्ट पर्यायों में होता है**। पहले तो हमने स्थूलरूप से परद्रव्य निमित्त होता है ऐसा कहा था। लेकिन अभी हमने जब क्षणिक उपादान आदि की बात देखी, तत् समय की योग्यतारूप कारण होता है वह भी देखा। कार्य एक समय का है तो उसमें निमित्तरूप जो परद्रव्य की पर्याय है, उन दोनों का आपस में निमित्त-नैमित्तिक संबंध जो है; वह एक समय का होता है।

एक विशिष्ट घटना या पर्याय अन्य-अन्य जीवों को अन्य-अन्य कार्यों में निमित्त हो सकती है। क्या कहना चाहते हैं? तो विशिष्ट घटना में क्या होता है? आपको कथा ही सुनाता हूं न, नहीं तो आपका ध्यान नहीं होता है न, कथा सुनने में ध्यान आ जाता है। चलो सुनो। क्या कहते हैं? देखो, एक निर्जन जगह थी, वहां से लोगों का आना जाना बहुत कम होता था। तो उस समय क्या हो गया, एक सुंदर स्त्री वहां मरी हुयी नदी के किनारे पड़ी थी, उसके शरीर पर बहुत अलंकार आदि थे। तो वहां से एक साधू जा रहा था, तो उसने देखा कि अरेरेरे यह स्त्री ऐसी मरी पड़ी है, यह कोई अच्छी बात नहीं, तो उसने ऐसा सोचा कि मैं नजदीक जाऊं और अपना जो कोई एकाध कपड़ा है, उसके ऊपर डाल दूं। इतने में वहां से एक चोर जा रहा था। उस चोर ने देखा कि अरे बाप रे! इसके पास इतने गहने हैं, अगर यहां कोई नहीं होता तो मैं उसको जरूर ले लेता। वहां से एक सियार जा रहा था,

जीव है न वह भी। तो उसने देखा कि ये दो आ रहे हैं, नहीं तो मैं इसको कबका खा जाता। तो यहां क्या बता रहे हैं देखो, एक ही विशिष्ट घटनारूप पर्याय यानी जो कार्य हो रहा है, अन्य-अन्य जीवों को अन्य-अन्य कार्यों में निमित्त हो सकती है। मृत स्त्री को देखकर किसीके वैराग्य उत्पन्न होता होगा, तो किसी कामी पुरुष के कामभाव जागृत होंगे। निमित्तानुसार कार्य होता होगा? देखो, यह बहुत बड़ा सिद्धान्त है। क्या कह रहे हैं निमित्त के अनुसार कार्य होता होगा, तो प्रत्येक को समान भाव उत्पन्न होने चाहिये थे। क्या बताया?

अगर निमित्त से कार्य होता है, तो यहां हमने जो दो-चार जीव देखे, सबके परिणाम एक जैसे होने चाहिये। परंतु ऐसा तो कभी नहीं होता। पंडित टोडरमलजी कहते हैं कि परद्रव्य अपने भाव बिगाड़ते नहीं, अपने भाव बिगड़ते हैं तब वे परद्रव्य तो केवल बाह्य निमित्त हैं। इसतरह परद्रव्यों पर दोष लगाना मिथ्याभाव है। निमित्त जबरदस्ती से उपादान में कुछ नहीं करता और उपादान भी निमित्त को जबरदस्ती से जुटाता या हटाता नहीं। क्या कहा? देखो-देखो, निमित्त जो होता है वह तो कार्य में कुछ नहीं करता है। इसलिये कहते हैं निमित्त जबरदस्ती, जबरदस्ती यानी गुजराती में पराणे, उपादान में कुछ नहीं करता, उपादान में कुछ हेरा फेरी नहीं करेगा और उपादान भी जो है वह निमित्तों को जबरदस्ती लावे ऐसा नहीं हो सकता अभी हमने देखा था न।

आपको विदेहक्षेत्र में जाना है, तो जबरदस्ती जा रहे हैं न हम? तो कहते हैं निमित्तों को जबरदस्ती से जुटा भी नहीं सकते और हटा भी नहीं सकते। दोनों का सहज ही संबंध है। यह दोनों का यानी किसका-किसका? निमित्त का और नैमित्तिक का। अब कहते हैं कि स्वयं की पात्रता बढ़ती है तब उसको उचित निमित्त सहज मिल जाता है ऐसा उनका कहना है। यह कह रहे हैं निमित्त और उपादान का यह सहज सुमेल होने पर भी दो भिन्न द्रव्य स्वयं में परिणमन करते हैं। यानी क्या कहना चाहते हैं? तो यह बताते हैं कि अपने विश्व में अनेक द्रव्य हैं, अनंत द्रव्य हैं और प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना परिणमन निरंतर कर रहा है तो कभी कोई द्रव्य में परद्रव्य निमित्तरूप से मिल जाता है। तो निमित्त सहज होता है, उसको लाना नहीं पड़ता है क्योंकि परिणमनशीलता द्रव्य का स्वभाव है न। इसलिये यह निमित्त-नैमित्तिक संबंध, उपादान के भेद-प्रभेद इनको देखते हुये, अभी इसमें किसीको कोई प्रश्न हो तो पूछ लेना। लेकिन दोपहर में मैंने एक बात बतायी थी, उसमें

कई लोगों को आपत्ति हुयी कि इसको हम बराबर नहीं समझे, तो समझा दो। तो इसलिये यह तत्त्वार्थसूत्र जो आचार्य उमास्वामीजी का है, उसके ऊपर रामजीभाई दोशी ने मोक्षशास्त्र नामक टीका रची है वह शास्त्र हमने मंगाया है।

इसके पूर्व अपने यह निमित्त उपादान में किसी की कोई शंका हो तो उसको हम पहले सॉल्व्ह करना चाहते हैं। कोई बात नहीं समझी हो, तो आप अवश्य पूछ सकते हैं। कोई है प्रश्न? अरे! तो आपको क्या इन्व्हाइट करना पड़ता है क्या?

प्रश्नः अगर हम किसी जीव की हत्या करेंगे तो वह मर जायेगा। लेकिन जीव इस पर्याय से तभी मरेगा जब उसकी आयु खत्म होगी। हम तो सिर्फ उसके लिये निमित्त हैं, फिर भी हमें पाप क्यों लगता है? बहुत अच्छा प्रश्न है। क्योंकि यह प्रश्न से हम उसको हत्या करने के लिये प्रवृत्त नहीं करा रहे हैं, हो। समझना, क्योंकि यह पूछने के पीछे यही भाव है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है, तो उसका हमें पाप क्यों लगे? ऐसा ही प्रश्न है न भाई? किसका आपका है? अच्छा! देखो, हम उस जीव की जब आयु, पूरी होनी है तब वह मरेगा यह निश्चित है, लेकिन हमारे मन में क्या हुआ? कि मैं उसको मारूं। तो यह जो आपका मारने का भाव है उस भाव का फल आपको मिलनेवाला है।

मैं पर को मार भी नहीं सकता, पर को जिला भी नहीं सकता क्योंकि पर तो मेरेसे अत्यंत भिन्न परद्रव्य है। दो द्रव्यों में अत्यंताभाव है, फिर भी उस जीव को मारने के जो परिणाम पैदा हुये हैं, उन परिणामों का फल मिलेगा। ख्याल में आयी बात कि नहीं आयी? *श्रोताः लेकिन हम तो निमित्त हैं उसके लिये। हम नहीं होते तो वो कार्य भी नहीं होता।* अरे! भैया, तू मार ही नहीं सकता यह मैंने पहले ही बताया न। निमित्त तो है? निमित्त कार्य में तो कुछ नहीं करता है वह उसकी आयु पूरी होने से वह मर गया। लेकिन भाव क्या किया हमने? मैं उसको गोली मार दूं। तुमको मालूम है अपने इंडियन पीनल कोड में भी, इंटेंशन ऑफ़ किलिंग इज ऑल्सो अ क्राइम। यानी हमने गोली मारी प्रफुल्लभाई को, लेकिन हमारा हाथ हिल गया तो दूसरी ओर किधर गोली चली गयी, वे मरे नहीं, जिन्दा हैं और उन्होंने हमें कोर्ट में बुलाया तो हमको सजा होगी कि नहीं? भाई, तूने मारा नहीं तो क्या हुआ, तेरा इंटेंशन क्या था? तेरा इरादा क्या था? तो लौकिक में भी उसको सज़ा हो सकती है और अलौकिक में नहीं होगी क्या? यानी उसका फल तो जरूर मिलेगा।

देखो, तो हम देख रहे थे कौनसा? परस्परोपग्रहो जीवानाम्। तो यह परस्परोपग्रहो जीवानाम् नाम का जो सूत्र है वह पांचवें अध्याय का २१ वें नंबर का सूत्र है। वहां कहते हैं कि यह गुजराती में है इसलिये मैं हिन्दी में ट्रान्स्लेट करके बताऊंगा। जीवोने अरस परस उपकार छे यानी जीवों को परस्पर उपकार है। उसका अर्थ क्या है? जिओ और जीने दो नहीं है। क्या कहा? सुनना हो। मैं पूरे होश-हवास में बोल रहा हूं। क्या लिखा है? जीवों को परस्पर उपकार है। अब यह उपकार क्या है? यह बात इसी अध्याय में १७ नंबर के सूत्र से चालू होती है। देखो, सूत्रों में यह विशेषता होती है, जो बात एक बार बतायी हो वह अगले सूत्र में वह कंटिन्युएशन में रह सकती है, बार-बार उन शब्दों का उपयोग नहीं किया जाता है क्योंकि सूत्रों में मिनिमम मोस्ट शब्दों का इस्तेमाल किया जाता है। अधिक रिपीटेड ऐसे कोई शब्द नहीं होते हैं। तो कहते हैं **गति स्थिति उपग्रहौ धर्माधर्मयोः उपकारः।** इसमें क्या कहते हैं कि स्वयमेव गमन तथा स्थितिने प्राप्त थयेला जीव अने पुद्‌गलोने यानी स्वयं गतिरूप और स्थितिरूप परिणमते हुये जीव और पुद्‌गलों को, गति तथा स्थितिमां सहायक थाय ते क्रमथी धर्म अने अधर्मनो उपकार छे। इसका अर्थ क्या है फिर से। स्वयमेव गमन करते हुये या स्थिति को प्राप्त होते हुये जीव और पुद्‌गलों को गति तथा स्थिति में सहायक यानी सहायक किसके हैं? क्रम से गति और स्थिति में यानी गति में धर्मद्रव्य और स्थिति में अधर्मद्रव्य उपकार करते हैं। यानी क्या करते हैं? निमित्त हैं वे।

अभी हमने धर्मद्रव्य और अधर्मद्रव्य की परिभाषा देखी थी न। देखो, लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका में यह ३६ नंबर का प्रश्न है, १० नंबर के पृष्ठ पर कि स्वयं गमन करते हुये जीव और पुद्‌गलों को गमन करने में जो निमित्त हो, तो यहां उपकार का अर्थ निमित्त है। तो आपने यह अर्थ कहां से निकाला ऐसा हमको किसीका प्रश्न हो सकता है। उसीको हम देख रहे हैं, देखो यहां लिखते हैं, टीका में बता रहे हैं, उपकार-सहायकता-उपग्रह सभी शब्द एकार्थवाची हैं–सबका मीनिंग सेम है। यह बात १७ से २२ पर्यन्त के सूत्रों में दी गयी है।

अब कहते हैं जो १८ नंबर का जो सूत्र है **आकाशस्य अवगाहः**। यानी आकाशद्रव्य समस्त द्रव्यों को अवगाहना देता है वह आकाशद्रव्य का उपकार है यह बताया। फिर १९ नंबर में बताया है कि, मैं अभी डायरेक्ट अर्थ ही पढूंगा। कह रहे हैं, क्योंकि टाइम कम है

न अपने पास, औदारिक आदि शरीर, मन तथा श्वासोच्छ्वास ये पुद्गलद्रव्य के उपकार हैं अर्थात् शरीर आदि की रचना पुद्गल से ही होती है। उपकार शब्द का अर्थ 'भला करना' ऐसा नहीं लेना, पर किसी कार्य में निमित्त होता है इतना ही लेना। अब कहते हैं कि **सुखदु:खजीवितमरणोपग्रहाश्च** यह २० नंबर का सूत्र है। यानी क्या कहना चाहते हैं इन्द्रियजन्य सुख-दु:ख, जीवन-मरण ये भी पुद्गल के उपकार हैं। क्या बताया? यह पुद्गलद्रव्य है वह तुम्हारे मरण में भी उपकारी है, ॲक्सेप्ट करोगे कि नहीं? हम उपकार किसको कहते हैं? कि हमने किसीको सिखाया, आपने इनको पैसा देकर पढ़ाया तो यह हमने उपकार किया ऐसी लौकिक में मान्यता है। यहां क्या कह रहे हैं कि इन्द्रियजन्य सुख-दु:ख जीवन-मरण यह भी पुद्गल के उपकार हैं। किस पर? जीव के ऊपर। तो मरण होने में उपकार होता है क्या? अरे! कोई बीमार पड़ा हो, मरता नहीं हो, बहुत दु:खी हो, वह मर जावे तो पुद्गल ने उपकार किया। लेकिन हमारा हट्टा-कट्टा २०-२२ साल का बच्चा, अभी शादी होनेवाली है, लड़की भी पसंद की है और उसके अभी क्या बोलते हैं एंगेजमेंट रिंग पहनाने का कार्य बाकी है और वह मर जावे, तो पुद्गलद्रव्य ने उसके ऊपर उपकार किया कि नहीं? मानेंगे कि नहीं हम? तो यहां उपकार का अर्थ निमित्त लेना।

तो कहते हैं कि इन्द्रियजन्य सुख-दु:ख में भी पुद्गल निमित्त है। जीवन में भी निमित्त है और मरण में भी निमित्त है, यह पुद्गलों का उपकार है और यहां आगे कहते हैं कि परस्परोपग्रहो जीवानाम् यानी जीवों के परस्पर निमित्त हैं, जीव एक दूसरों को निमित्त हैं। अब हमने यह बात आपको बतायी थी, कौनसी बतायी थी? कि कोई छोटा बच्चा है, तो वह उसका पिता उसको खिलावे-पिलावे, तो वह खाता है पीता है। वह स्वयं की योग्यता से खाता पीता है या बाप खिलाता है इसलिये खाता पीता है? तो उसमें बाप निमित्त है। तो यह परास्परोपग्रहो जीवानाम् यानी जीव एक दूसरे के कार्य में निमित्त है, ऐसा उसका अर्थ है। जिओ और जीने दो ऐसा उपकार का अर्थ नहीं है। बस इस बात को हम यहीं समेटते हैं, जितना समझ गये हो अच्छा है, नहीं समझ गये हो तो बहुत अच्छा है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

४७. जीव, पुद्गल – विशेष गुण

हमने अभी तक निमित्त और उपादान की बात देखी थी और उसमें हमने निश्चित किया है कि कार्य जो होता है, वह निज उपादान शक्ति से होता है, निज शक्ति से होता है और उसे उपादान कहने में आता है। देखो शास्त्र में अलग-अलग प्रकार से विविध कथन आते हैं। तो उसमें एक निश्चय कथन और एक व्यवहार कथन ऐसी कथन करने की पद्धति भी है। वहां पर मोक्षमार्गप्रकाशक नामक जो शास्त्र है, उसमें ऐसा बताया है, जो सच्चा निरूपण है उसको निश्चयनय का कथन कहेंगे और जो उपचार से निरूपण किया जाता है, उसको व्यवहारनय का कथन कहा जाता है। तो उस दृष्टि से जब हम पढ़ते हैं कि निमित्त से कार्य होता है, तो यह भी निश्चयनय का कथन हो सकता है। किस अपेक्षा से कि जब कोई अन्य पदार्थ से कार्य नहीं होगा, निमित्त से ही होगा। तो निमित्त रहेगा निश्चयनय का कथन और अन्य कोई यानी अपनी दृष्टि अन्य कहीं घूमें नहीं, सिर्फ निमित्त तक सीमित हो जाये, ऐसा हम देखेंगे तब कहेंगे वह निश्चयनय का कथन और अन्य किसीसे हुआ ऐसा कहना वह व्यवहारनय का कथन।

लेकिन क्या कहते हैं, जब हमने चार कारण देखे थे न, एक निमित्त कारण, दूसरा त्रिकाली उपादान कारण, तीसरा अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्यय यह कारण और चौथा तत् समय की योग्यता यह कारण। अब जब हम अन्य परपदार्थों से अपनी दृष्टि हटाने के लिये, जब हम उचित निमित्त पर कॉन्सन्ट्रेट करते हैं, क्योंकि हमें अन्य कहीं देखना नहीं, कार्य कहां हुआ है, तो निमित्त की तरफ हम जायेंगे, तो वह निश्चय का कथन होगा और अन्य की बात कहेंगे वह व्यवहार का कथन होगा।

अब कहते हैं कि नंबर एक यानी निमित्त कारण और नंबर दो त्रिकाली उपादान कारण, इनका तुलनात्मक जब हम अभ्यास करते हैं, तब कहते हैं कि निमित्त से कार्य होता है, ऐसा कहना यह व्यवहारनय का कथन है। तो फिर निश्चय का कथन कौनसा होगा? त्रिकाली उपादान से ही कार्य होगा। तो यह अपनी दृष्टि निमित्त से हट कर त्रिकाली द्रव्य पर, त्रिकाली पदार्थ पर जायेगी, इसतरह वह निश्चय का कथन होगा। लेकिन जब हम देखते हैं कि नंबर दो और नंबर तीन कारण जो हैं, नंबर दो का कारण कौनसा है?

त्रिकाली उपादान कारण। और नंबर तीन का? अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्यय। जब इन दोनों में तुलना करते हैं, तब अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्यय यह निश्चय कारण होगा और त्रिकाली उपादान व्यवहार कारण होगा क्योंकि त्रिकाली उपादान अनादि से है तो कार्य क्यों नहीं हुआ? तो उससे कार्य होता है, ऐसा कहना वह व्यवहार का कथन हो जायेगा और जब तीसरे और चौथे कारणों की तुलना होती है तब क्या कहते हैं, कि जो चौथा नंबर है, कौनसा? तत् समय की पर्याय की योग्यता उसीसे कार्य होता है, ऐसा कहना यह निश्चय है और अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय के व्यय से कार्य हुआ है, ऐसा कहना वह व्यवहार है। इसतरह शास्त्रों में विविध प्रकार से कथन आते हैं।

तो हमें घबराना नहीं चाहिये। क्योंकि जिस अपेक्षा से जो कथन किया गया है, उसको समझना अपना कर्तव्य है। देखो यहां कहते हैं, कि सर्वप्रथम निमित्त का ज्ञान कराने के लिये निमित्त को कारण कहा जाता है, परंतु वह निमित्ताधीन दृष्टि छुड़ाने के लिये और परद्रव्यों से भिन्नता दर्शाने के लिये, त्रिकाली उपादान से कार्य होता है, इसतरह कथन किया जाता है। परंतु कार्य कौनसा, कब और किस प्रकार संपन्न होगा, यह बताने के लिये उसमें विधि, विधि यानी जो हमने देखा न अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्यय, उसके पहले की, उसके पहले की इसतरह से अर्थात् पुरुषार्थ और तत् समय की पर्याय की योग्यता यह कारण बताकर, कारण संबंधी अपना अज्ञान दूर किया जाता है। यहां तक यह निमित्त और उपादान की बात अपनी समझ में आयी होगी ऐसा समझ कर आगे बढ़ेंगे। फिर भी अभी भी किसीके कोई प्रश्न हो तो बता देना। अभी यह अपना जो विषय चल रहा था, उसके बारे में किसीके कोई प्रश्न है क्या? निमित्त-उपादान के बारे में? तो मैं एक आपको प्रश्न करूंगा चार अभाव के बारे में, तो चार अभाव के नाम तो सबको याद है, हां साहब आपको याद है क्या, हां, आप जो आगे आ रहे हैं न, आपसे पूछ रहा हूं।

चार अभाव के नाम याद है? आपके बगल में बैठें हैं, बोलो। *श्रोता: प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव और अत्यंताभाव।* प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव और अत्यंताभाव। तो अभी मेरा प्रश्न यह है, यह तो हमने शुरुआत की है, ये चारों अभाव कौन-कौनसे द्रव्यों में लगते हैं? हां मैंने क्या पूछा, ये जो चार अभाव जिनके नाम हमने देखे हैं, वे कौन-कौनसे द्रव्यों में लगते होंगे? कौन बताना चाहेगा? हां आप बता रही हैं, हां

बोलो। *श्रोता: प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव और अन्योन्याभाव तीनों, द्रव्यों की पर्यायों में लगते हैं।* मैंने पूछा यह छह द्रव्यों में से कौन-कौनसे द्रव्यों में लगेंगे? बहुत अच्छा, आपने जो बताया वह सही है, लेकिन वह इस प्रश्न का उत्तर नहीं है। *श्रोता: प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव पुद्गल में, अत्यंताभाव सब द्रव्यों में ।* तो ये चार अभाव कौन-कौनसे द्रव्यों में लगेंगे? *श्रोता: छह द्रव्यों में लगेंगे।* छह द्रव्यों में लगेंगे। बहुत अच्छा! आपका क्या कहना है? छह द्रव्यों में लगेंगे और कोई कहना चाहेगा? बोलो हां जी, जोर से। *श्रोता: जीव और पुद्गल में लगेंगे।* जीव और पुद्गल में लगेंगे, बहुत अच्छा! आप क्या कहते हैं? *श्रोता: जीव और पुद्गल में।* जीव और पुद्गल में।

नेमिचंदजी क्या कहते हैं? जीव और पुद्गल में। क्या बोलते हैं आप लोग? *श्रोता: छहों द्रव्यों में। अन्योन्याभाव पुद्गलमां लागसे।* मैं सुन नहीं पाया, हां। *श्रोता: अन्योन्याभाव पुद्गलमां लागसे।* तो। *श्रोता: अत्यंताभाव सब द्रव्यों में।* मैंने यह पूछा है, चारों अभाव कौन-कौनसे द्रव्यों में लगते हैं, तो आपको कौन कहां लगता है यह नहीं बताना है। कौन-कौनसे द्रव्यों में लगते हैं उनका नाम लेना है, छह द्रव्यों के लेना हैं, सात द्रव्यों के लेना हैं, दस द्रव्यों के लेना हैं, बोलना। *श्रोता: जीव और पुद्गल में।* हां बोलो। *श्रोता: जीव और पुद्गल में।* जिन्होंने-जिन्होंने जीव और पुद्गल बताया है वे बिलकुल गलत हैं। मुझे पहले बताना, तीसरा जो हमने अन्योन्याभाव देखा है, वह किसमें लगाया था हमने? एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में जो अभाव है, उसको अन्योन्याभाव कहते हैं ऐसा सीखा है हमने, ख्याल में आया? और बाकी प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव और अत्यंताभाव तो पुद्गल में लगेगा ही लगेगा, लेकिन जीव और इतर अन्य द्रव्यों में अन्योन्याभाव नहीं लगता है। ख्याल में आया? तो ये चारों ही अभाव सिर्फ कौनसे द्रव्य में लगेंगे? *श्रोता: पुद्गलद्रव्य में।* अभी सब लोग जोर से बोल रहे हैं, बहुत अच्छा, मैंने यह प्रश्न बाकी रखा था। इसलिये कि दो-तीन दिन जाने तो दो, लोगों को क्या-क्या याद है, वह तो देखेंगे? हां, देखो, मैं समझता हूं यहां तो हम दिन में छह-छह घंटे सुनते हैं, तो हमें वह याद करने में भी टाइम लगता है; पर फुरसत ही नहीं है न। यहां दो ही काम हैं, या तीन काम हैं? अच्छा तीन काम हैं, एक तो खाना खाना, नाश्ता करना, यहां सुनना और बीच में, नहीं बाद में सो जाना। इसके अलावा क्या काम है बताओ? हां, मैं गलती से बीच में बोल दिया, आप समझ लेना बाद में। हां।

मैं जानता हूं यह बहुत जल्दी-जल्दी होता है, लेकिन क्या करें ? आजकल लोगों को क्रॅश कोर्स करने की आदत लगी है। जैसे कि पांच दिन में एस.एस.सी.। वाह, वैसे यहां सब आगम का अभ्यास छह दिन में, पांच दिन में। चलो यह बात हमने देखी है, अभी जो अपना विषय आगे चलनेवाला है, वह चलने के पहले गत वर्ष जो विषय चला था, उसीको हम दोबारा चलाना चाहते हैं। क्यों? कि जो अगला विषय है, वह समझने में हमें थोड़ीसी सुविधा होगी। तो यहां कह रहे हैं, कि हमने विशेष गुण देखे थे। किसके? कौनसे द्रव्य के विशेष गुण देखे थे? *श्रोता: जीवद्रव्य।* जीवद्रव्य के कौन-कौनसे देखे थे? *श्रोता: ज्ञान देखा था* हां, क्रियावती शक्ति, श्रद्धा गुण, चारित्र गुण, हां और थोड़ा बहुत दर्शन गुण के बारे में भी जाना था। अभी रह गये हैं, दो, तीन कौन-कौनसे? एक ज्ञान गुण की बात रह गयी है, एक सुख गुण की बात रह गयी है और एक वीर्य गुण की बात रह गयी है। तो यह वीर्य गुण की बात अभी मैं थोड़ासा लेना चाहता था, इसमें है कि नहीं मुझे मालूम नहीं है। हां, यहां देखो-देखो-देखो पेज नंबर ८ पर १६ वां प्रश्न है। उसमें हमने देखा था जीव में चैतन्य गुण यानी ज्ञान गुण और दर्शन गुण; सम्यक्त्व गुण, चारित्र गुण और सुख गुण।

यह जो अभी हम शॉर्ट में इसको लेना चाहेंगे, ज्ञान गुण जो देखा था, तो ज्ञान गुण की पर्यायें कितनी हैं? ज्ञान गुण की पर्यायें कितनी हैं, कौन बता पायेगा? हां प्रतिभाताई आप जानती हैं? नहीं जानती हैं। अच्छा आपके पड़ोसी, उनसे पूछना, हां बहन, ज्ञान गुण की पर्यायों को आप जानती हैं? क्रांति आप जानती हैं? शमा तुम? नहीं, अच्छा! तो लोग तो कहते हैं, जो गये साल में आपने विषय लिया वह इस साल मत लो, हां लेकिन फिर भी थोड़ा-थोड़ा लेकर जायेंगे आगे हम। आप बतायेंगे बोलो भाई? *श्रोता: मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, केवलज्ञान, मन:पर्ययज्ञान।* हां, बहुत अच्छा। आपने क्या बताया; मतिज्ञान, क्यों आपको मालूम नहीं था? हां, कोई बात नहीं, कोई बात नहीं। अभी बीचवाला टाइम चल रहा है न। हां कौनसा? अभी आराम हो गया अभी स्वाध्याय का टाइम हो गया, तो उसमें गाड़ी गियर अप होने में टाइम लगता है। हां तो क्या-क्या कहा? मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान और केवलज्ञान, तो इसमें बहुत सारी बातों को हमने देखा था गये वर्ष।

मतिज्ञान और श्रुतज्ञान यह सभी जीवों को होता ही है। सभी यानी कितने, जो केवलज्ञानी हैं उनको छोड़कर, सिद्धों को छोड़कर, मतिज्ञान, और श्रुतज्ञान सभी जीवों को

होता ही है और मति, श्रुत और अवधिज्ञान यह कौन-कौन से जीवों को होता है? आप जानते हैं निखिलभाई? नहीं, कोई बात नहीं। आप जानते हैं मैं जानता हूं, क्योंकि गये साल आप थे। हां बोलो-बोलो, हां-हां, तुम मुझको भूल गये हो लेकिन मैं नहीं, नाम तो जरूर भूला हूं मैं। हां बोलो, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान कौन-कौन से जीवों को नियम से होगा? *श्रोता: देव और नारकी। कुमति, कुश्रुत और कुअवधि।* मति, श्रुत और अवधि ऐसे बताना है, भेद नहीं करना है अभी अपने को। कुमति, कुश्रुतवाली बात ही नहीं है। *श्रोता: उनको मति समझना है न।* हां-हां। *श्रोता: देव और नारकियों को।* हां बहुत अच्छा! आप का ऐसा कहना है, जो देवगति और नरकगति के जीव हैं, उनको नियम से मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान होता ही है। अब आपका कहना है, उसमें हम भेद करेंगे, तो जो-जो सम्यग्दृष्टि जीव हैं, कहां के? देवगति के और नरकगति के, उनको नियम से सम्यक् मति यानी सुमति, सुश्रुत और अवधिज्ञान होता है और जो मिथ्यात्वी जीव हैं। कहां के? देवगति के और नरकगति के, उनके कुमति, कुश्रुत और? *श्रोता: कुअवधि।* बहुत अच्छा! किसने बताया कुअवधि? कुअवधि का एक दूसरा नाम भी है, उसको कहते हैं, विभंगज्ञान। तो शास्त्रों में कुअवधि ऐसा बहुत कम जगह लिखा हुआ पाया जायेगा। हर जगह विभंगज्ञान लिखा होगा। तो विभंगज्ञान कहने से वह कुअवधिज्ञान ही है यह समझना। लेकिन जो मनुष्यपर्याय और तिर्यंचपर्याय के जीव हैं, उनको नियम से मति और श्रुतज्ञान होता ही हैं।

लेकिन कोई जीव ऐसे भी होते हैं, कहां के? मनुष्यपर्याय के और तिर्यंचपर्याय के, उनको किसीको अवधिज्ञान भी हो सकता है। हां तिर्यंचगति के जीव को भी अवधिज्ञान हो सकता है। उसमें जो मिथ्यात्वी हैं उनको विभंगज्ञान हो सकता है और जो सम्यक्त्वी हैं, उनको अवधिज्ञान हो सकता है। लेकिन यह मन:पर्ययज्ञान जो है, उस मन:पर्ययज्ञान की ऐसी विशेषता है कि वह सिर्फ मनुष्यपर्याय के जीवों को ही होता है। रुकना मत इधर, लेकिन वह सिर्फ भावलिंगी मुनियों को ही होता है। ख्याल में आया? अन्य कोई तुम्हारे, हमारे जैसे कोई गृहस्थ हो और उनको मन:पर्ययज्ञान हो, ऐसा हो ही नहीं सकता। तो हमने क्या देखा? किसी जीव को कम से कम दो ज्ञान और अधिक से अधिक चार ज्ञान। तो कम से कम दो ज्ञान हो सकते हैं, या उससे कुछ और फर्क हो सकता है? आप जानती हैं बहन हां, कम से कम कितने ज्ञान होंगे? हां बोलो-बोलो, कौन बोल रहा है? हाथ उठाओ

बोलनेवाला कौन है? आपने बताया, हमने समझा पीछे से आवाज आयी, हां बोलो। *श्रोता: कम से कम एक ज्ञान होगा।* हां-हां, तो अब यहां कोई बोल रहा है, कम से कम एक ज्ञान होगा, तो अभी झगड़ा हो गया न, अच्छा कोई बात नहीं, आप कितना बताती हैं? एक ज्ञान होता है ऐसा इनका कहना है।

देखो, अभी यहां मेजॉरिटी हो गयी, हां आप मायनॉरिटी में रह गयी, क्योंकि पीछे बैठी हैं न आप। आगे आ जाओ, क्या कहते हैं कि एक ज्ञान जिसको होता है, वह केवलज्ञान होता है और केवलज्ञान कौनसे गति के जीवों को होता है? हां साहब। हां साहब। *श्रोता: मनुष्यगति।* हां-हां, कोई बात नहीं, मनुष्यों को ही केवलज्ञान होगा। अभी जो अरिहंत अवस्था का जीव है, वह कौनसे गति का है? ख्याल में आया न? तो मनुष्यों में ही केवलज्ञान होगा यानी किसी जीव को चार ज्ञान होने अच्छे, क्या एक ज्ञान होना अच्छा बोलो? हां एक! तुमको एक रुपया मिले तो अच्छा कि चार रुपये मिले तो अच्छा? वहां तो चार चाहिये। बिलकुल सही है, क्योंकि एक केवलज्ञान है।

अभी शांति से सुनना, बहन, बच्चे बात न करो, हुं जे प्रश्न पूछुं छुं, बहुत इम्पॉर्टंट है। मैं क्या कहता हूं जिसके एक ज्ञान है, कौनसा? केवलज्ञान है। उसमें बाकी के सारे ज्ञान गर्भित हैं या नहीं? हां, हैं। आप क्या बोलते हैं? आप, हां बोलो श्री धीमंत तू श्रीमंत है। हां देखो आप सभी लोग जिन्होंने, जो मौन रहे हैं वे भी, हां आप क्या कहते हैं? *श्रोता: नहीं है।* नहीं है। यह एक बहन सही है। क्योंकि वह हमारे गांव की है न कारंजा की। मैं उधर जाकर आया इसलिये वह हमारे गांव की हो गयी। हां देखो कारंजा में बहुत-बहुत अभ्यासु लोग हैं हो। अब क्या बता रहे हैं हम? कि एक ज्ञान जो है, जो केवलज्ञान है, उसमें अन्य चार ज्ञान गर्भित हैं कि नहीं? तो कहते हैं बिलकुल नहीं। क्यों बिलकुल नहीं? क्योंकि केवलज्ञान है वह क्षायिक ज्ञान है और जो मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान जो हैं, वे क्षायोपशमिक ज्ञान हैं। नहीं समझे आप?

देखो अभी किसीको वह क्या बोलते हैं? आंखों में होता है न कॅटरॅक्ट, तो उसका ऑपरेशन कर देवें कोई डॉक्टर, तो उसको स्पष्ट दिखेगा कि नहीं, ऑपरेशन के बाद? तो जिसको स्पष्ट दिखता है, उसको धुंधला भी दिखेगा कि नहीं? क्योंकि अभी ऑपरेशन किया है न, सक्सेसफुल पूरे पैतीस हज़ार खर्चे हैं और वह ऑपरेशन किया है या ज्यादा में

होता होगा। यहां कोई ऑफ्थॅल्मॉलॉजिस्ट होगा तो वह जाने, तो जो केवलज्ञान है, वह तो अत्यंत स्पष्ट है, प्रत्यक्षज्ञान है। तो क्या वह केवली को स्पष्ट ज्ञान भी हो जाये, प्रत्यक्ष ज्ञान भी हो जाये और परोक्ष ज्ञान भी रह जाये ऐसा होगा क्या? ख्याल में आया? तो जो केवल ज्ञान है, उसमें अन्य चार ज्ञान गर्भित नहीं हैं।

यह बात देखते हुये हम सुख समझने के लिये आगे बढ़ते हैं। तो सुख में क्या बताया है? यह जो सुख है, वह तो अतीन्द्रिय सुख की बात है। लौकिक में जो हम बहुत धनवान हैं, हमारे पास सारी सुख सुविधायें हैं, संयोग अच्छे हैं, इसलिये हम सुखी हैं, तो वह सुख ही नहीं है। क्योंकि वह सुख सदा रहता ही नहीं है। तो इसलिये एक वाक्य ध्यान में रखना; 'वह सुख सदा ही त्याज्य है, जिसके पश्चात् है दुःख भरा'। नहीं समझ में आया, तुम्हें खेलने से सुख मिलता है कि नहीं? नहीं! तो फिर क्यों धूप में खेलते हो? अब जहां बहुत कुछ दौड़ा-दौड़ी करायी हमारे पिनांगभाई ने सब बच्चों को। तो जाकर गट-गट-गट एक-एक बोटल दूध नहीं पानी पीते हैं। हां, तो अगर खेलने से सुख होता हो तो पानी क्यों पीते हैं, ख्याल में आया? खाने से सुख होता हो पर्मनन्ट सुख, तो फिर छह घंटे के बाद दोबारा क्यों खाते हैं? यानी वह सुख वास्तविक सुख ही नहीं है।

वह सुख हम कब मानते हैं कि थोड़ीसी जो तीव्र आकुलता होती थी, वह मंद आकुलता हुयी तो हम उसको सुख मानते हैं। यह समझने के लिये यह बहुत अच्छा तरीका है कि हमारे पड़ोसी कुछ कारण वश हॉस्पिटल में ॲडमिट हो गये, उनको १०४ डिग्री बुखार हो गया, १०५ बुखार हो गया, बुखार हटने का नाम ही नहीं लेवे। बहुत सारा इलाज किया। फिर थोड़े दिन के बाद १०५ में से १०३ बुखार हुआ और दो-तीन दिन के बाद १०२ बुखार हुआ, तो हम उनको मिलने गये। क्यों साहब कैसे हो? अभी जरा अच्छा है। अच्छा है! हां क्यों, पहले बुखार १०५ था अभी १०२ है, तो अच्छा है। तो आप समाधानी हैं, तो उसको कम मत करो न, १०२ ही बुखार रखो न। क्यों और उसको १०० हो जाये तो और अच्छा हो गया। लेकिन क्या वह अच्छा है? हम कम्पॅरेटिव्हलि उसकी जब सोच करते हैं, तो वह अधिक तीव्रता थी बुखार की, तो थोड़ीसी कम हो गयी।

तो हम अच्छा महसूस करते हैं। वैसे हमारी आकुलता जो है, वह तीव्र आकुलता से

थोड़ी कम आकुलता हो जाये, तो हम अपने को सुखी मानते हैं। देखो, एक अच्छा किस्सा आपको सुनाता हूं। हम जयपुर जा रहे थे कुछ काम के लिये, तो रास्ते में एक भाईसाहब हमको स्टेशन पर मिले। बहुत दिन के बाद मिले, स्कूल के दोस्त थे, गुजराती थे वह भी हमारे जैसे, उन्होंने पूछताछ करते ही बोलना शुरू किया कि बहु सुखी छीऐ अमे, केम छो, केम छो, बहु सारुं छे, बहु सुखी छीऐ, ऐम? शुं थयुं सुखी थवा, हें? तो जुओ आजकाल मुंबईमां जग्यानो शुं भाव चाले छे, तमने खबर छे? अरे! मैं गुजराती बोल रहा हूं, सॉरी मुंबई में जगह का क्या भाव चल रहा है, मालूम है? उस ज़माने में दो हजार रुपये पर स्क्वेअर फीट था, आज के जमाने में बीस हजार होगा, जो भी होगा। तो कहते हैं कि मेरे पास पांच घर हैं, सभी घर दो-दो हजार स्क्वेअर फीट के हैं, तो पांच घरों के दस हजार स्क्वेअर फीट के दो हजार रुपये के हिसाब से कितने पैसे हो गये? अमे तो सुखी छीऐ। फिर बोले मेरे पास इतनी फॅक्टरीज् हैं, उसकी इतनी करोड़ कीमत होती है, इसलिये हम सुखी हैं। फिर बहुत टाइम हो गया, गाड़ी आयी नहीं, क्या हो गया, तो अनाउन्समेंट हो गयी और आधा घंटा लेट है। तो हम तो स्टेशन पर खड़े-खड़े बातें कर रहे हैं और कैसा है? आपके पिताजी कैसे हैं? अरे! क्या बोलना साहब उनके पीछे तो ऐसी पनौती लगी है, किसी न किसी कारण से बीमार ही पड़ते हैं और आपकी माताजी कैसी हैं? अरे! वह तो खाटलो छोड़ता नथी, क्या होता है वह यानी बेडरिडन हैं। और आप? मेरा तो ठीक है, थोड़ासा कमर में दर्द है, फिर भी जल्दी-जल्दी चलने में तकलीफ है और आपकी मिसेस? अरे! उनके तो पैर में क्या होता है वह? आर्थ्रायटिस अरे! यार तू तो सुखी था न अभी दो मिनट पहले? यह दु:ख कहां से आया?

हम सुख किसको कह रहे हैं? लेकिन हम किसी केवली भगवान को जाकर मिले और उनसे पूछे आप कैसे हो, तो क्या कहेंगे? अमे सुखी छीऐ। कोई गुजराती व्यक्ति केवलज्ञान प्राप्त करेगा तो ऐसा ही बोलेगा कि नहीं? अमे सुखी छीऐ, वह सच्चा सुख है। अतीन्द्रिय सुख है, जो अपना आत्मा है, उसमें जो सुख है, वह इन्द्रिय सुख नहीं है, वह अतीन्द्रिय सुख है। हम इन्द्रिय सुख को ही यानी कम आकुलतावाले सुख को ही सुख मानते हैं, क्योंकि हमने अतीन्द्रिय सुख का आज तक वेदन ही नहीं किया है, अनुभव भी नहीं किया है। इसलिये हम बाह्य वस्तु में, अभी दो मिनट में लाइट चली जाने दो, पंखे बंद होने दो, फिर हम देखो कितने सुखी रहते हैं? हां, ख्याल में आया? तो देखो यह सुख

होता है, वह इन्द्रियों के द्वारा नहीं होता है। जब कोई जीव आत्मानुभव करता है, तो आत्मा में जो अतीन्द्रिय सुख है, उसका उसे वेदन होता है और उस अतीन्द्रिय सुख को प्राप्त करने से उस जीव को पता लगता है कि मुझे आत्मानुभव हुआ है, ख्याल में आया? अभी इतनी ही बात हम सुख की लेते हुये, थोड़ीसी वीर्य गुण की बात करते हैं।

इसमें लिखा नहीं है, वीर्य गुण की बात तो नहीं लिखी है, लेकिन वीर्य गुण कैसा है? वह जीवद्रव्य का विशेष गुण है। अभी हम लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका पढ़ रहे हैं, इसलिये आपको जितना पचेगा, उतनी ही बात बतायेंगे। असल में तो ऐसा है कि प्रत्येक द्रव्य में वीर्य नाम का गुण है, वह भी मैं प्रूव्ह करके दिखाऊंगा हो। क्या कहा, अभी तो हम जीवद्रव्य के वीर्य गुण की बात करते हैं। तो यह वीर्यगुण का कार्य क्या है? वीर्यगुण की पर्याय? *श्रोताः पुरुषार्थ।* हां बहुत अच्छा! पुरुषार्थ करना और हम पुरुषार्थ करने का अर्थ क्या करते हैं? क्योंकि अन्य धर्मियों ने हमें सिखा दिया है कि पुरुषार्थ चार प्रकार से किया जाता है, यानी क्या? तो धर्मे च, अर्थे च, कामे च और मोक्षे च, इसमें ही इस जीव का पुरुषार्थ लगना चाहिये। तो यह क्या कहते हैं, धर्मे च यानी क्या? शुभभाव करने में पुरुषार्थ करना चाहिये और जैनदर्शन क्या कहता है कि शुभभाव करना, यह जीव का स्वभावभाव नहीं है। हां, दूसरा पुरुषार्थ क्या है? उनकी मान्यता के अनुसार अर्थे च, अर्थ यानी क्या? यानी पैसा कमाने में पुरुषार्थ है। तो पहले हम नक्की करते हैं, यह जीवद्रव्य जो है, अभी आगे की भी बात बताये देता हूं। कामे च यानी क्या? प्रजोत्पत्ति करना। हां, वह क्या है? कामे च, इसमें पुरुषार्थ लगाना और उसके आगे क्या है? मोक्षे च यानी मोक्ष प्राप्त करना, यह उसका अल्टिमेट पुरुषार्थ है, ऐसी अन्यमतियों कि मान्यता है।

अब जैनदर्शन क्या कहता है? तो वीर्य गुण का जो कार्य है, वह क्या है? तो कहते हैं, पर्याय में स्वरूप की रचना करना, यह वीर्य गुण का कार्य है। क्या कहा? जैसा ज्ञान गुण जानना-जानना-जाननारूप कार्य करता है, वैसे श्रद्धा गुण मानना-मानना-माननारूप कार्य करता है। वैसे चारित्र गुण स्वरूप में स्थिरता-स्थिरता करना यह कार्य करता है। वैसा **वीर्य गुण का कार्य** क्या है? कि **पर्याय में स्वरूप की रचना करना।** यानी क्या? जैसा मेरा त्रिकाली स्वभाव है, वैसे पर्याय में स्थापित करना यानी ॲक्सेप्ट करना कि मैं तो ज्ञानस्वभावी ही हूं। अन्य कोई मैं नहीं हूं, ऐसा जब पर्याय में उस स्वरूप की रचना करेंगे,

तो उस जीव का पुरुषार्थ काम आया और यह बात अॅक्सेप्ट करने में जो कोई पुरुषार्थ लगता है, वह अनंत पुरुषार्थ है। उस समय उस जीव को सम्यक्त्व होता है। लेकिन हमने पुरुषार्थ यानी क्या माना है कि पर्याय को पलटाना इधर से उधर, पहलेवाली पर्याय बाद में और बादवाली पहले लाना उसको हम पुरुषार्थ कहते हैं। जब क्रमबद्धपर्याय की बात आती है तो कहते हैं, जो केवली भगवान ने जाना है, देखा है, वैसा ही होगा। तो यह चिल्लाता है, कि उन्होंने जब देखा होगा तब? तो फिर हमारा पुरुषार्थ क्या रहा? ख्याल में आया?

तो वह क्या करना चाहता है? कि मान लो किसीको दस लाख वर्ष के बाद मोक्ष होना है, कितने? दस लाख वर्ष के बाद मोक्ष होना है और वह पुरुषार्थ करेगा। जिनेन्द्र भगवान ने बताया दस लाख वर्ष के बाद मोक्ष है और उसने मान लेते हैं बहुत पुरुषार्थ किया, और मोक्ष प्राप्त किया लेकिन अभी से लेकर दस लाख वर्ष तक उसकी संसार अवस्था है और दस लाख वर्ष के बाद उसकी मोक्ष अवस्था है, तो इसके दस लाख वर्ष तो अभी संसार में रहने का काल है। अगर कोई जीव मान लो आज से एक लाख वर्ष में ही पुरुषार्थ करके मोक्ष प्राप्त करेगा, तो वह जो नौ लाख वर्ष कहां बितायेगा बताओ? नहीं समझ में आया? देखो, हर समय एक-एक पर्याय होती है और उन पर्याय की सांकल-चेन है। अभी मान लेते हैं कि यहां एक पर्याय है और हमको यहां की पर्याय यहां लानी है, तो क्या होगा? यहां की पर्याय लाने के लिये उसको वहां से कट करना पड़ेगा, तो ऊपर की पर्यायों का जो कोई संबंध है, वह टूट जायेगा। सांकल टूटेगी और यहां उसको रखना है, तो इधर भी तोड़ना पड़ेगा। ख्याल में आया? तो ऐसे पर्यायों की जो श्रृंखला है उसको हम तोड़ेंगे। तो क्या यह पॉसिबल है, हां? नहीं। क्यों नहीं? क्योंकि अनादिकाल से अनंतकाल तक की पर्यायों का समूह ही द्रव्य है। अनंत गुण और अनंत पर्यायों का समूह ही द्रव्य है, तो हम उसका क्रम नहीं तोड़ सकते और हम ऐसा पुरुषार्थ करना चाहते हैं कि जो भविष्य में आनेवाली पर्याय है उसको अभी लाना चाहते हैं, ख्याल में आया? तो वह कभी भी पॉसिबल नहीं है।

तो यहां पुरुषार्थ का अर्थ क्या मानते हैं? हम तो पर पदार्थों में पुरुषार्थ लगाना चाहते हैं। हम तो ऐसा मानते हैं कि हम पुरुषार्थ करते हैं, तभी तो घर में पैसा आता है। पुरुषार्थ क्या करते हैं? क्या नेमिचंदजी क्या करते हैं? मुझे बताओ न? हम दिन-भर गधा-मजदूरी

करते हैं। क्या करते हैं? और मानते हैं कि हमने पुरुषार्थ किया, मैं आपसे पूछता हूं पैसे की इच्छा करना, यह शुभभाव है या अशुभभाव है? अरे! बोलो भाई। *श्रोता: अशुभभाव।* तो आप लोग करते हो कि नहीं? क्या? अशुभभाव, अच्छा! और पैसा जिसको मिलता है, वह पुण्य के परिणाम का फल है या पाप के? शुभभाव के परिणाम का फल है या अशुभभाव के परिणाम का फल है? *श्रोता: शुभभाव के परिणाम का फल है।* शुभभाव का फल है और हम यहां क्या कर रहे हैं? अशुभभाव। चाहते क्या हैं? भाईसाहब, आप समझते नहीं हैं कि हमने पूर्व में जो पुण्य कमाया था, उसका फल हमें आज मिल रहा है। तो फिर पुण्यभाव करना कि नहीं करना? ऐसा भी अगला प्रश्न है, वह तो बाद में उसको निपटायेंगे। हम तो वही कह रहे हैं न आपको कि आज के वर्तमानकाल में जो तेरा पुरुषार्थ हो रहा है, वह पर पदार्थ में चलेगा या स्वद्रव्य में लगेगा? *श्रोता: स्वद्रव्य में लगेगा।* तो हम क्या मानते हैं? कि अभी मैं पुरुषार्थ करूं तो मुझे पैसा मिलेगा। तो कहते हैं कि पूर्व पुण्य के उदय से तुझे पैसा मिल रहा है। यह निश्चित हो गया कि अभी के कार्य, तेरे जो कोई सारे प्रयत्न हैं, वे सब गलत हैं और जो कोई तुझे पुण्यकर्म के कारण यानी उसके उदय में तुझे पैसे मिल रहे हैं वही सच्चा कारण है। तो इसको हटाने के लिये यह हमने बात की कि अभी जो वर्तमान में तुम्हारा जो पुरुषार्थ पैसा कमाने का चल रहा है वह व्यर्थ है।

तुम समझते नहीं साहब! हम तो ऐसे दिमाग से काम लेते हैं, ऐसे बुद्धि वापरते हैं उसके कारण हमें पैसा मिलता है। क्यों? दूसरों को टोपी लगाने में हम ऐसी बुद्धि चलाते हैं। तो तेरी बुद्धि जानने का काम करती है कि पैसे कमाने का काम करती है? तो वह भी मान्यता हमारी सही है या गलत है? ख्याल में आया? हमारी अक्ल होशियारी से हम पैसा कमाते हैं, ऐसा भी माननेवाले हैं न? कोई कहता है कि हम मेहनत करते हैं साहब, ऐसा पसीना बहाते हैं, तभी तो हाथ में पैसा आता है, पसीना पोंछने के लिये! तो कहते हैं कि पूर्व पुण्य से तुझे पैसा मिला है तो पुण्य कौनसी वर्गणा है? बोलो-बोलो, पुण्य जो है, वह कार्माणवर्गणा है न और पैसे कौनसी वर्गणा है? आहारवर्गणा, दोनों में कौनसा अभाव है? अन्योन्याभाव है और हम क्या मानते हैं? यह जो निमित्त के कथन हैं उसको हम सच्चा मानते हैं और अपनी मूर्खाई करने में और आगे दौड़ते हैं। सवाईभाई! देखो, बात तो ऐसी है, हम अपना पुरुषार्थ परद्रव्य में लगाना चाहते हैं। यहां तो आचार्य कहते हैं या जिनेन्द्र भगवान कहते हैं कि तेरा गुण तेरा स्वचतुष्टय छोड़कर कहीं बाहर जा ही नहीं सकता। क्या

कहा? और हमने तो माना पैसा कमाने में? और क्या है? धर्मे च, शुभभाव करने में, शुभभाव है वह विभावभाव है और विभावभाव करने में तू पुरुषार्थ लगायेगा तो उसके कारण तू शुद्धभाव करेगा, यह बात कहां से आयी?

मणिभाई! भाई अहींयां तो आवी ज वात छे हो। कोई बोलते हैं, बम्बई में बात बनी है, यह हमारे बच्चे जानते हैं यह सब, मयंकभाई भी जानते होंगे। एक यहां के ही कोई व्यक्ति, वहां हमारे क्लास में आये, क्लास यानी हमारा रोज स्वाध्याय चलता है उसमें। तो बोले भाईसाहब आप हमारे घर में भोजन करने आयेंगे? मैंने साहब क्या बात है? काहे को भोजन करा रहे हैं आप हमको? वे कहीं लालबाग में रहते हैं। मैं आपको ग्यारह हजार रुपया डोनेशन दूंगा तो आप मेरे घर पर खाना खाने के लिये आना। मैंने कहा मुझे तेरा एक पैसा भी नहीं चाहिये और एक अन्न का दाना भी नहीं चाहिये। हम तो किसीको मस्का भी नहीं लगाते और किसीसे मस्का भी लगाकर नहीं लेते, यह कैसी बात है? नाम मालूम है न तुम्हें। बोलना मत। यहां तो मस्का लगाने की बात है नहीं साहब, जो जिनेन्द्र भगवान ने बात बतायी है; क्या बतायी है? गुरुदेवश्री ने हमको इसतरह समझाया है, कि लसण खाता-खाता कस्तूरीनो ओडकार आवे नहीं यानी समझे, लहसुन खाकर केसर की डकार आवे ऐसा हो सकेगा कि नहीं?

राग करते-करते, विभाव करते-करते, स्वभाव पर्याय की उत्पत्ति होवे ऐसा तीन काल में शक्य नहीं है। विकार करते-करते अविकारी दशा प्राप्त होवे? इम्पॉसिबल और हम तो उसीका पुरुषार्थ करना चाहते हैं। धर्मे च, आगे अर्थे च की बात हो गयी और कामे च की तो बात समझ ही लेना। मोक्ष को प्राप्त करने में जो पुरुषार्थ है, वही जीव कर सकता है और वह करने का उपाय क्या है? कि पर्याय में स्वरूप की रचना करें याने जैसा मेरा त्रिकाली स्वभाव है ऐसा पर्याय में जाने, माने, और उसमें स्थिर हो जायें। यह तो हमने ज्ञान गुण, श्रद्धा गुण और चारित्र गुण की अपेक्षा से कथन किया है। लेकिन बतायें कैसे? क्योंकि सिर्फ स्वरूप की रचना करें, स्वरूप की रचना करें कहने से तो हमारे ध्यान में बात नहीं आती है। तो वह पुरुषार्थ है और हमने पुरुषार्थ के बारे में क्या-क्या बातें समझ रखी हैं? और क्या-क्या बात समझने की हम कोशिश कर रहे हैं? यह बात ख्याल में आती है? मणिभाई कुछ डिस्टर्ब हो गये हैं। बोलो-बोलो! भड़ास निकाल दो, घबराना मत।

एक बात ध्यान रखना, शुभभाव से धर्म नहीं होता है। ऐसा होते हुये भी हम यह स्वाध्याय कर रहे हैं, यह पापभाव है, या पुण्यभाव है? अशुभभाव है या शुभभाव है? बोलो-बोलो। *श्रोता: शुभभाव है।* शुभभाव है और यह शुभभाव करते हुये, हम आपको बता रहे हैं कि उससे धर्म नहीं होता। अरे साहब! यह निर्णय लेना, कौनसा? कि शुभभाव से धर्म नहीं होता तब भी आप शुभभाव कर रहे हैं भाई! ख्याल में आया? लेकिन उससे धर्म होता है यह मान्यता रखेंगे तो मिथ्यात्व का महापाप लगेगा। यह जैनदर्शन ऐसा है, उसके सिद्धान्त समझना तलवार की धार पर चलने जैसा है। जरा यहां से वहां डिगेंगे तो खत्म। बिलकुल शांति से, समझदारी से, जो बातें चल रही हैं उसे समझो। अपनी पूर्व की जो कुछ प्रेज्युडाइज्ड संकल्पनायें हैं, जो कुछ मान्यतायें हैं, उनको बाजू रख दो भाई। किसीको बताना मत। अपने घर में रख दो और यहां की बात सुनो और फिर दोनों को आप ही कम्पेअर करो और जो सच्चा है उसको रखो और जो खोटा है उसको छोड़ दो।

यह बात मुझे याद नहीं है, मैंने चेतनलाल की यहां बात समझायी है? कथा सुनायी है आपको? इस वक्त नहीं सुनायी है न? हां सुनना फिर। एक व्यक्ति था, उसके बुरे दिन आये और उसको पता लगा कि मैं अभी कॅन्सर से पीड़ित हूं तो मैं मर जाऊंगा। तो उसने क्या किया? अपने बेटे को, जिसका नाम था चेतन, उसको कहा – बेटा मैं तो अभी मरनेवाला हूं, मैंने तेरे लिये कोई चीज़ छोड़ी नहीं है। ये दो हीरे, मैं तुझे देता हूं। मेरा एक बहुत जानी-जिगरी दोस्त है फलां फलां गांव में, वहां जाकर ये हीरे तुम उसको देना, वह तुझे पैसे देगा। कुछ ही दिन में व्यक्ति वह चल बसा। तो वह लड़का उस मित्र के पास गया। चाचाजी, चाचाजी! क्या हो गया? आपको तो समाचार मिले होंगे। मेरे पिताजी स्वर्गवासी हुये हैं और उन्होंने जाते वक्त ये हीरे देकर आपके पास जाने के लिये बोला था। अभी हमारे घर में तो हालत बहुत ख़राब है। खाना-पीना कैसा मिले उसकी हमें चिंता है। तो आप ये दो हीरे लीजिये और मुझे पैसे दीजिये, ताकि हमारा गुजारा चले। तो उसने वे देखे, वह तो जौहरी था। उसने कहा बहुत अच्छा बेटा! तू एक काम कर, यह अपने दुकाने के अंदर उस कोने में एक छोटीसी तिजोरी है। उसकी यह चाबी है। उस तिजोरी में ये हीरे रख दे और वह तिजोरी बंद करके उसकी चाबी तू अपने घर मां को भेज दे। अरे! उससे पेट थोड़ी भरना है? मुझे पैसे चाहिये। अच्छा-अच्छा सुन, तुझे पैसे की गरज है न, तो मैं

तुझे मेरे यहां नौकरी पर रखता हूं। तो तेरा गुजारा भी चलेगा और तुझे कुछ न कुछ काम भी मिलेगा। तो उस लड़के को लगा अच्छा है, चलो बहुत बढ़िया है।

तो उसने जैसा कहा, वैसे ताला लगाकर चाबी अपनी मां के पास भेज दी और वह यहां काम पर लगा। तो कुछ दिन गये, वह आहिस्ते-आहिस्ते हीरे परखने को सीख गया। साल दो साल गुजर गये होंगे, तो उस जौहरी ने कहा कि तू अभी अपनी मां के घर से वह चाबी मंगवा ले। तो उसने चाबी मंगवायी और चाबी आने पर जोहरी बोला अभी तिजोरी खोल, तेरे हीरे के मैं अभी तुझे पैसे दूंगा। अभी भाव बहुत अच्छे हैं। उस समय बोला था कि अभी भाव बहुत गिरे हुये हैं, शेअर बाजार डाउन हो गयेला है। ऐसा उस भाषा में बोला कि अभी हीरे का भाव कम हो गया है, सेन्सेक्स गिर गया है। हीरे का भाई, हां तो क्या हो गया? तो बोले ठीक है, तो उसने मां को बुलाया और मां के सामने तिजोरी खोली। क्योंकि उसको लगा अभी अपने को बहुत कुछ पैसा मिलेगा, वह खुश था। तो क्या हुआ वह हीरे निकाले। हाथ में लेते ही वह एकदम आग बबुला हो गया। आंखें उसकी एकदम ऐसे हो गयी क्या है यह? आपने मुझसे झूठ बात की। सेठ बोले, क्या हो गया भैया? अरे! ये तो कांच के टुकड़े हैं। तो मुझे इतने दिन क्यों नहीं बताया आपने? तो उस शेठ ने कहा, अरे बेटा अगर मैं उस समय कहता कि इसकी कीमत झिरो है, तो तू मुझपर कभी भरोसा नहीं करता और आज तू स्वयं रत्नपारखी हो गया है। क्या? तू स्वयं रत्नपारखी हो गया तो उसकी कीमत तू कर सकता है, तो तुझे सही पता लगा।

वैसे आज तक पुरुषार्थ किसको कहते हैं, इसका हमें पता नहीं था और हमने हमारा पुरुषार्थ परद्रव्यों में, घर की सजावट करने में, बड़ी-बड़ी वस्तुयें उठाने में लगाया और माना कि हम बहुत बड़ा पुरुषार्थ कर रहे हैं। पैसा कमाने में पुरुषार्थ कर रहें हैं और जब पता लगा कि तेरा पुरुषार्थ तेरे द्रव्य को, तेरे क्षेत्र को, तेरे काल को और तेरे भाव को छोड़कर अन्य द्रव्य में जा ही नहीं सकता है। परद्रव्य में तेरा पुरुषार्थ लग ही नहीं सकता है। तो कहता है यह बात हमको पहले क्यों नहीं बतायी? बताते तो तू नहीं समझता। ऐसे उसने कहा कि तू तो स्वयं चेतनलाल हो, यह मिट्टी-पत्थर के, पत्थर क्या होता है? मिट्टी होती है न, पृथ्वीकायिक हैं न? तो उसको तो कोई भी पहचाने, तू तो स्वयं चेतन है। अपने स्वयं के चेतनलाल को तू पहचानेगा तो तू मोक्ष को प्राप्त करेगा। इसमें तेरा पुरुषार्थ लगा। तो

यह 'मोक्षे च' पुरुषार्थ जो है, वह यह है कि हमें स्वयं अपने स्वभाव को पहचान कर, उसीमें लीन होना, यही पुरुषार्थ है। अरे! पुरुषार्थ की शुरुआत तो सम्यक्त्व प्राप्त करने से होती है और आगे ऊपर के गुणस्थान में चढ़ने से, मतलब पुरुषार्थ से ही, अपने स्वरूप में लीनता करने से ही यह जीव चौथे गुणस्थान, पांचवें गुणस्थान, सातवें गुणस्थान और श्रेणी मांड़कर अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख, और अनंतवीर्य की प्राप्ति कर सकता है। यह जैन मार्ग है, जिनमार्ग इसको कहते हैं। तो यहां तक तो हमने यह बातें देखी। कौनसी? जीवद्रव्य के विशेष गुणों की बात इन शॉर्ट देखने की कोशिश की है।

अभी इसके आगे हम देखते हैं, क्या है? यहां क्या लिखा है? कि पुद्‌गलद्रव्य में स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, अभी बाकी की बात हम नहीं करेंगे, यहां जो लिखा है, यह क्या है? स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, यह किसके गुणों की बात हो रही है? *श्रोता: पुद्‌गलद्रव्य।* पुद्‌गलद्रव्य के। यह पुद्‌गलद्रव्य के जो गुण हैं, वे सामान्य गुण हैं या विशेष गुण हैं? *श्रोता: विशेष गुण हैं।* विशेष गुण हैं, तो विशेष गुण का अर्थ क्या हो गया? विशेष गुण उनको कहते हैं कि जो अन्य द्रव्य में नहीं रहते, सिर्फ अपने-अपने द्रव्य में रहते हैं। तो अभी क्या-क्या है? देखते हैं हम स्पर्श, रस, गंध, और वर्ण ये चार गुण देखे। तो हमने आज तक कोई गुण को देखा ही नहीं, आपने वर्ण गुण को तो देखा होगा कि नहीं?

स्पर्श	**रस**	**गंध**	**वर्ण**
हलका / भारी	खट्टा	सुगंध	काला
रूखा / चिकना	मीठा	दुर्गंध	पीला
कड़ा / नरम	कड़वा		नीला
ठंडा / गरम	कषायला		लाल
	चरपरा		सफेद

हां, साहब वर्ण गुण को देखा है क्या नहीं? यह बुगु-बुगु मैं नहीं समझता। मुंह से बोलो। हां-हां, नाराज मत होना, क्योंकि हम इतने होशियार हैं। हां बोल रहे कि ना बोल रहे, कुछ पता ही नहीं लगे। आप बोलेंगे तो कम से कम चार लोग सुनेंगे, तो मैं गलत होऊं तो कोई मुझे सुधार देवे। क्या आपने सही बताया, तो हम गलत बतायेंगे तो उसने बोला,

नहीं साहब, आपने सही बोला था। तो आप क्या कहते हैं? वर्ण गुण को आप देखते हैं, अच्छा! इन्होंने कौनसे वर्ण का शर्ट पहना है? सफ़ेद। और आपने कौनसे वर्ण की पँट पहनी है? काले, तो आपने वर्ण को बताया या उसकी पर्याय बतायी? देखो, अभी हम फिर से आगे बढ़ते हैं। यहा तो अभी शुरुआत हुयी है, यह जो स्पर्श गुण है, उसकी पर्याय कितनी हैं, गिनो सब? *श्रोता: आठ हैं।* आठ हैं, और याद करना है न आपको दो मिनट में मैं याद कराता हूं आपको। क्या कहा? मैं बोलूंगा, आपको भी सबको बोलना है। हलका, भारी। *सभी श्रोता: हलका, भारी।* रूखा, चिकना। *सभी श्रोता: रूखा चिकना।* कड़ा, नरम। *सभी श्रोता: कड़ा, नरम।* ठंडा, गरम। *सभी श्रोता: ठंडा, गरम।* चन्नाचोर गरम, यह नहीं बोलने का हं। देखो-देखो, हलका, भारी, रूखा चिकना, हलका यानी लाइट, भारी यानी हेवी, हां रूखा यानी रुक्ष, जिसको गुजराती में खरबछ्ड् केहवाय, हां, क्या बराबर है न साहब? और क्या होता है, चिकना यानी स्निग्ध, और क्या हो गया हलका, भारी, रूखा, चिकना, कड़ा यानी कठिन-कड़ा, नरम यानी नरम मुलायम और आगे क्या रह गया? ठंडा यानी तो समझते हो, और हां, ठंडा नहीं समझे कोल्ड-कोल्ड हं, ठंडा-ठंडा कूल-कूल। यह बराबर याद है, हां और आगे क्या है? गरम। ये जो पर्यायें हैं, वे किसकी हैं? तो कहते हैं पुद्गलद्रव्य के स्पर्श गुण की पर्यायें हैं।

लेकिन बात यह है कि यहां कहते हैं, यह हमेशा आठों की आठों पर्यायें एक साथ प्रकट नहीं रहती हैं। तो यह जोड़ी जो है न, पुद्गल हलका होगा या भारी होगा, रूखा होगा या चिकना होगा, ठंडा होगा या तो गरम होगा, कड़क-कड़ा होगा या तो नरम होगा। तो यह चार जोड़ी हैं, इन चार जोड़ी में से कोई न कोई एक-एक पर्याय अॅट अ टाइम उसकी व्यक्तरूप से होती है। लेकिन यहां पर यह भी बताया है, स्कंध की स्पर्श गुण की एक साथ चार पर्यायें होती हैं। क्या कहा? सुनना, मोना यह बात नयी है तेरे लिये। स्कंध में स्पर्श गुण की ये चार पर्यायें होगी, कौनसी? हलका-भारी में से एक, रूखा-चिकना में से एक, कड़ा-नरम में से एक, और ठंडा-गरम में से एक, लेकिन शास्त्र में ऐसा कथन है कि वे स्कंध की पर्यायें बतायी हैं। तो एक सिंगल परमाणु जो होता है, उसमें स्निग्ध या रुक्ष में से एक और ठंडा या गरम में से एक, यानी अॅट अ टाइम दो ही पर्याय होंगी। किसमें परमाणु में और स्कंध में चार। यह बात ख्याल में आयी?

तो यहां क्या कह रहे हैं? तो यह जो हमने देखा है, ठंडा है या गरम है या जो कोई स्निग्ध है, यह किसकी पर्याय बतायी अभी आपको? हां बोलो, किसकी पर्याय बता रहे हैं हम? यहां पढ़ो। *श्रोता: स्पर्श।* स्पर्श किसका गुण है? *श्रोता: पुद्गल का।* पुद्गल का है न! तो हम देखते हैं कि हम क्या मानते हैं कि यह जो पर्याय है न हलका-भारी, तो तुम बहुत भारी हो गये साहब, ऐसा बोलते हैं, ख्याल में आया? किसीको प्रश्न पूछूं तो बुरा नहीं लगेगा न? पक्का, मणिभाई को पूछते हैं, हमारे मित्र हो गये हैं तो। मणिभाई तमारुं वजन केटलुं? *श्रोता: नाइंटी।* नाइंटी शुं किलो के ग्रॅम हां? किलो-किलो हां, हां और मैं आपसे पूछूंगा, ये हमारे सुमनभाई हैं, वे गोरे हैं या काले हैं? *श्रोता: गोरे।* हां गोरे हैं, अच्छा! तो हमने यहां क्या देखा, यह जो हलका और भारीपन जो है, वह किसकी पर्याय है? *श्रोता: पुद्गल की।* पुद्गल की है और हमने आपसे पूछा आपका वजन कितना, तो आपने अपने को क्या माना? *श्रोता: पुद्गल।* तो क्या यह बात सही है? ख्याल में आ रहा है?

देखो, हमारी कहां-कहां गलती होती है। हां, और हमने पूछा हमारे सुमनभाई गोरे हैं या काले हैं? तो यहां देखो वर्ण गुण जो है, क्या है? काला, पीला, लाल, नीला और सफ़ेद यानी गोरापन, तो यह हमने पुद्गल के जो वर्ण गुण की जो पर्याय है, उसरूप मैं हूं, ऐसा मान कर रखा हैं। तो आप हमें कहते हैं, आप तो हमें आत्मा की बात सिखाने आये हैं, तो यहां पुद्गल कि बातें क्यों बता रहे हैं? क्योंकि हमने स्वयं को पुद्गल ही माना है और इसरूप मैं नहीं हूं, यह समझाने के लिये यह बात बतायी जा रही है और इसकी बात विशेष और अगले प्रवचन में होगी।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

४८. पांच वर्गणा, पांच शरीर

अभी हम जो पुद्‌गलद्रव्य है, उस पुद्‌गलद्रव्य के विशेष गुणों को देख रहे हैं। तो इन विशेष गुणों का देखने का प्रयोजन क्या है? तो कहते हैं, उसरूप मैं नहीं हूं यह जानने के लिये। हमें पुद्‌गलों को जानना है क्योंकि हमने देखा है, विशेष गुण उसे कहते हैं कि जो अपने-अपने द्रव्य में रहते हैं, अन्य द्रव्य में नहीं रहते। इसलिये जब विशेष गुण की बात चलती है, तो यह स्पर्श नामक गुण है, वह पुद्‌गलद्रव्य का गुण है, वह जीवद्रव्य का गुण नहीं है। स्पर्श गुण की जो पर्यायें हैं, उन पर्यायरूप यह जीव अपने को मानता है।

देखो, एक बहुत मज़े की बात मैं आपको बताना चाहता हूं। हमारे एक पड़ोसी थे। उनके घर में एक लड़की थी, वह ब्याहने योग्य हुयी थी और वह हमारा पड़ोसी था वह तो मेरा मित्र ही था न, तो कभी भी हम उससे हाथ मिलाते थे तो उसका हाथ बहुत गरम लगता था, बॉडि टेम्परेचर जिसको हम कहते हैं। वह अपनी बेटी को भी हाथ लगायेगा, कुछ समझायेगा, तो वह बेटी बार-बार कहती थी, मुझे ऐसा पति मिले कि जिसका शरीर ठंडा हो, यानी पिता के हाथ जैसा गरम नहीं हो। मैं क्या कहना चाहता हूं, तो यह शरीर का जो स्पर्श है, वह ठंडा हो या गरम हो उसमें जो एकत्वबुद्धि है, तो इसका अर्थ क्या हो गया कि शरीर मैं हूं, शरीर के स्पर्श गुण की जो ठंडा या गरम पर्याय है, वह मेरी यानी जीव की ही है, ऐसी मान्यता है। तब वह चाहती थी कि मुझे ऐसे गरम स्पर्शवाला साथी नहीं चाहिये। ऐसा ले लो सबमें कि हलका, भारी, रूखा, चिकना, किसीका शरीर ऐसा रुक्ष होता है, किसीका एकदम चिकना होता है। मतलब ऑइलि स्किन बोलते हैं ना आप! जो अपने को ऑइलि स्किनवाला मानता है, वह कोई ऐसा साबुन ढूंढ़ता है कि जिससे वह ऑइल निकल जावे। क्योंकी शरीररूप मैं हूं, ऐसा वह मानता है, ख्याल में आया? यह सब लेना ठंडा, गरम वगैरह-वगैरह। देखो, अभी उसके आगे क्या है?

यह जो रस है, उसकी भी पांच पर्यायें हैं, खट्टा, मीठा, कड़वा, कषायला और चरपरा; यह हिंदी शब्द है। खट्टा तो आप समझते ही हो। मीठे तो आप हो ही। क्या नहीं हो? तो खट्टा, मीठा, कड़वा, कषायला यानी क्या? *श्रोता: तूरा।* तूरा और चरपरा यानी तीखा, यह बात तो आप समझ गये। हमारी घर में हमारी बेटी को बालक हुआ तो जो कोई

मिलने आता है, कितना मीठा है, कितना मीठा है। अरे! तुम पुद्गल का वर्णन कर रहे हो या जीव का वर्णन कर रहे हो, नक्की तो करो। लेकिन वह माता तो इतनी खुश-खुश होती थी, वाह! मेरा बच्चा कितना सुंदर! ख्याल में आया? ऐसा सबमें लेना। यह तो हम एक-एक गुण के एक-एक, जिसको हम कहते हैं, पर्याय की बात कर रहे हैं।

तीसरा कौनसा है गंध गुण, उसकी दो पर्यायें हैं सुगंध और दुर्गंध। तो सुगंध है या दुर्गंध है, वह जीव का होगा या शरीर का होगा, हां? *श्रोता: शरीर का।* शरीर का और हमारे शरीर से दुर्गंध आती है, इसलिये हम क्या करते हैं? तुम्हें नहीं मालूम? तुमको क्या मालूम? इनको पूछना, वह बाज़ार में फुस-फुस मिलता है न, क्या होता है? मैं जानता नहीं, नाम तो मुझे आता नहीं। हां, क्या बोलते हैं बेटा उसको, हां? *श्रोता: परफ्युम।* नहीं रे! वह परफ्युम तो दूसरा होता है। *श्रोता: डिओ।* हां, तो जो वह फुस-फुस लगाकर आते हैं, उनसे तो हमें चार हाथ दूर ही रहना चाहिये, क्योंकि उसकी गंध ज्यादा टाइम नहीं टिकती है। तो फिर ओरिजिनल गंध आना चालू होती है। भाई, यह एक प्रकार से ॲडव्हर्टाइजमेंट है न! कि हम तो बहुत दुर्गंधित हैं, लेकिन सुगंधित बनना चाहते हैं, तो हमने अपने को कौन माना? शरीररूप माना और अपने को दुर्गंधरूप माना, ख्याल में आया? और सुगंधवाला कोई पुष्प मिल जाये, फूल मिल जाये तो उसको सूंघते-सूंघते तो हम खुशी मानते हैं। यानी इस जीव को पुद्गल की ही पर्यायों में इतना अपनत्व है, इतना ममत्व है कि उसकी कोई सीमा नहीं है।

अब उसके आगे क्या है? वर्ण गुण की पर्यायें – काला, पीला, नीला, लाल और सफेद। हमें बाल तो काले चाहिये और गाल तो सफ़ेद चाहिये और उसमें अदल-बदल हो जाये तो, हमें पसंद नहीं। क्यों? और हम तो क्या करते हैं? हम यानी, अभी वह बीमारी पुरुष वर्गों में भी लगी है हो। हमारे बम्बई में तो मेन्स पार्लर भी निकले हैं, शादी के पहले दो-दो घंटे, चार-चार घंटे जो कोई वर होगा, वह उसका नंबर आवे तब तक वहां बैठा रहता है। पहले तो टाइम नहीं मिलता है क्योंकि इतनी लाइन लगी रहती है, उसके बाद उसका नंबर आवे तो उसका शादी का मुहूर्त भी टल जावे, फिर भी वह वहीं का वहीं रहता है। अच्छा! लेकिन वहां जाकर क्या करते हैं? महिलायें अभी उनको भी अच्छा लगे इसलिये बोल रहा हूं, वहां जाकर चेहरे पर सीमेंटिंग करती हैं। क्यों इंजिनिअर साहब?

सीमेंटिंग क्यों करते हैं? ईव्हन करने के लिये, यानी गाल के ऊपर वह क्या होते हैं हां, बुढ़ापे में वह आता है न, क्या-क्या होते हैं न? क्या होते हैं भैया? हां-हां, *श्रोता: झुर्रियां।* अच्छा जो भी हैं, आप जानते हैं, तो वह एक जैसा स्मूथ दिखे, इसके लिये वह खड्डे में फाउंडेशन डालते हैं। तो हम फाउंडेशन किसमें करते हैं? हम सीमेंटिंग बोले तो हम गलत और वे फाउंडेशन बोले तो वे मॉडर्न हं? क्योंकि हमारा चेहरा एकदम चकाचक दिखे, तो हमने स्वयं को काला माना या गोरा माना? हं कैसा? तो हमने स्वयं को पुद्‌गलरूप माना, या जीवरूप माना? जिसने अपने को जीवरूप माना होगा, वह बाल काले करेगा कि नहीं? क्यों? देखो, एक-एक पुद्‌गल के एक-एक गुण को हम देखते हैं, तो अपनी ॲडव्हर्टाइजमेंट यहां होती है।

हम तो समझते हैं कि लोग हमको जवान समझें, लेकिन यहां गले में तो ऐसी-ऐसी स्किन लूज हो रही है, तो उसको दुपट्टा डालें। पुरुषों में भी यह कमी नयी चल रही है, यह क्या है? कि अपना वृद्धत्व, अरे! यह तो शरीर का है भाई, अपना थोड़ी है। मैं तो अनादिअनंत हूं, यह शरीर तो सादिसांत है; हर भव में नया-नया मिलनेवाला है, घबराते क्यों हो? लेकिन जो शरीर हमें प्राप्त हुआ है; उसरूप हमने अपने को माना है। यह हमारे से गलती न हो, इसलिये क्या कहते हैं? पुद्‌गल को भी सहीरूप से जानना और पुद्‌गल को जानना हो तो उनके गुणों को हमें जानना चाहिये और गुण हमारे ज्ञान में नहीं आते हैं, तो पर्याय के माध्यम से हमें गुण की पहचान होती है। अभी हमने आपसे पूछा कि आपके पॅन्ट का रंग कौनसा है? तो वर्ण कौनसा है? तो आपने उसकी पर्याय बतायी। क्या वर्ण गुण देखा है कभी आपने? ख्याल में आया अभी? तो आपको तो गुस्सा आया था कि भाई हम तो वर्ण ही बताते हैं, जो लौकिक में वर्ण बोलते हैं वह नहीं, यहां वर्ण गुण की बात है; और यहां जो कहा गया, यह काला है जो है, वह उसकी पर्याय है।

सच कहा जाये तो आज तक किसी जीव ने पुद्‌गल परमाणु को ही नहीं देखा। क्या कहा? आज तक किसी जीव ने पुद्‌गल परमाणु को अपनी आंखों से नहीं देखा है। तो केवली ने तो देखा है कि नहीं, बोलो? हां-हां, हां-जी, केवली ने अपनी आंखों से देखा होगा कि नहीं? *श्रोता: केवली अपने ज्ञान से जानते हैं।* अरे वाह-वाह! शाबाश, शाबाश! आप कहती हैं, केवली भगवान आंखों से देखते ही नहीं क्योंकि केवली भगवान – अरिहंत

भगवान को पांच इन्द्रियां हैं, लेकिन उनका जो केवलज्ञान है, उस केवलज्ञान में इन्द्रियां निमित्त होती ही नहीं। जो मतिज्ञान है उसमें इन्द्रियों के माध्यम से जानना पड़ता है। जानता तो ज्ञान गुण से है लेकिन मीडिया कौनसा है – इन्द्रिय? नहीं समझ में आया न तुझे? देखो, मैं समझाता हूं। हमें अगर एक रूम में बंद करके रखा है। इतने में बाहर आवाज़ आयी, तो हमने खिड़की में से देखा। तो खिड़की देख रही है या आपकी आंख देख रही है? बोलो, कौन बोलना चाहेगा? हां बहन आप बतायेंगे? खिड़की देख रही है या आंख देख रही है? आंख देख रही है या वह जीव जान रहा है? *श्रोता: जीव जान रहा है।* हां तो जीव है न, उसके लिये खिड़की उसकी आंख है; जानने में इन्द्रिय द्वार है। जान तो कौन रहा है? आत्मा; उसका ज्ञान गुण। वैसे हम देखते हैं यह खिड़की नहीं देखती। खिड़की के पीछे खड़ा हुआ जो मनुष्य है उसकी आंखें देखती हैं। इसतरह से जब हम यह बात देखते हैं कि केवली भगवान इन्द्रियों के द्वारा नहीं जानते, वे अपने ज्ञान के द्वारा जानते हैं। तो हमने क्या कहा था? कि पुद्गल परमाणु को किसी जीव ने आज तक आंख से नहीं देखा। बात ख्याल में आती है?

ये पुद्गल परमाणु या स्कंध जो हैं उनके रुक्ष और स्निग्ध, इन पर्यायों के द्वारा जो उनका बंध होता है, उसको स्कंध कहते हैं। अभी वह बंध कैसा होता है, कैसा है? वह बात ज़रा हम अलग रखेंगे। अगर समय मिलेगा तो उसकी भी बात हम करेंगे। तो यह जो स्कंध होते हैं, स्कंधों के बारे में हमने गत वर्ष भी कुछ चर्चा की थी। तो वह स्कंध के हमने छह भेद देखे थे। याद है किसीको? पुस्तक में क्या देखती हो? याद है कि नहीं इतना बताओ। आपको याद है? मैं याद कराता हूं। स्थूल-स्थूल, अभी आगे बोलो, *सभी श्रोता: स्थूल-स्थूल।* स्थूल-स्थूल। स्थूल, स्थूल-सूक्ष्म, सूक्ष्म-स्थूल, सूक्ष्म और सूक्ष्म-सूक्ष्म यह हमने स्कंधों के, किसी आचार्यों के द्वारा यह जो विभाजन किया है, उसको हमने देखा था। आज उन्हीं स्कंधों को हम अन्य तरह से जो विभाजन शास्त्रों में बताया जाता है, उसको देखेंगे। लेकिन एक मेहरबानी करना कि जो हमने पहले सीखा था, उसकी और इसकी तुलना मत करना क्योंकि यह विभाजन जो है, वह भी आचार्यों ने ही बताया हुआ है। वह विभाजन है, वह भी किन्हीं अन्य आचार्यों ने बताया है। तो अभी हमारे पास जो पेजेस हैं, उसमें ९ नंबर के पृष्ठ पर हम आते हैं, क्वेश्चन नंबर २३, यहां लिखा है स्कंध के कितने भेद हैं?

तो कहते हैं, मैं पढूंगा और आपको रिपीट करना है और यहां जिस क्रम से दिया है उसी क्रम से हमें याद करना है और अभी के अभी याद हो जायेगा घबराना मत। मैं बोलूंगा तो आप भी बोलना, आहारवर्गणा। *सभी श्रोता: आहारवर्गणा।* तेजसवर्गणा। *सभी श्रोता: तेजसवर्गणा।* भाषावर्गणा। *सभी श्रोता: भाषावर्गणा।* मनोवर्गणा। *सभी श्रोता: मनोवर्गणा।* कार्माणवर्गणा। *सभी श्रोता: कार्माणवर्गणा।* इत्यादि बाईस भेद हैं। *सभी श्रोता: इत्यादि बाईस भेद हैं।* हमें बाईस भेद याद नहीं होनेवाले हैं, इसलिये लघु सिद्धान्त प्रवेशिकाकार ने हमें केवल पांच ही बताये हैं क्योंकि ये पांच ही इस जीव से विशेषरूप से संलग्न है, जीव उनको ग्रहण करता है। अन्य जो सत्रह जो बताये हैं, उसको यह जीव ग्रहण नहीं करता, इनसे विशेष रीति से कोई खास संबंध नहीं है। लेकिन वे वर्गणायें इस लोक में यानी विश्व में हैं इसके लिये उसका कथन है। जिनको इनके बारे में विशेष जानना हो वह सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक जो पुस्तक है, जो पंडित टोडरमलजी ने लिखी है, जीवकाण्ड में इसका विशेष वर्णन आपको नाम सहित मिलेगा।

तो यहां कहते हैं, पहली कौनसी वर्गणा देखी थी साहब हमने? *श्रोता: आहारवर्गणा।* आहारवर्गणा और दूसरी? *श्रोता: तेजसवर्गणा।* पुस्तक में देख कर बोल सकते हैं। पहली कौनसी देखी थी? *श्रोता: आहारवर्गणा।* दूसरी? *श्रोता: तेजसवर्गणा।* तीसरी? *श्रोता: भाषावर्गणा।* चौथी? *श्रोता: मनोवर्गणा।* पांचवीं? *श्रोता: कार्माणवर्गणा।* सबको याद हो गया, हमने पांचवीं कौनसी देखी थी बहन? *श्रोता: कार्माणवर्गणा।* अच्छा! आपने बताया बहुत अच्छा कार्माणवर्गणा, और पहली? *श्रोता: आहारवर्गणा।* अरे! भगवान हां पहली कौनसी देखी थी? *श्रोता: आहारवर्गणा।* दूसरी? *श्रोता: तेजसवर्गणा।* तीसरी? *श्रोता: भाषावर्गणा।* तीसरी कौनसी? *श्रोता: भाषावर्गणा।* भाषावर्गणा। चौथी? *श्रोता: मनोवर्गणा।* और पांचवीं? *श्रोता: कार्माणवर्गणा।* जयश्रीताई आप ५, ४, ३, २, १, इस क्रम से बोलेंगे? *श्रोता: कार्माणवर्गणा।* कार्माणवर्गणा। *सभी श्रोता: मनोवर्गणा।* मनोवर्गणा। *सभी श्रोता: भाषावर्गणा।* भाषावर्गणा। *सभी श्रोता: तेजसवर्गणा।* तेजसवर्गणा और? *सभी श्रोता: आहारवर्गणा।* तो देखो एक जयश्री के साथ सारी जयश्री हो गयी, हमने तो जयश्रीताई को बोला था। हां बहुत अच्छा है, देखो, यह हमें इसतरह से क्यों याद करना है? कि पहली है आहारवर्गणा, दूसरी है तेजसवर्गणा, तीसरी है भाषावर्गणा, चौथी है मनोवर्गणा, और पांचवीं

है? *श्रोता: कार्माणवर्गणा।* नलिनभाई आप पांच वर्गणा बोलेंगे? *श्रोता: आहारवर्गणा, तेजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माणवर्गणा।*

आपको ऐसा लगता होगा कि इतना क्यों इंसिस्ट कर रहे हैं कि क्रम से ही हमें याद हो? ख्याल में आया? मैं आपसे बात करता हूं। देखो-देखो, आपने गेहूं देखा होगा, गेहूं-व्हीट और उसके साथ-साथ उस गेहूं के टुकड़े होते हैं, जिसकी खीर बनाते हैं, जिसको हिन्दी लोग फाडिया गेहूं बोलते हैं। हां देखा है कि नहीं? हां फाडिया गेहूं बोलते हैं कि क्या बोलते हैं? गुजरातीमां शुं कहेवाय? *श्रोता: फाड्या घउ।* जो होता है, आप समझते हैं न? खाते हैं न और औरों को खिलाते भी हैं। आपको मालूम है? रमाबहन वहां बैठे-बैठे गाल में हंसती हैं। क्या कह रहे हैं? जो फाड्या घउ हैं, गेहूं के जो टुकड़े होते हैं, वे आधे-आधे टुकड़े होते हैं, आधे-आधे टुकड़े जो होते हैं। उससे भी छोटा क्या होता है? रवा होता है, उससे भी छोटा, छोटा यानी सूक्ष्म क्या होता है? तो कहते हैं, आटा होता है और उससे भी सूक्ष्म क्या होता है? *श्रोता: मैदा।* हां मैदा, देखो एक ही गेहूं है, उसका दूसरा रूपांतर वह टुकड़ा गेहूं जिसको बोलेंगे फाडिया गेहूं, तीसरा जो है, वह क्या है? रवा, उससे सूक्ष्म क्या है? आटा और उससे सूक्ष्म क्या है? मैदा। तो जैसे ये सब स्थूल से सूक्ष्म भेद हैं वैसे इन वर्गणा के डिफरंट नाम हैं और उनके साइझ भी उसके अनुसार हैं। देखो, यहां क्या कहते हैं? कि जो आहारवर्गणा है, वह विशेष स्थूल है, जैसे गेहूं है उसके साथ उसकी कंपॅरिझन की है। तो तेजसवर्गणा है उसके साथ वह टुकड़ेवाला गेहूं, और यह जो भाषावर्गणा है तो वह तो जैसा रवा होता है, उस तरीके से समझना। मनोवर्गणा उससे सूक्ष्म यानी जैसा आटा होता है और जो आखिर का जो है कार्माणवर्गणा जैसा मैदा होता है। हां अभी इससे भी सूक्ष्म क्या होता है? हम एक-एक पार्टिकल को लेंगे।

तो जैसे-जैसे वह सूक्ष्म-सूक्ष्म होते जाता है तो नंबर ऑफ़ परमाणु उसमें अधिक होते हैं। तो सबसे बड़ा हमने क्या देखा था? आहारवर्गणा; अभी एक बार दुबारा पूछूं? पांच वर्गणा के नाम कौन बताना चाहेगा? जो चाहे उसको ही हम पूछेंगे? आप चाहते हैं? बोलो। *श्रोता: आहारवर्गणा।* आहारवर्गणा। *श्रोता: तेजसवर्गणा।* तेजसवर्गणा। *श्रोता: भाषावर्गणा।* भाषावर्गणा। *श्रोता: मनोवर्गणा।* मनोवर्गणा। *श्रोता: कार्माणवर्गणा।* कार्माणवर्गणा, कोई बात नहीं गलत हो गया तो क्या तकलीफ है? देखो, हमारे यहां तो यह सिस्टिम है साहब; कोई गलती करें तो उसको बिलकुल फांसी नहीं देते और कोई सही बोले तो

उसको बिलकुल एक रुपया भी रिवार्ड नहीं देते। क्या कहा? भाई, यह तो हमें अपने लिये याद करना है क्योंकि अभी तो हम केवल नाम देख रहे हैं, इसके आगे की बात आगे।

देखो, अभी क्या कहते हैं? तो हमने पहले आहारवर्गणा का नाम लिया है, तो यह आहारवर्गणा क्या होती है? यह हमारे मनमें प्रश्न खड़ा होगा, उसका तुरंत प्रश्न आगेवाला जो नंबर २४ में लिखा है। आहारवर्गणा किसे कहते हैं? तो कह रहे हैं जो पुद्‌गल स्कंध और ब्रॅकेट में क्या लिखा है वर्गणा; जो पुद्‌गल स्कंध है उसका ही दूसरा नाम वर्गणा है। औदारिक, वैक्रियिक और आहारक इन तीन शरीररूप से परिणमन करता है उसको आहारवर्गणा कहते हैं। तो हम जैसे कहावत है, अभी मराठी में कहावत मुझे याद आ गयी। हिंदी में भी होगी लेकिन याद नहीं आ रही। हं, पहले के जमाने में ऐसे घर थे, कौलारू घर। तो छतपर छोटे-छोटे प्राणी बड़े-बड़े प्राणी कोई भी घूमते फिरते थे, तो क्या होता है? कि कढ़ाई में तेल उबल रहा है इतने में ऊपर से एक सांप उसमें गिरता है और उसको उबलते हुये तेल में ऐसी तकलीफ होती है तो वहां से वह छूटने की कोशिश करता है, निकलकर बाहर आता है और नीचे जहां अग्नि चूल्हे में जल रही हो उसमें घुस जाता है, उसको मराठी में कहते हैं आगीतून सुटला आणि फुफाट्यात अडकला। हां ऐसा कुछ होगा न हिन्दी में भी और गुजराती में भी। *श्रोता: ऊलमांथी चूलमां। श्रोता: ऊलमांथी चूलमां जावुं।* हां, आप समझदार हो समझ गये हो। यानी हमने पहले आहारवर्गणा किसको कहते है? यह जानने कि कोशिश की। क्योंकि आहारवर्गणा किसको कहते हैं? यह हमें मालूम नहीं था, तो उत्तर क्या दिया? कि जो पुद्‌गल स्कंध औदारिक, वैक्रियिक और आहारक शरीररूप परिणमते हैं। तो यह औदारिकशरीर क्या है? वैक्रियिकशरीर क्या है? और यह आहारकशरीर क्या है? यह नयी बला क्यों खड़ी कर दी? ऐसा आपके मन में आया होगा, तो यह बात पंडित गोपालदासजी बरैया जानते थे इसलिये उन्होंने तुरंत उत्तर दिया।

क्वेश्चन नंबर २९ को लेना, वहां कह रहे हैं, शरीर कितने हैं? तो यह शरीर की बात निकली न, कौनसे तीन शरीर के नाम हमने देखे थे? हां भाईसाहब, कौनसे तीन शरीर के नाम देखे थे हमने? हां बोलो-बोलो। *श्रोता: औदारिक, वैक्रियिक और आहारक।* औदारिक, वैक्रियिक और आहारक। देखो-देखो, फिर से सुनना भाई, गड़बड़ मत करना। २४ नंबर का प्रश्न फिरसे देखना – आहारवर्गणा किसे कहते हैं? तो वह आहारवर्गणा जो

है उससे क्या-क्या बनता है? तो कहते हैं औदारिकशरीर बनता है, वैक्रियिकशरीर बनता है और आहारकशरीर बनता है। तो यह औदारिक, वैक्रियिक और आहारक इन तीन शरीररूप से जो परिणमन करता है, वह कौन है? पुद्‌गलस्कंध, उसको आहारवर्गणा कहते हैं। ख्याल में आया अभी? तो हमारा पहला प्रश्न क्या है? यह शरीर क्या होता है? तीन शरीररूप, यानी एक जीव को इतने शरीर हो सकते हैं? तो कितने शरीर हो सकते हैं? इसके बारे में जब हम विचारणा करेंगे, तो पहले शरीर किसको कहते हैं? वह जानने की कोशिश करेंगे।

तो २९ नंबर का प्रश्न है, शरीर कितने हैं? तो उसका उत्तर क्या है? शरीर पांच हैं। तो उन शरीरों का नाम क्या बताया? पहला कौनसा है? औदारिक। सब बोलेंगे – औदारिक, लेकिन यह औदारिकशरीर मैं बोलूंगा और आपको भी शरीर साथ में बोलना हैं, तो यह पांच शरीर हैं, उसमें से पहला शरीर है औदारिकशरीर। *सभी श्रोता: औदारिकशरीर।* वैक्रियिकशरीर। *सभी श्रोता: वैक्रियिकशरीर।* आहारकशरीर। *सभी श्रोता: आहारकशरीर।* तेजसशरीर। *सभी श्रोता: तेजसशरीर।* और कार्माणशरीर। *सभी श्रोता: कार्माणशरीर।* ये शरीरों के नाम हैं, पांच नाम तो आपको याद हो गये। औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, आहारकशरीर, तेजसशरीर और कार्माणशरीर; अभी हम इन सबके अर्थ भी देखेंगे। पहले-पहले आपको थोड़ासा ऐसा लगेगा कि क्या बात चल रही है? घबराना मत, सभी आसान है, थोड़ा धीरज रखना है। तो कहते हैं यह औदारिकशरीर किसे कहते हैं? तो उन्होंने तुरंत उत्तर दिया, **मनुष्य और तिर्यंच के स्थूल शरीर को औदारिकशरीर कहते हैं**। अभी यहां जो स्थूल नामक शब्द है, उसको थोड़ासा आप ढांक कर रखना, गौण करना। तो क्या कहना चाहते हैं? मनुष्य और तिर्यंच के शरीर को औदारिकशरीर कहते हैं। तो आपका कौनसा शरीर है अभी? औदारिकशरीर। तो तुम मनुष्य हो या तिर्यंच हो? तो मनुष्य को औदारिकशरीर होता है? बिलकुल होता है। यह तिर्यंच में यह जो झाड़ दिख रहा है, उसमें जो वनस्पतिकायिक जीव हैं तो झाड़ जो है वह कैसा है? औदारिकशरीर है उसके लिये। ख्याल में आया?

यह जो हवा चल रही है, उसको हम वायुकायिक जीव कहेंगे, तो उसका जो वायु नाम का जो शरीर है, वायुकाय वह भी औदारिकशरीर है। यह जो चींटी दिखती है, वह

कौनसे गति का जीव है भाई? *श्रोता: तिर्यंचगति।* तिर्यंचगति का तो उसको कौनसा शरीर होगा? *श्रोता: औदारिकशरीर।* बात ख्याल में आ गयी? और मनुष्य? *श्रोता: औदारिकशरीर।* उसको भी औदारिकशरीर है। तो पहले तो औदारिकशरीर किसको कहना? इसका सोल्यूशन तो हमें मिल गया। क्या है उसका उत्तर? तो जो मनुष्यगति और तिर्यंचगति के जीवों के जो शरीर होता है। अभी यहां एक शब्द रखा है स्थूल उसको हम अलग रखेंगे। तो वह हो गया औदारिकशरीर, अब आगे बढ़ते हैं।

तो कहते हैं वैक्रियिकशरीर किसे कहते हैं? बहुत आसान है उसका उत्तर, कहते हैं कि **जो छोटी, बड़ी, पृथक्, अपृथक्, आदि अनेक विक्रियाओं को करें ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियिकशरीर कहते हैं**। अभी पहले में पहले शॉर्ट में हम देखते हैं, यह औदारिकशरीर कौनसे-कौनसे गति के जीवों को होता है? *श्रोता: मनुष्य और तिर्यंच।* हांजी? *श्रोता: मनुष्य और तिर्यंच।* मनुष्य और तिर्यंच, अभी कितनी गति बाकी रह गयी? *श्रोता: दो गति।* कौनसी? *श्रोता: देव और नारकी।* देव और नारकी। तो देव और नारकी जो जीव हैं, उनके साथ जो शरीर रहता है वह वैक्रियिकशरीर है। क्या कहा? दूसरी लाइन पढ़ते हैं इसकी – देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियिकशरीर कहते हैं। तो इसमें और इसमें क्या डिफरन्स हैं? दो गति को आपने औदारिकशरीर दिया और दो गतियों को आपने वैक्रियिकशरीर दिया, तो इन दोनों में डिफरन्स क्या है? तो ऊपर बताते हैं कि यह शरीर कैसा है, वह छोटी और बड़ी ऐसी विक्रिया करता है। यानी यह जो देव होते हैं, वे इतने छोटे हो सकते हैं कि जो क्या बोलते हैं? स्पाइडर मॅन जैसे वह जो वेब-मकड़ी का जाल रहता है ना उसके ऊपर भी चले फिर भी कुछ नहीं होवे वह टूटे भी नहीं और बड़ा यानी एकदम विशाल पर्वत जैसा रूप वे ले सकते हैं, ऐसा नारकी भी करते हैं हो। लेकिन दोनों में और कुछ अंतर है क्या? तो कहते हैं जो पृथक् और अपृथक्। पृथक् और अपृथक् यानी क्या? देवगति के जो जीव हैं जिनके वैक्रियिकशरीर है, उस शरीर में ऐसी विशेषता है कि एक देव लाखों शरीर पैदा करें। आपकी आजकल की भाषा में क्लोन यानी वह लाखों अन्य देव बने, लेकिन सबके आत्मा अलग-अलग लाख नहीं हैं, एक ही है। तो आप कहते हो आपका हम सुन रहे हैं, गये दो-तीन दिन से बहुत टॉलरेट किया लेकिन अभी आप लिमिट छोड़ रहे हैं।

क्यों साहब? आपके मनमें ऐसा प्रश्न आया कि नहीं? हाथ में शास्त्र रखकर बोलना, मैं आपका चेहरा देख कर समझ सकता हूं। नहीं, चलो कोई बात नहीं, अच्छी बात है, आप इंटरेस्ट लेकर सुनते हो। आपको मालूम हैं? इस मनुष्यलोक में अॅट अ टाइम कितने तीर्थंकर होते हैं, यह आप कोई जानता है क्या? *श्रोता: वन हंड्रेड सेव्हंटी।* हां जी? *श्रोता: एक सौ सत्तर।* हां, एक सौ सत्तर तीर्थंकर होते हैं। वे किसतरह से होते हैं? वह भी हम देखेंगे। देखो, इस जम्बूद्वीप में एक भरतक्षेत्र है और उसके ऊपर एक ऐरावतक्षेत्र है और बीच में विदेहक्षेत्र है। तो विदेहक्षेत्र में अॅट अ टाइम बत्तीस तीर्थंकर हो सकते हैं और ऊपर ऐरावतक्षेत्र में एक और नीचे भरतक्षेत्र में एक, ऐसे चौंतीस और ऐसे पांच भरतभूमि, पांच ऐरावतक्षेत्र और पांच विदेहक्षेत्र होते हैं। पांच विदेह के बत्तीस × पांच कितने हो गये? *श्रोता: एक सौ साठ।* एक सौ साठ और पांच भरत के कितने हो गये? *श्रोता: एक सौ पैंसठ।* एक सौ पैंसठ, और पांच ऐरावत के, ऐसे कितने हुये? *श्रोता: एक सौ सत्तर।* तो एक सौ सत्तर तीर्थंकर अॅट अ टाइम अपने मनुष्यलोक में हो सकते हैं। ढाई द्वीप कहो, मनुष्यलोक कहो एक ही बात है। यह क्यों इतनी सारी बातें हम जानना चाहते हैं? कि हमें जो पृथक् विक्रिया जो हो रही है, किनमें? देवों में जो करने की क्षमता है, उसकी बात हम देखेंगे।

आपको इस बात का भी पता होगा कि हर तीर्थंकर के कल्याणकों में इन्द्रदेव जरूर आते हैं। तो अभी एक सौ सत्तर तीर्थंकर अॅट अ टाइम होवे तो टोटल इन्द्र एक सौ होते हैं। यानी उसमें सब लेना; कौनसे? चक्रवर्ती यानी नरेन्द्र लेना, पशुओं में जो होता है सिंह उसको भी लेना और जो स्वर्ग के-वैमानिकों के और भवनत्रिक के इनमें से इन्द्र हैं उनको भी लेना। तो एक इन्द्र लेते हैं हम सौधर्मइन्द्र; अभी एक सौ सत्तर जगह कैसे जायेगा? जाना तो अनिवार्य है। तो वह ऐसी विक्रिया से अपने शरीर को बनाते हैं कि ओरिजिनल इन्द्र तो अपने स्वर्ग में ही बैठे हैं और विक्रिया से उनके एक सौ सत्तर इन्द्र बनकर वह अन्य-अन्य जगह जाते हैं और मान लो अभी यहां चार ही तीर्थंकर, एक यहां हैं, एक यहां हैं, एक पीछे हैं और बीच में इन्द्र है, ऐसा हम मानते हैं। तो चारों ही जगह जायेंगे और चारों ही जगह जाते हैं, तो उनके आत्मा के जो प्रदेश हैं वे एक दूसरे से जुड़े हुये हैं। ऐसा कटकर के इधर एक पच्चीस टका, इधर एक पच्चीस टका, इसतरह से एक सौ सत्तर विभाजन करके हर जगह उसके टुकड़े नहीं होते हैं क्योंकि आत्मप्रदेशों में कभी भी खंड

नहीं होता। न द्रव्येण खण्डयामि, न क्षेत्रेण खण्डयामि, न कालेन खण्डयामि, न भावेन खण्डयामि। तो जो आत्मप्रदेश हैं उनका कभी भी खंडन यानी टुकड़े नहीं होते, तो यह जो है वह विक्रिया है। तो ऐसे किसी देव को ऑर्डर दी जाये कि चलो एक लाख सैन्य बन जाओ, तो फटाफट लाइन में एक लाख सैन्य बन जाते हैं। इन्द्र के तो कोई शत्रु नहीं होते, लेकिन फिर भी जैसे हमारे प्राइम मिनिस्टर या प्रेसिडेंट निकलते हैं, तो उनके आगे पीछे दस, पांच ब्लॅक बेल्ट घूमते फिरते हैं; पहनते तो सफारी तुम्हारे जैसे, पर वे कौन होते हैं? क्योंकि उनका वह ऑनर है। वैसे इन्द्र जब निकलता है तब उनके आगे-पीछे ऐसे सैन्य निकलते हैं। होता तो असल में एक, दो, दस देव, ऐसा हम माने, क्या हो जाये? तो यह जो विक्रिया है उसको कहते हैं पृथक् विक्रिया और यह सिर्फ देवगति के जीवों के ही होती है।

अब आगे क्या कहते हैं, अपृथक्। अपृथक् यानी क्या? जो नारकी जीव होते हैं वे भी विक्रिया करते हैं। लेकिन ऐसे पृथक् अलग-अलग शरीर बने ऐसी उनमें कपॅसिटि नहीं है। वे क्या करेंगे? ऐसा करेंगे तो यहां तक हुक आ जाता है, तलवार हो जाती है हाथ की, भाला हो जाता है। वह अन्य कोई बिच्छू का रूप ले सकते हैं लेकिन पूरा एक शरीर। वह सब इनकी विक्रिया है यानी पूरा एक ही रूप लेंगे। देवों के जैसे पृथक्-पृथक् अनेक शरीर बनते हैं, वैसे इन नारकियों के नहीं होते हैं। तो उनको क्या कहेंगे? अपृथक् विक्रिया। तो अभी हम देखते हैं, यह कहां से बात निकली? वैक्रियिकशरीर किसे कहते हैं? तो कह रहे हैं, जो छोटी, बड़ी, पृथक्, अपृथक् आदि अनेक विक्रियाओं को करें ऐसे देव और नारकियों के शरीर को वैक्रियिकशरीर कहते हैं।

देखो सुनना हो! तप जो करते हैं मुनिराज तो तप के निमित्त से कई मुनिराजों को औदारिकशरीर की ही ऐसी विक्रिया करने की ऋद्धि प्राप्त होती है। हमने वह रक्षाबंधन की स्टोरी सुनी है न? तो वहां मुनिराज वामन का रूप लेते हैं और कहते हैं मुझे तीन कदम जमीन देना। तो एक पैर इतना बड़ा हो जाता है कि सारी पृथ्वी उससे पादाक्रांत होती है वगैरह-वगैरह यह आप जानते हैं न? तो ऐसी विक्रिया करने की ऋद्धि मनुष्यगति के जीवों को तप के माध्यम से भी प्राप्त होती है। उसकी बात यहां नहीं है, यहां तो वैक्रियिकशरीर की बात है।

तो अब आगे कहते हैं, आहारकशरीर किसे कहते है? क्योंकि ये सारे जो आहारकशरीर, वैक्रियिकशरीर और औदारिकशरीर कौनसी वर्गणा से बनते हैं? *श्रोता: आहारवर्गणा से।* हां, आप बता रहे हैं साहब? आहारवर्गणा से बनते हैं। नहीं तो यह बाकी मज़ा देखते-देखते हम यह न भूल जायें कि हम आहारवर्गणा को समझने की कोशिश कर रहे हैं। अब कहते हैं, यह आहारकशरीर किसे कहते हैं? तो उसका उत्तर है – **आहारक ऋद्धिधारी छठवें गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्त्वों के सबंध में कोई शंका होने पर अथवा जिनालय आदि की वंदना करने के लिये उनके मस्तक से एक हाथप्रमाण, स्वच्छ, सफेद, सप्तधातु रहित, पुरुषाकार जो पुतला निकलता है, उसे आहारकशरीर कहते हैं**। यह इतना लंबा-लंबा है न? तो आप थक गये न सुन-सुन कर, तो उसको हम देखते हैं क्या है? यह तो बहुत आसान है। कह रहे हैं पहले में पहले यह आहारकशरीर है, वह किनको प्राप्त होता है? *श्रोता: मुनिराज।* हां जी? मुनिराज को। तो मुनिराज हैं वे सामान्य से छठे गुणस्थान में भी होते हैं और सातवें गुणस्थान में भी होते हैं। लेकिन आठवें, नौवें, दसवें, बारहवें गुणस्थान तक को भी मुनि कहेंगे और तेरहवें गुणस्थानवाले अरिहंत को भी महामुनि कहेंगे उनकी बात यहां नहीं चल रही है। यहां तो छठे, सातवें गुणस्थानवर्ती मुनियों की बात है। उनमें भी जो छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज हैं, उनकी बात चल रही है। वह भी कैसे? जिनके यह आहारकऋद्धि प्राप्त है। इसका अर्थ क्या? जितने सारे छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज हैं, उन सबको यह आहारकऋृद्धि प्राप्त नहीं होती, कुछ जो होते हैं उनको यह आहारकऋद्धि होती है। यानी उस आहारकऋद्धि के कारण आहारकशरीर बनता है और क्या-क्या होता है, वह बात बताते हैं।

तो ऐसे मुनि को जिनके यह आहारकऋद्धि प्राप्त हुयी है, ऐसे मुनियों को तत्त्वों में जो, तत्त्वों के संबंध में जो कोई शंका होती है यानी उनके तो सात तत्त्व में शंका होगी कि नहीं? जो प्रयोजनभूत सात तत्त्व हैं, बोलो? प्रयोजनभूत सात तत्त्वों में शंका होगी कि नहीं? *श्रोता: नहीं।* क्यों नहीं? अरे! वह भी मनुष्य है न? बोलो, *श्रोता: पता नहीं।* पता नहीं। अच्छा आप जानती है त्रिशला? हां, हमारी जयश्रीबहन बोलो, *श्रोता: नहीं होती।* नहीं होती, क्यों नहीं होती? *श्रोता: उनको सम्यग्दर्शन है।* हां, अरे! उनके अगर सात तत्त्वों में शंका होगी तो उनका सम्यक्त्व रहेगा क्या? क्योंकि जिनके सात तत्त्वों के बारे में यथार्थ श्रद्धान नहीं हैं उसके सम्यक्त्व भी नहीं होगा। तो छठे गुणस्थान में आवे कैसा? क्योंकि छठे

गुणस्थान में आनेवाला जीव सातवें गुणस्थान से होकर आता है। सातवां गुणस्थान सम्यग्दृष्टि जीवों को ही प्राप्त होता है। इसलिये जो छठे गुणस्थानवर्ती जीव हैं वह नियम से भावलिंगी संत ही होते हैं। ख्याल में आया?

तो अभी क्या बताना चाहते हैं? जो छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज हैं उनके तत्त्वों में यानी ये प्रयोजनभूत जीव-अजीव आदि जो सात तत्त्व हैं, उसके बारे में शंका नहीं है। लेकिन ऐसा हो सकता है, करणानुयोग की कोई बात है, उनके ज्ञान में नहीं आती होगी। या हम अभी फॉर-एक्झाम्पल बोलते हैं, इतनी मामूलीसी बात उनके ज्ञान में नहीं आयी है, ऐसी बात मैं नहीं कहना चाहता हूं। लेकिन यह जो क्या नाम है? सुदर्शनमेरु है, वह कितना ऊंचा है? बाय चान्स ऐसी जो प्रयोजनभूत नहीं है, ऐसी कोई बातों में उनको शंका आ जाये तो क्या करेंगे? साक्षात् समवशरण में जायेंगे। वे मुनि तो यहां बैठे हैं, लेकिन उनका आहारकशरीर जो है, उसके साथ वहां जायेंगे, अब वह सब बात बताऊंगा मैं आपको।

तो कहते हैं छठे गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्त्वों के संबंध में कोई शंका होने पर, दूसरा ऑल्टरनेटिव क्या है? अथवा जिनालय आदि की वंदना करने के लिये। अब यह जो बात है कि उनके मस्तक से एक हाथ प्रमाण स्वच्छ, सफेद, सप्तधातु रहित पुरुषाकार जो पुतला निकलता है उसे आहारकशरीर कहते हैं। इस बात को हम कल सुबह देखेंगे। क्योंकि अभी का समय। *श्रोता: सवा नौ।* सवा नौ है! अरे! रोज ऐसा क्यों हो रहा है? जल्दी नींद आती है, बहुत अच्छा, कोई बात नहीं। तो अभी यह पूरा ही कर देते हैं बहुत बढ़िया। मैं बोला लिंक टूट रही है, क्या करूं? तो कह रहे हैं, तो पहली बात तो उन्हें तत्त्वों के बारे में कोई शंका आ जाये; ऐसी कोई बात हो सकती है कि जो आगम में जो बात लिखी हैं, उनके शायद ज्ञान में नहीं आती हो, तो वे जरूर जहां समवशरण चल रहा हो, विदेहक्षेत्र में तो हमेशा समवशरण लगा ही रहता हैं, वहां जायेंगे।

विदेहक्षेत्र में जो हमारे कुंदकुंद आचार्य गये थे, वे आहारकऋद्धि के कारण गये थे कि नहीं? यह अपना प्रश्न है। हां आप क्या कहते हैं? *श्रोता: नहीं गये थे।* नहीं गये थे! अच्छा, आपका क्या कहना है? हां बहन आप-आप बतायेंगे? तुम-तुम हां, आपको मालूम नहीं? आप साथ में नहीं गये थे? कोई बात नहीं, आप नहीं कह रहे, है न और अन्य का मैं मत नहीं ले रहा हूं, ऐसा क्यों कहते हैं आप? *श्रोता: सदेह गये थे।* हां तो आहारकऋद्धि के

साथ जाना और सदेह जाना उसमें क्या अंतर हैं। *श्रोता: शरीर के साथ, सशरीर गये थे।* वह तो मैं समझ गया, सदेह का अर्थ मैं जानता हूं। लेकिन आहारकऋद्धि के साथ नहीं गये थे यह हम कैसे प्रूव्ह कर सकते हैं? क्योंकि आप इतना जोर से बोले कि सदेह गये थे और वह बात सच्ची है। घबराना मत, लेकिन आहारकऋद्धि के कारण नहीं गये थे, आहारकशरीर के साथ या आहारकशरीर वहां नहीं गया था यह हम कैसे प्रूव्ह करेंगे? *श्रोता: उसमें जायेंगे तो शरीर नहीं रहेगा, मूल शरीर यहीं रहेगा।* हां एक बात और दूसरी मूल बात, हां जी कौन बोल रहे हैं? हां बोलो-बोलो? *श्रोता: ऋद्धि प्राप्त नहीं होगी।* अच्छा! आपको मालूम था, आपका कहना है उनके ऋद्धि प्राप्त नहीं होगी, लेकिन हमें आगम के अनुसार उत्तर चाहिये। कौन कह रहा है? *श्रोता: आगम में ऐसा लिखा हुआ है।* हां, आगम में ऐसा लिखा है। लेकिन हमें तो उसको तरासना-जांचना चाहिये कि नहीं, क्यों?

मैं बताता हूं, देखो अभी फिर से मैं पढूंगा और उसीमें उत्तर गर्भित है। यहां क्या लिखते हैं? आहारकऋद्धिधारी छठवें गुणस्थानवर्ती, तो मैं आपसे पूछता हूं यह छठा गुणस्थान का काल तो अंतर्मुहूर्त है। वह अंतर्मुहूर्त में यह जो शरीर है वह बनने का पूरा प्रोसेस, शरीर बनना, वह बनकर, वह शरीर समवशरण तक जाना और वहां से एक अंतर्मुहूर्त में वापस आना ये सभी बातें छठवें गुणस्थान के अंदर ही अंदर होती हैं। वह छठे गुणस्थान से गिर जायेंगे और हमने तो शास्त्र में आगम के अनुसार ऐसा पढ़ा है कि वह सदेह गये थे और कितने दिन के लिये? *श्रोता: सात दिन।* सात दिन के लिये, क्या आठ दिन के लिये? चलो और एक दिन बढ़ाओ न हमारा क्या जाता हैं। आठ दिन के लिये गये थे, तो आठ दिन में कितने अंतर्मुहूर्त जायेंगे भाई? तो मुनि अवस्था रहेगी कि नहीं उनकी? और रही, उसके आने के बाद उन्होंने पांच परमागम लिखे और वह भी इतने पॉवरफुल हैं कि आज भी महावीर भगवान के बाद अगर नाम लिया जाता है तो गौतम गणधर का और उसके बाद अगर किसका नाम लिया जाता हैं तो कुंदकुंद आचार्य का। तो आचार्य पद उनका चालू रहा था। तो वह क्या बताता है? कि वह सदेह गये थे, आहारकशरीर के साथ नहीं गये थे, ख्याल में आया?

देखो हम यह सब आगम के सिद्धान्तों के द्वारा ही समझें। केवल यहां ऐसा कहा इसलिये हम मानते हैं ऐसा नहीं करो भाई। मैं आपसे पूछता हूं, आप बाज़ार में सोना

खरीदने गये तो किसीने बताया यह लो भाई २४ कॅरेट का सोना है। तो आप आंख बंद करके पैसा देकर लायेंगे कि नहीं? या बराबर नक्की करेंगे कि भाई यह सोना सचमुच २४ कॅरेट का है। बिल देना भैया २४ कॅरेट का और वह भी कौनसा होता है न? इन्व्हॉईस क्या होता है? वैसावाला नहीं बिलकुल पक्का बिल चाहिये। ऐसा हम खात्री करते हैं न, वैसे यहां जो बात बतायी है वह भी आगम में लिखी है, बिलकुल खोटी नहीं है। लेकिन वह सच्ची है कि नहीं यह भी तो तपासना हमारा काम है, तो इसलिये क्या देखा हमने? कि जो आहारकऋद्धिधारी छठवें गुणस्थानवर्ती मुनि को तत्त्वों के संबंध में कोई शंका होने पर अथवा क्या है? कि जिनालय आदि की वंदना करने के लिये, तो यह जिनालय की वंदना करने के लिये यह मुनिराज आहारकशरीर के साथ जाते हैं तो क्या आहारकशरीर उनका नंदीश्वर द्वीप जायेगा कि नहीं जायेगा? बोलो पद्मजाताई, जायेगा न? सुलभाताई आप क्या बोलती हैं? *श्रोता: ढाई द्वीप के आगे नहीं जायेगा।* अरे वाह! आपने क्या बताया – ढ़ाई द्वीप के बाहर कोई मनुष्य जा नहीं सकता, है न? तो वह नहीं जायेगा। यह आहारकऋद्धिवाला जो आहारक शरीर है वह भी नहीं जायेगा, तो यहीं के जिनालय की वंदना करने के लिये वे जायेंगे।

अब आगे क्या कहते हैं? कि उनके मस्तक से एक हाथप्रमाण-एक हाथप्रमाण यानी यहां उंगलि से लेकर यहां कोहनी तक, यह एक हाथ ऐसा आर्म पिट तक नहीं, यह दो हाथ है। तो एक हाथप्रमाण स्वच्छ यानी एकदम निर्मल, सफेद, व्हाइट कलर में, और सप्तधातु रहित। हमारा जो शरीर है, सभी मनुष्यगति के जीवों का, वह कैसा है? सप्तधातु सहित है और जो वैक्रियिकशरीर होता है, वह भी सप्तधातु रहित होता है। ख्याल में आया? और यह भी कैसा है? सप्तधातु रहित पुरुषाकार यानी पुरुष के आकार का जैसा जो पुतला निकलता है, उसे आहारकशरीर कहते हैं। तो अभी तक हमने कितने शरीर की बात देखी, बोलो चिंतामणि? *श्रोता: तीन।* तीन कौन-कौनसे? *श्रोता: औदारिक, वैक्रियिक, आहारक।* औदारिक, वैक्रियिक और आहारक ये तीनों शरीर किससे बनते हैं? *श्रोता: आहारवर्गणा से।* आहारवर्गणा से, पक्का? महिलाओं का क्या कहना है, हांजी? *श्रोता: आहारवर्गणा से।* आहारवर्गणा से बनता है, नक्की न?

लेकिन कोई माता एक बहुत गोरे-भूरे बालक को जन्म देगी, तो क्या बोलती है? अरे! मैं इतनी खूबसूरत हूं, तो मेरा बालक भी मेरे जैसा ही है। क्योंकि मेरे जीन्स हैं न

उसमें, ऐसा-ऐसा कुछ। तो बालक को माता ही जन्म देती है, तो हर बच्चा ऐसा ही क्यों नहीं पैदा होता है? ऐसा भी देखने में आता है न कि किसीको एक गोरा बच्चा और एक काला भी हो सकता है कि नहीं? तो अगर वह शरीर मां ही बनाती हो? नहीं-नहीं वह तो ईश्वर ने बनाया है। तो ईश्वर बनाता तो सबको एक जैसा बनाता। लेकिन हमारी मान्यता क्या है? हमने बालक को जन्म दिया है। यहां तो कहते हैं उसका जो शरीर बना है वह तो आहारवर्गणा से बना है और यह जीव क्या मानता है? मेरे जीन्स से बना है। तेरे जीन्स कब से है भाई? हां, यह जो सायंटिस्ट लोग बोलते हैं न? सब उसमें चकमा खा जाते हैं क्योंकि हमें जैन सिद्धान्तों का अभ्यास नहीं है और हमारी मान्यता वैसी की वैसी रह जाती है। कैसी? खोटी-मिथ्या मान्यता रह जाती है।

अब आगे, आहारवर्गणा के बाद दूसरी वर्गणा कौनसी देखी थी हमने? तेजसवर्गणा – तो तेजसर्वणा किसे कहते हैं? तो कहते हैं, **जिस पुद्गल स्कंध से तेजसशरीर बनता है, उसे तेजसवर्गणा कहते हैं**। तो यह तेजसशरीर क्या होता है? यह देखने के लिये फिर हम आगे जाते हैं। पेज नंबर १० पर ३३ नंबर का प्रश्न है, मिल गया सबको? तो कह रहे हैं तेजसशरीर किसे कहते हैं? **औदारिक, वैक्रियिक और आहारक** ये जो हमने देखे थे, जो आहारवर्गणा से बने हैं, **ऐसे इन तीन शरीरों में कांति उत्पन्न करनेवाले शरीर को तेजसशरीर कहते हैं**। यानी हम देखते हैं न? कोई आदमी भले क्यों न वह रंग से काला हो, फिर भी उसके अंदर ऐसी कोई तेज:पुंजता होती है; गोरे लोगों को भी होती है और काले लोगों को भी होती है; तो वह जो कांति उत्पन्न करनेवाला जो कुछ है वह तेजसशरीर है। ख्याल में आया?

यह केवल मनुष्यों की बात नहीं है यह तो मनुष्यों को हम देख सकते हैं, इसके लिये उनका उदाहरण लिया। लेकिन यहां वैक्रियिकशरीर जो है, तो वैक्रियिकशरीर कौन-कौनसे जीवों के होता है? *श्रोता: देव और नारकी।* देव और नारकी, तो नारकियों में भी तेजसशरीर होगा हो और उसमें क्या होता है? और एक बात ऐसी होती है कि उस तेजसशरीर से शरीर में उष्णता होती है, शरीर गरम रहता है। आपको यकीन नहीं है, मैं आपसे पूछूंगा कोई जीव मर जाता है तो साथ में क्या-क्या लेकर जाता है? कुछ नहीं न, पैसा, मालमत्ता, मोटर, गाड़ी, हां कुछ नहीं। कुछ तो भी लेकर जाता होगा न? तो पीछे से

हां बोल रहे हैं और आप ना बोल रही हैं। पीछे मुड़कर देखना वह हां-हां बोल रहे हैं। आप क्या कहती हैं बहन? प्रतिभाताई क्या लेकर जाता है साथ में? *श्रोता: तेजसशरीर और कार्माणशरीर।* तेजसशरीर और कार्माणशरीर। यह जो औदारिकशरीर है या वैक्रियिकशरीर है, वह वहीं पड़ा रहता है। जीव के साथ में क्या जाता है? कार्माणशरीर यानी जो कर्म उसने बांधे हैं, वे कर्म साथ में ले जाता है और क्या ले जाता है? तेजसशरीर ले जाता है। तो आपने गलती से कभी किसी मृत शरीर को हाथ लगाया होगा, तो कैसा लगता है? *श्रोता: ठंडा।* ठंडा! आपने हाथ लगाया है? *श्रोता: हां।* बहुत वीर हो भाई!

तो वह जो तेजसशरीर है जिससे उस शरीर में उष्णता पैदा हुयी है वह चली जाती है और डॉक्टर लोग भी कोई मर गया हो तो जल्दी से जल्दी कभी डेथ सर्टिफिकेट नहीं देते। आजकल तो दो-दो घंटों के बाद देते हैं कि जब ठंडा-ठंडा-ठंडा लगेगा तो हां, अब यह मर गया है ऐसा डिक्लेअर कर सकते हैं। हां, उसको भी गॅरंटी नहीं है कि वह खत्म हो गया कि नहीं। तो हमको क्या देखा कि वह तेजसशरीर है वह तो शरीर में कांति भी उत्पन्न करें और उष्णता भी उसमें होती है। अब जो बाकी की बात है, उसे कल देखेंगे। कोई प्रश्न तो पूछ लेना अभी एक दो मिनट है। हां-हां, बोलो-बोलो, अरे! भाई बोलो।

श्रोता: यह वर्गणा, स्कंध एक ही है, उसमें वर्गणा नाम आया स्कंध क्यों नहीं आया? देखो-देखो पहले आप, हां आपने कहा वर्गणा बोल रहे हैं, बार-बार लेकिन यहां क्या कहते हैं? यह स्कंध कहो या वर्गणा कहो, दोनों का अर्थ यहां एक ही है। उसमें हमने स्कंधों के स्थूलता-सूक्ष्मता की अपेक्षा से भेद किये थे। गये साल आये थे न आप? *श्रोता: नहीं।* हां, इसलिये गड़बड़ी हो गयी। कोई बात नहीं, तो यहां स्कंध यानी वर्गणा, उनसे जो शरीर, भाषा, मन, कर्म आदि बनते हैं इसकी अपेक्षा से उनके भेद बताये हैं। इसलिये उसको आहारवर्गणा यानी यह स्कंधों के ही स्थूल-स्थूल से कम स्थूल, उससे कम स्थूल-सूक्ष्म उससे कम सूक्ष्म-स्थूल, फिर सूक्ष्म और बाद में सूक्ष्म-सूक्ष्म इसतरह से हम लेंगे तो उसको भी वर्गणा कहने में आता है। जिसतरह उसके स्कंध नाम न देते हुये वर्गणा ऐसा नाम दिया है। उसमें कोई गलती है नहीं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

४९. भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माणवर्गणा

कल हमने बाईस वर्गणाओं में से पांच वर्गणाओं को समझने की कोशिश की थी और मुझे विश्वास है कि आप लोगों को पांचों ही वर्गणाओं के नाम याद होंगे। पूछने की आवश्यकता है कि नहीं? है, अच्छा बोलो। तो पहली वर्गणा कौनसी देखी थी कौन बतायेगा? पहली? *श्रोता: आहारवर्गणा,* दूसरी? *श्रोता: तेजसवर्गणा,* तीसरी? *श्रोता: भाषावर्गणा,* चौथी? *श्रोता: मनोवर्गणा,* पांचवीं? *श्रोता: कार्माणवर्गणा।* तो ये जो वर्गणा हैं, इसका दूसरा नाम स्कंध भी है। अभी प्रश्न में पूछा है कि स्कंध के कितने भेद हैं और उत्तर में बताया वर्गणा। अभी आपने यह भी समझ लिया है कि इनको इसी क्रम से हमें क्यों जानना है, क्योंकि जो पहली आहारवर्गणा है वह स्थूल है, ख्याल में आया? उसमें नंबर ऑफ परमाणु कम हैं और जैसे-जैसे आगे-आगे की वर्गणाओं को देखेंगे, तो वे सूक्ष्म-सूक्ष्म होते जाते हैं फिर भी उनमें परमाणुओं की संख्या अधिक-अधिक है। ख्याल में आया?

देखो आपको मालूम होगा कि कोई जीव, मान लीजिये सातवें नरक का जीव है, तो वह सातवें नरक का जीव जो होता है वह मरकर सातवें नरक से ऊपर की छह पृथ्वियों को – सबको भेद कर तिर्यंचपर्याय में आता है, मनुष्यपर्याय में नहीं आता। तो इतना आता है तो यह जो कार्माणशरीर है, जिसकी अभी हमने बात नहीं की है और तेजसशरीर है इन दोनों को साथ में लेकर आता है यानी वे भी उसके साथ में आते हैं। अभी कल हमने देखा था, किसमें? कि औदारिक शरीर की बात की थी, तो औदारिक शरीर में ऐसा बताया गया था, देख लेना आप ३० नंबर का जो प्रश्न है, पृष्ठ क्रमांक ९ पर कि औदारिक शरीर क्या है? कि मनुष्य और तिर्यंच के स्थूल शरीर को, यह स्थूल जो है न, तो स्थूल की हमने बात बोली थी कि हम बाद में बतायेंगे। पहले स्थूल यानी क्या? कि स्थूल जो होता है, यानी देख लीजिये – औदारिक शरीर है, यह स्थूल है; तो किसी भी दीवार में से आर पार जायेगा कि नहीं? ये हाथ की उंगलियां हैं; वे इस दूसरे हाथ में से पेनिट्रेट होकर इधर से उधर जायेगी कि नहीं? तो नहीं जा सकती, आर-पार नहीं हो सकती। ऐसे परमाणुओं का बना हुआ औदारिकशरीर है उसको स्थूल कहा जाता है।

तो स्थूल कहने से ऐसा मत समझना कि मेरे जैसा मोटा होगा। वह स्थूल और हमारे

किसी दुबले-पतले व्यक्ति से कंपॅरिझन करेंगे तो वह उसको तो औदारिक शरीर ही नहीं कहना पडेगा क्योंकि उसका तो पतला शरीर है और इसका तो स्थूल है; ऐसी बात है नहीं, ख्याल में आया? तो यह जो लिखा है, मनुष्य और तिर्यंच के स्थूल शरीर को, स्थूल यानी औदारिकशरीर स्थूल है और वैक्रियिकशरीर सूक्ष्म है। आहारकशरीर और सूक्ष्म है। वैक्रियिकशरीर में हमने देखा है कि वे दीवार से आर-पार जा सकते हैं या अन्य कहीं से भी। दीवार से कहो या लोहे की ऐसी दीवार हो उसमें से भी वह शरीर आर-पार होता है। आपने बहुत सारे पिक्चरों में देखा होगा, सिनेमाओं में, कि कोई भूत बनता है वह दीवार से बाहर निकलता है, वह किसी के शरीर में से आर-पार जाता है, वह तो देखो भाई, मूल बातें तो अपने जैनदर्शन में हैं। उसका विकृतस्वरूप करके अन्यथा जो भी चलता हो चलने दो लेकिन हमें उनसे कोई मकसद नहीं है।

हमें तो इतना ही देखना है कि स्थूल शरीर किसे कहा जायेगा और सूक्ष्म शरीर किसे कहा जायेगा? तो ये स्कंध ही ऐसे होते हैं कि वे पेनिट्रेट होकर, मतलब उसमें से आर-पार निकल जाते हैं तो उनको कहेंगे सूक्ष्म शरीर और औदारिकशरीर जो अपना है या तिर्यंचों का है वह कैसा है? कि झाड़ से आर-पार नहीं जायेगा कोई, तो उसको कहेंगे स्थूल शरीर। बात ख्याल में आ गयी? नहीं आयी? आ गयी, बहुत अच्छा। तो कल यह जो हमने देखा था कि यह आहारवर्गणा किसको कहना? तो उसमें बता रहे थे, यह २४ नंबर के प्रश्न का जो उत्तर है – जो पुद्‌गलस्कंध, कल आपका प्रश्न था न, इधर स्कंध की बात कर रहे हैं और वर्गणा बता रहे हैं। किसीने पूछा था न आपमें से? तो यहां क्या लिखा? जो पुद्‌गलस्कंध (वर्गणा) औदारिक, वैक्रियिक और आहारक इन तीन शरीररूप से परिणमन करता है, इसमें से औदारिकशरीर जो है, वह स्थूल शरीर कहा जायेगा और वैक्रियिक और आहारक जो शरीर हैं वे सूक्ष्म शरीर कहे जायेंगे यानी कभी-कभी क्या होता है अपनी जो कलोक्विअल् लँग्वेज है जिसको हम कहते हैं व्यावहारिक भाषा है, उनमें जो शब्दों का अर्थ है, वैसा ही अर्थ आगम में नहीं होता। हर शब्द का वैसा ही अर्थ नहीं होगा। कहीं-कहीं साम्य होगा लेकिन यहां स्थूल कहने से हमको लगता है कि जो मोटा है और सूक्ष्म कहने से, सूक्ष्म की तो बात बतायी नहीं यह केवल स्थूल की बात की है।

कल हमने क्या-क्या देखा था? औदारिक, वैक्रियिक और आहारकशरीर की बात

देखी थी। उसके बाद तेजसशरीर को भी देखा था। देखो, यह तेजसशरीर की जो बात हमने देखी थी, उसमें क्या कहा है? ३३ नंबर का प्रश्न है, पृष्ठ क्रमांक १० पर है। औदारिक, वैक्रियिक और आहारक इन तीन शरीरों में कांति उत्पन्न करता है, वह कौन है? तो कहते हैं तेजसशरीर है। अभी एक बात मैंने आपको बतायी थी कि इन शरीरों में उष्णता पैदा करना वह भी उसका काम है। आप जानते हैं, कबूतर तो आपने देखा होगा, आपके गांव में कबूतर है क्या? देखा है क्या? तो आप मेरी तरफ देखो, कबूतर को मत देखो। क्या कह रहे हैं? जो कबूतर होता है वह कुछ-कुछ ऐसे धान यानी क्या बोलते हैं जवार, गेंहू, जो भी मिले वह खाता है और ऐसे खाते-खाते क्या होता है? वह कभी-कभी इतना छोटासा पत्थर भी खा लेता है। लेकिन उसके तेजसशरीर की इतनी अधिकता है कि वह पत्थर को भी हजम कर देवे। तो यह जो तेजसशरीर है, वह पाचनक्रिया में भी उपयुक्त है। हम बोलते हैं न, हमारा जठराग्नि जल रहा है, गरम हो गया है, हमको भूख लगी है। भूख लगी है बोलने के लिये बोलते हैं न, जठराग्नि तप्त हो गया है। आपको मालूम है यह शब्द प्रयोग? ख्याल में आया?

तो यह तेजसशरीर की बात हमने कल देखी थी अब उसके बाद उससे सूक्ष्म कौनसे हैं? तो यहां पर देखना – क्वेश्चन नंबर २६, प्रश्न: भाषावर्गणा किसे कहते हैं? मिल गया सबको? तो कह रहे हैं, जो पुद्गलस्कंध यानी वर्गणा शब्दरूप से परिणमित होता है उसे भाषावर्गणा कहते हैं। तो यह तो देखो कितना आसान है। हमने यह भी देख लिया है कि यह बोलने का कार्य कौन करता है? हां भाईसाहब? बोलने का कार्य कौन करता है? आप नीचे मत देखे, मैं आपसे ही पूछ रहा हूं। बोलो हां, बोलो भैया, घबराते क्यों हो, बोल नहीं सकते? बोल सकते हैं, बहुत अच्छी बात है। बोलो-बोलो, बोलने का कार्य कौन करता है? बोलो न, तुम कर रहे हो, मैं सुन रहा हूं। हां? इतना भी नहीं समझते हैं, अरे भैया! ऐसा नहीं चले, यहां आये, तो बोलना पड़ेगा भैया।

तुम बोल सकते हो कि नहीं? इतना तो बोलो, मुंह से बोलो। हां, बोलो-बोलो, हें, हें, हें कर रहे हो अरे! बोलो, मैं बोल सकता हूं। क्या ये बोल सकते हैं मैं आपसे पूछता हूं? हां बोलो, क्या यह बोल सकता है? हां जी, यह तुम्हारे गांव का है न? तो तुम तो जानती होगी कि वह बोल सकता है कि नहीं। अरे भाई! हम पूछ रहे हैं, वह बोल सकता है कि

नहीं, हम बाकी थोड़े ही कुछ बोल रहे हैं आपको। यह खुद बोल नहीं सकता है, तो कौन बोल रहा है? मैं भी बोल नहीं रहा हूं, तो यह आवाज जो निकल रही है, वह क्यों निकल रही है? क्योंकि मेरे होंठ, दांत एक दूसरे को टकरा रहे हैं, जीभ टकरा रही है और इससे वह आवाज़ निकल रही है। देखो, अब मैंने बोला 'अ', 'आ', 'इ', तो यह मैं बोल रहा हूं, न? *श्रोता: नहीं।* नहीं! तो कौन बोल रहा है? *श्रोता: भाषावर्गणा।* भाषावर्गणा, तो यह बोलने का कार्य कौन कर रहा है और हम क्या मानते हैं? अरे! मेरी आवाज इतनी बढ़िया है कि मैं गाऊं तो सब लोग डोलने लगते हैं या भाग जाते हैं; दोनों में से एक कुछ तो होगा न! ऐसा जाकर किसी सिंगर को, किसको? लता मंगेशकर को जाकर मत बोलना तू गा नहीं सकती। वह घर से बाहर निकाल देगी। क्यों, नहीं तो सोनू निगम से मिलकर आना भाई, उसमें क्या है? बात ऐसी है, हम जब यह बात सुनते हैं तो हमारी जो मान्यता है, जो खोटी मान्यता है उसको धक्का पहुंचता है। मैं बोल नहीं सकता? देखो, मैं तो चाहे जितना जोर से बोल सकता हूं। चाहे जितना आहिस्ता बोल सकता हूं। तो मेरी आवाज़ पर कमांड है कि नहीं मेरी? कतई नहीं है।

यह सब काल्पनिक है, कल यहां रात को लाइट गयी थी और लाइट गयी थी इतने में सब लोग बाहर गये थे, तो वहां से दो-चार गुंडे आये, और बंदूक-छुरा वगैरह दिखाया, निकाल पैसा। तो मुझे तो जोर से चिल्लाना था, इच्छा थी, आवाज नहीं निकली। ऐसा होता है कि नहीं? आपको भी कभी हुआ होगा, नहीं हुआ होगा तो देखा होगा, सुना होगा यानी अपनी इच्छा के अनुसार भाषा का परिणमन होता नहीं है और इच्छा नहीं होते हुये भी बोलना होता है। क्यों साहब? इच्छा नहीं थी फिर भी बोला कि नहीं? कोई लोग ऐसे भी होते हैं कि नींद में बड़बड़ाते हैं, तो उनको – ए चुप बैठ! चुप बिठाना पड़ता है यानी इसका अर्थ क्या हो गया कि हम मानते हैं कि यह हमारे कहने के अनुसार यह भाषा पलटती है। यहां तो कह रहे हैं, जो शब्दरूप परिणमते हैं वे पुद्गल हैं। उन पुद्गलों के स्कंधों का नाम क्या है? जोर से बोलना। *श्रोता: भाषावर्गणा।* ख्याल में आया? तो अभी मुझे कहना, हम-तुम तो छोड़ो, तीर्थंकर तो बोलते होंगे कि नहीं? नहीं? तो तीर्थंकर की दिव्यध्वनि नहीं खिरी, यह निमित्त आया न। कौन? गणधर, तो भाषा खिरी। देखो, निमित्त से कार्य होता है कि नहीं, बोलो साहब? अरे प्रभु, पहले तो किसीकी इच्छा से भाषा नहीं निकलती है, ना तीर्थंकर को इच्छा है और ना वे बोलते हैं और हमारी इच्छा है और हम भी नहीं बोलते हैं।

लोग तो कहते हैं, देखो-देखो साहब निमित्त आया नहीं तो कैसे छियासठ दिन, एक नहीं, दो नहीं, छियासठ दिन भाषा नहीं खिरी और गणधरजी आये तब...। यह जो भाषावर्गणा है, जो पुद्‌गलद्रव्य है, जिसमें ज्ञान गुण नहीं है; वह खिरने लगी। अरे वाह! तो उसको ज्ञान हो गया, अभी आ गये, चलो सब तैयारी हो गयी, माइक-वाइक लग गये, चलो चालू करो। देखो, यह वस्तुस्वरूप की हमें पहचान नहीं है, तो हमारी भ्रामक मति कल्पना से हम कुछ न कुछ समझते हैं। एक दूसरों को सिखाते हैं और यह अनादि से ऐसा ही चल रहा है।

यहां तो कह रहे हैं, जो पुद्‌गलस्कंध शब्दरूप से परिणमित होता है उसे भाषावर्गणा कहते हैं। तो यह भाषावर्गणा के लिये कोई शरीर वगैरह होगा कि नहीं? क्योंकि, बाकी की तेजसवर्गणा से, आहारवर्गणा से शरीर बनने की बात की थी, लेकिन यहां कहते हैं भाषावर्गणा से शरीर नहीं बनता है। लेकिन यह बात ध्यान रखना, यह भाषावर्गणा से बनी जो भाषा है न, वह भी दो प्रकार की होती है। एक है अक्षरात्मक और दूसरी है अनक्षरात्मक।

अक्षरात्मक में किसको लेना? तो कहते हैं; जैसे यह हिंदी भाषा है, संस्कृत भाषा है, अर्द्धमागधी भाषा है, प्राकृत भाषा है और गुजराती है, सबको लेना। तो अनक्षरात्मक जो है उस अनक्षरात्मक भाषा में क्या-क्या आता है? कि द्वीन्द्रियों से लेकर पंचेन्द्रियों तक जो जीव होते हैं, जो बोलते हैं, कौन-कौन? दो इन्द्रियवाला बोलेगा कि नहीं? मालूम है आपको दो इन्द्रियवाला बोलता है कि नहीं? आपको मालूम है? देखो, एकेन्द्रियवाले को कौनसा इन्द्रिय होता है? *श्रोता: स्पर्शनेन्द्रिय।* स्पर्शनेन्द्रिय और दो-इन्द्रियवालों को? *श्रोता: स्पर्शन इन्द्रिय और रसना इन्द्रिय।* स्पर्शन इन्द्रिय और रसना इन्द्रिय। तो रसना इन्द्रिय होगा वह केवल खाने का काम करेगा क्या? बोलेगा भी सही न। क्योंकि वह बोलता भी है और मुंह से खाता भी है समझ लो।

तो यहां क्या कह रहे हैं? अनक्षरात्मक की जो बात चल रही है वह अनक्षरात्मक में क्या होता है? द्वीन्द्रिय का जो बोलना है, त्रीन्द्रिय का जो बोलना है, चतुरिन्द्रिय का जो बोलना है, असंज्ञी पंचेन्द्रिय का जो बोलना है, वह कैसा है? अनक्षरात्मक है और यहां कहते हैं कि कई-कई संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव जो होते हैं, इनके भी अनक्षरात्मक भाषा होती है। आपको मालूम है ऐसा कोई संज्ञी पंचेन्द्रिय अनक्षरात्मक बोलनेवाला? हां बहन आप जानती हैं? *श्रोता: बाघ-सिंह।* बाघ-सिंह, बहुत अच्छा। मनुष्य में कोई ऐसा होगा? पल्लवी

आप जानती हैं मनुष्य पंचेन्द्रिय जीव अनक्षरात्मक भाषा बोलता हुआ? हां जी, जोर से। *श्रोता: जिसमें मन नहीं होता।* मन नहीं होगा, लेकिन हम मन की बात नहीं कर रहे अभी यहां पर। भाषावर्गणा की जो बात है, उसको देख रहे हैं। तो अभी हमने देखा था अनक्षरात्मक भाषा द्वीन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के जीवों के होती है। तो मनुष्य में अनक्षरात्मक बोलनेवाले कोई होंगे कि नहीं? हां? *श्रोता: अरिहंत और तीर्थंकर भगवान।* आपका कहना है, जो तीर्थंकर हैं, जिनकी दिव्यध्वनि खिरती है, उनके अनक्षरात्मक ही होती है। तुम्हारा नाम क्या है? जोर से। रिया, तो दो अक्षर हो गये न वे तो, अक्षरात्मक हो गये और ॐ जब कहते हैं वह तो अनक्षरात्मक है, ख्याल में आया? वह उनकी जो दिव्यध्वनि है वह अनक्षरात्मक है, ख्याल में आया?

मुझे आप बताओ यहां बाहर कोई बच्चा रो रहा है, वह गुजराती में रो रहा है, हिन्दी में रो रहा है या मराठी में रो रहा है? बता सकेंगे आप? तो यह जो रोने की आवाज है, जो संकेतात्मक अन्य भी कुछ आवाजें निकालते हैं हम, वे कैसी हैं? तो यह सब अनक्षरात्मक भाषा है। इसलिये संज्ञी पंचेन्द्रिय के भी अनक्षरात्मक भाषा हो सकती है। पहले हमने दो भेद क्या किये थे शब्द के? तो भाषा के यानी ध्वनी के हमने दो भेद देखे थे – अक्षररूप और अनक्षररूप। अनक्षरात्मक भाषा भी दो प्रकार की हैं – एक है प्रायोगिक और दूसरी है वैस्रसिक। बोअर हो रहे हैं क्या? देखो साहब! जिनवाणी को सुनना है तो हमें सही डिटेल में बात सुननी चाहिये, आनंद होना चाहिये, अरे! यह बात तो आज तक मैंने कभी सुनी ही नहीं थी, क्यों नहीं सुनी थी? पढ़ी भी नहीं थी, क्यों नहीं? स्वाध्याय ही नहीं किया था। यह शास्त्रों में लिखा है भाई, मैं कोई अपने घर की बात नहीं बता रहा हूं।

यह देखो, यह मोक्षशास्त्र है, उसके ऊपर पं. श्री. रामजीभाई दोशी ने जो टीका की है। यह रामजीभाई कौन थे, मालूम है? उनको बताने के लिये हमें उनके लड़के से बताना पड़ रहा है। यह अपने ट्रस्टी जो है सुमनभाई दोशी इनके वे पिताजी थे। रामजीभाई की सामने फोटो लगी है, यह देखो, घड़ी के नीचे। उन्होंने यह तत्त्वार्थसूत्र के ऊपर टिका लिखी है और हमारा सौभाग्य ऐसा है कि हमने उनसे मोक्षमार्गप्रकाशक सीखा है। अच्छा लगता है कि आज उन्हींकी पुस्तक को हम रिफर कर रहे हैं। उनका यह मोक्षशास्त्र नामक पुस्तक है, गुजराती है यह, इसके पेज नंबर ३३४ पर यह जो सूत्र २४ वां है, पांचवें अध्याय का।

इसमें यह टीका उन्होंने रची है। तो कह रहे हैं, यह जो अनक्षरात्मक शब्द जो है, उसमें से प्रायोगिक का अर्थ क्या है? किसीके निमित्त से वह बनती है यानी प्रयोग से। अब बतायेंगे वह कैसी होती है। दूसरी है वैस्रसिक। वैस्रसिक कहो या सहज, निसर्गतः कहो। जिसको निसर्गज कहते हैं। यानी नैसर्गिक जिसको हम रेग्युलर भाषा में कहते हैं, जिसको हम इंग्लिश में नॅचरल कहते हैं, तो वह है वैस्रसिक।

जो शब्द उत्पन्न होने में पुरुष निमित्त होता है, पुरुष यानी कोई व्यक्ति, मनुष्य; अब यहां मनुष्य की अपेक्षा से समझा रहे हैं। तो कहते हैं, जो शब्द उपजने में यानी उत्पन्न होने में पुरुष निमित्त होता है, वह है प्रायोगिक। अब कहते हैं, पुरुष की अपेक्षा से रहित स्वाभाविकपने से जो उत्पन्न होते हैं वह वैस्रसिक। अभी आप नसीबदार हैं कि यहां बादल मंडरा रहे थे और हम सोच रहे थे कि थोड़ी देर में मेघ-गर्जना होगी। तो मेघ-गर्जना जो होती है; वह कोई आदमी जाकर उसको या कोई पुरुष जाकर उसको एक-दूसरे से टकराता होगा कि नहीं? जो मेघ-गर्जना होती है वह तो सहज, स्वाभाविक, नॅचरल, नॅचरलि विदाउट अेनिबडी एल्सेस् एफर्टस् होती है। तो वह जो आवाज, शब्द है, वह कैसा है? *श्रोता: वैस्रसिक, बहुत अच्छा!*

अब यह जो हमने प्रायोगिक भाषा देखी है या प्रायोगिक शब्द देखे हैं वे भी चार प्रकार के हैं – १. तत २. वितत ३. घन ४. सुषिर। तो यह क्या होता है फिर से देखेंगे। देखो, प्रायोगिक भाषा के हमने चार भेद देखे न – तत, वितत, घन और सुषिर। यह सुषिर में 'ष' जो होता हैं न, वह षट्कोण का ष होता है, शहामृग का या शहा का 'श' नहीं। तो क्या कहा कि यह जो प्रायोगिक भाषा है वह भी चार प्रकार से बतायी गयी है, कौनसी-कौनसी? तत, वितत, घन और सुषिर। यह प्रायोगिक किसको कहते हैं? कि वह शब्द या वह आवाज उत्पन्न होने में कोई पुरुष-व्यक्ति निमित्त होता है। तो यह तत प्रकार जो कुछ है वह क्या है? तो कहते हैं, जो ढोल बजता है न, तो कोई इन्सान ढोल बजाता है कि नहीं, तो आवाज़ जो निकलती है उसमें वह पुरुष निमित्त है क्योंकि उसके हाथ में जो कोई लकड़ी हो, वह लकड़ी उस ढोल को जोर से पीटे, तो ढोल में से आवाज निकलती है। तो क्या वह लकड़ी उस ढोल के चमड़े का जो कुछ पोर्शन होगा, आजकल प्लॅस्टिक का निकला है, उसको टच करती होगी कि नही, स्पर्शती होगी कि नहीं? क्यों नहीं? बोलो शमा, वह

लकड़ी में और उस ढ़ोल में कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव है।* अन्योन्याभाव है। यह सब हमको लगाना है हो! यह किसी शास्त्र में लिखा हुआ नहीं है। यह हमें अपनी बुद्धि से सोचना है। जो हमने आज तक सीखा है, उसको अप्लाय करना चाहिये और हम जिसतरह से उसको युटिलाइझ करेंगे, अप्लाय करेंगे, तो हमने आज तक गये दो-तीन दिन में जो सीखा है, उसका यहां युटिलाइझेशन है। फिर भी कहेंगे कि जो आवाज़ होने में पुरुष निमित्त है ऐसी जो भाषा है उसको प्रायोगिक कहेंगे।

तो यह अनक्षरात्मकवाली बात है न! तो अनक्षरात्मक में से जो प्रायोगिक है, उसमें जो पुरुष है, जो तबला बजाता है, तो जो आवाज निकलती है, ढोल बजाता है जो आवाज निकलती है, ऐसे आवाज को तत कहते हैं। हां, भाईसाहब ने ऐसा टेबल बजा कर आवाज करके बताया, तो आवाज जो निकाली आपने निकाली न? आपने नहीं, वह भाषावर्गणा का कार्य है। तो ऐसा मत करना, टेलिफोन बज जावे; मैं क्या करूं साहब, वह तो भाषावर्गणा का कार्य है, ऐसी स्वच्छंदता मत करना। यहां इंग्लिश में लिखा है, कोई दूसरी भाषा में लिखवाना साहब, लोगों को इंग्लिश नहीं आती। क्या करें? आवाज करते हैं फटाफट-फटाफट। कितनी आकुलता है, एक घंटे तक चैन से नहीं बैठते हैं। अभी मेरा कोई इम्पॉर्टंट कॉल आवे, आधा ध्यान तो उधर। यहां क्या सिखाया जा रहा है वह सिखानेवाला ही जाने। क्यों, देखो बात ऐसी है, हम नियम लेते हैं। कोई भी नियम लो कि हम रात को भोजन नहीं करेंगे। लेकिन साहब जब तक हम, क्या बोलते है, कोई हमारे विशिष्ट गांव में, अभी मैं औरंगाबाद बोलनेवाला था लेकिन वे लोग नाराज होंगे, इसलिये बम्बई की बात लेता हूं। जब तक मैं बम्बई में रहता हूं, मैं सूर्यास्त के पहले भोजन करूंगा, लेकिन कहीं बाहरगांव जाऊं न, वह तो अपने हाथ की बात नहीं न, जब खिलावे तब खाना पड़ता है।

तो अभी जिसको कहीं खाने की आकुलता है, यह बात आपने भगवान के सामने जाकर नियम लिया है? नहीं-नहीं-नहीं। अरे! भाई देखो आप जानते नहीं हैं, और स्वयं को देखो पंडित कहलाते हो, कोई व्रत लेकर तोडना महापाप है, उससे अच्छा तो हम नियम लेते ही नहीं। लेकिन मैं तो बस रात को साढ़े-सात नहीं, आठ बजे के पहले तो खा ही लेता हूं, रात्रिभोजन त्याग है मुझे। क्यों? बाहरगांव जाऊंगा तो मुझे तकलीफ़ न होवे, इसलिये उतनी छूट है यानी अभी भी पक्का निर्णय नहीं है, आकुलता है, खाने की इच्छा बाकी है।

वैसे ही मैं यहां सारा घर बार छोड़कर आया हूं। कहीं आग लग जावे इसलिये टेलिफोन रखता हूं। कभी आग लगती है और मुझे फ़ोन आता है उसकी आकुलता निरंतर चालू है। अरे! यह तो सुविधा के लिये दिया है, असुविधा के लिये नहीं। आपका टेलिफोन बजता है तो आपका चित्त तो विचलित होता ही है, बाकी सारे दयालु लोगों को लगता है अरे! इसके घर में...। हम यह नहीं जानते कि हम कितना अंतराय कर्म बांध रहे हैं। यह बात बोलने की आवश्यकता नहीं है लेकिन आज नहीं बोलूंगा तो कब बोलूंगा? अरे! हम यहां आये हैं, शांति से अपने स्वरूप को समझने की कोशिश कर रहे हैं और इसमें ऐसा व्यवधान? दो-दो मिनट में भाग जाते हैं बाहर, क्यों क्या है? वह क्या है व्हायब्रेशन, क्या होता है, इधर टूररर-टूररर-टूररर हो गया तो गये भागे, क्या हो गया? देखो, इनके अपलक्खन। गुजराती शब्द है हो अपलक्खन, राम लखन तो बराबर याद आता है। लेकिन लक्खण कहने से समझमें नहीं आता, अपलक्षण-कुलक्षण। भाई, तुम यहां जिनवाणी सुनने बैठे हो या टेलिफोन कॉल सुनने बैठे हो, नक्की तो करो। हमारे नेमाकाका तो बोलते थे 'अभागा', ऐसा हमको बोलते थे, आवी तो तारी पात्रता – ऐसा तो मैं नहीं बोलता हूं। ख्याल में आया? लेकिन बोले बिना रहता नहीं हूं। आप आज मानो, कल मानो यह माने बिना स्वयं का उद्धार नहीं होना है।

अब आगे, अपनी बात कौनसी चल रही थी? ढोल बजाने की, वही तो बजा रहा हूं मैं। यह जो है तत, वह क्या है? कि नगाड़ा, ढोल आदिकी जो कुछ आवाज़ निकलती है, उसमें पुरुष निमित्त होता है ऐसी भाषा को, अनक्षरात्मक जो आवाज़ है, शब्द है, उसको कहेंगे 'प्रायोगिक' और उसमें से 'तत' जो प्रकार है उसको हमने देखा। अब उसके बाद कहते हैं वितत। वितत का अर्थ ऐसा है कि जो तारवाले वाद्य होते हैं न, जैसे एकतारी होती है, तंबोरा होता है, व्हायोलिन होता है यह सारे क्या है? वितत, उसमें से भी आवाज़ निकलती है न, तो वह क्या है? वितत।

तीसरा क्या है? घन। घन यानी क्या है? वह तो हम बहुत बार करते हैं। मंदिर में जाते हैं, सब लोग शान्ति से भगवान का नाम ले रहे हैं, अपने स्वरूप में गुप्त होने की कोशिश कर रहे हैं और यह आकर ठननन... घंटा बजाते हैं। *श्रोता: देव को जगाते हैं, भगवान को जगाते हैं।* हां, साहब, भगवान को जगाते हैं? अरे! प्रभु हमारे भगवान तो सोते

ही नहीं, समझो तो सही। क्योंकि नींद जो होती है न, हां जी? *श्रोता: छठे गुणस्थान तक होती है।* हां छठे गुणस्थान के बाद..., इसके लिये देखो ये रोज सुबह 'जयधवला' सीखने आते हैं, चुप बैठा नहीं जाता है, तुरंत बोल देते हैं कि छठे गुणस्थान के बाद नींद नहीं होती है और हम जो कह रहे हैं यहां सातवें गुणस्थान में गये, तो वह नींद में नहीं जाते मुनिराज और यहां आप लोग जो बैठे हैं वे नींद में जाते हैं। तीर्थंकरों को कहो या अरिहंतों को कहो, नींद नहीं होती और भगवान को हम जागृत करते हैं यह कहना तो बराबर नहीं है, असलियत का तो हमें पता लगे न। ख्याल में आया? तो यह जो क्या बोलते हैं घंटनो आवाज होय, उसको कहते हैं घन।

अब इसके आगेवाला कौनसा रह गया? सुषिर। यह सुषिर जो होता है, वह सुषिर यानी जो बांसुरी होती है या जो आपको क्या बोलते हैं या शंख आदि जो होता है या सनई आदि जो होती है इसमें से आवाज़ निकलती है उसको कहेंगे सुषिर। इसतरह से हमने यह भाषावर्गणा का कार्य देखा। अभी आप जाकर बिस्मिल्लाखां को बोलेंगे कि आप कुछ नहीं करते, यह तो भाषावर्गणा का कार्य है, उसको ऐसा कहने से आपको पागलखाने में दाखिल किया जायेगा। तो बाहर जाकर ये शब्द मत बोलना; यह तो अपने लिये रखना कि ऐसा जो हमें महा-भयंकर अभिमान है कि मैं बहुत अच्छा गाता हूं, मैं बहुत अच्छा तबला बजाता हूं, मैं बहुत अच्छा व्हायोलिन बजाता हूं, यह जो कुछ है यह तो पुद्गल का कार्य है और उस पुद्गल के कार्य में मैं निमित्त हूं और निमित्त उसीको कहते हैं कि जो स्वयं कार्यरूप तो नहीं परिणमें, यह पुरुष जो है वह तो उस आवाजरूप न परिणमें, लेकिन आवाज की उत्पत्ति होने में अनुकूल होने का आरोप जिस पर आ सके उसको निमित्त कहेंगे। ख्याल में आया?

देखो जो-जो बातें हम सीखते हैं, उन बातों को हम जब अन्य बात सीखते हैं, उसके ऊपर अप्लाय करने को आना चाहिये और उस ऑप्लिकेशन के लिये जो परिभाषायें दी गयी हैं, वह बार-बार सुने, बार-बार पढ़े तो हमें वे याद हो जाती हैं। तोते की माफक याद करने में कोई मजा नहीं है। हम वह बात एक बार समझ गये, तो दुबारा उसको याद करने की गरज ही नहीं है कि निमित्त किसे कहते हैं? बोलो चिंतामणि? *श्रोता: कार्य की उत्पत्ति होने में अनुकूल होने का आरोप जिस पर आ सके उसे निमित्त कारण कहते हैं।* अच्छा, पहले एक सेन्टेन्स रह गया। जो पदार्थ स्वयं तो कार्यरूप न परिणमें..., ये हमारे चिंतामणि

साहब आगामी पंडित होनेवाले हैं। कुछ दिन के बाद यहां ही बैठकर आपको सुनायेंगे। क्यों, टोडरमल स्मारक के विद्यार्थी हो न भाई? तो हमारा तो पूरा हक बनता है उनको पूछने का। नहीं बनता है? तो क्या कह रहे हैं, जो पदार्थ यानी जो द्रव्य स्वयं तो कार्यरूप न परिणमें लेकिन कार्य की उत्पत्ति होने में अनुकूल होने का आरोप जिस पर आ सके उसे निमित्त कारण कहते हैं, निमित्त कहते हैं। जो भी आपको कहना है।

तो यहां जो हम देख रहे हैं यह प्रायोगिक शब्द के चार प्रकार के जो कोई विविध आवाज हैं उसमें पुरुष निमित्त है, वह पुरुष आवाज करता नहीं है, ख्याल में आया? यह हम भाषावर्गणा की बात देखते हुये अभी हम आगे बढ़ेंगे। यह क्या बात हो गयी है? भाषावर्गणा किसे कहते हैं? पेज नंबर ९ आप देख लेना। अभी क्या कह रहे हैं? देखो, जो पुद्गलस्कंध यानी वर्गणा शब्दरूप से परिणमित होता है उसे भाषावर्गणा कहते हैं। जब इतनी बात हमारी समझ में आयी तो मैं भाषा का कर्ता हूं, ऐसा मानना रहेगा कि छूट जायेगा? पक्का, हमारे बड़े भाईसाहब कहते हैं छूट जायेगा, बहुत अच्छी बात है। अब देखते हैं मनोवर्गणा किसे कहते हैं? क्वेश्चन नंबर २७।

तो कह रहे हैं, **जिस पुद्गलस्कंध यानी वर्गणा से अष्टदल कमल के आकाररूप द्रव्यमन की रचना होती है उसे मनोवर्गणा कहते हैं।** देखो-देखो, क्या बताना चाहते हैं? जो पंचेन्द्रिय जीव है, कैसे पंचेन्द्रिय जीव? संज्ञी पंचेन्द्रिय। संज्ञी समझते हैं, हिंदी में संज्ञी (संगी) कहते हैं, असल शब्द तो संज्ञी (संद्नी) जो संस्कृत से निकला है और गुजराती लोग संग्नी कहते हैं, बराबर बहन? *श्रोता: संग्नी।* संग्नी, वही संग्नी कह रहा हूं न मैं, वह मनसहित संग्नी, चलो, संज्ञी – मनसहित जो होते हैं और जो मनरहित होते हैं वे असंज्ञी; तो जो संज्ञी जीव होते हैं यानी ये संज्ञी जीव सिर्फ पंचेन्द्रियों में ही होते हैं; एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक के जीव संज्ञी होंगे ऐसा कभी नहीं होगा। देखो, यह बात बहुत मामूली है फिर भी हमें ध्यान में रखनी है क्योंकि पांच इन्द्रिय तो है, यानी पांच इन्द्रिय जीवों के होते हैं अलग-अलग। एक एकेन्द्रिय जीव होता है, एक द्वीन्द्रिय होता है, एक त्रीन्द्रिय होता है, एक चतुरिन्द्रिय होता है और एक पंचेन्द्रिय होता है। इनको नियम से, क्रम से, एकेन्द्रिय को स्पर्शनेन्द्रिय ही होगा, जो द्वीन्द्रिय जीव है उसको स्पर्शनेन्द्रिय और कर्णेन्द्रिय नहीं होगा। तो दूसरा इन्द्रिय कौनसा है ॠतु? बाहर बैठते जाओ, यहां मत बैठो, यहां बैठकर हमारे

ऊपर मेहरबानी नहीं चाहिये। यहां बैठना है तो ध्यान देना चाहिये। तुम जिनवाणी का अपमान कर रही हो बेटा।

क्या कहा मैंने? देखो, हमारे जो पंडित कैलाशचंदजी थे न, वे तो हाथ में चॉक लिये बैठते थे; वे हैं अपने पवनकुमारजी अलीगढ़वालों के पिताजी। वैसा कोई आदमी सोता हुआ दिखायी दे, ध्यान नहीं देता हो, तो ऐसा बराबर चॉक फेंकते थे और गोटी नेम ऐसा था कि उसीको लगता था, अन्य किसीको नहीं लगता था। ऐसा इन बच्चों को हाथ में छड़ी लेकर बैठना चाहिये। आप हमारे पर, आपके माता-पिता पर मेहरबानी नहीं कर रहे हो, समझ में आया? तुम्हें ध्यान देना चाहिये, ध्यान देकर अपना कल्याण करना चाहिये। आप बैठकर हमारा कल्याण नहीं कर रहे हैं।

क्या बात हो रही थी? जो दो इन्द्रियवाले जीव हैं, उन द्वीन्द्रिय जीवों को नियम से स्पर्शनेन्द्रिय और रसनेन्द्रिय होगा। त्रीन्द्रिय जीवों को? स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और घ्राणेन्द्रिय होगा। चतुरिन्द्रिय को? *सभी श्रोता: स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय और चक्षुइन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीवों को?* स्पर्शनेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय और कर्णेन्द्रिय होगा और जो संज्ञी जीव है वह पांच इन्द्रियों से सहित होते ही हैं और उनके मन भी होता है।

तो यह जो मन होता है, तो यहां मन की जो बात चल रही है, तो वह मन जो द्रव्यमन है, उसकी बात कर रहे हैं यानी जो पुद्गल से बना है उसकी बात यहां बता रहे हैं। क्या कह रहे हैं? देखो, मनोवर्गणा किसे कहते हैं? कह रहे हैं, जिस पुद्गलस्कंध (वर्गणा) से अष्टदल कमल के आकाररूप द्रव्यमन की रचना होती है। यानी क्या है? अष्टदल यह शब्द थोड़ासा कुछ लोगों को तकलीफ देनेवाला है, उसका अर्थ हम समझते हैं। अष्ट यानी आठ, दल यानी पंखुड़ी यानी पेटल। यह कमल जो होता है, इसतरह से आठ पंखुड़ीवाला होता है; तो उसको कहते हैं अष्टदल कमल के आकार। जिसतरह से आठ पंखुड़ीवाला कमल होता है, वैसा यह द्रव्यमन होता है और यह हृदय के बाजू में कहीं होता है; लेकिन वह इतना सूक्ष्म होता है कि आज तक किसी कार्डिऑलॉजिस्ट को, जो हार्ट का ऑपरेशन करता है न, उसको दिखायी नहीं दिया है क्योंकि हमने क्या देखा था? आहारवर्गणा स्थूल है, उससे सूक्ष्म तेजसवर्गणा है। वह तो हम स्पर्श से – अनुमान से जान सकते हैं। यह तो हम पांचों इन्द्रियों से, हम आहारवर्गणा से बने औदारिकशरीर को समझ सकते हैं। फिर

उसके बाद भाषावर्गणा से बने शब्द को वह तो कान से सुन सकते हैं बस और उसके बाद यह मनोवर्गणा, उससे बना हुआ द्रव्यमन भी किसी भी इन्द्रियों से ग्राह्य नहीं होता है। ग्राह्य यानी ग्रहण यानी जानने में नहीं आता है, लेकिन वह है। है यह बात हमें किसने बतायी है? तो सर्वज्ञ भगवान ने हमें यह बात बतायी है और सर्वज्ञ का कथन कभी झूठ नहीं हो सकता।

अभी उसकी कारणमीमांसा करने की गरज़ नहीं है क्योंकि वे वीतरागी तो हैं ही, सर्वज्ञ भी हैं। तो उन्होंने जो बात बतायी है कि यह जो मनोवर्गणा है उससे द्रव्यमन बनता है, उसके निमित्त से जीव जो मन का कार्य करता है। तो मन का कार्य क्या होता है? मन किसमें निमित्त है मालूम है किसीको? हां बोलो। *श्रोता: सम्यग्दर्शन में।* सम्यग्दर्शन में, अच्छा, बहुत अच्छा। आप क्या कहती है जयश्रीताई? *श्रोता: हित-अहित का विचार करने में।* विचार करने में; शुभभाव करूं या अशुभभाव करूं ऐसे विचार करने में? देखो, अब आपके पास तो अभी है नहीं, लेकिन मैं इसमें से ही पढ़ कर बताता हूं। क्योंकि देखो, मतिज्ञान किसे कहते हैं? यह आपके पास नहीं है, पेज नंबर १६ पर है, जिनके पास यह पुस्तक है वह देख लीजियेगा, १६ पृष्ठ पर ८४ नंबर का प्रश्न है कि मतिज्ञान किसे कहते हैं? उसमें दूसरा जो पॉइंट है उसको हम देखते हैं। इन्द्रिय और मन जिसमें निमित्त हैं ऐसे ज्ञान को मतिज्ञान कहते हैं। तो यह मन जो होता है यह ज्ञान होने में निमित्त है। ख्याल में आया?

हम तो बहुत बार ऐसा समझते हैं कि हम तुम तो सोच-सोच कर शुभभाव करते हैं यानी अशुभभाव तो बाय चान्स आते हैं लेकिन सोच-सोच कर तो शुभभाव करते हैं। क्यों मणिभाई? आपने बहुत सोचा और पहले नक्की किया कोई मेरे साथ आवे या नहीं आवे, लेकिन मैं तो शिबिर में अवश्य जाऊंगा ही जाऊंगा। तो हमने ऐसा सोचकर शुभभाव किया इसलिये तो आये कि नहीं हम? तो हम ऐसा ही मानते हैं कि शुभभाव करने में यह मन निमित्त है। लोगों का यही प्रश्न है, कौनसा? कि यह जो निगोदिया जीव है उसके मन होगा कि नहीं होगा? निगोदिया जीव को मन होगा कि नहीं? क्या नाम मैं भूल गया तुम्हारा? दीदी का नाम क्या है? पूजा दीदी, हां बोलो-बोलो, जोर से बोलना बेटा। *श्रोता: पता नहीं।* पता नहीं, बहुत अच्छा, देखो, यह बात मुझे बहुत अच्छी लगी, नहीं पता हो तो नहीं आता

ऐसा बोलना, उसमें क्या है। मैं आपको इसलिये बता रहा हूं क्योंकि आप बच्चों को सिखाती है न, तो तुम्हें भी यह बात समझ में आनी चाहिये। तो कहते हैं, यह निगोदिया जीव है वह तो एकेन्द्रिय जीव है। एकेन्द्रिय को मन होगा कि नहीं होगा? तो क्या सोच-सोचकर निगोद में से बाहर निकलते होंगे, उनको तो सोचने के लिये मन है नहीं। तो हम क्या मानते हैं, शुभ या अशुभभाव करने में मन निमित्त है, तो निगोद में से जीव बाहर कैसे निकलते हैं? तो हम आपसे ऐसा प्रश्न पूछते हैं कि कोई जीव निगोद में जाता है तो कौनसे परिणाम करने से जाता होगा? कहो साहब, *श्रोता: अशुभभाव से।* अशुभ परिणाम करने से और अशुभभाव करते रहो, करते रहो, करते रहो तो अधिक से अधिक कितना काल कर सकता है कोई जीव? हां, पाटनी साहब, आपने हाथ उठाया ऊपर। नहीं? अधिक से अधिक अंतर्मुहूर्त।

हमने जब देखा था शुद्धोपयोग और अशुद्धोपयोग, अशुद्धोपयोग के दो भाग देखे थे एक शुभोपयोग और एक अशुभोपयोग। कोई भी जीव शुद्धोपयोग या शुभोपयोग या अशुभोपयोग में भी एक अंतर्मुहूर्त से अधिक काल तक नहीं रह सकता है, वह अशुभ में से शुभ में अवश्य जायेगा, शुभ में से अशुभ में अवश्य जायेगा, उसके अशुभ की अधिकता है फिर भी वह शुभभाव करता है क्योंकि उसके चारित्र गुण का परिणमन अन्य गुण से नहीं होता है। चारित्र गुण का परिणमन होने में ना ज्ञान गुण निमित्त है, ना श्रद्धा गुण निमित्त है। चारित्र गुण स्वयं का परिणमन करने में स्वतंत्र है। तब वह अशुभ में से जब शुभ परिणाम करेगा..., अरे! आपको मालूम नहीं है वहां से कोई बादर निगोद में से निकलकर एकाध जीव डायरेक्ट मनुष्य में आता है और उसी भव में मोक्ष जा सकता है और जो-जो, मोक्ष जाते हैं, उनको नियमरूप से उस अंतिम मनुष्यभव में वज्रवृषभनाराच संहनन होता है। देखो कैसे कर्म बांधे, कहां? निगोद में।

अरे! उसके मन नहीं तो वह क्या करता होगा? क्या करता है? शुभ-अशुभभाव करता है। निगोद में क्यों गया? अशुभभाव करने से गया। निगोद से बाहर क्यों आया? शुभभाव से आया। उसमें मन की कहां जरूरत है लेकिन मन तो ज्ञान में निमित्त है, हित-अहित का विचार करने में निमित्त है, ख्याल में आया? तो यहां क्या बता रहे हैं देखो? कि यह जो द्रव्यमन है वह इतना सूक्ष्म होता है, यहां अपने हृदय के आसपास में वह होता है

और वह किसी को आज तक दिखा नहीं है। लेकिन अभी हम यहां बैठे-बैठे हमारे घर में हमारे बच्चे कैसे होंगे, सोच तो सकते है कि नहीं? ज्ञान चल रहा है न, कि अरे! अभी तो ऊपर बादल छाये हैं तो अभी तो बारिश होगी। तो हम यहां सोचते हैं न, वह मन से सोचते हैं। तो यह कार्य जो है यह मन का है और मन हमेशा ज्ञान में निमित्त है। मन से कोई जीव शुभ या अशुभ परिणाम करता नहीं; नहीं तो एकेन्द्रियादि मनरहित जीवों को शुभाशुभ भावों से रहित मानना पड़ेगा। हम मानते हैं अशुभभाव तो जीव को आ जाते हैं और शुभभाव तो वह जान बूझकर करता है। ऐसा होता होगा? ऐसा मानता है लेकिन ऐसा बिलकुल है नहीं।

तो अभी अपनी बात क्या हो रही थी? यह जो मनोवर्गणा है, यह हमने पहले देखा था कि सबसे बड़ा जो है – मतलब स्थूल जो है वह आहारवर्गणा है, उससे सूक्ष्म है वह तेजसवर्गणा, उससे सूक्ष्म है भाषावर्गणा और उससे सूक्ष्म है वह मनोवर्गणा। तो इस मनोवर्गणाओं के परमाणुओं से वह द्रव्यमन बना है जो कि ज्ञान में निमित्त है, जानने में निमित्त है। अब आगे, इस बात में किसी को कोई शंका है तो पूछ लेना हो, क्योंकि यह विषय थोडा अलगसा है तो आपको कोई प्रश्न हो तो पूछो, नहीं तो हम आगे बढ़ेंगे।

है किसी का प्रश्न? बहुत अच्छा, आपका प्रश्न ऐसा था कि आप २८ नंबर का प्रश्न कब पढ़ोगे? पढ़ रहा हूं। प्रश्नः कार्माणवर्गणा किसे कहते हैं? **जिस पुद्गलस्कंध यानी वर्गणा से कार्माणशरीर बनता है उसे कार्माणवर्गणा कहते हैं।** तो यह जो कार्माणवर्गणा है जो पांच वर्गणाओं में से अधिकतम सूक्ष्म है, इससे क्या बनता है? तो कहते हैं कार्माणशरीर बनता है। अभी यहां कार्माणशरीर के बारे में क्वेश्चन नंबर ३४ देखना साहब, पेज नंबर १० पर। तो क्या लिखते हैं वहां पर? कि **आठ कर्मों के समूह को कार्माणशरीर कहते हैं।**

इन आठ कर्मों के नाम कौन नहीं जानता है? नहीं तो सब जानते होंगे और मैं उनके नाम बताते जाऊं तो कोई मजा नहीं है न। तो जो आठ कर्मों के नाम जानते नहीं हैं वे हाथ उठाये। बहुत अच्छा और आप भी नहीं जानते आठ कर्मों के नाम? आप भी नहीं जानते, बहुत अच्छा। अरे! बहुत हैं लोग जो नहीं जानते, वाह-वाह, बहुत अच्छा। तो मेरे बोलने से कुछ फायदा हो जावे न। देखो, आठ कर्म जो हैं, इन आठ कर्मों को क्यों जानना है साहब?

क्योंकि उसरूप मैं नहीं हूं और इन आठ कर्मों का नाश करके ही सिद्धत्व प्राप्त होता है। तो जिन्हें हमें जीतना है, जिन्हें हमें नष्ट करना है उनके नाम तक हम नहीं जानेंगे, तो क्या आंख बंद करके तलवार चलानी है क्या? कर्म नष्ट करने हैं न हमको? काटने हैं न? तो कम से कम नाम तो समझें क्या होते हैं? वह तो हमारी आंखों से दिखनेवाले नहीं हैं क्योंकि मनोवर्गणा नहीं दिख रही है तो, तेजसवर्गणा तो दिखती है? वह भी सूक्ष्म है, तेजसवर्गणा से बना तेजसशरीर भी सूक्ष्म है लेकिन उसके निमित्त से औदारिकशरीर में आंखों से वह कांती दिखती है स्पर्श से उष्णता जानने में आती है। यह मनोवर्गणा भी नहीं दिखती और यह कार्माणवर्गणा तो उससे सूक्ष्म है। फिर भी हम इतने अच्छे हैं कि हम तो उन कर्मों का बहुत सहारा लेते हैं।

हमने नेमिचंद से पूछा क्यों साहब रात के लेक्चर में नहीं थे? साहब मेरे यहां क्या करें? अंतराय कर्म आड़ा आया। क्यों साहब? अरे! मेहमान आये हमारे गांव के उनको देखना पड़ा। तो इनको अंतराय कर्म दिखता है; और यहां तो बोल रहे हैं कि वह सूक्ष्म है; कोई इन्द्रियों से नहीं दिखता है। तो फिर उनके नाम तो हम देखेंगे। देखो, मैं बोलूंगा, आप जानते हैं यह भी मैं जानता हूं फिर भी आप बोलेंगे तो मुझे अच्छा लगेगा। मैं पहले एक-एक नंबर बोलता हूं। ज्ञानावरण। *सभी श्रोता: ज्ञानावरण।* दर्शनावरण। *सभी श्रोता: दर्शनावरण।* मोहनीय। *सभी श्रोता: मोहनीय।* अंतराय। *सभी श्रोता: अंतराय।* देखो, शास्त्रों में अलग तरीके से इसका विभाजन किया है, लेकिन इन चारों को घातिकर्म कहते हैं और अन्य जो चार हम बोलने जा रहे हैं उनको अघातिकर्म कहते हैं। इसलिये हमने अंतराय को इधर लिया। किसमें? घातिकर्म में। तो फिर से मैं बोलूंगा, अभी बोलने की आवश्यकता नहीं है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय। ये सब कौनसे कर्म हैं? इन सबका मिलकर कौनसा एक नाम कहा था? घातिकर्म। यह बात ख्याल में आयी?

अब अघातिकर्म कौनसे हैं? कि आयु, बोलो। *सभी श्रोता: आयु।* नाम। *सभी श्रोता: नाम।* गोत्र। *सभी श्रोता: गोत्र।* और वेदनीय। *सभी श्रोता: वेदनीय।* यह जो आयु, नाम, गोत्र, और वेदनीय कर्म जो हैं, इनका एक नाम है अघातिकर्म। तो यह घातिकर्म और अघातिकर्म का क्या अर्थ है? वह अभी हम नहीं सिखायेंगे और चाहो तो सिखायेंगे। यह जो है, जीवों के जो गुण हैं उनको घातने में निमित्त है इसलिये उनको घातिकर्म कहते हैं; यह भी

उपचार से कहा गया है; वास्तव में कोई गुण को घातते ही नहीं; लेकिन वह जो कोई पर्याय में ओछप आती है, कमीपना आता है; वह इन कर्मों के निमित्त से होता है। लेकिन कहने में आता है कि गुणों को घातता है। अब दूसरी कौनसी बात है? अघातिकर्म वे जीवों के गुणों को या पर्यायों को घातते नहीं हैं, इसलिये उनका नाम क्या है? अघातिकर्म। तो ये चार और ये चार आठ कर्म हैं।

देखो, यह ऐसी बात है, आपको एक नयी बात बताना चाहता हूं। एक समय में यह जीव जो कोई परिणाम करता है, अभी तो हम मिथ्यादृष्टि की बात लेते हैं, तो जो कोई परिणाम करता है तो एक समय में अनंत कर्मपरमाणुओं को ग्रहण करता है। कितने? *श्रोता: अनंत।* उसको कहते हैं एक समयप्रबद्ध यानी एक समय में 'प्र' यानी विशिष्ट प्रकार से, बद्ध यानी बंधना। उसको एक समयप्रबद्ध कहते हैं और इसमें वह अनंत परमाणुओं को ग्रहण करता है यह तो बहुत स्थूल कथन हो गया, अनंत कार्माणवर्गणाओं को ग्रहण करता है। यह वर्गणा जो होती है, वह अनंत परमाणुओं का एक स्कंध होता है।

तो यहां क्या कह रहे हैं, कि यह अनंत परमाणुओं को जो ग्रहण करता है उसको एक समयप्रबद्ध कहते हैं और ये कर्म जो एक समय में बांधे हैं, वे जो आत्मा के असंख्यात प्रदेश हैं उन असंख्यात प्रदेशों में ईक्वलि स्प्रेडआउट होते हैं। यानी ज्ञानावरण कर्म है तो ज्ञान को आवरण डाले। तो ज्ञान कहां रहता है? तो जीवद्रव्य के संपूर्ण भागों में रहता है और उसकी संपूर्ण अवस्थाओं में रहता है। तो यहां तो हमें भाग (क्षेत्र) देखना है केवल। तो यह संपूर्ण भागों में यानी आत्मा के असंख्यात प्रदेश हैं, उन असंख्यात प्रदेशों पर यह ज्ञानावरण कर्म पूरा-पूरा ऐसा छा जाता है, कहो या ऑक्युपन्सी उसकी उसतरह से होती है। इसतरह हमने क्या देखा? कि भाई आठों ही कर्म आत्मा के असंख्यात प्रदेशों में व्याप्त हो जाते हैं, पसरते हैं, तो उसको कहेंगे कार्माणशरीर।

अभी हमने क्या देखा था? देखो, कार्माणशरीर किसे कहते है? आठ कर्मों के समूह को कार्माणशरीर कहते हैं। ये सब आठों कर्म एक साथ हैं, फिर भी वे भिन्न-भिन्न हैं। तो अभी यहां तक तो आये हैं, अब चलो पीछे। अभी हमने देखा था कार्माणवर्गणा किसे कहते हैं? तो जिस पुद्‌गलस्कंध से यानी वर्गणा से कार्माणशरीर बनता है उसे कार्माणवर्गणा कहते हैं। अभी हमारी और एक मान्यता ऐसी है कि हमें शुभभाव करने चाहिये। क्यों

साहब? शुभभाव करेंगे तो हमें सातावेदनीय कर्म बंधेगा और अशुभभाव करेंगे तो असातावेदनीय कर्म बंधेगा। तो उससे क्या होगा? हम सातावेदनीय कर्म बांधेंगे तो हमें अच्छे संयोग मिलते हैं; रहने के लिये बहुत अच्छा बंगला मिलता है; मोटर गाड़ी मिलती है; नौकर-चाकर मिलते हैं। हम ऐसा मानते हैं कि कर्मों के कारण यह सब मिलता है और कर्म क्यों बंध रहे हैं? शुभभाव के कारण। तो मैं कहता हूं, यह संयोग जो हमें मिले हैं; यह बहुत बड़ा अच्छा कमरा मिला है, यह बहुत बड़ा अच्छा बंगला मिला है, तो यह बंगला जो है वह कौनसी वर्गणा से बना हुआ है? हां, आप बतायेंगे बहन? प्रतिभाताई, आपके पीछे बहन बैठी हैं न, हां। यह जो बंगला है, मोटर है, पैसा है, जो कुछ है हमारे पास, अच्छे-अच्छे वस्त्र हैं, यह कौनसी वर्गणा से बने हुये हैं? हां जी? *श्रोता: कार्माणवर्गणा से बने हैं।* कार्माणवर्गणा से बने हैं? कार्माणवर्गणा से तो कर्म बनते हैं, कार्माणशरीर बनता है। यह जो हमारे वस्त्र अच्छे-अच्छे, क्या बोलते हैं? बनारसी साड़ी या आप जो बोलें क्या बोलते हैं, अच्छे-अच्छे वुलन के कपड़े और अच्छे-अच्छे घरबार, मोटर, यह सारा कौनसी वर्गणा का प्रॉडक्ट है? *श्रोता: आहारवर्गणा।* आहारवर्गणा और हम क्या मान रहे हैं? कार्माणवर्गणा।

तो कार्माणवर्गणा से आहारवर्गणा का कार्य होगा कि नहीं होगा? हां साहब, दोनों में कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अन्योन्याभाव है और हम तो इतने भोले हैं, तो आप शुभ का निषेध करते हैं, तो क्या हम अशुभ करें? अरे! भैया, तू शुभभाव भी नहीं कर सकता है और अशुभभाव भी नहीं कर सकता है, बोलो। क्या शुभभाव करना, अशुभभाव करना, चारित्र गुण की जो विभाव पर्याय है, वह विभावभाव करना तेरे हाथ की बात है? तेरे हित की बात है? पहले हमारी श्रद्धा में तो यह बात उतरने दो कि इससे ऐसा होता नहीं है, ऐसा श्रद्धान तो कर। जब कोई श्रद्धा की बात कर रहे हैं तब हम तो आचरण में उतर जाते हैं कि हम करें क्या? करें क्या? तो तू पहले वस्तुस्वरूप को समझने की कोशिश कर, तो ही तुझे आगे की बात पल्ले पड़नीवाली है, अन्यथा नहीं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

५०. पुद्गल – बंध के कारण

हमने इसके पहले लेक्चर में पांच शरीर की बात देखी थी। ये पांच शरीर कौन-कौनसे हैं, याद हैं? हां धीमंत, पांच शरीरों के नाम याद हैं? बोलो, *श्रोता: आहारक, वैक्रियिक, औदारिक, तेजस और कार्मण।* हां, तो आपको क्रम से बताना हो तो क्या यह क्रम गलत हो गया? आपने बताया? *श्रोता: आहारक।* तो हमने कौनसा सीखा था? *श्रोता: औदारिक।* औदारिक, वैक्रियिक, आहारक इन तीन शरीरों का कर्ता कौन है? आप कुछ बोल रहे हैं? हां बोलो। *श्रोता: आहारवर्गणा।* हां, किसने बोला? आहारवर्गणा। बहुत अच्छा! देखो हम जो सीखते हैं न उसको हम दोबारा रिपीट करके आगे बढ़ेंगे। तो देखो हम ऐसा मानते हैं कि हमने हमारे बच्चे को जन्म दिया। लेकिन वास्तविक किसको जन्म दिया? पुद्गल को या आत्मा को? दोनों ही तो अनादिअनंत हैं और पुद्गल को तो हम जन्म दे ही नहीं सकते हैं, कोई नया थोड़े ही पैदा हुआ है? यह तो सहज ऐसा निमित्त-नैमित्तिक संबंध है कि उस जीव के जैसे परिणाम उसने पूर्वभव में किये थे, वैसी आयु बांध कर आया है, तो वह यहां पैदा हुआ। पर्याय की अपेक्षा से पैदा हुआ और द्रव्य की अपेक्षा से तो वह अनादिकाल से है और अनंतकाल तक टिकनेवाला है।

देखो, यह जो हम देखते हैं तो एक छोटासा प्रश्न बाकी रहता है। एक साथ एक जीव के अधिक से अधिक और कम से कम कितने शरीर हो सकते हैं? फिर से, हां आप बतायेंगी? बोलो। *श्रोता: कम से कम दो और अधिक से अधिक चार शरीर हो सकते हैं।* बहुत अच्छा! देखो, इसने यह बताया है कम से कम दो शरीर और अधिक से अधिक चार शरीर हो सकते हैं। तो यह अधिक से अधिक चार शरीर जो हैं इनका उत्तर बिलकुल सही है। तो कोई बतायेगा चार शरीर कौनसे एक साथ हो सकेंगे? धीमंतभाई? *श्रोता: आहारक, औदारिक, तेजस और कार्मण।* हां, आप क्या कहते हैं? आपका कुछ अलग मत है, मैं समझ गया। फिर आप बताइये चार कौन-कौनसे हो सकते हैं? देखो इन्होंने क्या बताया कि चार शरीर होते हैं यह तो बात सही है। वे चार शरीर किसके हो सकेंगे? तो हम मुनि की बात लेंगे। हमारे जो आहारकऋद्धिधारी मुनि है, ऐसे जीव को पहले ओरिजिनलि तो औदारिकशरीर होगा ही होगा, औदारिकशरीर है तो साथ में तेजस और कार्माणशरीर होगा ही होगा क्योंकि वे कर्म के साथ हैं, तेजस भी तो होगा; लेकिन एक ॲडिशनल आहारकशरीर

भी उनके पास है। वह आहारकशरीर तैयार होगा, तो वह शरीर है और साथ में ये तीन शरीर हैं; तो अधिक से अधिक चार शरीर होते हैं।

वैसे कम से कम दो शरीर कब हो सकेंगे, कौन बता पायेगा? हां आप बतायेंगे? कम से कम दो शरीर हैं ऐसे उस छोटी बेटी ने बताया। आप बताओ कौनसे-कौनसे हैं और कब हो सकते हैं? जोर से। *श्रोता: तेजस और कार्माण।* तेजसशरीर और कार्माणशरीर। कब होंगे? *श्रोता: विग्रहगति में।* हां, विग्रहगति में। पूजा, यह विग्रहगति क्या होती है? *श्रोता: बिना मोड़वाली गति।* नहीं, हां बोलो। *श्रोता: जीव एक गति से मरकर अन्य गति में जाता है तब उसके विग्रहगति होती है।* हां आपको ऐसा कहना है जब यह जीव, कोई जीव, अपनी बात नहीं है हो और आपकी भी नहीं। कोई जीव मरकर, मान लो यहां मनुष्यपर्याय में मरा है और देवगति में जा रहा है तो उसको जाने में कम से कम एक समय और अधिक से अधिक तीन समय लगते हैं। तो वह विग्रहगति में जायेगा तो तीन समय तक वह जीव न औदारिकशरीर सहित है और न वैक्रियिकशरीर सहित है। उसके तो सिर्फ तेजसशरीर और कार्माणशरीर हैं। हम जो कहते हैं न कि मरेगा तो साथ में क्या लेकर जायेगा? तो क्या लेकर जायेगा यानी धन, दौलत?

देखो-देखो अभी बहुत मज़े की बात है। आप आये हैं तो मुझे बात याद आ गयी। हम जहां रहते हैं वह सोसायटी है और हमारे यहां एक जो हमारा सोसायटी मेंबर है, वह बहुत पैसेवाला है। लेकिन पैसे देने में नंबर एक, क्या? *श्रोता: कंजूस।* अच्छा! कंजूस है, तो एक आदमी ने गुस्से में आकर उसको बोला कि यहां का चेक अगले भव में काम में नहीं आनेवाला है। चेक बोला हो उसने यानी यहां तो इतनी धन-दौलत है, तो अभी उसका कुछ कर, देकर जा। तो वह साथ में क्या लेकर जाता है? तो यहां का शरीर जो है, प्राप्त शरीर, कौनसा? औदारिकशरीर या तेरा धन, धान्य, पैसा जो भी है, दुकान, मकान जो भी तेरा परिग्रह है, कोई तेरे साथ आनेवाला नहीं है। तो इसलिये कहते हैं कि साथ में कुछ नहीं लेकर जायेगा। ऐसा हम सुनते हैं और ऐसा समझते हैं कि अगले भव में वह अकेला ही जीव जायेगा। लेकिन जीव के साथ क्या-क्या जायेगा? *श्रोता: तेजस और कार्माण।* तेजसशरीर और कार्माणशरीर यानी उसने जो कोई भले-बुरे काम किये हो और उसके कारण उसके जो कोई कर्म उसने बांधे हो, उन कर्मों का स्टॉक लेकर जाता है।

तो हमें यह देखना चाहिये कि जीव कर्म को लेकर जाता है या कर्म उसको जबरदस्ती नरक में लेकर जाता है। क्या होता होगा? हां बोलो? आप-आप? *श्रोता: कर्म लेकर जायेगा।* कर्म लेकर जायेगा क्योंकि उसने बुरे कर्म किये है? कर्म तो ऐसे जीव के कान पकड़कर उसको लेकर जाता होगा न? *श्रोता: शरीर कर्म को लेकर जायेगा।* शरीर कर्म को लेकर जाता है, कौनसा शरीर? *श्रोता: कार्माणशरीर।* कार्माणशरीर। किसको लेकर जाता है? जीव को? हां, वही तो बोलते हैं – कर्म लेकर जाता है; आप कहते हैं कार्माणशरीर लेकर जाता है; दोनों का कहना एक ही है। अभी मैं आपसे पूछूंगा तो हमने जो सिखाया न, उस पर से हमें सही निष्कर्ष पर आना है। हमने क्या सीखा है? जीव और पुद्‌गलद्रव्य, दोनों द्रव्य हैं न? दोनों में कौनसा अभाव है? *श्रोता: अत्यन्ताभाव है।* अत्यन्ताभाव है, अत्यन्ताभाव है न? तो जीव कर्म को लेकर जायेगा या कर्म जीव को लेकर जायेगा? कोई किसी को नहीं लेकर जायेगा। ख्याल में आया? देखो, दोनों द्रव्यों की परिणति कहो या परिणमन कहो, एक साथ होता है। हमने कर्म कितने देखे थे? अनंत-अनंत, अनंत कर्म परमाणु हैं इस जीव के साथ। तो अनंत कर्म परमाणुओं की क्रियावती शक्ति अपनी-अपनी, जुदी-जुदी है; वे एक साथ परिणमन करके जायेंगे। तेजसशरीर के जितने परमाणु हैं वे एक साथ परिणमन करते हुये जायेंगे और जीव भी अपनी क्रियावती शक्ति से वहां जायेगा और हम मानते हैं कि हम इतने कमजोर हैं कि कर्म हमको नरक ले जाते हैं। ख्याल में आया?

देखो हमने ये जो चार अभाव देखे हैं। इन्हें देखने से हमें यह नक्की करना है कि हम जो-जो आगे पढ़ने जा रहे हैं, वह पढ़ने जाते हैं तो यह अप्लाय करने से हमारी बात बराबर ख्याल में आयी है या नहीं? हम प्रश्न पूछते हैं तो लोग नाराज होते हैं लेकिन जब हम प्रश्न पूछते हैं और आप उत्तर देने का प्रयत्न करते हैं, तब यह जरूरी थोड़ी है कि आप सही उत्तर दें। भाई, जिसकी जो मान्यता है उसके अनुसार वह उत्तर देता है। पर वह मान्यता सही है कि नहीं इसको तो हम डिसाइड करते हैं न साहब? ख्याल में आया? तो ऐसा कतई नहीं समझना कि अरे! मेरा उत्तर गलत आयेगा तो! हां क्यों भाईसाहब? आपके मित्रों को कहां छोड़कर आये? महावीर व्यवहारे, अपने यहां सब महावीर ही हैं, हो। वह महावीर भगवान हैं, यहां दूसरे महावीर भगवान हैं और तीसरा कहां गया मालूम नहीं। तो कैसी बात है? यहां कह रहे हैं, जब यह जीव मरकर अन्य भव में जाता है तब उसके

साथ-साथ तेजसशरीर और कार्माणशरीर जाते हैं। तो किसी भी जीव के कम से कम दो शरीर और अधिक से अधिक चार शरीर होते हैं। यह बात समझ में आयी? तो अभी यहां जो हमने देखा है यह जरा हम पुस्तक के माध्यम से देखेंगे तो और अच्छा है।

आपके पास ८ नंबर का पृष्ठ उसमें १८ नंबर का क्वेश्चन है। उसमें लिखते हैं पुद्‍गलद्रव्य किसे कहते हैं? इसका उत्तर क्या है कि **जिसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण ये विशेष गुण होते हैं उसे पुद्‍गलद्रव्य कहते हैं**। यह बात हमने गये साल में देखी थी लेकिन जो बात हम आगे सीखने जा रहे हैं उसके लिये थोड़ीसी पार्श्वभूमि यानी जिसको हम इंट्रोडक्शन कहेंगे, वह आवश्यक है, इसलिये हम उसको देख रहे हैं। क्या कहा? जिसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण ये विशेष गुण होते हैं उसे पुद्‍गलद्रव्य कहते हैं। तो पुद्‍गलद्रव्य के भेद हैं क्या? कितने हैं? तो कहते हैं पुद्‍गल के दो भेद हैं। ये भेद ॲक्चुअलि हमने अपने सहूलियत के लिये बनाये हुये हैं। जैसे आकाशद्रव्य तो एक ही है लेकिन हमने समझने के लिये उसके दो भेद किये हैं। कौन-कौनसे? एक लोकाकाश और एक अलोकाकाश। जीवद्रव्य के भी हमने दो भेद किये हैं। कौनसे? *श्रोता: संसारी जीव और मुक्त जीव।* हां, संसारी जीव और मुक्त जीव। जैसे कि सारे अपने समझने के लिये करते हैं, वैसे कालद्रव्य को भी हमने दो में विभाजित किया है। एक निश्चयकाल और एक व्यवहारकाल। इसतरह से यहां कहते हैं कि पुद्‍गलद्रव्य के भी हमने दो भेद किये हैं – एक है परमाणु और दूसरा है स्कंध। अभी हमने जो स्कंध के भेद देखे हैं न? तो वह जो स्कंध है वह स्कंध कैसा तैयार होता है, उसको आज हम देखने जायेंगे।

तो यहां स्कंध की परिभाषा देखते हैं – २१ नंबर का प्रश्न है। यहां कहते हैं **दो या दो से अधिक परमाणुओं के बंध को स्कंध कहते हैं**। क्या कहा? दो परमाणु जो हैं, सिंगल परमाणु वह एक साथ आवे या दो से अधिक परमाणु उनका बंध हो जावे, तो उसको क्या कहेंगे? स्कंध कहेंगे। तो यह बंध क्या होता है और यह कैसे होता है उसको समझने की हम कोशिश करेंगे। तो अगला प्रश्न है बंध किसे कहते हैं? तो उसका उत्तर देखते हैं – **जिस संबंध विशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को बंध कहते हैं।** यह संबंध विशेष यानी विशेष प्रकार का संबंध होना, इसको क्या कहा? संबंध विशेष। तो अनेक वस्तुओं में यानी यहां क्या बात है? अनेक परमाणुओं

में एकपने का ज्ञान होगा। यह क्या है? देखो, यह एक कागज़ है, ये सब एक-एक कागज़ हैं। लेकिन इन कागज़ों का विशेष प्रकार से बंध हो गया हो तो हम इसको क्या कहेंगे? कागज़ कहेंगे या पुस्तक कहेंगे? हां पुस्तक। तो यह संबंध हो गया किसी प्रकार से। यह तो बहुत स्थूल एक्झाम्पल है। तो यहां कहते हैं कि दो या दो से अधिक परमाणुओं के बंध को स्कंध कहते हैं। यहां तो एक-एक कागज़ में अनंत पुद्‌गल परमाणु हैं लेकिन यहां किसकी बात चल रही है? दो परमाणु या दो से अधिक परमाणुओं की।

अभी हम देखते हैं इनका संबंध कैसे होता है। तो जैसे हम देखते हैं कि हमने शरीर पर तेल लगाया है और हम घर के बाहर जाते हैं। तो बाहर जाते ही क्या होता है? कि बहुत धूल और हवा चलती हो, धूल उड़ती हो तो क्या होगा? वह धूल शरीर को चिपक जायेगी। तो वह किस कारण चिपकती है? तेल में जो चिकनाहट है, स्निग्धता है उसके कारण से। वैसे पुद्‌गलों में भी हमने देखा था; पुद्‌गलों में स्निग्धत्व है क्या? हां जी, आप क्या कहती है पूजा? पुद्‌गलों में स्निग्धत्व होगा कि नहीं होगा? *श्रोता: होगा।* होगा? किस तरह बताओ? पूजा कितनी हैं? एक-एक की ही पूजा करेंगे अभी, बाकी चुप बैठो। *श्रोता: स्पर्श गुण में स्निग्धपणा आता है न? पुद्‌गल के स्पर्श, रस, गंध, वर्ण।* अच्छा स्पर्श गुण की कितनी पर्यायें आपको याद हैं? स्पर्श गुण की कितनी पर्यायें याद हैं? कल याद किया है। *श्रोता: आठ पर्यायें हैं।* आठ पर्यायें हैं। उसमें से हलका, भारी, रूखा, चिकना। तो इसी चिकना का अर्थ है स्निग्धत्व। स्निग्धत्व और रुक्षत्व, ये दो जो पर्यायें हैं उसके बारे में ही अभी हम विचार करेंगे। बाकी जो है ठंडा, गरम, कड़ा, नरम उसके बारे में बात अभी हम नहीं सोचेंगे। तो यहां क्या देखा हमने कि देखो प्रत्येक पर्याय में या तो स्निग्धत्व या तो रुक्षत्व ये दो हैं। जिसको रूखा कहा वह रुक्षत्व है और जिसको चिकना कहा वह स्निग्धत्व है।

अभी क्या होता है प्रत्येक पर्याय में अनंत अविभागप्रतिच्छेद होते हैं। क्या कहा, बोल बेटा क्या बताया मैंने? *श्रोता: प्रत्येक पर्याय में अनंत अविभागप्रतिच्छेद होते हैं।* अविभागप्रतिच्छेद होते हैं। यह अविभागप्रतिच्छेद यानी क्या? यह हम देखना चाहेंगे। यह बहुत आसान है समझना क्योंकि नया शब्द है, तो हमें समझने में ऐसा लगता है कि अरे! क्या भारी-भारी शब्द हैं । हां, तो यह अविभागप्रतिच्छेद को समझने के लिये हम थोड़ासा

उदाहरण के माध्यम से समझेंगे। अभी अपने यहां एक तीन माले की बिल्डिंग है। तो तीन माले की बिल्डिंग में नीचे से ऊपर टांकी में पानी पहुंचाना हो तो आपको कितने हॉर्स पॉवर का इंजिन लगाना पड़ता है साहब? *श्रोता: पांच हॉर्स पॉवर का।* हां, पांच हॉर्स पॉवर का लगाना पड़ता है। चलो जो भी हो, हमको किधर लगाना है, हमें तो समझाना है। तो बम्बई में १३० माले की बिल्डिंग बन रही है। तो उसको पांच हॉर्स पॉवर का इंजिन लगाने से पानी ऊपर तक जायेगा कि नहीं? *श्रोता: नहीं जायेगा।* नहीं जायेगा। तो कितना लगायेंगे? मान लो सौ, अपना क्या जाता है। तो यह जो इंजिन की कपॅसिटि है, वह हम हॉर्स पॉवर में गिनते हैं और यह जो पर्याय है, उस पर्याय की जो शक्ति है उस शक्ति को गिनने का माप जो है, जिसको मेझर कहते हैं, परिमाण कहते हैं वह कितना है? तो कहते हैं वह अविभागप्रतिच्छेदों में गिना जाता है। अविभाग यानी जिसका दूसरा कोई विभाग नहीं हो सके ऐसे जो छोटे में छोटा होगा, प्रतिच्छेद यानी वन अपॉन जो कुछ होगा सो यानी टुकड़ा, तो यह अविभागप्रतिच्छेद है, छोटे में छोटा अंश है उसमें गिनेंगे। जैसे यह जो निगोदिया जीव है, सूक्ष्म निगोदिया लब्धिअपर्याप्त जीव है, उसका ज्ञान का उघाड़ जो है वह मिनिमम मोस्ट ज्ञान का उघाड़ होता है। मिनिमम मोस्ट यानी जघन्य, कम से कम ज्ञान का उघाड़।

जैसे हमने देखा कि एकेन्द्रिय पर्याय का जीव होता है उसको कौनसे इन्द्रिय का ज्ञान होता है? *श्रोता: स्पर्शनेन्द्रिय का।* हां स्पर्शनेन्द्रिय के द्वारा उसको ज्ञान होता है। तो मैं आपसे एक पूछूंगा कि आपके घर में रोज छाछ तो बनता है न? तो ऐसा हो गया कि एक दिन आपने गलती से वह छाछ फ्रीज में रख दिया और आठ दिन के बाद याद आया कि अरे वह फ्रीज में रह गया है। तो उसे निकाला, क्या किया, ट्राय किया यानी चखकर देखा एकदम खट्टा हो गया। तो अब क्या करें, यह खट्टा छाछ पीना अच्छा नहीं है। तो हमने अपने घर के सामने एक झाड़ था, उस झाड़ को वह छाछ डाल दिया। वह छाछ कहां से निकाला था? *श्रोता: फ्रीज में से।* फ्रीज में से। तो वह जो झाड़ है उसको उस खट्टेपने का अनुभव होगा कि नहीं? हां बोलो? *श्रोता: नहीं।* क्यों नहीं? *श्रोता: उसको रसनेन्द्रिय नहीं है।* बहुत अच्छा, देखो ध्यान देने से कितनी बात ख्याल में आती है। तो आप कह रहे हैं वह तो एकेन्द्रिय जीव है, तो उसके तो स्पर्शन का यानी ठंडा या गरम इतना ही पता लगेगा। उसके रसनेन्द्रिय नहीं है,तो रसनेन्द्रिय नहीं है इसका अर्थ उसको टेस्ट की खबर नहीं

पड़ेगी, रस का ख्याल नहीं आयेगा। तो क्या कहा, तो वह जो ठंडापन है उसका उसको ज्ञान होगा।

वैसे यहां जो एकेन्द्रिय जीव, कौनसा? सूक्ष्म निगोदिया लब्धिअपर्याप्त उसका जो ज्ञान का उघाड़ है वह मिनिमम मोस्ट है। ऐसे मिनिमम मोस्ट ज्ञान में, कौनसे? यह जघन्य ज्ञान जिसको कहते हैं, शास्त्रीय भाषा में उसको पर्यायज्ञान कहते हैं। यह पर्यायज्ञान में और अधिक, अधिक, अधिक, अनंतगुणा, अनंतगुणा, अनंतगुणा बढ़ोतरी-बढ़ोतरी होती जाती है तब वह अक्षर नाम का ज्ञान होता है। ये सब श्रुतज्ञान के भेद हैं हो। वह जो अक्षर नाम का ज्ञान है, गुरुदेवश्री हमेशा ऐसा फरमाते थे कि अक्षर के अनंतवें भागप्रमाण ज्ञान सूक्ष्म निगोदिया लब्धिअपर्याप्त जीव का होता है। उसको पर्यायज्ञान कहते हैं और अक्षरज्ञान और पर्यायज्ञान के बीचवाले जो कुछ स्टेजेस हैं, ज्ञान के बढते हुये असंख्यात भेद हैं उनको पर्यायसमासज्ञान कहेंगे। हम क्या कहने जा रहे थे भूल गये हम – अविभागप्रतिच्छेद को! तो यह सूक्ष्म लब्धिअपर्याप्त निगोदिया जीव का जो जघन्य में जघन्य जो ज्ञान है उसमें भी अनंत अविभागप्रतिच्छेद होते हैं और जो केवलज्ञानी हैं, वे केवलज्ञानी क्या-क्या जानते हैं?

देखो-देखो, अभी जरासा आपको ध्यान देना है हो और आप कितने अनंत गिनते हैं, उसको भी समझकर गिनना है – जीव अनंत हैं, कितने अनंत गिने? देखो भाई खाली अनंत गिनने हैं। जीव अनंत हैं, उससे पुद्गल अनंतानंत हैं, उससे तीन काल के समय अनंत हैं, उससे आकाश के प्रदेश अनंत हैं, उससे अनंतगुणा एक द्रव्य में अनंत गुण, तो अनंत द्रव्यों के अनंतानंत गुण उससे अनंत हैं और एक द्रव्य के गुण की तीन काल की पर्यायें अनंत हैं। तो अनंत द्रव्यों के अनंतानंत गुणों की तीन काल की अनंतानंत पर्यायें उससे अनंत हैं और एक पर्याय में अविभागप्रतिच्छेद अनंत हैं, तो अनंतानंत द्रव्यों के अनंतानंत गुणों की अनंतानंत पर्यायों के अनंतानंत अविभागप्रतिच्छेद सबके गिनेंगे तो वे उससे भी? *श्रोता: अनंत हैं।* इतना सारा अनंत ये सर्वज्ञ जो हैं वे एक समय में युगपत् साक्षात् प्रत्यक्ष जानते हैं। तो उनके ज्ञान के अविभागप्रतिच्छेद कितने होंगे? १३० माले पर आपको हॉर्स पॉवर पंप लगाना है न? लगाओ। ख्याल में आया? तो यह ज्ञान गुण के अविभागप्रतिच्छेद यानी जो कपॅसिटि है जानने की; वैसे श्रद्धा गुण में भी ऐसा ही है, चारित्र

गुण में भी ऐसा ही है, सुख गुण में भी ऐसा ही है। वैसे स्पर्श गुण में भी है, रस गुण में भी है, गंध गुण में भी है और वर्ण गुण में भी है। प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक पर्याय में अनंत अविभागप्रतिच्छेद होते हैं। इतनी बात ख्याल में आयी क्या? *श्रोता: हां।* हां, शाबाश!

देखो, यह क्यों हमें देखना है? तो हमने क्या देखा है कि पुद्गलद्रव्य जो है, उस पुद्गलद्रव्य में स्पर्श नाम का गुण है और उस गुण की स्निग्ध या रुक्ष पर्यायों को हमें देखना है। तो यह स्निग्ध या रुक्ष नामक जो पर्याय है उसमें भी अविभागप्रतिच्छेद हैं। अभी इन अविभागप्रतिच्छेदों से अपनी अभी बात आगे बढ़ेगी। यहां तक तो समझ में आया, त्रिशला? हां, बात ख्याल में आती है? बहुत अच्छा। श्लोका किधर है? नहीं है, अच्छा है। तो अभी क्या कहते हैं यहां क्या लिखा है **जिस संबंध विशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है उस संबंध विशेष को बंध कहते हैं**। तो यह बंध कैसा होता है इसको हम देख रहें हैं। तो यहां जरा थोड़ासा आसान तरीके से समझने की कोशिश करेंगे। यह जो अविभागप्रतिच्छेद हैं उनको 'अंश' भी कहने में आता है और उनको 'गुण' भी कहने में आता है। क्या कहा? अविभागप्रतिच्छेदों को अंश भी कहने में आता है या गुण भी कहने में आता है। तो यहां क्या बात हो रही है? देखो, हमेशा जब दो परमाणु हैं उन परमाणुओं में जो स्निग्धता है, तो स्निग्ध का स्निग्ध के साथ बंध होता है। प्रमाण क्या है वह बाद में देखेंगे। कॉम्बिनेशन कैसा होता है? स्निग्ध का स्निग्ध के साथ, स्निग्ध का रुक्ष के साथ, रुक्ष का रुक्ष के साथ और रुक्ष का स्निग्ध के साथ। तो आप कहेंगे भैया एक ही बार बोलो न? उसको क्यों रिपीट कह रहे हो। ख्याल में आया? हां, रिपीट करने का भी विशेष कारण है। क्या-क्या कॉम्बिनेशन्स बताये मैंने? स्निग्ध का स्निग्ध के साथ, स्निग्ध का रुक्ष के साथ; अब नीचे क्या रुक्ष का रुक्ष के साथ और रुक्ष का स्निग्ध के साथ। पहला क्या बताया था स्निग्ध का रुक्ष के साथ। यहां क्या बताया – रुक्ष का स्निग्ध के साथ। यह ऐसा कहने के पीछे कौनसा कारण है इसको भी हम देखेंगे। क्योंकि हम स्टेप बाय स्टेप आगे बढ़ेंगे तो यह बात हमारे ख्याल में जरूर आनेवाली है।

तो अब क्या कहते हैं स्निग्ध का जो स्निग्धांश है यानी स्निग्ध के जो अविभागप्रतिच्छेद हैं वह अभी हम समझने के लिये समझते हैं कि एक परमाणु जो है या एक से अधिक परमाणु हैं, अभी एक परमाणु की बात करते हैं। उसमें स्निग्धांश पांच हैं। कितना? पांच

अंश हैं उसमें और दूसरा पुद्गल परमाणु जो है उसके स्निग्धांश सात हैं। तो क्या होगा, यह पांच स्निग्धांशवाला जो परमाणु होगा उसका सात स्निग्धांशवाले परमाणु के साथ बंध होगा और यह भी सात अंशरूप हो जायेगा। क्या बताया? दोनों का बंध होगा और पांच टर्न होकर सात हो जायेगा। यह किसमें-किसमें बात हुयी? स्निग्ध में और स्निग्ध में। अभी ऐसा देखेंगे कि पांच स्निग्धांश हैं और उसके पास का परमाणु है उसमें सात रुक्षांश हैं। तो उनका बंध होकर स्कंध होता है और वह स्निग्धांश पलट कर रुक्षांश हो जाता है और वह जो स्कंध बन गया है उसमें रुक्षांश होता है, स्निग्धांश नहीं रहेगा। तो इसतरह डिफरन्स ऑफ़ टू अंश या डिफरन्स ऑफ़ टू गुण, यह एक दूसरे को बंध होने में निमित्त है।

देखो यहां एक बात का ध्यान रखना, यह सात स्निग्धांशवाला जो कोई परमाणु है, परमाणु ही लेते हैं हम, वह पांचवाले को टर्न करके सात नहीं बनाता है। क्यों नहीं बना सकता है? क्योंकि परमाणु-परमाणु में कौनसा अभाव है? बोलो धीमंत? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* अच्छा! परमाणु एक द्रव्य है, दूसरा परमाणु भी एक द्रव्य है। तो दो द्रव्यों में कौनसा अभाव होगा? हां बोलो, बोलो कोई। *श्रोता: अत्यन्ताभाव।* अत्यन्ताभाव। और आप जो अन्योन्याभाव बता रहे हैं वह भी लगायेंगे। क्योंकि यहां जो वर्तमान पर्याय पांच स्निग्धांश की है और वहां सातवाले स्निग्धांश की वर्तमान पर्याय है, इन दोनों में अन्योन्याभाव है। तो एक का दूसरे में अभाव है वह सातवाला जो कोई परमाणु है स्निग्धांशवाला वह पांचवाले को पलटा कर सात बना देवें ऐसा होगा कि नहीं होगा? बात ख्याल में आ रही है? बिलकुल नहीं होगा क्योंकि अभाव ही है न भाई? पर्याय की अपेक्षा से देखो तो अन्योन्याभाव है और द्रव्य की अपेक्षा से देखो तो अत्यंताभाव। लेकिन यहां ऐसा कह रहे हैं कि प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय हर समय पलटती है, तो अभी जो पांच अंश थे वे दूसरे समय में सात हो गये और आगे क्या बताते हैं? कि यहां पर एक परमाणु में नौ अंश हैं और यहां पर ग्यारह अंश हैं और दूसरी जगह मान लो कि सात अंश हैं। तो हो सकता है ये सातवाले, नौ हो जाये या नौवाले, ग्यारह हो जाये, एक दूसरे से संबंध हो जाये और एक दूसरे से बंध हो जाये। यह किसकी बात कर रहे हैं हम? स्निग्ध में से स्निग्ध की या स्निग्ध में से रुक्ष की।

अभी उलटा लेते हैं। रुक्ष होगा तो रुक्ष पलटकर यानी यहां पांच रुक्षांश हैं और यहां

सात रुक्षांश हैं तो पांचवाला सात हो जायेगा या यहां पांच रुक्षांश हैं और यहां सात स्निग्धांश हैं, तो पांच रूक्षांशवाले पलटकर सात स्निग्धांशवाले हो जायेंगे। ख्याल में आया? तो हमने जो चार कॉम्बिनेशन दिखाये, इसतरह से उनमें यह दो का डिफरन्स होगा। अंशों में दो का भेद-अंतर होगा तो ही एक दूसरे से बंध हो जाता है। अगर यहां पांच अंश हैं और सामने आठ अंश हैं, यहां पांच अंश हैं और यहां छह अंश हैं, यहां पांच अंश हैं, उसमें बारह हैं तो इनका बंध कभी नहीं होगा। बंध होने के लिये कंडिशन क्या है? हां जी, बोलो, कुछ नहीं समझ में आया? हां बोलो-बोलो, कितना डिफरन्स होना चाहिये? *श्रोता: दो अंश का।* दो अंश का। बहुत अच्छा! हां दो गुण का कहो, दो अंश का कहो। यानी देखो, हम देखते हैं यह बंध जो हो सकता है, तब वहां दोनों में दो अंशों का फर्क है। यह तो हम समझने के लिये पांच और सात बता रहे हैं। हमने अभी देखा था कि प्रत्येक पर्याय में अविभागप्रतिच्छेद कितने होते हैं? हां जी? कितने होते हैं? *श्रोता: अनंत।* तो बोलो न भाई! अनंत होते हैं। तो अनंत में से दो का फर्क होगा तो ही वे एक दूसरे से चिपकेंगे। जब जब यह बंध होता है वहां हमेशा दो गुणों का अंतर होना चाहिये।

अब इसमें एक और विशेष बात ऐसी है किसीके एक ही स्निग्धांश होगा, तो उसका तीन के साथ बंध नहीं होगा। क्या कह रहे हैं? एक जो मिनिमम है और तीन, यानी एक है उसका तीन के साथ बंध नहीं होगा। लेकिन दो का चार के साथ, तीन का पांच के साथ बंध होगा। लेकिन यह बात भी ध्यान में रखना विषम संख्या से वह अंश होगा। कौनसा? तीन, पांच, सात, ऑड जिसको कहते हैं न। तीन, पांच, सात, नौ तो उनके विषम संख्या के साथ ही वह बंध होगा और जो सम संख्या है क्योंकि हमें अंतर तो दो अंश का चाहिये। तो यहां क्या कहते हैं कि जब-जब यह अनेक परमाणु जो होते हैं जिनका स्कंध – अभी तो हमने एक-एक परमाणु की बात की। अभी हम ऐसा देखते हैं कि यहां कोई स्कंध है, उनके अविभागप्रतिच्छेद सबके सौ हैं, जो स्कंध बना है उनके सबके हर एक के अपने-अपने अंश कितने हैं तो सौ हैं; यहां रुक्षांश हैं-सौ रुक्षांशवाले स्कंध हैं, तो उनका बंध किसके साथ होगा? बोलो-बोलो, कौन बताना चाहिये? *श्रोता: एक सौ दो अंशवाले।* एक सौ दो अंशवाले कौन चाहिये? यहां हमारे पास रुक्षवाले हैं, सामने कौनसे चाहिये? *श्रोता: एक सौ दो वाले रुक्षांश।* हां आप कह रहें हैं कि उसके सामने एक सौ दो रुक्षांशवाला स्कंध होगा या एक परमाणु होगा तो इन दोनों का बंध हो सकता है। वैसे वहां सामने

स्निग्धांश है, यहां भले ही रुक्षांश है लेकिन उनका भी बंध होगा। मैं आपसे पूछता हूं बाजू में अट्ठानवेवाले होंगे तो? *श्रोता: उनका भी होगा।* यानी अट्ठानवेवाले – सौवाले हो जायेंगे या तो सौवाले – एक सौ दोवाले हो जायेंगे। तो इसको क्या कहते हैं? बंध कहते हैं।

तो यह बंध के भी तीन प्रकार हैं। एक है द्रव्यबंध, एक है भावबंध और एक है उभयबंध। द्रव्यबंध यानी क्या? *श्रोता: दोनों में अभाव हैं तो उनका बंध कैसे होता होगा?* हां! आपका प्रश्न बहुत अच्छा है। आप कहते हैं कि दोनों में अभाव है तो उनका बंध कैसे होता होगा? लेकिन बात ऐसी है अभाव होते हुये भी, देखो यह जो है न? यह हमारा शरीर जो है न? इस शरीर में जो अनेक परमाणु हैं, उनका भी बंध हुआ है। अगर आपको थोड़ासा मेडिकल का नॉलेज होगा तो एक अपेक्षा से अपनी यह स्किन भी बदलती है। हां तो कुछ कारण से वह निकल भी जाती है और नयी-नयी स्किन तैयार भी होती है। तो उसको हम कहेंगे वह बंध है। असलियत में तो एक दूसरे से कोई संबंध नहीं है क्योंकि दो परमाणु में अत्यन्ताभाव है। फिर भी वे एक साथ रहते हैं इसलिये उनका बंध है ऐसा कहेंगे हम। *श्रोता: बंधमां दरेक पुद्गल स्वतंत्र छे।* हां, बराबर आप कहते हैं बंध में भी प्रत्येक परमाणु जुदा है, स्वतंत्र है। दो परमाणु मिलकर एक परमाणु नहीं होते हैं, बिलकुल तद्दन भिन्न-भिन्न हैं। फिर भी उनका बंध होता है ऐसा कहने में आयेगा। ख्याल में आया? तो दोनों बातों को हमें सहीरूप से समझना है। जो निश्चय से वस्तुस्थिति है उसे भी समझना है और जो उपचार से उनका कथन किया जाता है उसे भी समझना है, नहीं तो हम एकांती हो जायेंगे।

वह एकांती कैसे हैं? अभी बताता हूं। यहां पर देवलाली में शिबिर लगा था और हमने निश्चय की बात समझायी कि तू शरीर नहीं है और उन्होंने गुरुदेवश्री की टेप भी सुनी। उन्होंने गुजराती में बोला, मैं आपको हिंदी में बताऊंगा। 'एक समय मात्र इस शरीर का पड़ोसी होकर तो देख।' क्या कहा 'एक समय मात्र आ शरीरनो पाडोशी थईने जुओ तो खरो!' उसको यह बात जंच गयी, वहां से बम्बई आया और बीमार पड़ गया। दौड़े-दौड़े डॉक्टर के पास गया, डॉक्टर साहब-डॉक्टर साहब। क्या हो गया? मेरा पड़ोसी बीमार है, जरा उसको दवा देना। क्या बात करते हो जाओ दौडो, पड़ोसी को तो लेकर आओ। क्या

बोला समझ में आया? यहां हमने केवल निश्चय की बात सुनी तो उधर भी जाकर बोला मेरा पड़ोसी बीमार पड़ गया। तो व्यवहार से कहो या उपचार से कहो यह मेरा शरीर है या यह मैं हूं ऐसा सम्यग्दृष्टि भी बोलेगा और आप भी बोलना। लेकिन मानना ऐसा, क्या कहते हैं? मानना ऐसा कि यह मैं नहीं हूं लेकिन अभी कुछ काल के लिये यह मेरे एकक्षेत्र में रहनेवाला है। तो वह मेरा कहने में कोई हर्ज नहीं है। यह उपचरित कथन है, ख्याल में आया? तो कह रहे हैं कि यह निश्चय से तो जुदे-जुदे हैं और उसका बंध होता है आप कैसे कहते हो? बंध हो रहा है यानी एक साथ वे हो रहे हैं इस अपेक्षा से उनका बंध है। अगर यथार्थत: देखा जाये तो प्रत्येक परमाणु भिन्न-भिन्न ही अपने स्वचतुष्टय में स्थित है। ख्याल में आया? तो अभी हम आगे बढ़ेंगे।

देखो क्या होता है? अब मेरे पास बहुत किस्से जो हैं वे सही हैं, असल हैं। मैंने आपको बताया था हम पुणे में शिबिर के लिये जाते थे, वहां बताया था कि यह जो दवा है वह निमित्तरूप है, निमित्त से कार्य नहीं होता है। वहां ऐसे छोटे-छोटे बच्चे बीमार हो जाते थे, तो उनकी मम्मी बोली, यह गोली खा, यह दवा खा तो बच्चों ने बोला निमित्त से कार्य नहीं होता है, हम दवा नहीं खायेंगे। तो दूसरी बार उनके पास गये; तो उस माता ने हमे कोसा कि आपने क्या सिखाया, हमारे बच्चे सब बिगड़ गये। हमारे घर में मेहमान आये तो उनको बोलते हैं, आप कुर्सी पर बैठे हो लेकिन आप में और कुर्सी में अभाव है, उनका स्वचतुष्टय भिन्न है, स्पर्श ही नहीं कर रहे हैं आप। यह आपने क्या सिखा दिया। नई मुसीबत हमारे पर यह आ गयी और बम्बई में ऐसी एक कोई महिला थी, उनके साथ छोटीसी उम्र की १७-१८ साल की लड़की-उनकी बेटी भी आती थी। तो यहां हमने बताया कि कोई एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को स्पर्शता भी नहीं है। कहां लिखा है? समयसार में कि मेरा स्वभाव तो अबद्ध-अस्पृष्ट है। हां, तो सुन लिया उस बेटी ने। तो दोनों आती थी स्कूटर पर। मां स्कूटर चलाती थी और बेटी पीछे बैठती थी। तो उसने बैठे-बैठे मम्मी को एक झापड़ मारा। क्या कर रही हो? काहेको मार रही हो? बेटी ने बोला, मैं तुमको छू भी नहीं सकती। ख्याल में आया न? तो ऐसा हम करें तो हम जिनवाणी को गले में उतार रहें हैं या जिनवाणी की ठठ्ठा मस्करी कर रहे हैं? ख्याल में आया?

ऐसा हमें कैफ यानी मद किसी एक नय का नहीं चढ़ना चाहिये। एक दफे निश्चयनय

की बात सुन ली तो व्यवहारनय है ही नहीं ऐसी बात नहीं है। व्यवहारनय है और वह व्यवहार में उचित है, लेकिन अगर हम उसकी निश्चय के साथ तुलना करते हैं तो व्यवहारनय झूठा है। देखो जो बुजुर्ग लोग हैं वे तो जानेंगे ही कि समयसार १२ वीं गाथा में कहा है कि व्यवहारनय जानेलो प्रयोजनवान छे। यानी जानने के लिये योग्य है, आदरणीय नहीं है, ख्याल में आया? तो भाई, हमें तो एक ही बात सुनकर उसरूप से जरूर विचार करें लेकिन साथ में अन्य बातें भी हैं उनके बारे में भी सोचना चाहिये, उनको भी कन्सिडर करना चाहिये। जब हम अपने स्वभाव के स्वरूप का अंतरंग में विचार करेंगे तो मेरेसे सारे भिन्न हैं यह बात तो निश्चित है, लेकिन वे हैं, हैं उनको हम इग्नोअर कर रहे हैं। हैं उनको हम गौण कर रहे हैं, हैं उसके ऊपर हम ध्यान नहीं दे रहे हैं, तो किस पर ध्यान है तुम्हारा? तो अपनी स्व-सत्ता में जो अपना स्व-स्वभाव है, स्व-स्वरूप है उसको हम मुख्य कर रहे हैं। तो मुख्य-गौण तो तभी होता है जब कोई कम से कम दो चीज़ होवे और एक ही होवे और एक को मुख्य करो और एक को गौण करो तो कैसे होगा? यह एक सिद्धान्त अगर हमारे ध्यान में आता है तो लोग मानते हैं न कि मैं ही इस जगत में हूं, बाकी सब कुछ नहीं है, बाकी सब मिथ्या है। अरे! 'मैं' ऐसा जब कह रहा है तो सामने दूसरी कोई चीज़ होनी ही चाहिये। नहीं तो मैं-मैं करने में क्या है? जहां तू होगा या दूसरा कुछ होगा तो ही 'मैं' कहेंगे कि नहीं? ख्याल में आती है बात? तो एक-एक सिद्धान्त अगर हमारे ज्ञान में आते हैं, तो अन्य कल्पनायें जो हैं, अन्यमतियों की जो मान्यतायें हैं वे कैसी हैं? गलत हैं यह हमारे ज्ञान में सहजरूप से आ जाता है।

तो अपनी क्या बात हो रही थी? यह बात कहां से निकली, आपके प्रश्न से। बहुत अच्छा प्रश्न पूछा था आपने कि भाई दोनों में अत्यन्ताभाव है फिर भी आप बंध होता है ऐसा क्यों कहते हो? क्योंकि वे एक साथ हो जाते हैं और उनका बंध हुआ है ऐसा व्यवहार से, उपचार से कहने में आता है। कोई बात नहीं, ऐसा प्रश्न पूछना हो। तो हम कौनसी बात देख रहे थे? बंध के तीन भेद देख रहे थे। कौनसे तीन भेद देखे थे, कौन बतायेगा? लिखकर रखा है? हां, बोलो-बोलो। *श्रोता: द्रव्यबंध।* द्रव्यबंध। *श्रोता: भावबंध।* भावबंध। *श्रोता: और उभयबंध।* और उभयबंध। यह द्रव्यबंध यानी क्या उसको हम समझेंगे। द्रव्यबंध यानी जो पुद्गल परमाणु हैं, फॉर एक्झाम्पल, कर्म जो हैं, वह हम हर समय नये-नये कर्म बांधते हैं। कितने कर्म बांधते हैं? एक समयप्रबद्ध। एक समयप्रबद्ध में कितनी कार्माणवर्गणायें

कहो या कितने कार्माणपरमाणु कहो, चलो, कितने हैं अभी हमने देखे थे? *श्रोताः अनंतानंत।* अनंतानंत, बहुत अच्छा! तो अभी एक समय पहले जो हमने कर्म बांधे और दूसरे समय में कर्म बांधे, तो दोनों आपस में मिल जाते हैं उसको क्या कहेंगे? द्रव्यबंध। ख्याल में आया? *श्रोताः बांधे हुये कर्म जो मिलते हैं?* पूर्व में बांधे हुये कर्म में नये कर्म आकर मिलते हैं उसको कहेंगे द्रव्यबंध और भावबंध यानी क्या? भावबंध यानी यह जीव किसीके बारे में मोह, राग, द्वेष के जो परिणाम करता है। बार-बार वही, वैसे ही अलग टाइप के लेकिन जो परिणाम करता है उसको कहेंगे भावबंध और उभयबंध यानी क्या? कि यह जो भाव करने से नये कर्मों का बंध होता है, तो यहां जीव है उसी क्षेत्र में कर्म आकर रुकते हैं या जीव और कर्मों का साथ रहना इनको कहेंगे उभयबंध। इसतरह से हमने बंध की बात देखी है। अभी यह बंध किसे कहना इसकी बात थी। अभी यहां क्या कह रहे हैं, बंध किसे कहते हैं कि जिस संबंध विशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है।

वास्तविक वस्तुयें अनेक हैं। जैसे हमने यह हाथ उठाया और आपको एक अंगुली बतायी और पूछा यह कितने हैं? तो आप कहेंगे एक है। लेकिन उस अंगुली में अनेक परमाणुओं का संबंध विशेष हुआ है और उसमें हम एकपने का ज्ञान करते हैं। हैं तो कितने? अनंत परमाणु। यहा पूरा शरीर एक है ऐसा हम कहेंगे, लेकिन उसमें हैं कितने? अनेक परमाणु हैं, तो ऐसे जो संबंध विशेष हैं। अभी देखो यह जो एक कागज़ है, यह दूसरा कागज़ है, यह तीसरा कागज़ है, ऐसे अलग-अलग कागज़ हैं। उनका संबंध है नहीं, तो हम उसको चार कहेंगे, दो कहेंगे। लेकिन यह समझो चालीस पन्ने की पुस्तक है, लेकिन यह एक पुस्तक है ऐसा कहेंगे। तो वह विशेष प्रकार से संबंध हुआ है, ऐसा कहने में आयेगा।

तो अभी जो आपने यह जो स्कंध देखे। कौनसे? पांच प्रकार के स्कंधों को देखा। आहारवर्गणा, तेजसवर्गणा, भाषावर्गणा और मनोवर्गणा और उसके बाद कार्माणवर्गणा। तो यह जो आहारवर्गणा है उसमें जो परमाणु हैं, उससे भी अगली जो वर्गणा है, कौनसी? तेजसवर्गणा उसमें परमाणुओं का प्रमाण अधिक होगा। लेकिन वह कैसी है? पहली वर्गणा से यानी आहारवर्गणा से तेजसवर्गणा का जो स्कंध है, वह सूक्ष्म है, लेकिन नंबर ऑफ़ परमाणु उसमें अधिक हैं। ख्याल में आया? और क्या कहते हैं? उससे आगेवाली जो

भाषावर्गणा है वह भी अधिक सूक्ष्म है। इसके लिये हमने एक उदाहरण दिया था अगर आपको याद होगा तो। कौनसा? गेहूं का। गेहूं, फिर टुकड़ावाला गेहूं, फिर रवा, फिर आटा और उसके बाद मैदा। वैसे यहां पर क्या है? नंबर ऑफ़ पार्टिकल्स जिसको हम परमाणु कहेंगे वे अधिक हैं लेकिन सूक्ष्मरूप से परिणमित हो रहे हैं। तो यहां तेजसवर्गणा से भाषावर्गणा में परमाणुओं की संख्या अधिक है और सूक्ष्मत्व भी अधिक है। उसीतरह मनोवर्गणा में भी भाषावर्गणा से अधिक क्वाँटिटि में परमाणु होंगे और उसका भी सूक्ष्म परिणमन है और वह भी संख्या से अधिक है। वैसे ही मनोवर्गणा और कार्माणवर्गणा जो है उसमें भी ऐसा ही समझना।

यह कार्माणवर्गणा जो होती है वह इतनी सूक्ष्म होती है कि हमें पता ही नहीं लगता है। कर्म किसीने देखे होंगे कि नहीं? *श्रोता: नहीं।* नहीं, क्योंकि उनका परिणमन सूक्ष्म है। लेकिन मेरा वही प्रश्न होगा जो हमने एक बार पूछा था, लेकिन आपके याद में है कि नहीं मालूम नहीं। कर्म दिखते नहीं न, या देखे थे आपने? नहीं? तो कर्म को रंग होगा कि नहीं होगा? हां, महावीरजी बोलो? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा, बहुत अच्छा। आप क्या कहते हैं? *श्रोता: होगा।* होगा, अरे! बाजू में बैठकर आपस में बेबनाव? निखिलजी जरा आप जज बनो। कर्मों को रंग होगा कि नहीं होगा? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा। अच्छा। भाई आप क्या कहते हैं? मालूम नहीं? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा। अच्छा आप क्या कहना चाहते हैं? *श्रोता: होगा।* क्यों होगा? *श्रोता: पुद्गल वर्गणा है इसलिये।* हां, देखो-देखो यह कार्माणवर्गणा जो है वह कौनसा द्रव्य है? हां साहब? जोर से बोलो? कौनसा द्रव्य है? *श्रोता: पुद्गलद्रव्य।* पुद्गलद्रव्य है। पुद्गलद्रव्य किसको कहते हैं? देखो क्वेश्चन नंबर आपका १८ है। देखो-देखो उसका उत्तर पढ़ो। क्वेश्चन नंबर १८ में लिखा है कि जिसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण है वह पुद्गल है, है न? तो कार्माणवर्गणा जो है वह कौनसा द्रव्य है? पुद्गलद्रव्य है, तो उसमें वर्ण गुण होगा-होगा और... *श्रोता: होगा।* या नहीं? हमारी सोच को सिर्फ बदलना है। वस्तुस्वरूप को हम बदल नहीं सकते। देखो और एक विशेष बात ऐसी है कि जिसमें स्पर्श का नाम का गुण हमें ज्ञान में आ रहा है, तो साथ में वर्ण, गंध आदि जो गुण हमने सीखे हैं न, वे सभी होंगे।

यह जो हवा अपने को स्पर्श करती है। कौनसी? यह अभी गरम लू आती है न? वह

जो हवा है, उसको वर्ण गुण होगा कि नहीं? हां बोलो साहब, आप बहुत अच्छा उत्तर देते हैं, बोलो? मणिभाई आप कंई कहेशो। *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा, क्योंकि दिखता ही नहीं है न? हवा का स्पर्श तो ठंडा या गरम होता है, लेकिन दिखती नहीं है। लेकिन स्पर्श गुण है तो उसको रस भी-स्वाद भी होगा, उसको गंध भी होगा, उसको वर्ण भी होगा। क्योंकि एक बात ध्यान में रखना, एक गुण होता है तो उस द्रव्य में रहनेवाले अन्य अनंत गुण होते ही हैं। एक द्रव्य के एक गुण का उसी द्रव्य के दूसरे गुण के साथ अविनाभावी संबंध है। कौनसा? अविनाभावी संबंध। यानी एक गुण हो तो दूसरा होता ही है ऐसे संबंध को अविनाभावी संबंध कहते हैं। अग्नि जो है, जो हमें दिखती है न अग्नि, तो उसको स्वाद होगा कि नहीं, रस होगा कि नहीं? अभी महावीरजी आप बोलो? *श्रोता: स्वाद कैसे होगा?* हां आपका प्रश्न जेन्युइन है, स्वाद कैसे होगा? हम तो नहीं जानते, कम से कम आप स्वाद लेकर हमको बताओ तो? ऐसा महावीर बोल रहे है न? स्वाद नहीं होगा? अरे! भाईसाहब होगा क्योंकि उसको स्पर्श है न? गरम स्पर्श है न? तो स्पर्श गुण होगा तो गंध गुण भी होगा, रस गुण भी होगा और वर्ण गुण भी होगा। क्योंकि अभी हमने देखा कि एक गुण होता है तो अन्य गुण भी होते हैं। ऐसे जो एक गुण हो तो दूसरा गुण हो, ऐसे दो गुणों का जो संबंध है उसको कौनसा नाम दिया था हमने? *श्रोता: अविनाभावी संबंध।* अविनाभावी संबंध। देखो-देखो, अभी मेरे पास और बहुत माल है भाई। हां जो अभी हम, क्या लगाते हैं वह परफ्यूम। परफ्यूम को वर्ण गुण होगा कि नहीं। बोलो? हिम्मत नहीं हो रही सत्य बोलने की। बोलो-बोलो। *श्रोता: होगा।* होगा, बहुत अच्छा! देखो, कोई बात नहीं, जो सुबह से भूला भटका है, शाम को घर में आया, वापस आया तो उसको ॲक्सेप्ट करना हो।

हमारी मान्यता में कोई गलत बात चल रही है और आगम के माध्यम से अगर हमें समझाया जा रहा है तो अपनी मान्यता बदलने में ही अपना हित है। अरे! आज तक मैं ऐसा मान रहा था और आज तुम नयी कुछ बात बताते हो और हम इतने दिन तक माने वह सब खोटा? दूसरी भाषा में बोले तो अपनी इज़्ज़त का अगर सवाल है तो क्या करें? आज तक हम कानजीस्वामी को मानते नहीं थे। अभी मानना चालू करें? हमारी इज़्ज़त जायेगी। काहे की इज़्ज़त जायेगी? जो सत्य बात बताता है, उस सत्य को सत्य स्वीकारने में तुझे शर्म! अरे भाई! कानजीस्वामी को मत मानो न? भगवान महावीर को तो मानोगे कि नहीं?

हां, यह कोई व्यक्ति विशेष का माहात्म्य नहीं है। यह तो जिनेन्द्र भगवान जो हैं, उनमें से एक महावीर भगवान हैं, एक आदिनाथ हैं, ऐसे जिनेन्द्र भगवान का जिसे माहात्म्य नहीं है उसके लिये धर्म प्रगट करना असंभव है। यह तो जिनेन्द्र भगवान की जो बात होगी उन्होंने जो सत्य बात बतायी है, उसको ॲक्सेप्ट करने में क्यों आनाकानी करते हो? अभी यह बात हमें डायरेक्टलि इस व्यक्ति से मिली है इसलिये बार-बार उनका हमें अहोभाव आता है, उपकार स्मरण होता है और उनका नाम हम जरूर लेंगे। हम अपने गुरु का नाम छिपायें क्यों? ख्याल में आया? लेकिन उसे कोई क्या बोलते हैं, बू मत आने देना कि यह फलां पार्टीवाला है, यह फलां पार्टीवाला है, यह क्या बोलते हैं संप्रदायवाला है, यह फलां संप्रदायवाला है। अरे! हम तो भगवान महावीर के संप्रदाय के हैं। ख्याल में आया?

मैं आपसे पूछता हूं, अभी एक उदाहरण है हो, फिर यह धरम नहीं, करम नहीं हो! देखो आप आपके पिताजी के पास गये और आपने कहा पिताजी! तो बोले क्या है? मुझे दस हजार रुपये चाहिये। क्या करने का है दस हजार का? मैं कोई व्यवसाय करना चाहता हूं। आज की बात नहीं है, आज से ५० वर्ष पहले की बात है। दस हजार बहुत होता था उस टाइम में और आज कितना होगा, दस करोड़ होगा, अपना क्या जाता है। तो आपने कहा मुझे दस हजार देना। बोले चल-चल तू अकेला है क्या? मुझे और नौ दूसरे बच्चे भी हैं। एक को दस हजार दूंगा तो सबको दस-दस किधर से लाऊंगा? मैं एक पैसा भी नहीं देता, जा। रोती सूरत लेकर आप घर के बाहर बैठे। इतने में मणिभाई जैसा कोई दयालु व्यक्ति आपके पिताजी का मित्र मिला आपको। क्यों क्या हो गया? रोती सूरत क्यों? साहब ऐसा-ऐसा है, देखो बहुत अच्छी अपॉर्च्यूनिटि आ गयी है। मैं पिताजी से कहता हूं मुझे दस हजार दे दो, वे नहीं दे रहे हैं। कोई बात नहीं, तू मेरे घर पर आकर लेकर जा। तो आप डरते-डरते गये। उन्होंने बुलाया, खाना-वाना खिलाया, ऊपर दस हजार रुपये दिये, बोले जाओ। दो साल में आपने दस हजार के दस लाख बनाये। तो आपको महिमा किसकी आयेगी? बोलो? बाप की या? *श्रोता: दस लाख देनेवाले की।* दस लाख देनेवाले की! कोई बात नहीं। हां, दस हजार देनेवाले की, है न? ऐसे ही यह जो बात है वह बात जिन्होंने हमको सिखायी है, जो बात हमें समझायी है उनके उपकार स्मरण करने में क्यों कंजूसी करनी है? ख्याल में आया? उसमें कौनसी खोटी बात है?

जो हमारे ही संप्रदाय में आकर, हम मूल दिगंबर, हमारे ही संप्रदाय में आकर, हमको ही हमारे शास्त्रों में जो बात लिखी है वह बतायी। अरे! बेटा, तेरे घर में इतना धन, इतनी निधि पड़ी हुयी है और तू उसे देखता नहीं, पहचानता नहीं, तेरे जैसा दरिद्री तो तू ही है। ऐसे बताकर जिन्होंने हमारा उपकार करने की कोशिश की इसलिये; मैं अकेले की बात नहीं कर रहा हूं, उनके निमित्त से तो लाखों लोग जैन संप्रदाय में आये हैं; दिगंबर जैन बने हैं। अरे! आप यकीन नहीं करोगे दुबई में भी ऐसे लोग हैं कि जो द्विदल दोष टालकर खाना बनाते हैं। हम तो कहेंगे आधे लोगों को, जो मूल दिगंबर हैं उनको, द्विदल दोष क्या होता है यह मालूम नहीं होगा। हमें पता नहीं हैं, हम तो ऐसे झापड़ लगाये बैठे हैं।

मैंने कहा न 'अरे जिया जग धोखे की टाटी। झूठा उद्यम लोग करत हैं, आंखन बांधी पाटी।' अरे! बहुत अच्छा है दौलतरामजी का यह काव्य। चार-पांच लाइन का है पढ़ लेना कहीं चान्स मिलें तो। खोटा उद्यम कर रहे थे। क्यों? आंख पर पट्टी बांधी है। हमें इस तरफ जाना ही नहीं है। जब हम उनके पास जाते थे तो सब लोग क्या बोलते थे मालूम है शमाजी? उधर मत जाना। किधर? सोनगढ़ मत जाना। तो जब किसीको मत करना बोले तो, बच्चे को बोलेंगे पीछे टेककर मत बैठना, फिर जान बूझकर बैठते हैं। तो मत करो बोले तो अपने को और ऐसा करने की अंदर से तालावेली होती है। तो क्यों नहीं जाना साहब? जो वहां जाता है, उन्हींका हो जाता है; वहां मत जाना; हम गये और उन्हींके हो गये। वैसे प्रत्येक जीव वस्तुस्वरूप की सच्ची पहचान कर, अपने स्व को जानकर, मानकर, उसीमें रममाण हो जाये, इस पवित्र भावना के साथ अभी मैं विराम लेता हूं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

५१. प्रयोजनभूत सात तत्त्व – १

अभी तक हमने चार अभावों को देखा है। पुद्‌गलद्रव्य और उसके विशेष गुण, जीवद्रव्य और उसके विशेष गुण, निमित्त-उपादान, इसके बारे में थोड़ी बहुत चर्चा की है। आज हम जिनागम में सबसे महत्वपूर्ण ऐसी जो बात है, जो सात तत्त्वों की बात आती है, उसके बारे में थोड़ीसी चर्चा करना चाहेंगे। देखिये, यहां पर ऐसा कहते हैं कि ये सात तत्त्व कैसे हैं? तो कह रहे हैं कि प्रयोजनभूत सात तत्त्व हैं। प्रयोजनभूत का अर्थ क्या होता है? कि अपना जो प्रयोजन है, कौनसा प्रयोजन? तो कहते हैं सुखी होने का प्रयोजन है। यह सुखी होने का प्रयत्न कौनसा द्रव्य करता होगा? हां साहब? *श्रोता: जीवद्रव्य।* जीवद्रव्य। क्यों, जीवद्रव्य क्यों? क्या बोले आप मैं समझा नहीं। *श्रोता: चाहता है सुखी होना।* वह चाहता है कि सुखी होना, है न? पर क्यों? भाई, पहले तो दो बातें हैं क्योंकि जो चाहनारूप है, वह चारित्र गुण की पर्याय है। है न! कोई इच्छा करना यह चारित्र गुण की पर्याय है और ज्ञान गुण है, उससे जानता है कि मैं तो अभी सुखी नहीं हूं। लेकिन साथ-साथ में जब तक इस जीव को मिथ्यात्व है, तब-तब यह सुख कहां है और किससे प्राप्त होता है, इसका उसे पता नहीं है। सुख किसे कहते हैं, इसका भी उसे ख्याल नहीं है। तो ये सारी बातें ऐसी क्यों हो रही हैं? अपने में सुख नाम का गुण है लेकिन वह सुख उसको प्राप्त नहीं हो रहा और दुःख का अनुभव भी उसको हो रहा है, तभी तो वह सुखी होने का प्रयत्न और उपाय करता है। तो यह सुखी होने का उपाय किसतरह से हो सकेगा और सुख प्राप्त करने की रीति क्या है? इसके लिये हमें इन सात तत्त्वों को जानना आवश्यक है।

इसलिये कह रहे हैं ये प्रयोजनभूत बातें हैं, तो उसको हम देखते हैं। देखो, मैं कुछ-कुछ बातें पढ़कर आप को दिखाता हूं। वस्तुव्यवस्था, क्या कहा? वस्तुव्यवस्था; वस्तुव्यवस्था का अर्थ क्या है? हां नलिनभाई? यानी किसका स्वरूप? *श्रोता: छह द्रव्यों का स्वरूप।* वस्तुव्यवस्था यानी द्रव्यों की जो व्यवस्था है, वस्तुव्यवस्था यानी तत्त्व जो हैं उनकी भी जो व्यवस्था है। क्या कह रहे हैं? वस्तुव्यवस्था अर्थात् तत्त्वों का सत्यस्वरूप न जानने से जीव, परपदार्थों को अथवा संयोगों को इष्ट अथवा अनिष्ट मानता है। इष्ट मानना यानी क्या? कि अपने लिये हितकर मानना और अनिष्ट यानी क्या? अपने लिये अहितकर मानना। वास्तव में परपदार्थों में यानी परद्रव्यों में ऐसे कौनसे द्रव्य हैं जो इष्ट हैं और ऐसे कौनसे द्रव्य हैं जो

अनिष्ट हैं? इसका प्रथम हम विचार करते हैं। तो आपको ख्याल आता है क्या कि कोई द्रव्य इष्ट है? देखो-देखो, यहां पहले यह बताना चाहते हैं कि परपदार्थ ना इष्ट होते हैं और ना अनिष्ट होते हैं। क्या कहा? परपदार्थ ना इष्ट होते हैं ना अनिष्ट होते हैं। फिर भी यह जीव, जो मोही जीव है, मोही यानी क्या? अज्ञानी जीव है, ज्ञान की अपेक्षा से बात करो तो अज्ञानी, श्रद्धा की अपेक्षा बात करो तो मोही, अतत्त्वश्रद्धानी है। वह परपदार्थों में जो उसे अनुकूल लगे, जो परपदार्थ उसके संयोग में हैं, वे उसे अनुकूल लगे तो वह उनके ऊपर राग करता है और कहता है कि ये मेरे लिये इष्ट हैं। नहीं समझ में आया?

देखो, देखो कोई माता है। वह अपने बालक को छोटे से बड़ा करती है और जब-जब वह कुछ कहती है तो वह बच्चा माता की सारी बातें सुनता है। लेकिन जब वह बालक बड़ा हो जाता है और माता-पिता की बात नहीं सुनता है, अपनी ही मनमानी करता है, तो वही लड़का उसके लिये अनिष्ट हो जाता है। खास करके यह माता-बहनें जानती हैं कि शादी करके घर में बहू लायें। क्या, तो जो पहले इष्ट लगनेवाला लड़का ही कैसा लगता है? हां? कोई बोलता नहीं। हम जयश्रीताई से पूछेंगे क्योंकि वह ज़रा उमर में अधिक है न? उनको भी शायद मालूम होगा। अभी तो तुम बच्चे हो। हां आपका क्या कहना है? जो हमें बालक पहले बहुत प्रिय था, अपनी बात सुनता था और बाद में यह कोई ज़रूरी नहीं कि अपने को उसका अनुभव होना चाहिये। लौकिक में भी यह बात देखी जाती है। यह कोई नयी बात थोड़ी है? क्यों नेमिचंदजी, आपके बेटे की शादी हुई कि नहीं हुई? हां, तभी तो आपको मालूम नहीं है। *श्रोता: खुश हैं।* खुश हैं और बाद में? हित मतलब अनुकूल और प्रतिकूल क्या होता है? इसको हमने क्या देखा था अभी? जो इष्ट होता है और जो अनिष्ट होता है, इसकी बात चल रही है। तो कह रहे हैं कि जो परपदार्थ हैं, उनमें से जो संयोग हैं, देखो भाई! कोई भी परपदार्थ ना इष्ट है ना अनिष्ट है।

देखो, देखो अभी यहां पर बहुत गर्मी चल रही है न? तो पंखा हमें इष्ट लगता है और कोई यहां आया है और बहुत ही स्वाध्याय का प्रेमी है और उसको बुख़ार चढ़ गया और माथे पर पंखा चल रहा है तो उसको वह पंखा कैसा लगेगा? अनिष्ट लगेगा और किसीको इष्ट लग रहा है। तो पंखा इष्ट है या अनिष्ट है? हां जी, उस पंखे के विषय में हमारी जो मान्यता चल रही है, उस मान्यता में इष्टता और अनिष्टता उस-उस पर्टिक्युलर जीव को

भासित होती है। इसलिये जब यह हमने पहले प्रश्न पूछा कि विश्व में कौनसे द्रव्य यानी कौनसे पदार्थ इष्ट हैं और कौनसे पदार्थ अनिष्ट हैं? तो कोई पदार्थ ना इष्ट है ना अनिष्ट है लेकिन उस पदार्थ के प्रति किसी जीव की जो मान्यता है, वह पदार्थ मान्यता में उसके लिये इष्ट-अनिष्ट हो सकता है। देखो-देखो, दो दिन पहले या कल मुझे याद नहीं है, यहां भोजन में आमरस दिया था। है न? कब? *श्रोता: कल।* कल, अच्छा! पहले तो सबको एक-एक कटोरी आमरस दिया, फिर हमारे अमृतभाई ने आ-आकर सबको एक-एक, दो-दो, तीन-तीन, दस-दस, बारह-बारह, हं? फिर जो हमें पहले बहुत अच्छा लगता था, नहीं-नहीं आपको पीना है, पंद्रहवीं कटोरी लो, तो कैसे लगने लगा हां? यानी जो चीज़ हमें पहले इष्ट लगती थी वही चीज़ कुछ समय के बाद अनिष्ट लगने लगी। ख्याल में आया?

अभी पहले क्या देखा था? एक ही वस्तु किसीको इष्ट, किसीको अनिष्ट लगती है और एक ही वस्तु हमको पहले इष्ट लगती थी, वही अनिष्ट लगने लगी। इसतरह कहते हैं, संयोग जो हैं, संयोगी पदार्थ जो हैं वे ना इष्ट होते हैं ना अनिष्ट। जो पदार्थ इष्ट भासित होते हैं उनके प्रति अनुराग उत्पन्न होने से, उन पदार्थों को प्राप्त करने की चेष्टा करता है; और जो पदार्थ अनिष्ट भासित होते हैं, उनके प्रति द्वेष उत्पन्न होने से उन पदार्थों को दूर करने की इच्छा होती है। इससे ज्ञात होता है, परपदार्थ या संयोग राग-द्वेष के कारण नहीं होते, परंतु अतत्त्वश्रद्धान यानी मिथ्यात्व यही कषायों का कारण है। यही बात अभी हमने उदाहरण के माध्यम से देखी थी। यह हमारे परपदार्थों के प्रति यथार्थ श्रद्धान नहीं है तो यह यथार्थ श्रद्धान यानी क्या? उस बात को भी हम देखेंगे; तो कह रहे हैं तत्त्वों संबंधी विपरीत श्रद्धान, विपरीत ज्ञान एवं तदनुसार होनेवाला विपरीत आचरण, इसीको शास्त्रीय भाषा में मिथ्यादर्शन यानी पहले क्या बताया था? विपरीत श्रद्धान उसीको कहेंगे। विपरीत श्रद्धान जो है न, उसीको कहा मिथ्यादर्शन, विपरीत ज्ञान को कहा मिथ्याज्ञान और तदनुसार होनेवाला जो विपरीत आचरण उसको कहेंगे मिथ्याचारित्र। अनादि से चला आ रहा यह मिथ्यात्व सहज ही उपजता है यानी निसर्गज है; यानी इसको किसीने सिखाया नहीं है, यह तो सहज ही ऐसी अनादि से मिथ्या मान्यता जीव की होती है इसे अगृहीत मिथ्यात्व कहते हैं। तथा कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्र के उपदेश से नया ग्रहण किया हुआ मिथ्यात्व, उसको क्या कहेंगे? हां जी? *श्रोता: गृहीत मिथ्यात्व।* गृहीत मिथ्यात्व कहेंगे। देखो, इसका अर्थ क्या निकलता है? इस मानव जीवन में, महेन्द्रभाई! इस मानव जीवन में करने लायक एक ही बात है। वह

कौनसी है? सम्यग्दर्शन की प्राप्ति एवं वीतरागता की वृद्धि। देखो, प्रत्येक जैनशास्त्र में इसीका उपदेश दिया है। किसका उपदेश दिया है? सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र कैसे प्राप्त करें? इसका मंत्र क्या कहा? हर अनुयोग में दिया गया है और द्रव्यानुयोग के जितने शास्त्र हैं वे सारे के सारे इसीसे भरे हुये हैं।

देखो, मैं एक सत्य घटना आपको बताता हूं। इ.स. १९७५ में हमें यह अध्यात्म की थोड़ी बहुत पहचान हुयी और रंग चढ़ा। तो हम तो इतने ओत-प्रोत हो गये कि हम सोनगढ़ गये। सोनगढ़ तो मैं और मेरे पिताजी दोनों ही गये थे। तो वहां एक महीना हम रहे। पंद्रह दिन हो गये तो वहां कानजीस्वामीजी को सुनकर ऐसा लगने लगा कि वे हमें सम्यग्दर्शन प्राप्त करने का कोई न कोई रास्ता तो अवश्य बतायेंगे ही बतायेंगे। तो एक दिन दोपहर में हम जाकर उनसे मिले और उनसे बोले साहब! क्या है भाई? कुछ भी करो लेकिन सम्यग्दर्शन कैसे प्राप्त करें इसका हमें ज़रा थोड़ासा कोई इलाज बताओ। अच्छा! तुम कब आये यहां पर? बोला, पंद्रह दिन हो गये साहब। पंद्रह दिन हो गये? तो व्याख्यानमां नथी बेसता? यानी आप व्याख्यान में नहीं बैठते हैं? मैंने कहा बिलकुल बैठता हूं साहब। पूरे दिन में तीन बार जो आपका जो कुछ चलता है प्रोग्राम उसमें मैं रहता ही रहता हूं। तो बोलते हैं – नहीं! तो तमे शुं सांभळो छो? यानी आप क्या सुनते हो? मैं तो हर व्याख्यान में कम से कम चार-पांच बार तो सम्यग्दर्शन कैसे होगा इसकी बात बताता हूं। इसका अर्थ है कि तुझे रुचि नहीं है, जा। मैं तो बहुत नाराज हुआ; अरे, पंद्रह दिन मैं बाल-बच्चों को, बीवी को छोड़कर आपके पास बैठा हूं, रहा हूं और आप बोलते हो कि आपको रुचि नहीं? तो कह रहे हैं कि यह बात ऐसी ही है। प्रत्येक शास्त्र में, गुरुदेवश्री के प्रत्येक व्याख्यान में, अरे! मैं तो कहता हूं समयसार जैसे ग्रंथों में हर पन्ने पर यह बात है कि आत्मानुभूति कैसे करना, यानी इस संसार से बाहर निकलने का मार्ग क्या है।

यहां तो कह रहे हैं कि श्रावकाचार संबंधी ग्रंथों में सर्वप्रथम सम्यग्दर्शन अधिकार है क्योंकि श्रावक का सर्वप्रथम कर्तव्य सम्यग्दर्शन प्राप्त करना यही होता है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र को ही धर्म अर्थात् मोक्षमार्ग कहते हैं। आचार्य उमास्वामी ने तो तत्त्वार्थसूत्र ग्रंथ में लिखा है कि **सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः।** यह तो पहले अध्याय का पहला सूत्र है। हम जानते हैं और इसके लिये कहते हैं कि दूसरा सूत्र **तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्।** यानी उन्होंने क्या बताया? तत्त्वों के श्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहते हैं। तो

मैंने उनको कहा कि ज़रा कोई टूक में, टूक में यानी क्या इन शॉर्ट, हमको तो बतायें। अरे! इन शॉर्ट अगर तुम समझते, तो इतने ग्रंथ लिखने की आवश्यकता क्या थी? ख्याल में आया? यह जो बात है, तो हमें तो प्रत्येक शास्त्र में यह बात आती है और वह जो सम्यग्दर्शन कैसे करना है इसकी बात आती है, तो हम उसी बात को टाल कर बाकी बातों में अटक जाते हैं। तो कह रहें हैं, देखो, उमास्वामीजी की तो बात छोड़ो, लेकिन कह रहे हैं कि आचार्य समंतभद्र जो हैं उन्होंने जो रत्नकरण्ड श्रावकाचार लिखा है, उसमें भी वे कहते हैं कि **सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वराः विदुः।** फिर वे लिखते हैं **श्रद्धानं परमार्थानाम् आप्त आगम तपोभृताम्** सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के श्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहते हैं। क्या बताया? देखो, ये दो आचार्य हैं, एक आचार्य ने कहा कि सात तत्त्वों के श्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहते हैं। दूसरे आचार्य ने लिखा है कि सच्चे देव, सच्चे गुरु, सच्चे शास्त्र, इनके श्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहते हैं। तो किसी भोले जीव को ऐसा संभ्रम होगा कि, क्यों? धीमंतभाई? क्या संभ्रम होगा कि तत्त्वों के श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शन करना चाहिये या सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शन? क्योंकि दो शास्त्रों में जुदी-जुदी प्रकार से बात बतायी न? तो हमें लगता है कि क्या करना है भाई?

सात तत्त्वों को यथार्थ जानोगे तो उसीमें सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का श्रद्धान भी आता है यह बात तुम्हारी समझ में आयेगी। अब उसको भी हम इन डिटेल में आगे देखने जा रहे हैं। तो कहते हैं, इसमें सबसे पहले आवश्यक नियम क्या है? क्योंकि हमको प्रयोजनभूत जानना है न? तो कह रहे हैं पहला आवश्यक नियम तो यह है कि ये तत्त्व अरिहंतों ने यानी किन्होंने? जिनेन्द्रों ने बताये हुये तत्त्व ही होना ज़रूरी है। क्यों साहब, ऐसी क्यों आप कंडिशन डाल रहे हैं? कंडिशन इसलिये डाल रहे हैं कि अन्य, जिसको हम अन्यमती कहते हैं। वे भी अपने-अपने तत्त्व कहते हैं। कोई पांच तत्त्व कहता है, कोई बाईस तत्त्व कहता है, कोई अन्य जो भी उनके मन में हैं उतने कहता है। वे तत्त्व नहीं होने चाहिये क्योंकि अन्यमतियों में भी उनके अपने-अपने तत्त्व हैं और वे भी हम आपको मुक्ति दिलाते हैं ऐसे दावा करते हैं। मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रंथ में विविधमत–समीक्षा नामक पांचवां अधिकार पढ़ने पर इसके बारे में विस्तृत जानकारी मिलेगी, यानी कौनसे मत में कितने तत्त्व हैं वगैरह। किसीको जानने की अगर बहुत इच्छा हो तो वह मोक्षमार्गप्रकाशक नामक जो ग्रंथ है, उसका पांचवां अधिकार अवश्य पढ़े।

देखो, अगर आपने जैनदर्शन का स्वाध्याय किया होगा, तो उसमें छहढाला में भी लिखते हैं **तातैं** (इसलिये) **जिनवर कथित तत्त्व अभ्यास करीजे।** कैसे तत्त्वों का अभ्यास करना चाहिये? तो कहते हैं जिनवर कथित। यह जिनवर क्या होता है भाई? जिन किसे कहना? *श्रोता: जो वीतरागी होते हैं।* हां, आप कहते हैं कि जिन उन्हें कहना जो वीतरागी होते हैं। बहुत अच्छा! देखो, पहले तो जैन किसे कहना इस बात का हमें एहसास होना चाहिये। जैन कितने प्रकार के हैं मालूम है आपको? हां? क्या कह रहे हैं? *श्रोता: चार। दूसरा श्रोता: तीन।* आप कह रहे हैं चार, आप कह रहे हैं तीन। आप कितना कह रहे हैं? *श्रोता: मालूम नहीं।* मालूम नहीं, आप कितना कहती हैं बहन? *श्रोता: तीन।* हम आपको चार बताते हैं, बाद में तीन पर आयेंगे। क्या है? दोनों को छोड़कर हम आगे बढ़ते हैं। जिस जीव ने सम्यग्दर्शन प्राप्त किया है, उसको जैन कहेंगे। तो इसमें हम कहां हो सकते हैं, वह अपना-अपना देख लेना हो! और जिन्होंने, क्या कहते हैं कि अरिहंत दशा प्राप्त की है, वे तो जिनवर हैं। अभी जिन क्या है? उसको हम क्योंकि विषय बहुत लंबा हो जायेगा, इसलिये हम उसको यहीं छोड़ देते हैं। तो जिनवर यानी जिनेन्द्र भगवान ने जो तत्त्व कहे हैं, **जिनवर कथित, तत्त्व अभ्यास करीजे।** तो यह कह रहे हैं, छहढालाकार ने भी यही बात बतायी है कि जो तत्त्व हैं, कौनसे? प्रयोजनभूत तत्त्व हैं वे कैसे होने चाहिये? तो कहते हैं जिनेन्द्र भगवान ने बताये हुये होने चाहिये, यानी हर शास्त्र में यही बात कह रहे हैं।

ये प्रयोजनभूत सात तत्त्व हैं। उनके नाम भी हमें याद हैं। फिर भी मैं पूछूंगा। इन सात तत्त्वों के नाम कौन बताना चाहेगा? अच्छा! हां बोलो बेटा। *श्रोता: जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष।* अच्छा! आप क्या कहेंगे श्लोका? इन्होंने सही बोला है? हां? कुछ गड़बड़ हो गयी है क्या? हां, बोलो बेटा। *श्रोता: इसमें पुण्य-पाप रह गये हैं।* अच्छा, अच्छा, बहुत अच्छा! उनका कहना है कि इसमें पुण्य-पाप रह गये हैं। तो पुण्य-पाप उसमें हम ॲड करते हैं, तो नौ हो जायेंगे, है न? तो उन्होंने जो नाम बताये, उसमें नाम तो सही बताये लेकिन कुछ रह गया है। बोलो त्रिशला, हां हां, बोलो-बोलो। *श्रोता: जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष।* बहुत अच्छा! यह देखो, यह सब बच्चे कितने होशियार हैं, हां-हां कोई बताना चाहेगा? हां बोलो रिया, जोर से बोलना। वह छोटी बच्ची जोर से बोलती है। *श्रोता: तत्त्व।* शाबाश! क्या बोला उसने? जोर से बोल। अरे! जोर से बोल। *श्रोता: जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व...।* जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, आस्रवतत्त्व है न, ऐसे बोलना

चाहिये न बेटा? देखो, हमने क्या पूछा? तत्त्वों के नाम बताओ। तो आपने जीव कह दिया और हम रुक गये। तो वह जीवद्रव्य भी हो सकता, जीव उसमें पंचास्तिकाय में जीवास्तिकाय भी हो सकता है। इसलिये हम तत्त्व की बात कर रहे हैं। यह बात मैंने पहले ही दिन बतायी थी अगर आपको याद होगा तो। तो जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, इसतरह सबके पीछे तत्त्व जोड़ना है। आपका सरनेम क्या है? हां, सरनेम यानी क्या बोलते हैं आप लोग उपनाम और मराठी में आडनांव। हां जी? *श्रोता: सदावर्ते।* सदावर्ते। तो आप जो भी नाम होगा तो उसके आगे सदावर्ते लगायेंगे। आपका भाई होगा, तो उसके आगे सदावर्ते लगायेंगे। है न? क्योंकि एक फॅमिली के हैं न आप? तो ऐसे सदावर्ते हर एक के सामने लगायेंगे। वैसा यहां तत्त्व की फॅमिली है। तो तत्त्व, तत्त्व, तत्त्व सबके सामने बोले। अभी हम आपसे पूछेंगे कि छह द्रव्यों का नाम क्या है? तो आप कैसा बतायेंगे बोलो? *श्रोता: जीवद्रव्य।* हां, जीवद्रव्य, इसतरह से आगे बढ़ना।

चलो अभी हम क्या कह रहे हैं कि तत्त्व यह शब्द कैसा तैयार हो गया? उसको हम देखना चाहेंगे। तो यह शब्द कैसा है? तत् अधिक त्व – तत्त्व। यह तत्त्व जब लिखते हैं, तो त होता है वह डबल त होता है। तत् और त्व मिलकर तत्त्व होता है। तो तत् का अर्थ क्या? तो कहते हैं तत् यानी वह और त्व यानी पना; उसका वहपना, ख्याल में आया? वह है तत्त्व यानी जो वस्तु है, उसका जो भाव है, उसको वस्तुपना यानी वस्तुत्व कहेंगे; वस्तु का वस्तुपना। नहीं समझ में आया आपके? देखो, अभी हम महेन्द्रभाई की ही बात लेते हैं क्योंकि उन्होंने बताया कि भाई, यह मेरे साथ जो शरीर है, उसकी उम्र ८१ साल की है। तो अभी वे कैसे हैं? वृद्ध हैं – ऐसा समझते हैं। हम भले वृद्ध कहे लेकिन वे तो स्वयं को जवान मानते हैं हो! डरना मत। तो क्या कह रहे हैं? यह जो वृद्ध है, उनका जो वृद्धपना है, उसको वृद्धत्व कहते हैं। ख्याल में आया? और यहां जो मातायें बैठी हैं, वे हैं तो माता लेकिन उनका मातृत्व यानी मातापना जो है, क्या वह उनसे जुदा है? ख्याल में आया? यानी वृद्धत्व, मातृत्व, इसतरह त्व लगाने से, उसका वह भाव होता है यह बात ख्याल में आती है। तो ये सात तत्त्व जो हैं, जिनका हमने पहले नाम लिया था। जीवतत्त्व यानी जीव का जीवपना जिसमें है ऐसा जो तत्त्व है उसको हम जीवतत्त्व कहेंगे।

तो कह रहे हैं कि प्रयोजन यानी हेतु अर्थात् कारण। किसी विद्यार्थी से पूछा जाये,

किसको? आपको पूछा जाये ऐसा बोलते हैं कि आपके पढ़ाई का प्रयोजन क्या है? तो आप क्या उत्तर देंगे? मुझे पंडित बनना है या आत्मा का अनुभव करना है? तो कोई कहता है कि मुझे डॉक्टर बनना है, यह मेरा प्रयोजन है। व्यापार करनेवाले को पूछा जाये कि तेरा प्रयोजन क्या है? वह कहता है कि धन बनाना, मुझे धनवान बनना है और भोजन करनेवाले का प्रयोजन क्या है? तो कहते हैं भूख मिटाना और यहां आये हुये बच्चों से पूछा जाये कि तुम्हारा प्रयोजन क्या है? तो कहते हैं बाहर खेलते हुये ऊधम मचाना है। शास्त्र स्वाध्याय करना, ऐसा कोई नहीं बोलते हैं, है न? क्या कहा? तो यह जो है, प्रत्येक जीव का प्रयोजन दुःख दूर करने का अर्थात् सुखी होने का है क्योंकि बच्चे तो खेलने में मज़ा मानते हैं और तुम्हारे जैसे लोग तो धन कमाने में मज़ा मानते हैं, सुख मानते हैं। इसतरह, ऐसी जो बातें है जिनका ज्ञान प्राप्त करके और जिनकी दृढ़ श्रद्धा या प्रतीति करके कि ये बातें ऐसी ही हैं, अन्यथा नहीं ऐसा पक्का विश्वास-निर्णय हुये बिना हमारा दुःख दूर नहीं होगा। यह किसकी बात कह रहे हैं? जो प्रयोजनभूत तत्त्व हैं, उन प्रयोजनभूत तत्त्वों में यह सारी बातें ऐसी ही हैं। वह कैसी हैं हम देखने जायेंगे; ये सारी बातें ऐसी ही हैं, अन्यथा नहीं ऐसा पक्का विश्वास यानी पक्का श्रद्धान यानी पक्की मान्यता और निर्णय हुये बिना हमारा दुःख दूर नहीं होगा और सुख प्राप्त नहीं होगा, उन बातों को प्रयोजनभूत तत्त्व कहते हैं।

यह प्रयोजनभूत तत्त्व क्या है? यह बात चल रही है और अप्रयोजनभूत बातें जैसी हैं, वैसी जानना, मानना अथवा विपरीत मानना इस कारण से मिथ्यादर्शन नहीं होता। यह बहुत मार्के की बात है, हम समझ जायें उतना अच्छा है। क्या कह रहे हैं, यहां इस बात की हमें इन्फॉर्मेशन दे रहे हैं जो अप्रयोजनभूत बाते हैं, उसको जैसी हैं, वैसी जानना और मानना एक बात हो गयी अथवा विपरीत मानना इससे उस जीव को मिथ्यादर्शन नहीं होता है। जैसे, किसीसे पूछा जाये कि यह सुदर्शन मेरु जो है, उसकी ऊंचाई कितनी है? भाई आप जानते हैं? कुछ भी तो बोलो? नहीं जानते हैं। कौन जानता है इधर? हां। *श्रोता: एक लाख चालीस योजन।* हां, एक लाख चालीस योजन। तो एक लाख योजन कहे तो उसकी मान्यता जैसा सच है, वैसी नहीं है। सुनना, ज्ञान भी उसका सही नहीं है और किसीने कहा, नहीं, नहीं, एक लाख चालीस योजन है; तो उसकी मान्यता तो सही है, ज्ञान भी सही है लेकिन जिस जीव ने वह विपरीत या अलगसा माना है, फिर भी वह मिथ्यादृष्टि है ऐसा हम

नहीं कह सकते क्योंकि वह ज्ञान के क्षयोपशम में अंतर पड़ा है। ख्याल में आया न? श्रद्धा में कोई दोष नहीं है इसलिये क्या कह रहे हैं? अप्रयोजनभूत बातें जैसी है वैसी जानना यानी एक लाख चालीस योजन है ऐसा जानना अथवा मानना, यह तो बात सही हो गयी अथवा विपरीत मानना, यानी जैसा है नहीं वैसा मानना, उसे मिथ्यात्व नहीं कहते।

अभी जैसे आपने हमको पूछा कि विदेहक्षेत्र जो है, कौनसा? यह जम्बूद्वीप से संलग्न है, ऐसा जो विदेहक्षेत्र है, तो वहां कितने विदेहक्षेत्र हैं? तो कोई कहेगा तीस हैं, कोई कहेगा चौंतीस हैं, कोई कहेगा बत्तीस हैं; तो यह क्या है? अप्रयोजनभूत बात है। लेकिन सच्चे देव-गुरु-शास्त्र अथवा सात तत्त्वों के बारे में विपरीत जानना, मानना हो गया तो वह जीव मिथ्यादृष्टि हो गया और उसी बात को सही जानता, मानता है तो वह सम्यक्त्वी होगा। ख्याल में आया? देखो, डिफरन्स क्या है? कि अप्रयोजनभूत बातें जो हैं, वह जैसी हैं वैसी जानना अथवा मानना अथवा दूसरा ऑप्शन क्या है? विपरीत मानना। इस कारण से मिथ्यादर्शन नहीं होता परंतु प्रयोजनभूत बातें अन्यथा मानने से मिथ्यादर्शन होता है। हां, क्या कह रहे हैं? अच्छा-अच्छा! देखो, यहां क्या कहते हैं? पंडित दौलतरामजी भी छहढाला में कहते हैं, **जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व, सरधैं तिनमांहि विपर्ययत्व।** यानी यह जो जीवादि – जीव आदि जो प्रयोजनभूत तत्त्व हैं, उनका अगर विपरीतरूप से वह श्रद्धान करता है तो वह योग्य नहीं है। तो क्या कह रहे हैं? अपना प्रयोजन क्या है? तो कहते हैं दुःख दूर करना। किसका? हमें किसका दुःख दूर करना है? अपना-स्व का। बहुत अच्छा!

तो कहते हैं सर्वप्रथम, अभी यहां से हमको सीख दे रहे हैं कि सर्वप्रथम क्या करना है? स्व कौन है? मैं कौन हूं? इसे जाने बिना स्व का दुःख दूर कैसे होगा? ख्याल में आया? पहले में पहले बात कौनसी बतायी? स्व कौन है? यह स्व जानने में ही मेरी अनादिकाल से भूल हो रही है, इसलिये मैं स्व का दुःख दूर कर नहीं पा रहा हूं। क्या कहा कि स्व को जाने बिना स्व का दुःख दूर कैसे होगा? स्व को जानने के लिये स्व और पर यानी आपा-पर का ज्ञान होना आवश्यक है। देखो, यह बात बहुत ज़ोरदार है, क्या कहना चाहते हैं? अभी तो आपको यह बात बहुत मुश्किल से देखने में आती होगी, लेकिन जब हम छोटे थे, तब स्कूल को जाते थे, तो सायकल ऊपर जाते थे। तो सायकल पर जाते-

जाते एक दिन क्या हो गया? कि हमारे सायकल के अगले पहिये का पंक्चर हुआ। तो हम सायकल का वह पंक्चरवाला होता है – सायकल रिपेअरर होता है, उसके पास गये, तो मालिक तो वहां था नहीं। दूसरा ही कोई लड़का था, तुम्हारे से छोटा, या तुम्हारे जितना मानो न। तो उसके पास गये, भाई इसको जरा देख, हवा वगैरह बराबर है क्या यह देख। तो वह बोला, अच्छा-अच्छा! साहब, देखता हूं। तो उसने क्या किया? पम्प लिया और पीछे के पहिये में हवा भरना चालू कर दिया। थोड़ी देर में क्या होगा? हां? क्या-क्या बोल रहे हैं आप? *श्रोता: हवा ज्यादा होगी।* हवा ज्यादा होगी और क्या होगा? *श्रोता: टायर फट जायेगा।* टायर बर्स्ट होगा। बहुत अच्छा! देखो, इलाज किसका करना था? अगले चक्के का और हमने किसमें हवा डाली? हमने यानी उस लड़के ने, पीछे के चक्के में। पहला तो पंक्चर था ही था और उसके साथ-साथ पिछला भी हो गया। यानी उसने जो डिफेक्टिव्ह है यानी जो स्व है, उसको नहीं जाना और पर का इलाज करते बैठा। वैसा हम कर रहे हैं कि नहीं? यहां दु:ख किधर हो रहा है? *श्रोता: आत्मा में।* आत्मा में और हम इलाज किसका कर रहे हैं? ख्याल में आयी बात?

महावीरभाई अभी एकदम फटाफट बोल गये। बहुत अच्छी बात है। क्या कह रहे हैं? देखो, सर्वप्रथम स्व कौन है यानी क्या है? मैं कौन हूं, इसे जाने बिना स्व का दु:ख दूर कैसे होगा? स्व को जानने के लिये क्या करना चाहिये? स्व कौन है और पर कौन है इसका ज्ञान होना चाहिये। भाई, आज से ५० साल पहले की बात है, ५०-६० साल पहले। जब मैं छोटा था, ८-९ साल का, तब जहां बम्बई में रहने को आया, तो वहां जैन सोसायटी और गुजरात सोसायटी ऐसी दो सोसायटी की बात हो रही है। दोनों की बिल्डिंग्ज बिलकुल एक जैसी। मतलब दो बिल्डिंग में कोई ऐसा डेफिनेट अंतर हम नहीं बता सकते थे कि यह जुदी, मतलब यह मेरी है या यह मेरी है। तो मुझे अपने घर में प्रवेश करना है, तो मुझे किसको-किसको जानना पड़ेगा? हां जी? क्या कह रहे हैं? *श्रोता: बाजूवाले को भी जानना पड़ेगा।* हां आप कह रहे हैं, बाजूवाले को भी जानना पड़ेगा। अरे! हर बिल्डिंग का पता लगना चाहिये। मान लो दस बिल्डिंग हैं एक साथ, तो उसमें से एक कोई न कोई मेरी होगी न? तो मुझे मेरी जो बिल्डिंग है, उसको जानूंगा तो ही मैं मेरे घर प्रवेश कर पाऊंगा और अन्य को भी जानना कि नहीं जानना? अरे! क्या ज़रूरत है? सिर्फ अपने को जानो ना। आप यहां लंबा-लंबा क्यों कर रहे हैं? एक मूल बात बताओ।

अरे भाई! पर बिल्डिंग को भी जानना पड़ेगा क्योंकि इस बिल्डिंग में मेरा घर नहीं है, ऐसी जब मेरी खात्री-पक्की श्रद्धा होगी, तब मैं अपने घर में प्रवेश कर पाऊंगा। ख्याल में आया?

इसलिये क्या कह रहे हैं? कि मैं कौन हूं इसे जाने बिना स्व का दुःख दूर नहीं होता है। स्व को जानने के लिये स्व और पर इन दोनों का ज्ञान होना आवश्यक है। महेन्द्रभाई, इत्तेफाक से आपके प्रश्नों का उत्तर इसमें आ रहा है हो! ज़रा ध्यान से सुनना। यह बहुत अच्छा है कि इनको ऐसी उम्र में भी यह जानने की बहुत तमन्ना है कि साहब हमारी कितनी उम्र रह गयी है उनका यह कहना है हां। अब इस भव में हमको जो कुछ करना है वह करना ही है, तो मूलभूत बात बताओ हमको। देखो, कितनी अच्छी तमन्ना है, हां। तो उनके लिये कह रहे हैं, दूसरा पॉइंट, स्व और पर को एक जानकर पर का उपचार करने से स्व का दुःख कैसे दूर होगा? यह क्या कह रहे हैं? हमने आज तक मुझको यानी मैं आत्मा हूं उसको और इस शरीर को एक माना है। क्या कहा? स्व और पर को एक जानकर उपचार किसका किया? कि बहुत गर्मी है, चलो गन्ने का रस पीने जायेंगे। क्या कहा? पर का उपचार कर रहे हैं। बहुत ठंडी लग रही है तो हम वुलन कपड़े पहनेंगे; उपचार किसका किया? पर का। यह क्या स्व को और पर को नहीं जानते हुये दोनों को मिलकर एक कहा। तो कह रहे हैं कि स्व-पर को एक जानकर उपचार किसका हो रहा है? पर का उपचार कर रहे हैं। तो कहते हैं पर का उपचार करने से, स्व का दुःख कैसे दूर होगा? यह दूसरा पॉइंट समझ में आया? अब तीसरे पॉइंट में यह कह रहे हैं स्व से पर भिन्न है, इसलिये पर में अहंकार, ममकार करने से दुःखी ही होता है। देखा, देखो, यह बात भी बहुत अच्छी है। यहां पर यह समझा रहे हैं, यह स्व जो है यानी मैं जो आत्मा हूं, इससे पर यानी क्या? यह शरीर जो है, वह कैसा है? बिलकुल भिन्न है। फिर भी वह जो परपदार्थ है उसमें यह जीव अहंकार करता है, अहंकार करता है यानी उसीको मैं हूं मानता है, उसके बारे में गर्व करता है।

देखो, कोई महिला कहेगी कि मैं कितनी सुन्दर हूं, कोई पुरुष कहेगा देखो, मैं कितना ताकतवर हूं। तो ताकत काहे में है तेरी? अरे! मैं ५०० किलो ऐसे आसानी से उठाता हूं, तो उसमें क्या है? पर में अहंकार किया कि मेरे जैसा बॉडि बिल्डर इस जगत में

कोई नहीं है। मेरे जैसा... जो कुछ होगा समझ लेना। तो उसने पर में यानी इस शरीर में क्या किया? अहंकार किया कि यह शरीर मैं हूं। मैं आपसे पूछूंगा कि यह हमारी त्रिशला है न? वह आफ्रिका जाकर आयी है न? नहीं गयी है? पापा गये होंगे न? हां, किधर हैं पापा? वहां के जो लोग हैं, जो आप मोम्बासा, नैरोबी जहां घूमकर आये, वहां तो अधिकतर नीग्रो लोग रहते हैं। तो नीग्रो लोग कलर में कैसे होते हैं? हं? काले। तो उनके अपने शरीर के प्रति ममत्व होगा कि नहीं? ख्याल में आया? और गोरे लोगों को? तो मुझे यह पूछना है कि अपना शरीर गोरा होगा तो उससे भेदविज्ञान करना आसान है या काला होगा तो भेदविज्ञान करना आसान है? अरे! उस जीव ने उसमें ममत्व किया है, ममत्वबुद्धि की है। ख्याल में आया? तो कैसा होगा उसका? तो कह रहे हैं, स्व से पर भिन्न है, इसलिये पर में अहंकार, ममकार करने से दुःख ही होता है। तो कैसा भी हो, कोई अपने यहां हिन्दुस्तान में भी हमारे जैसा काला-कलूटा क्यों न हो, लेकिन उसको अपने शरीर के प्रति बहुत ममत्व है, मेरापन है।

देखो-देखो, ऐसी अभी इन्फॉर्मेशन आयी, रेडिओ पर, क्या बोलते हैं आजकल, टीव्ही पर कि बम्बई में बड़ी आग लगी। हम तो डर गये, तुरंत फ़ोन किया। अरे भाई! वह पेपरवाले ने बोला कि बम्बई में यानी सायन में आग लगी है। तो दिल और जलने लगा, क्यों सायन में? क्यों विरेशभाई? हमारे विरेशभाई भी सायन में रहते हैं न? हां महेंद्रभाई भी अच्छा! और मैं भी। तो हम तीनों को चिंता लगी कि कहां आग लगी – कहां आग लगी? सायन में लगी। बोले तीन बिल्डिंगें भस्मसात हो गयी। लेकिन जब पता लगा कि सायन के एक कोने में आग लगी थी, हां वे तीन बिल्डिंगें तो अपने घर से दूर हैं, तो हमें कितना दुःख होगा? लेकिन निर्मला निवास में आग लगी है – क्या कहा? तो, तो क्या होगा? अरे! मेरे बिल्डिंग में आग लगी? लेकिन दूसरा माला और ऊपर के माले साबुत हैं फिर तो हाश, हं? तो यह जो ममत्वबुद्धि है परपदार्थों में, तो यहां कह रहे हैं स्व से पर भिन्न है, फिर भी पर में अहंकार, ममकार करने से दुःख ही होता है। यह बात समझ में आयी? अब आगे बढ़ते हैं।

स्व और पर का ज्ञान होने से ही दुःख दूर होगा। ये चार बातें किसलिये बतायी हैं कि अपना प्रयोजन जो है, कौनसा? कि अपना दुःख दूर करके सुख प्राप्त करना है। इसके

लिये ये चार बातें मूल में बतायी हैं। तो कहते हैं इसमें स्वतत्त्व है जीवतत्त्व और परतत्त्व हैं, कौनसे परतत्त्व हैं? स्वतत्त्व है जीवतत्त्व और परतत्त्व कौनसे हैं? हां जी? अजीवतत्त्व। जोर से बोलना। *श्रोता: जीव के अलावा बाकी सब।* बहुत अच्छा! देखो, यह क्या कहती हैं बहन? कहते हैं जीवतत्त्व यह स्वतत्त्व है और जीव को छोड़कर बाकी सब कौनसे? अजीवतत्त्व, आस्रवतत्त्व, बंधतत्त्व, संवरतत्त्व और अन्य मोक्षतत्त्व तक जाना। ये कैसे हैं? परतत्त्व हैं; अजीव आदि में यह सब लेना हो। तो कहते हैं इन अजीवादि तत्त्वों में हम अब तक एकत्व करते आये हैं, अहंकार करते आये हैं, ममत्व यानी ममकार यानी प्रेम करते आये हैं और दुःखी हो रहे हैं। क्या बताया? तो हमने किसमें-किसमें एकत्व किया है? स्व को छोड़कर अन्य तत्त्वों में। अभी जो अन्य तत्त्व हैं, उनका अर्थ भी हम देखने जायेंगे। फिर यह बात, आपको अधिक स्पष्टता से ज्ञान में आयेगी। तो कह रहे हैं, पर को जानने में बाधा नहीं है! क्या कहा? पर को जानने में कोई बाधा नहीं है, पर को अपना मानने में बाधा है। देखो, पर को जानने में बाधा होती, तो कितनी बड़ी आपत्ति खड़ी होगी? क्या होगा साहब? हां साहब? *श्रोता: पर को जानने से दुःखी हो जायेंगे।* सुखी हो जायेंगे पर को जानने से? दुःखी हो जायेंगे? ओहो! पर को जानने में कोई बाधा नहीं। जो हमारे भगवान अनंतसुखी हैं वे पर को जानते हैं कि नहीं? तो कितने अनंतदुःखी होंगे वे! ख्याल में आया? देखो सुनो, आपने बहुत अच्छा उत्तर दिया ताकि मुझे विषय भी मिल गया लोगों को समझाने का।

देखो, पर को जानने में बाधा नहीं का अर्थ, पर तो जानने में आता ही है। यह तो हमारे पास साक्षात् ज्वलंत उदाहरण है कि जो हमारे सर्वज्ञ भगवान हैं वे किसको जानते हैं? सर्व को जानते हैं, इसलिये तो उनको सर्वज्ञ कहा है। तो दूसरों को जानने से दुःखी होंगे हम? दूसरों को जानकर उन्हें अपना मानने में दुःख है। ख्याल में आया? देखो, यह बेसिक बातें बिलकुल क्लिअर होवें तो अच्छी बात है। क्या कह रहे हैं, जानने के कारण नुकसान हो सकता होता तो केवलज्ञानी संपूर्ण लोकालोक को जानते हैं, फिर भी वे अनंतसुखी हैं। यह लिखा है और वही आपने बराबर उसके अनुसार हमें और अच्छा बताया। स्वतत्त्व को यानी जीवतत्त्व को यह मैं हूं, ऐसा जानना है; और पर – अजीव आदि तत्त्वों को यह मैं नहीं हूं ऐसा जानना है। देखो, आगे बढ़ते हैं, हमारा प्रयोजन है सुख प्राप्त करना। अनंतसुख मोक्ष में है इसलिये मोक्षतत्त्व का स्वरूप जानना भी आवश्यक है। अभी

देखो यहां यह बताना चाहते हैं कि जो सात तत्त्व हैं उनके नाम तो सबको याद हैं, अभी बताने की आवश्यकता नहीं है। नहीं, आप कहोगे तो यहां लिख कर रखेंगे। सात तत्त्वों में, हमें क्या चाहिये? तो अनंतसुख जो है यानी सुख की प्राप्ति करनी है, तो क्या कहते हैं? यह सुख थोड़ा बहुत नहीं, अनंतसुख कहां होता है? तो कहते हैं – मोक्षरूपी पर्याय में होता है। मोक्ष में होता है कि मोक्षरूपी पर्याय में होता है? तो कहते हैं मोक्षतत्त्व में होता है। इसलिये मोक्षतत्त्व का स्वरूप जानना आवश्यक है। अभी सात तत्त्वों को क्यों जानना, इसके बारे हम थोड़ासा यहां विचार करते हैं।

कहो तो, मोक्ष कहां है? अभी बताओ भैया, यह प्रश्न ऐसे पूछा जा रहा है कि मोक्ष कहां है? कौन बतायेगा? बोलो, आप बोलो हां भाई, मोक्ष कहां है? हां, अरे! भैया जोर से बोलो, टाइम क्यों बर्बाद करते हो? *श्रोता: लोकालोक के ऊपर।* हां, लोकालोक के ऊपर यानी लोकालोक के बाहर में। हां, कौन बतायेगा महिलाओं में से? पद्मजाताई? मोक्ष कहां है? *श्रोता: लोक के अग्रभाग में।* लोक के अग्रभाग में। आप क्या कहते हैं? *श्रोता: अपने स्वभाव में।* अपने स्वभाव में। अच्छा हां! देखो-देखो! हां जी। हां, देखो, जिन्होंने बताया है, लोकालोक के ऊपर, तो लोकालोक के बाहर तो कुछ होता ही नहीं है। जो आप क्षेत्र को बताना चाहते हैं और यहां किसीने ने बताया कि लोक के अग्रभाग में। तो मैं यह पूछना चाहता हूं कि जो अनंतसुख होगा वह क्षेत्र में होगा या जीव में होगा? तो यह जो अनंतसुख की प्राप्ति, वहां जाने के बाद होगी? या जहां मोक्ष हुआ यानी जिस पर्याय में, जिस समय वहां उस जीव के आठ कर्म नष्ट हुये, वहां मुक्ति हुयी या ऊपर जाने के बाद मुक्ति हुयी? ख्याल में आया न? तो यहां किसीने बताया जीव की पर्याय में मोक्ष है, बिलकुल सही है। तो यहां मुक्तता हुयी और वह उसी समय में ऊपर, लोक के अग्रभाग में जायेगा। तो हमको तो ऐसा ही लगता है, मोक्ष कहां है? ऊपर है। बंध कहां है? इधर है और मुक्तता किधर है? उधर है, ऐसा होगा कि नहीं? हां? हां, त्रिशला आप कुछ बताना चाहती थी, बोलो अभी। *श्रोता: जीव की पर्याय।* हां, जीव की पर्याय, बहुत अच्छा! देखो, अभी यह भी हम जीव की पर्याय में और अन्य कोई कर्म की पर्यायवाली जो बात है, वह भी हम देखेंगे। लेकिन आहिस्ते-आहिस्ते, स्लोलि-स्लोलि आगे बढ़ेंगे।

तो अभी बता रहे हैं कि हमारा प्रयोजन है कि सुख प्राप्त करना। अनंतसुख मोक्ष में

है इसलिये मोक्षतत्त्व का स्वरूप जानना भी आवश्यक है। कहो तो मोक्ष कहां है? तो स्वर्ग के ऊपर है या नीचे है? ऐसा पूछा। तो कह रहे हैं, चक्कर में पड़ गयी न? अरे! जहां बंध है वहीं मुक्तता यानी मोक्ष होता है। बंध जीव में होता है और मोक्ष भी जीव में ही होनेवाला है; बंध और मोक्ष तो जीव की ही अवस्थायें हैं। जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व द्रव्यतत्त्व हैं और अन्य सब तत्त्व उनकी ही अवस्थायें यानी पर्यायतत्त्व हैं। अब यह बात क्या है? हम देखेंगे, उसका क्या कहना है, यहां कहते हैं – जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व, इनको उन्होंने कहा द्रव्यतत्त्व है और जो आस्रवतत्त्व, बंधतत्त्व, वगैरह जो बाकी पांच तत्त्व हैं, वे तो कहते हैं कि वे पर्यायें हैं, पर्यायतत्त्व हैं और पहले दो – द्रव्यतत्त्व हैं। हां जी? वह बतायेंगे हम। जीव की पर्याय भी है और कर्म की पर्याय भी है। वह बात अभी आयेगी आगे, ज़रूर आयेगी। कहते हैं, बंध का अभाव होकर मोक्ष होनेवाला है, इसलिये मोक्षतत्त्व और बंधतत्त्व का ज्ञान ज़रूरी है।

हमें इन सात तत्त्वों का ज्ञान क्यों करना? आप केवल जीवतत्त्व की बात करो न? अन्य तत्त्व की बात करके हमें उलझन में क्यों डालते हो? बहुत लंबा-लंबा काहे को खिटपिट करते हो? ऐसा किसी शिष्य का प्रश्न था तो उसके लिये बता रहे हैं, पहले में पहले जो अत्यंत सुखस्वरूप ऐसी जो अवस्था है, उस मोक्षतत्त्व को जानना ही है और वह मोक्षतत्त्व कैसे प्राप्त होता है? तो कहते हैं कि बंध का अभाव होकर मोक्षतत्त्व प्राप्त होता है। यानी जो आठ कर्म बंधनरूप से हमारे साथ में हैं, उनका अभाव हो जायेगा, नष्ट हो जायेंगे तभी उसको मुक्तता होगी। तो बंधतत्त्व को भी जानना ज़रूरी है। इसमें बंध का कारण क्या है? हां, बोलो, आप-आप, जानती हैं? बंध क्यों होता है जीव को? क्या बोलती है जयश्रीताई? *श्रोता: मिथ्यात्व के कारण।* मिथ्यात्व के कारण और जो मिथ्यात्व जिसका नष्ट हो गया है, कोई सम्यग्दृष्टि हो गया है, तो उसका बंध होगा कि नहीं होगा? *श्रोता: होगा।* होगा? तो फिर बंध का कारण क्या है? एक ही शब्द में बताना है आपको। *श्रोता: आस्रव।* आस्रव। देखो, आपने वह बात सुनी है, कौनसी? एक कछुआ होता है और एक खरगोश होता है। दोनों रेस लगाते हैं और उसमें कौन जीतता है? *श्रोता: खरगोश।* खरगोश? या कछुआ? तो यह हमारा बम्बई का कछुआ है। तीन दिन लेट आयी है और फिर भी आगे दौड़ती है। ख्याल में आया? वह क्या कहती है, आस्रवतत्त्व है। क्या? उसके कारण बंध होता है। ख्याल में आया? तो आस्रव में किसको-किसको लेना उसकी बात

हम बाद में करेंगे। आज ही सब बात बतायेंगे तो दूसरी क्लास में कोई नहीं बैठेगा। चलो आगे, तो कहते हैं, बंधतत्त्व जो है, वह बंध क्यों होता है? तो कहते हैं आस्रव के कारण होता है। बंध का अभाव होकर मोक्ष होनेवाला है इसलिये मोक्षतत्त्व और बंधतत्त्व का ज्ञान ज़रूरी है। इसमें बंध का कारण है आस्रवतत्त्व, इसलिये उस आस्रवतत्त्व को भी जानना आवश्यक है और मोक्ष का कारण यानी मोक्ष क्यों होता है यानी मोक्ष का उपाय क्या है? तो कहते हैं संवर और निर्जरातत्त्व है। तो कितने हो गये? सब हो गये न?

आपा-पर में, जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व और अन्य तत्त्वों की बात की; फिर मोक्षतत्त्व क्योंकि अनंतसुख उसमें है तो उसको जानना है। तो मोक्ष कैसे होगा? कि बंध के अभावपूर्वक होता है, इसलिये बंधतत्त्व को जानना। तो यह बंध क्यों होता है? कि आस्रव के कारण से होता है तो आस्रवतत्त्व को भी जानना है। तो यह बंध रुकेगा, आस्रव रुकेगा तो कैसे? मोक्ष की प्राप्ति होने का उपाय क्या है? तो कहते हैं संवरतत्त्व और निर्जरातत्त्व। अभी उसका अर्थ तो अभी हमें यहां जो बताना चाहते हैं वह अभी हमको पता नहीं है, लेकिन उसकी भी बात हम आगे बढ़कर करनेवाले हैं। तो कहते हैं इस प्रकार ये सात तत्त्व हुये कि जिन्हें जानकर यथार्थ प्रतीति करना, यह सर्वप्रथम आवश्यक कर्तव्य है। यह आवश्यक कर्तव्य किसके लिये है? *श्रोता: जीव के लिये।* हां जी, कौनसा जीव? यह नेमिचंदजी का या इस भाईसाहब का। *श्रोता: मैं स्वयं।* हां, ऐसा बोलो न भाई! तुम तो ऐसा बोल रहे हो जैसे सर्वज्ञ और बाकी जीवों को ज़रूरत है, जाने दो अपने को कोई लेना-देना है नहीं, ऐसा मत बोलो। यह मेरे लिये है; पहले दिन बताया था कि यह शास्त्र मेरे लिये बताया जा रहा है ऐसा जब तक यह जीव जानता नहीं है, यह आत्मा की बात अच्छा! आत्मा की बात चल रही है? चलने दो-चलने दो। मैं तो आत्मा नहीं हूं, मैं तो परमात्मा हूं यानी नाम से हो! महावीर हो न तुम? तो हमें क्या लेना देना? ऐसा मत समझना भाई, पर्याय जितना अपने को नहीं समझना। जब भी प्रश्न पूछा जाये तो वह मेरे लिये है; यह समझकर हम आगे बढ़ेंगे तो ही बात पल्ले पड़नेवाली है।

तो यहां कह रहे हैं, इस प्रकार ये सात तत्त्व हुये, जिन्हें जानकर यथार्थ प्रतीति करना यह सर्वप्रथम आवश्यक कर्तव्य है। यह जो उपदेश दिया है, वह मेरे लिये है। अब इन्हीं तत्त्वों के नाम फिर से, क्रम से लिख रही हूं; यानी यहां इस पुस्तक में ऐसा लिखा है,

इसलिये लिख रही हूं। तो कहते हैं **जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, आस्रवतत्त्व, बंधतत्त्व, संवरतत्त्व, निर्जरातत्त्व और मोक्षतत्त्व।** कितना आसान है न यह? हम तो नाम तुरंत याद कर लेंगे। तो आप सबको तो नाम याद हो गये न? क्या अभी पूछना पड़ेगा, हां? पांचवां तत्त्व कौनसा है? *श्रोता: संवरतत्त्व।* हां पहले चार कौनसे हैं? *श्रोता: जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, आस्रवतत्त्व।* चलो जाने दो, *श्रोता: बंधतत्त्व।* बराबर है और सातवां तत्त्व? *श्रोता: मोक्षतत्त्व।* मोक्षतत्त्व, और पहला? *श्रोता: जीवतत्त्व।* तीसरा? *श्रोता: आस्रवतत्त्व।* बहुत अच्छा, सबको याद हो गया न? अभी क्या है छोटे-छोटे बच्चे याद कर लेते हैं। अब इसतरह से हमने यह देखा कि ये जो सात तत्त्व हैं, इसके प्रयोजन संबंधी मामूली पहचान अभी हमें हुयी है और ये उसके आगे की जो बात है वह हम अगले चॅप्टर में – अगले पत्रांक में देखेंगे। यानी तत्त्व किसे कहते हैं? प्रयोजनभूत तत्त्व कौनसे हैं और कितने हैं? तत्त्वों के नाम तथा लक्षण, इन सबके बारे में विस्तृत चर्चा, प्रयोजनभूत तत्त्वों संबंधी जीव की अनादि से होनेवाली विपरीत मान्यतायें, सात तत्त्वों में हेय, उपादेय और ज्ञेयतत्त्व कौनसे हैं और इन सात तत्त्वों को जानकर उसमें छुपी हुयी आत्मज्योति कैसे पहचाने? इसका ही अर्थ क्या है? स्व-पर का भेदविज्ञान कैसे करें? इन बातों को हम कुछ ही समय बाद देखने जायेंगे। जब तक अभी एक या डेढ़ मिनट बाकी है, किसीको इसके बारे में कोई प्रश्न हो, तो पूछ सकते हैं आप।

श्रोता: दो बात बतायी न, एक स्वतत्त्व है – जीवतत्त्व और बाकी के सब – परतत्त्व; तो उसमें मोक्षतत्त्व भी आ गया परतत्त्व में और अभी लास्ट बात बतायी, उसमें मोक्ष को जीव की पर्याय कहा। तो द्रव्य से पर्याय को अलग कैसे?

हां, आपका ऐसा कहना है कि आपने बताया कि यह जीवतत्त्व है वह स्वतत्त्व है और अन्य अजीवादि जो हैं वे परतत्त्व हैं। अभी आप बता रहे हैं फिर से कि जीव यह द्रव्यतत्त्व है और मोक्ष यह पर्यायतत्त्व है। तो आप द्रव्य से पर्याय को जुदा कैसा कर रहे हैं? बराबर यही कहना है न? लेकिन यहां जीवद्रव्य की बात न होते हुये तत्त्वों की बात चल रही है। इतना ही उत्तर अभी पर्याप्त है, उसका विशेष खुलासा आगे आयेगा।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

५२. प्रयोजनभूत सात तत्त्व – २

अभी हमने ये प्रयोजनभूत तत्त्व कौनसे होते हैं, उनके क्या नाम हैं, इसके बारे में जानकारी ली और आगे बढ़ने से पहले यहां एक प्रश्न आया हुआ है। प्रश्नकार का कहना है कि आपने कहा है कि शास्त्रज्ञान से ही सम्यक्त्व होता है, तो तिर्यंच को सम्यक्त्व कैसे प्राप्त होता है? कृपा करके समझाइयें। देखो, पहले तो आपका समझने में थोड़ासा घोटाला है कि शास्त्रज्ञान से ही सम्यक्त्व होता है, ऐसा मैंने नहीं कहा। मैंने कहा था कि जब यह जीव अपने स्वरूप में एकाग्र हो जाता है, उस समय उसको निश्चितरूप से आत्मज्ञान कहो या सम्यग्ज्ञान कहो, हो जाता है। उसमें निमित्त देव, गुरु और शास्त्र हैं, ख्याल में आया? क्योंकि जब अंतरंग निमित्त और बहिरंग निमित्त की बात की थी, उस समय हमने देखा था कि अंतरंग निमित्त तो कर्मों का अनुदय है और बाह्य निमित्त उसमें देव, गुरु, शास्त्र आदि हैं। लेकिन केवल शास्त्रज्ञान से ही सम्यक्त्व होता है, ऐसा आग्रह नहीं है। क्यों?

ऐसा देखा जाये तो आपका जो कहना है कि तिर्यंच को सम्यक्त्व कैसे प्राप्त होता है? तो वैसे मैं आपसे पूछता हूं कि जो नारकी जीव हैं, तो नरक में भी सम्यक्त्व प्राप्त होता है यह आपको विदित है क्या? देखो, आपको मालूम नहीं होगा, तो मैं आपको बताता हूं। नरक में भी सातवें नरक में कोई देव जाकर उनको उपदेश देवे, ऐसा होता ही नहीं है। अधिक से अधिक तीसरे नरक तक देवगति का कोई जीव जाकर संबोधन करे, उनको उपदेश देवे, लेकिन चौथे, पांचवें, छठे, सातवें नरक में कोई देव नहीं जा सकता है। फ़िर भी सातवें नरक में असंख्यात सम्यग्दृष्टि जीव हैं, कितने? असंख्यात। छठे में? असंख्यात; पांचवें में? असंख्यात; चौथे में? ऐसे ऊपर तक आना, ख्याल में आया? अब आगे की बात नहीं बताऊंगा, नहीं तो आपको हज़म नहीं होगी कि दूसरे से लेकर सातवें नरक तक के जितने असंख्यात सम्यग्दृष्टि जीव हैं, उनसे असंख्यातगुणा सम्यग्दृष्टि जीव पहले नरक में हैं। मैं एक बॅकग्राउंड बता रहा हूं। अब आगे क्या है कि शास्त्रज्ञान से सम्यक्त्व होता है, शास्त्रज्ञान से ही होता है, यह बात भूल जाना। तो यह तो मनुष्यपर्याय के जीव को, उसके मनुष्यपर्याय को लक्ष्य में रखते हुये दिया हुआ उपदेश है, ख्याल में आया?

दूसरी बात, फिर भी प्रश्न अनुत्तरित रहता है कि तिर्यंच को सम्यक्त्व कैसे होता

होगा? मूल बात तो ऐसी है कि भावभासन होने से। यानी मुझे राग आया है, क्रोध आया है, यह भी वह जानता नहीं है कि क्रोध क्या है, लेकिन वह जानता है कि यह मेरे लिये दु:खस्वरूप है क्योंकि वह तिर्यंच भी संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव है । जैसे गाय है न, तो वह गाय को बछड़ा पैदा होता है तो उसके प्रति उसको वात्सल्यभाव होता है, उसके शरीर को वह चांटती है, देखा होगा आपने। तो उसको वात्सल्य यह शब्द मालूम होगा कि नहीं? लेकिन वात्सल्यपने का भावभासन होता है न! वैसे मैं जीव हूं, मैं इन अन्य बाकी सब वस्तुओं से यानी तत्त्वों से भिन्न हूं; अभी तत्त्वों का तो नाम मालूम नहीं है; आस्रव से, राग से भिन्न हूं, बाकी सब बातें उसके भाव में आती हैं, उसको भावभासन अवश्य होता है और उस तरीके से उसे सम्यक्त्व होता है, बात ख्याल में आ गयी? यह प्रश्नकार जो भी है, उनको तो यह उत्तर समझ में आया होगा, ऐसा समझ कर हम आगे बढ़ेंगे और कोई डाउट है?

श्रोता: वहां देशना किसकी मिलती है, ऐसे तिर्यंच की गति में या नरकगति में? हां, देखो, नरकगति में जो है न, तो उसके पूर्वभव की देशना भी काम में आती है। यह पूर्वभव की देशना तीन भव तक चलती है। अगर वह संज्ञी पंचेन्द्रिय-संज्ञी पंचेन्द्रिय-संज्ञी पंचेन्द्रिय ऐसा होते गया, तो तीन भव पहले की जो देशना होगी, वह भी काम में आ सकती है। *श्रोता: अपने महावीर स्वामी का जीव जो सिंहपर्याय में था, वहां उन्हें सम्यग्दर्शन हुआ, ऐसा बताया है, ऐसा बाकी जीवों में भी?* हर एक के अलग-अलग बाह्य निमित्त होंगे, ख्याल में आया न? तो सबकी थोड़े ही हिस्टरी लिखते हैं! जो तिरसठ शलाका पुरुष हैं, उनकी बात लिखेंगे कि अनंत जीवों की बात लिखेंगे, है न? और अगर आपको जानना है न, एक ही उपाय है, केवलज्ञानी हो जाओ। नहीं समझे? नाराज हो गये? अरे! हम कुछ नहीं बोल रहे सिर्फ केवलज्ञानी बनो कह रहा हूं। वह अच्छा है या बुरा है?

चलो, यहां पर यह कह रहे हैं कि जब-जब हम शास्त्र स्वाध्याय करते हैं, तब एक बात सदा स्मरण में रखनी चाहिये। कौनसी? कि मुझे अपने को पहचानना है। कौनसी बात ध्यान में रखनी है? मैं यह पढूंगा और कल आपको सिखाऊंगा, ऐसा सिखाने के लिये शास्त्र स्वाध्याय नहीं करना है। तो कहते हैं कि मुझे अपने को पहचानना है, तो क्या है? ये जो छह द्रव्य हैं, इन छह द्रव्यों में मेरा स्थान कौनसा है? मैं एक स्वतंत्र जीवद्रव्य हूं, मेरा अस्तित्व मेरे द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव में है और मैं गुण पर्यायों से युक्त हूं। यह पर्याय प्रतिसमय

पलटने पर भी, मैं ध्रुवरूप से कायम टिका हुआ हूं। वस्तुस्थिति ऐसी होने पर भी, मैं एक जीवद्रव्य अधिक अनंत पुद्गल परमाणु, ऐसे अनेक द्रव्यों की असमानजातीयद्रव्यपर्याय, उसका ही अर्थ मनुष्यपर्याय को ही मैंने स्व माना और इसी कारण सुखी होने के मेरे प्रयत्न निष्फल रहे, व्यर्थ साबित हुये। अब यह क्या कहना चाहते हैं, बहुत बड़ा वाक्य है। पहले में पहले ऐसा कहना चाहते हैं कि मैं एक जीवद्रव्य हूं और मैं मेरे स्वद्रव्य-स्वक्षेत्र-स्वकाल-स्वभाव में स्थित हूं। मैं कायम सत्तास्वरूप यानी कायम टिकनेवाला हूं, लेकिन प्रतिसमय मेरेमें नयी-नयी पर्याय होवे, ऐसा मेरा स्वभाव है। मेरे पर्याय को पलटाने में अन्य कोई भी द्रव्य कार्यरत नहीं है, कुछ कर ही नहीं सकता।

फिर भी, मैं एक जीवद्रव्य हूं और ये अनंत पुद्गल परमाणु हैं, अब इसको क्या कहा गया है? ये अनेक द्रव्य जो हैं वे अनेक पुद्गल परमाणु, अधिक मैं, ऐसे क्या कहा इसको? असमानजातीयद्रव्यपर्याय। अभी पर्याय की बात यहां हुयी नहीं है लेकिन यह पुद्गल और पुद्गल इनका जो बंध होता है उसे समानजातीयद्रव्यपर्याय कहते हैं। स्कंध इटसेल्फ एक पर्याय है तो उसको कैसी पर्याय कहेंगे? समानजातीय; यानी एक ही पुद्गल-पुद्गल-पुद्गल – ऐसी एक ही जाति है, तो यह समानजातीयद्रव्यपर्याय और यहां क्या है? अनेक पुद्गल परमाणुओं का यह शरीररूप स्कंध और जीवद्रव्य इनकी मिलकर जो पर्याय होती है, जैसे मनुष्यपर्याय, तिर्यंचपर्याय, देवपर्याय और नारकीपर्याय, तो उसको कहेंगे असमानजातीयद्रव्यपर्याय। यह विषय अपना यहां शायद नहीं हुआ होगा। पर्याय भी दो प्रकार की होती हैं एक द्रव्यपर्याय और एक गुणपर्याय। यहां जो द्रव्यपर्याय की बात है यानी अनेक द्रव्य मिलकर, जुदे-जुदे द्रव्य मिलकर जो पर्याय उत्पन्न होती है, तो वह कौनसी है? मनुष्यपर्याय उसको कहा असमानजातीयद्रव्यपर्याय और हमने आज तक अपने को मनुष्य ही माना है। तुमने रिया, तुमने स्वयं को मनुष्य माना है या गधा माना है? या आत्मा माना है? बोलो? यहां की होशियार लड़की कहां गयी? चलो, वह गयी बाहर। बोलो कौन दूसरा उत्तर देना चाहता है? त्रिशला आप बतायेंगी? हां जी? *श्रोता: मनुष्य ही मानते हैं।* मनुष्य ही मानते हैं। कितनी सिन्सिअर लड़की है और यही गलती हमारी अनादि से हो रही है। हमें जो पर्याय प्राप्त होती है यानी जो कोई तिर्यंचपर्याय में गया, वह शेर हो गया तो वह कभी अपने को भेड़-बकरी नहीं मानता है, शेर ही मानता है; वह कहीं अपने को देव नहीं मानता है, अपने को तिर्यंच ही मानता है, ख्याल में आया?

तो यहां क्या कह रहे हैं? मैं कौन हूं? मैं तो जीवद्रव्य हूं ऐसा न मानकर, जीवद्रव्य प्लस शरीररूप जो कोई परमाणु हैं; ऐसे असमानजातीयद्रव्यपर्यायरूप मैं हूं; ऐसा मैंने माना। जिसने मैं स्वयं जीवद्रव्य हूं और अनंत गुणों का पिंड हूं, ज्ञानादि अनंत गुणों का पिंड ऐसा मेरा स्वरूप है ऐसा न मानकर अन्यथा माना है, तो उसको अपने स्वभाव का अनुभव कैसे होगा? ऐसा पूछते हैं। देखो, इसीलिये उन्होंने क्या कहा? कि मनुष्यपर्याय को ही स्व माना है, ऐसे जीव के सुखी होने के उसके जो कोई सारे प्रयत्न होंगे वे व्यर्थ जायेंगे। तो अभी जो हमने देखा था कि सायकल के आगे का चक्का पंक्चर हो गया है और पिछले चक्के को हम दुरुस्त कर रहे हैं, तो क्या होगा? कभी भी वह सुधरेगा नहीं। कौन? पहला पंक्चर। इसीतरह, यहां कहते हैं कि सबसे पहले हम अपने को पहचाने। देखो भाई! हमें तो ऐसे लोग मिले हैं, हो, हमें तो धर्म करना है-धर्म करना है, ज़रूर करेंगे, उसमें क्या है। लेकिन हमें संसार में, संसारी रह कर धर्म करना है। क्या कहा? यानी धर्म करना यानी क्या समझते हैं लोग? कि जो कोई घरबार है, बाल-बच्चे हैं, सबको छोड़े, जाकर हिमालय पर बैठे, तब उसको आत्मानुभव होगा। क्या ऐसा होता है?

आत्मानुभव कब होगा? अरे! कहीं पर भी होगा, किसी भी अवस्था में होगा। कंडिशन क्या है? पंचेन्द्रिय होना चाहिये, संज्ञी पंचेन्द्रिय और जिसने अपने स्वरूप को, अपने आत्मा को जानकर उसीमें जो एकाग्र हो गया है, उसको सम्यग्दर्शन होगा। उसीको धर्म कहते हैं। लेकिन लोग ऐसा समझते हैं कि हमें सम्यग्दर्शन प्राप्त करना है तो सब घरबार छोड़ना पड़ेगा। ऐसा कुछ है नहीं, ख्याल में आया? तो वहां ऐसा ही वह स्वयं को मनुष्य मानता है और चाहता है कि मैं मेरे आत्मा का अनुभव करूं। अभी कहते हैं कि द्रव्यों का अभ्यास करने के पश्चात्, अभी हम प्रयोजनभूत तत्त्वों का अभ्यास करेंगे। द्रव्यों के अभ्यास और तत्त्वों के अभ्यास में अंतर है। क्या कहा? जीवद्रव्य और जीवतत्त्व। इसीको ही लेंगे हम, इनमें अंतर है। उन्होंने क्या बताया? द्रव्यों का अभ्यास और तत्त्वों का अभ्यास इनमें अंतर है। इसके लिये एक बहुत अच्छा उदाहरण देते हैं, मैं पढ़ता हूं क्योंकि मैं बोलूंगा तो अधिक बोलता हूं, पढूंगा तो शॉर्ट में हो जायेगा। यह मैं जैनतत्त्व परिचय पुस्तक में से पढ़ रहा हूं।

फोटो के दृष्टांत से यह बात अपने सहज ही ख्याल में आयेगी। तुम्हारी शादी तो हुयी होगी, यह मैं आपसे पूछ रहा हूं। तो उसमें बड़ी-बड़ी ग्रुप फोटोज् निकाली होंगी। यहां

जिनकी-जिनकी शादी हुयी है, उनकी शादी में फोटो तो निकाली ही होंगी। तो उसमें क्या होता है, घर के दस आदमी हैं, पचास आदमी हैं, जो भी हैं, सबकी एक ग्रुप फोटो निकालते हैं हम। तो ग्रुप फोटो में तो बीस-पच्चीस लोगों की भीड़ में हम खड़े रहते हैं और सबकी एक फोटो यानी ग्रुप फोटो निकाली जाती है, उसमें हम चींटी जितने दिखायी देते हैं, यानी बहुत छोटे। आगे कह रहे हैं, परंतु एक ही व्यक्ति का क्लोज़-अप् होगा, केवल एक तुम्हारी नज़दीक से ली गयी फोटो होगी, तो उसमें सब यानी नाक, आंखें, गहनें, कपड़े सब कुछ स्पष्टरूप से दिखायी देते हैं। द्रव्यों का अभ्यास ग्रुप फोटो जैसा ही है, क्योंकि वहां सबकी बात है और कहते हैं, तत्त्वों का अभ्यास क्लोज़-अप् फोटो जैसा है, सिर्फ अपनी बात है इसमें। अब कह रहे हैं, जीव और अजीव ये द्रव्यतत्त्व हैं और पांच तत्त्व पर्यायतत्त्व हैं वे जीव और कर्म की अवस्थायें हैं।

इन पांच तत्त्वों में किसकी-किसकी बात ली है? जीव की और कर्मों की और ये क्या हैं? पर्यायतत्त्व हैं अर्थात् वे जीव और कर्म की अवस्थायें हैं। प्रथम हम सरल और साधारण परिभाषा देखेंगे, बाद में उनका विस्तार करेंगे। तो अभी जीवतत्त्व की बात बता रहे हैं, तो कह रहे हैं, जिसमें ज्ञान, दर्शन और आनंद है वह ज्ञानानंदस्वभावी आत्मा जीवतत्त्व है। क्या कहा? फिर से – जिसमें ज्ञान, दर्शन और एक ॲडिशनल आनंद की बात की। क्योंकि सुख की भी बात होती है न। जिसमें ज्ञान, दर्शन और आनंद है, वह ज्ञानस्वभावी आत्मा जो है उसको जीवतत्त्व कहा और अजीवतत्त्व क्या है? कि जिसमें ज्ञान, दर्शन, आनंद नहीं है ऐसे पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ये सब अजीवतत्त्व हैं। देखो, मैं अभी थोड़ीसी और बात आपको बताना चाहता हूं। यह जो जीवतत्त्व की अभी हमने जो परिभाषा देखी है, इसको हम डेफिनिशन कहते हैं। वह तो आगम की पद्धति से बतायी हुयी है। क्या कहा? जिसमें ज्ञान, दर्शन और आनंद है, उसको जीवतत्त्व कहा।

यह तो हुयी आगम की परिभाषा और उसमें क्या बताया? कि पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश आदि जो कुछ हैं, वे सारे अजीवतत्त्व में गये। लेकिन इसमें और एक ऐसी बात हम ॲड कर सकते हैं, जिसको हम कहेंगे अध्यात्म पद्धति से जीवतत्त्व का वर्णन हम करेंगे। तो उसमें कहेंगे कि जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन है। पहले में क्या कहा था? आगम की अपेक्षा से जिसमें ज्ञान-दर्शन-आनंद है वह जीवतत्त्व है। अभी अध्यात्म में क्या कहेंगे?

जिसमें मेरा ज्ञान, दर्शन और आनंद है, वह जीवतत्त्व और बाकी में कौन होंगे? मुझको छोड़कर अनंत जीव, अनंतानंत पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और असंख्यात काल जो हैं ये सब अजीवतत्त्व में आये। तो दोनों में डिफरन्स क्या रहा? हां जी? *श्रोता: इसमें जीव भी अजीवतत्त्व भी शामिल हैं।* हां, बहुत अच्छा। आपने शॉर्ट में पकड़ लिया साहब। आप कह रहे हैं, जो दूसरी परिभाषा आपने बतायी जो अध्यात्म की परिभाषा है, उसमें क्या कहेंगे? जिसमें मेरा और पहले में क्या कहा था, जिसमें ज्ञान-दर्शन अभी आनंद को हम छोड़ देते हैं; जिसमें ज्ञान-दर्शन है वह जीवतत्त्व, यह तो कॉमन। क्योंकि मान लो यहां आपमें ज्ञान-दर्शन है तो आप जीवतत्त्व हो, आपमें ज्ञान-दर्शन है तो आप जीवतत्त्व हो, आपमें ज्ञान-दर्शन है तो आप जीवतत्त्व हो, आप सबमें ज्ञान-दर्शन हैं तो आप सभी जीवतत्त्व हैं। लेकिन मैं मेरी बात सोचूंगा, तब जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन है क्योंकि मुझे आश्रय लेना है या मेरा अनुभव करना है, तो अपना करेंगे या सबका करेंगे? ख्याल में आया?

हम अपना करेंगे, तो वहां क्या कह रहे हैं, जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन है वह जीवतत्त्व। तो मेरा ज्ञान-दर्शन है यानी जो अन्य जिनके-जिनके ज्ञान-दर्शन है, तो किनके-किनके ज्ञान-दर्शन हो सकता है? हं, बोलो, बोलो, मेरी अपेक्षा से तुम कौन हो? अजीवतत्त्व। मेरी अपेक्षा से सर्वज्ञ भगवान कौन होंगे? *श्रोता: अजीवतत्त्व।* ख्याल में आया? घबराना नहीं। सवाईभाई, मेरे पास एक लाख रुपये हैं, आपके पास दस करोड़ रुपये हैं; दोनों के पास रुपये हैं। तो मेरे रुपये मेरे काम में आयेंगे कि आपके रुपये मेरे काम में आयेंगे? मेरा जो ज्ञानस्वभाव है, मेरा जो दर्शनस्वभाव है; मैं जो ज्ञान-दर्शनस्वभाव से जानूंगा, वह मेरे ज्ञान-दर्शन से जानूंगा या केवली भगवान के ज्ञान-दर्शन से जानूंगा? ख्याल में आया? तो जैसे आपका पैसा मैं नहीं वापर सकता हूं, वैसे क्या केवली का ज्ञान मैं वापर सकता हूं? तो यहां क्या कहा? जिसमें ज्ञान-दर्शन, किसका? मेरा ज्ञान-दर्शन है, वह जीवतत्त्व और मेरी अपेक्षा से जिनेन्द्र भगवान भी अजीवतत्त्व हैं। ज़रा समझना हो, अजीवद्रव्य नहीं कहा है। क्या बताया है? अजीवतत्त्व और जिनेन्द्र भगवान की अपेक्षा से उनका ज्ञान-दर्शन वह उनका जीवतत्त्व और उनकी अपेक्षा से मैं अजीवतत्त्व। बात ख्याल में आती है? देखो, यहां क्या कह रहे हैं? यहां कहा कि जिसमें ज्ञान, दर्शन, आनंद नहीं हैं, ऐसे पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल को अजीवतत्त्व कहा है, परंतु यह तो जीव और अजीवतत्त्व की सामान्य परिभाषा है, आगम परिभाषा हुयी। तत्त्वों के माध्यम से हमें अपनी स्वयं

की पहचान करनी है, इसलिये इसी परिभाषा को थोड़ा सुधारकर आध्यात्मिक भाषा में समझना पड़ेगा।

वह इसतरह है – जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन है वह जीवतत्त्व है और अजीवतत्त्व किसको कहना? जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन-आनंद नहीं है, ऐसे मेरे अलावा अन्य अनंत जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये सब अजीवतत्त्व में आयेंगे। देखो तो सही, अपेक्षा बदलते ही, कथन भी बदल गये। अभी एक बात बताता हूं। कुछ साल पहले, एक गांव में हम गये थे वहां जब मैंने कहा कि मेरी अपेक्षा से अरिहंत भी अजीवतत्त्व है, तो बहुत हलचल मची साहब, लोग नाराज़ हो गये। वे कहने लगे अरे! हमने आपको बुलाया और इधर गद्दीपर बिठाया तो आप अरिहंत को अजीवतत्त्व कहते हैं, कैसे हिम्मत हो गयी आपकी? लोग झगड़ा करने आये। फिर उनको शांति से समझाया तो कहते हैं हां, लेकिन यह मानना बहुत कठिन है। अरे! अजीवतत्त्व को अजीवतत्त्व मानना कठिन है, तो जीवतत्त्व को मैं हूं ऐसा कब मानेंगे आप? ख्याल में आया?

तो कह रहे हैं, मेरी अपेक्षा से अन्य सब जीव अजीवतत्त्व में शामिल होते हैं। क्या? अरिहंत और सिद्ध भी अजीवतत्त्व? इसे सुनते ही बड़ी खलबली मचती है। यह सही बात है, हो, क्या? यह सुनकर मेरे चचेरे भाई अविनाश ने कहा था, वह यहां मौजूद है, पीछे बैठे हैं देखो, कि अरी बहन, मुझे तो रात भर नींद नहीं आयी। अरिहंत और सिद्ध अजीवतत्त्व में आते हैं? एक तत्त्व का स्वरूप सुनकर अगर नींद उड़ जाती है, तो सातों तत्त्वों का यथायोग्य अभ्यास करके अनादि की मोहनिद्रा उड़ जायेगी और सम्यक्त्व की प्राप्ति होगी इसमें क्या आश्चर्य है! ख्याल में आया? अब, हमने दो तत्त्वों का अभ्यास किया, कौनसे-कौनसे दो तत्त्व देखे? *श्रोता: जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व।* जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व। तो जीवतत्त्व किसको कहा बेटा? तुम बताओगी? हां-हां बोलो। *श्रोता: जिसमें मेरा ज्ञान, दर्शन और आनंद है, उसको जीवतत्त्व कहा।* आपने बताया जिसमें मेरा ज्ञान, दर्शन है वह जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व की परिभाषा क्या देखी हमने? *श्रोता: जिसमें मेरा ज्ञान, दर्शन नहीं है वह अजीवतत्त्व। सर्वज्ञदेव भी अजीवतत्त्व हैं – उनमें मेरा स्वरूप नहीं है इसीलिये।* आपने यह बताया कि जिसमें मेरा ज्ञान, दर्शन नहीं है, वह अजीवतत्त्व है और अजीवतत्त्व में मेरे अलावा अरिहंत, सिद्ध, पांच परमेष्ठी और मेरे अलावा अनंत जीव, धर्म, अधर्म,

आकाश, पुद्‌गल वगैरह ये सब अजीवतत्त्व में गये। अभी तक हमने दो तत्त्वों को देखा। अभी तीसरा तत्त्व कौनसा है? आस्रवतत्त्व। उसको हम देखेंगे।

तो कहते हैं, शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना आस्रवतत्त्व है, यह तो हुयी स्थूल परिभाषा। कहते हैं, यह मोह जो है और शुभाशुभ विकारीभाव हैं; देखो भाई! यहां एक बात बिलकुल ध्यान में रखना, यहां अशुभभाव को विकारी तो सारी दुनिया मानती है, लेकिन शुभभावों को विकारी मानना मुश्किल हो जाता है। हम तो कहेंगे क्या? कि मेरे जितने पाप परिणाम हैं वे झड़ जायें – निकल जायें तो बहुत बढ़िया। लेकिन ऐसा कोई कहने के लिये तैयार है कि मेरे जो शुभभाव हैं, वे भी नष्ट हो जायें? अपनी छाती पर हाथ रख कर नक्की करना, मुझे मत बताना। तो यहां क्या कह रहे हैं? कि यह शुभ या अशुभ दोनों जो परिणाम हैं, वे आस्रवतत्त्व में आते हैं; यह तो हुयी स्थूल परिभाषा। विस्तार से देखा जाये तो आस्रव किसको कहना? हमने यहां देखा था आस्रव में हमने पांच बातें देखी थी। किसको-किसको याद है? कौन बताना चाहेगा? हां, बोलो साहब? *श्रोता: मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग।* बहुत अच्छा! आपने सही फ़रमाया। जो हमने देखा था कि तत्त्वार्थसूत्र के आठवें अध्याय का पहला सूत्र ऐसा है कि मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग ये बंध के हेतु हैं। तो ये सब आस्रव में गिने जायेंगे।

मिथ्यात्व भी आस्रव है और अविरति जिसको आपने अव्रत कहा, अविरति यानी व्रत जहां नहीं हैं वे भी परिणाम कैसे हैं? तो वे भी बंध के कारण हैं। प्रमाद जो है, यह प्रमाद में बहुत गड़बड़ी होती है हो। देखो, पहले यह तो सुनना, पहले गुणस्थान से छठवें गुणस्थान तक के जीवों के प्रमाद होते हैं। तो यह छठवां गुणस्थान किसका होता है? *श्रोता: मुनि का।* मुनि भी प्रमाद करते हैं? अरे! हम तो शास्त्र स्वाध्याय में बैठे-बैठे कुछ प्रमाद करें। जैसे टेलिफोन आ गया तो भाग गये यह प्रमाद है कि नहीं? कि अप्रमादी अवस्था है? ख्याल में आया न? तो मुनिराज? वे प्रमादी हैं? हां, तो छठे गुणस्थान में जीव के परिणाम कैसे होते हैं? शुभभाव होते हैं। तो उनका शुभभाव क्या है? कि शास्त्र आदि लिखना, किसीको उपदेश देना, शिक्षा-दीक्षा देना, शिक्षा यानी पढ़ाना, शिक्षा यानी सज़ा देना नहीं। तो क्या कह रहे हैं? यह जो शास्त्र लिखकर हमारे तुम्हारे जैसे पामर जीवों का जो अनंत उपकार हुआ है, यह परिणाम भी उनकी भूमिका में प्रमाद है। तो उसमें जो वक़्त ज़ाया

करते हैं, उससे अच्छा तो स्वरूप में लीनता करते। इतनी उत्कृष्ट भूमिका जिन्होंने प्राप्त की है, ऐसी भूमिका में पर जीवों के प्रति जो करुणाभाव उनको आ रहा है और ऐसी शास्त्र की लिखाई उनसे होती है, वह उनके लिये प्रमाद अवस्था है। ख्याल में आया? तो कहते हैं, यह प्रमाद भी बंध का कारण है, ख्याल में आया? और हम तो रात को सोना, आलसीपना करना, कुछ काम करना हो तो उसमें कामचोरी करना इसको प्रमाद कहेंगे। हमारी तुम्हारी भूमिका में यह बात होती है, लेकिन मुनिराज, जो छठे गुणस्थानवर्ती हैं, उनके जो अठ्ठाईस मूलगुण पालन करने के परिणाम हैं, वह भी प्रमाद है। वह मुनि का स्वरूप नहीं है। ख्याल में आया?

तो यहां क्या कह रहे हैं कि मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग ये सारे क्या हैं? आस्रव है। अभी पहले क्या कहा था? यह तो स्थूल बात बतायी हमने। क्या, कौनसी स्थूल बात है? कि शुभ और अशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना वह आस्रवतत्त्व है; यह तो स्थूल है। अभी विस्तार से देखा जाये तो मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग – ये जीव के परिणाम आस्रव हैं; इन्हें भाव-आस्रव यानी भावास्रव कहते हैं। ये जीवों के परिणाम हैं न। अभी देखो हमने क्या देखा था? जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व ये द्रव्यतत्त्व में गिने गये थे। अभी आस्रवतत्त्व, बंधतत्त्व, संवरतत्त्व, निर्जरातत्त्व और मोक्षतत्त्व ये पर्यायतत्त्व हैं। अब इन पर्यायतत्त्व में दो-दो भेद हैं; एक भावास्रव – जीव की अपेक्षा से और उसी समय जो कर्म का आना है उसे द्रव्यास्रव कहेंगे; भावबंध और द्रव्यबंध। इसतरह से अभी हम देखेंगे। तो क्या कहा? इन्हें भावास्रव कहते हैं, यह तो जीव की अवस्था है। कर्म की अपेक्षा देखने पर उसी समय नवीन कर्मों का आना; नवीन कर्मों का आना यानी क्या? हर समय यह जीव नये-नये परिणाम करता है यानी पाप पुण्य के, शुभाशुभ परिणाम करता है, तो उसके निमित्त से जो नये कर्म आते हैं, उसको यहां कहा है कि नवीन कर्मों का आना, इसको द्रव्यास्रव कहते हैं। यहां तक बात ख्याल में आ गयी? अब आगे। *श्रोता: यह भावास्रव और द्रव्यास्रव थोड़ा और समझाइये।* आपका पूछना है कि भावास्रव और द्रव्यास्रव फिर से आप हमें समझाइये – ऐसा ही कहना है न? तो कह रहे हैं, भावास्रव; यह आस्रव के हमने कितने भेद देखे अभी? पांच। कौन-कौन से? देखो, हां कौन बोल रहा है? हां बोलो-बोलो। *श्रोता: मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग।* ये जीव के परिणाम हैं। मिथ्यात्व करना, अविरति के भाव रखना, प्रमाद के भाव करना, कषाय करना और आगे

योग जो होते हैं, यह सारे क्या हैं? बंध के कारणभूत परिणाम हैं। इसलिये इसको जीव के परिणाम होने के नाते भाव आस्रव कहेंगे; तो उसको शॉर्ट में भावास्रव कहेंगे; भाव अधिक आस्रव इज ईक्वल टु भावास्रव और उसी समय कर्म जो आते हैं, उसको कहेंगे द्रव्यास्रव, ख्याल में आया? क्योंकि जब-जब जीव के ऐसे परिणाम होते हैं तो नये-नये कर्म आते हैं और उसमें निमित्त है पुराने कर्मों का उदय इसलिये उसे द्रव्यास्रव कहते हैं।

अब बंधतत्त्व – इसमें भी भावबंध और द्रव्यबंध ऐसे जीव और कर्म की अपेक्षा से दो भेद हैं। तो इसमें शुभाशुभ विकारी भावों में यानी राग-द्वेष मोह में अटकना भावबंध है। यहां पर भी हमने दो भेद देखे न। भावबंध – तो भावबंध किसको कहना? तो शुभ और अशुभ विकारी भावों में अटकना। यानी कैसा? कभी-कभी ऐसा भी करते हैं लोग कि अशुभ परिणाम तो खोटे हैं, लेकिन शुभ परिणाम करने जैसे हैं, तो वह शुभ परिणाम करने में अटक गये। तो वह क्या कहते हैं? शुभ और अशुभ विकारी भावों में यानी मोह, राग, द्वेष में जो अटकना है वह भावबंध है और नवीन कर्मों का, पुराने कर्मों के साथ बंध होना उसको कहते हैं द्रव्यबंध। ख्याल में आया न? अभी हमने बंध में द्रव्यबंध, भावबंध और उभयबंध ये भेद देखे थे। कर्म के आने को आस्रव कहते हैं और कर्म के बंधन को बंध कहते हैं। यहां तक बात समझ में आयी? अब आगे बढ़ते हैं। अब कौनसा तत्त्व आयेगा? *श्रोता: संवरतत्त्व।* संवरतत्त्व; तो कहते हैं आस्रव का रुक जाना इसे संवर कहते हैं। यानी यह आस्रवों का रुकना कब होगा? तो आत्मा के अनुभव में लीन रहने पर यानी शुद्धोपयोग में जीव को मोह, राग, द्वेष उत्पन्न नहीं होते, इसलिये उसे आस्रव और बंध नहीं होते। यह तो बिलकुल स्थूल अपेक्षा से कथन कर रहे हैं। जो हमने बुद्धिपूर्वक और अबुद्धिपूर्वक राग की बात की थी वह ये अभी कुछ समय के लिये अप्लाय मत करना। ख्याल में आया न? यहां स्थूल राग जो है, बुद्धिपूर्वक राग जो है उसकी बात है।

तो क्या कहते हैं? जरा हम पहले जो लिखे थे न यानी पहले जो हमने पढ़ाई की थी उसकी तरफ़ देखेंगे। जो चारित्र की अपेक्षा उपयोग के भी हमने दो भेद किये थे। उसमें जो उपयोग है उसके दो भेद थे; एक शुद्धोपयोग और दूसरा अशुद्धोपयोग; अशुद्धोपयोग के दो भेद किये थे – एक शुभोपयोग और दूसरा अशुभोपयोग। वहां पर यह बात बतायी थी कि जब-जब शुद्धोपयोग हो रहा है उस समय अशुद्धोपयोग नहीं होता है; जिस समय अशुद्धोपयोग

चल रहा है उस समय शुद्धोपयोग नहीं होता है। यह बिलकुल स्थूल कथन है। इसमें हमने अबुद्धिपूर्वक राग की बात यहां इन्क्लूड नहीं की है। ख्याल में आया? तो अब यहां क्या बताते हैं? यहां कह रहे हैं कि आत्मा के अनुभव में लीन रहने पर शुद्धोपयोग में जीव को मोह, राग, द्वेष उत्पन्न नहीं होते। इसलिये उसे क्या होता है? नये आस्रव नहीं हो रहे और क्या कह रहे हैं? नया बंध भी नहीं हो रहा है क्योंकि आस्रव किये बिना – शुभाशुभ विकारी भाव किये बिना बंध होगा नहीं। इसलिये समझा रहे हैं कि वहां आस्रव भी नहीं होता और बंध भी नहीं होता। आस्रव के रुकने को ही संवर कहते हैं। तो यह कौनसे आस्रव की बात चल रही है। भावास्रव की या द्रव्यास्रव की? *श्रोता: भावास्रव की।* हां, बोलो-बोलो, कौन बता रहे हैं यहां पर? किसने बोला अभी? बहुत अच्छा। आपने बताया कि भावास्रव। वह तो जीव की अपेक्षा से हम आप जो कह रहें हैं, बिलकुल सही है। लेकिन उसी समय द्रव्यास्रव भी यहां बंद हो जाता है। बिलकुल सही बात है, तो क्या कह रहे हैं? देखो, कहते हैं आस्रवों के रुकने को ही संवर कहते हैं। भावसंवर अर्थात शुभाशुभ भावों का उत्पन्न न होना, परंतु यह तो नास्ति का कथन हुआ और अस्ति से कथन करना हो तो वीतरागता यानी कि शुद्धि की उत्पत्ति होना भावसंवर है और द्रव्यसंवर अर्थात नवीन कर्मों का आना रुक जाना। अभी तो स्थूलरूप से इतना ही समझो।

यह देखो, आपने अभी जो बताया, हमने तो क्या वाक्य पढ़ा था कि आस्रवों के रुकने को संवर कहते हैं। तो वहां भावास्रव भी रुक गये और द्रव्यास्रव भी रुक गये। नये कर्म नहीं आ रहै हैं या नये विकारी परिणाम नहीं हो रहे हैं उसकी अपेक्षा से बात करेंगे। यहां तो विकारी परिणाम नहीं हो रहे हैं यह नास्ति से कह रहे हैं। तो कहा, द्रव्यसंवर अर्थात् नवीन कर्मों का आना रुक जाना। अभी तो स्थूलरूप से इतना ही याद रखो इसके विस्तार में जाने पर ज्ञात होगा कि मिथ्यात्व का आस्रव रुकने पर अविरति आदि अन्य आस्रव चालू रहते हैं और वीतरागता की वृद्धि के साथ वे भी रुक जाते हैं। यानी मिथ्यात्व अविरति आदि हमने देखे थे न, कौनसे-कौनसे? अविरति, प्रमाद, कषाय और योग जो हैं, तो जैसे-जैसे यह जीव ऊपर-ऊपर के गुणस्थान में जायेगा वैसे-वैसे वे भी आस्रव रुकते जाते हैं।

अब निर्जरातत्त्व की बात लेते हैं। पहले हमने क्या देखा था? देखो, अभी हम अपनी भाषा में ज़रा समझने की कोशिश करेंगे। अभी तक जो हमने चार-पांच तत्त्वों को देखा है,

जिसमें द्रव्यतत्त्व दो हैं। एक जीवतत्त्व उस जीवतत्त्व में क्या कहा? जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन है वह जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व में क्या कहा? जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन नहीं है वह अजीवतत्त्व। आस्रवतत्त्व में हमने क्या देखा? कि शुभाशुभ विकारी भावों का उत्पन्न होना। यह हो गया जीव की अपेक्षा से भावास्रव और वहां नये-नये कर्मों का आना वह हो गया द्रव्यास्रव। भावबंध यानी क्या? शुभाशुभ विकारी भावों में अटकना, बार-बार वही-वही परिणाम करना वह हो गया भावबंध और ये पुराने कर्म जो हमारे हैं, उन कर्मों में नये कर्मों का आकर जुड़ जाना वह द्रव्यबंध है। संवर किसको कहना? तो कहते हैं शुद्धि की उत्पत्ति। तो शुद्धि की उत्पत्ति जब होती है तब क्या होता है? कि शुभाशुभ विकारी भाव उनका आना रुक जाता है यानी वे उत्पन्न नहीं होते और दूसरी बात क्या होती है कि नये जो कर्म आते थे वे भी रुक जाते हैं। तो संवर किसका होता है? कर्मों का और जीवों के विकारी भावों का। उस समय क्या होता है? शुद्धि की उत्पत्ति होती है।

अभी हम निर्जरा की बात देखेंगे। तो निर्जरा में भी दो प्रकार हैं एक भावनिर्जरा और एक द्रव्यनिर्जरा। द्रव्यनिर्जरा कर्मों की अपेक्षा से कहेंगे, तो भावनिर्जरा में जीव के परिणामों की अपेक्षा से बात करेंगे। तो संवर में क्या हुआ था? शुद्धि की उत्पत्ति हुयी थी। अभी निर्जरा में क्या होगा? शुद्धि की वृद्धि होगी। तो शुद्धि की वृद्धि होगी, तो क्या होगा? यह जीव पहले से ही मोह, राग-द्वेष के परिणाम नहीं कर रहा था या विकारी भावों के परिणाम नहीं कर रहा था और आगे क्या हुआ? वे तो रुक गये और यहां कर्मों में क्या हुआ? अभी नये बंध होना रुक गया था संवर में, अभी निर्जरा में क्या होगा? कि जो अपने पास पहले से सत्ता में पड़े हुये जो कर्म हैं, वे भी झड़ने लगे, निर्जरित होने लगे। यानी वहां क्या हो गया? नये कर्मों का आना रुक गया और यहां क्या हो गया? नये कर्मों का आना तो रुक ही गया है, अभी हमारे स्टॉक में जो कुछ पुराने कर्म थे, वे भारी मात्रा में झड़ रहे हैं, ख्याल में आया? अब इसीको हम, यहां क्या लिखा है, उसको देखते हैं। देखो, शुद्धि की वृद्धि होना, इसे भावनिर्जरा कहते हैं और भावनिर्जरा में कषायों का उत्तरोत्तर अभाव। उत्तरोत्तर अभाव यानी पहले समय में जो अभाव हुआ था, उससे भी अधिक, उससे भी अधिक अभाव होता जायेगा तो कषायों का उत्तरोत्तर अभाव और वीतरागता की वृद्धि होती है।

कर्मों के बारे में कहना हो, तो पूर्व में बंधे हुये कर्म, जीव के वीतराग परिणामों के

कारण, बहुत भारी मात्रा में खिर जाते हैं। क्या कहा, बहुत भारी मात्रा में खिर जाते हैं, कौन? जो पुराने कर्म हैं वे, उसे द्रव्यनिर्जरा कहते हैं। संवर अर्थात् नवीन कर्म नहीं आते, निर्जरा अर्थात् पूर्व में जीव के साथ बंधे हुये कर्म बड़ी संख्या में निकल जाते हैं, खिर जाते हैं। इसलिये संवर और निर्जरा के कारण, जीव से बंधे हुये कर्म उत्तरोत्तर कम-कम होते जाते हैं। यह बात ख्याल में आ गयी? संवर में और निर्जरा में क्या अंतर है इस बात का पता लग गया? हां जी? कोई हां भी नहीं बोलता है और ना भी नहीं बोलता। कुछ प्रश्न है? *श्रोता: मैंने हां बोला।* क्या कह रही हैं आप? समझ गये? चलो अच्छा है। *श्रोता: संवर में शुभाशुभ भाव नहीं आते और निर्जरा में पुराने कर्म हैं वह कम-कम होते जाते हैं?* देखो, यहां क्या हो रहा है? संवर में आपने पूछा संवर में क्या होता है; निर्जरा में क्या होता है इसका अंतर हमें दुबारा बताओ, यही आपका कहना है न? तो संवर में क्या हो गया? शुद्धि की उत्पत्ति हुयी यानी वह शुद्धोपयोग करने लगा। अब शुद्धि की उत्पत्ति हुयी, निर्जरा में क्या हुआ? वह शुद्धि की वृद्धि होने लगी। यह जीवों के परिणामों की बात है। भावनिर्जरा और पहले भावसंवर हमने देखा। अब जीव के परिणामों में क्या हो गया? वीतरागता उत्तरोत्तर बढ़ती गयी और यहां कर्मों में क्या हुआ? संवर में नये कर्मों का आना रुक गया। यानी क्या हो गया? शुद्धि की उत्पत्ति हुयी, तो नये कर्म आने बंद हो गये। क्यों बंद हो गये? कि यहां कोई शुभ या अशुभ परिणाम ही नहीं हो रहे कि जिसके कारण वहां बंध होवें।

तो यहां क्या हो गया? वीतरागता की उत्पत्ति हुयी, शुद्धि की उत्पत्ति यानी क्या? वहां कोई भी विकारी परिणाम नहीं है, वहां स्वभावरूप परिणमन हो रहा है, संवर में वह शुरुआत हुयी और निर्जरा में क्या हुआ? वह वीतरागता बढ़ती जा रही है यानी शुद्धोपयोग अधिक-अधिक हो रहा है और उधर क्या हो गया? संवर में कर्म आना तो रुक गये। अभी निर्जरा में क्या हो रहा है? कि जो पहले हमारे पास सत्ता में पड़े हुये कर्म थे वे अधिक-अधिक प्रमाण में, हर समय अधिक-अधिक प्रमाण में वे निर्जरित होने लगे। बात ख्याल में आयी? अब आगे, देखो, अभी मोक्षतत्त्व। यह मोक्ष कहां है वाली बात चल रही थी न अपनी। यह मोक्षतत्त्व को देखेंगे अभी, तो कहते हैं, पूर्ण वीतरागता। उसका ही दूसरा अर्थ क्या है? पूर्ण शुद्धि का प्रकट होना यह भावमोक्ष है और कर्मों का संपूर्ण अभाव होना यह द्रव्यमोक्ष है। यानी जो हमने आठ कर्म देखे थे, जिनके नाम आप सबको याद हैं, जो

घातिकर्म और अघातिकर्मों में हमने डिव्हाइड किये थे ऐसे जो आठ कर्म हैं उनका क्या हो गया है? तो कहते हैं संपूर्ण अभाव हो गया है। तो यहां जो परिपूर्ण वीतरागता हुयी है और पूर्ण शुद्धि प्रकट हो गयी है वह तो है भावमोक्ष और उसी समय क्या हुआ? कर्म जो थे, जो आठ प्रकार के कर्म थे उनका संपूर्ण अभाव हो जाना यह द्रव्यमोक्ष है।

देखो भाई, जब कोई जीव अरिहंत अवस्था प्राप्त करता है, तो उस अरिहंत अवस्था में उसके कितने कर्म नष्ट हुये हैं उस जीव के? *श्रोता: चार।* चार या पांच? *श्रोता: चार।* चार। कौन-कौनसे? हां बोलो-बोलो। *श्रोता: ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय।* हां, तो अभी उनके चार कर्म–कौनसे? घातिकर्म नष्ट हुये। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय। तो यह अभी चार गये और चार बाकी रहे। कौनसे-कौनसे? आयु, नाम, गोत्र और वेदनीय। तो जब ये भी रहे हुये, बचे हुये, चारों ही नष्ट होंगे। वे कब होंगे? जीव की परिपूर्ण शुद्धि हो जायेगी, उस समय वह जीव कहां होगा? मनुष्यलोक में होगा या ऊपर सिद्धशिला के ऊपर होगा? *श्रोता: सिद्धशिला।* तो यहां था, तो चार कर्म बाकी थे, बंधावस्था में था, तो यहीं से मुक्त होगा। नहीं समझ में आया? तुम औरंगाबाद के हो न, चिंतामणि, तो आपने जयपुर में कुछ ऐसा खोटा काम किया कि आपको जेल हुयी। यह कथा है हो खोटी-खोटी, नहीं तो लोग इसे सच समझ जायेंगे। तो क्या हुआ? तो हमने आपको छुड़ाना है तो हम औरंगाबाद के जेल में गये। बोले भाई! हमारे मित्र को छोड़ दो तुम। क्या बात कर रहे हो? वह है ही नहीं न इधर। तो अगर हमें तुम्हें छुड़ाना है तो कहां जाना पड़ेगा? जहां बंधावस्था में आप पड़े हो वहीं से मुक्तता होगी कि जहां नहीं है वहां से मुक्तता होगी? तो बंध किधर है? यहीं है, मुक्तता कहां है? यहीं है। ख्याल में आया?

अभी हमारे महेंद्रभाई ने हमको बताया कि श्रीमद्जी ने कहा है कि तुं छो मोक्षस्वरूप स्वभाव से तो मोक्षस्वरूप ही है लेकिन पर्याय में अभी मुक्त नहीं है, संसारी है। भाई, अरिहंत अवस्था को भी संसार अवस्था कही है, कहां पर? यह उमास्वामी के तत्त्वार्थसूत्र के दूसरे अध्याय में दसवां सूत्र है कि जीव दो प्रकार के हैं; संसारी और मुक्त। तो अरिहंत मुक्त हैं कि नहीं? हां जी? *श्रोता: द्रव्यमोक्ष।* अरिहंत को भावमोक्ष कहा है और चौथा गुणस्थानवर्ती भी दृष्टिमुक्त है न? वाह रे वाह? मुक्त किसको कहेंगे? जो आठ कर्मों से रहित हो गये हैं, हैं न? परिपूर्ण शुद्धि जिनकी प्रकट हुयी है। तो अभी अरिहंत की परिपूर्ण

शुद्धि हो गयी कि नहीं? तो फिर अरिहंत और सिद्ध ऐसे दो भेद करते ही क्यों? देखो साहब, बात तो ऐसी है, अरिहंत अवस्था के जीवों को भी संसारी कहा है। हां और वह कहां रह कर? संसार में रहकर क्योंकि हमने संसार का अर्थ ही कुछ उल्लू जैसा मान लिया है। कैसा? कि हम तो भाई संसारी हैं। क्या है भाई तेरा संसार? अरे, यह बीवी, बाल बच्चे, यह सास-ससुर, ननद, जो भी हैं ये सारे हमारा संसार है। तो मैं तो कहता हूं ऐसा न होवे, पर हो जावे तो, यह औरंगाबाद में एक बड़ा भूकंप हो जाये और मैं छोड़कर बाकी सब मर जाये। तो मैं मुक्त हुआ कि नहीं? बाल-बच्चे, सास-ससुर, घरबार सब पानी में गया मतलब भूकंप में आ गया। तो मैं तो मुक्त हुआ कि नहीं? क्योंकि जिसको मैं संसार मान रहा था, वह ही हट गया। क्या कहा? हट गया। तो संसार किसको कहना? इसी बात में हमारी गड़बड़ी है। यहां तो कहते हैं, **जो कर्म के साथ है वह संसारी और जो कर्म रहित है वह मुक्त।** उस अपेक्षा से क्या कहा? अरिहंत को भी संसारी कहने में आता है। तो यहां क्या कहा? देखो, यहां तो कह रहे हैं कि पूर्ण वीतरागता, पूर्ण शुद्धि का प्रकट होना यह भावमोक्ष है और कर्मों का संपूर्ण अभाव होना द्रव्यमोक्ष है।

तो यह संपूर्ण अभाव किधर होगा? यहां मनुष्यभूमि पर, या मनुष्यलोक में जिसको हम कहेंगे। तो यह मनुष्यलोक कहां है? सिद्धशिला के ऊपर है कि नीचे है? हां भाई, आप जानते हैं? मनुष्यलोक कहां है? हां महावीरजी, आप बतायेंगे मनुष्यलोक कहां है? यह मैं पूछ रहा हूं। हां, महिलाओं में कौन बतायेगा? *श्रोता: ढाई द्वीप।* हां बहुत अच्छा। किसने बताया? बहुत अच्छा उत्तर दिया। ढाई द्वीप किसने बताया? आपने? अरे! बीच में क्यों बोलती हो, बेन? चलो, अच्छी बात है। तो क्या कहा? कि यह जो मनुष्यलोक है वह ढाई द्वीप है। अभी ढाई द्वीप में क्या-क्या होते हैं? कौन समझायेगा? शमाजी, आप जानती हैं? ढाई द्वीप? जहां रहती हो, उसीको नहीं जानती हैं? कोई बात नहीं। यह आपका कौनसा सिंहुर गांव है न? कौनसा है? *श्रोता: सेलू।* सेलू, वह ढाई द्वीप में आता है या नहीं? *श्रोता: हां।* अरे वाह, इतना तो जानती हो!

देखो, ढाई द्वीप यानी क्या होता है – अपना जो जम्बूद्वीप है उस जम्बूद्वीप को घेरे हुये लवणसमुद्र है। लवणसमुद्र के बाद धातकीखण्ड है। धातकीखण्ड के बाद कालोदधि समुद्र है और उसके बाद पुष्करवर द्वीप है। वह पुष्करवर द्वीप जो है उसका आधा पोर्शन

जो है वह पकड़कर – पहला द्वीप, बीच में धातकीखण्ड वह द्वीप और उसके बाद में पुष्करार्ध – यह ऐसे ढाई द्वीप की जो एरिया है, उसको कहेंगे ढाई द्वीप। वह पुष्करार्ध यानी पुष्करद्वीप का आधा, मानुषोत्तर पर्वत जो है वहां पर बीच में, उस पर्वत के उस पार यानी उस परे कोई मनुष्यगति का जीव जा ही नहीं सकता। अब यह जो हमारा बीचवाला जो जम्बूद्वीप है वह कितना है? एक लाख योजन का है। उसकी ऐसी चौड़ाई गिने तो एक लाख योजन है। उसके बाद का जो लवणसमुद्र है, वह ऐसा वलयाकार दो लाख योजन चौड़ा है – ऐसा पूरा गोल क्योंकि हमारा जम्बूद्वीप गोल है न, उसको लगकर ऐसा लवणसमुद्र। तो वह दो लाख योजन। तो हम बीच में यहां उसको आधा करते हैं, जम्बूद्वीप को और यहां कितना हुआ? दो लाख।

उसके बाद का कौनसा है? धातकीखण्ड वह चार लाख योजन चौड़ा है वह भी ऐसा वलयाकार है। उसके बाद कालोदधि समुद्र है, वह आठ लाख योजन का है। उसके बाद कौनसा है? पुष्कर। पुष्करवर द्वीप – वह सोलह लाख योजन का है लेकिन बीच में मानुषोत्तर पर्वत है इसलिये उसके आठ लाख योजन गिनेंगे। तो वह आठ, उसके पहले के आठ, कितने हो गये? सोलह। उसके पहले के चार, कितने हो गये? बीस। उसके पहले के दो लवणसमुद्र के और जम्बुद्वीप का आधा। कितने हो गये? साढ़े बाईस इधर और साढ़े बाईस इधर। दोनों मिलकर कितने हो गये? पैंतालीस लाख योजन और हमारी सिद्धशिला जो है वह भी पैंतालीस लाख योजन की है और सिद्धशिला के ऊपर ऐसा एक भी प्रदेश नहीं है कि जहां अनंत सिद्ध न हो। क्या कहा? तो अनंत सिद्ध जो हैं यानी देखो भाई, यह मनुष्यलोक जिसको कहते हैं या ढाई द्वीप जिसको कहते हैं वहां पर ऐसा एक भी प्रदेश नहीं है, जहां से जीव सिद्ध न हुये हों।

आप जब उठोगे न, तो जमीन को नमस्कार करके उठना, यहां से भी मोक्ष गये हैं, विश्वास नहीं होता हैं न। यह बहुत अच्छा है, लड़का बोलता है, नहीं, बिलकुल विश्वास नहीं होता। यह वस्तुस्थिति ऐसी है। मुझे यह बताओ यह जो हॉल है न हमारा हॉल। तो यह हॉल में समझो अभी सौ लोग बैठें हैं। हम इसमें दस हज़ार बिठायेंगे, तो क्या होगा? बैठेंगे नहीं और बैठेंगे तो खचाखच भर जायेगा। वैसे सिद्धक्षेत्र में हर छह महीने और आठ समय में छह सौ आठ जीव मोक्ष प्राप्त करके जाते हैं। तो यह कब से हो रहे हैं साहब?

अनादिकाल से हो रहा है। तो अनादिकाल से छह सौ आठ जीव, कितनी बार गये हैं? अनंत बार। अनंत मतलब छह महीने और आठ समय तो अनंत बार आये हैं और हर छह महीने और आठ समय में छह सौ आठ जीव तो मोक्ष जा ही रहे हैं, जा ही रहे हैं, जा ही रहे हैं और आप कहेंगे कि भाई वहां एक भी जगह ऐसी नहीं है जहां मुक्त जीव नहीं हो ऐसा हमने देखा और बात ऐसी होती है जो जीव मुक्त होता है, कहां से? यहां से – वह बिलकुल ऊर्ध्वगति से मतलब सीधी गति से एक श्रेणी में ऐसा ऊपर जाता है। वहां तो ऐसे खचाखच भरे हुये हैं पैंतालीस लाख योजन में अनंत जीव और प्रत्येक जीव के असंख्यात प्रदेश एक दूसरे को अवगाहना देते हैं और वहां एक भी जगह मतलब एक भी क्षेत्र, एक भी आकाश का प्रदेश खाली नहीं है कि जहां अनंत सिद्ध न हो।

यह बात किससे निकली? जो मोक्षतत्त्व है – तो मोक्षतत्त्व में क्या होता है? कि कर्मों का संपूर्ण अभाव होता है, उसको द्रव्यमोक्ष कहा है। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग ये आस्रव अर्थात बंध के कारण नष्ट होते हैं और पूर्वबद्ध कर्मों का यानी पूर्व में बांधे हुये कर्मों का अभाव होता है, यही मोक्ष है। तो यह जो अभी हमने देखा कि उसमें आस्रव, बंध, संवर और निर्जरा और मोक्ष ये जीव एवं कर्मों की अवस्थायें हैं। देखो, हम यह मोक्ष का पुरुषार्थ कब करेंगे? तो कहते हैं देखो, हम मामूलीसा उदाहरण देते हैं कि हमारे घर में कोई एक कपड़ा है। कपड़ा मैला है तो हमें विश्वास है, कपड़ा भिन्न है और उसमें जो मैलापन है वह भिन्न है। तभी तो हम उसको प्रयत्नपूर्वक साबुन आदि लगाकर उसको स्वच्छ करने की कोशिश करते हैं। जब हमें यह पता लगता है कि मेरेमें जो आस्रव हैं, वे भिन्न हैं तब हम शुभाशुभ विकारी भावों को हटाने की चेष्टा करते हैं और हम बिलकुल शुद्ध बन जाते हैं। ख्याल में आया? तो ये जो बातें हैं उसको हम अभी अगले क्लास में देखेंगे। तब तक अगर किसीके कोई प्रश्न हो तो एकाध मिनट बाकी है कुछ हो तो पूछ लेना। सोहम, तुझे कोई प्रश्न है क्या? नहीं, अच्छा! तू तो सर्वज्ञ का पोता दिखता है। कोई प्रश्न नहीं है न, चलो। हां जी? सुनायी नहीं देता है बहन, लिखकर देना क्योंकि क्या बोल रहे हो वही सुनने और सुनाने में एक मिनट जावे तो उत्तर मैं क्या दूंगा।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

५३. जीवतत्त्व और जीवद्रव्य

देखो, सात तत्त्वों के स्वरूप को देखते हुये, यह सात तत्त्वों के दो भिन्न प्रकार हमने पर्यायों में देखे थे, उसमें से जो आस्रव है, बंध है, संवर है, निर्जरा है और मोक्ष है, इनमें दो प्रकार से हमने भेद भी देखे थे। वे भेद – भावास्रव-द्रव्यास्रव, भावबंध-द्रव्यबंध, भावसंवर-द्रव्यसंवर और भावनिर्जरा और द्रव्यनिर्जरा, तो कौनसा रह गया? भावमोक्ष और द्रव्यमोक्ष।

इसतरह से हमने उनके पर्यायों के दो-दो भेद देखे हैं। देखो, बात तो ऐसी है यहां पर कभी-कभी, जब हम सीखते थे, उस समय ऐसा उदाहरण देते थे। कौनसा उदाहरण? एक नाव है वह चल रही है पानी में, इतने में उस नाव को एक छिद्र हुआ, तो उस छिद्र से अंदर पानी आने लगा तो वह आस्रव है। देखा तो पानी बढ़ते गया, बढ़ते गया, बढ़ते गया। इतने में किसीने उस छिद्र को बंद किया। तो क्या हो गया? वह जो पानी आनेवाला था न, वह रुक गया तो वह संवर हो गया। अब क्या हो गया? कि नाव में आया हुआ पानी जो था, उसको उठा-उठाकर बाहर फेंकने लगे तो वह निर्जरा हुयी और सब पानी ख़त्म हो गया तो, मोक्ष हुआ। तो हम तो इतने भोले थे, तो हमने ऐसा ही माना कि वह नाव को मुक्ति मिली, ख्याल में आया? देखो यह जो उदाहरण था न, वह हम गलत मानते थे। सात तत्त्वों के बारे में अगर हमारी सही श्रद्धा होगी, तो हम वस्तुस्वरूप को सहीरूप से समझेंगे।

तो यहां क्या बताया अभी जो अपना इसके पहले का जो क्लास हुआ, उसमें यह बात निकली थी कि जब हमें पक्का विश्वास है कि यह कपड़ा जो है, जो मैला हो गया है, वह मैलापन जो है, वह कपड़े से जुदा है, वैसे यहां जो जीवतत्त्व है उससे यह आस्रवतत्त्व जुदा है। यह जब उसको विश्वास हो जाता है तो उस आस्रवतत्त्व जो जुदा है, उसको जानकर, पहचानकर, उसको भिन्न जानने की, मतलब उसको भिन्न करने की कोशिश की जाती है, प्रयत्न किया जाता है। तो इसके लिये उदाहरण हम फिर से अच्छी तरह से देखेंगे। क्या कहते हैं? ये सात तत्त्व भिन्न-भिन्न हैं और जीव की अवस्थायें होने पर भी इनसे जीवतत्त्व, यानी कौन? स्वतत्त्व, भिन्न तत्त्व है। यह जीव शरीर के संयोग में रहते हुये भी शरीर से यानी अजीवतत्त्व से भिन्न है। यह जीव क्रोधादिरूप प्रत्यक्ष दिखायी देने पर भी जीवतत्त्व भिन्न है और रागादि भिन्न तत्त्व है। अभी इसके लिये उदाहरण देते हैं। जैसे हम

मलिन कपड़ा देखते हैं। उस मलिन अवस्था में भी कपड़ा भिन्न है और मैल भिन्न है, दोनों का अस्तित्व है लेकिन भिन्न है। दोनों का लक्षण, दोनों का स्वरूप भिन्न है और इसीतरह वे भिन्न भी हो सकते हैं।

टीव्ही पर साबुन की ॲडव्हर्टाइजमेंट में यही बताते हैं कि भाई, यह साबुन लगाने से मैल हटेगा। जो हटता है वह उसका स्वरूप नहीं होता है। जो राग है वह निकल जाता है जीव वीतरागी होता है; तो राग है, द्वेष है, यह जीव का स्वरूप नहीं है। तो कह रहे हैं कि टीव्ही पर साबुन की ॲडव्हर्टाइजमेंट में भी यही तो बताते हैं। अंतर इतना ही है कि उनकी दृष्टि द्रव्य पर है। क्या कहा? उनकी दृष्टि द्रव्य पर है और हमारा क्या है? और हमें द्रव्यदृष्टि करनी है। देखो, एक मज़े की बात हो गयी थी। अभी यहां हॉल की दीवार पर लिखा है कि नहीं, यह मुझे याद नहीं है। लेकिन हां, यह देखो यहां लिखा है। जो सोनगढ़ में लिखा था 'द्रव्यदृष्टि ते सम्यग्दृष्टि' तो एक बहुत धनाढ्य व्यक्ति गुरुदेवश्री के पास पूछने के लिये गये कि साहब हमारे पास बहुत धन है तो हमारी दृष्टि तो हमेशा द्रव्य पर ही रहती है इसलिये हम सम्यग्दृष्टि हैं न? तो यहां क्या कह रहे हैं? यह जो बात बता रहे हैं न, अंतर इतना है कि उनकी यानी टीव्ही में जो ॲडव्हर्टाइजमेंट करते हैं, उनकी दृष्टि द्रव्य पर यानी पैसे पर है और हमें द्रव्यदृष्टि करनी है। यह द्रव्यदृष्टि क्या है? उसकी भी हम बात देखेंगे लेकिन आपको समझाने के लिये मैंने जान बूझकर यह बात उठायी है। अर्थात् दृष्टि यानी ज्ञान और श्रद्धा द्रव्य पर यानी स्वतत्त्व पर केंद्रित करनी है। मिथ्यात्व, राग, द्वेषों से युक्त मलिन अवस्था में भी जीवतत्त्व भिन्न है, त्रिकाल शुद्ध चैतन्यमय एकरूप है और मोह, राग, द्वेषरूप मलिनता भिन्न है। देखो, कपड़ा मलिन होने पर भी, कपड़ा साफ़ है, स्वच्छ है ऐसी पूर्ण श्रद्धा होगी तो ही मैल दूर करने का उपाय हो सकता है। उसी प्रकार मिथ्यात्व, कषाय से सहित जीव में भी, जीवतत्त्व तो सदा पूर्ण शुद्ध, निर्मल, ध्रुव चैतन्यमय ही है। ऐसी पूर्ण श्रद्धा हुये बिना मिथ्यात्वरूपी मैल दूर करने का उपाय नहीं हो सकता।

देखो, यह उदाहरण इतना सार्थक है कि यह तो हमारे रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में हम जानते हैं रोज़ ही कपड़ा धोते हैं। तो क्यों धोते हैं? क्योंकि हमें पूरा विश्वास है कि कपड़ा जो मलिन हुआ है वह मल से रहित हो सकता है। लेकिन क्या कभी हम ऐसा सोचते हैं कि मेरेमें जो राग-द्वेषरूपी मलिनता है, वह सम्यग्दर्शनरूप साबुन से दूर हो सकती है? हम

उसके लिये कोई प्रयत्न नहीं करते और अगर करते हैं तो सही मायने में नहीं करते हैं। राग-द्वेष को दूर हटाने की बात छोड़ो, यानी अपने स्वरूप में लीनता करने की तो बात छोड़ो, हम तो राग को कम करने की कोशिश करते हैं। कपड़ा थोड़ासा मलिन रह जाये चलेगा कि परिपूर्ण शुभ्र होना चाहिये? उसमें थोड़ी मलिनता नहीं चले, लेकिन यहां थोड़ी मलिनता कम हो जाये तो अच्छा, ऐसा मानते हैं। तो यह मानना कैसा है? आप समझ जाना। देखो, अब ज़रा ध्यान से देखना। जीव की अवस्था मलिन है ऐसा ज्ञान होगा और उसी समय, श्रद्धा में जीव का स्वरूप शुद्ध है ऐसी श्रद्धा होगी तो ही मलिन अवस्था नष्ट करने का प्रयत्न हो सकता है। अगर मलिन अवस्था का ज्ञान ही नहीं होगा, तो मलिन अवस्था को टालने का उपाय भी क्यों करें? क्योंकि मेरेमें राग-द्वेषरूप मलिनता है, ऐसा लोगों को एहसास ही नहीं होता है, क्योंकि वे अपने को रागद्वेषरूप ही देखते हैं न।

संस्कृत लिटरेचर में तो ऐसा ही है जो शीघ्रकोपी है, ऐसा ही वहां का नायक होता है। और वह क्या करता है? दूसरे से युद्ध करके उसको पराजित करता है, यह तो उनकी नायक की व्याख्या है। तो कहते हैं, राग से भिन्न मैं हूं, ऐसा जब तुझे पता लगेगा और रागरूप मलिनता मेरेमें है, वह नहीं होनी चाहिये ऐसा विश्वास पैदा होगा, तो ही तू उसको निकाल बाहर करने का प्रयत्न करेगा और मैं रागी हूं, द्वेषी हूं, तो हम अपने को अच्छा मानते हैं। देखो-देखो, यह कैसी मज़ा है। जो हमारे मित्र हैं, जो हमारे, क्या बोलते हैं, रिलेटिव्हज् हैं, रिश्तेदार हैं वे कहते हैं, दिनेश, यह बात अच्छी नहीं है। क्या है? तुझे सब लोग पंडित बोलते हैं। तो मैंने कहा यह मेरा अपराध थोड़ी है? लोग मुझे पंडित कहें तो क्या वह अपराध मेरा है? नहीं-नहीं, हम ऐसा कहना चाहते हैं, तू इतना पंडित कहलाता है, इतना स्वाध्याय करता है और इतना क्रोधी? यह कषाय क्यों? तुमसे तो हम अच्छे हैं! हमने कहा, साहब क्या करते हैं आप? हम बिलकुल क्रोध नहीं करते। अरे! क्या करते हैं यह हमने पूछा है। क्या नहीं करते यह थोड़ी पूछा है? बोले, हम तो दुकान में जाकर बैठते हैं। कभी जाते हैं? अरे! सुबह आठ के पहले दुकान खोलते हैं और रात को ग्यारह बजे तक बैठते हैं और ग्राहक आवे, तो उसको बहुत मस्का लगाते हैं, क्रोध बिलकुल नहीं करते। तो हम अच्छे या तुम? मुझे तो निर्णय करने में बहुत कठिनाई हुयी। लेकिन मैं आपसे पूछूंगा कि वे अच्छे कि मैं? बोलो, मणिभाई! क्या? मैं यानी मैं की बात नहीं, मैं यानी दिनेशभाई अच्छा कि वह दुकान में जाकर बैठनेवाला अच्छा? मैं थोड़ी आपकी बात

पूछ रहा हूं? हां जी? कोई हमें सोल्यूशन देगा? हां जी? *श्रोता: आप ही अच्छे हैं।* हम अच्छे हैं? क्यों साहब? अरे! हम क्रोध करेंगे तो दो-तीन मिनट के लिये करेंगे, फिर बाद में भूल जायेंगे। लेकिन वह सुबह से लेकर शाम तक लोभ कषाय कर रहा है। पैसा-पैसा-पैसा उसके लिये मायाचारी कर रहा है, तो वह कषाय नहीं है? सिर्फ क्रोध करना कषाय है? क्यों साहब? अब आप ही निर्णय करो।

लेकिन हम तो मानते हैं जो क्रोधी होगा वह कषायी और परिग्रह इकट्ठा करे, वह पुण्यवान? अरे! वह तो महापापी है। क्यों परिग्रह पाप है कि नहीं? पांच पापों के नाम याद है क्या आपको? महावीरभाई? कौन-कौनसे करते हो तुम? आय-मीन, याद कौन-कौनसे हैं आपको? हिंसा, चोरी, झूठ, कुशील और परिग्रह। तो परिग्रह क्या है? पाप है और वह परिग्रह इकट्ठा करें, तो वह तो बहुत भला और हम यहां स्वाध्याय करेंगे, लोगों को समझायेंगे, कभी-कभी गुस्सा भी करेंगे। यहां आना है तो आपको स्वाध्याय करना पड़ेगा ऐसा गुस्सा करेंगे तो? देखो, पंडित होकर गुस्सा करता है। अरे प्रभु, वह तेरी भलाई के लिये कर रहे हैं या मेरे यहां ऑडिअन्स कम है इसलिये मैं चिल्ला रहा हूं? ख्याल में आया? देखो भाई, समझ-समझ में फेर है। हम क्रोध को ही कषाय मानते हैं। अन्य तीन कषायों को कषाय ही नहीं मानते। लोभ को तो कोई कषाय ही मानने को तैयार नहीं और परिग्रह को कोई पाप मानने को तैयार नहीं और हम तो ज़ोर से बोलेंगे। यह जो है न बंगला है न... क्या बंगले का नाम क्या है साहब? हां? कुंदकुंदभवन! यह हमारा है। *श्रोता: सबको बोलते हैं वह। हर आदमी को बोलते हैं।* अरे! बोलने दो भाई! उनका है तो बोलने दो न, कल से इनका नाम लेकर बोलना, इनका है ऐसा वह समझते हैं लेकिन है मेरा, ऐसा बोलना। हमें क्या कहना है यह परिग्रह है और परिग्रह का संचय करना, रखना यह भाव पापभाव है, इतना तो श्रद्धा में लो। फिर जब छूटना है, छूटेगा और छूटेगा तब तुमको बोलकर नहीं छूटेगा और तुम भी उससे बोलकर नहीं छोड़ोगे।

मैं कहता हूं हमारे पास तो एक कुंदकुंदभवन है। भरत चक्रवर्ती के पास कितना था? तो वे परिग्रही थे कि नहीं? अरे, उनको उनसे बिलकुल लगाव ही नहीं था। ख्याल में आया? क्योंकि वे तो क्षायिक सम्यग्दृष्टि थे न! भरत चक्रवर्ती तो षट्खंड के अधिपति थे न। तो यह जो वैभव है, यह मेरा है ऐसा भाव भी अगर उन्हें आता हो, तो वह उनके ज्ञान

का ज्ञेय था। मान्यता में तो यह बात निश्चित ही थी कि यह मेरा है नहीं, लेकिन उपचार से ऐसा कहने में आता है कि यह मेरा है। जो उनके रागभाव उत्पन्न होते थे, वह रागभाव भी उनके ज्ञान के ज्ञेय थे, लेकिन वह उस रागभाव के कर्ता नहीं थे और हम तो कहेंगे कि साहब, सम्यग्दर्शन नहीं होता है, तब तक तो शुभभाव करना कि नहीं करना? तो अभी भी करनेरूप भाव गये हैं कि हैं? *श्रोता: हैं।* तो वह कषाय हैं कि नहीं? ख्याल में आया? हां? तो देखो-देखो, जो मेरा स्वभाव नहीं है, मैं उनसे भिन्न हूं। ऐसा जब पता लगेगा यह कपड़ा तो शुभ्र ही है, उसमें जो मलिनता है, वह उसका स्वभाव नहीं है। यह जो जीव शुद्ध है, ये जो आस्रव के परिणाम हैं वे उसका स्वभाव नहीं है। उन आस्रव परिणामों से मैं भिन्न हूं। ऐसी जब हमारी खात्री हो जाती है, विश्वास हो जाता है, मान्यता हो जाती है, तो जैसे हम कपड़े को साबुन लगाते हैं, देखो मैं दृष्टान्त और सिद्धान्त, दोनों को साथ में लगा रहा हूं। आप तो समझदार हो, समझ जाओगे। वैसे, यहां भेदज्ञानरूपी साबुन हम लगायेंगे। किसको? यह मिथ्यात्व को, तो वह भी मैल निकल जायेगा और सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जायेगी। तो यहां कह रहे हैं, देखो, अब ज़रा ध्यान से देखना – जीव की अवस्था मलिन है, ऐसा ज्ञान होगा और उसी समय, श्रद्धा में जीव का स्वरूप शुद्ध है ऐसी श्रद्धा होगी तो ही मलिन अवस्था नष्ट करने का प्रयत्न हो सकता है।

अगर मलिन अवस्था का ज्ञान ही नहीं होगा, तो मलिन अवस्था को टालने का उपाय ही क्यों करें? यह बात समझ में आती है? तो कह रहे हैं और मलिनता को ही अपना स्वरूप है ऐसी श्रद्धा करोगे, राग करना मेरा स्वभाव है ऐसा ही नक्की करोगे, तो मलिनता हटाने का उपाय कैसे होगा? महावीरभाई, कुछ बात ख्याल में आती है? आ गयी? बहुत अच्छी बात है। तो कहते हैं, अवस्था सहित यानी पर्याय सहित द्रव्य में पर्याय रहित जो अंश-द्रव्यांश है, उसका विचार कैसे करना? इसकी चर्चा अभी हम करेंगे। अब आगे बढ़ते हैं देखो, क्या कह रहे हैं, सात तत्त्वों का साधारण स्वरूप तो हमने अभी देखा। अभी हम जीव और अजीव इन दो तत्त्वों के संबंध में अधिक जानकारी करने की कोशिश करेंगे। क्या कहते हैं?

मैं स्वयं तो जीवतत्त्व हूं इसलिये मुझे उसका ज्ञान करना ही चाहिये। अभी हमें सात तत्त्व हैं उनका ज्ञान करना है न। तो पहले में पहले किसका ज्ञान करेंगे? तो अपना; तो मैं

कौन हूं? तो मैं स्वयं जीवतत्त्व हूं; कैसे नक्की किया? जिसमें मेरा ज्ञानदर्शन है वह जीवतत्त्व। यह हमने पहले नक्की किया था। तो मैं स्वयं जीवतत्त्व हू इसलिये मुझे उसका यानी जीवतत्त्व का यानी मेरा, ज्ञान करना ही चाहिये और अजीवतत्त्व को जानना इसलिये ज़रूरी है कि उसरूप यानी अजीवतत्त्वरूप मैं नहीं हूं। तो अजीवतत्त्व में हमने किसको-किसको लिया था? हां बोलो? अजीवतत्त्व में किसको-किसको लिया था हमने? एक घंटे पहले की बात है, दो घंटे पहले की बात है, चलो न। बिलकुल बोलना नहीं। हां, याद है? शमाजी आपको? *श्रोता: मैं छोड़कर बाकी अन्य जीव अजीवद्रव्य में आ गये।* अजीवद्रव्य? *श्रोता: तत्त्व।* तो वही कहो न। *श्रोता: मैं जीव मुझे छोड़कर अन्य जीवद्रव्य अजीवतत्त्व में आ गये।* हां, मैं समझ गया कि मैं छोड़कर, मेरे सिवाय अनंत जीव, अजीवतत्त्व में आये और कौन रह गया? हां, बोलो बहन। हां, बहुत अच्छा और बाकी कौन? अनंतानंत पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। हम यहां तत्त्व की बात कर रहे हैं न। तो अजीव आदि तत्त्व में किसको लेना? अजीवतत्त्व में ये इतने सारे आये और आदि में किसको लेना? आस्रवतत्त्व, बंधतत्त्व, संवरतत्त्व, निर्जरातत्त्व और मोक्षतत्त्व। यह किसमें आये? परतत्त्व में, अजीव आदि तत्त्व में। क्यों? देखेंगे, अभी क्या है। तो हमने क्या देखा? मैं स्वयं तो जीवतत्त्व हूं, इसलिये मुझे उसका ज्ञान करना ही चाहिये और अजीवतत्त्व को जानना इसलिये ज़रूरी है कि उसरूप मैं नहीं हूं। बिलकुल कॉन्सेंट्रेटेडलि सुनना। इस बात को समझने के लिये कि हमें इन दोनों को जानना है। किसको? जीवतत्त्व को और अजीवतत्त्व को; क्योंकि हम अनादि से अजीव को जीव मानते आ रहे हैं अथवा जीव और अजीव इन दोनों को एक मान रहे हैं।

यह जीवतत्त्व क्या है? इसे हम पहले देखने की कोशिश करेंगे। देखो, यहां अनादिकाल से इस जीव की कौनसी भूल हो रही है? तो वह अजीव को जीव मान रहा है। अजीव में किसको लिया था हमने? पुद्‌गल को 'मेरे' या 'मैं' मान रहा हूं, आस्रव को मैं मान रहा हूं या मेरा आस्रव है, मैं राग करता हूं, मैं उसका कर्ता हूं, मैं राग भोगता हूं – यह आस्रव-बंध में शुभाशुभ भाव में मैं अटकता हूं, मुझे अच्छा लगता है। बाकी जो संवर है, निर्जरा है, मोक्ष है ये तो सारी शुद्ध पर्यायें हैं जो उसकी हैं नहीं। शुभराग से यानी आस्रव से संवर, निर्जरा, मोक्ष होंगे ऐसा मानता है, यह उसकी भूल है। कैसे? वह हम देखेंगे। तो कहते हैं, एक तो अजीव को जीव मानता आ रहा है और दूसरे किसीको कौनसी भूल होती है कि

जीव और अजीव दोनों मिलकर मैं हूं ऐसा मानता है, ख्याल में आया? तो यह वास्तविकता है या नहीं, यह हम आगम के माध्यम से समझने की कोशिश करेंगे।

देखो, छहढाला में तो यह जीवतत्त्व क्या है इसको कहने के लिये दौलतरामजी कहते हैं 'चेतन को है उपयोगरूप, बिनमूरत चिनमूरत अनूप'। यह क्या कहना चाहते हैं? चेतन – वह चेतन कैसा है? उपयोगरूप है; चेतन यानी चेतनस्वभावी मैं, वह कैसा है? उपयोगरूप है यानी मैं उपयोगस्वभावी हूं, उपयोगस्वरूप हूं। वह कैसा है? बिनमूरत। बिनमूरत यानी अमूर्तिक हूं, मूर्तिक नहीं हूं। बिनमूरत, चिनमूरत; चिनमूरत यानी चिन्मय स्वभावी यानी ज्ञानदर्शनस्वभावी और कैसा हूं? तो अनूप हूं। अनूप का अर्थ क्या है? अनुपम जिसको किसी की उपमा नहीं दे सकते हैं ऐसा मैं हूं। तो उन्होंने क्या बताया? चेतन को है उपयोगरूप, बिनमूरत चिनमूरत अनूप। यह दौलतरामजी ने बताया। किसका? जीवतत्त्व का – अपना स्वरूप बताया। तो कहते हैं, समयसार में आचार्य कुंदकुंद क्या कहते हैं? तो यहां तो प्राकृत में दिया है 'अहमेक्को खलु सुद्धो दंसणणाणमइओ सदारूवी' (गाथा ३८)। तो अभी यहां हमारे कोई गुजरात के लोग हैं, उनको मैं बताऊंगा – हुं एक शुद्ध सदा अरूपी, ज्ञान दर्शनमय खरे, कंई अन्य ते मारुं जरी, परमाणु मात्र नथी अरे। इसका हिंदी में ट्रान्स्लेशन यह बताया है कि मैं एक शुद्ध सदा अरूपी, ज्ञान दर्शनमय हूं। अन्य कुछ भी परमाणु मात्र भी मेरा नहीं है। यह किसका वर्णन चल रहा है? जीवतत्त्व का ख्याल में आया? पहले एक-एक, एक-एक बात करके, इसका खुलासा तो मैं ज़रूर करूंगा।

तो क्या कह रहे हैं? यह तो हमने देखा, कि यह बात तो हमारे कुंदकुंद आचार्य ने दो हजार साल पहले, हमें बतायी है। उसके बाद अभी पंद्रहवीं, सोलहवीं सदी में, जो पंडित बनारसीदास होकर गये हैं, उन्होंने कहा है – किसके बारे में? जीवतत्त्व यानी मेरे बारे में – 'चेतनरूप अनूप अमूरत, सिद्ध समान सदा पद मेरो'। क्या कहा? देखो, सबकी बात एक ही है। भाषा अपनी-अपनी, कहने का ढंग अलग-अलग है। चेतनरूप, मैं कैसा हूं? चेतनस्वभावी हूं। चेतन में क्या-क्या आता है? ज्ञानदर्शनस्वभावी हूं; अनूप हूं यानी उपमा रहित हूं; मेरेसे दूसरे किसीकी कंपॅरिझन नहीं हो सकती; अमूरत हूं यानी अमूर्तिक हूं; और कैसा हूं मैं? 'सिद्ध समान सदा पद मेरो' यानी मैं सिद्धों के समान हूं। तो किस अपेक्षा से सिद्ध के समान हूं? तो सिद्ध का जैसा स्वभाव है और सिद्ध ने जैसी स्वभाव के अनुरूप

पर्याय पैदा की है, वैसे उनके स्वभाव और पर्याय जैसा, मैं स्वभाव से सिद्ध समान हूं। क्या कहा? मुझे पर्याय में अभी सिद्धपना प्राप्त नहीं हुआ है। लेकिन जो मेरेमें है, वही तो प्राप्त होनेवाला है। जिसको गुरुदेवश्री ने ऐसा कहा – 'प्राप्तनी प्राप्ति करवी छे।' यानी जो हमारे पास हाज़राहज़ूर-मौजूद है, जो मेरा स्वभाव है, उसीको पर्याय में हमें प्रकट करना है। तो यहां जो कह रहे हैं – चेतनरूप अनूप अमूरत, सिद्ध समान सदा पद मेरो ऐसा बनारसीदासजी कहते हैं। तो तत्त्वार्थसूत्र में उमास्वामी कहते हैं कि 'उपयोगो लक्षणम्'।

जीव का स्वरूप क्या है? जीव कैसा है? तो जिसका लक्षण उपयोग है। उपयोग यानी यह चीज़ मेरे उपयोग की है, उसको संभालना हां, ऐसा उपयोग का अर्थ यहां नहीं है। उपयोग यानी ज्ञानोपयोग, दर्शनोपयोग को मिलकर उपयोग कहते हैं। तो ऊपर जो बताया न दौलतरामजी ने? चेतन को है उपयोगरूप यानी जो चेतनद्रव्य है, उसका स्वभाव कहो या स्वरूप कहो, उपयोगरूप है। तो हमको तो चेतन को है उपयोगरूप कहने से कुछ बात ख्याल में नहीं आती है। तो जब हम उमास्वामीजी की बात देखते हैं उपयोगो लक्षणम्। तो यह उपयोग यानी जानन-देखनरूप जो कोई उपयोग चल रहा है, वह कौनसे जीवों का चलता होगा? सिद्धों का ही चलता होगा न? हां, बोलो, *श्रोता: सिद्धों का चलता होगा।* अच्छा और निगोदिया जीवों का? *श्रोता: सबका।* सबका? बहुत अच्छा! यही तो हम समझना चाहते हैं कि यह बात आप तक पहुंची है या नहीं।

तो यहां तो यह बता रहे हैं कि जो कोई जीव होगा, वह भले सिद्ध हो या निगोदिया जीव हो, उनका लक्षण जो है, उनका जो स्वभाव है, वह तो उपयोगस्वरूप ही है। यह देखो इतने सारे आचार्यों ने कहो अथवा कि अन्य सम्यग्दृष्टि जीवों ने जो कोई बात कही है वह एक ही है। तो वहां पंडित टोडरमलजी क्या लिखते हैं? जो आज से करीबन ढाई सौ – तीन सौ वर्ष के आसपास हो चुके हैं। वे लिखते हैं, किसके बारे में? अपने बारे में यानी तुम्हारे और मेरे बारे में, कि मैं कैसा हूं? तो अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज। हां, बहनजी बोल गयी। प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी, अनादिनिधन वस्तु आप है। यानी क्या कह रहे हैं, अपने जो आत्मा के जो प्रदेश हैं, क्षेत्र है वह कैसा है? तो कहते हैं, अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज यानी आत्मा में कितने प्रदेश हैं, पल्लवी? *श्रोता: असंख्यात।* असंख्यात। वह असंख्यात कितना बड़ा है, मोना? *श्रोता: लोकप्रमाण असंख्यात।* लोकप्रमाण असंख्यात। देखो, यहां

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की बात बतायी है। यहां कह रहे हैं अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज कहने से क्या कहेंगे? कि वह उसका क्षेत्र है। प्रसिद्ध ज्ञान आदि गुणों का धारी यह उसका भाव है और क्या कहते हैं? अनादिनिधन, यह उसका काल है और वस्तु यानी द्रव्य आप है, यानी इसमें द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव – चारों बातें आ गयी और क्या कहते हैं? और मूर्तिक पुद्‌गलों का, पुद्‌गलद्रव्यों का पिंड। यह जो शरीर है यह मूर्तिक पुद्‌गलद्रव्यों का पिंड, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों से रहित क्योंकि यह पिंड जो पुद्‌गल का है, उसमें ज्ञान है या नहीं? हां, क्यों धीमंत? *श्रोता: पुद्‌गल पिंड में ज्ञान नहीं है।* नहीं है न, तो हां बोल रहे हो न तुम। अच्छा, कोई बात नहीं, कोई बात नहीं। आपको कहना है यहां कंपॅरिझन दो तत्त्वों में चल रही है – जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व।

तो यहां पंडित टोडरमलजी यह समझा रहे हैं कि मैं कैसा हूं? अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज हूं, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी हूं, अनादिनिधन ऐसी वस्तु मैं आप यानी स्वयं हूं और उसके साथ में क्या है? कहते हैं मूर्तिक। मैं कैसा हूं? अमूर्तिक। पुद्‌गल कैसा है? मूर्तिक प्रदेशों का पुंज – पिंड चलो, मूर्तिक पुद्‌गलों का पिंड, प्रसिद्ध ज्ञानादिकों से रहित। तो यह पुद्‌गलों में कौन कौनसा गुण नहीं है? ज्ञान, दर्शन, सुख, चारित्र, वीर्य आदि, जो भी विशेष गुण होंगे उससे रहित, जिनका नवीन संयोग हुआ है, क्योंकि जहां जीव जायेगा, वहां नवीन-नवीन शरीर का संयोग होगा। ऐसे शरीरादिक पुद्‌गल पर हैं और जो मैं हूं आपा-पर का भेदविज्ञान करना है न हमें। जीवतत्त्व का और अजीवतत्त्व का भेदज्ञान करना है न? और आगे तो ऐसा कहते हैं – आत्मसिद्धि में श्रीमद् राजचंद्र कहते हैं कि 'शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन, स्वयं ज्योति सुखधाम'। यह हर एक के, अभी इसमें भी बताना पड़ेगा, मैं शुद्ध हूं, बुद्ध हूं। यानी क्या? ज्ञानधारी हूं, चैतन्यस्वरूप हूं यानी उसमें भी ज्ञानदर्शन है, इनका मैं घन, घन यानी पिंड हूं और स्वयं कैसा है? सुख का धाम हूं। तो यह सभी ने अपने बारे में यह बात लिखी है, तो कहते हैं यह सब कथन विभिन्न यानी अलग-अलग होने पर भी सभी का अर्थ एक ही है। जीवतत्त्व का ही यह वर्णन है, सर्वज्ञ भगवान ने जाना हुआ और बताया हुआ जीव का स्वरूप, संतों ने स्वयं अनुभव करके जान लिया है और बाद में शास्त्रों में बताया है।

हमें भी ऐसा स्वयं का अनुभव करना है। यह सब बात क्यों सुन रहे हैं? इतनी लंबी-

लंबी बातें क्यों कर रहे हैं? क्योंकि एक बार कहने से हम नहीं मानते। कैसे? उस बालक के जैसे। कौनसा बालक? कि जिसको कहा था कि जा बेटा, पानी लेकर आ। महेन्द्रभाई, हमने उस बालक को कहा था जा बेटा पानी लेकर आ, तो वह वहीं खड़ा रहा। अरे भाई, जा पानी लेकर आ, मेहमान आये हैं। फिर वही दिल नहीं – बेल-मोबाइल की लाया हूं – तो क्या करें? देखो, ऐसी लिंक टूट जाती है। क्या कह रहा था मैं? तो उसको कहा कि जा बेटा पानी लेकर आ, दो बार, तीन बार कहा और तीन बार कहने के बाद भी वह नहीं सुनता है, तो हम उसको पूछते हैं कि क्यों, नहीं सुन रहा है क्या? तो बोला, हां, सुना है न। तो सुना होगा तो उसके बार-बार बताना पड़ेगा क्या? एक बार सुनाने से वह जाकर पानी लेकर आयेगा। तो आप बोलते हैं, इतनी लंबी-लंबी बात क्यों कहते हैं? शॉर्ट में बताओ न, जो कुछ बताने का है। अरे! शॉर्ट में तो हम नहीं, सारी यह लंबी-लंबी बात तो आचार्यों ने बतायी है। क्योंकि हम इतने ढीठ – अडेल तट्टू हैं कि एक बार कहने से सुने तो फ़िर काहे को दूसरी बार सुनाने की आवश्यकता रहती है, ख्याल में आया?

तो यहां कहते हैं कि हमें भी ऐसा स्वयं का अनुभव करना है। कैसा? कि मैं स्वयं शुद्ध, बुद्ध, चैतन्यघन, स्वयं ज्योति सुखधाम, ऐसा मैं हूं, ऐसा हमें अनुभव करना है। यहां पर हम पहले जीवद्रव्य का विचार करेंगे। देखो, अभी एक बहुत बढ़िया बात है कि बहुत लोगों को जीवद्रव्य और जीवतत्त्व इनमें क्या डिफरन्स है, यह डिफरन्स जल्दी ख्याल में नहीं आता है। जो मैंने आपको बताया था एक बार ऐसे कहने में आया कि अरिहंत भी मेरी अपेक्षा से अजीवतत्त्व है, तो वहां झगड़ा हो गया, कि क्या बात करते हो? अरिहंत को अजीवद्रव्य कहते हो? खुद को बहुत सयाना समझते हो क्या? अरे भगवान! तू कान साफ़ करके आ पहले; मैंने अजीवद्रव्य नहीं बताया था। मैंने क्या बताया था? अजीवतत्त्व। लेकिन हम सुनते कुछ हैं, सोचते कुछ हैं, सोचेंगे तो अपने दिमाग के हिसाब से ही न। सर्वज्ञ जैसा तो नहीं जान सकेंगे न? हां, ख्याल में आया? यानी जो ज्ञान की हमारी लेव्हल है, जो हमने कुयें में बाल्टी डाली थी न, तो जहां गंदा पानी था उसमें से क्या निकलेगा? तो झगड़ालू आदमी होते हैं, उनसे क्या हम अपेक्षा करते हैं? कि अपने मनगढंत कल्पनाओं से सामनेवाले को अटकाने की ही तो उनकी आदत है। तो यहां क्या कहते हैं पहले हम जीवद्रव्य और जीवतत्त्व को समझने की कोशिश करेंगे। देखो, गुणपर्यायों से युक्त द्रव्य होता है। द्रव्य किसको कहेंगे? 'गुणपर्ययवत् द्रव्यम्'। जो उमास्वामी ने तत्त्वार्थसूत्र के ५ वें

अध्याय में ३८ नंबर के सूत्र में कहा है। क्या कहा है ? द्रव्य कैसा होता है? तो गुणवान और पर्यायवान होता है। गुणों से और पर्यायों से युक्त होता है। तो यहां पर भी यही बताते हैं, द्रव्य कैसा है – गुण पर्यायों से युक्त होता है। इस बात को हम जानते ही हैं। प्रत्येक समय में कोई न कोई पर्याय विद्यमान रहती ही है। क्यों साहब? ऐसा क्यों रहता है? तो कहते हैं द्रव्य का स्वरूप ही ऐसा है। कैसा है? तो कहते हैं सत्-स्वरूप है।

तो यह सत्-स्वरूप जो है, देखो, परसों इस बात का, मैं अभी आपसे माफ़ी चाहता हूं। तो मैंने गलती से तत्त्वार्थसूत्र के वह अठ्ठाईसवां सूत्र कहा था पांचवें अध्याय का, लेकिन है उनतीसवां। तो वह आपने गलत नोट किया हो, तो उसको सुधार देना। तो कह रहे हैं, सत् द्रव्य लक्षण है और वह सत् कैसा है? तो कहते हैं उत्पाद, व्यय और ध्रौव्ययुक्त ऐसा सत् है। तो वह जो सत् है, वह हमेशा पर्यायों से युक्त ही होगा और उसीको आपको दुबारा बताने के लिये गुणपर्ययवत् द्रव्यम् ऐसा कहा। अभी यहां हमें क्या देखना है? जो द्रव्य होता है, उसमें गुण और पर्याय होते ही हैं और हर समय नयी-नयी पर्याय उत्पन्न होवे ऐसा उस द्रव्य का स्वभाव है। कौनसे द्रव्य का? प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में एक द्रव्यत्व नाम का सामान्य गुण है और वह द्रव्यत्व गुण यह बताता है कि द्रव्य का परिणमन निरंतर चले, ऐसी एक शक्ति यानी एक गुण है जिसका नाम है द्रव्यत्व गुण। उसके कारण से द्रव्य में निरंतर क्रिया (पर्याय) होती रहती है। तो हमने द्रव्य का स्वभाव कैसा देखा, उसको बता रहे हैं। तो कह रहे हैं, इसका तात्पर्य यह हुआ कि द्रव्य पर्यायों से युक्त ही होता है। पर्यायों से भिन्न नहीं होता। पर्यायरूप से प्रतिसमय बदलने पर भी, द्रव्यरूप से नित्य वैसा ही है और वही है। ख्याल में आया? यह ज़रा कठिन लगता हो, हम एकदम आसान भाषा में समझेंगे। इसको मैं दोबारा पढूंगा और उसका मैं और आसान आपको एक स्लोगन दूंगा।

क्या कह रहे हैं देखो, पर्यायरूप से प्रतिसमय बदलने पर भी द्रव्यरूप से नित्य वैसा ही और वही है। कौन? द्रव्य। समझ में आयी बात? देखो, फिर से। ऐसा कहते हैं कि द्रव्य का स्वभाव ऐसा है कि कायम बदलते हुये कायम टिकना और कायम टिकते हुये कायम बदलना। यानी क्या? द्रव्य से तो नित्यपना है और पर्याय से वही द्रव्य हर समय अनित्य है। नित्यपना जो है और अनित्यपना जो है उन दोनों में समय भेद नहीं है। जैसे हम

किसीसे पूछेंगे हमारी शमा से ही पूछेंगे न, काहे को? क्योंकि अन्य किसीसे पूछेंगे तो वह नाराज़ हो जायेगी। तो शमा, आप बोलना कि आप माता हो या पुत्री? *श्रोता: दोनों।* दोनों कहां ऑप्शन दिया है? यह थोड़ी हम कौन बनेगा करोड़पति के स्टाइल में पूछ रहे हैं? आपको तो दो ही ऑप्शन हैं माता हो या पुत्री? नहीं बोल पायेंगे, कोई बात नहीं। देखो-देखो, जब हम पूछते हैं की द्रव्य नित्य है या अनित्य? तो हम द्रव्य नित्य है कहेंगे तो अटक गये, एकांत हो गया। द्रव्य अनित्य है कहेंगे तो अटक गये, लेकिन अपेक्षा लगायेंगे कि द्रव्य, द्रव्य की अपेक्षा से देखा जाये तो वह नित्य ही है और उसी समय कोई वहां से उस द्रव्य को पर्याय की अपेक्षा से देखना चाहे तो वह कैसा है? अनित्य है, समय भेद नहीं है। वैसे ही जिस समय अभी तुम माता भी हो, उसी समय तुम तुम्हारे माता की अपेक्षा से पुत्री भी हो। क्या इसमें कोई दो राय है आपकी या अन्य किसीकी? है किसीकी अन्य राय? नहीं। ख्याल में आया? तो यहां क्या कह रहे हैं, द्रव्य नित्य कायम टिकता हुआ नित्य बदले ऐसा उसका स्वभाव है, ख्याल में आया?

तो यहां क्या बता रहे हैं? देखो, वैसा ही लिखा है लेकिन वह मैं आहिस्ते-आहिस्ते पढ़ता हूं। मेरा कहना है, मैं ज़ोर-ज़ोर से पढ़ता हूं, इसलिये आपको जल्दी समझ में आता है न? ऐसा कुछ नहीं है। देखो, क्या कह रहे हैं? पर्यायरूप से प्रतिसमय बदलने पर भी, द्रव्यरूप से यानी द्रव्य की अपेक्षा से, नित्य वैसा ही है और वही द्रव्य है। द्रव्य कोई दूसरा तैयार नहीं हुआ है, वही द्रव्य है और वैसा ही है द्रव्य अपेक्षा से और पर्याय अपेक्षा से नित्य बदलता है। ख्याल में आया? अब कहते हैं, प्रत्येक द्रव्य और प्रत्येक वस्तु हमें दो अंशों में दिखायी देती है। एक नित्य कायम रहनेवाला ध्रुव अंश और एक सदा नया उत्पन्न और विनाश होनेवाला पर्याय अंश, ख्याल में आया? तो इस नित्य अंश को हम द्रव्यांश और अनित्य अंश को पर्यायांश कहेंगे। द्रव्य-अंश, द्रव्यांश यानी नित्य अंश; नित्य होने से अनादिकाल से अनंतकाल तक है उसरूप में कायम रहनेवाला है, द्रव्यांश जो है, क्योंकि द्रव्य सत् है न, तो द्रव्य वैसे का वैसा कायम रहेगा। तो कहते हैं उसमें कुछ भी बदल या वध-घट नहीं हो सकती।

वही का वही एकरूप ऐसा जो यह द्रव्यांश है, उसे ही त्रिकाली ध्रुव परमपारिणामिक एक शुद्धभाव कहते हैं। ख्याल में आया? यह देखो, यह जो नित्य स्वभाव है उसको

अलग-अलग नाम से कहा है। नित्य यानी त्रिकाली तीनों काल में वैसे का वैसा, वैसा का वैसा रहे, उसको कहेंगे त्रिकाली। ध्रुव यानी जो स्वभाव है वह उसका द्रव्यांश है, वह कभी पलटेगा नहीं इसलिये उसको ध्रुव कहते हैं और परमपारिणामिक – पारिणामिक यानी उसे किसी कर्म की अपेक्षा नहीं है। ऐसा जो स्वभाव है वह पारिणामिक है और वह परमपारिणामिक इसलिये कहते हैं कि आपका भी पारिणामिक स्वभाव है, आपका भी पारिणामिक है, आपका भी पारिणामिक है, मेरा भी पारिणामिक है, लेकिन मैं मेरा आश्रय लूं तो मेरी पर्याय में शुद्धता प्रगट होगी इसलिये मेरे निज स्वभाव को परमपारिणामिक कहा है, ख्याल में आया? जब परमपारिणामिक कहते हैं, वह अपने स्व की अपेक्षा से कह रहे हैं। हमें तो स्वतत्त्व–जीवतत्त्व को समझना है न, ख्याल में आया? तो अभी हम इसीको और थोड़ासा विस्तार से समझने की कोशिश करते हैं। देखो, द्रव्य कैसा होता है तो उसको भी हम समझने की कोशिश करेंगे। तो कह रहे हैं, जो द्रव्य है वह अपेक्षा से जो पहला कॉलम है लेफ्ट साइड में, तो उस पहले कॉलम में लिखा है – अपेक्षा। द्रव्य कितने हैं? एक ही है लेकिन उस द्रव्य को देखने की अपेक्षायें कितनी हैं? हां? *श्रोता: चार।* चार अपेक्षायें हैं – द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव। जैसे अभी हमने शमाजी से पूछा कि तुम माता हो या पुत्री हो? मौसी हो या भांजी हो? चार अपेक्षा लग गयी न। या बहन हो या पत्नी हो। ऐसा कोई भी आपको लगाना है चार अपेक्षा, यह तो उदाहरण है हो।

अपेक्षा	**द्रव्यांश** +	**पर्यायांश** =	**वस्तु**
द्रव्य	सामान्य	विशेष	सामान्यविशेषात्मक
क्षेत्र	अभेद	भेद	भेदाभेदात्मक
काल	नित्य	अनित्य	नित्यानित्यात्मक
भाव	एक	अनेक	एकानेकात्मक

लेकिन यहां क्या बात बता रहे हैं? द्रव्य जो है, उस द्रव्य को देखने की दृष्टि, देखने के ॲंगल्स अलग-अलग हैं तो वे चार हैं। तो जो द्रव्य को, यह अपेक्षा पहले बतायी फिर द्रव्यांश, पर्यायांश और वस्तु जैसी है, उसकी बात बतायेंगे। तो द्रव्य का द्रव्यांश देखा जाये, तो अपेक्षा क्या लगायी हमने? द्रव्य की अपेक्षा से, द्रव्यांश को देखा जाये तो वह

कैसा है? सामान्य है। उसमें कोई विशेषता नहीं है, बस सामान्य है और पर्यायांश को देखेंगे तो वह कैसा है? विशेष है। लेकिन पूरी वस्तु कैसी है? सामान्यविशेषात्मक है। अब उसीको हम क्षेत्र की अपेक्षा से देखते हैं तो द्रव्य कैसा है? अभेद है वह द्रव्यांश में आयेगा और जो पर्यायांश है वह भेदरूप है और पूरा द्रव्य क्षेत्र की अपेक्षा से देखा जाये, तो कैसा है? भेदाभेदात्मक। यानी भेद प्लस अभेद, वह 'द' और 'अ' का मिलकर 'दा' होता है। भेदाभेदात्मक यानी भेद अभेदात्मक, ऐसा क्षेत्र की अपेक्षा से वही द्रव्य है और आगे बताते हैं, काल की अपेक्षा से देखा जाये तो द्रव्यांश कैसा है? तो कहते हैं, नित्य है और काल की अपेक्षा से पर्यायांश को देखा जाये तो वह अनित्य है और पूरा द्रव्य कैसा है? नित्यानित्यात्मक है। नित्य और अनित्य दोनों मिलकर है।

यह बात समझ में आ रही है क्या? महिलाओं से मैं पूछ रहा हूं। नहीं समझ में आता हो तो हाथ उठाना। मुझे मालूम है, सब इतने आलसु हैं कि हाथ उठाने का कष्ट भी कोई नहीं करेंगे, तो मैं समझ लूंगा आप समझ गये। हां, कोई बात नहीं, बताऊंगा आप बिलकुल पूछना हो बहन, क्योंकि हम सबको समझना है। क्योंकि हमने, टूरिस्ट कंपनी होती है न, टूरिस्ट कंपनी निकाली है। उसमें केवल छह सौ आठ ही सीट्स हैं, जल्दी बुकिंग कर लेना। छह महीने और आठ समय में जिनको आना है तो ध्यान से सुनना, नहीं समझ में आया तो पूछ लेना। देखो, देखो वस्तु जो होती है उसमें क्या-क्या है? द्रव्यांश और पर्यायांश है। अभी हमने देखा न द्रव्य; उसका द्रव्य जो है, वह उसका स्वभाव जो है, वह द्रव्यांश है। तो द्रव्यांश में किस अपेक्षा से देखा जाता है – तो द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से देखा जाता है। तो जो द्रव्य कैसा है अभी इधर से चालू करते हैं। द्रव्य कैसा है? सामान्यविशेषात्मक है। तो सामान्यविशेषात्मक किस अपेक्षा से है? कि द्रव्य को, द्रव्यांश की अपेक्षा से देखा जाये तो वह सामान्य है और वही द्रव्य पर्याय की अपेक्षा से विशेष है तो वह सामान्यविशेषात्मक है। तो सामान्यपना जो है, वह कहां है? द्रव्यांश में है और हमेशा वह पर्याय पलटती है, पलटती है, विशेष-विशेष-विशेष, नया-नया-नया कुछ उसमें परिणमन होता है, वह क्या है? पर्यायांश है।

तो कह रहे हैं कि सामान्य जो है वह द्रव्यांश है और विशेष जो है वह पर्यायांश है और पूरा द्रव्य कैसा है? सामान्यविशेषात्मक है। वैसे ही क्षेत्र की अपेक्षा से देखा जाये तो

वह अभेद है। अभेद यानी जो आत्मा के असंख्यात प्रदेश हैं, वे जुदे-जुदे हैं और वे एकत्रित हो गये हैं, ऐसा नहीं है। उसका जो कोई आकार है, अभी मैं आपसे पूछता हूं। देखो-देखो, बहुत अच्छी बात आपने पूछी। यह हॉल है न, यह हॉल कितना बड़ा है? यहां के कोई बतायेंगे? यह हॉल के मालिक कोई होगा कि नहीं इधर। हां, सवाईभाई आप बताइये। हॉल कितना बड़ा है? *श्रोता: चालीस बाय पचास।* हां जी। चालीस बाय पचास यानी क्या? दो हज़ार स्क्वेअर फीट का है। ऐसा आपका कहना है न? तो इसके दो हज़ार स्क्वेअर फीट यानी एक-एक स्क्वेअर फीट के दो हज़ार टुकड़ों से यह बना है न? कि एक अखंड है, ख्याल में आया? यह अखंड है लेकिन उसको जब हम स्क्वेअर फीट में गिनते हैं, तो वह भेद करके गिनते हैं। हमने कहां पूछा था कि स्क्वेअर फीट में है, हम तो स्क्वेअर मीटर में पूछते थे आपको, स्क्वेअर इंच में पूछते थे। ख्याल में आया न? तो भेद करना है तो हम उसको ऐसा भेद करके बतायेंगे तो पर्यायांश होगा लेकिन है कैसा द्रव्य? अखंड है, अभेद है तो भेद नहीं है जिसमें। तो क्षेत्र की अपेक्षा से असंख्यातप्रदेशी जिसको हम कहेंगे। अरे भैया, असंख्यातप्रदेशी कहना यह भी भेद से कहना है, ख्याल में आया?

तो उसका द्रव्यांश कैसा है? अभेद है और जो पर्यायांश है, वह भेदरूप है और पूरा द्रव्य कैसा है? भेदाभेदात्मक है और भेद और अभेद मिलकर है। अभी कुछ बात समझ में आ रही है बहन, हां आपको? थोड़ा-थोड़ा समझा कि सब? बहुत अच्छा! सब समझा? शाबाश! और काल की अपेक्षा से जब पूरे द्रव्य को देखते हैं, तो कैसा है द्रव्य? नित्य भी है और अनित्य भी है, तो नित्यानित्यात्मक है। यानी नित्य प्लस अनित्य इज ईक्वल टु नित्यानित्यात्मक। तो यह नित्य जो है वह द्रव्यांश है, वह द्रव्यांश जो है वह कभी पलटता नहीं। है वैसा रहता है, नित्य रहता है। लेकिन पर्याय की अपेक्षा से उसी द्रव्य को देखेंगे तो वह हमेशा बदलता है-बदलता है, पलटता है-पलटता है। तो वह कैसा है? अनित्य है और पूरा द्रव्य कैसा है? नित्यानित्यात्मक। किस अपेक्षा से? काल की अपेक्षा से।

वैसे भाव जो है, भाव यानी द्रव्यांश का भाव जो है, वह एक ही है। हूं एक शुद्ध, सदा, अरूपी यह एकवाला जो है न, वह एक शुद्ध है वह एक। तो यह एक जो है और पर्याय की यानी भेद की अपेक्षा से देखा जाये तो उसमें ज्ञान है, दर्शन है, अमुक है, तमुक है, सब जो कुछ है वह अनेक है और पूरा द्रव्य कैसा है? एकानेकात्मक है। क्या बताया? *श्रोता:*

एकानेकात्मक / एक प्लस अनेक, एक अधिक अनेक एकानेकात्मक है। यह शब्द कैसे तैयार होते हैं? अगर हम उसकी उत्पत्ति कैसी होती है, वह देखेंगे तो यह शब्द लिखे हुये हमें जल्दी ख्याल में आते हैं। अभी इन दोनों की बात छोड़ो ये इंग्लिशतानी हैं न, अंग्रेजी स्कूल में पढ़ते हैं। तो क्या लिखा है और क्या अर्थ है मालूम नहीं है, फिर भी देखो कितने अच्छे से बैठते हैं, डर के मारे क्यों न हो, बैठते तो हैं न। हां? क्यों रिया? समझ में आता है न? एक और अनेक। अन् एक यानी नहीं एक, यानी एक नहीं अनेक हैं, ऐसा पर्यायांश है और पूरा द्रव्य कैसा है? एकानेकात्मक है। तो अभी यहां हम देख रहे हैं, यहां जो बात चल रही है, जो द्रव्यांश है, उसीकी बात जीवतत्त्व में आयी है। पर्यायांश जो है, उसकी बात जीवतत्त्व में नहीं है। तो हमने अभी तक क्या देखा था? जीवद्रव्य में, गुण भी हैं और पर्याय भी हैं। यानी अभी गुण को हम गौण करते हैं, द्रव्य भी है और पर्याय भी है और जीवतत्त्व में केवल द्रव्यांश है, पर्यायांश को गौण कर दिया है।

हमें मूल में अभी तक क्या देखना था कि जीवद्रव्य और जीवतत्त्व इसमें क्या डिफरन्स है? भेद-फरक-अंतर क्या है दोनों में? हम हमेशा जीवद्रव्य और जीवतत्त्व की खिचड़ी बना देते हैं। संकरदोष करते हैं, दोनों एक ही हैं ऐसा मानते हैं। लेकिन जब जीवद्रव्य की बात की जाती है, तब उसके साथ उसमें द्रव्य में पर्याय भी शामिल है। लेकिन जो जीवतत्त्व है यह जीव का जीवपना है, तो जीवपना हमेशा बदलेगा कि नहीं? हां साहब? जीव का जीवपना हमेशा बदलेगा कि नहीं? नहीं बदलेगा। देखो, अग्नि का स्वभाव बदलेगा कि नहीं? तो जीव का जीवपना है यानी जीव का जो स्वभाव है, जीवत्व है, जीवपना देखा न हमने। तो वह जीवत्व कहो या जीवतत्त्व कहो वह हमेशा बदलेगा कि नहीं? तो हमें जीवतत्त्व में उसके द्रव्यांश को देखना है और जीवद्रव्य में? यह जो हमने यह देखा न सामान्यविशेषात्मक, भेदाभेदात्मक, नित्यानित्यात्मक, एकानेकात्मक – ऐसा द्रव्य है और जीवतत्त्व कैसा है? सामान्य, अभेद, नित्य और एक। जयश्रीताई, कुछ बात ख्याल में आती है? यह तो आपका हुआ होगा हमारे यहां। देखो, यहां क्या बात कह रहे हैं? हमें जीवद्रव्य और जीवतत्त्व में डिफरन्शिएशन करना है। तो अपनी सीधी भाषा में जीवद्रव्य में द्रव्य की और पर्याय की दोनों की बात आयेगी।

लेकिन, जीवतत्त्व में सिर्फ जीव का जो जीवपना है तो मैं कैसा हूं? चेतन है

उपयोगरूप, चेतन को है उपयोगरूप यानी मैं उपयोगस्वभावी हूं, तो ज्ञानदर्शनमय हूं, यह ज्ञानपना और दर्शनपना जो है, वह जीव का जीवपना है। ख्याल में आया? तो अभी क्या कहते हैं देखो, उक्त टेबल से यह बात ध्यान में आती है कि वस्तु का यह द्रव्यांश यानी वहां जो लिखा है सामान्य, अभेद, नित्य और एक है। सदा वैसे का वैसा कायम रहनेवाला है, परिपूर्ण है। उसमें पूर्णता कहीं बाहर से नवीन लाने की जरूरत नहीं है वह सदा ही पूर्ण है। देखो, गुरुदेवश्री हमेशा बताते थे; यह जो भगवान आत्मा है वह एक समय में परिपूर्ण है। बोलते थे, बेन? तो एक समय में परिपूर्ण है यानी क्या? वह हमेशा, नित्य, त्रिकाली परिपूर्ण ही है। तो उसको परिपूर्ण होने के लिये कोई अधिक समय लगे ऐसा नहीं। अरे! स्वभाव ही उसका परिपूर्ण है, वह भी एक समय में परिपूर्ण है।

तो वे क्या कहते थे यह बात हमारे दिमाग में घुसती नहीं थी। लेकिन जब आहिस्ते-आहिस्ते ऐसे टेबल हमारे ख्याल में आये, किसी हमारे शिक्षागुरु ने हमें बताये, तो यह बात अभी बराबर गहराई से पकड़ में आती है। 'एक समयमां परिपूर्ण छे। अरे, तारा स्वभावनी वात थाय छे भाई।' ख्याल में आया? यह स्वभाव की यानी जीवतत्त्व की बात कर रहे हैं, स्वभाव से बात कर रहे हैं। तो कहते हैं कि यह द्रव्यांश है वह सामान्य, अभेद, नित्य और एक है। सदा वैसे का वैसा कायम रहनेवाला है और कैसा है? परिपूर्ण है। उसमें पूर्णता कहीं बाहर से नवीन लाने की ज़रूरत नहीं है। वह सदा पूर्ण ही है। तो यह आत्मा का काल कितना देखा हमने? अनादिअनंत। तो अनादिअनंत में जो कोई पर्यायें हैं, तो हर पर्याय में परिपूर्ण। तो एक समय की पर्याय में भी परिपूर्ण है। ख्याल में आया?

कहते हैं, वस्तु का पर्यायांश, जो इधर लिखा है विशेष है द्रव्य की अपेक्षा से, भेदरूप है क्षेत्र की अपेक्षा से, अनित्य है काल की अपेक्षा से और अनेकरूप है भाव की अपेक्षा से। यहां यह बताना चाहते हैं कि यह जो पर्यायांश है, वह समय मात्र में बदलनेवाला है, हर समय बदलनेवाला है और द्रव्यांश हर समय में परिपूर्ण है, नित्य है, कायम है इस बात को अभी हम थोड़ी देर में दुबारा देखेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

५४. सात तत्त्व – भेदविज्ञान

अभी हमने द्रव्य को द्रव्यांश की तरफ से और पर्यायांश की तरफ से देखने की कोशिश की। पूरा द्रव्य जो है वह सामान्य-विशेषात्मक, भेदाभेदात्मक, नित्यानित्यात्मक और एकानेकात्मक है; लेकिन जब द्रव्य को द्रव्यांश की तरफ से हम देखते हैं, तो कहते हैं कि वह सामान्य है, अभेद है, नित्य है और एक है। तो यहां जब हम जीवतत्त्व की बात करते हैं तो जीव का जीवपना निरंतर रहेगा या कभी पलटेगा भी? *श्रोता: निरंतर रहेगा।* निरंतर रहेगा; तो निरंतर जो रहनेवाला स्वभाव, द्रव्यांश है वह उस द्रव्य का वहपना है; वह तत्त्व है तत् + त्व। जब ऐसी बात हमारी समझ में आती है तो उसके साथ जब हम तुलना करते हैं। किसकी? तो कह रहे हैं कि जीवद्रव्य की जीवतत्त्व के साथ जब तुलना की जाती है, तो जीवतत्त्व में हमने जो कायम रहनेवाला जो द्रव्य का द्रव्यपना है उसको हम कन्सिडर करते हैं। उसमें जो पलटनेवाला जो पर्यायांश है, वह इसमें गर्भित नहीं है। लेकिन द्रव्य में, द्रव्य और पर्याय दोनों मिलकर हैं, ख्याल में आया?

अब वहां जो द्रव्य और पर्याय दोनों मिलकर जो बात है तो जब कोई जीव अनुभव करता है, तब वह अनुभव के काल में भी उसका जो पर्यायांश है उसको गौण करके, निकाल बाहर करके नहीं, उसको हटाकर, उठाकर, फेंक देवे ऐसा भी नहीं, क्योंकि पर्यायांश को कोई भी जुदा कर नहीं सकता। लेकिन है उसको गौण करके जब द्रव्यांश की तरफ अपना उपयोग लगायेगा, तो उसको अपना अनुभव होगा। तो किसी भाई ने मुझे पूछा – यह जो द्रव्यांश है इसमें कहां ध्यान देगा वह ? अरे भाई! यह चार भेद जो बताये हैं, वे भी भेदात्मक कहना है, यह भी उपचार का कथन है, व्यवहारनय का कथन है क्योंकि जब हम मैं एक अखंड कहते हैं, तो एक समय में एक ही को ध्यान में रखना। दूसरी बात, अगर आपको इतना कठिन जाता हो तो पारिणामिक भाव जो है, जो अपना पारिणामिक भाव है, उसे परमपारिणामिक भाव कहते हैं; उसका आश्रय लेना है। उसमें अगर मैं अखंड हूं, ऐसा हूं, वैसा हूं, ऐसे विकल्प करेंगे तो हम भेद करके ही वह बात देख रहे हैं। तो मैं कैसा हूं? मैं तो अखंड हूं, इसतरह से हमें देखना है।

अब दूसरी बात, यहां एक प्रश्न आया है कि आपने बताया है कि जीव स्वभाव से

हर एक समय में परिपूर्ण है, तो इससे प्रश्नकार जो है वह तो सहमत है। क्या बताया आपने? स्वभाव से! तो स्वभाव कब रहता है? तीनों काल रहता है! तो परिपूर्ण है, तो अभी प्रश्न कौनसा है? आपने बताया कि जीव स्वभाव से हर एक समय में परिपूर्ण है, तो फिर आत्मानुभव की आवश्यकता ही क्या है? प्रश्न का उत्तर मिल गया कि बताऊं? नहीं मिला न? देखो, यह द्रव्य है, वह तो परिपूर्ण शुद्ध है और पर्याय में शुद्धता है कि नहीं तुम्हारे? हांजी, बोलो-बोलो, जोर से बोलो भैया, *श्रोता: अशुद्धता है।* अशुद्धता है। तो वह अशुद्धता हमें नष्ट करनी है या रखनी है? कपड़ा मलिन है, यह हम जानते हैं और मलिनता मेरा स्वभाव नहीं है; यह अशुद्धता मेरा स्वभाव नहीं है, मैं स्वभाव से तो शुद्ध ही हूं। लेकिन पर्याय में जो अशुद्धता हमें नज़र आ रही है, ज्ञान में आ रही है, उसको हटाने की कोशिश करना कि नहीं करना? सिद्ध भगवान जो हैं, वे स्वभाव से भी परिपूर्ण हैं यानी स्वभाव से भी शुद्ध हैं और पर्याय में भी उनकी शुद्धता प्रकट हुयी है; वह परिपूर्ण शुद्धता है। कैसे? द्रव्य से और पर्याय से। लेकिन हम कैसे हैं? द्रव्य से तो परिपूर्ण शुद्ध हैं। कब? त्रिकाल! हर समय में! लेकिन पर्याय में अशुद्धता है और वह अशुद्धता निकालने का या जाने का एक ही रास्ता है; वह है अपने आत्मा का अनुभव करते हुये, एक अंतर्मुहूर्त मात्र कायम टिके, तो केवलज्ञान की प्राप्ति हो जाये; ऐसा बलशाली यह जीव है। लेकिन पर्याय में हम मलिनता ऑक्सेप्ट करेंगे, तो की बात है न भाई! तो आप जो पूछ रहे हैं आवश्यकता क्या है? इसका अर्थ आप अपनेको पर्याय में भी शुद्ध अनुभव कर रहे हैं ऐसा मान रहे हैं! अनुभव तो नहीं कर रहे तो उसको तो शास्त्र में निश्चयाभासी कहा है। कैसा? निश्चय से जैसे परिपूर्ण आत्मा है, वैसे पर्याय में नहीं होते हुये भी परिपूर्ण मानना। तो अब उसे स्वाध्याय की क्या आवश्यकता है? हां? आत्मानुभव की क्या आवश्यकता है? क्योंकि मैं पर्याय में भी सिद्ध समान हूं। आप ही ने तो बताया – अरे! पर्याय में नहीं, स्वभाव से!

जीव स्वभाव से एक समय में परिपूर्ण है, तो आत्मानुभव यह क्रिया है या त्रिकाली अपना स्वभाव है? आत्मानुभव करना है न? करने की आवश्यकता यानी वह क्रिया होगी कि नहीं? तो क्रिया द्रव्य में होती है या पर्याय में होती है भाई? *श्रोता: पर्याय में... द्रव्य में...।* देखो! जो सोया हुआ है न? उसको जगाया जाता है, लेकिन जो सोने का नाटक करता है, उसको जगाया जाता है कि नहीं? समझने की कोशिश करो तो समझोगे और नहीं समझ में आता है तो बाद में समझना, जब हम फुरसत में होंगे। देखो! क्रिया हमेशा

पर्याय में होती है; हमने पर्याय का ही नाम क्रिया कहा है, पर्याय को ही कार्य कहा है। तो कार्य द्रव्य में नहीं होता है, द्रव्य तो हमेशा नित्य है, यहां बताया है न भाई? अनित्यता यानी बदलना-बदलना, तो बदलना पर्याय में होगा। तो यहां जो पर्याय में जो अपूर्णता है, वह अगर हमें निकाल बाहर करनी हो तो आत्मानुभव की आवश्यकता है और अगर इसीतरह अनंतकाल तक इस संसार में भटकना हो, तो आत्मा के अनुभव की तुम्हें आवश्यकता नहीं है। अब बात ख्याल में आयी हो या नहीं आयी हो, बचाये भगवान तुम्हें, हां?

श्रोता: यह द्रव्य शुद्ध है, तो पर्याय क्यों अशुद्ध निकलती है? मैंने पहले ही बताया था, यह लेक्चर में आया था, बाद में मिलना। हां, कि द्रव्य शुद्ध है तो पर्याय में अशुद्धता क्यों निकलती है? तत् समय की योग्यता! इतनासा ही आन्सर है। डिटेल में जानना चाहेंगे तो मिलते रहना, क्योंकि हमें सबके टाइम की कीमत रखनी है। हां, मैं मेरी बात बताता हूं – इससे लगती नहीं है, पर रिलेशन लगाओ तो ज़रूर लगेगा। जब मैं नया-नया जिसको हम कहते हैं नव-मुसलमान, नव-मुसलमान किसको कहते हैं मालूम है? जो अभी-अभी मुसलमान हुआ है, वह दिन में नौ बार तो नमाज़ पढ़ने जाता है। वैसे जाति से तो मैं और कुल से तो मैं दिगंबर जैन हूं लेकिन स्वामीजी के पास गया। तो वह क्या बोले हमें कि 'भाग्यवंतना काने आ वात पडे,' क्या बताया? भाग्यवान जो होगा उसके कानों में यह बात पड़ेगी और दूसरी बात वे हमेशा बताते थे कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है। हम तो उस समय जवान थे, तो हमें लगता था कि हम दुनिया में सबसे होशियार हैं। यहां तो बोलते हैं कि, एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है? अभी किसीको यहां मॉर्फिन का इंजेक्श्न दिया जाये तो पांच मिनट में बेहोश हो जाता है। उसके पेट पर छुरी चलायें, ऑपरेशन करें, तो उसको रत्ती भर भी पता नहीं लगता है। तो यह जो औषधि है इंजेक्शन; तो वह अलग द्रव्य है और यह जीव एक अलग दूसरा द्रव्य है। यह पुद्गल है और यह जीव है; तो पुद्गल ने जीवद्रव्य के ऊपर असर किया कि नहीं किया? यहां यह लड़का बैठा है; उसको दारू पिला दी जाये तो पागलपन करे, तो उस दारू ने उसके ऊपर इफ़ेक्ट-असर किया कि नहीं?

ऐसा हम जोर-जोर से, ऐसे तुम्हारे जैसे कोई मित्र मिलते हैं; मुझे तो पक्का याद है, यह हमारे पं. हेमचंदजी हेम भोपालवाले, वे उस समय मिलते थे हमको; वे तो बिलकुल

शुभ्र धोती, कुर्ता, ब्रह्मचारी आदमी, सामने आते थे; हम उनको पूछते थे कि साहब प्रश्न का उत्तर हमें दो। उसमें क्या है? यह तो निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। मैंने कहा यार! इनको कोई जवाब ही नहीं देने को आता है, खाली बोलते हैं। निमित्त-नैमित्तिक संबंध क्या है? अच्छा! कुछ काल के बाद बतायेंगे; अभी-अभी रहने दो; क्योंकि वे समझते थे कि यह समझने से बाहर है और हम समझते थे, देखो, हमने कैसा उनको अनुत्तरित कर दिया, ख्याल में आया न? इस बात से कोई संबंध नहीं है, लेकिन हम समझने की कोशिश करेंगे। लेकिन आज ऐसी नौबत आ गयी है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है, यह हम छाती ठोक कर लोगों को समझा रहे हैं, जो हम नहीं समझते थे। देखो साहब! जिसने अपनी गलती कबूल की है, वही सुधरेगा! और जो कहता है कि मैं गलती ही नहीं कर रहा हूं, तो उसने सुधरने की फाइल बंद कर दी है। समझ में आया? आगे बढ़ते हैं।

अभी कह रहे हैं यह जो ध्रुव, नित्य, ज्ञानमय द्रव्यांश है, वही जीवतत्त्व है। द्रव्यांश में पर्यायांश गर्भित है क्या? *श्रोता: नहीं।* नहीं! तो हम केवल द्रव्यांश को देख रहे हैं। द्रव्यांश क्या है? जीव का स्वभाव है, वह जीव का जीवपना है, तो वह जीवतत्त्व है। हमारा प्रयोजन स्वतत्त्व से है; इसलिये यह मैं ज्ञानमय, नित्य, ध्रुव हूं; ऐसा स्वतत्त्व यानी मैं अर्थात् जीवतत्त्व हूं; इसतरह स्वयं की पहचान हमें करनी है। जीवद्रव्य और जीवतत्त्व में जो अंतर है, वह अब स्पष्ट हो गया होगा। हां? हो गया कि नहीं भाईसाहब? हां? नहीं हो गया वह हाथ ऊंचा करें। मुझे मालूम है कोई हाथ उठानेवाला नहीं है। आप बहुत समझदार हो, हमारे जैसे नहीं हो, इसलिये जल्दी समझ गये। हमें समझते-समझते ३५ साल गये भाई। क्या कह रहे हैं – जीवद्रव्य और जीवतत्त्व में जो अंतर है, वह अब स्पष्ट हो गया होगा। द्रव्य कहते ही उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तम् सत्, सत द्रव्यलक्षणम्, यह बात ध्यान में आती है। इसमें उत्पाद-व्यय यह पर्यायांश है और ध्रौव्य यानी ध्रुवता, यह द्रव्यांश है। जीवतत्त्व कहते ही शुद्ध-अशुद्ध पर्यायों से भिन्न यानी शुद्ध में इन तीनों को ले सकते हैं हम। कौनसे? कि संवर, निर्जरा, मोक्ष ये क्या हैं? शुद्ध पर्यायें हैं और अशुद्ध पर्यायें यानी मिथ्यात्वादि आस्रव, बंध वगैरह जो हैं, वे। इन पर्यायों से भिन्न त्रिकाली शुद्धस्वरूप अर्थात् उत्पादव्यय को गौण करके, मात्र शुद्धतत्त्व, परमपारिणामिक भाव; ऐसा अर्थ होता है। भाई! बात ख्याल में आयी? आपका प्रश्न था न?

पर्याय को कभी भी द्रव्य से हटा नहीं सकते, भिन्न नहीं कर सकते; फिर भी यह सारा प्रयत्न यानी प्रयोग अपने ज्ञान में ही है, श्रद्धा में ही करना है। यहां कोई अन्य जगह जाकर उसकी कुछ हेरा फेरी करनी नहीं है। हमें ज्ञान करके निर्णय करना है और 'मैं यही हूं' ऐसी श्रद्धा करनी है और इस ज्ञान और श्रद्धान के साथ स्वरूप में लीनता करनी है। वही सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र प्राप्त करने का उपाय है। यही मोक्षमहल की प्रथम सीढ़ी है, यही धर्म की शुरुआत है, यही संवर है। ख्याल में आया? जिसप्रकार, देखो अभी एक बहुत अच्छा उदाहरण दे रहे हैं कि क्या हो गया था? यह दो महिलायें आपस में मिली। तो एक ने दूसरी से पूछा कि आपके गले में जो हार है कितना अच्छा है! बोली, क्या बात करती है? यह तो एक हार है और मेरे पास ऐसे सात हार हैं। अरे! यह कंगन भी तेरे बहुत बढ़िया हैं! ये क्या फालतू हैं, इससे मेरे पास और बारह कंगन अलग-अलग टाइप के अलग-अलग डिझाइन के हैं। ऐसी उसने बहुत-बहुत बातें की। फिर दूसरी ने कहा कि अरे! तेरे पास तो इतना ही है? मेरे पास दस किलो सोना है। क्या कहा? तो पहली ने क्या बताया? सारी अवस्थायें बतायी – मेरे पास इतने कंगन हैं, इतनी अंगूठियां हैं। दस ही उंगलियां हैं, नहीं तो मैं तो बीस उंगलियां होती, तो बीसों में ही एक-एक अंगूठी पहनती। क्या? क्या कहा – तो वह तो एक-एक-एक-एक पर्याय की बात कर रही थी, तो इसने क्या कहा कि मेरे पास तो दस किलो सोना है। तो जब हम उसको भेद करके कहेंगे तो मेरे पास यह है-यह है-यह है ऐसी बात करेंगे; लेकिन हमें उसको टोटल बतानी हो तो क्या कहेंगे? इतना किलो सोना है! ख्याल में आया न?

तो वही बात यहां कह रहे हैं – जिस प्रकार सोने के अनेक गहने, कंगन, हार, अंगूठी, कमरपट्टा आदि विविध अवस्थायें होते हुये भी, जब हम मात्र सोने की दृष्टि से देखते हैं, तब ये अवस्थायें हमारी नज़र में गौण होकर सोना कितना है, इसे हम देखते हैं। अथवा जिस प्रकार अमेरिकन, भारतीय, जॅपनीज, आफ्रिकन आदि विभिन्न वंशीय मनुष्यों में शरीर की रचना, रंग, लंबाई, केश, इनमें अनेक प्रकार के भेद होने पर भी मनुष्यत्व की अपेक्षा से सब समान ही हैं, सब मानव ही हैं, उसी प्रकार पर्यायों की अपेक्षा से जीवों के विभिन्न भेद दिखायी देने पर; तो जीवों की पर्यायों की अपेक्षा विभिन्न भेद कौन-कौनसे हैं? कोई एकेन्द्रिय हैं, कोई द्वीन्द्रिय हैं, कोई पंचेन्द्रिय हैं, कोई नारकी हैं, कोई देव हैं, इसतरह से। पर्याय की अपेक्षा से अनेक भेद, विभिन्न यानी भिन्न-भिन्न, दिखायी देने पर

भी; जीवतत्त्व की अपेक्षा से, ध्रुव द्रव्यांश की अपेक्षा से, सब जीव समान हैं। यानी निगोद का जीव क्यों न हो, मनुष्य का जीव क्यों न हो, सिद्ध का जीव क्यों न हो; सभी ध्रुव अंश की अपेक्षा से, द्रव्यांश की अपेक्षा से समान ही हैं। इसतरह से या इसी वजह से, मम स्वरूप है सिद्ध समान ऐसा कहते हैं।

स्वरूप की बात है, स्वभाव की बात है। स्व-रूप अगर वह रूप बदले तो स्वरूप होगा क्या ? स्व-भाव; स्वभाव तो त्रिकाल कायम रहता है, स्वभाव में कभी हानि-वृद्धि नहीं होती, स्वभाव किसीके कारण से बदलता नहीं है। ख्याल में आयी बात ? तो कह रहे हैं मम स्वरूप है सिद्ध समान ऐसा कहते हैं। अगर कोई व्यक्ति पर्यायांश में स्वयं को सिद्ध समान मानता होगा, तो वह आत्मानुभव क्यों करना ऐसा प्रश्न करेगा ऐसा बोलते हैं। ऐसा नहीं लिखा है, यहां लिखा है उसकी मान्यता मिथ्या होगी। सिद्ध भगवंतों में जैसा द्रव्यांश है वैसा, जैसा परिपूर्ण सामर्थ्य है वैसा पर्याय में पूर्णतः प्रकट हुआ है; जैसा द्रव्यांश है, वैसी ही प्रकट अवस्था है। किनकी ? सिद्ध भगवान की। अब कह रहे हैं वह प्रकट अवस्था जानकर, सिद्धों का द्रव्यांश भी उसतरह है, यह बात ध्यान में आती है और मेरा भी द्रव्यांश, सिद्धों के द्रव्यांश तथा पर्यायांश के समान है, इस बात का ज्ञान होता है। गणित विषय में तुमने पढ़ा था – ए इज ईक्वल टु बी, ॲण्ड बी इज ईक्वल टु सी, देअरफोर ए इज ईक्वल टु सी। अब यह छोड़ देना गणित का पोर्शन अगर आपको भारी होता हो तो। अब कहते हैं, इसलिये जिनेन्द्र भगवान का दर्शन करना अत्यंत महत्व का है। यह तो आत्मानुभूति करनी या नहीं करनी इसमें जिसे तकलीफ है; तो भगवान के दर्शन करना या नहीं करना, यह भी प्रश्न उसके सामने आ सकेगा कि नहीं ? तो कहते हैं – जिनेन्द्र भगवान का दर्शन करना अत्यंत महत्व का है। हमें जिनदर्शन से निजदर्शन करना है। क्या कहते हैं ? हमें जिनदर्शन से निजदर्शन साध्य करना है। जिनेन्द्र के प्रकट पर्यायांश द्वारा उनके द्रव्यांश का ज्ञान होता है क्योंकि जो है, जो प्राप्त है स्वभाव में, उसकी ही प्राप्ति पर्याय में होती है। उनकी पर्याय में शुद्धता देखते ही उनके द्रव्यांश का हमें ज्ञान होता है।

देखो-देखो, एक बुढ़िया एक झोपड़ी में रहती थी। उसको भी एक बच्चा था छोटासा, किसके जैसा ? हां ? सोहम जैसा या आदित्य जैसा। वह जल्दी उठे ही नहीं, आठ-आठ, नौ-नौ बजे तक, तो उसकी मां बोलती थी – देख बेटा ! सूरज तो सर पर आ गया है, ऐसे

मातायें बोलती हैं न? तो सूरज सर पर आया है कैसे देखेंगे? तो झोपड़ी को ऐसा इतना सा झरोखा होता है, हां? उसमें से सूरज की किरणें आती हैं। अभी पूर्व दिशा में यहां से उगा हो, तो उसकी झोपड़ी में किरणें छत से आयेंगी कि नहीं? जब सूरज ऊपर आयेगा, तब उसकी किरणें उसके घर में आयेंगी। तो ऐसी-ऐसी आंखें मिचका करके वह देखता है और किरणों को देखकर, वह सूरज का अंदाजा लगाता है, हां अभी सूरज ऊपर आ गया है। वैसे यहां पर्याय में जो प्रकट अवस्था है, वह भी शुद्ध है; तो प्रकट अवस्था जो दिख रही है, उससे उसके द्रव्यांश का इस जीव को ख्याल आता है। ख्याल में आया? यह जिनेन्द्र भगवान के दर्शन क्यों करना? इसकी बात चल रही है। तो कहते हैं कि जिनेन्द्र के प्रकट पर्यायांश द्वारा उनके द्रव्यांश का ज्ञान होता है, और उनके द्रव्यांश के समान ही मैं स्वयं हूं इसका ज्ञान होकर, दृष्टि चौबीसों घंटा अरिहंत की पूजा करने में लगती है। ऐसा होगा? तो कहते हैं दृष्टि स्व-सन्मुख होती है। हमें जिनेन्द्र भगवान के दर्शन क्यों करने हैं? तो साक्षात् भगवान का स्वरूप हमारे सामने होता है और उनको देखते ही मेरेमें ऐसा स्वरूप पर्याय में कब प्रकटेगा? खाली ऐसी चिंता करने से काम नहीं होनेवाला है। तो जिस मार्ग से वे चले हैं, जिस विधि से उन्होंने यह अवस्था प्राप्त की है; वैसा अगर पुरुषार्थ करके, मैं भी अपने स्वरूप में लीनता करूंगा, तो उनके जैसी मेरी अवस्था होगी, होगी और होगी।

इसलिये पूजन में भी आता है 'भूतकाल प्रभु आपका, वह मेरा वर्तमान; वर्तमान जो आपका, वह भविष्य मम जान'। देखो हम पूजन भी करते हैं, तो उस पूजन में भी ऐसे ही एक-एक बहुत एक्सलंट सिद्धान्त आते हैं, वह सिद्धान्त पढ़ कर भी हमें क्षण मात्र भी क्यों न हो, इसका विचार तो जरूर आना ही चाहिये । यह तो शुरुआत है और ऐसे दिन भर जो भी कार्य होते हैं उसमें हमें इन सिद्धान्तों को लगाते रहना चाहिये, क्योंकि देखो भाई, हम दुकान में बैठे हैं, दुकान पर काम कर रहे हैं; ग्राहक नहीं आया है, तो ग्राहक के इंतजार में तो बैठेंगे? क्योंकि मैं भी पहले धंधा करता था। आधा दिन तो ग्राहक के इंतजार में और किसीने कुछ काम दिया तो उसके एक्झिक्यूशन में आधा दिन; पूरा दिन निकल जाता था, ख्याल में आया? वैसे हम कोई भी काम कर रहे हैं, तो उस समय कुछ सोचते होंगे कि नहीं? समझो हमारी दुकान लगी है और उसमें ग्राहक नहीं आया, तो हम क्या सोचेंगे? अरे! कल रात को हमने वह टीव्ही सीरियल देखी थी न? तो उसमें उसने ऐसा क्यों किया? उसको ऐसा करना चाहिये था। अरे! वह ऐसा नहीं करता, तो यह नहीं होता था।

नाहक हमारे दिमाग में कुछ न कुछ उसके बारे में विचार विनिमय चलते हैं और हम शास्त्र स्वाध्याय करेंगे, हम जिनेन्द्र भगवान की पूजन अर्चन करेंगे तो बार-बार जो हम बोलते हैं, उसकी बात हमें याद आयेगी।

तो वह तो कह रहा है कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ परिणमन नहीं करता है। यह देखो! मैंने कपड़ा फाड़कर दिखाया, देखो, कपड़े के दो टुकड़े करे कि नहीं? तो कहेंगे तेरेमें और हाथ में अत्यंताभाव है; हाथ में और कपड़े में, हाथ में और कैंची में अन्योन्याभाव है, कैंची में और कपड़े में; यह आप नहीं सोच सकते क्या? आप कहेंगे भाईसाहब! हम कपड़े फाड़ते नहीं हैं, कपड़े धोते हैं। अच्छा धो डालो! हम किधर मना कर रहे हैं? उस वक़्त भी ऐसा ही सोचो न? रसोई बना रहे हैं, रोटी बना रहे हैं, तो मेरे जैसा रोटी कोई नहीं बनाता, ऐसा कोई मानता हो तो बीच में इतनी सी जल जाती है, तो पूरे को जला देते या पूरे को अच्छी रखते? वह मेरे हाथ की बात नहीं है। यह जो बातें हैं, यह नहीं सोच सकते? यही भेदविज्ञान है और भेदविज्ञान कौनसी बात है? लेकिन हमें फुरसत कहां? किसकी? जिनेन्द्र भगवान की पूजन करने की, शास्त्र स्वाध्याय की और उसमें लिखा क्या है वह समझने की। क्यों साहब! आप कहां गये थे? अरे साहब! वहां वह लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका, लघु जैन! पागल तो नहीं हुये? दूसरा कोई नहीं मिला? यह सुमनभाई का दोष है कि उन्होंने यह लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका जैसी शिबिर यहां लगायी। ऐसा लोग कहेंगे।

भाई! बात ऐसी है – जो सिद्धान्त हमें सीखने हैं वे हम सीखेंगे और उसका उपयोग हम बारंबार अपने डेली रूटीन लाइफ में करेंगे यानी हम तो देखते हैं, भाई! एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता, नहीं-नहीं-नहीं-नहीं, ऐसी बात नहीं हो सकती। यह देखो! ऐसा कैसा? देखो! मैंने बटन दबाया, फॅन चालू हो गया कि नहीं? तो आचार्य कहते हैं बिलकुल नहीं! क्योंकि जो बटन है उसका और अंदर जो वायर है उसका, कौनसा अभाव है भाई? अन्योन्याभाव है। वह वायर के अंदर जो इलेक्ट्रिकल करंट जा रहा है और यहां पंखे के वहां आ रहा है, तो इलेक्ट्रिसिटि और वायर, इसमें कौनसा अभाव है भाई? अन्योन्याभाव और वह जो इलेक्ट्रिसिटि का कनेक्शन वह फॅन को लगा है और जो फॅन है, उसमें कौनसा अभाव है? *श्रोता: अन्योन्याभाव।* जो जहां जिसका अभाव हो वह उसका कार्य करें, यह कैसे संभव है? यह तो हमें भेदज्ञान करने के एक-एक फकरे दिये हैं,

एक-एक मंत्र दिये हैं, वह मंत्र किस पर इस्तेमाल करना है? अपने स्वयं पर, अपनी मान्यताओं पर, कि आज तक मैं ऐसा मानता था और यह तो बात कुछ अलग ही है। इसतरह हमें सोचना है।

तो यहां क्या बात कह रहे हैं कि जिनेन्द्र के प्रकट पर्यायांश द्वारा उनके द्रव्यांश का ज्ञान होता है और उनके द्रव्यांश के समान ही मैं स्वयं हूं, इसका ज्ञान होकर दृष्टि स्वसन्मुख होती है। इसलिये तो प्रवचनसार ग्रंथ में कहा है, किसने कहा है? कुन्दकुन्द आचार्य ने कहा है कि यह तो अभी इन्होंने हिन्दी में लिखा है और आप तो जानते ही हैं कि जो अरिहंत को द्रव्यपने, गुणपने और पर्यायपने से जानता है उसका मोह यानी मिथ्यात्व नष्ट हो जाता है। पर्यायों से भिन्न द्रव्यांश वह मैं हूं और वही जीवतत्त्व है, यह सूत्र ज्ञान में आते ही सात तत्त्वों में से आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष, इन पर्यायों से मैं जीवतत्त्व यानी ध्रुव द्रव्यांश भिन्न हूं, यह समझना अब कठिन नहीं होगा। कठिन है कि नहीं? हां? यह बात समझ में आयी कि नहीं? हमने पहले ही देखा था – जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व; ये द्रव्यतत्त्व हैं और आस्रव से लेकर आखिर तक यानी मोक्षतत्त्व तक, सारे पर्यायतत्त्व हैं। यानी यह पर्यायतत्त्व, जीवतत्त्व से जुदे हैं; जीवतत्त्व में उनका कोई अंश नहीं है। क्योंकि जीवतत्त्व में तो द्रव्यांश को लिया है, पर्यायांश को गौण कर दिया, है ही नहीं उसमें। तो कह रहे हैं – पर्यायों में आस्रव-बंध के होते हुये भी, उनसे भिन्न में नित्य, त्रिकाली ध्रुव अंश हूं, यह बात समझते अब देर नहीं लगेगी। अपनी ही पर्यायों से अपने द्रव्यांश को हम भिन्न देख रहे हैं, तो परद्रव्यों का सवाल ही कहां उठता है? क्या कहना चाहते हैं? देखो, एक-एक बात में, एक-एक वाक्य में ऐसा दम है कि उसके ऊपर हम आधा-आधा घंटा बात कर सकें; ऐसी बातें हैं।

यहां क्या कहा देखो, अपनी पर्यायों से, कौनसी पर्यायें? आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष, ये जो पर्यायें हैं; उनसे मैं, मेरा जो द्रव्यांश है, वह तो भिन्न है ऐसा अभी हम समझ सकते हैं, जान सकते हैं तो परद्रव्यों से मैं भिन्न हूं, यह बात बताने की आवश्यकता है? ऐसा कह रहे हैं कि मैं जो द्रव्यांश हूं, जीवतत्त्व हूं; वह मैं उनसे यानी आस्रवतत्त्व से यानी राग-द्वेष के जो परिणाम हैं उनसे, संवर से – संवर से यानी शुद्धि की उत्पत्ति हुयी। कितनी? एक समय की। मैं तो त्रिकाली हूं और वह तो एक पर्यायमात्र है, एक समयमात्र

है उससे भिन्न हूं। निर्जरा भी एक समयमात्र है, मोक्ष भी एक समयमात्र है – पर्याय की अपेक्षा से। तो उनसे मैं भिन्न हूं; तो जिस चटाई पर तुम बैठे हो, उससे भिन्न हो कि नहीं? हां? जो कपड़ा तुम पहने हो, उससे भिन्न हो कि नहीं? यह शरीर है, उससे तुम भिन्न हो कि नहीं? और तुम्हारी जो मिल्कियत है, इस्टेट है, कुन्दकुन्द भवन है; उससे तुम भिन्न हो कि नहीं? अरेरे ! पैसे से भिन्नता मत कराओ भाई, बाकी जो चाहे तुम जो भी बोलो हम मानते हैं, मानेंगे-मानेंगे, पैसे से भिन्नता की बात करो मत। हां, जो अत्यंत भिन्न पर पदार्थ है, उससे भी हमें जुदाई पसंद नहीं है; तो यह राग-द्वेषरूप जो परिणाम हैं, जो अपना ही स्वयं का पर्यायांश है, उससे भिन्न कहेंगे तो हां बिलकुल, हां साहब! उसमें क्या? आप कहो और हम नहीं मानें? क्योंकि आप तो सर्वज्ञ की बात बता रहे हैं और धन से भिन्न हैं? हें हें हें हें... थोड़े दिन तो रहने दो, बाद में देखेंगे।

यहां तो कह रहे हैं – क्या कह रहे हैं? परद्रव्यों का तो सवाल ही कहां उठता है? परद्रव्यों से संबंध रहेगा ही कैसे? यह बोल रहे हैं कि समझदार को इशारा काफी है, ऐसा कहना चाहते हैं। इसलिये अजीवतत्त्व तो परद्रव्य है उनसे जीवतत्त्व भिन्न है; यह बात समझना अब आसान हो गया। द्रव्यांश को यानी जीवतत्त्व को देखने के लिये पर्यायों को निकाल बाहर नहीं करना है, उनका नामोनिशान भी नहीं मिटाना है; वैसा करना भी तो संभव नहीं है। क्योंकि अगर हम बहुत ताकत लगायें और पर्यायांश को उड़ा दें, तो द्रव्य का भी नाश होगा। क्योंकि द्रव्य तो हम उसे कहते हैं कि जो गुण और पर्यायों से सहित है, अमूर्तिक प्रदेशों का पुंज, प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों का धारी, अनादिनिधन वस्तु। तो अनादिनिधन को ही हमने उड़ा दिया, तो निधन अपना ही होगा भाई। ख्याल में आया? तो कहते हैं वह संभव ही नहीं है। मात्र अपनी नज़र पर्यायों पर से हटा कर कायम रहनेवाले ध्रुव अंश पर स्थिर करनी है, उसका ही आश्रय लेना है, उसीमें मैंपना स्थापित करना है और वह स्थापित होते ही उपयोग अपने आप उस स्व तरफ मुड़ जायेगा।

देखो साहब! अभी किसी भाई ने पूछा था, सम्यग्दर्शन कैसे करना? तो यह साधारण पुस्तक है, साधारण यानी कोई आचार्यों ने लिखी हुयी नहीं है यह पुस्तक, इसमें इतनी बातें हैं। ख्याल में आया? अभी बोलना आवश्यक नहीं है, बाकी तो आप जानकार हो ही। तो यहां कहते हैं कि अपनी नज़र पर्यायों पर से हटाकर कायम रहनेवाले ध्रुव अंश पर स्थिर करनी है। भाई! आपने बताया न पांच साल बाकी हैं? हमने कहा पांच मिनट का काम है

यह। बताया था न? यह है देखो – उसका आश्रय लेना। किसका? जो कायम रहनेवाला ऐसा जो मेरा द्रव्यांश है; उसका आश्रय लेना, उसीमें मैंपना स्थापित करना और अपना उपयोग अपने आप ही उस ओर मुड़ जायेगा। यही एकमेव मार्ग है। कौनसा? हां, अपनेमें अपनत्व स्थापित करना, अपनेमें मैंपना स्थापित करना; यह एकमेव मार्ग है। देखो! यहां और एक बहुत अच्छी बात बताते हैं – यह जो हम रहते हैं, वह सायन एरिया है बम्बई का। सायन में हमारे घर के सामने मेन रोड होने से एक साथ दस-दस लेन में यानी यह एक-एक लेन है समझो, एक, दो, तीन ऐसा गिनते जाओ, तो ऐसे दस-दस लेन चलती हैं सायन में, उस समय वह फ्लायओव्हर नहीं था हो। हां, तो कह रहे हैं सायन में हमारे घर के सामने मेन रोड होने से एक साथ दस-दस लेन में कारें और ट्रक्स चलते हैं और फिर ट्राफिक की आवाज निरंतर कानों पर आती है फिर भी अपनी कार का हॉर्न तुम कैसी झट पहचानती हो? ऐसा अपनी बेटियों को खत लिखा है न? उसमें ऐसा पूछा है। क्योंकि उसमें अपनेपने का भाव है। वैसा अपनापना जैसे यह कार हमारी है, क्योंकि हॉर्न के द्वारा हम कार को पहचानते हैं। जैसे हॉर्न के द्वारा कार को पहचानते हैं वैसे पर्याय के द्वारा ध्रुव अंश, द्रव्यांश को पहचानेंगे। उसमें जैसा अपनत्व है, ममत्व है; वैसा अपनत्व, ऐसा ममत्व, ऐसी एकत्वबुद्धि अपने स्वभाव में करने से, आत्मा का अनुभव हुये बिना रहेगा नहीं।

जीवतत्त्व यह दृष्टि का विषय है। देखो अभी दृष्टि का विषय यानी क्या है। निशांत, मेरा मन डायव्हर्ट हो गया। मैं कथा सुनाता हूं, मुझे क्या है? हां? हम अमेरिका गये थे प्रवचनार्थ; चार साल से जाते रहे। वॉशिंग्टन नाम का एक सेंटर है, वहां हर दो मिनट में किसीका बच्चा रोता था, तो उधर के उन लोगों ने ऐसा नक्की किया कि जिसका बच्चा रोयेगा यानी मोबाइल आवाज करेगा, उसको केवल पचास डॉलर फाइन। *श्रोता: सेंटर को देना* और वे पचास डॉलर किसको देना? सेंटर को; यानी उनके जो कोई मंदिर है उनको ही देना। तो पहले दो दिन में तो बहुत सारा पैसा इकट्ठा हुआ, लेकिन उसके बाद आठ दिन एक भी पैसा नहीं मिला। वैसा मैं सुमनभाई को रिक्वेस्ट करता हूं, कि ऐसी कोई आप, क्या बोलते हैं, विधि चालू रखो – एक घंटी बजी तो पांच सौ रुपया, फिर देखो मोबाइल घर में रहते हैं कि इधर आते हैं और नहीं कोई पांच सौ देते हैं, तो उधर जाकर बर्तन साफ करवाओ उनसे। क्या है यह? कितनी आकुलता? और हम यहां निराकुल होने की बात सोचते हैं? चलो! क्या कह रहे हैं? जीवतत्त्व यह दृष्टि का विषय है।

दृष्टि का विषय यानी क्या? श्रद्धा! उसको दृष्टि कहेंगे। यानी मैं, मेरी श्रद्धा। मैं कैसा हूं? मैं तो त्रिकाली हूं, मैं तो परमपारिणामिक भावमय हूं, मैं एक हूं, मैं शुद्ध हूं – यह ऐसी श्रद्धा करना, यह दृष्टि का विषय है। तो यहां ऐसा उदाहरण देते हैं जिसको मैं अपनी भाषा में पहले समझाऊंगा। यह आज की बात नहीं है, यह कथा बहुत पुरानी है; लेकिन सत्य कथा है। जब कौरव-पांडव अपने गुरु से धनुर्विद्या सीखते थे, धनुर्विद्या समझते हैं? आर्चरी। तो उनके गुरु कौन थे? *श्रोता: द्रोणाचार्य।* द्रोणाचार्य! कौरव तो सौ थे और पांडव तो पांच थे। तो कौरव सब ऐसा समझते थे कि ये द्रोणाचार्य पार्शेलिटि करते हैं। वे पांडवों को ही विशेष महत्व देते हैं। तो एक दिन द्रोणाचार्य ने कहा चलो भाई! हम आपकी परीक्षा लेते हैं। तो उन्होंने कौरवों में से एक को बुलाया – आओ दु:शासन देखो, यह सामने झाड़ है न, आम का झाड़, उसके ऊपर हमने एक मूर्ति, किसकी? एक पक्षी की वह रखी है, हां? उसको तुम्हें निशाना करना है। किससे? धनुषबाण से। पहले बताया सबको, फिर बोला – इधर आओ दु:शासन, खड़े रहो। आपको सामने क्या दिखता है? तो उसने कहा मुझे पूरा पेड़ दिखता है, उसमें आम लगे हुये दिखते हैं, उसमें एक झाड़ के ऊपर एक पक्षी रखा है, वह भी दिखता है। चलो हट जाओ! चलो दूसरा आ जाओ! एक-एक को बुलाया। तो फिर एक तो बहुत होशियार था मेरे जैसा। उसने बोला – मुझे तो वह सारा दिखता ही है, लेकिन गुरु महाराज आप भी मुझे दिखते हो। भाग जा यहां से! फिर अर्जुन को बुलाया। बोले तुझे क्या दिखता है? तो उसने कहा – मुझे तो सिर्फ वह पक्षी जो है, उसकी आंख दिखती है। गुजराती में उसको कीकी बोलते हैं न? क्या बोलते हैं बहन? हां, यह आंख। लगाओ! तो उसने बाण छोड़ दिया और बराबर तीर जाकर उधर जहां मर्मस्थान था, वहां छेद दिया। तो यह कथा क्यों कही है? तो अभी बतायेंगे।

हां देखो, निशानेबाजी करते समय, दृष्टि केवल निशाने पर ही स्थिर यानी केन्द्रित की जाती है। उस समय अन्य सब चीजों का सद्भाव है, मगर वे नज़र में नहीं आती; क्योंकि नजर मात्र एक ही बिंदु पर केन्द्रित की जाती है। उसी प्रकार पर्यायों में अनित्यता, अनेकता, अपूर्णता, मलिनता होने पर भी, यह कहां की बात है? पर्यायों में अनित्यता है, अनेकता है, अपूर्णता है और मलिनता है। ऐसा होने पर भी, उन सबको गौण करके मात्र ध्रुव-नित्य अंश पर दृष्टि को स्थिर करने से ही, यही मैं हूं ऐसा स्वपना स्थापित होने पर, जीवतत्त्व यानी स्वतत्त्व, भिन्न अनुभव में आ सकता है। यह नया पेज है हो, पहला पेज तो

अलग था। इसमें भी आत्मानुभव कैसे करना इसकी बात आयी है। देखो, तो आप ऐसा सवाल कर सकते हैं – इतना ही करना था, तो अजीवतत्त्व को जाने ही क्यों? हमें तो जीवतत्त्व को; हमें तो केवलज्ञान से भिन्न आत्मा बताओ भाई, तुम बाकी काहे को यह सारी बातें बता रहे हो? ऐसा, उस ज़माने में भी ऐसा बोलनेवाले थे, तो अभी भी हैं न? तो यहां कह रहे हैं – अजीवतत्त्व को जाने ही क्यों? क्योंकि हमें अजीवतत्त्व में अहंबुद्धि, मैंपना, एकत्व हो सकता है; परजीव और अन्य परद्रव्य सभी अजीवतत्त्व हैं, क्योंकि श्रद्धा में उन्हें स्थान नहीं है। यानी मेरापना उसमें स्थापित नहीं करना है, मेरापन का स्थान ही नहीं है। उसके लिये सभी अजीव द्रव्यों को एवं अन्य जीवों को जानते रहने की जरूरत नहीं है। अपितु यह सब अजीवतत्त्व हैं ऐसा जानकर, अजीवतत्त्व मैं नहीं हूं ऐसा ज्ञान करना। उनको क्यों जानना? कि उनरूप मैं नहीं हूं, इसलिये उनको जानना।

मुख्यरूप से शरीर से भिन्न जानना, क्योंकि क्या हमारी एकत्वबुद्धि आयफेल टॉवर से है? वह फ्ऱांस में है या पॅरिस में, किधर है तुझे मालूम नहीं फ्ऱांस में है कि पॅरिस में है? पॅरिस कहां है? *श्रोता: फ्ऱांस में।* तो कह रहे हैं – हमारी एकत्वबुद्धि आयफेल टॉवर अथवा हिमालयपर्वत से नहीं होती, विश्व के अन्य अनंत पदार्थों से नहीं होती; परंतु प्राप्त शरीर से और संयोगों से होती है। हम केवल शरीर के साथ एकत्व करके रुकते नहीं हैं, तो क्रोधादि कषायों से भी एकत्व, ममत्व स्थापित करते हैं। मैं बहुत दयावान हूं, फलाना व्यक्ति क्रोधी है, फलाना व्यक्ति मायाचारी है; इसतरह राग परिणामों के साथ यानी आस्रव के साथ हम एकत्व स्थापित करके, उसे अपना स्वभाव मानते हैं। इसलिये सात तत्त्वों में इन पर्यायतत्त्वों को भी भिन्न बताया है। अजीवतत्त्व में तो संयोग वगैरह आ गये और राग-द्वेष या शुद्धभाव जो हैं, आस्रव और संवर, निर्जरा आदि वे तो पर्यायतत्त्वों में आ गये। इन सात तत्त्वों का स्वरूप देखकर, आज तक उन तत्त्वों के बारे में क्या-क्या भ्रांत कल्पनायें, विपरीत मान्यता करते आये हैं। कौन? हम! इस बात को हम आगामी, अभी आगामी नहीं, इसी क्लास में देखेंगे और इन तत्त्वों में हेय, ज्ञेय, उपादेय तत्त्व कौनसे हैं, इस बात को भी समझेंगे।

तो यहां कहते हैं और एक नयी बात है, इन सात तत्त्वों में पुण्य और पाप ये पदार्थ भी समाविष्ट हैं। क्या कहना चाहते हैं? कई-कई जगह सात तत्त्वों में पुण्यतत्त्व और

पापतत्त्व इनको अलग एस्टॅब्लिश करके नौ पदार्थ कहे जाते हैं। तो उन नौ पदार्थों में और सात तत्त्वों में कोई अंतर नहीं है, लेकिन कथन में अंतर है। क्योंकि जब हम कहते हैं कि पापास्रव या पुण्यास्रव, पुण्यबंध या पापबंध; इसतरह से यह पुण्य और पाप, आस्रव और बंध में शामिल हैं। तो जब हम उनको शामिल करके कथन करते हैं, तब वे सात तत्त्व से पहचाने जाते हैं और जब हम उनको भिन्न तत्त्व से समझाते हैं, तब उनको तत्त्व की जगह उनको नौ पदार्थ कहने की पद्धति है। दोनों में कुछ अंतर नहीं है, सिर्फ कथन में अंतर है। क्या कहते हैं देखो! इन सात तत्त्वों में ही पुण्य और पाप, ये पदार्थ समाविष्ट हैं। आस्रव में पुण्यास्रव और पापास्रव, व बंध में पुण्यबंध और पापबंध, इनका अंतर्भाव होता है। जिनागम में कहीं पुण्य और पाप को अलग बताकर सात तत्त्वों की जगह नौ पदार्थ, ऐसा भी कथन आता है। सात तत्त्व कहो अथवा नौ पदार्थ कहो, दोनों का स्वरूप एक ही है; समझाने के लिये भिन्न-भिन्न कथन हैं। शेष वर्णन अब हम आगे देखेंगे। अभी यहां क्या कह रहे हैं, देखो! हमने सात तत्त्व संबंधी मामूली पहचान कर ली है। जिनेन्द्र भगवान के बताये हुये ये तत्त्व जानकर, उनका यथायोग्य श्रद्धान करके, पश्चात् स्वतत्त्व की पहचान एवं अनुभूति हुये बिना सम्यग्दर्शन नहीं होगा और उसके बिना सच्चे सुख की शुरुआत भी नहीं होगी।

देखो! एक बात इसके साथ हम देखते हैं कि जिस जीव को आत्मानुभूति होती है, उस समय उसको अतीन्द्रिय आनंद का वेदन होता है। अपूर्व ऐसे आनंद का अनुभवन होते ही उस जीव को बिलकुल ख्याल में आता है कि मुझे सम्यग्दर्शन हो गया है। कहीं-कहीं लोग कहते हैं यह सम्यग्दर्शन जो होता है, वह हमको नहीं समझता है; वह तो केवली भगवान ही जानते हैं। अच्छा? तो आपके पेट में दुखता है, तो आप जानते हो या डॉक्टर जानता है? दवा तो डॉक्टर के पास जाकर करते हैं न? वह भी डॉक्टर इतना होशियार होता है – इतना बड़ा पेट है, उसमें एक कॉर्नर में ऐसा टप-टप, टप-टप मारेगा, इधर दुखता है? नहीं। टप-टप इधर नहीं दुखता है, इधर दुखता है। तो दस जगह इधर उधर ठोकेगा, फिर कहीं दुखेगा तो तुम बोलोगे – हां यहीं दुखता है। वह भी नहीं जानता। आपको भूख लगी हो, तो आप जानते हैं कि आपकी मम्मी जानती है? अरे! मम्मी ही जानती है, क्योंकि तुम चिल्लाना चालू करते हो तो समझ लेती है कि ये भूखे हो गये हैं, क्यों? ऐसे अनुभव करें हम, वेदन करें हम, और जानें...? *श्रोता: केवली।* ऐसा हो सकेगा क्या? तो कौन-कौन जानता है, यह मैं आपसे पूछूंगा। कौन-कौन जानता है? कौन

बतायेगा? आपके पेट में दुख रहा है मान लो, हां? ॲपेन्डिसायटिस होने को आया है, होगा नहीं हो! डरना मत। मेरे बोलने से कुछ नहीं होता है, हां? कि कौवे के श्राप से गाय नहीं मरती। हां, तो बोलो! तो आप और-और कौन जानेगा? हां? *श्रोता: खुद जानेंगे।* और कौन-कौन जानेगा यही मैं पूछ रहा हूं। अनंत केवली भगवान जानेंगे, लेकिन हम नहीं जानेंगे यह बात कहां है? हमें भूख लगी, तो हम भी जानते हैं और केवली भगवान भी जानते हैं। लेकिन सिर्फ केवली जानते हैं हम स्वयं नहीं जानेंगे, यह बात कतई सत्य नहीं हो सकती। कई भोले जीवों की ऐसी मान्यता है हो!

सवाईभाई! बात तो ऐसी है, क्या करें? हां? तो यहां कह रहे हैं, *श्रोता: वेदन का ख्याल आयेगा।* किसे? *श्रोता: केवली भगवान को, अपने वेदन का उनको ख्याल आयेगा।* देखो-देखो! केवली भगवान क्या नहीं जानते? हां? सब जानेंगे कि नहीं? आपको कब मोक्ष होगा वे आदिनाथ भगवान जानते हैं कि नहीं? हां और महावीर भगवान जानेंगे कि नहीं? कौन पहले जानेगा? अरे! दोनों ही आज की तारीख़ में ईक्वल जानते हैं; क्योंकि भगवान महावीर भले ही देरी से केवली हुये हैं, लेकिन भूतकाल की सारी बातें और भविष्यकाल की सारे बातें, दोनों ही जानेंगे कि नहीं? अब दोनों के कंपॅरिझन में आदिनाथ भगवान पहले से जानते थे, वह बात सही है। चलो! अब हम आगे बढ़ते हैं।

अब यहां कह रहे हैं कि स्वतत्त्व की पहचान एवं अनुभूति हुये बिना सम्यग्दर्शन नहीं होगा और उसके बिना सच्चे सुख की शुरुआत नहीं होगी। यानी जिसे आत्मानुभूति होती है यानी सम्यग्दर्शन होता है, उसे अतीन्द्रिय सुख होता ही है। अभी ऐसा ज्ञान हुआ, ऐसी श्रद्धा हुयी, ऐसा मैं अंतरंग में स्थिर हुआ; ऐसी कोई अलग-अलग गुणों की पर्यायें उनके ज्ञान में नहीं आयेंगी। किसके? जो सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है उस जीव के। लेकिन अतीन्द्रिय आनंद का वेदन होगा और यह ऐसा अनुभव, ऐसा आनंद का अनुभव मैंने पूर्व में कभी नहीं किया है, ऐसे उसके ज्ञान में बात जरूर आयेगी और उसे पता लगेगा कि मुझे आत्मानुभूति हुयी है। यह ऐसा क्यों कह रहा हूं मैं? हां? तो हमें बम्बई में सारे हिन्दुस्तान से तो छोड़ो, अन्य विदेश से भी फोन आते हैं। किसलिये? तत्त्व की बात पूछने के लिये। तो एक महिला का फोन आया कि भाईसाहब! कि मुझे लगता है, जब मैं कल रात में सोयी थी, तब मुझे सम्यग्दर्शन हुआ। अरे, यह बहन तो माथा पकड़कर बैठ गयी, हंस रही हैं जोर-

जोर से। आपने तो फोन नहीं किया था न बहन? प्रभु! पहले यह तो नक्की करो, सम्यग्दर्शन होता है, वह तो जागृत अवस्था में ही होता है। यह पहली कंडिशन है। वह तो मालूम नहीं और मुझे लगता है तो आप हमें बताओ साहब, हमको हो गया कि नहीं? हम क्या बतायें बताओ? हां तो भाई! यह जिसको होता है उसको अनुभूति हुये बिना रहेगी नहीं और वह दूसरे से पूछे कि हमें हो गया कि नहीं, मुझे ऐसा ही लगता है। अरे! सम्यग्दृष्टि का तो पहले नि:शंक अंग है; नि:शंकित हो गया है, उसको शंका किस बात की? कि मुझे सम्यग्दर्शन हुआ है कि नहीं हुआ है? तुझे अभी स्वाध्याय करके समझने की आवश्यकता है।

हां? वह हमने सुना न? कि निहालचंदजी सोगानी को एक रात में ही, वहां अपने कोठी में बैठे-बैठे उन्हें सम्यग्दर्शन हो गया। अरे! परंतु वह जागृत अवस्था में थे, सोये नहीं थे। तो हमने भी बात की, मुझे ऐसा लगा कि मुझे सम्यग्दर्शन हुआ। वाह रे वाह! हां? तो यहां तो कह रहे हैं – अतीन्द्रिय आनंद का जो वेदन है अपूर्व आनंद, ऐसा आनंद पूर्व में कभी उस जीव ने अनुभव नहीं किया है। तो कहते हैं तब सच्चे सुख की शुरुआत होती है। अब कहते हैं – सच्चे देव, गुरु, शास्त्र के अलावा अन्यत्र कहीं भी यह सत्य उपदेश प्राप्त नहीं हो सकता। कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्रों के द्वारा जीव मिथ्या उपदेश ग्रहण करता है और गृहीत मिथ्यात्वी बनता है। यह बात हमने अभी पहले देखी थी, हां? जब श्रद्धा गुण की पर्यायें देखी थी हमने, जो मिथ्यात्व के पांच भेद देखे थे। इसमें पहले गृहीत-अगृहीत देखा था, इसमें यह सारी हमने बातें देख ली हैं। तो कहते हैं इन कुदेव आदि को और मिथ्या उपदेश को छोड़कर, यानी गृहीत मिथ्यात्व छोड़कर, जब इस जीव को सत्य उपदेश प्राप्त होगा यानी देशना प्राप्त होगी। तभी इस जीव का अतत्त्वश्रद्धान अर्थात् मोह यानी कि मिथ्यात्व, नष्ट हो सकता है। सात तत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता ही मिथ्यात्व है। क्या?

अब कहते हैं सात तत्त्वों की भूल; सात तत्त्वों की भूल नहीं, सात तत्त्व संबंधी जीव की भूल उसकी बात अभी हम देखेंगे। तो यह भूल कौन करता है? तत्त्व करते होंगे कि नहीं भाई? हांजी? बोलो बेटा! तुमको सुनायी दिया? तुमको नहीं सुनायी दिया तो मुझे क्या सुनायी देगा। बोलो जोर से। *श्रोता: तत्त्व भूल नहीं करते।* तत्त्व भूल नहीं करते तो भूल कौन करता है? यह मिथ्यात्वी जीव तत्त्व संबंधी भूल करता है। क्या कह रहे हैं?

देखो – सात तत्त्वों की भूल अर्थात् सात तत्त्व संबंधी जीव की भूल, ऐसा अर्थ है। क्योंकि तत्त्व तो जैसे हैं वैसे कायम रहते हैं, परंतु जीव उनके संबंधी मान्यता में भूल करता है। सात तत्त्व यह वस्तुस्थिति है यानी वस्तु का स्वरूप सात तत्त्व जैसा ही है। इस वस्तुस्थिति को छोड़कर अन्य सभी मान्यतायें कल्पनाजन्य भ्रांतियां हैं। यानी जैसा वस्तु का स्वरूप है, देखो-देखो, पंडित टोडरमलजी की बात देखते हैं। तो उन्होंने मोक्षमार्गप्रकाशक में चौथे, अधिकार में यह बात बतायी है, **'जैसा वस्तु का स्वरूप है वैसा यह जीव नहीं मानता और जैसा वस्तु का स्वरूप नहीं है, वैसा मानता है; वह मिथ्यात्व है'।** और यहां क्या कह रहे हैं? यहां बताते हैं कि इस वस्तुस्थिति को यानी सात तत्त्व जो वस्तुस्थितिस्वरूप है, इस वस्तुस्थिति को छोड़कर अन्य सभी मान्यतायें कल्पनाजन्य भ्रांतियां हैं। यानी यह विविध जीवों की अपनी-अपनी कल्पनाओं से बनी हुयी भ्रांतियां हैं। अज्ञानी की मान्यता के अनुसार विश्व में द्रव्यों का परिणमन नहीं होता, इसलिये वह दु:खी है। क्या कहते हैं?

यह जीव क्यों दु:खी है? तो यह कहते हैं, उसकी मान्यता के अनुसार जगत का परिणमन नहीं होता है। यानी इस जीव को सुखी होने के केवल दो ही उपाय हैं, जानना है आपको? हां, क्या आपको सुखी होना है? तो उपाय बता देते हैं। दो उपाय में से एक उपाय ऐसा है कि अपनी इच्छा के अनुसार जगत के सारे पदार्थों का परिणमन होना चाहिये तो वह जीव सुखी होगा; नहीं तो जैसा वस्तु का स्वरूप है वैसी उसकी मान्यता हो जाये, तो वह सुखी होगा। अब इसमें से जो आसान है वह कर लेना साहब, अगर आपको सुखी होना हो तो। हां, इसलिये यहां क्या कह रहे हैं? देखो! अज्ञानी की मान्यता के अनुसार विश्व में द्रव्यों का परिणमन नहीं होता है, इसलिये वह दु:खी है और इस दु:ख को मिटाने के लिये कल्पनाजन्य भ्रांतियां दूर करना, यही एकमेव उपाय है। यानी मिथ्यात्व का नाश करना, कल्पनाजन्य भ्रांतियां यानी क्या? अपनी-अपनी इच्छा के अनुसार, कल्पना के अनुसार, वस्तु के स्वरूप को मानना; इन कल्पनाजन्य भ्रांतियों को दूर करना, यही एकमेव उपाय है और यह एकमेव उपाय हम अंगीकार करें रात भर और कल सुबह आठ बजे दुबारा मिलें।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

५५. सात तत्त्वों संबंधी विपरीत मान्यता – १

गये दो तीन लेक्चर्स में हमने सात तत्त्वों के बारे में कुछ जानकारी हासिल करने की कोशिश की और सात तत्त्वों का स्वरूप भी देखा और अभी इन सात तत्त्वों के बारे में, यह जीव जो अनादिकाल से मिथ्या मान्यता करते आ रहा है यानी विपरीत मान्यता करता आ रहा है, उस संबंधी हम थोड़ा बहुत देखने की कोशिश करेंगे। देखो, कल हमने देखा था कि सात तत्त्वों की भूल अर्थात् सात तत्त्वों संबंधी जीव की जो भूल है, उसको हमें देखना है। सात तत्त्वों में भूल नहीं है, उन तत्त्वों संबंधी जीव जो भूल करता है, यह बात हम देख रहे थे। तो इसतरह कहते हैं कि सात तत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता का अर्थ होता है, तत्त्व जैसे हैं, वैसा न मानकर अन्यथा मानना।

प्रत्येक जीव अनादि से ही ऐसी मिथ्या मान्यता करते आया है। देखो, यहां क्या कहते हैं? यह हम जैनतत्त्व परिचय पुस्तक में से पढ़ रहे हैं। जो सिद्ध हैं, हां-हां, आज के तारीख में जो सिद्ध हैं, वे पहले संसारी थे और जब वे संसारी थे तब पहले वे मिथ्यात्वी थे। कोई भी जीव अनादि से सम्यग्दृष्टि हो ही नहीं सकता। अनादिकाल पहले भी जो सिद्ध थे, वे भी पहले संसारी थे, वे भी पहले मिथ्यात्वी थे, विपरीत मान्यता के धारक थे। ऐसे अनंत सिद्ध भी पहले विपरीत मान्यता सहित थे और आज सिद्ध हुये हैं। इसका अर्थ ही यह है कि भले मैं आज विपरीत मान्यता रख रहा हूं, लेकिन मैं इन विपरीत मान्यताओं को टालकर अपने स्वरूप में एकाग्र होकर, मैं भी सिद्ध बन सकता हूं। देखो, एक-एक बात जो है, उस बात को हम गौर करके समझेंगे तो हमें बिलकुल बल मिलेगा। हमने अभावों का जो कोई स्वरूप देखा है वहां जब हम प्रागभाव को देखते हैं तो जो वर्तमान पर्याय है, उस वर्तमान पर्याय का भूतकालीन पर्याय में अभाव है। तो आज तक मैंने धर्म नहीं किया है, तो अभी वर्तमान में, मैं कर सकता हूं। अगर वर्तमान में भी मैंने धर्म नहीं किया है, फिर भी नाराज या निराश होने की गरज-आवश्यकता नहीं है। कहते हैं भविष्यकालीन जो पर्याय है, उसमें वर्तमान पर्याय का अभाव है। अभी तेरी मिथ्यात्वी अवस्था है, तो आगे भविष्य में तू सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है।

देखो, लोगों का ऐसा कहना है कि शास्त्र पढ़कर क्या फायदा है? अरे! तुझे बार-

बार ऐसी प्रेरणा मिलती है कि वस्तु का जो स्वरूप है, वह हमारे लिये इतना फेवरेबल – अनुकूल है कि हम उसका फायदा उठायें तो अवश्य अपना फायदा हुये बिना रहेगा नहीं। मराठी में एक कहावत है, हिंदी में मैं समझाऊंगा, लेकिन मराठी बोलने में मज़ा आता है। तूप खाल्ले की रूप दिसायला पाहिजे। नहीं समझे, घी खाये तो तुरंत ही वह रूपवान होना चाहिये अथवा बलवान, ताकतवर जो कुछ होगा। ऐसा नहीं होता है। उसको भी टाइम लगता है। वैसे हम इन तत्त्वों को समझें और समझते-समझते मान जायें और समझकर – मानकर स्वरूप में एकाग्र हो जायें, तो उसका फल हमें मिले बिना रहेगा नहीं। वैसे देखा जाये तो जैनदर्शन रोकड़िया धर्म है, उधार का नहीं। जिस समय आप जिसतरह के भाव करोगे, उन भावों का फल मिले बिना रहेगा नहीं। तो यहां कह रहे हैं कि प्रत्येक जीव अनादि से ही ऐसी मिथ्या मान्यता करता आया है। इसलिये सात तत्त्वों से वह भले ही परिचित न हो, मगर तत् संबंधी विपरीत मान्यताओं से चिरपरिचित है। कह रहे हैं इन सात तत्त्वों के किसीको नाम भी मालूम नहीं होंगे। अभी हमारी तुम्हारी बात छोड़ दो, जो जैन नहीं हैं, अजैन हैं, उनको इन सात तत्त्वों के नाम तो मालूम होंगे कि नहीं? नहीं। वे जानते तक नहीं, फिर भी सात तत्त्वों संबंधी जो विपरीत मान्यता है, उससे वे निश्चितरूप से परिचित हैं। चिरपरिचित यानी बहुत काल से परिचित हैं। देखो, विपरीत मान्यता करने के लिये जैन होना आवश्यक नहीं है। आपकी भाषा में समझना हो, तो अेनी टॉम डिक अँड हॅरी कॅन बी मिथ्यात्वी, उसको सात तत्त्वों के जानकारी की आवश्यकता नहीं है। लेकिन हम ऐसे भाग्यशाली हैं कि कम से कम हमें सात तत्त्वों की पहचान हो गयी है। हां।

हम स्वाध्याय कर रहे हैं। अभी बस केवल इतना ही है कि उन सात तत्त्वों संबंधी हमारी जो विपरीत मान्यता है, उसको हम किसतरह से टालें, यह बात यहां चलेगी। तो कह रहे हैं, सात तत्त्वों से, वह कौन? प्रत्येक जीव, भले ही परिचित न हो, मगर तत् संबंधी यानी उन सात तत्त्वों संबंधी विपरीत मान्यता, उससे तो चिरपरिचित है। शायद इसलिये पंडित दौलतरामजी ने छहढाला में और पंडित टोडरमलजी ने मोक्षमार्गप्रकाशक में इन विपरीत मान्यताओं का वर्णन पहले किया है और उसके पश्चात् उन तत्त्वों का स्वरूप बताया है। ठीक तो है। देखो, आपको मालूम ही होगा, क्योंकि आप सभी स्वाध्यायी हैं। मोक्षमार्ग प्रकाशक में तो यह मिथ्यात्व की बात यानी विपरीत मान्यताओं की बात दो बार ली है – एक चौथे अधिकार में और एक सातवें अधिकार में। चौथे अधिकार में सामान्यरूप

से सब जीवों की चर्चा की है और सातवें अधिकार में क्या कह रहे हैं, जो जीव जैन हैं, जिन आज्ञा को मानते हैं, फिर भी अभी जिनका मिथ्यात्व बाकी है, उसको निकाल बाहर करना आवश्यक है क्योंकि मिथ्यात्व का अंश भी बुरा है, ख्याल में आया? तो यहां कह रहे हैं, इन दोनों तत्त्वों संबंधी विपरीत मान्यता; अभी हम देखेंगे कौनसे दो तत्त्वों की – जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व; इन दोनों तत्त्वों संबंधी विपरीत मान्यता एक साथ बतायेंगे। एक साथ बताने का हेतु यह है कि मिथ्यादृष्टि जीव क्या-क्या करता है? तो कह रहे हैं मिथ्यादृष्टि जीव दोनों को, दोनों को यानी किसको-किसको? जीव और अजीव को एक मानता है। किसको-किसको एक मानता है? जीव और अजीव को एक मानता है अथवा अजीव को जीव मानता है, यह नंबर दो की भूल है।

अब इन भूलों में अपनी कोई भूल हो तो देख लेना, बताना मत किसीको, लेकिन उसको सुधारने की कोशिश अवश्य करना। कह रहे हैं दोनों को एक मानता है या अजीव को जीव मानता है अथवा जीव को अजीव मानता है। तो इसमें क्या फर्क हुआ? जीव को अजीव मानना और अजीव को जीव मानना इसमें फर्क कुछ नहीं है? क्या दोनों एक ही है? नहीं, बिलकुल फर्क है, उसको हम देखेंगे। अभी क्या कह रहे हैं? अर्थात् पहले क्या बताया था – दोनों को एक मानते हैं। तो शरीर और आत्मा इन दोनों को मिलाकर जीव मानता है। कौन? *श्रोता: मिथ्यादृष्टि।* हां जी, क्या बोला? ऐसा कौन मानता है? *श्रोता: मिथ्यादृष्टि।* आप क्या कह रहे? *श्रोता: मिथ्यादृष्टि।* मिथ्यादृष्टि जीव और मैं नहीं मानता हूं? हां, अरे! भाई यह मेरे लिये ॲप्लिकेबल है, ख्याल में आया? तो मैं ऐसा मानता हूं, बोलने में हमको जरासा दु:ख लगता है और मानने में कोई दु:ख नहीं होता है। क्यों? घबराना मत हो, मैं तो दिल पर चोट लगे ऐसी ही बात करूंगा क्योंकि हम अनादिकालीन मोहनिद्रा में सोये हुये हैं। कितने भी नगाड़े क्यों न बजे, हम उठनेवाले नहीं हैं, इसलिये उसको चपेट मारकर ही उठाना पड़ता है। क्या कहते हैं? शरीर और आत्मा इन दोनों को मिलाकर जीव मानता है, अथवा शरीर को ही जीव मानता है अथवा आत्मा को ही शरीर मानता है। तात्पर्य यह है कि इन दोनों का भिन्न-भिन्न स्वरूप उसके ज्ञान में नहीं आता। मान लो किसी बालक को; सोहम तुमको भेजूं क्या, दूसरे किसीको भेजूं? बोलो-बोलो! हमारा यह बालक है न सोहम? उसको हमने बाजार में भेजा, बोला कि जा तू बाजार में से नींबू लेकर आ। तो उसके हाथ में हमने दस रुपये थाम दिये, वह बाजार में गया, किस

लिये? नींबू लाने के लिये और थोड़ी देर से आया तो क्या लेकर आया? ककड़ी लेकर आया। तो मुझे यह बताओ उसको नींबू का ज्ञान है या ककड़ी का ज्ञान है? हां जी। *श्रोता: दोनों का ज्ञान नहीं।* दोनों का ज्ञान नहीं। अगर नींबू को पहचानता था तो बराबर नींबू को लाता था और ककड़ी को पहचानता तो यह ककड़ी है, यह नींबू नहीं है, ऐसा समझकर ककड़ी नहीं लाता वह। यहां तो हमारे सोहम के ऊपर सब लोग हंस रहे हैं। हां, लेकिन यह भूल जाते हैं कि मैं आत्मा हूं, शरीर नहीं हूं, तो ना मैंने आत्मा को पहचाना है और ना शरीर को पहचाना है। इन दोनों में हमारी गड़बड़ हो रही है।

इसलिये कहते हैं जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व की भूल एक साथ देखने का कारण यह है कि उसमें बहुत कम अंतर है जिसको हम कहेंगे कि 'देअर इज अ व्हेरी थिन हेअर लाइन डिफरन्स बिट्वीन जीवतत्त्व संबंधी भूल और अजीवतत्त्व संबंधी भूल', ख्याल में आया? तो कह रहे हैं, जीवतत्त्व का वर्णन छहढाला में चेतन को है उपयोगरूप अर्थात् जीव का लक्षण ज्ञान, दर्शन है, ऐसा किया है। क्योंकि चेतन यानी कौन? जीवतत्त्व। उपयोग कैसा है? ज्ञान, दर्शन उपयोग, ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग ऐसा उसका स्वभाव है, लक्षण है। उसका तात्पर्य यह निकलता है, वहां तो 'चेतन को है उपयोगरूप' कहा तो हमने उस पर से निष्कर्ष कौनसा निकाला? मेरो है उपयोगरूप, तुम्हारा है उपयोगरूप, निगोद का है उपयोगरूप, सिद्धों का है उपयोगरूप। इसका अर्थ क्या हुआ? सब जीवों का है उपयोगरूप। यह उपयोग जो लक्षण है, ज्ञान-दर्शन लक्षण है, वह कौनसे जीव का है? हां, भाई। हां बोलो? *श्रोता: सभी जीवों का।* सभी जीवों का है न! परंतु जीव ने ज्ञान, दर्शन को अपना रूप न मानकर, प्राप्त शरीर को ही अपना रूप मान लिया है।

देखो-देखो थोड़ीसी उम्र हो जाये, हां, तो किसी महिला का कहो या पुरुष का दांत गिर जाता है और डॉक्टर बोलते कि अभी एकाध महीना रुक जाओ। ये गम्स जो हैं बराबर सेट-अप होने दो, बाद में आपको दांत–डेंचर बिठायेंगे। तो जब तक वह दांत नहीं बैठता है, उनको हंसने का होगा या बोलने का होगा, तो मुंह के सामने ऐसा रूमाल रखते हैं। *श्रोता: हाथ रखते हैं।* हां, हाथ रखते हैं; अच्छा, हाथ रखवाओ, हमारा क्या है? लेकिन गिरा हुआ दांत नहीं दिखे, तो हमारा ध्यान नहीं जाता है। फिर भी बार-बार यह क्यों मुंह के सामने हाथ रख रहे हैं, रूमाल रख रहे हैं? क्या कहीं उन्होंने संप्रदाय तो नहीं बदल दिया? वह मुंहपट्टी में तो नहीं गया? ऐसा किसीको लग जावे हो। क्या? लेकिन वह क्या मानता

है? मेरो उपयोगरूप है नहीं, शरीर है मेरो रूप, शरीर को मैंने मैं माना, बात आ गयी न समझ में? तो देखो अभी एक नहीं ऐसे अनेक प्रकार हैं, अभी हमारे अर्पलसाहब भूल कर रहे हैं, यह जो सफेद बाल दिख रहे हैं न? उसको काला बनाना चाहिये क्योंकि बाल है मेरो रूप! हां, ऐसा जो मानते हैं, फिर उनको चकाचक करने को जाते हैं। लेकिन बाल भले ही काले हुये हैं, गाल तो ऐसे उतर गये वह दिखता नहीं है, उसको तो ऊपर उठा नहीं सकते। होशियार आदमी पहचान लेता है कि इसकी उम्र क्या है? ख्याल में आया? अब आगे, कह रहे हैं, कि जीव ने ज्ञान, दर्शन को अपना रूप न मानकर यानी 'मेरो है उपयोगरूप' न मानकर प्राप्त शरीर को ही अपना रूप मान लिया है। अभी किसीका नाम न लेते हुये कहेंगे, हमारे पड़ोस में एक बच्चा है, बाजूवाली बहन का लड़का है और बहुत मोटा है। ए जाड्या, ए जाड्या, सब लोग उसको चिढ़ाते हैं। तो उसकी मदर मतलब वह बहन कहती है कि तुम्हारे घर का खाता है क्या? मोटा हुआ तो क्या हो गया? तो वह मोटा है यानी जो शरीर है वही वह है ऐसी मान्यता है, कि निकल गयी है? मैं मोटा हूं, मैं दुबला हूं, मैं ऊंचा हूं, मैं ठिंगना हूं, यह शरीर ही मैं हूं, शरीररूप ही मैं हूं, ऐसी मान्यता गयी क्या? सबमें ऐसे लेना साहब!

देखो-देखो, जब हम अमेरिका जाते हैं तो अमेरिका में सभी लोग पांच फीट आठ इंच-दस इंच, छह फीट दो इंच-तीन इंच लंबे और ऐसे चौड़े और उनके सामने हम जाकर खड़े रहेंगे तो हमें कोई ऐसा इन्फिरिऑरिटि कॉम्प्लेक्स लगता है। काहे को लगता है? अरे! वे ऐसा धक्का देंगे तो हम उड़ जायेंगे। नहीं-नहीं, चिंता मत कर, वे भी असंख्यात प्रदेशी हैं और मैं भी असंख्यातप्रदेशी हूं; वे भी ज्ञान, दर्शन आदि अनंत गुणों से युक्त हैं, मैं भी ज्ञान, दर्शन आदि अनंत गुणों से युक्त हूं। ऐसा जब उस वक्त सोचेंगे तो हमें! लेकिन यह अमीर है, यह गरीब है, तो संयोगों की अपेक्षा से हमने अपने को हीन-अधिक माना है, तो यह मैं ज्ञान-दर्शन स्वभावी हूं, यह बात हमारे गले ही नहीं उतरती है। तो क्या कहा कि देखो तो, प्रात: उठते ही हम दर्पण के सामने खड़े होकर अपना रूप निहारते हैं, किसका? हां, अपना या शरीर का? यानी शरीर ही मैं हूं, ऐसा हम देखते हैं, हां इधर ऐसा होगा। तो कह रहे हैं शरीर की फोटो देखकर, यह मेरी फोटो मानकर खुश होते हैं। अर्पलजी आप हमारे घर पर आये थे, तो हमने इ.स. १९७५ में बाहुबली भगवान के सामने एक फोटो खींचायी हां, निकालकर पैंतीस साल हो गये, उसे देखकर आप बोले थे यह आपकी फोटो

है? अरे! तब तो आप बहुत रुबाबदार दिखते थे। तो हमको लगता है, अरे! अब क्या हम कम रुबाबदार हैं? अभी भी वैसे ही हैं। यानी शरीररूप मैं हूं, यह मान्यता नहीं हटी है यह मैं कहना चाहता हूं। तो फोटो देखकर यह फोटो, मेरी फोटो है मानकर हम खुश होते हैं।

अभी क्या बतायें साहब ? आप जानते नहीं होंगे तो बता देता हूं। अभी तो यहां मैं पंडिताई कर रहा हूं, लेकिन मैं प्रोफेशन से तो फोटोग्राफर ही था, फोटोग्राफी करता था। तब मेरे सामने लोग आते थे फोटो निकालने के लिये और कहते थे कि, मेरी फोटो तो देवानंद जैसी दिखनी चाहिये। अरे तेरे की! उसके बाद राजेश खन्ना आ गया, उसके बाद अभी कौनसा किंग खान आ गया तुम जानो। यानी हम जैसे हैं वैसा अपने को नहीं चाहिये। शरीररूप तो मानता है, लेकिन दूसरे के जैसी स्टाइल में मेरी फोटो चाहिये। देखो-देखो, यह कितनी हमारी डिरेलमेंट हो रही है। तो क्या कहा? देखो, रूप निहारते हैं, शरीर की फोटो देखकर, यह मेरी फोटो ऐसा मानकर खुश होते हैं। शरीर सुंदर होगा तो मैं सुंदर हूं, मानकर गर्व करते हैं। शरीर रोगी होगा तो मैं रोगी मानकर दुःखी होते हैं। नया शरीर प्राप्त होने पर मैं जन्मा और शरीर छूटने पर मैं मरा मानते हैं। देखो छहढालाकार ने यही बात बतायी है। वे कहते हैं, 'तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान'। यह तो बिगिनिंग, यानी जन्मने की बात और मरण की बात, इस भव का अंत। यहां सिर्फ एक लाइन में कितना बतायेंगे? हमें तो यह लेना है कि जो-जो बातें होती हैं, वह शरीर की हो रही है तो मैं मानता हूं कि मेरी हो रही है अथवा मैंने की है। देखो मैंने उंगली उठायी, देखो मैंने हाथ उठाया, देखो मैं जोर से बोलता हूं, यह क्या है? सब पुद्गल का जो परिणमन है – वह मेरा है। जरा ठंडे दिमाग से विचार करना, अपनी मान्यता ऐसी है या नहीं?

कहा ही है, तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान। यहां तो केवल जन्म और मरण की ही बात की है परंतु इन दो अवस्थाओं के बीच की सभी अवस्थायें समझ लेना। उन सभी अवस्थाओं को हम अपनी अवस्थायें मानते आये हैं। जैसे तन गोरा हो, तन यानी क्या शरीर, शरीर गोरा हो, तो मैं गोरा, शरीर काला हो तो मैं काला, शरीर लंबा हो तो मैं लंबा। हां, शरीर बढ़ रहा है तो मैं बढ़ रहा हूं, शरीर कुरूप होगा तो मैं कुरूप। शरीर लूला-लंगड़ा हो तो मैं लूला-लंगड़ा आदि मानता है। केवल शरीर से एकत्व करके यह जीव रुकता नहीं है। धन, संपत्ति, बाल-बच्चे, कुटुंब, बंगला,

गाड़ी। देखो ये जो पंडित बाबूभाई मेहता थे, वे तो ऐसा बताते थे 'लाडी, माडी, गाडी बधी आपणी,' ऐसा यह जीव मानता है। अत्यंत भिन्न परपदार्थ है कि जो सब अजीवतत्त्व है उसमें एकत्व करता है और इनके होने से मैं सुखी या मैं दुःखी, मैं गरीब, मैं श्रीमंत, मैं बाल-बच्चेवाला, मैं निराधार, मैं हीन, मैं दीन आदि कल्पनायें करता हैं। दैनंदिन जीवन में ऐसी कल्पनाओं के कारण लोग दुःखी होते दिखायी देते हैं। अभी लोग दुःखी क्यों होते हैं? उसकी थोड़ीसी झलक हमें दिखा रहे हैं। तो कोई शादी नहीं होती इसलिये दुःखी है और कोई कहता है शादी तो हुयी लेकिन बच्चा नहीं हो रहा है इसलिये दुःखी है और कोई अधिक बच्चे हो रहे हैं इसलिये दुःखी है। ख्याल में आया? अपने आपको अधूरा मानकर दुःखी हो रहे हैं अथवा वैधव्य यानी विडो हो जावे तो, वैधव्य आने पर अपने आपको हीन-दीन मानकर कोई दुःखी है। शरीर ही मैं हूं यह मान्यता इस दुःख का मूल कारण है।

देखो बात तो ऐसी होती हैं, जिनका पति जल्दी मर जाता है, मान लो किसी माता-बहन का, तो उसमें कमीपना क्या है? हम कई शादियों में ऐसा देखते हैं कि जो विधवा स्त्री होती है, वह अगर कुछ प्रसंग में आगे आवे तो सब लोग उसको हटा देते हैं। क्यों? मान लो अभी शादी हो रही है वह नवदंपति पर उसकी छाया नहीं पड़े। अरे! कैसी बात है? उस स्त्री का क्या अपराध है? वह जो उसका पति होगा वह कम आयु बांधकर आया है; वह आया तो कम आयु के साथ। अभी इसको क्या पता लगेगा कि वह सौ साल से मरनेवाला है या पांच साल से मरनेवाला है? उसका क्या अपराध है बताओ? लेकिन हमारी रुढ़ियां, मान्यतायें ऐसी मूर्खों जैसी हैं कि उसने अपने को स्त्री माना है, उसने अपने को कुछ कमीपना माना है, समाज ऐसा है हो और किसी पुरुष की स्त्री मर जावे तो और दो-चार बार शादी कर लेता है। हमने ऐसे देखे हैं यह तीन-तीन, चार-चार, पांच-पांच शादी करते हैं, बीबी मर जाती है, तो दूसरी शादी और बीबी का पति मर जावे तो? वह पापी। यह कैसी बात है? देखो! यानी मैं ज्ञान-दर्शनमय आत्मा हूं, यह बात तो उनके ज्ञान में ही नहीं है। तो यहां कह रहे हैं कि वैधव्य आने पर अपने आप को हीन-दीन मानकर कोई दुःखी है।

शरीर ही मैं हूं ऐसी मूल में ही भूल होने पर यानी शरीर ही मैं हूं, ऐसी जो मूल में भूल है ऐसी होने पर, उस पर आधारित सभी मान्यतायें गलत ही होंगी। इसमें क्या आश्चर्य? अनादिकाल से यह जीव अनेक गतियों में घूम रहा है। एक मैं स्वयं यानी आत्मा और

अनंत पुद्‌गल परमाणु यानी शरीर इनका संयोग अथवा वियोग होना ही अन्य-अन्य नवीन गतियों में भ्रमण करना है। मिथ्यात्व के कारण जीव किस प्रकार मान्यता करता है – इसको अभी हम देखेंगे। किसके कारण? मिथ्यात्व के कारण। मिथ्यात्व का अर्थ हमने क्या देखा था? *श्रोता: विपरीत मान्यतायें।* विपरीत मान्यतायें। तो अभी देखते हैं, वह जीव मिथ्या मान्यतायें कैसी कर रहा हैं? यहां तक आपको बात बतायी है।

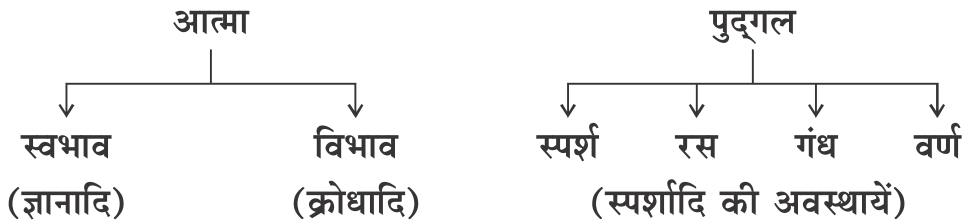

देखो, वहां एक जगह लिखा है आत्मा और दूसरी जगह लिखा है पुद्‌गल, ख्याल में आया? अभी आत्मा में क्या बातें बतायी है? एक है स्वभाव और स्वभाव में क्या लिखा? ज्ञानादि यानी ज्ञान, दर्शन यानी चैतन्य जिसको हमने कहा था। बाकी अन्य गुण भी उसमें समा लेना। तो वह स्वभाव है और विभाव यानी क्रोधादि यानी क्रोध, मान, माया, लोभ यानी राग, द्वेष, कषाय। यह एक आत्मा का स्वरूप है और आगे क्या है? पुद्‌गल। पुद्‌गल में क्या-क्या है? स्पर्श, रस, गंध, वर्ण। अभी ऐसा होते हुये भी यह जीव अपने को स्वभावरूप न मानकर, ज्ञान-दर्शन आदि स्वभावरूप न मानकर रागरूप मैं हूं, ऐसा मानता है। तो उसने क्या भूल की? जो विभाव है उस विभावरूप मैं हूं ऐसा वह मानता है, तो क्या उसकी मान्यता सही है? क्योंकि वह तो स्वयं जीवतत्त्व है और उसने अपने को आस्रवतत्त्वरूप माना। विभाव या क्रोधादि जो है, वह क्या है? आस्रव है न? तो आस्रव क्या है? कौनसा तत्त्व है? द्रव्यतत्त्व है या पर्यायतत्त्व है। *श्रोता: पर्यायतत्त्व।* तो पर्यायतत्त्व इतना ही अपने को माना। तो क्या यह सही है? यह बात पूछ रहे हैं। तो कह रहे हैं कि अपना स्वभाव तो है ज्ञानादि और विभाव जो है क्रोधादि और हमने इसरूप अपने को माना। या तो उसके आगे दूसरी पॉसिबिलिटि ऐसी है, स्वयं तो है आत्मा यानी जीवतत्त्व और उसने मैं बहुत स्ट्राँग हूं, मैं मस्क्युलर बॉडिवाला हूं जो हाथ लगाने से कठिन एकदम पत्थर के जैसा है, तो अपने को स्पर्श गुण जितना ही मैं हूं ऐसा उसने माना। वैसे ही रस, गंध और वर्ण – इसमें हमने ये बातें बहुत बार देखी हैं, तो उसने अपने को पुद्‌गलरूप माना है।

तो इसलिये कहते हैं कि आत्मा का स्वभाव ज्ञानादि और विभाव क्रोधादि तथा पुद्‌गल के स्पर्शादि इन सबको मिलाकर यह मैं ऐसा अपना स्वरूप मानता है। तो यह सही मान्यता हुयी या विपरीत मान्यता हुयी? हां जी, धीमंत। *श्रोता: विपरीत।* विपरीत मान्यता हुयी। तो कह रहे हैं शरीर मैं हूं और ज्ञान तथा क्रोध करनेवाला मैं हूं ऐसा स्वयं को मानता है और इस मान्यता को एकत्वबुद्धि कहते हैं। अब आगे कहते हैं, ये मेरे हैं। अब मेरेमें उन्होंने किसको इन्क्लूड किया वह भी देखेंगे। आत्मा की और पुद्‌गल की अवस्थायें मिलाकर, यह सब मिलाकर, हो! यह सब मेरी अवस्थायें हैं, ऐसा मानता है। अर्थात् ज्ञान की और क्रोधादि की हीन-अधिक दशा और पुद्‌गल के वर्ण गुण की अवस्था, स्पर्श गुण की अवस्था, अन्य गुणों की अवस्था आदि सबको अपनी स्वयं की अवस्था मानता है। इसको कहेंगे ममत्वबुद्धि। देखो, बात ऐसी है जो मिथ्यात्वी होता है, वह तो हमेशा परपदार्थों में एकत्वबुद्धि करता है; दूसरी कहते हैं कि ममत्वबुद्धि करता है; तीसरी कहते हैं कि कर्तृत्वबुद्धि, पर का मैं कर्ता हूं, ऐसा मानता है और पर का मैं भोक्ता हूं, ऐसा मानता है। तो ये सारी मान्यतायें जो हैं वे तो विपरीत ही हैं मिथ्यात्वी जीवों की हैं। तो इसमें से हमने दो बातें देखी कि यह मैं हूं और ये मेरे हैं। यह मैं हूं यह क्या है? एकत्वबुद्धि है और ये मेरे हैं, यह क्या है? *श्रोता: ममत्वबुद्धि।* ममत्वबुद्धि कहो, स्वामित्वबुद्धि कहो।

अब कहते हैं मैं इनका कर्ता हूं। जीव और शरीर इनका निमित्त-नैमित्तिक संबंध बहुत है। यानी कैसा? मुझको भूख लगी तो पुद्‌गल पेट में गया और इसकी भूख शांत हुयी यानी इच्छा जो थी वह इच्छा शांत हुयी। तो यह इच्छा शांत होने में निमित्त क्या है? तो इसका पेट भर गया। तो हमने माना, खाना खाये बगैर इसकी तृप्ति नहीं होती; यह तो सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। वैसे ही भोजन के साथ-साथ पानी पीने की बात आती है, तृष्णा होती है। तो तृष्णा में भी ऐसा ही लेना, पानी पीने से उसको अच्छा लगा, समाधान हुआ। तो यह तो सहज जीवों के परिणाम जो बदलते हैं, उसके अनुसार यहां निमित्त भी मिलता है और हम मानते हैं कि ऐसा हुआ और आप कहते हैं, एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है। तो यह जो निमित्त-नैमित्तिक संबंध है, इसको हम नहीं जानते। देखो समयसार में तो इसकी बहुत बढ़िया बात बतायी है। जिस समय जीव को भूख लगती है, उस समय उसको खाना मिलता है क्या? हां, अभी अपनी यहां की बात ले लो। अभी ग्यारह बजेंगे तो ग्यारह बजे सबको भूख लगेगी लेकिन वहां साढ़े ग्यारह बजे तक तो

भोजनालय खुलेगा ही नहीं तो साढ़े ग्यारह बजे तक हम कैसे-बैसे रुक जायें। लेकिन वहां कोई प्रॉब्लेम हो गया, रसोईघर खुलने में और पौने बारह बज गये तो क्या हो रहा है? *श्रोता: और भूख लगेगी।* और भूख लग रही है लेकिन उस समय भूख लगते हुये भी हमें खाना नहीं मिल रहा है और जिस समय खाना मिल रहा है, उस समय जो पहले जिस समय में हमें भूख लगने को स्टार्ट हुयी न, वह रहती नहीं है; वह पर्याय ही नहीं रहती है।

तो यहां कह रहे हैं कि जिस समय हमें इच्छा होती है, उस समय उसकी पूर्ति नहीं होती है और जिस समय पूर्ति होती है, उस समय वह पहली इच्छा नहीं रहती है। ख्याल में आया? तो शरीर और जीव में ऐसे निमित्त-नैमित्तिक संबंध बहुत हैं। उस कारण कभी-कभी जीव इच्छा करता है। अभी यहां तो भूख की और प्यास की बात नहीं, जब-जब शरीर की क्रिया, शरीर के कारण, शरीर में होती है परंतु जीव ऐसा मानता है कि यह मेरी क्रिया है। यानी देखो, आपने वे ऑलिम्पिक्स गेम्स देखे होंगे। तो कभी-कभी हम देखते हैं कि एक व्यक्ति इतना जोर से दौड़ता है तो वहां आत्मा और शरीर एक साथ दौड़ते हैं मान लो, हम क्या मानते हैं कि यह जीव ही दौड़ता है। दिखता क्या है हमें? पुद्गल दौड़ते हुये दिखता है न? और हमने क्या माना यह इसमें ऐसी कपॅसिटि है, यह बहुत जोर से दौड़ता है और वह दूसरा क्या होता है? वह उलटी-पुलटी ऐसा स्क्वेअर में? हां जी। *श्रोता: जिम्नॅस्टिक्स।* जिम्नॅस्टिक्स, वह ऐसे जैसा समझ लो कि प्लास्टिक की डॉल होवे, ऐसे अलग-अलग तरीके से उनके शरीर के आकार बनते हैं और हम कहते हैं, देखो-देखो उसने कैसा कमाल कर दिया। तो वहां शरीर और आत्मा इनके दोनों में निमित्त-नैमित्तिक संबंध हैं और उसके देखने से हम कहते हैं कि ऐसा तो हमको करने को नहीं आता है साहब। लेकिन उन्होंने तो कमाल कर दिखाया। यह बात है न? और वह वेटलिफ्टिंग करते हैं, कोई कोई पांच सौ किलो उठाता है और हम तो पांच-पचास किलो उठाने में थक जाते हैं।

तो यहां क्या कह रहे हैं? जीव इच्छा करता है तब भी शरीर की क्रिया, शरीर के कारण, शरीर में होती है। अभी वहां पर जो कॉम्पिटिशन करनेवाले जो वेटलिफ्टर्स होते हैं तो सभी इच्छा करते हैं कि मैं मॅक्झिमम वजन उठाऊं और कोई-कोई उठाते-उठाते गिर भी जाते हैं। तो इच्छा के अनुसार शरीर का परिणमन होता होगा कि नहीं? यह हम जो आम तौर से देखते हैं, जब भी सचिन तेंडुलकर बॅटिंग करने आता है, तो हम तो चाहते हैं

और वह भी चाहता है। क्या चाहता है? वह सेंचुरी करे और वह झिरो में कितनी बार आउट हो गया, सब उसकी इन्फॉर्मेशन आती है, इतनी बार आउट हो गया, तो यह कैसा है? अपनी इच्छा के अनुसार उसका परिणमन होता होगा कि नहीं बॅट का? तो यही कहते हैं जीव इच्छा करता है तब शरीर की क्रिया, शरीर के कारण, शरीर में होती है, परंतु जीव ऐसा मानता है कि यह मेरी क्रिया है; और तो और, आज बाय चान्स कोई सेंचुरी मार दे, तो पहले कहां देखेगा? हां, ऊपर। वह हमारा अझरुद्दीन गले से निकालेगा, किसको? आपको जो तावीज दिया था न एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता, वह नहीं है उसके पास; वह तो निकाल कर ऐसा-ऐसा करेगा यानी यह सारी ईश्वर की कृपा है ऐसी उसकी मान्यता है। हां, तो फिर वह ईश्वर अपने पर ही कृपा करें, अन्य जो सेंचुरी मारते हैं उनका कुछ नहीं। वे तो अपने बलबूते पर कर रहे हैं और इनके तो ईश्वर की मेहरबानी हो रही है।

हां तो कहते हैं, शरीर के कारण शरीर की क्रिया शरीर में होती है परंतु जीव ऐसा मानता है कि यह मेरी क्रिया है, भले वह मान कषाय के कारण दूसरे को क्रेडिट देता हो। अभी यहां तो कह रहे हैं, यहां शरीर की क्रिया में बताते हैं कि जैसे मैं बोलता हूं, मैं चलता हूं, मैं खाता हूं, मैं पीता हूं ये सारी बातें कैसी हैं? कि परद्रव्य का मैं कर्ता हूं। इसको कहते हैं कर्तृत्वबुद्धि। पहले हमने देखी थी एकत्वबुद्धि, फिर देखी थी ममत्वबुद्धि, इसीका नाम स्वामित्वबुद्धि है, तीसरी है कर्तृत्वबुद्धि; अब चौथी जो बात है तो मैं इनका भोक्ता हूं। हम क्या देख रहे हैं, वह भूल मत जाना कि जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व संबंधी जो जीव की भूल हो रही है उसकी बात चल रही है। तो कह रहे हैं, मैं इनका भोक्ता हूं। शरीर में ठंडी यानी शीत, बुखार यानी उष्ण, भूख, प्यास, रोग आदि अवस्थायें होती हैं। ये अवस्थायें किसमें होती हैं? हां जी। कौन बोला, हां? *श्रोता: पुद्‌गल में।* बराबर, हां, पुद्‌गल में, शरीर में, शरीर ठंडा होता है कि आत्मा ठंडा होता है? *श्रोता: शरीर।* क्योंकि स्पर्श गुण किसमें है? *श्रोता: पुद्‌गल में।* पुद्‌गल में है तो शरीर पुद्‌गल है तो ठंडा होवे या गर्म हो जाये यानी बुखार आ जाये, उसे भूख लगे, प्यास, रोग आदि अवस्थायें जो होती हैं; मोह यानी मिथ्यात्व के कारण यह जीव स्वयं ही उसमें सुख-दुःख मानता है।

धीमंत, आपके प्रश्न का उत्तर आ रहा है भाई। आपने जो प्रश्न पूछा था न? अभी

कहां गया मालूम नहीं है, मेरे पास। लेकिन आपने पूछा था ऐसा हमको लगता है, लौकिक में ऐसा देखने में आता है। चलो ठीक है तो उसका उत्तर यहां आ रहा है। ये सारी बातें क्या हैं? मोह के कारण यह जीव स्वयं ही उसमें सुख-दु:ख मानता है। इन सब अवस्थाओं को अपनी अवस्था मानकर मुझे बुखार आया इसलिये मैं दु:खी हूं, ऐसा मानता है। इसको कहते हैं भोक्तृत्वबुद्धि। इसतरह यह जीव जो-जो पर्याय यानी मनुष्यपर्याय, देवपर्याय आदि धारण करता है, उस-उस पर्याय में अहंबुद्धि करता है। यानी मैं यही हूं ऐसा मानता है। और क्या कह रहे हैं? इसका कारण क्या है? इसके बारे में ऐसा कहा जाता है, जो पंडित टोडरमलजी लिखते हैं, 'इस आत्मा को अनादि से इन्द्रियज्ञान है' यानी एकेन्द्रियवाले को केवल स्पर्शनेन्द्रिय का ज्ञान है। पांच इन्द्रियवाले को पांचों इन्द्रियों का ज्ञान है। संज्ञी पंचेन्द्रिय को पांच इन्द्रिय और मन इनके द्वारा ज्ञान हो रहा है। तो कहते हैं 'इस आत्मा को अनादि से इन्द्रियज्ञान है, उससे स्वयं अमूर्तिक है, वह तो भासित नहीं होता'। क्या कहना चाहते हैं? देखो जो इन्द्रियों से ज्ञान होता है, वह किसका ज्ञान होता है? हां, साहब बोलो, हां। *श्रोता: पुद्गल का।* बहुत अच्छा! यानी आपका यह कहना है जो इन्द्रियां होती हैं, तो ये सारी इन्द्रियां बहिर्मुख हैं। कैसी हैं? बहिर्मुख। बहिर्मुख का अर्थ क्या है? बाह्य में उनका मुख है यानी बाह्य पदार्थों को ही जानने की क्रिया उनसे होगी।

देखो-देखो, तो यहां तो कह रहे हैं, पहले हम थोड़ासा जिसको हम कहते हैं, बहुत स्थूल परिभाषा को समझेंगे। पुद्गल किसको कहना? इसकी अगर हमने बनायी हुयी परिभाषा देखनी है तो जो-जो हमारे आंखों से दिखता है वह पुद्गल है यह बहुत स्थूल परिभाषा है, उसको ही अभी हम गलत साबित करेंगे और दूसरी परिभाषा बतायेंगे। लेकिन समझने के लिये पहले में पहले हमने क्या देखा? कि जो-जो आंखों से दिखता है वह पुद्गल है। फिर कहते हैं जो पांचों इन्द्रियों से जाना जाता है वह पुद्गल है। फिर आगे कहेंगे कि जिसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण इत्यादि गुण हैं वह पुद्गल है। तो अभी यहां क्या कह रहे हैं देखो, यहां तो यह कह रहे हैं कि इस आत्मा को अनादि से इन्द्रियज्ञान है। यानी उसको मान लो कि जिसके पास चक्षुइन्द्रिय है। तो चक्षुइन्द्रिय जो है, उससे वह क्या जानता है? बाह्य की ही बात, तो उसको क्या दिखता है, चक्षु से तो वर्ण दिखायी देगा। तो हमने क्या देखा था? जो-जो दिखायी देता है वह पुद्गल है। तो आपको जो कुछ दिख रहा है, तो शरीर दिख रहा है कि नहीं? तो वह तो तुम हो कि नहीं? कहते हैं – नहीं, यह भी

पुद्गल है; क्यों? चक्षुइन्द्रिय से जाना जाता है। लेकिन वह चक्षुइन्द्रिय जो है, वह बाह्य में देखता है। उसके पीछे खोपड़ी में क्या है, ब्रेन दिखता है कि नहीं तुमको? नहीं। अभी कर्णेन्द्रिय जो है यह बाहर की आवाज को ग्रहण करता है और कर्णेन्द्रिय को, अंदर जो कुछ गड़बड़ चल रही है, दिल की धड़कन चालू है, वह आवाज आती है कि नहीं मिनट-मिनट पर, हां? वैसे ही घ्राणेन्द्रिय है उसको बाहर की दुर्गंध या सुगंध आती है, लेकिन अपने शरीर में जो कोई दुर्गंध है, वह आती है कि नहीं? तो यही बात यहां बताना चाहते हैं। अभी आप बाकी की सब इन्द्रियों में देख लेना। तो कह रहे हैं, देखो।

इस आत्मा को अनादि से इन्द्रियज्ञान है यानी वह इन्द्रियज्ञान से, मन को भी उसमें ले लेना हो, तो कहते हैं इन्द्रियज्ञान है, उससे, स्वयं अमूर्तिक है। आत्मा कैसा है? अमूर्तिक है और इन्द्रियां किसको जानती हैं? मूर्तिक पदार्थों को जानती हैं। इसलिये कहते हैं स्वयं अमूर्तिक है, वह भासित नहीं होता परंतु शरीर मूर्तिक है, वही भासित होता है और आत्मा, किसीको आपरूप जानकर अहंबुद्धि धारण करे ही करे। तो जब स्वयं पृथक् भासित नहीं हुआ, तब उनके समुदायरूप पर्याय में अहंबुद्धि धारण करता है। यानी उसको अपना स्वरूप ही ध्यान में नहीं आता है और बाह्य में जो पदार्थ हैं उनमें वह अपनारूप, आपरूप मानता है। एकत्वबुद्धि है न उसकी! तो अहंबुद्धि धारण करता है तब क्या होता है कि स्वयं अपना जो स्वभाव है, स्वरूप है वह उसको अलगसा भासित नहीं होता है। तो वह परपदार्थों में अहंबुद्धि धारण करता है। वैसे ही अपने को और शरीर को निमित्त-नैमित्तिक संबंध बहुत हैं, इसलिये भिन्नता भासित नहीं होती। यानी जब शरीर का कुछ कार्य होता है तो वह मेरा कार्य है। दोनों में तो निमित्त-नैमित्तिक संबंध है; आत्मा में और शरीर में; फिर भी उसको नहीं पहचानता है। निमित्त-नैमित्तिक संबंध है, उसकी भिन्नता उसको भासित नहीं होती और जिस विचार द्वारा भिन्नता भासित होती है, वह मिथ्यादर्शन के जोर से हो नहीं सकता। क्या कहा? जो भिन्नता है, वह भासित होने के लिये क्या करना चाहिये? कि हमारी जो सोच है, विचार है, वह विचार नहीं कर सकता; क्यों? कि उसमें निमित्त मिथ्यादर्शन है, स्वयं के मिथ्या परिणाम हैं, इसलिये मैं इससे भिन्न हूं ऐसा उसे भासित ही नहीं होता है। इसलिये पर्याय में अहंबुद्धि धारण करता है। इसप्रकार जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता का स्वरूप देखने के बाद अभी आस्रवतत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता का स्वरूप देखेंगे। विपरीत मान्यता यानी अयथार्थ श्रद्धान।

तो यह आस्रव यानी हमने क्या देखा था, शॉर्ट में? आस्रव की परिभाषा, हां, कौन बोल रहे साहब? *श्रोता: पर्याय।* पर्याय, आस्रव यह पर्याय है, बहुत अच्छा। लेकिन उस पर्याय का वर्णन कैसा है? क्योंकि संवर भी पर्याय, मोक्ष भी पर्याय है। बराबर न? आप कह रहे हैं कि आस्रव है यानी पर्याय है, आपने कहा। यह पर्यायतत्त्व कहना था आपको, है न? कोई बात नहीं, सिर्फ हम पर्याय कहेंगे तो पर्याय की खास विशेषता क्या है कि जिसे हम आस्रवतत्त्व कहेंगे? कौन बताना चाहेगा? *श्रोता: कर्म का आना।* हां, कर्म का आना, यह तो कर्म की अपेक्षा से हमने बात की और जीवों के परिणामों की अपेक्षा से। *श्रोता: मिथ्यात्व, अविरति।* हां, सवाईभाई, आप कुछ कह रहे थे। *श्रोता: विभाव परिणमन।* हां, तो उस विभाव परिणमन का नाम क्या है? *श्रोता: शुभाशुभ विकारी भाव।* हां, बहुत अच्छा है! देखो, शुभाशुभ विकारी भाव। उसमें मोह और क्रोध यानी राग-द्वेष के परिणाम, इसको हमने क्या कहा था? आस्रव; यह बात भूल गये न हम? सिर्फ बारह घंटे हो गये, कल रात को आठ बजे पढ़ा था यह और अभी तो आठ बज चुके, पौने नौ हो गये। देखो-देखो, अभी क्या कहना चाहते हैं? जरा जोर से बोलना भाईसाहब। *श्रोता: आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष पर्यायतत्त्व हैं।* बहुत अच्छा है! ये पर्यायतत्त्व हैं। इन सबको हमने पर्यायतत्त्व कहा है, किसको? आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष इनको हमने पर्यायतत्त्व कहा। मैंने ऐसा आपको पूछा कि आस्रव किसको कहना? देखो, मैं आपको बताता हूं, आपको याद आ जायेगा। जब हम जीवतत्त्व की बात करते हैं तो जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन है, वह जीवतत्त्व, जिसमें मेरा ज्ञान दर्शन नहीं है, वह अजीवतत्त्व; शुभाशुभ विकारी भावों को आस्रव कहते हैं; शुद्धि की उत्पत्ति वह संवर है; और शुद्धि की वृद्धि वह निर्जरा है; और शुद्धि की परिपूर्णता वह मोक्ष है। ऐसा बताया था कि नहीं? कोई बात नहीं।

हां, हम तो याद कर रहे हैं और आपने प्रयत्न किया, बहुत अच्छा किया। बाकी लोग कुछ बोलते ही नहीं। क्यों? नेमिचंदजी आपको बोलना चाहिये हो अभी। हां, क्या कह रहे हैं? देखो अभी आस्रवतत्त्व संबंधी मान्यता। अभी आस्रव यानी जो शुभाशुभ विकारी भाव हैं, वे हैं तो किसके लिये? किसमें निमित्त हैं? मतलब उनसे क्या होगा? यानी बंध होगा या मुक्तता होगी? हां महेंद्रभाई, शु कहेवाय? *श्रोता: बंध।* बंध थाय छे, तो हमने क्या माना? कि शुभराग करने से धर्म होगा यानी मुक्तता होगी। तो यह उसकी आस्रवतत्त्व

संबंधी की मान्यता यथार्थ है या अयथार्थ है। *श्रोता: विपरीत है।* विपरीत है, बहुत अच्छा! हम जो प्रश्न देते हैं, वाक्य, शब्द देते, उससे भी आप विपरीत कोई नया शब्द डालते हैं, बहुत अच्छी बात है, विपरीत नहीं, सही है। मैंने पूछा कि राग से वीतरागता होना, राग से धर्म होना, यह जो मान्यता है – वह यथार्थ है या अयथार्थ है? तो भाईसाहब ने कहा अयथार्थ है। यानी सही है या गलत है, तो आपने कहा गलत है, तो आपने कहा कि विपरीत है। यह भी बिलकुल सही उत्तर है। अभी हम देखते हैं यहां क्या कह रहे हैं। देखो, आस्रवतत्त्व का अर्थ हम देखते हैं दुबारा।

मोह, राग, द्वेष अर्थात् मिथ्यात्व और कषाय आस्रव हैं। यह तो हमने शॉर्ट में देखा था और आस्रव के हम और भी भेद देखेंगे तो उसमें कौन-कौनसे आयेंगे? ललिताबेन आप बतायेंगे। *श्रोता: क्या पूछा?* हां, क्या पूछा? आस्रव के हमने अधिक भेद देखे थे। यहां तो दो ही बताते हैं, कौन से? मिथ्यात्व और राग-द्वेष। लेकिन और भी कुछ हमने देखे थे। आपको थोड़ासा क्लू देता हूं। *श्रोता: भावास्रव।* एक मिनट रुकना साहब। हमने देखा था तत्त्वार्थसूत्र के आठवें अधिकार का पहला सूत्र अभी बताओ। *श्रोता: मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग।* बहुत अच्छा है। यह बहनों का बहुत अभ्यास है, लेकिन ध्यान नहीं था न! तो ध्यान नहीं था वह मेरे ध्यान में आ गया इसलिये मैंने उनसे पूछ लिया। क्या कह रहे हैं कि मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग और अभी आपने भावास्रव और द्रव्यास्रव कहा, वह तो जुदी बात है। हमने विशेष यानी उसका और डिटेल में जो देखा था। यह पांचों ही बंध के कारण हैं, आस्रव हैं – ऐसा हमने देखा था न और यही बात बंध के कारणों में समयसार में चार बातें बतायी हैं। उनको कारण कहा है तो उनमें प्रमाद को कषाय में गर्भित करके मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग ऐसा लिया है। हां, चलो, हम बार-बार समयसार, तत्त्वार्थसूत्र का क्यों उदाहरण देते हैं? क्योंकि जब समयसार की और उसमें जो है उसकी बात बतायी जाती है तब कम से कम सीनियर लोग हां बराबर छे, बराबर छे, ॲक्सेप्ट करते हैं और पंडित दौलतरामजी छहढालाकार, पंडित टोडरमलजी या पंडित गोपालदासजी बरैया की बात बताते हैं तो कहते हैं नहीं-नहीं उनकी बात हम नहीं मानेंगे। लेकिन कुंदकुंद आचार्य ने, उमास्वामी ने बताया, तो बात साची हो, बात साची, क्योंकि हम उनसे परिचित हैं न? और अन्य ये कोई थोड़ी गलत बात बता रहे हैं? बिलकुल सही बता रहे हैं।

अब आगे कहते हैं मोह, राग, द्वेष अर्थात् मिथ्यात्व और कषाय आस्रव हैं, उसीको कहा है विभाव है। स्वभाव के विरुद्ध भाव को विभाव कहते हैं। इसके लिये उदाहरण दे रहे हैं। आपने कभी पानी देखा है? हां, पानी का स्वभाव कैसा है भाई? हां साहब। पानी का स्वभाव कैसा है? बोलो-बोलो? मोटा भाई, तमे ब्लू शर्टमां छो ने तमने पूछुं छुं। हां। पानी का स्वभाव कैसा है? हां बोलो। *श्रोता: शीतल।* हां शीतल, हां, और जब हम नहाने को जाते हैं तो स्वभावरूप पानी लेते हैं या वह गरम पानी लेते हैं। *श्रोता: गरम पानी।* गरम, तो यह जो उष्णता उसमें जो है, उष्ण जो उसकी अवस्था है वह उसका स्वभाव है कि विभाव है? *श्रोता: विभाव है।* विभाव है, बात ख्याल में आयी? तो अभी क्या बता रहे? यहां तो बता रहे हैं; जैसे पानी का स्वभाव शीतलता है और उष्णता यह पानी का विभाव है। देखो, अगर हमको इस बात का कहीं पर भरोसा नहीं हो तो उबलते हुये पानी को एक जगह रखना और दो घंटे में आकर हाथ डालना। तुरंत डालोगे तो जल जाओगे भाई। तो कैसा लगेगा? वह स्वभावरूप परिणत हो जाता है। ख्याल में आया न? वैसे यहां कह रहे हैं, पर निमित्त से होता है – यह विभाव है। क्या कहा? देखो कितना सुंदर विश्लेषण किया है। तो कह रहे हैं जो पर के निमित्त से होता है। पानी उष्ण क्यों होता है, पर निमित्त कौन है? तो कहते हैं सोलर सिस्टिम या अग्नि, ख्याल में आया न? तो कह रहे हैं पर निमित्त से होता है वह विभाव है। मेरा स्वभाव कैसा है? शांति, सुख, समाधान ऐसा मेरा स्वभाव है यानी सुखस्वरूप मैं हूं, अनाकुल स्वभावी मैं हूं और किसीने मेरे को पीछे से ऐसे चिमटी, क्या बोलते हैं आप लोग? शुं केहवाय भाई? हां! *श्रोता: पिंचिंग किया।* पिंचिंग किया, यह इंग्लिश आया। अभी चलो ठीक है तो कहते हैं, मुझे क्रोध आया, तो यह क्रोध पर निमित्त से आता है – यह हम बताना चाहते हैं तो वह कैसा है? पर निमित्तों से जो होता है वह विभाव है और निमित्त के बिना जो रहता है वह स्वभाव है।

अभी अग्नि में जो उष्णता है, वह पर निमित्त से होती होगी कि नहीं? हां, और पानी को अग्नि पर रखेंगे तभी तो पानी गर्म होगा न? ख्याल आती है बात? तो जो पर निमित्त से होता है वह विभाव है और जो पर निमित्त के बिना रहता है वह स्वभाव है। अभी नमक को खारा बनाने के लिये और कुछ दूसरा नमकीन पदार्थ डालना पड़ेगा कि नहीं उसमें? तो कह रहे हैं, देखो एक-एक वाक्य भी इतना मार्के का है, पर निमित्त से होता है, वह विभाव है और निमित्त के बिना जो रहता है वह स्वभाव है। ज्ञान, आनंद, आत्मा का स्वभाव है और

मोह, राग, द्वेष आत्मा का विभाव है। ऐसा होने पर भी यह मिथ्यादृष्टि जीव, यहां तो लिखा है मिथ्यादृष्टि जीव और हमारे जो पंडित कैलाशचंदजी बुलंदशहरवाले यह उल्लू जीव, ऐसा बोलते थे। वे कहते थे पर की तरफ एक उंगली दिखाता है तब तीन उंगलियां तो तेरे अपनी तरफ हैं। यह उल्लू जीव ऐसा पर की तरफ नहीं, यह उल्लू जीव यानी मैं इन विभावों को अपना स्वभाव मानता है। आस्रव दुःखरूप हैं, मिथ्यादृष्टि उन्हें सुखरूप मानता है। विपरीत मानता है। राग चाहे शुभ हो या अशुभ, वर्तमान में आकुलता उत्पन्न करते हैं तथा उनसे बंध होता है। इस कारण भविष्य में भी दुःख ही देते हैं और यही बात समयसार में कर्ता-कर्म जो अधिकार है, उसमें शुरू में ली है कि ये जो आस्रव हैं वे दुःखरूप हैं, वर्तमान में दुःखस्वरूप हैं, और भविष्य में भी दुःख देनेवाले हैं। पंडित दौलतरामजी ने बात बतायी है 'आस्रव दुःखकार घनेरे, बुद्धिवंत तिन्हें निरवेरे'। क्या कह रहे हैं, जो आस्रव हैं वे अत्यंत दुःखदायक हैं और जो बुद्धिवंत यानी धीमंत, यानी जो सम्यग्दृष्टि, उन्हें निरवेरे, निरवेरे यानी उनका निवारण करते हैं, उनको छोड़ देते हैं, उनका त्याग करते हैं। किनका? आस्रवों का, कौन? सम्यग्दृष्टि।

दुःख का कारण मोह, राग, द्वेष है, परंतु अज्ञानी संयोग को, परपदार्थों को दुःख का कारण मानकर, यह राग-द्वेष की श्रृंखला चालू ही रखता है। क्या कह रहे हैं? देखो, वास्तव में दुःख जो है, यह दुःख क्यों पैदा हो रहा है? मोह, राग, द्वेष रूप विपरीत मान्यता यह जीव कर रहा है उसके कारण से दुःख हो रहा है, परंतु यह अज्ञानी क्या करता है? संयोगों को और परपदार्थों को दुःख का कारण मानता है। दुःख जो होता है, वह स्वयं के आस्रव भाव से हो रहा है, लेकिन वह क्या मानता है, यह संयोग जो है वह दुःख का कारण है। तो कह रहे हैं – परपदार्थों को दुःख का कारण मानकर, यह राग-द्वेष की श्रृंखला यानी कंटिन्युइटि चालू ही रखता है। आस्रवतत्त्व संबंधी भूल संक्षेप में देखी, अभी दस बजे हैं, सवा दस बजे देखेंगे। तब तक एक मिनट बाकी है किसीके कोई प्रश्न हो तो पूछ लेना भाई। चलो किसीके कोई प्रश्न तो नहीं है?

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

५६. सात तत्त्वों संबंधी विपरीत मान्यता – २

हमने अभी तक जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व संबंधी जो विपरीत मान्यता है, उसके बारे में थोड़ा बहुत देखा है, इसके आगे हम आस्रवतत्त्व संबंधी जो विपरीत मान्यता है यानी आस्रवतत्त्व संबंधी जीव की जो भूल है मान्यता में, उसको देख रहे थे। इसके बीच में एक प्रश्न आया है। वह भी आस्रवतत्त्व से संबंधित है, उसको हम पढ़ते हैं। प्रश्न यह है कि *शुभभाव यह विभावभाव है, क्या उससे स्वभाव नहीं प्राप्त होगा, तो फिर यह याद करना, कि मैं ज्ञानस्वरूप, ज्ञान-दर्शनमय हूं, यह भी तो शुभभाव ही है, इससे स्वभाव कैसे प्राप्त होगा?*

प्रश्न तो बहुत जेन्युइन है लेकिन उसमें थोड़ीसी गड़बड़ है। यहां यह प्रश्नकर्ता ऐसे पूछ रहा है, तो फिर यह याद करना, याद करना यानी बारंबार घोकना। तो घोकना यह भी तो विकल्पात्मक भूमिका की अवस्था है। विकल्प करते-करते निर्विकल्पता होती नहीं है। सुनना! तो यहां तो हमें घोकंपट्टी नहीं करने की है कि मैं ज्ञान हूं-मैं ज्ञान हूं। यह तो मानना है कि मैं ज्ञानस्वरूप हूं। एक दफे मैंने निर्णय किया कि मैं ज्ञानस्वरूप हूं, तो उसकी मान्यता सहजरूप से हो जाती है। यह मैं ज्ञानस्वरूप हूं, मैं ज्ञानस्वरूप हूं, ऐसा जब तक उसकी भूमिका में रहेगा तब तक तो वह विकल्पात्मक भूमिका है। लेकिन जब आत्मानुभव यानी निर्विकल्प अवस्था होती है, उसके पूर्व में कोई शुभ विकल्प तो होते ही हैं। देखो भाई, वे शुभ विकल्प जो हैं वह अनुभव के काल में नहीं रहते। लेकिन विकल्प में ही अटके रहना, उससे तो कोई लाभ नहीं होगा क्योंकि अटका यानी हम याद ही कर रहे हैं न। मैं ज्ञानस्वरूप हूं, मैं ज्ञानस्वरूप हूं, मैं ज्ञान-दर्शनमय हूं, मैं एक हूं, मैं शुद्ध हूं, मैं अनादिअनंत हूं इसतरह हम अपना जो स्वरूप है उसको अलग-अलग अपेक्षा से देख रहे हैं।

तो तू ज्ञानस्वरूप है न! हां-हां बिलकुल हूं। तो फिर अभी बारंबार मैं ज्ञानस्वरूप हूं ऐसा विकल्प क्यों उठा रहा है? ख्याल में आया न? तो यहां यह कहते हैं तेरा निर्णय पक्का हो गया, तो तेरी मान्यता में वह बात आयेगी कि मैं ज्ञानस्वरूप ही हूं, तो आगे विकल्प उठना बंद हो जायेगा। लेकिन जब तक हमारी मान्यता ही नहीं हो रही है केवल हम घूंटन करने में ही अटके हुये हैं, तो वह तो शुभभाव ही रहेगा। अगर आपको पता नहीं

हो तो मैं यह भी बताऊं जो जीव स्वरूप की प्राप्ति के लिये करणलब्धि मांड़ता है और वहां अध:प्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणरूप जो परिणाम करता है, वे भी तो शुभभाव ही हैं। लेकिन एक समय ऐसा आता है कि वह शुभभाव रुक जाते हैं। जो करणलब्धि में अनिवृत्तिकरण का आखरी समय है तब तक तो वह जीव मिथ्यात्वी ही है। बात ख्याल में आयी? तो घोकने की जरूरत नहीं है।

गुरुदेवश्री कहते ते कि मैं ज्ञायक हूं ऐसा घोकना, ऐसा सम्यग्दृष्टि नहीं करते; उसको घोकना नहीं पड़ता है कि मैं ज्ञायक हूं, ज्ञायक हूं; कारण कि उसने मान लिया कि मैं ज्ञायक हूं। अब मैं आपसे पूछता हूं, पुरुषवर्गों को, तुम पुरुष हो यह आपके ज्ञान में आया है और आपने माना है कि मैं पुरुष हूं तो बार-बार घोकना पड़ता है कि मैं पुरुष हूं, मैं पुरुष हूं, पुरुष हूं? अरे! जो कोई नट होगा वह स्त्री का पार्ट करता होगा तब भी क्या उसको याद करना पड़ता है कि मैं पुरुष हूं, मैं पुरुष हूं? ख्याल में आया? घोकने की कोई आवश्यकता नहीं, मान्यता में सही बात होनी चाहिये। अब आगे बढ़ते हैं। हम देख रहे थे आस्रवतत्त्व संबंधी जो विपरीत मान्यता है, तो क्या हो गया यह जीव के जो विभावभाव हैं उन विभावभावों को वह अपना स्वरूप है ऐसा मान रहा है, यह मान्यता ही मिथ्यात्व भरी है। यह स्वभाव के विरुद्ध जो भाव है जिसको हम कह रहे हैं कि विभावभाव है और उसरूप मैं हूं ऐसा मानना यह मिथ्या मान्यता है। अब हमने यह भी देखा था कि यहां पर इसतरह कहा गया था कि 'आस्रव दु:खकार घने रे, बुधिवंत तिन्हें निरवेरे' यानी आस्रव जो हैं वे दु:खस्वरूप हैं, वर्तमान में हमें दु:ख देनेवाले हैं और भविष्य में भी दु:ख देंगे। तो वह दु:खकार यानी दु:ख को करनेवाले ही है। ऐसा जब वह जीव कह रहा है, तो आगे बताते हैं कि जो बुद्धिवंत है यानी जो सम्यग्दृष्टि हैं, सम्यग्ज्ञानी हैं, वे उनसे दूर होते हैं; दूर से ही उनको टालते हैं; निरवेरे - उनका निवारण करते हैं।

अब कह रहे हैं वास्तविक दु:ख का कारण मोह-राग-द्वेष है, परंतु अज्ञानी संयोगों को, परपदार्थों को दु:ख का कारण मानता है। संयोग जो हैं वे दु:खकारक नहीं हैं लेकिन संयोगों के प्रति जीव का उनमें जो अपनत्व है, ममत्व है, एकत्व है, कर्तृत्व है वह दु:ख का कारण है। ख्याल में आया? तो कह रहे हैं ये दु:ख के कारण हैं। किसको? जो परपदार्थों को या संयोंगों को अपना मानकर यह राग-द्वेष की श्रृंखला चालू रखता है। अभी कहते हैं

देखो, राग-द्वेष-मोह इन सबको हमने क्या कहा? एक नाम दिया आस्रव; तो राग-मोह-द्वेष यह आस्रव विभाव है, उनको अपना स्वभाव मानता है। देखो, हम दूसरों को कहते हैं कि यह है न यह कुलभूषण बहुत क्रोधी है। यह बच्चा है बहुत डरपोक है, बोलने में भी आहिस्ता-आहिस्ता बोलता है यानी भयग्रस्त है। तो हमने दूसरे को क्रोधी, मानी, लोभी ऐसा माना। तो मैं स्वयं भी इसमें से कोई एक हूं ऐसा वह मानता है। नहीं मानते हैं? देखो, मैं आपको बताता हूं।

बहुत दिन बाद हम एक दूसरे को मिले। तो हमने पूछा, साहब जय जिनेन्द्र! कैसे हैं आप? आपकी तबियत-पानी तो ठीक है? कोई तकलीफ तो नहीं है? यानी तुम शरीर हो और तुम ठीकठाक हो कि नहीं? तो मैंने भी अपनेको मैं स्वयं शरीररूप हूं, ऐसा माना है कि नहीं? और जो जीव सम्यग्दृष्टि है, वह सामनेवाले जीव को ऐसा पूछेगा कि आपने आखिर में कब आत्मानुभव किया था? यह बात मैं मेरी नहीं बता रहा हूं रहस्यपूर्ण चिट्ठी में पंडित टोडरमलजी ने यह बात लिखी है, ख्याल में आया? उसके निचले दर्जे का जो कोई होगा, वह पूछेगा, अभी आपका कौनसा स्वाध्याय चल रहा है? ऐसा पूछेंगे और जो बिलकुल ऐसा, केम छो? सातामां छो ने? ऐसा बोलते हैं न? हं, सातामां छो यानी तबियत-पानी अच्छी तो है न? कोई तकलीफ तो नहीं न, दुःख तो नहीं न? तो यह इटसेल्फ बताता है कि मेरी भी मान्यता है कि मैं शरीररूप हूं और मैं आपको ऐसा ही प्रश्न पूछ रहा हूं कि तुम भी शरीररूप हो न? हो न यानी है ही, ऐसा। तो कह रहे हैं कि राग-द्वेष-मोह यह विभाव है उसको अपना स्वभाव मानता है।

उसकी बोलचाल में भी यह पता लगता है कि उसकी मान्यता क्या हो सकती है। यह जीव शरीर और आत्मा एक है मानता है एक बात, दूसरी बात–रागादि और आत्मा भिन्न है परंतु राग-द्वेष और ज्ञान, इनमें एकत्व मानता है। यही बात यहां पर हमने यहां देखी थी। अपना स्वभाव तो; ज्ञान-दर्शनस्वरूप है। लेकिन ये जो विभावभाव हैं, क्रोधादि-रागादि जो हैं वे मेरे हैं, मैं उनका कर्ता हूं, मैं उनका भोक्ता हूं, ऐसा यह मानता है। तीसरी बात हमने यह देखी थी लेकिन अभी हम इसको समराइज कर रहे हैं। रागादि यानी आस्रव, दुःखरूप हैं, बंध के कारण एवं भविष्यकाल में भी दुःख के हेतु हैं यानी कारण हैं। परंतु उन्हें सुखरूप मानता है। यह भी हमने देखा था कि अधिक से अधिक जीव क्या करता है?

देखो, आपको अन्य धर्मीय लोगों के अगर कोई प्रिन्सिपल्स जिसको हम कहते हैं सिद्धान्त मालूम हो तो उस पर से यही बात निश्चित होती है कि वे आपको पाप से छुड़ाकर, पुण्य तक लाते हैं और पुण्य तक लाकर स्वर्ग को ले जाना चाहते हैं और ऐसा मानते हैं, स्वर्ग में ही वैकुंठ है और वहीं से वे मोक्ष को जायेंगे। अरे! अन्य की तो बात छोड़ो, आपने ख्रिश्चॅनिटि का अभ्यास किया होगा तो उनके भी टेन कमांडमेन्ट्स हैं। उनके भगवान ने वे टेन कमांडमेन्ट्स यानी दस ऑडर्स दिये हैं। 'लव्ह दाय नेबर अॅज दाउ लव्हेस्ट दाउसेल्फ' यह उनका दस में से एक कमांड है। लव्ह दाउ नेबर यानी तुम तुम्हारे नेबर-पड़ोसी के साथ प्रेम करो। अॅज दाउ लव्हेस्ट दाउसेल्फ यानी अॅज यु लव्ह युवरसेल्फ यानी लव्ह दाउ नेबर अॅज दाउ लव्हेस्ट दाउसेल्फ। तो यहां क्या कह रहे हैं कि तुम दूसरे से झगड़ा मत करो। दूसरे से क्रोध मत करो, प्रेम से रहो। ऑण्ड प्रेज दाय लॉर्ड यानी क्या? भगवान की प्रेज-स्तुति करो, उसको खुश करो।

तो यह क्या धर्म है? यह तो अभी राग में अटका है, आस्रव में अटका है और आस्रव करना चाहिये ऐसा यहां बता रहा है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं यह तो मैंने एक सॅम्पल दिखाया है, आप जितने भी धर्मों के प्रिन्सिपल्स निकालो। तो सबमें आपको पाप से छुड़ाकर पुण्य तक लाकर खड़ा करते हैं लेकिन जैनदर्शन ही एक ऐसा दर्शन है, वह कहता है तू तो पाप परिणाम और पुण्य परिणाम इन दोनों से भिन्न है। इन दोनों से तू न्यारा है। वह तो एक समयमात्र की पर्याय तेरेमें विद्यमान है; लेकिन तू तो पर्याय जितना नहीं है, तू तो त्रिकाली अनादिअनंत ऐसा शुद्धस्वभावी आत्मा है। तो फिर एक प्रश्न खड़ा हुआ था जिसका मैंने उत्तर दिया था। फिर भी अभी यह प्रश्न आया है कि आत्मा शुद्ध है, त्रिकाल शुद्ध है, तो उसमें से निकलनेवाली पर्याय अशुद्ध क्यों? ऐसा प्रश्न था न किसीका? आपका ही था? अच्छा! तो यहां पर ऐसा कहते हैं ऐसा नियम हमने देखा था, सुनना हो, कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कोई परिणमन नहीं करता यानी कुछ नहीं करता जिसको हम कहेंगे। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का परिणमन नहीं करता, यह तो हमने दो भिन्न द्रव्यों की बात देखी है। लेकिन एक द्रव्य में जो अनेक गुण हैं, उन अनेक गुणों में से एक गुण दूसरे गुण का कार्य नहीं करेगा। ज्ञान गुण केवल जानना-जाननारूप कार्य करेगा, वह मानना-माननावाला काम नहीं करेगा। स्वरूप में स्थिरता होना यह उसका काम नहीं है। ज्ञान क्या करेगा? तो जानेगा-जानेगा-जानेगा। वैसे कहते हैं एक गुण दूसरे गुण का कार्य नहीं करता है

और एक पर्याय दूसरी पर्याय का काम नहीं करती है। यह तो हमने प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव में देखा है।

यहां कह रहे हैं कि सजातीय यानी गुण-गुण का कार्य न करें, पर्याय पर्याय का कार्य न करें तो द्रव्य पर्याय का कार्य करें यह भी बात है नहीं। ऐसी अनंत स्वतंत्रता इस विश्व में प्रत्येक द्रव्य-गुण-पर्याय में है। तो पर्याय जो उत्पन्न होती है, उसका भी जन्मक्षण है। यानी कैसा? जिसको हम देखेंगे निमित्त-उपादान की भाषा में, तो अनंतरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय का व्यय जब होता है तब तत् समय की योग्यता से पर्याय उत्पन्न होती है। इसीलिये वहां उसका जो अशुद्ध उपादान है तो वह अशुद्धरूप से परिणमेगी। शुद्ध उपादान होगा तो स्वभावरूप शुद्धरूप से परिणमेगी। तो आपका जो प्रश्न था कि पर्याय अशुद्ध क्यों? तो तत् समय की योग्यता यही एक उसका उत्तर है। देखो, ऐसी अनंत स्वतंत्रता विश्व में है, ऐसा स्वरूप है और हम स्वयं को सिकंदर-ए-आझम मानते हैं कि मैं जगत को परिणमाउंगा। तालिबान क्या मानता है? और हमारा बुश? सबको ले लो न। ख्याल में आया? यह अन्य का परिणमन कराने का इस जीव का जो कोई कर्तृत्व का अहंकार है वह जब तक नहीं जायेगा तब तक मिथ्यात्व तो रहेगा ही और हम कौनसे कम हैं? हमने अपने बच्चों का पालन पोषण किया, हमने हमारे समाज में अपना एक स्थान उपस्थित किया, सब समाज मुझे मानता है। क्यों? साहब, मैंने उनकी ऐसी सेवा की है ऐसा हम व्यर्थ ही मानते हैं। जिनेन्द्र भगवान कहते हैं तू अंगुली को हिला नहीं सकता है। अभी इसको आप क्या बोलते हैं? गुजराती शब्द तो मुझे मालूम हैं; पापण कहेवाय ने बेन? आयलिड-आंखनी पापण; डोळ्यांची पापणी तुम्हारी मराठी में। उसको भी तू नहीं हिला सकता बोलो। क्यों? अरे! वह तो पुद्गल है और पुद्गल का कार्य तू करें? क्योंकि तेरेमें और पुद्गल में अत्यंताभाव है, ख्याल में आया? हमें वस्तुस्वरूप समझना है।

तो अभी हम क्या देख रहे हैं? रागादि जो हैं वे आस्रव दुःखरूप हैं, बंध के कारण हैं और भविष्यकाल में भी दुःख के हेतु हैं परंतु उन्हें सुखरूप मानता है, इसलिये वह चाहता है कि अच्छे भाव करे। मेरेसे अभी किसीने पूछा था, मैं भूल गया कौन पूछ रहे थे। मरण के समय हम कैसे भाव रखें, तो हमें अच्छी गति मिले? अच्छा आयुबंध हो जाये? यानी इस जीव को आयुबंध करना पसंद है। जिसको एक भव की वांछा है उसके अभिप्राय में

अनंत भवों की वांछा दबी हुयी है, ख्याल में आया? तो कहते हैं यह राग वगैरह परिणाम जो हैं, उन्हें सुखरूप मानता है। तो राग को सुखरूप मानता है, द्वेष को दु:खरूप मानता है उसमें भी गड़बड़ है। आगे, संयोग से मुझे दु:ख होता है, प्रतिकूलता मुझे क्रोध उत्पन्न कराती है ऐसा मानता है परंतु दु:ख का कारण आस्रव है इस बात को नहीं जानता। ये आस्रवतत्त्व संबंधी भूलें जो हो रही हैं इस जीव की अनादिकाल से उसका विवरण हम देख रहे हैं। स्वाभाविक है राग-द्वेष अपने लगते हैं तो उन्हें बुरा कैसे कह सकता है? क्या कहा? जिसको राग-द्वेष अच्छे लगते हैं तो जो अच्छा लगता है उसको छोड़ेगा कि नहीं?

देखो-देखो, जो राग-द्वेष अपने को अच्छे लगते हैं, तो उन राग-द्वेष को कैसे हटा देंगे? जो अपना लड़का है वह अपनी बराबर सुनता है बहुत आज्ञाकारी है, अपना बराबर ख्याल रखता है, तो हम उसको छोड़ेंगे कि नहीं छोड़ेंगे? उसको घर से बाहर निकालेंगे कि नहीं निकालेंगे? हां साहब, नहीं निकालेंगे न? तो वैसे ही राग जो हैं वे हमें अच्छे लगते हैं, द्वेष भी हमें अच्छे लगते हैं। नहीं तो ऐसे जो हमारे जयपुर में बॉम्ब फूटे न अभी, यह क्यों हुआ? कि द्वेष करनेवाले को भी उसमें सुख लगता है। तो कह रहे हैं जो राग-द्वेष अपने लगते हैं यानी अच्छे लगते हैं, तो उन्हें बुरा कैसे कह सकते हैं? मिथ्यादृष्टि शुभराग को सुखकर मानता है, भला मानता है। उससे स्वर्गादिक सुख मिलेगा, इसलिये शुभराग उसे अच्छा लगता है। परंतु बंध का कारण सुखकर कैसे हो सकता है?

इस विपरीत मान्यता का वर्णन छहढाला में इसतरह किया है। 'रागादि प्रकट ये दु:ख देन तिनही को सेवत गिनत चैन'। क्या कहा? फिर से। यह रागादि कैसे हैं? प्रकट यानी ऑब्व्हीअसली - स्पष्टत: दु:ख देनेवाले हैं और यह क्या कर रहा है। तिनही को सेवत यानी उनको करते वक्त, सेवन करना यानी क्या? पीना नहीं, राग-द्वेष करते रहना यानी उसकी सेवा करना या सेवन करना और उसको क्या मानते हैं? गिनत चैन। उसमें अपने को सुखी मानता है। यह आस्रवतत्त्व संबंधी उस जीव की भूल है। अब आगे। आस्रवतत्त्व के बाद कौनसा तत्त्व हमने देखा था? रितु आपको याद है? आस्रवतत्त्व के बाद कौनसा तत्त्व देखा था? *श्रोता: बंध।* बंधतत्त्व। तो अभी इस जीव की बंधतत्त्व संबंधी जो विपरीत मान्यता है यह कब से है? हां जी। *श्रोता: अनादिकाल से।* अनादिकाल से। अच्छा, तो देखो, यहां पर भी पहले कोटेशन दिया है। 'शुभ-अशुभ बंध के फल मंझार, रति-अरति करे निजपद

विसार' क्या कह रहे हैं? यह जो है शुभ परिणाम, वह भी बंध का कारण है; अशुभ भी बंध का कारण है और उनके जो फल हैं, जो शुभ के फल में वह रति करता है यानी उसको अच्छा लगता है और जो अशुभ के फल हैं उसमें अरति करता है यानी शुभ को अच्छा मानता है और अशुभ को बुरा मानता है। इस गड़बड़ में क्या करता है? निजपद विसार। हमने क्या देखा था? भावबंध का अर्थ क्या देखा था? शुभाशुभ भावों में अटकना। तो वहां अटक बैठा है यानी शुभ-अशुभ, शुभ-अशुभ, शुभ-अशुभ परिणामों में ही वह पूरा अपना समय व्यतीत करता है। तो अपने स्वरूप का अनुभव कब कर सकेगा? तो कहते हैं निजपद विसार। निजपद यानी अपना स्वपद यानी स्व-स्वभाव, उसको भूल जाता है। तो अटका कहां है? शुभभाव करे या अशुभभाव करें। तो कहते हैं जीव को जो अनुकूल संयोग मिलते हैं वह पुण्यकर्म के उदय से और प्रतिकूल संयोग मिलते हैं वह पाप कर्म के उदय से मिलते हैं। यह तो निमित्त का कथन है, ख्याल में आया? क्योंकि हमने कौनसा देखा है? कि यह जो संयोग हैं वे तो आहारवर्गणा की निर्माण की हुयी बात है और कर्म हैं वह कार्माणवर्गणा का है। तो दो वर्गणाओं में कौनसा अभाव है? जोर से बोलना बेटा। प्रागभाव है या प्रध्वंसाभाव है? कौन बतायेगा? शमाजी आप तो थक गयी होगी? हां, अन्योन्याभाव। तुमने बोला था, पर कॉन्फिडन्स नहीं था। तो इधर आने के पहले नाश्ता पानी करके आना बेटा! तो असल में बात क्या है?

एक वर्गणा दूसरी वर्गणा का कार्य नहीं कर सकती क्योंकि दो वर्गणाओं में अन्योन्याभाव है, ख्याल में आया? जो वर्गणायें इटसेल्फ इज ए स्कंध और स्कंध यह पर्याय है, तो एक पुद्‌गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्‌गलद्रव्य की वर्तमान में, जो स्कंध पर्याय है न, उसमें अभाव है तो वह अन्योन्याभाव है लेकिन निमित्त का कथन ऐसा ही होगा। क्या कह रहे हैं? कि जो अनुकूल संयोग मिलते हैं, वे पुण्यकर्म के उदय से मिलते हैं। लेकिन हमें अंतरंग में उसका यथार्थ अर्थ भासित होगा तो ऐसा मानना छोड़ देंगे। क्या कहा? जीव को अनुकूल संयोग मिलते हैं वे पुण्यकर्म के उदय से और प्रतिकूल संयोग मिलते हैं वे पापकर्म के उदय से मिलते हैं। जो जीव कर्म के उदय में सुख मानता है, वह पुण्यबंध को अच्छा मानता है क्योंकि फल तो अच्छा मिला न। पापकर्म के उदय से फल बुरा मिला तो क्या बोलता है अरे! साहब, तुम नहीं जानते हमने कौनसे भव में क्या पाप किया था तो हमें ऐसा खोटा-खोटा फल मिल रहा है। ऐसा बोलते हैं न लोग? मैं मेरी बात बताता हूं। मेरी सगी

मौसी उसकी शादी हुयी। अभी नाम-वाम मत पूछना हो कोई और उसके बाद ५-६ साल के बाद छोटी मौसी की शादी हुयी। तो हमारे नाना ने उसको दहेज़ में कुछ चीज़ दी। तो यह बड़ी जो मौसी थी न, उसके हजबंड अटककर बैठे। मेरे शादी में तुमने यह नहीं दिया, तुम्हारी लड़की ले जाओ यानी इसतरह से उस मौसी को बहुत तकलीफ़ दी। कभी भी उसको सुख से, चैन से खाना खाने नहीं मिला। खाने को बैठे तो उसको बोले यह काम करो। अरे! भाई खाकर करती हूं न, काम क्या है? कि अनाज साफ करना है। देखो, इसीतरह से उसको तकलीफ़ करें। बाद में वह पति भी बीमार रहा, उसकी बहुत सेवा की। क्या-क्या नहीं किया? बाद में पति मर गया तो बड़ा लड़का जो था, वह लड़का और उसकी बहू थी, वे दोनों मिलकर उसको ऐसे सताये, एक और छोटा लड़का था, उसके पास जावे तो वहां भी कोई उसको ठीक तरह से रखे नहीं। एक लड़की थी तो जमाई भी उसको रखे नहीं। ऐसी तकलीफ़-तकलीफ़-तकलीफ़। तो वह कहती थी दिनेश अरे! मैंने कौनसे कर्म बांधे कि इसका मुझे फल मिल रहा है? तो हमें तो पहले-पहले तो ऐसा लगता है कि कितना सच है–कितना सच है। अरे! सच कुछ नहीं है, कर्म मुझे तकलीफ़ दे ही नहीं सकते। क्यों? सवाईभाई को नक्की नहीं हो रहा है? भाई, कर्म में और मेरेमें अत्यंताभाव है। तो मैं क्या करूं, रोऊं नहीं तो क्या तुम्हारे सामने बैठकर हसूं? बिलकुल नहीं। मैं ज्ञानस्वभावी आत्मा हूं ऐसा मानकर, जानकर उसीमें लीन होने का प्रयत्न कर, ख्याल में आया?

पानी में पड़े बिना तैरने को नहीं आता। यह जो स्विमिंग पूल के बाहर खड़े रहकर बोलनेवाले तो बहुत मिलते हैं। लेकिन पानी में गिरेंगे – अरे! तू मिथ्यात्व में है, मिथ्यात्व अवस्था में ही तुझे सम्यक्त्व प्राप्त होनेवाला है। जब तुझे ऐसे प्रतिकूल या अनुकूल संयोग हैं, उससे तेरा लेना-देना कुछ नहीं है। लेकिन हम तो अनुकूल संयोग आवे तो उसमें तो इतने हर्षित हो जाते हैं, इतने उसमें सुख मानते हैं और यह फिर याद आता है कि यह क्यों मिला? तो मैंने पुण्यकर्म किया था। चलो, इस दफे भी करेंगे। चलो, आपको दस लाख रुपया हमने भेंट दिया। जाओ, लेकिन एक काम करना हो, क्या? हमारा नाम लिखना उधर। तो केवल दस लाख रुपया देना बात अलग है और दस लाख का नाम लिखवाना बात अलग है। तो वह जो फल मिलना था उसमें भी कटौती हो गयी। देखो, बात ऐसी हुयी, मैं सच बात कहता हूं हो। आज नहीं, बीस-पच्चीस साल पहले की बात है। एक शिबिर में

हम गये थे यह तुम्हारा गांव है न कौनसा भाई? वाशीम में ही शिबिर लगा था, याद है? इ.स. १९७९ में, अर्पलजी बात सच हैं न? ७९ में लगा था न? अब आगे की सच बात मैं बताता हूं। तो वहां सब लोग आते थे तो एक भाई भी आये। उन्होंने कहा – देखो साहब, मैं तो कहीं किसीका मुफ्त में खाना नहीं खाना चाहता हूं। अच्छा! बहुत अच्छी बात है साहब। तो मैंने गुप्तदान बोलकर वहां सौ रुपये दिये। यह आज से उनतीस साल पहले की बात है। उस जमाने के सौ रुपये आज के मान लो हजार रुपया या पांच हजार रुपया, जो भी होता हो। तो वे कहने लगे मैंने उनको बताया, गुप्तदान लिखना, मेरा नाम तक मत लिखना। मैंने कहा भला माणस (भले आदमी), तूने गुप्तदान दिया है तो मुझे क्यों बता रहा है? तो वह गुप्तदान है कि नहीं? यह नक्की करने का है हमको। ख्याल में आया?

लेकिन हम ऐसा मानते हैं कि हम शुभभाव करेंगे तो हमको अनुकूल संयोग मिलेंगे और अशुभभाव करेंगे तो प्रतिकूल संयोग मिलेंगे। इसलिये शुभ अच्छा और अशुभ खोटा और फिर उससे आगे मानते हैं कि कर्म हमको सताते हैं, कर्म हमको अच्छा रखते हैं, सुखी रखते हैं। तो यह क्या कह रहे हैं? यह सब क्या है? ये जो अच्छे संयोग हैं वे पुण्यकर्म के उदय से और प्रतिकूल संयोग मिलते हैं वे पापकर्म के उदय से मिलते हैं। जो जीव कर्म के उदय में सुख मानता है वह पुण्यबंध को अच्छा मानता है। जिसे पुण्य के फल की रुचि है उसे पुण्य का बंध भी अच्छा लगता है और जिसे बंधन में सुख लगता है उसको मोक्ष के बारे में कैसा भाव रहेगा? द्वेष लगेगा। क्या कहते हैं? कहते हैं जिसे बंधन में सुख लगता है उसकी मान्यता विपरीत है यह बताने की आवश्यकता नहीं है। संयोग तो परपदार्थ हैं, उनमें इष्ट-अनिष्टपना की कल्पना करना यही मिथ्यात्व है। आस्रवों से कर्म का बंध होता है। यह कर्म उदय में आने पर, उसके फलस्वरूप आत्मा में ज्ञान-दर्शन-वीर्य की हीनाधिकता होती है। यानी ज्ञानावरण कर्म का उदय बहुत स्ट्राँग होगा, तो यह ज्ञान का क्षयोपशम, ज्ञान का उघाड़ कम होगा। उसीतरह दर्शनावरण कर्म का उदय अधिक है तो दर्शनगुण का परिणमन जो हो रहा है वह भी हीनरूप से होगा। वीर्य में भी ऐसा ही लेना।

तो कहते हैं कर्म का उदय आने पर उसके फलस्वरूप आत्मा में ज्ञान-दर्शन-वीर्य की हीनाधिकता होती है। कम आवरण होगा तो ज्ञान का उघाड अधिक होगा; अधिक आवरण होगा तो ज्ञान हीन होगा; मोह-राग-द्वेषरूप परिणमन होता है। कर्म के उदय के कारण से, बाह्य में सुख-दुःख के संयोग तथा विशिष्ट प्रकार के शरीर का संयोग मिलता

है, इन सबका मूल कारण कर्म है परंतु वह तो सूक्ष्म है दिखता नहीं। यह जीव इन संयोगों का कर्ता आप स्वयं है अथवा ईश्वर है अथवा भवितव्य ऐसा ही है ऐसा मानकर बंधतत्त्व संबंधी भूल करता है। यह विपरीत मान्यता है। देखो न, जिसकी एक तत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता होती है उसकी सातों तत्त्वों संबंधी मान्यता विपरीत हो जाती है। यहां क्या बताना चाहते हैं? कोई जीव एक तत्त्व संबंधी भूल कर रहा है तो उसको सभी तत्त्वों के संबंध में भूल होती ही है। अभी कह रहे हैं अपने को पहचान कर अपने को सुखी बनना है यही हमारा ध्येय है। सच देखा जाये तो मैं ज्ञान और आनंद स्वभाव से परिपूर्ण हूं ऐसा जानना है क्योंकि सुख बाहर से प्राप्त नहीं करना है लेकिन जो स्वयं सुखमय है उस स्व को जानते ही सुख की अनुभूति होनेवाली है। आज तक झूठी कल्पना करके कल्पना में ही हम सुख-दुःख मानते आ रहे हैं। वह झूठी कल्पना अर्थात् विपरीत मान्यता किसप्रकार है इस बात को हमने देखा है और अब आगे भी देखेंगे।

अब हमने बंधतत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता का स्वरूप देखा। अभी संवरतत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता देखेंगे संवर यानी क्या? हां जी? *श्रोता: कर्मों का आना रुक जाना।* कर्मों का आना रुक जाना। यह तो द्रव्यसंवर की बात की और भावसंवर की? हां बोलो? *श्रोता: शुद्धि की उत्पत्ति।* शुद्धि की उत्पत्ति, बहुत अच्छा! तो अभी क्या मान रहे हैं? उसको भी देखते हैं। इस जीव की अनादिकालीन विपरीत मान्यता दो तत्त्वों, चार तत्त्वों संबंधी तो विशेषरूप से चल रही है। वैसे तो जिसकी एक तत्त्व संबंधी मान्यता में गलती हो रही है वह सभी तत्त्वों संबंधी गलती कर रहा है यह पक्का है। लेकिन हमेशा जीव-अजीवतत्त्व संबंधी बहुत घोटाले होते हैं। ऐसे जोड़ी में, क्या कह रहे हैं – आस्रव और संवरतत्त्व संबंधी भी भूले होती हैं यानी आस्रवतत्त्व को संवरतत्त्व मानना यह कौनसे तत्त्व संबंधी भूल है? हां, जैसे नींबू और ककड़ी में हमने देखा था, दोनों। वैसे जो आस्रव है वह संवर का कारण मानना। संवर यानी क्या? शुद्धि की उत्पत्ति का कारण मानना। शुद्धि की उत्पत्ति का कारण यानी क्या? स्वरूप में स्थिरता का कारण मानना। आस्रवतत्त्व हमने किसको कहा? रागभाव को कहा। तो रागभाव करने से धर्म होगा, शुद्धि की उत्पत्ति होगी यह मानना कितना गलत है और यही बात हम अनादि से करते आये हैं। ख्याल में आया? इसलिये सात तत्त्वों को यथार्थत: जानकर अगर हमारे से इसमें से कोई भूल होती है तो उसको टालना यही अपना कार्य है। यही अपना प्रयोजनभूत काम है।

तो यहां क्या कह रहे हैं? देखो, आस्रव का अभाव ही संवर है; अर्थात् मोह-राग-द्वेष का उत्पन्न न होना संवर है; कर्मों का आना रुकना संवर है। तो यह पहले मोह-राग-द्वेष का उत्पन्न न होना यह भी नास्ति से संवर का कथन है और अस्ति से क्या है? शुद्धि की उत्पत्ति होना यह भावसंवर है। देखो, संवर जब होता है तब तीन बातें ॲट अ टाइम एक समय में एक साथ होती हैं। कौन-कौनसी तीन बातें होती हैं? तो कह रहे हैं कि मोह-राग-द्वेषरूपी जो आस्रव है उनका आना रुक जाता है; और क्या होता है? नये कर्म जो आ रहे थे, अभी यहां आस्रव ही नहीं हो रहा है, तो कर्मों की भी पैदाइश नहीं होती यानी वह आते नहीं, उनका आना भी रुक जाता है; और तीसरी बात क्या होती है? कि यह जीव स्वरूप में गुप्त हो जाता है तो उसके शुद्धि की उत्पत्ति होती है। ये तीन बातें संवर में एक साथ होती हैं। एक अस्ति से कथन है कि शुद्धि की उत्पत्ति, नास्ति का कथन है कि आस्रव बंद हो जाते हैं यानी मोह-राग-द्वेष के परिणाम बंद होते हैं और द्रव्यास्रव की बात करनी है तो नये कर्म बंधना रुक जाता है। ये तीन बातें ख्याल में आ गयी? सभी, इतने शांति से बैठे हैं कि कोई कहता नहीं कि बात समझ में आयी या नहीं आयी।

चलो, क्या कह रहे हैं? देखो, फिर से, आस्रवों का अभाव ही संवर है इसका ही अर्थ क्या है? मोह-राग-द्वेष का उत्पन्न न होना यह संवर की एक बात हुयी। कर्मों का आना रुक जाना वह संवर की दूसरी बात है। यह तो नास्ति का कथन हुआ अस्ति का कथन करना हो तो शुद्धता अर्थात् वीतरागता का उत्पन्न होना संवर है। उस समय अतीन्द्रिय ज्ञान और अतीन्द्रिय आनंद की प्राप्ति होती है। इसका अर्थ यह हुआ कि संवर में आत्मिक सुख का संवेदन होता है। संवेदन यानी अनुभवन, एक्स्पीरीअन्स। किसका? अतीन्द्रिय आनंद का क्योंकि अतीन्द्रिय ज्ञान और अतीन्द्रिय आनंद इनका अविनाभावी संबंध है। तो यह अविनाभावी संबंध यानी क्या देखा था हमने? हां-हां कौन बता रहे हैं? *श्रोता: एक होगा तो दूसरा भी होगा।* अच्छा, लताबेन कह रही हैं, एक होगा तो दूसरा होगा ही होगा। तो इसमें एक कौनसा है? अतीन्द्रिय सुख। तो अतीन्द्रिय सुख है तो उसके साथ अतीन्द्रिय ज्ञान भी होगा। यह अतीन्द्रिय ज्ञान यानी क्या और इन्द्रिय ज्ञान यानी क्या? यह बात अगर हमारे ज्ञान में आ जाये तो यहां जो बात कहना चाहते हैं वह बात सहजरूप से हमारे ज्ञान में आ सकती है।

देखो, पहले तो मतिज्ञान और श्रुतज्ञान जो होता है, तो हम मतिज्ञान की बात करते हैं। तो मतिज्ञान में हमने देखा था कि वहां मन या पांच इन्द्रियों में से कोई एक इन्द्रिय या पांचों इन्द्रिय – जिसकी जितनी इन्द्रियां होगी वे ज्ञान में निमित्त होती हैं। तो हमें जब-जब ज्ञान होता है तो इन्द्रियां यह द्वार है, माध्यम है, मीडिया है क्योंकि मतिज्ञान और श्रुतज्ञान यह परोक्ष ज्ञान है, ख्याल में आया? यानी क्या देखा हमने? मतिज्ञान होने में इन्द्रिय होना आवश्यक है। इन्द्रिय से ज्ञान नहीं होता है। फिर से लेना – इसके लिये हमने वह भी देखा था, हम कमरे के बाहर देखना चाहते हैं तो दरवाजे में से हमें बाहर का दिखता है। तो दरवाजा देख रहा है कि हम देख रहे हैं? हम देख रहे हैं। है न! तो यहां देखना जो हो रहा है वह हमसे हो रहा है। लेकिन अगर द्वार नहीं होता पूरी दीवार होती, कहीं भी छिद्र वगैरह कुछ भी नहीं होता तो हमें बाहर का दिखता क्या? वैसे ही मतिज्ञान में पांच इन्द्रियां या जिसके एक इन्द्रिय है, वह एकेन्द्रिय जीव के एक इन्द्रिय यह ज्ञान में निमित्त है। तो उसको परोक्ष ज्ञान कहेंगे। लेकिन जब कोई जीव जो पंचेन्द्रिय संज्ञी जीव है ऐसा जीव अपने आत्मा का अनुभव करता है तो उस अनुभव में इन्द्रियां बिलकुल काम में नहीं आती।

इसलिये जब आत्मा का अनुभव होता है तब वह तो इन्द्रियातीत है। इन्द्रियातीत यानी इन्द्रियों के द्वारा आत्मा का अनुभव नहीं होता, वचनातीत यानी किसी भी वचन के द्वारा आत्मा के अनुभव का वर्णन कर सकें ऐसी बात नहीं है और नयातीत यानी नयज्ञान के द्वारा आत्मा का अनुभव नहीं हो सकता, अतीन्द्रिय ज्ञान के द्वारा ही आत्मा का अनुभव होता है। अतीन्द्रिय यानी जिसमें इन्द्रिय निमित्त नहीं हैं। जब कोई जीव अपने आत्मा का अनुभव करता है तो कौनसी इन्द्रिय उसमें काम आती है? एक भी नहीं। इसलिये वह जो ज्ञान है, किसका? स्व का जो ज्ञान है, अनुभव जो हो रहा है उसको अतीन्द्रिय ज्ञान कहेंगे। ख्याल में आया? वह जो अतीन्द्रिय ज्ञान है उसके साथ अविनाभावीरूप से अतीन्द्रिय सुख भी होता है। यहां यह बात बतायी कि अतीन्द्रिय सुख के साथ अतीन्द्रिय ज्ञान भी है। हम तो ऐसा समझे कि अतीन्द्रिय ज्ञान और अतीन्द्रिय सुख, इंग्लिश में बोलूंगा तो आपको अच्छी तरह से जल्दी समझ में आयेगा। दे गो हँड इन हँड यानी पहले ज्ञान होगा बाद में सुख होगा, ऐसा नहीं होगा या पहले सुख होगा बाद में ज्ञान होगा, ऐसा भी नहीं।

आगम में हम देखते हैं जो जीव अरिहंत अवस्था पाता है उसके चार बातें एक साथ

प्राप्त होती हैं। ये कौनसी होती हैं ? बहन आप जानती हैं? आपने बताया कि वे अनंतचतुष्टय की प्राप्ति करते हैं। तो यह अनंतचतुष्टय क्या होते हैं भाई? धीमंत, धीमंतभाई। *श्रोता: अनंतज्ञान।* अनंतज्ञान। *श्रोता: अनंतदर्शन।* अनंतदर्शन। *श्रोता: अनंतसुख।* अनंतसुख। *श्रोता: अनंतचारित्र।* अनंतचारित्र। हां, और ? *श्रोता: अनंतवीर्य।* तो पांच हो गये न भाई! चारित्र को हटा देंगे? अच्छा ठीक है। देखो-देखो, जब यह जीव स्वयं परिपूर्ण चारित्र प्राप्त करता है जिसको हम यथाख्यात चारित्र कहेंगे तो उस समय उसके कोई आकुलताजन्य कषाय रहते ही नहीं हैं। ख्याल में आया? तो अनाकुल अवस्था जो है उसको यहां सुख कहेंगे, तो उनको अतीन्द्रिय सुख यानी अनंतसुख है और अनंतज्ञान है। वह भी कैसा है? अतीन्द्रिय ज्ञान है। इन दोनों की परिपूर्णता हो जाती है तो उसे ही हम क्या कहते हैं? अनंतसुख, अनंतज्ञान और अनंतवीर्य आदि वह तो अभी उससे कन्सर्न नहीं है। तो हमने जो देखा था कि जब यह जीव इन्द्रिय से ज्ञान करता है तब तो वह कैसा होगा? दु:खी ही होगा भाई। लेकिन जब अतीन्द्रिय ज्ञान होगा यानी क्या? अपने स्वभाव का, स्वरूप का अनुभव करेगा तो उस समय उसके अतीन्द्रिय सुख भी होगा, ख्याल में आया? तो यहां हमने क्या देखा? ये दोनों अविनाभावी हैं। देखो, फिर से देखते हैं इसमें क्या लिखा है? कह रहे हैं संवर में आत्मिक सुख का संवेदन होता है। संवेदन यानी अनुभवन, एक्स्पीरिअन्स क्योंकि अतीन्द्रिय ज्ञान और अतीन्द्रिय आनंद इनका अविनाभावी संबंध है। अविनाभावी यानी क्या? एक है तो दूसरा होगा-होगा और होगा ही होगा।

अंतर्मग्न आत्मा में लीन रहनेवाले भावलिंगी संत आत्मा के प्रचुर आनंद में मग्न रहते हैं। परंतु अगर कोई ऐसा मानता होगा कि अरेरे! बिना कपड़े के सर्दी में, धूप में, बरसात में कितना कष्ट सहन करते होंगे बेचारे। कौन? मुनिराज। कैसे? बेचारे? और हम तो कपड़ा-वपड़ा पहनकर, ऊपर पंखा लगाकर सब बैठे हैं तो हम अबेचारे और वे बेचारे? अरे प्रभु! उनकी हालत जो है वे अतीन्द्रिय आनंद में इतने डूबे हुये हैं। क्यों? कि मैं शरीररूप नहीं हूं ऐसी उनकी श्रद्धा तो चौथे गुणस्थान में हुयी थी और सातवें गुणस्थान में तो चारित्र में यानी अपने स्वरूप में वे इतने मग्न हुये हैं कि यह शरीर तो मेरा है ही नहीं, साथ-साथ में ये कषाय भी मेरे नहीं हैं, इसका उन्होंने उग्रता से अनुभव भी किया है। तो शरीर पर ओले, शोले, पत्थर, पानी जो भी गिरे उससे मेरा कुछ भी होनेवाला नहीं है। ऐसा समझकर पारसनाथ मुनि ने, अपने स्वरूप में गुप्तता की और ऐसे उपसर्ग में उन्होंने

अंतर्मग्न होकर ऐसा पुरुषार्थ किया कि उनके केवलज्ञान हो गया और उसी समय वह उपसर्ग भी रुक गया। तो यह जो बात है और हम उनको कहते हैं बेचारे। बेचारे कैसे? उघाडा पगे चाले छे यानी क्या? नंगे पैर चलते हैं गर्मी में बेचारे और हम तो शूज पहनते हैं और क्या-क्या नहीं करते हैं। हमें ऐसा लगता है कि वे कितने कष्ट में है और इसका प्रूफ भी अपने आगमों में मिलता हैं कि हम मुनियों को वे कष्ट में हैं, दु:ख में हैं ऐसा मानते हैं यह आगम में बात आयी है।

आपको अगर मालूम होगा तो जब आदिनाथ मुनिराज थे यानी मुनिराज आदिनाथ, उन्होंने जब दीक्षा ली, छह महीने तो एक जगह तप किया। आहार के लिये निकले नहीं और उसके बाद उनके विकल्प हुआ कि आहार लेने निकलेंगे, तो आंकड़ी लेते हुये निकले। लेकिन उनको सात महीने और दस दिन आहार नहीं मिला। तो ये सात महीने और दस दिन तक रोज वे आहार लेने जाते थे। तो वहां की जनता, अरेरे! हमारे महाराज, हमारे राजा, तो उनको कपड़े देते थे भाई! कपड़े तो पहनो आप, ऐसा क्या कर रहे हैं? कोई जूते लाकर देते थे। अरे! यह नंगे पैर क्यों घूम रहे हैं? कोई तो कहता है मेरी कन्या से तुम विवाह करो। यह क्या कर रहे हैं? ऐसा शास्त्र में वचन आता है, भाई कथन आते हैं। तो इसका अर्थ क्या है? यह मुनिराज बेचारे? वह बेचारे थे? अरे! वे अपने स्वरूप में मग्न होते थे। छह महीने तक तो भोजन का विकल्प नहीं आया और बाद में विधिपूर्वक आहार नहीं मिला लेकिन हमें उनकी स्वरूप में जो लीनता थी उसका स्वरूप हमें पता नहीं है और हम हमारे बुद्धि के लेव्हल से, अपने अक्ल के तारे तोड़ते हुये ऐसा मानते हैं कि अरेरे! इनको कई उपसर्ग सहन करने पड़ते हैं। अरे, सहन नहीं करना पड़ता है, सहन करना तो दु:खरूप अवस्था है। वे तो अपने स्वरूप में ऐसे गुप्त हो जाते हैं कि उनको बाहर में मच्छर काट रहे हैं या शेर काट रहा है यह भी पता नहीं होता और पता होगा तो उसकी तरफ ध्यान भी नहीं देते हैं।

अपूर्व अवसर अेवो क्यारे आवशे कि सिंह आवे और मुझे काटकर खा ले। ऐसा कुछ है न याद नहीं मुझे, आप जानो उसमें, बोलते हैं न श्रीमद्जी। तो उनको क्या काले कुत्ते ने काटा था क्या? सिंह को काटने को बुलावे? अरे! स्वरूप में ऐसा मैं गुप्त हो जाऊं कि बाहर में जो होता हो सो होवे, उससे मेरा कोई लेना-देना है नहीं। ऐसे अतीन्द्रिय आनंद

में झूलनेवाले संत जो होते हैं, उनको यहां कोई कहते हैं कि बेचारे। तो वे बेचारे हैं या हम बेचारे इसकी सोच करने का वक्त अभी आ गया है। ख्याल में आया? तो यहां क्या बताते हैं, देखते हैं देखो-देखो। यहां कह रहे हैं कि अंतर्मग्न - आत्मा में लीन रहनेवाले भावलिंगी संत आत्मा के प्रचुर आनंद में मग्न रहते हैं। परंतु अगर कोई ऐसा मानता है कि अरेरे! बिना कपड़े के सर्दी में, धूप में, बरसात में कितना कष्ट सह रहे हैं बेचारे। तो वह उसकी संवरतत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता है। यह हमारी विपरीत मान्यता है इतना भी हमें ज्ञान नहीं है। इससे और दुर्दैव की, दुर्भाग्य की बात क्या हो सकती है?

देखो, हमारे यहां एक व्यक्ति आती थी, छोटी थी, बेटी थी, बच्ची थी। देखो भाई, हमें मुनि तो बनना नहीं है। हमको डायरेक्ट केवलज्ञान चाहिये। सुख भी नहीं चाहिये हो! हम सुख के लिये लालायित हैं ऐसा मत समझना, हमें तो केवलज्ञान चाहिये। मिलेगा कि नहीं मिलेगा सिर्फ केवलज्ञान? हमें अनंतसुख नहीं चाहिये। यहां तो कहते हैं दोनों अविनाभावी हैं। अरे! अनंतज्ञान, अनंतदर्शन यह तो हम फॉर एक्झाम्पल इन चार की बात कर रहे हैं। बाकी जो चार गुण हैं न, अघातिकर्म के नष्ट होने से उत्पन्न होनेवाले, जो कोई उन गुणों की परिपूर्ण अवस्थायें हैं उन चार को छोड़कर बाकी सर्व गुण स्वभावरूप से अनंत विकासवाले हो ही जाते हैं। लेकिन हम नाम किसका-किसका लें, ख्याल में आया न? तो वहां तो सिर्फ चार की बात कही – अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख, अनंतवीर्य। बात ख्याल में आती है? तो कोई कहता है कि हमें मुनि नहीं बनना है क्योंकि यह देखो इतना कष्ट कौन सहन करें? यानी वह कष्टदायक है ऐसा जो मानता है उसकी संवरतत्त्व संबंधी भूल है। वह यह भी नहीं जानता कि उसके अभी सम्यक्त्व होने के भी कोई चान्सेस हैं नहीं, मिथ्यात्व-मिथ्या मान्यता है क्योंकि सात तत्त्वों में से संवरतत्त्व संबंधी उसने भूल की है और यह भूल क्यों मान रहा है कि वह दु:खदायक है क्योंकि उसने अपने को शरीररूप माना है तो उसने जीवतत्त्व संबंधी और अजीवतत्त्व संबंधी भी भूल की है। बात ख्याल में आती है?

तो हमने तो देखा था कि एक तत्त्व संबंधी भूल होती है तो अन्य सभी तत्त्वों संबंधी भी भूल होती है। तो यह उसका ज्वलंत उदाहरण है। तो कहते हैं जो संवर को कष्टदायक, क्लेशकारक मानता होगा वह संवर प्रकट करेगा कैसे? आस्रव को जिसने हितरूप माना, वह आस्रव के अभाव को अर्थात् संवरतत्त्व को हितरूप नहीं मानेगा और आस्रव का अभाव

भी नहीं करेगा। संवर संबंधी और एक बड़ी भारी भूल देखने में आती है कि आस्रव करने से यानी शुभराग करने से संवर होगा यानी शुद्धि की उत्पत्ति होगी यानी धर्म होगा ऐसी मान्यता है। इनका क्या कहना है? कि राग करते-करते वीतरागता हो जायेगी, विकार करते-करते अविकारी दशा प्राप्त करेंगे, विभावभाव करते-करते स्वभावभाव को प्राप्त होंगे ऐसी मान्यता जो है तो कह रहे हैं वह संवरतत्त्व संबंधी भूल है। अभी हम कहां बैठते हैं? स्वयं की तरफ देखना हो! सब लोग मेरी तरफ मत देखना, इसमें हम कहां हैं? अब आगे क्या कह रहे हैं देखो, आस्रव करने से संवर होता है ऐसा मानना। शुभराग आस्रव है, व्रत, तप शुभराग है। महाव्रत यानी मुनियों के व्रत भी शुभराग हैं। परंतु उसे ही यदि संवर अथवा संवर का कारण माना जाये तो योग्य नहीं होगा। जिस कारण से आस्रव और बंध होता है उसी कारण से संवर होना मानना सर्वथा गलत है।

क्या कहना चाहते हैं? देखो, पहले तो उसने क्या माना? कि आस्रव करने से क्या? आस्रव करना यानी क्या करना? हां शुभ-अशुभ परिणाम करना, मोह-राग-द्वेष के परिणाम करना। अभी हम यह शुभ-अशुभ को ही सीमित रखते हैं; बार-बार हमें समझ में लेना चाहिये कि उसमें मिथ्यात्व भी इन्क्लूडेड है; राग-द्वेष भी इन्क्लूडेड हैं; यहां तो हम केवल शुभ-अशुभ की बात करेंगे। तो कहते हैं कि राग-द्वेष करने से, आस्रव करने से यानी शुभ-अशुभभाव करने से संवर होता है। यानी क्या होता है? शुद्धि की उत्पत्ति होती है ऐसा मानना। यहां तो कह रहे हैं शुभराग आस्रव है और व्रत, तप करना यह भी शुभराग है। निश्चय से देखा जाये तो व्रत और तप यह स्वरूप में रमणता है, लेकिन स्वरूप में रमणता करना यह तो जीव कायम नहीं करता है। तो वह जब स्वरूप में से बाहर निकलता है यानी सातवें गुणस्थान से छठे गुणस्थान में आता है तब उसके शुभराग ही रहते हैं। तो उन शुभ रागों से यानी यहां तो बताया कि जो मुनियों के जो अट्ठाईस मूलगुण हैं, वे अट्ठाईस मूलगुण को पालन करना यह मुनिपना नहीं है। ऐसा जब हम कहते हैं तो लोग हमारी तरफ आंखें बड़ी-बड़ी करके देखते हैं। अरे! भगवान वह तो शुभराग है और शुभराग मेरा स्वभाव है या विभाव है इस बात को हम नक्की करने के लिये दोपहर में पौने तीन बजे मिलते हैं।

बोलो, आदिनाथ भगवान की जय

५७. सात तत्त्वों संबंधी विपरीत मान्यता – ३

हम गये कुछ वक्त से प्रयोजनभूत सात तत्त्वों के बारे में जीवों की कैसी विपरीत मान्यता हो सकती है, होती है, हो रही है उस बात को देख रहे थे। हमने इसके पहले देखा था कि जो संवरतत्त्व है, जो वास्तव में सुखस्वरूप है, उस संवरतत्त्व को हमने दु:खस्वरूप माना है। तो जो दु:ख देनेवाला है या दु:खरूप है, उसको प्रकट करने का कौन प्रयत्न करेगा? ख्याल में आया? इसलिये कहते हैं संवरतत्त्व को दु:खस्वरूप है, ऐसा जो मानना है यह तो उसकी संवरतत्त्व के संबंध में विपरीत मान्यता है।

देखो, अब जो हमने देखा था कि मुनियों के महाव्रत आदि अठ्ठाईस मूलगुण पालन करने का जो शुभभाव है, वह तो संवर नहीं हो सकता । इसलिये यदि उसे संवर अथवा संवर का कारण माना जाये तो योग्य नहीं होगा। क्यों? कि जिस कारण से आस्रव और बंध होता है, उसी कारण से संवर होना मानना गलत है। क्या कह रहे हैं? देखो, यहां तो बता रहे हैं जिस कारण से यानी मिथ्यात्व के कारण आस्रव और बंध होता है; मोह के कारण बंध होता है; राग-द्वेष के कारण बंध होता है; उसीको संवर मानना अथवा उसीसे संवर होना माने तो वह बिलकुल गलत है। शुद्धोपयोग यानी आत्मलीनता यही संवर प्रकट करने का अर्थात् आस्रवों को रोकने का एकमात्र उपाय है। क्या कहना चाहते हैं कि हमारे में जो कषाय हो रहे हैं, बार-बार, कषाय हो रहे हैं न? तो कषाय हो क्यों रहे हैं? मिथ्यात्व के कारण। वह तो बात अलग है, लेकिन जो हम चाहते हैं न कि हमारे कषाय कम हो जायें, हमारे राग-द्वेष कम हो जायें तो कह रहे हैं, शुद्धोपयोग – इसीका अर्थ उन्होंने कहा है आत्मा में जो लीनता है, वही आस्रव को रोकने का एकमेव उपाय है। परंतु आज तक इस जीव को संवर का स्वरूप पता नहीं होने से और संवर आनंदमय होता है, इसका अनभुव न होने से यह मिथ्यादृष्टि जीव, संवर को कष्टदायक मानता है अथवा आस्रव यानी शुभराग जो है वह शुभराग करने से संवर होता है ऐसा मानता है। इसतरह से हमने जीव की संवरतत्त्व के बारे में जो मिथ्या मान्यता है उसकी बात देखी।

अभी इसके आगे हम निर्जरातत्त्व संबंधी मान्यता को देखते हैं। तो निर्जरा में क्या-क्या होता है इसको पहले हम जानने की कोशिश करेंगे। वहां जैसे हमने संवर में तीन बातों

को देखा था, वैसे ही यहां निर्जरा में भी तीन बातें एक साथ होती हैं। कौनसी बातें होती हैं? पहले तो संवर में शुद्धोपयोग शुरू होता है यानी शुद्धि की उत्पत्ति होती है। तो निर्जरा में क्या विशेषता होती है? तो कहते हैं वहां शुद्धि में वृद्धि होती है और क्या होता है? अशुद्धि की हानी होती है। हमें रागभाव जो हो रहा था वह रागभाव होना तो संवर में रुक गया था। अभी यहां क्या हो रहा है? तो कहते हैं कि जो रागभाव है, वह तो होना तो बंद हो गये हैं। लेकिन साथ-साथ में पूर्वबद्ध कर्म अभी अधिक प्रमाण में, हर समय में अधिक-अधिक प्रमाण में वे निर्जरित होते जाते हैं। तो क्या कहा? देखो। निर्जरा का स्वरूप देखते हुये पहले कहते हैं कि **इच्छा निरोधस्तप**: ऐसा कहा गया है और **तपसा निर्जरा च** ऐसा कहा गया है। इसका अर्थ क्या होता है? इच्छा का निरोध करना ही तप है। यानी क्या कहना चाहते हैं? हमें इच्छा हो गयी है और हम उसको दबा देते हैं। उसको निर्जरा नहीं कहते।

अरे! आज क्या है? आज तो अष्टमी है। तो आज हमें लीलोत्री नहीं लेनी चाहिये। इच्छा तो है, लेकिन खा नहीं सकते, क्यों? यहां हमारे देवलाली कँपस में कोई अष्टमी को लीलोत्री नहीं खाता है, तो इसलिये हम नहीं खाते हैं। तो हमने क्या किया? इच्छा को दबाया। देखो, हमने ऐसा निर्णय किया है कि आज उपवास करेंगे और उपवास करने का नक्की किया और उपवास, जिसको हम कहते हैं, पकड़ा। लेकिन, शाम को क्या हो गया? भूख तो लगने लगी और घर के सारे सदस्य भी भोजन करनेवाले हैं, तो उनके लिये कोई विशिष्ट चीज़ बन गयी जो हमें बहुत भाती है, और उसका सुगंध चालू हो गया, तो हमको लगा – अरे! आज मेरा उपवास है इसलिये मैं यह खा नहीं सकता। अगर उपवास नहीं होता तो मैं बहुत एन्जॉय करता। क्यों? तो कह रहे हैं यह इच्छाओं को दबा रहे हैं, तो यहां यह तो मैंने उदाहरण दिया है। ऑर्डिनरिलि तुम्हारी-हमारी जिंदगी में जो बातें बार-बार होती हैं उसकी बात कह रहे हैं। लेकिन यहां जो जीव सम्यग्दृष्टि हैं उनके बारे में कहा है **इच्छा निरोधस्तप**:, वास्तव में यह तो मुनियों की अपेक्षा से हम देखेंगे तो हमें बिलकुल जल्दी पता लगेगा कि ये क्या कहना चाहते हैं?

देखो, यहां कह रहे हैं कि तात्पर्य यह हुआ कि इच्छाओं का निरोध यानी इच्छाओं का अभाव यानी इच्छाओं का उत्पन्न ही न होना, इसको निर्जरा कहा है। यानी देखो हमने पहले क्या देखा था इच्छाओं को दबाना वह तप नहीं है। इच्छाओं का निरोध, निरोध यानी

इच्छा उत्पन्न ही नहीं होना। तो इच्छा उत्पन्न कब नहीं होगी? कि जब यह जीव स्वरूप में लीनता करेगा, स्वरूप में एकाग्र हो जायेगा तो सहज ही उनके कोई शुभोपयोग या अशुभोपयोग, यहां तो हम अशुभोपयोग की बात करेंगे उत्पन्न ही नहीं होगा तो यह इच्छा उत्पन्न होना, यह पंचेन्द्रिय की विषय भोगों की इच्छा उत्पन्न होना यह तो शुद्धोपयोग में पॉसिबल नहीं है। तो कहते हैं, वहां इच्छाओं का अभाव यानी उत्पन्न ही न होना उसीको निर्जरा कहते हैं; और निर्जरा भी सुखमय है। जैसे हमने देखा संवर भी सुखमय है। क्योंकि इच्छाओं का उत्पन्न होना यही दु:ख है, आकुलता है। जब जीव परपदार्थों को इष्ट-अनिष्ट मानता है, तब उनके ग्रहण-त्याग की इच्छा करता है। परंतु परपदार्थ तो इष्ट या अनिष्ट होते ही नहीं, परंतु मिथ्यात्व के कारण यह जीव उन्हें इष्ट-अनिष्ट मानता है। परपदार्थ इसके आधीन परिणमित नहीं होते क्योंकि वह स्वतंत्र वस्तु है। कदाचित् इसकी कोई इच्छा पूर्ण भी हो गयी तो भी निरंतर नवीन इच्छायें होती ही रहती हैं। क्या कह रहे हैं? एक इच्छा पूरी हुयी बाय चान्स, तो हमें नयी इच्छा तैयार होती है। फिर वह नयी पूरी हुयी तो और नयी इच्छा शुरू होती है। इसतरह कहते हैं कदाचित इसकी कोई इच्छा पूर्ण भी हो जाये तो भी निरंतर नयी-नयी इच्छायें होती ही रहती हैं और यह जीव निरंतर आकुलता का वेदन करता है।

पांच प्रकार के इन्द्रियों के विषयों की इच्छा; अभी यह अलग-अलग इच्छाओं का वर्णन कर रहे हैं। यहां क्या बताया है? पांच प्रकार की जो इन्द्रियां हैं उनके विषयों की इच्छा, यह इन्द्रियों के विषयों की इच्छा यानी समझ में आया निखिलभाई? देखो, यह हमारी रसना इन्द्रिय है, तो रसना इन्द्रिय का विषय क्या है? तो भिन्न-भिन्न खाने-पीने के पदार्थ जो हैं, वे उस रसनेन्द्रिय के विषय हैं। घ्राणेंन्द्रिय का विषय क्या है कि सुगंध जो है, जो हमें अच्छा लगता है और क्या कहते हैं? चक्षुइन्द्रिय का विषय क्या है? अच्छे-अच्छे सीन्स देखने हैं, जिनेन्द्र भगवान के दर्शन करने, ऐसे जो सारे कोई देखने की चीजें हो – अच्छी हो या बुरी लगती हो ये सारे क्या हैं? इन्द्रियों के विषय हैं। कर्णेन्द्रिय का विषय क्या है? सुमधुर संगीत है, जिनेन्द्र भगवान की वाणी है और अन्य भी लेना मैं तो दोनों कॉन्ट्रास्ट बातें बता रहा हूं आपको। क्योंकि, देखो बात ऐसी है कि जीवों की वैसी एक-एक विशेषता मैंने देखी है। हमारे एक मित्र है तो उसको और उसके पत्नी को गाना सुनने को बहुत अच्छा लगता है – क्लासिकल म्युझिक, तो बम्बई में कोई सूरदास सम्मेलन या ऐसा कोई संगीत सम्मेलन होता है। हें? *श्रोता: गुणीदास।* गुणीदास अच्छा! सूरदास नहीं, गुणीदास

सम्मेलन। तो वह हमको कहे कि चलो-चलो हम आपको ले चलते हैं। कोई अगला फर्स्ट सीट का कोई हजार रुपया-डेढ़ हजार रुपया कुछ लगता होगा। बोले, हम आपके टिकट निकालते हैं। हमको नहीं आना है भाई! हमें टाइम नहीं है क्योंकि वह तुम्हारा जो टाइम होगा वह हमारा स्वाध्याय का टाइम है, हम नहीं आयेंगे। तो फिर कुछ दिन के बाद हम उनको मिलने को गये। वह कहने लगा, अरे! क्या तुमने इतनी बढ़िया बात मिस की, आप उससे वंचित रह गये। क्या? अरे! ऐसा सुमधुर गाते थे वह फलां-फलां कोई यह गाता था वह गाता था, अभी नाम नहीं लूंगा। हमको तो वह संगीत सुनकर ऐसा लगता था कि मानो हमारा मोक्ष ही हो गया! क्या हो गया? पंचेन्द्रियों के विषयों को सेवन करते-करते इनको मोक्ष हो गया! ख्याल में आया? यानी यह कैसी एक-एक भूलभरी अंडरस्टँडिंग है। अभी तो हम निर्जरातत्त्व में अटके हैं, मोक्षतत्त्व संबंधी यह भूल है भाई! लेकिन यहां पंचेन्द्रिय के विषय क्या होते हैं यह समझने के लिये हम कोशिश कर रहे हैं। तो कहते हैं पांच प्रकार के इन्द्रियों के जो विषय हैं, उनकी इच्छा उत्पन्न होती है इसका मूल कारण क्या है? कि मिथ्यात्व है। क्योंकि इस विषयों को हम सेवन करेंगे तो हम बहुत सुखी होंगे ऐसा यह जीव मानता है।

अब कहते हैं दूसरी चार प्रकार की इच्छायें हैं वे कौनसी हैं? तो कहते हैं चार प्रकार की जो कषायें हैं, क्रोध, मान, माया, लोभ जो उत्पन्न होता है, उसका मूल कारण भी मिथ्यात्व है। बाह्य सामग्री में इष्ट-अनिष्ट की कल्पना होती है, उसका भी मूल कारण मिथ्यात्व है। मूल कारण मिथ्यात्व कायम होगा तो उसका कार्यरूप फल इच्छा, कषाय और इष्ट-अनिष्टपना होगा ही। मन की इच्छा और कषाय बाह्य में प्रकट न हो उसे दबाकर रखें यह उनके नाश का उपाय नहीं है। परंतु इच्छा और कषाय उत्पन्न ही न हो, ऐसा उपाय करना, यही सच्चा उपाय है। मूल कारण मिथ्यात्व को नष्ट करना यही सच्चा उपाय है। देखो, मैंने कुछ दिन पहले बताया था कि हमको लोग कहते हैं – तुम कितना क्रोध करते हो, क्रोध कम करो-कम करो और हम भी सोचते हैं कि क्रोध कम करें-कम करें। लेकिन क्रोध कम करना क्या अपने हाथ की बात है? उसका इलाज एक ही है कि स्वरूप में लीनता करें तो वहां ऑटोमॅटिकली अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ नष्ट होगा ही होगा। अन्यथा, कितना भी हम कषाय को क्यों न दबायें, वह क्रोध कम करने का सही तरीका-उपाय नहीं है।

देखो भाई, यह जो अनंतानुबंधी जाति का जो कषाय है न, वह कषाय चाहे जितना मंद क्यों न हो, सुनना हो! यह बहुत मार्के-महत्व की बात है। यहां पर यह कह रहे हैं, तीव्र कषाय होंगे तो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ और मंद कषाय होंगे तो दूसरे प्रकार के क्रोध, मान, माया, लोभ – ऐसा है नहीं। मिथ्यादृष्टि जीव के चाहे जितने मंद कषाय क्यों न हो वह अनंतानुबंधी होगा ही। देखो-देखो, गुरुदेवश्री तो बहुत बार फरमाते थे कि जो द्रव्यलिंगी मुनि है और उसके शरीर पर ऐसे ब्लेड से हम क्या करें, जख्म करें और उसके ऊपर नमक और मिर्च छिड़कें तब भी जिसके आंख का कोना भी लाल न हो; तो भी अगर उसे सम्यग्दर्शन नहीं है क्योंकि वह द्रव्यलिंगी मुनि है। इतने मंद कषाय कि सामनेवाले को कोई श्राप भी नहीं देवें, उनके प्रति कोई क्रोध भी ना करें। बिलकुल मंद कषाय हों, फिर भी उसके वे अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ हैं। तीव्रता या मंदता की अपेक्षा से यह क्रोध – अप्रत्याख्यानावरणवाला या अनंतानुबंधीवाला या संज्वलनवाला ऐसा भेद नहीं होता है। तो अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ कौनसे हैं? कि जिनके उदय में इस जीव को सम्यक्त्व नहीं हो रहा है वे क्रोध, मान, माया, लोभ जो हैं वे अनंतानुबंधी के हैं। यहां मंदता और तीव्रता की अपेक्षा से वह जाति नहीं बतायी है।

हमने क्या देखा था? शायद नहीं भूले हो तो दोबारा मैं आपको बताऊंगा कि जो कषाय सम्यक्त्व होने नहीं देते, वे हैं अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ। जो क्रोध, मान, माया, लोभ जीव को अणुव्रत धारण नहीं करने देते वे हैं अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ और जो जीव को अणुव्रत तो धारण करने देते हैं, यह तो भाई निमित्त-नैमित्तिक की बात है और कोई कर्म किसीको रोकता नहीं और कोई जीव कर्म बांधता नहीं, यह बात ध्यान में रखते हुये यह तो निमित्त का कथन है तो कह रहे हैं कि जो क्रोध, मान, माया, लोभ जीव को अणुव्रत धारण करने देते हैं लेकिन सकलव्रत धारण करने नहीं देते हैं वे प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ हैं। यानी जिनके प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ और संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ का उदय है, उसके महाव्रत नहीं हो सकते, उसके अणुव्रत होते हैं। लेकिन जो महाव्रतधारी जीव हैं, जो भावलिंगी संत हैं, उनके संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ हैं, तो वे सकलचारित्र की प्राप्ति कर रहे हैं। लेकिन जो संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ हैं वे यथाख्यातचारित्र की प्राप्ति नहीं होने देते। यह इनकी जाति ही ऐसी है। ख्याल में आया? तो यहां जो बात बताना चाहते हैं कि

हम इच्छाओं को दबा दें, कोई हमको ऐसे जोर से एक गाल पर तमाचा-चांटा मारे,तो दूसरा गाल आगे करें, वह बात यहां है नहीं। ख्याल में आया? उससे कोई अनंतानुबंधी आदि में फर्क पड़ जाये वह बात यहां बिलकुल है नहीं।

इसलिये क्या कह रहे हैं देखिये। इच्छा और कषायें उत्पन्न ही न हो ऐसा उपाय करना ही सच्चा उपाय है। मूल कारण मिथ्यात्व को नष्ट करना, यही सच्चा उपाय है। किसमें? कषायों में ओछप करने में। कर्म की अपेक्षा कथन करना हो, तो बंध का एकदेश यानी कुछ अंशों में अभाव होना इसे निर्जरा कहते हैं। यह एकदेश क्यों कहा, पूर्णदेश क्यों नहीं कहा? एकदेश यानी समझते हैं न – कुछ अंशों में, पार्शल। तो यहां कह रहे हैं कि बंध का एकदेश अभाव होना इसे निर्जरा कहते हैं। तो मेरा यह कहना है कि यहां एकदेश क्यों कहा? पूर्णदेश कहते तो क्या बिगड़ता था? बोलो त्रिशला। *श्रोता: पूर्णदेश अगर कहते तो उसको मोक्ष होता था।* आप कहती हैं पूर्णदेश कहते तो उसको मोक्ष होता था। किसको, लिखनेवाले को? हां, क्या प्रश्न है? *श्रोता: सातवें गुणस्थान।* जरा जोर से बोलना भैय्या। *श्रोता: सातवें गुणस्थान प्राप्त झाल्यावर सम्यग्दर्शन, आत्मानुभूति होते का?* हां आपका ऐसा कहना है, किसी जीव को सातवां गुणस्थान प्राप्त होने के बाद उसको सम्यग्दर्शन होगा क्या? तो कहते हैं, सम्यग्दर्शन हुये बिना या सम्यग्दर्शन साथ में होगा तो ही सातवां गुणस्थान होगा। समझना जरा; कोई जीव अनादि मिथ्यादृष्टि है, अनादिकालीन मिथ्यादृष्टि है वह ऐसा उग्र पुरुषार्थ करें कि वह तीन कषाय चौकड़ी का अभाव करके डायरेक्ट पहले गुणस्थान से सातवें गुणस्थान में जा सकता है। आप कह रहे हैं सातवां गुणस्थान प्राप्त होने के बाद उनको सम्यग्दर्शन होगा कि नहीं? बिलकुल नहीं। लेकिन उसमें एक कंडिशन ऐसी है कि वह जीव अठ्ठाईस मूलगुण पालन करना जो कहा है शास्त्रों में, वह आगम के अनुसार आगमोचित यानी आगम में उचित यानी जिस प्रकार से कहा गया है उसी प्रकार से अठ्ठाईस मूलगुण पालन करनेवाला, नग्न, द्रव्यलिंगी साधु होना चाहिये। द्रव्यलिंगी उन्हींको कहते हैं कि जो अठ्ठाईस मूलगुण यथोचित पालन कर रहे हैं और जिनके अठ्ठाईस मूलगुण का भी कुछ अता-पता नहीं वे तो द्रव्यलिंगी भी नहीं, द्रव्यलिंगाभास हैं, ख्याल में आया? तो यहां तो बात यह हो रही है कि वह बाद में नहीं, साथ में हो सकता है सातवां गुणस्थान और सम्यक्त्व। प्रोव्हाइडेड यह कंडिशन अभी हमने जो बतायी। लेकिन हम कपड़े पहने हुये हैं और हमको सातवां गुणस्थान हो जाये, तीन

काल में नहीं हो सकता है। देखो, सूत्रपाहुड में देखो, एक वस्त्र का धागा भी किसी के पास होगा, तो वह मुनि नहीं कहलायेगा। गुरुदेवश्री तो कितनी बार बोलते थे 'वस्त्रनो धागो जेनी पासे होय अे मुनि न होई शके', क्योंकि वहां तो श्वेतांबरों में तो सारे वस्त्रधारी ही मुनि हैं।

देखो भाई, बात तो ऐसी है तीन कषाय की चौकड़ी का अभाव जिनके वर्त रहा है, जो निष्परिग्रही हैं, निर्ग्रंथ अवस्था जिनकी है, जो अंदर से कषायों से नग्न हैं, हम-तुम पैसों से नग्न हो सकते हैं यानी भिखारी हो सकते हैं। तो कषायों से जो नग्न हैं उनकी बाह्य में शरीर की अवस्था नग्न ही होगी ऐसा सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। ख्याल में आया? तो आपका जो कहना है बाद में, बिलकुल नहीं, बाद में-वाद में कुछ नहीं, साथ में हो सकता है या पहले सम्यग्दृष्टि हो वह सातवें में मतलब चौथे से सातवें में जा सकता है। यह इसके लिये आपको थोड़ासा गुणस्थान का अभ्यास करना आवश्यक है और वह गुणस्थान का अभ्यास आप करेंगे तो ये बातें सहज पानी जैसी क्लिअर हो जाती हैं। निर्मल पानी कैसा है, एकदम क्रिस्टल क्लिअर रहता है। भाई! तत्त्वों का अभ्यास तो चाहिये। 'बे चार कलाक अभ्यास जोइअे' ऐसा बोलते थे न, क्या करें? अच्छा हो गया आपने प्रश्न पूछा ताकी यह बात क्लिअर हो गयी और किसीके मन में कुछ ऐसी बात झूंझती होगी उनको भी पता लगे कि क्या है। देखो भैय्या, कोई भी जीव ऊपर के गुणस्थान में चढ़ता है तो वह शुद्धोपयोग में ही चढ़ता है। शुभोपयोग से कोई उपर का गुणस्थान नहीं होता है। शुभोपयोग से अगर ऊपर के गुणस्थान में जाता तो शुद्धोपयोग की क्या आवश्यकता है? करो न शुभभाव। यहां बंध भी हो रहा है और वहां ऊपर के गुणस्थान भी होवे, ऐसी बात नहीं है। अच्छा! अब आगे बढ़ेंगे। मैं समझता हूं कि आपके प्रश्न का उत्तर आपको मिला होगा। देखो इतनी बात मैं ज़रूर बताऊंगा कि हमारे मन में कहीं-कहीं अटक रह गयी हो, कुछ बात ख्याल में नहीं आती हो तो अवश्य पूछना हो। लेकिन समाज में किसी व्यक्ति विशेष को अपनी आंखों के सामने रखकर, उनके साथ वाद-विवाद करने के लिये कोई बात इधर से उठाकर-सुनकर उधर जाकर देना हो, तो मत पूछना। भाई! आपको आदत है इसलिये बोलता हूं हो। क्या कहा? और दूसरा एक और तरीका होता है, कि सामनेवाला कितने पानी में है वह देखने के लिये प्रश्न किये जाते हैं, वैसा भी मत करना।

यह तो हमें समझना है हमारे मन में कोई गुत्थी सुलझ नहीं रही है, तो निश्चित अपने

साधर्मियों को पूछो, पूछना भी चाहिये। क्योंकि हमें तो, आज नहीं कल मुनि अवस्था तो धारण करनी ही है। क्यों? हमें मुक्त होना है तो मुनि अवस्था धारण किये बिना अगले स्टेजेस, आगे के गुणस्थान हो ही नहीं सकते। मोक्ष के लिये श्रेणी मांड़े बिना और श्रेणी मांड़ने के लिये, मुनि हुये बिना और मुनि होने के लिये सम्यग्दर्शन के बिना, अन्य कोई रास्ता है ही नहीं। मुनि बने बिना श्रेणी नहीं होती, श्रेणी मांड़े बिना वीतरागता नहीं होती, वीतरागता हुये बिना सर्वज्ञता नहीं होती और सर्वज्ञता यानी अरिहंत अवस्था आये बिना, सिद्ध अवस्था नहीं होती। यह तो बिलकुल सीधा और सादा मोक्षमार्ग है भाई और इसे हमें प्राप्त करना है। देखो, हमने अभी-अभी किसीसे सुना कि वे आज कहां जा रहे हैं भाई? अच्छा! औरंगाबाद जा रहे हैं! तो औरंगाबाद जाने का रास्ता ही मालूम नहीं है। कितने घंटों में पहुचेंगे वह भी मालूम नहीं है। किधर से-कौन से मार्ग से जाना पता नहीं है, वे तो बिलकुल अपरिचित हैं यहां पर। तो वे पहले पूछताछ करेंगे कि नहीं? भाई रास्ते में कौनसा गांव आयेगा? उस गांव से वहां औरंगाबाद जाने के बाद एलोरा जाने का है, फिर अजंता जाने का है। गाडी से जाना है तो बीच में रास्ते में पेट्रोल पंप है कि नहीं, कोई मॉटेल, हॉटेल, मॉटेल यानी रहने का ठिकाना वगैरह है कि नहीं? हॉटेल, नाश्ता पानी के लिये, जैसा मोटर को नाश्ता (पेट्रोल) चाहिये तो उनको भी चाहिये न? इसकी पूछ परख किये बिना कोई निकले तो क्या होगा? तकलीफ अधिक होगी इसलिये हम पहले ही प्रीप्लँड सारी इन्फॉर्मेशन लेते हैं और उसमें यह रास्ता भाई ख़राब है, यह रास्ता अच्छा है, इसतरह से जब हम उन बातों को नक्की करते हैं और आगे बढ़ते हैं तो ही हम विदाउट मच ट्रबल वहां पहुंचते हैं। वैसे ही यही मोक्षमार्ग है और ऐसा ही है, ऐसे मोक्षमार्ग की हमें शुरुआत में खबर होना, यह कोई गुनाह नहीं है भाई! यह हमारे लिये आगे बढ़ने के लिये आवश्यक है। अब आगे।

क्या कहते हैं? देखो, जीव दु:खी होता है स्वयं ने ही बांधे हुये पूर्वकर्म के फल से, परंतु अन्य पदार्थों को अपने दु:ख का कारण मानकर उन पदार्थों के नाश का उपाय करता है। देखो, पदार्थों से तो उसे दु:ख नहीं है, दु:ख का कारण तो उसने जो पूर्वभव में जो कर्म बांधे थे वे कर्म निमित्त हैं। लेकिन यह जीव क्या कर रहा है? कि वह पदार्थों को ही हटाना चाहता है। परंतु कर्म के नाश का उपाय नहीं करता, कर्म के कारण ये सारी असुविधायें हो रही हैं। ख्याल में आया? कर्म के कारण हमें कोई ऐसे प्रतिकूल संयोग मिल

रहे हैं, तो हम संयोगों को हटाये नहीं, तो क्या करें? कर्म को हटाने का उपाय करना चाहिये। तो कर्म कैसे हटेंगे? तो निर्जरा होने से। निर्जरा कैसे होगी? यानी शुद्धि की वृद्धि कैसे होगी? तो कह रहे हैं कि शुद्धि की उत्पत्ति हो गयी तो ही शुद्धि की वृद्धि होगी और शुद्धि की उत्पत्ति यानी क्या? संवर, संवर यानी क्या? सम्यग्दर्शन, धर्म की शुरुआत। देखो, प्रोसेस तो ऐसा है। देखो, हम उस कुत्ते से कम नहीं हैं जो मोक्षमार्गप्रकाशककार पंडित टोडरमलजी ने बताया है। उनके पास उदाहरणों की कोई कमी नहीं थी जो कि असल में एक बार हम उदाहरण पढ़ेंगे तो हमें वह बात बिलकुल गले उतरेगी। वे कहते हैं किसी कुत्ते को आप एक लाठी लेकर मारने की कोशिश करो तो वह तुम्हें नहीं काटेगा, वह लाठी को पकड़ने की कोशिश करेगा, लाठी को चबाने की कोशिश करेगा। वैसे हम भी उस कुत्ते से कुछ कम नहीं हैं। हमें जो संयोग, प्रतिकूल संयोग प्राप्त हुये हैं वह तो हमारे खोटे कर्म के कारण। तो हम तो उन संयोगों को हटाने की कोशिश में हैं। तो यहां तो कहते हैं, संयोग हटाने से हटेंगे नहीं और जुटाने से जुटेंगे नहीं क्योंकि वे तो परद्रव्य हैं, परपदार्थ का परिणमन मेरेसे कतई नहीं हो सकता क्योंकि परपदार्थ में और मेरेमें अत्यंताभाव है।

तो फिर इसका उपाय क्या है? तो कहते हैं तू तेरे स्वरूप में लीनता करेगा तो वहां उसके निमित्त से कर्म झड़ जायें, ऐसी कर्मों की अवस्था होती है। जीव कर्मों को हटाता है ऐसा कहना भी उपचार का कथन है। लेकिन वहां कर्म भी एक द्रव्य है और उनका भी निरंतर परिणमन होवे, ऐसी उनमें क्षमता है और इस जीव के शुद्ध परिणामों के निमित्त से वे कर्म सहज झड़ जाते हैं कहो या कर्म अकर्मरूप हो जाते हैं, ख्याल में आया? इसलिये कहते हैं कि यह कर्म के नाश का उपाय नहीं करता, ख्याल में आया? देखो, कितनी सहज बात है, कितनी सरल है। कहते हैं इसतरह निर्जरातत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता के कारण यह जीव दुःखी हो रहा है। क्यों दुःखी हो रहा है? कि उसके निर्जरातत्त्व का सही स्वरूप मालूम नहीं है, इसलिये वह विपरीत मान्यता करता है। इसलिये वह जीव दुःखी ही है। अब आगे, आखिर का मोक्षतत्त्व जो है उस संबंधी भी हम कुछ इन्फॉर्मेशन लेंगे।

यहां कहते हैं कि एक व्यक्ति था, बहुत गरीब था। उसको खाने के बहुत लाले पड़े थे, कई दिनों से उसने पेटभर खाना नहीं खाया था। कहां रहता था? तो कहते हैं वह बड़ौदा

में रहता था। तो एक दफा वह बहुत जोर-जोर से रो रहा था, तो ऊपर से विमान में बैठकर एक देव जा रहा था। तो उसने देखा कि यह विलाप करते बैठा हुआ है। तो वह देव आया और पूछा क्यों रो रहा है? साहब मैं अत्यंत दु:खी हूं-अत्यंत दु:खी हूं। अच्छा! हम ऐसा करते हैं, तुझे अत्यंत सुखस्वरूप ऐसे मोक्ष में ले जाते हैं। हां, साहब बड़ी मेहरबानी होगी। वहां तो अनंतसुख है-अनंतसुख है। मालूम है तुम्हें? हां बिलकुल साहब तो हमें ले चलो। हां चलो। लेकिन वहां जाकर क्या करना? वहां खाने-पीने का कोई इंतज़ाम है कि नहीं? अच्छा यह बताओ वहां ढोकला मिलता है कि नहीं? क्या बोले? यानी हम मोक्ष में अनंतसुख है, ऐसा सुनते आये हैं और हमें जो लौकिक विषयों का सुख जिसको हम सुख कहते हैं, जो वास्तविक सुख है ही नहीं, लेकिन पांच इन्द्रियों के विषयों से जो स्वयं को सुखी मानता है वह उससे भी अनंतगुणा सुख मोक्ष में होगा ऐसी उसकी मान्यता है। तो उसकी भूल क्या हो रही है? कि वह जो माना हुआ इन्द्रिय सुख है, उसमें अनंतता मानकर मोक्ष सुख की कल्पना करता है।

अरे! वहां तो अतीन्द्रिय सुख का मतलब जीव मोक्ष प्रकट करे यानी सिद्ध हो जाये और जो सुखस्वरूप उसका आत्मा है, उसमें वह परिपूर्णत: लीन हो जाये, उसके अनंतसुख की पर्याय में प्रकटता होती है और यह पूछता है वहां इन्द्रिय सुख है कि नहीं? क्योंकि उसने कभी अतीन्द्रिय सुख चखा ही नहीं, उसके स्वाद का ही उसे पता नहीं है इसलिये वह भूल से उसकी कंपॅरिझन लौकिक ऐंद्रिक सुख से करता है। अब यहां देखते हैं क्या कह रहे हैं? मोक्ष अर्थात पूर्ण निराकुल सुख, कैसा सुख है वह? निराकुल सुख है और यह इन्द्रियसुख कैसा है? आकुलतामय है, यह वास्तव में दु:ख ही है लेकिन यह मानता है कि वह सुख है। तो कह रहे हैं पूर्ण निराकुल सुख-अनंतसुख की प्राप्ति, कर्मों का पूर्ण अभाव, आत्मा की परिपूर्ण दशा, आत्मा अनंत गुणमय है, उन सब अनंत गुणों का सामर्थ्य पूर्णरूप से पर्याय में प्रकट होना इसीको मोक्ष कहते हैं। तो हमने परसों एक बार देखा था कि मोक्ष कहां होता है? स्वर्ग के ऊपर कि नीचे? हां साहब? कहां? *श्रोता: जीव की अवस्था है।* अरे वाह! मोक्ष तो जीव की अवस्था है तो वह जीव में ही प्रकट होगी, ख्याल में आया न? तो कह रहे हैं मिथ्यादृष्टि जीव को सच्चे सुख की पहचान न होने के कारण पांच इन्द्रियों और मन के द्वारा विषयभोग करने में ही वह सुख मानता है। वह अभी हमने बताया न, हमारे मित्र की गुणीदास सम्मेलन की स्टोरी कि उसने कर्णेन्द्रिय का विषय सुना और वह

समझा वाह! हमें तो मोक्ष प्राप्त हुआ, यही कह रहे हैं देखो। हम पांच इन्द्रियों और मन के द्वारा विषयभोग करने में ही सुख मानते हैं।

सच देखा जाये तो अनेक पदार्थों को भोगने की इच्छा यह जीव करता है। देखो-देखो, यहां इच्छा की बात कर रहे हैं न, तो जो इच्छा का होना है, वह इच्छा दुःखरूप है या सुखरूप है? हांजी बोलो पल्लवी। इच्छा का होना यह सुखस्वरूप है या दुःखस्वरूप है? *श्रोताः दुःखस्वरूप।* दुःखस्वरूप है यह तो बात नक्की है न! तो क्या हो गया, हम इ.स. २००४ में अमेरिका में गये थे, फिनिक्स में, तो वहां हम ऐसे ही बोल रहे थे कि भाई! जिसको दुःख दूर करना है उसको जैनदर्शन का अभ्यास करना आवश्यक है। तो एक भाईसाहब खड़े हो गये, कि भाईसाहब तुम हमको क्यों तकलीफ दे रहे हो? क्यों? हम कहां दुःखी हैं? हम दुःखी थोड़ी हैं? हम तो सुखी हैं। बोला आप दुःखी नहीं हैं? नहीं बिलकुल दुःखी नहीं हैं। दुःखी तो वे हैं जहां अभी भयंकर तूफान आया है। मायामी के पास कहां? हां? *श्रोताः न्यू ऑर्लियन्स।* न्यू ऑर्लियन्स में। वो क्या है रीटा आयी थी। रीटा यानी कोई लड़की नहीं, वह बड़ा... *श्रोताः सायक्लोन।* सायक्लोन आया था, बहुत बड़ा तूफान आया था। तो वहां के लोग पानी में डूब गये थे; तो कहते हैं वे दुःखी है हम थोड़े ही दुःखी हैं? तो हमने कहा साहब, आप दुःखी नहीं हैं न, तो आप खाना तो खाते होंगे कि नहीं? क्या बात करते हो। हमारे पास इतना पैसा है कि हम दिन में दस बार भी खाने की इच्छा करें, तो हम खा सकते हैं। तुम्हारे जैसा भुक्कड़ थोड़ी हैं कि दूसरे के घर में जाकर खाना खाते हैं, हम अपने घर में खाते हैं। मैंने कहा दस बार खाने की इच्छा तो होती है न? हां बिलकुल होती है। तो इच्छा पैदा होना यही दुःख है इस बात का तुम्हें पता नहीं इस बात का ही हमें दुःख है। तो बोले आप दुःखी हो न, हम तो नहीं न? तो फिर अन्य लोगों ने उसको ज़रा चुपचाप पीछे से खींचकर दोबारा कुर्सी पर बैठा दिया। देखो, लेकिन पहले मैं दुःखी हूं इसका एहसास ही इस जीव को नहीं है। तो मैं दुःखी नहीं हूं ऐसा जो मानता है, वह दुःख दूर करने का उपाय करेगा कि नहीं करेगा? ख्याल में आया न?

मैं तो कहता हूं कि मेरे पास ऐसे एक-एक अनुभव हैं कि एक बात बताने जाऊं तो दस-दस कथायें याद आ जाती हैं। *श्रोताः श्रीमद्जीअे तो इच्छा दुःखनुं मूळ कह्युं छे।* हां, बराबर। *श्रोताः इच्छा अे ज दुःखनुं कारण छे।* हां, बहुत सरस। आप कहते हैं श्रीमद्जी का मत भी ऐसा ही है कि इच्छा यही दुःख का मूल है। बहुत बढ़िया! अब क्या कह रहे हैं

देखो। मिथ्यादृष्टि जीव को सच्चे सुख की पहचान न होने के कारण पांच इन्द्रिय और मन के द्वारा विषयभोग करने में ही वह सुख मानता है। सच देखा जाये तो अनेक पदार्थों को भोगने की इच्छा वह करता है। इच्छा शब्द पर से मुझे वह बात याद आयी थी। आत्मा तो उन पदार्थों को जान ही सकता है, उनका ग्रहण व त्याग कर ही नहीं सकता हं। मैंने नक्की किया कि आज मैं आयफेल टावर का त्याग करूंगा, तो हमारे नेमिचंद अर्पल कहेंगे कि वह कब तेरा था कि तू उसका त्याग कर रहा है? त्याग किसका होता है साहब? कि जो अपना होता है, तो आपने कंदमूल खाने का त्याग किया कि नहीं? बोलो, कुलभूषण आपने कंदमूल खाने का छोड़ दिया कि नहीं, त्याग किया कि नहीं उसका? *श्रोता: ग्रहण नहीं किया तो उसका त्याग कैसा?* हां, यानी आप खाते हो? *श्रोता: ग्रहण नहीं किया कभी भी।* अरे! परपदार्थों का कोई त्याग ही नहीं कर सकता। लेकिन परपदार्थ खाने की जो इच्छा है न, उस इच्छा का त्याग हो सकता है, ख्याल में आया? और वह इच्छा का त्याग है, ऐसा कहना भी व्यवहारनय का कथन है। ऐसा स्वरूप में लीनता करेगा तब ऐसी इच्छा ही नहीं उत्पन्न होगी यह बात साची है। अब आगे।

तो कह रहे हैं, जो बाह्य पदार्थ हैं उनका तो वह ग्रहण भी नहीं कर सकता और त्याग भी नहीं कर सकता है। अज्ञानी निरंतर ग्रहण त्याग की इच्छा करके निरंतर आकुलता करता है। क्वचित् इच्छा पूर्ण हुयी तो उसमें सुख मानता है। परंतु, उसी समय में नवीन इच्छाजन्य आकुलता तो रहती ही है। यह हमारे अमृतभाई बोल रहे हैं यहां के लोग खाने के बारे में किट-किट कर रहे थे तो हमने आमरस दिया सबको। तो आमरस दिया तो उसके साथ पापड़ नहीं दिया? अच्छा पापड़ भी दिया, अथाना नहीं दिया? अथाना यानी समझते हैं न? हां अचार नहीं दिया? तो कह रहे हैं एक इच्छा पूर्ण होती है तो उसी समय उसको नवीन-नवीन इच्छा चालू होती है। तो वह कंटाल गये, बोले, अभी जो है वह खा लो। यह तो भाई! यहां अमृतभाई को मैं उदाहरण के तौर पर इस्तेमाल कर रहा हूं। क्योंकि वे अभी हैं नहीं न, तो गुस्सा करनेवाले ही नहीं हैं। तो कहते हैं वीतरागता यानी इच्छाओं का पूर्ण अभाव उसीको निराकुलता कहते हैं। यानी इच्छाओं का परिपूर्ण अभाव होना, यानी वीतराग हो जाना, वही निराकुल अवस्था है। अज्ञानी भोगों संबंधी सुख को सच्चा सुख मानता है। अब उसी प्रकार का सुख मोक्ष में होगा ऐसी कल्पना करता है यही उसकी मोक्षतत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता है।

अनेक लोग हमसे पूछते हैं कि मोक्ष में जाने के बाद वहां क्या करना? अगर कुछ नहीं करना तो वहां जाने में क्या मज़ा है? क्योंकि हम तो ऐसा ही मानते हैं कुछ करना, कुछ न कुछ करते रहना। यानी पर का कुछ करना इसीमें मज़ा है। तो इस जीव ने बंधतत्त्व का स्वरूप जाना नहीं, दुःख कर्मबंधन से हैं और कर्मों का पूर्ण अभाव होकर ही पूर्ण सुखी बन सकते हैं ऐसा न जानने के कारण अर्थात् मोक्षतत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता के कारण परपदार्थ और अनिष्ट संयोगों को दुःख का कारण मानकर यह जीव परपदार्थ और संयोगों का नाश यानी अभाव करने की इच्छा करता है और निरंतर नवीन कर्म का बंध करता रहता है। इतना सब विस्तार से देखने पर पता चलता है कि जिसने एक अपने आत्मा को जानने में भूल की है यानी अपने जीवतत्त्व, जो स्वयं जीवतत्त्व है उस जीवतत्त्व को जानने में भूल की है वह सातों तत्त्वों संबंधी भूल करता है। तो पांच इन्द्रियों के विषयों के भोगों में ही सुख मानता है। तो स्वयं पांच इन्द्रियोंवाला है कि मन सहित पांच इन्द्रियोंवाला है? बोलो साहब, कैसा है वह? *श्रोता: पांच इन्द्रिय और छठवां मन।* हां तो उसके सहित है न वह, मतलब वह पांच इन्द्रियोंवाला और मनवाला है न। *श्रोता: मोक्ष में पांच इन्द्रियां और मन नहीं है।* जो ऐसी इच्छा कर रहा है, अरे! वह स्वयं आत्मा है। वह मैं आत्मा हूं यह भूलता है और मैं पांच इन्द्रियों के विषयों से सुख मान रहा हूं यानी मैं पंचेन्द्रिय जीव हूं ऐसी उसकी मान्यता है वह उसकी विपरीतता है। तो जिसने स्व को नहीं जाना उससे सातों ही तत्त्वों को नहीं जाना। ख्याल में आया भाई?

देखो क्या कह रहे हैं? जिसने एक अपने आत्मा को जानने में भूल की है वह सातों तत्त्वों संबंधी भूल करता है। सात तत्त्वों का यथार्थ ज्ञान, सात तत्त्वों को जानने के लिये नहीं, परंतु एक अपने शुद्धात्मा को अर्थात् स्वयं को जानने के लिये है। सात तत्त्वों को क्यों जानना? कि हम जानकर आप लोगों को सबको सिखायें, इसलिये जानना? तो कहते हैं अपने आत्मा को जान! तो ही वह सात तत्त्वों का जानना यथार्थ जानना है। इन सात तत्त्वों में पुण्य और पाप ये दोनों आस्रव और बंध इन दोनों तत्त्वों में समाविष्ट होते हैं फिर भी कहीं-कहीं आचार्यों ने उन दोनों का भिन्न कथन करके नौ पदार्थ बताये हैं। सात तत्त्व कहो या नौ पदार्थ कहो, दोनों का एक ही अर्थ है। वास्तव में तो सुख दुःख जीव की मिथ्या मान्यता के कारण होते हैं। यह सुख या दुःख किसके बारे में हैं, किसके लिये हैं? मिथ्या

मान्यता के कारण हैं। यह मिथ्या मान्यता के कारण सुख भी होगा? अरे! वह तो लौकिक सुख की बात कर रहे हैं, ख्याल में आया?

शरीर ही मैं हूं ऐसा मानकर शरीर निरोगी होगा तो मैं सुखी, ऐसी मान्यता के कारण जिस पुण्य कर्म के उदय में अनुकूल सामग्री मिलती है उस पुण्य के उदय को अच्छा मानता है। यहां क्या लिखा? जिस पुण्य कर्म के उदय में अनुकूल सामग्री मिलती है तो साहब हमें जरा बताओ तो सही। क्या बताये साहब? तो कहते हैं कौनसे पुण्य कर्म करें तो उससे हमें अनुकूल सामग्री मिलेगी? तो जीव का लक्ष्य किधर है? अनुकूल सामग्री कैसे प्राप्त करें? उसके पीछे उसकी दृष्टि है लेकिन वास्तव में क्या कह रहे हैं कि अनुकूल सामग्री उसे मिलती है और उस पुण्य के उदय को अच्छा मानता है और पाप के उदय को बुरा मानता है यह उसकी मिथ्या मानता है, यह बात बताना चाहते हैं। यह भी उसकी बंधतत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता ही है, यहां पुण्य-पाप को लेकर बात कह रहे हैं। जो पुण्य के उदय को अच्छा मानता है अर्थात् जो पुण्य बंध को अच्छा मानता है, वह बंध के अभावस्वरूप जो मोक्ष है उसको अच्छा कैसे मानेगा? जो पुण्यबंध को भला मानता है, वह बंध का कारण जो शुभास्रव यानी शुभराग उसे भला मानता है और अशुभ को बुरा मानता है; जिसने आस्रव को भला माना और करने योग्य माना, उसने आस्रव के अभावरूप संवर को नहीं जाना और भला भी नहीं माना। अभी मैं ज़रा फास्ट पढ़ रहा हूं क्योंकि अपने पास बहुत मॅटर है। तो यह तो बहुत आसान चीज़ है, जो हम समझ सके। क्या कह रहे हैं? जिसने आस्रव और बंध को ही अच्छा माना वह संवर, निर्जरा और मोक्ष को अच्छा नहीं मानेगा क्योंकि आस्रव से बंध होता है, उससे तो संवर नहीं होगा, निर्जरा नहीं होगी और मोक्ष भी नहीं होगा। देखो न एक भूल भरी मान्यता के कारण अनेक भूल भरी मान्यताओं की श्रृंखला ही शुरू हो जाती है।

कुम्हार के यहां एक पर एक घड़े रचते हैं; नीचे का पहला घड़ा उलटा रखा होगा तो उस पर रचे जानेवाले सभी घड़े उलटे ही रखने पड़ते हैं। उसीप्रकार एक तत्त्व में भूल करने से सातों तत्त्वों संबंधी भूलभरी मान्यताओं की परंपरा शुरू हो जाती है। शास्त्र सुननेवाले का हमेशा यही सवाल होता है, क्या होता है? तो फिर हम क्या करें? आप इतनी सारी बातें बता रहे हैं तो हमको शॉर्ट में यह तो बताओ कि फिर हम क्या करें? कैसे आचरण

करें? देखो तो, प्रश्न में भी कर्ताबुद्धि ही दिखायी देती है। क्या करें वाली बात है न। गत दो घंटों में हमने जो मान्यताओं की भूल देखी है परंतु फिर भी मान्यता को सुधारना है ऐसा सीधा सरल जवाब ध्यान में नहीं आता और मनुष्यपर्यायरूप ही मैं हूं, मैं मनुष्य ऐसा मानकर मनुष्योचित व्यवहार सुधारने का विचार ही इस जीव को बारंबार आता है। यानी अपने को आत्मा मानता ही नहीं है, और मनुष्य मानकर मनुष्य के उचित जो व्यवहार होगा उसमें सुधार करना चाहता है। इससे उस जीव, अजीव, आस्रव आदि तत्त्वों संबंधी मान्यता की भूल यानी विपरीतता ही दिखायी देती है।

अभी यहां एक बहुत अच्छा उदाहरण दिया है। कह रहे हैं एक आदमी ज़मीन पर बहुत देर से कुछ कर रहा था। तो वहां एक व्यक्ति आयी, उसने कहा कि भाई तुम क्या कर रहे हो? मैं बहुत देर से देख रहा हूं, झुक-झुककर कुछ कर रहे हो। तो उसने जवाब दिया मैं कबसे मेरी परछाई, परछाई समझते हो? अरे वाह! इंग्लिश्तानी लोग जान गये, मैं कबसे मेरी परछाई जो टेढ़ी मेढ़ी दिख रही है उसे सीधा करने की चेष्टा कर रहा हूं। तुम क्यों हंस रहे हो, ऐसा पूछ रहे हैं, तो कहते हैं कि दूसरों की मूर्खता देखने पर कैसे तुरंत हंसी आती है, है न? तो उस व्यक्ति ने जवाब दिया – परछाई सुधारने की कोशिश मत करो यानी पर्याय को सुधारने की कोशिश मत करो। तुम सीधे हो जाओ तो परछाई अपने आप सीधी हो जायेगी। देखो कितना सादा और सटीक उदाहरण है। हम भी पर्याय से-शरीर से एकत्व करके मनुष्य व्यवहार, आचरण सुधारने की चेष्टा यानी प्रयत्न करते हैं। कैसा? कि मैं मनुष्य हूं समझकर और शरीर से एकत्व करते हुये मनुष्य व्यवहार या आचरण सुधारने की चेष्टा करते हैं। उस समय हमारे परम सुहृद यानी परम मित्र अर्थात् देव-शास्त्र-गुरु हमसे कहते हैं; हे भव्य! तुम अपने को पहचानो। अगर आप लोगों को घूमने की आदत नहीं है, सुबह उठकर, दोपहर में, शाम को जब भी आपको वक्त मिले तो यह जो परिसर है उसमें घूमो। वहां पर एक जगह लिखा है जो हिंदी में लिखा है, मैं तो गुजराती में कहूंगा तुं परमात्मा छो एम पहेला नक्की कर।

क्या कहा? यहां लिखा है तू परमात्मा है ऐसा प्रथम में प्रथम निर्णय कर। लिखने की क्या ज़रूरत है, यहां तो कह रहे हैं कि प्रथम में प्रथम हमें ऐसा समझना चाहिये कि मम स्वरूप है सिद्ध समान, अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान। किन्तु आश वश खोया ज्ञान, बना

भिखारी निपट अजान। हमने अपने को कभी परमात्मा माना ही नहीं है स्वरूप से, स्वभाव से, तो मैं परमात्मा जैसा ही हूं। अरे! अरे! साहब आप क्या कह रहे हैं? हम तो इतने रागी, द्वेषी, विकारी हैं और आप हमको परमात्मा कहते हैं? अरे! भाई, तू अपने स्वभाव की तरफ देखेगा तो निश्चितरूप से परमात्मा के स्वभाव में और तेरे स्वभाव में कतई कोई अंतर है नहीं। लेकिन पर्याय की तरफ देख देखकर तू दुःखी, कष्टी हो रहा है। तो पहले यह तो नक्की कर कि तू कौनसे जाति का है, कौनसे कुल का है? तो जोर-जोर से बोलेंगे कि भगवान महावीर की हम संतान हैं लेकिन केवल कहने से और जोर-जोर से नारे लगाने से कुछ नहीं होता है। पहले में पहले यह श्रद्धा होनी चाहिये कि मैं परमात्मस्वभावी हूं, परमात्मस्वरूप हूं। कैसे? स्वभाव से। तो कहते हैं हे भव्य! तुम अपने को पहचानो, पर्याय की तरफ देख-देखकर उसमें विभाव और राग-द्वेष दूर करने का प्रयत्न छोड़ दो। हम तो पर्यायों को सुधारने को जाते हैं। तो क्या करना चाहिये? तुम स्वयं अपने आपको स्वभावरूप मानो, स्वयं को स्वयं में स्थापन करो, तब तुम्हारी पर्यायें अपने आप स्वसन्मुख होकर स्वभावरूप परिणमन करने लगेगी। देखो, कितना साफ़ और सुथरा उपदेश है लेकिन हमने उसको कभी माना ही नहीं, ख्याल में आया?

देखो मैं निषेध दूसरे किसी बात का नहीं करता हूं। हम तो हमारे आचरण में ही इतने अटके हुये हैं कि आप रात को पानी पीते हो? हम तो जब से इसमें संलग्न हुये हैं हम तो रात को पानी भी नहीं पीते। मैं आपको रात को पानी पीना ऐसा आग्रह नहीं कर रहा हूं ऐसा उपदेश भी नहीं दे रहा हूं। लेकिन हम कुछ आचरण करते हैं और अपने को दूसरों से श्रेष्ठ मानते हैं। अरे प्रभु! सात तत्त्वों में से आस्रवतत्त्व क्या है? अरे! वह अपना काम थोड़ी है वह तो पंडितों का काम है। अच्छा-अच्छा! पंडितों को ही मोक्ष जाने का है तुमको नहीं, क्यों? लेकिन आचरण ऐसा रखेंगे कि हमने यह किया, हमने वह किया, ख्याल में आया? अरे! पहले में पहले तो क्या कह रहे हैं देखो-देखो, हे भव्य! तुम अपने को पहचानो, पर्यायों की तरफ देख-देखकर उनमें से विभाव और राग-द्वेष दूर करने का प्रयत्न छोड़ दो और हम पर्यायों को ही सुधारने में अटके हुये हैं। उसके ही प्रयत्न में लगे हैं, तो मैं आपसे पूछता हूं कौनसी पर्याय को आपको सुधारना है? जो बीत चुकी है यानी भूतकाल में हो चुकी है उसको आपको सुधारना है कि जो भविष्यकाल में आनेवाली उसको सुधारना है? या अभी वर्तमान में जो है उसको सुधारना है?

वर्तमान की पर्याय तो केवल एक समयमात्र है, तू जब उसको सुधारने की सोच रहा है तो उसमें तो असंख्यात समय निकल जायेंगे और असंख्य पर्यायें हो जायेगी। कहने का तात्पर्य यह है कि आप रात को पानी पिओ ऐसा मैं कतई नहीं बोल रहा हूं। मेरे कथन का उलटा अर्थ मत लेना, उसके कारण धोखे में तुम ही आ जाओगे – मैं नहीं। यहां तो कह रहे हैं भाई, पर्याय पर जो तेरी दृष्टि अटकी हुयी है, उसे वहां से हटाकर तू अपने स्वरूप में लीनता धारण करने की कोशिश कर। तो सहजरूप से बाह्य का परिणमन भी उसके अनुसार हो जायेगा। हम तो पहले में पहले व्रत धारण करने की, आदि बात सोचते हैं कि ऐसा करने का कि वैसा करने का, यह करें कि वह नहीं करें। अरे! करने-धरने की बात तो बाद में आयेगी पहले तुझे पहचानने की कोशिश कब तूने की है? तो क्या कह रहे हैं? हे भव्य, तुम अपने को पहचानो, पर्यायों की तरफ देख-देखकर, तो हमारे में और झुक-झुककर अपने परछाई को जो सीधा करना चाहता था उसमें कौनसा अंतर हुआ? ख्याल में आया? तो कह रहे हैं, पर्यायों की तरफ देखकर, उनमें से विभाव और राग-द्वेष दूर करने का प्रयत्न छोड़ दो। तुम स्वयं अपने आपको स्वभावरूप मानो कि मैं परमात्मस्वरूप हूं, जिनेन्द्र भगवान में और मेरेमें कोई फर्क नहीं है। जब हम भगवान के सामने जाकर दर्शन करते हैं, जब उनकी तरफ देखते हैं, तो उनकी जो पर्याय है वैसा उनका स्वभाव है और उनके स्वभाव में और मेरे स्वभाव में कोई अंतर नहीं है। लेकिन उनकी पर्याय और मेरी पर्याय में महत् अंतर है, ज़मीन आसमान का अंतर है। वे तो शुद्धस्वरूप से परिणमित हो रहे हैं और मेरी पर्याय में तो अभी परिपूर्ण अशुद्धता है। तो मेरेमें अशुद्धता है ऐसा जब हमें पता लगेगा तो हम उसको दूर करने का प्रयत्न करेंगे। तो कह रहे हैं अपने आपको स्वभावरूप मानो, स्वयं को स्वयं में स्थापित करो। स्वयं को स्वयं में स्थापन करो यानी क्या? कि हमारा जो उपयोग अन्यत्र लग रहा है वहां से हटकर अपने स्वरूप में एकाग्र होनेका प्रयत्न करो। तो कह रहे हैं कि स्वयं को स्वयं में स्थापन करो तब तुम्हारी पर्यायें अपने आप स्वसन्मुख होकर स्वभावरूप परिणमन करने लगेगी। ख्याल में आया?

अनादि संस्कार वश, तो ये संस्कार होते हैं कि नहीं? फिर कल से बात चल रही है न, तो यह तो कथन पद्धति है, ख्याल में आया? यह संस्कार वगैरह हैं, होते हैं, ऐसे उपचार से कहेंगे। तो कह रहे हैं अनादि; फिर से बात बताऊंगा क्योंकि यह बात दोबारा मुझसे

पूछने में आयी है कि हमें संस्कार होते हैं कि नहीं? कोई पांच साल का बालक होता है वह कॉम्प्युटर चलाता है, कोई पांच साल का बच्चा होता है, तबला बजाता है, कोई गाने में होशियार होता है। क्यों? कि वह टीव्ही में दिखाते हैं न, दे दना-दन क्या है? मुझे मालूम नहीं। कुछ सीरियल आती है न, तो वह देखकर हमको लगता है बच्चे भी देखो कितना अच्छा नाचते हैं तो उनके संस्कार होंगे कि नहीं? तो जब वह बच्चा नाच रहा है, गा रहा है, तबला बजा रहा है तो वह उसकी वर्तमान पर्याय है कि नहीं? तो वह वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में अभाव है या नहीं? तो इतना सुना और फिर बाद में फिर से पूछा कि महाराज आपने इतनी कथा सुनायी, पुराण सुनाया फिर सीता राम की कौन थी? यही बात हो गयी न? जरूर कहेंगे कि संस्कार के वश ऐसा होता है। लेकिन इन रिॲलिटि, यथार्थतः, निश्चय से देखा जाये तो दो पर्यायों में या तो प्रागभाव होगा या तो प्रध्वंसाभाव होगा और पुद्गल में लगाना होवे तो – अन्योन्याभाव होगा। भाई मूल बात को इग्नोअर मत करना हो!

फिर मूल बात को ध्यान में रखते हुये जो व्यवहार का कथन है वह क्यों किया गया है? निमित्त की अपेक्षा से, संयोग की अपेक्षा से, तो फिर वह समझ लेना किस अपेक्षा से क्या है। तो कह रहे हैं अनादि संस्कार वश ये विपरीत मान्यतायें होती हैं। कौनसी? मैंने जो पूछा था कि आपको मिथ्यात्व कबसे है? आपने बोला था अनादि से। तो उसके संस्कार नहीं हैं क्या? अभी खाली तबला बजाया तो संस्कार आ गये तेरेमें? क्यों? गाना गाया तो संस्कार आ गये? कोई कॉम्प्युटर चलाया तो उसके संस्कार आ गये? कैसी बात है? तो कहते हैं अनादि संस्कार वश ये विपरीत मान्यतायें होती हैं तो भी घबराने की कोई आवश्यकता नहीं है। यह कौनसे? मिथ्यात्व के संस्कार? इसके लिये घबराना मत कह रहे हैं। क्यों? कि सात तत्त्व का स्वरूप यथार्थ रीति से जानकर, स्व में लीन होना यही भूल मिटाने का एकमेव उपाय है। इन सात तत्त्वों का ज्यों का त्यों श्रद्धान् अर्थात् उनके हेय, ज्ञेय और उपादेयस्वरूप के बारे में हम अगले एक घंटे में देखेंगे। तब तक –

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

५८. सात तत्त्व – हेय, ज्ञेय, उपादेय

अभी हमने जो सात तत्त्व देखे थे, उन सात तत्त्वों के बारे में इस जीव की जो विपरीत मान्यतायें चल रही हैं उसके बारे में थोड़ा बहुत विवेचन किया और यह बात देखी कि इन सात तत्त्वों संबंधी जो भूल हो रही है उसको हम कैसे टाल सकते हैं। आस्रव – यहां लिखनेवालों ने आ–श्र–व लिखा है। वह स्र है स्र, क्रम कैसे लिखते हैं हम ? क को क्र ऐसा स को स्र, यह आश्रव नहीं है बहुत जगह ऐसा लिखा हुआ है लेकिन वह शुद्ध लेखन नहीं है।

तो आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष ये पर्यायतत्त्व हैं तो ये कौनसे द्रव्य की पर्यायें हैं? फिर से वही घोटाला हो रहा है कि जीवतत्त्व और जीवद्रव्य। तो हमने पहले ही देखा था कि जो जीवतत्त्व है उसमें पर्याय है ही नहीं। लेकिन पर्यायतत्त्व जब कहते हैं तब वह पर्यायरूप है, इतनी तो बात निश्चित होती है। फिर अगर हमें किसकी पर्याय है, यह समझना ही है तो हमने पहले ही देखा था कि जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व ये द्रव्यतत्त्व हैं और अन्य पांच तत्त्व हैं वे पर्यायतत्त्व हैं और अगर हमको कौनसे द्रव्य की पर्यायें हैं देखना है तो निश्चितरूप से जीवद्रव्य की पर्यायें हैं जो हमने भावास्रव, भावबंध, भावसंवर आदि जो देखा था और जो कर्मों की बात देखी थी कि द्रव्यास्रव, द्रव्यबंध, द्रव्यसंवर आदि वह तो पुद्‌गलद्रव्य की पर्यायें थी क्योंकि कर्मों की बात चल रही है न, तो उसको उसरूप हम देख सकते हैं। अभी क्या कह रहे हैं? प्रयोजनभूत सात तत्त्वों की परिभाषायें हमने देखी, उनका संक्षिप्त स्वरूप भी देखा।

अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीव, तत्त्व संबंधी किसतरह से विपरीत मान्यता करता है उसे भी हमने देखा। यहां कह रहे हैं कि जिस विषय की हमें रुचि है, क्या कहा? जिस विषय की हमें रुचि है, उस विषय की कितनी भी चर्चा करें तो भी हमें आलस नहीं आता, हम बोअर नहीं होते, उलटा आनंद आता है और उस विषय की गहराई में जाकर उसका स्वरूप जानने की रुचि अधिक बढ़ती ही जाती है। क्या करें? यह बात यहां आनेवाली थी और यहां पर आकर एक बहनजी ने यही बात बतायी कि आप जिसतरह से हमें यह बता रहे हैं तो हमारे इन बातों को जानने में रुचि अधिक बढ़ रही है। देखो, यह कितना सहज संयोग अच्छा है। तो यहां कहते हैं यह हमने जो विपरीतता देखी है इतना ही जानना कार्यकारी नहीं है। तो

फिर और क्या जानना रह गया है? तो कहते हैं कि पहले हम आपको एक दृष्टांत बताते हैं और दृष्टांत के माध्यम से सिद्धान्त को भी घटित करेंगे। यहां तो हमें सात तत्त्वों का यथार्थ श्रद्धान कैसा हो इस बात को देखना है।

तो कहते हैं किसी एक गांव में अनेक घर हैं और कई रास्ते हैं। ये रास्ते कांटों से भरे हैं, कहीं उभड़े हुये हैं, इनमें कहीं गड्ढे हैं, ये अनेक विपत्तियों से भरे पड़े हैं। परंतु सभी घर अनेक सुख सुविधाओं से भरे हुये हैं। यह उदाहरण दे रहे हैं। इन घरों में मेरा प्रवेश नहीं हो सकता परंतु एक घर जो मेरा अपना है, जिसमें प्रवेश करने से मुझे कोई रोक नहीं सकता। जिसमें मेरे अलावा अन्य कोई प्रवेश नहीं कर सकता। मेरा घर सुख सुविधाओं से परिपूर्ण है, इन रास्तों से हटकर साफ़ सुथरा एक मार्ग मेरे घर की ओर जाता है, जिस पर चलकर मैं अपने घर में प्रवेश कर सकता हूं। इसतरह केवल बहुत सारी जानकारी हासिल करने से हमें सुख की प्राप्ति नहीं होगी। वह ज्ञान यथार्थ नहीं होगा। दूसरों के घर एवं वहां के सुख देखकर भी हमें सुख नहीं प्राप्त होगा। विपत्तियों से भरे इन रास्तों पर चलते रहने से सुख की बात छोड़ो, दु:ख ही दु:ख नसीब होगा। यह तो बात समझने जैसी है इसको कोई और एक्स्प्लनेशन की आवश्यकता नहीं है। आगे पढ़ते हैं, उस गांव को यथार्थ जानना तभी कहलायेगा, जब मैं मानूंगा कि मेरा सुख मात्र मेरे घर में है। अन्य घरों के सुख देखने से मुझे कोई लाभ नहीं है। यह विपत्तियों से भरा रास्ता छोड़कर अपने घर की ओर जानेवाला यह मार्ग मुझे पकड़ना होगा। इस मार्ग पर चलकर घर तक पहुंचना होगा और घर में प्रवेश करते समय उस मार्ग को छोड़ना पड़ेगा। क्या कह रहे हैं देखो? दो बातें बतायी हैं। यहां कह रहे हैं, इस मार्ग पर हमें चलना पड़ेगा। किसको? अन्य घरों में जानेवाले जो रास्ते हैं, उन रास्तों को छोड़ते हुये अपने घर की ओर जानेवाला जो मार्ग है वही मुझे पकड़ना होगा और इस मार्ग पर चलकर घर तक पहुंचना होगा। अब आगे क्या बताते हैं? घर में प्रवेश करते समय उस मार्ग को भी छोड़ना पड़ेगा। क्या कहना चाहते हैं देखो? मार्ग को छोड़कर घर में प्रवेश करना होगा।

इस ज्ञान के अनुसार पूर्ण श्रद्धा यानी विश्वास होने पर जब अपने घर की ओर पहला कदम उठायेंगे, तो ही वह श्रद्धा और ज्ञान सच्चे होंगे और जब घर में प्रवेश करके पूर्ण सुख का उपभोग करेंगे तभी वह श्रद्धा, ज्ञान, आचरण की पूर्णता होगी। कह रहे हैं न सब लोग

कि हम विकल्प करें कि नहीं करें, करें कि नहीं करें। अरे! करें कि नहीं करें क्या, वे होते ही हैं; लेकिन जब अपने स्वरूप में एकाग्र होना है तब उन विकल्पों को भी छोड़कर हमें अपने घर में प्रवेश करना है यानी अपने स्वरूप में लीनता करनी है, ख्याल में आया न? देखो बहुत अच्छा उदाहरण है। समझाने के लिये और समझने के लिये ऐसा भी उदाहरण दिया जाता है कि कोई बहुत वृद्ध व्यक्ति है और उसका घर पांचवें माले पर है, लिफ्ट बंद हो गयी है और उसको घर में तो जाना ही है वह क्या करेगा? एक-एक, एक-एक सीढ़ी चढ़ते-चढ़ते, आहिस्ते-आहिस्ते जायेगा और फिर जैसे-जैसे ऊपर जायेगा तो थक जायेगा तो वहां बाजू में जो रेलिंग होती है न रेलिंग, क्या बोलते हैं आप लोग? कठड़ो बराबर छे न? तो समझे आप कठड़ा, उसको पकड़कर-पकड़कर वह ऊपर चढ़ेगा और किसी भी तरह से पांचवें माले तक जायेगा और वहां सोचेगा कि अरे! मैं तो इतना कृतघ्न नहीं हूं। क्या? कि इस कठड़े ने मुझे सहारा दिया है तो अब मैं उसको कैसे छोडूं? उसको पकड़कर रखे और घर में प्रवेश करें कि नहीं करें? कठड़े को उठाकर उसे घर में ले जाना चाहिये कि नहीं? वैसे जो सच्चे, देव, गुरु, शास्त्र हैं हमें उनके प्रति शुभराग है क्योंकि उनके कारण हमें अपने स्वरूप की पहचान हुयी है तो उनको हम छोड़कर अपने स्वरूप में जायें तो वह कितनी कृतघ्नता होगी न? ऐसा हो सकेगा कि नहीं?

तो कहते हैं जिनकी वजह से आपने स्वाध्याय किया है, अपने स्वरूप को जाना है, समझा है उन देव, गुरु, शास्त्र को और उनके प्रति जो शुभराग है, उनको कैसे छोड़ना? नहीं-नहीं भैया आप थोड़ासा कुछ कन्सिडर करो न। हम सिद्धों को ध्यान में रखते हुये; सिद्धों का चिंतन मनन करते हुये अपने स्वरूप में जायें तो क्या वांदा है, भाई! परंतु मैं आपसे पूछता हूं हम तो आपको सिद्धों के चिंतन-मनन के साथ स्वरूप में जाने के लिये पर्मिशन देवे; पर आपको उपदेश तो अरिहंतों ने दिया है तो उनको तुम क्यों भूलते हो? अच्छा अच्छा! अरिहंतों को भी साथ में लेकर जायेंगे। अरे! पर वे अरिहंत पूर्व में साधु बनकर हुये हैं, आचार्य, उपाध्याय बनकर हुये हैं, तो उनको भी क्यों छोड़ना? तो ऐसे कहां तक लिस्ट बढ़ेगी? ख्याल में आया? अरे भाई! आप कभी शिखरजी चढ़े हैं क्या? शिखरजी पैदल चढ़कर गयी हैं? नहीं? शिखरजी ही नहीं गयी, चलो अच्छा है। जो-जो शिखरजी के पहाड़ पर चढ़े, सवाईभाई आप गये कि नहीं? तो नीचे से जब रात को दो बजे निकलते हैं और जो भी जाते हैं दिवाली के बाद ठंडी के दिनों में ही जाते हैं, ठंडी में

चढ़ने में ज़रा स्फूर्ति रहती है। तो जाने के पहले एक-एक, दो-दो, चार-चार स्वेटर पहनकर चढ़ना शुरू करते हैं। जैसे जैसे पहाड़ चढ़ते हैं वैसे एक-एक, एक-एक निकालेंगे और निर्भार होकर ऊपर जायेंगे। वैसे आत्मा में भी जो प्रवेश करना चाहेगा वह विकल्पों के भार सहित अंदर नहीं जा पायेगा वह तो निर्भार होगा, निर्विकल्प होगा तो ही आत्मा में-अपने स्वरूप में गुप्त हो सकता है। तो यहां बात यह कहते हैं कि यहां जो घर में अंदर जाना चाहता है, तो साथ में रेलिंग को लेकर जायेगा कि नहीं? तो बोलते हैं नहीं। विकल्पों के साथ जायेगा कि नहीं? नहीं। उसको भी वहीं छोड़कर उसको अंदर प्रवेश करना पड़ेगा। इसी बात को यहां पर कहना चाहते हैं।

तो कहते हैं, इस ज्ञान के अनुसार पूर्ण श्रद्धा होने पर जब अपने घर की ओर पहला कदम उठायेंगे तो ही वह श्रद्धा और ज्ञान सच्चे होंगे और घर में जब प्रवेश करके पूर्ण सुख का उपभोग करेंगे तभी उस ज्ञान, श्रद्धा, आचरण की पूर्णता होगी। देखो, अब इस दृष्टांत को सात तत्त्व संबंधी सिद्धान्तों पर घटाते हैं। इस विश्व में अनंतद्रव्य हैं – जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। हमने वहां एक गांव देखा था, उसमें अनेक घर देखे थे। यहां सभी द्रव्य अपने में परिपूर्ण हैं, अनंत गुणों से युक्त हैं। परंतु प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने स्वचतुष्टय यानी स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभाव से युक्त होने से, मेरा इन द्रव्यों में प्रवेश नहीं हो सकता। यह जो हमने उदाहरण देखा उसके साथ अभी यह घटित कर रहे हैं। तो मैं भी एक द्रव्य हूं, अनंत गुणों से परिपूर्ण हूं। मैं अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव में रहता हूं। मेरे स्वचतुष्टय में अन्य कोई प्रवेश नहीं कर सकता। यह अभी तक हमने जो सीखा है न, उसीकी बात यहां बतायी है। तो कहते हैं, एक द्रव्य जो है यानी एक द्रव्य का जो स्वचतुष्टय है वह परचतुष्टय में प्रवेश कर पायेगा कि नहीं पायेगा? हां निखिलभाई आप क्या कहेंगे? जीवद्रव्य, पुद्गलद्रव्य में प्रवेश कर पायेगा कि नहीं पायेगा? क्यों नहीं? अभी जो हमने सीखा न दो-चार दिन में, उसीमें से आपको आन्सर मिलनेवाला है। हां बोलो-बोलो, भाईसाहब आप बतायेंगे? दो द्रव्यों में कौनसा अभाव है? *श्रोता: अत्यंताभाव है।* हां? अत्यंताभाव है। तो अत्यंताभाव यानी एक द्रव्य दूसरे द्रव्य में प्रवेश ही नहीं कर पाता है, यह बात बताना चाहते हैं। तो कह रहे हैं कि मेरे स्वचतुष्टय में अन्य कोई नहीं प्रवेश करता और मैं अन्य द्रव्य के स्वचतुष्टय में प्रवेश नहीं करता हूं। यानी यहां कहते हैं कि मैं पर के घर में प्रवेश नहीं कर सकता, न पर कोई मेरे घर में प्रवेश कर सकता है।

चारों गति में भ्रमण करनेवाला संसारमार्ग है, जो जन्म-मरण आदि अनेक विपत्तियों से भरा पड़ा है। इससे हटकर एक मोक्षमार्ग है जिसपर चलकर मैं मोक्षमहल में प्रवेश कर सकता हूं। मार्ग छोड़कर अपने घर में निवास कर सकता हूं। यानी यहां पर बात बतायी थी कि अन्य घरों में बहुत सुख है, लेकिन मैं उन घरों में प्रवेश नहीं कर सकता। कौन-कौन सुखी होंगे पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश, कालवाले घर सुखी होंगे या कोई अन्य? जो जीव है न, उनको यहां घर बताया है। प्रत्येक जीव अनंतसुख से युक्त है, लेकिन वह सुख मेरे किस काम का? जो सिद्ध हैं जो अनंतसुखी हैं, उनके अनंतसुख में से थोड़ासा सुख तो हमको मिलता होगा कि नहीं? हां जी? नहीं मिलता है? अभी हमारे अर्पलसाहब के पास करोड़ों रुपये हैं, हमें उसका क्या फायदा है? उसमें से एक पैसा भी हम वापर सकते हैं कि नहीं? नहीं बोलते हैं। ख्याल में आया? तो यहां वही कह रहे हैं कि यह अनेक जो रास्ते हैं न, गांव है न, उस गांव में जो बहुत से रास्ते हैं वे कांटों से भरे हैं, उसमें गड्ढे हैं, उभड़े हुये हैं। तो यहां भी कहते हैं चारों गति में यह जीव घूम रहा है तो वह सारे रास्ते कैसे हैं? स्वघर में ले जानेवाले नहीं हैं, वह सारे खोटे-खोटे रास्ते हैं। लेकिन इनमें एक अच्छा रास्ता है, कौनसा है? कि निजघर में जाने के लिये, क्या कह रहे हैं देखो-देखो? इनसे हटकर एक मोक्षमार्ग है जिस पर चलकर मैं मोक्षमहल में प्रवेश कर सकता हूं। मार्ग को छोड़कर अपने घर में निवास कर सकता हूं। मोक्षमार्ग पर चलकर यानी जहां से शुरुआत होगी तो पहले तो हम घर में जायेंगे कब? कि मार्ग को छोड़ेंगे तब घर में जायेंगे। तो कह रहे हैं, शास्त्रों से ऐसी जानकारी प्राप्त करके जब मैं अपने घर यानी स्वद्रव्य की तरफ पहला कदम उठाकर मोक्षमार्ग में आऊंगा अर्थात् सम्यक्त्व प्राप्त करूंगा। यहां मोक्षमार्ग में आऊंगा का अर्थ क्या है? सम्यक्त्व प्राप्त करूंगा तब से श्रद्धा, ज्ञान और आचरण सच्चे होंगे।

इस मोक्षमार्ग पर चलकर जब घर में प्रवेश करके मैं वही रहने लगूंगा, पूर्ण-परिपूर्ण सुख का उपभोग करूंगा तभी श्रद्धा, ज्ञान, आचरण की पूर्णता होगी। मैं एक स्वतंत्र अस्तित्ववान सत् पदार्थ हूं, मेरे अलावा अन्य अनंत जीव तथा अन्य सभी पांच द्रव्य अजीवतत्त्व हैं–जो ज्ञेयतत्त्व हैं। पहले हमने देखा था ज्ञेय, हेय, उपादेय – ये सब मान्यता में कैसे हैं उसकी बात है, इसे ज्यों का त्यों श्रद्धान कहा है। ये शब्द तो आपने सुने होंगे उसका अर्थ भी जानेंगे हम अभी। देखो, ज्ञेय यानी क्या है कि जानने योग्य। ज्ञेय का अर्थ क्या है?

जानने योग्य और हेय का अर्थ क्या है? हां जी? *श्रोता: त्यागने योग्य।* त्यागने योग्य, बहुत बढ़िया! छोड़ने योग्य और उपादेय जो है, उसका अर्थ हम देखेंगे। हां जी, उपादेय का अर्थ क्या बताया? *श्रोता: ग्रहण करने योग्य।* ग्रहण करने योग्य। अभी देखो, आपने जो ग्रहण करने योग्य बताया है तो यहां कहते हैं उपादेय के भी तीन प्रकार से अर्थ किये जाते हैं। जब वह बात आयेगी तब मैं बताऊंगा लेकिन यहां जो कह रहे हैं वह ज्ञेयतत्त्व की बात है। इन सात तत्त्वों में हम हेय-ज्ञेय-उपादेय को लगायेंगे। तो ये सात तत्त्व हैं उनमें ज्ञेय तत्त्व कौनसा है? हां? *श्रोता: जीवतत्त्व।* जीव हां। आप क्या कहते हैं धीमंतभाई? *श्रोता: जीव और अजीव।* जीव और अजीव ज्ञेयतत्त्व हैं। अच्छा, अच्छा, अच्छा! हां और कुछ कोई बतायेगा। *श्रोता: सातों।* हां? *श्रोता: सातों तत्त्व जानने योग्य हैं।* सातों तत्त्व जानने योग्य हैं। अच्छा! और हेय तत्त्व कौनसे हैं? *श्रोता: आस्रव-बंधतत्त्व।* यही बात हमें समझनी है। एक दो मिनट थोड़ासा धीरज रखो, यहां सारा पेपर खुलनेवाला है। क्योंकि हम ऐसा बोलेंगे तो आपको यकीन नहीं आयेगा। लिखकर रखने से आप समझ सकेंगे कि क्या बात होनेवाली है। तो उससे पहले हम यहां जो बात चल रही है उसको देखेंगे। यहां क्या कह रहे हैं देखो?

मैं एक स्वतंत्र अस्तित्ववान सत् पदार्थ हूं, मेरे अलावा अन्य अनंत जीव तथा अन्य सभी पांच द्रव्य अजीवतत्त्व हैं। वे ज्ञेयतत्त्व हैं। किसको ज्ञेयतत्त्व बताया? *श्रोता: अजीवतत्त्व को।* अजीवतत्त्व को और हमने क्या कहा? अजीव और जीव दोनों ज्ञेयतत्त्व हैं; फिर और क्या कहा? कि सातों ही तत्त्व ज्ञेय हैं; यहां तो सिर्फ अजीवतत्त्व को ज्ञेयतत्त्व कहा है। आगे, अब मुझे सुनोगे तो अच्छा है, उस बोर्ड पर लिख रहे हैं वह बात तो बाद में आपको ज्ञान में आनेवाली है, डिस्टर्ब मत होना। ज्ञेय अर्थात् जानने योग्य। उनका ज्ञान मुझे होता है। बस, इतना ही उनसे मेरा संबंध है। किनसे? मैं छोड़कर अन्य सभी, उनका और मेरा कौनसा संबंध है? तो वे ज्ञेय हैं और मैं ज्ञायक हूं। वास्तव में यह कहना भी उपचार का कथन है। मैं ज्ञायक हूं बस! वे मेरे ज्ञान के ज्ञेय हैं, ऐसा कहना यह व्यवहार कथन है, उपचार से किया गया कथन है। तो इसलिये कहते हैं उनका मुझे ज्ञान होता है बस, इतना ही उनसे मेरा संबंध है। ज्ञेयतत्त्व है इसलिये उसे ही जानते रहना इष्ट है ऐसी किसीकी कल्पना होगी तो वह भूलभरी है। क्या कहते हैं? ज्ञेयतत्त्व है इसलिये क्या उनको ही जानते रहना है?

देखो, एक बात मुझे याद आयी है कि इ.स. १९९२ में मैंने और उज्ज्वला ने यह निर्णय लिया था कि अभी हम अपने-अपने व्यवसाय से मुक्त हो जायेंगे यानी हम काम धंधा छोड देंगे और हम घर में ही रहेंगे और स्वाध्याय करेंगे। तो उस वक़्त क्या हो गया? हमारे पहचान के एक हमें मिले, उन्होंने कहा, आपका डिसिजन बहुत बढ़िया है। मैं भी आपके साथ रिटायर होऊंगा। वह 'व्ही. आर. एस.' उस समय से हमने चालू किया। बाद में यह तुम्हारा निकला व्ही. आर. एस., ख्याल में आया? तो उसने भी हमारे पहले एक महीना रिटायरमेंट ली, हमने अगस्त में ली उसने जुलाई में ली। तो फिर आगे बात क्या हुयी? वे शुरुआत में हमारे साथ शिबिरों में आया करते थे, फिर शिबिरों में आना भी बंद हो गया। फिर उनसे पूछा गया कि आज कल आप क्या करते हो? स्वाध्याय वगैरह कुछ चल रहा है कि नहीं? बोले नहीं-नहीं-नहीं, स्वाध्याय वगैरह कुछ नहीं हो रहा है। तो फिर आप करते क्या हो? मैं तो सिर्फ ज्ञायक बना रहता हूं। ज्ञायक बने रहते हो यानी क्या करते हो? तो बस इधर-उधर जाता हूं, कहीं झगड़ा होता है तो उसको जानता हूं, मैं तो सिर्फ जानता हूं, मैं उनके झगड़े में तू बराबर है, तू गलत है, ऐसा कर या वैसा कर, इसतरह से कुछ नहीं बोलता। मैं तो ज्ञायक हूं। तो क्या यह ज्ञायकपना साचा है? अरे ज्ञायक तो उसे कहते हैं जो अपने को जाने, जो अपने को परिपूर्ण जाने। उनके ज्ञान में परपदार्थ सहजरूप से झलकते हैं और उनको सर्वज्ञ कहते हैं। तो कह रहे हैं कि मैं क्या करता हूं? तो सिर्फ जानता हूं और जानता किसको है? तो पर को जानने में वह मशगूल है, स्व को नहीं जाने तो वह ज्ञायक नहीं कहलाता है।

तो यही बात यहां कहते हैं कि यह जो विश्व के सारे पदार्थ हैं उनका ज्ञान मुझे होता है बस इतना ही उनसे मेरा संबंध है। ज्ञेयतत्त्व है इसलिये उसे ही जानते रहना इष्ट है, ऐसी किसीकी कल्पना होगी तो वह भूलभरी है। इस बात को मैं समझाना चाहता था। अजीवतत्त्व को केवल जानना यह सही जानना नहीं है। तो फिर क्या जानना सही है? अजीवतत्त्व में मेरा प्रवेश नहीं हो सकता, मुझमें अजीवतत्त्व प्रवेश नहीं कर सकता, मेरा और अजीवतत्त्व का आपस में कोई संबंध, लेन-देन, सुख-दुःख का कार्यकारणपना आदि नहीं है, ऐसा जानना यथार्थ जानना है। क्यों? क्योंकि अजीवतत्त्व पर है, स्व नहीं है, ऐसा जानना ही कार्यकारी है। एक प्रश्न पूछूं मैं? जिसको आता हो वह हाथ उठाये, बोले नहीं। लेकिन उत्तर ज़रूर देना हो। मैं ऐसा पूछता हूं, ये जो आचार्य, उपाध्याय और साधु हैं, वे मेरे लिये

साधक हैं या बाधक हैं? आप चेतनाबेन हैं क्या? चेतनाबेन, आपको उत्तर आता हो तो ज़रूर बोलना, हो! मैंने क्या पूछा? क्योंकि क्या है बाहर से-सामने से प्रकाश आता है न, तो सामने कौन बैठा है दिखता नहीं, सब चेहरे काले-काले दिखते हैं। मैं यह पूछ रहा हूं आचार्य, उपाध्याय और साधु ये मेरे लिये साधक हैं या बाधक हैं? पहले इनको पूछेंगे, बाद में आपसे पूछेंगे आप ज़रा तैयार रहना। हां, कौन बताना चाहेगा? नवलचंद जी आप बतायेंगे? हां, बोलो भाई! *श्रोता: अपेक्षा से... पर्याय में शुद्धि प्रकट करने के लिये साधक और जब निर्विकल्प अवस्था में जाना है तब बाधक।* अच्छा! आपका कहना है अपेक्षा से, यानी शास्त्रों में रुचि या अध्यात्म में रुचि पैदा करने के लिये वे साधक हैं और बाधक कब हैं? *श्रोता: जब अनुभूति करनी है अपनी।* हांजी? *श्रोता: जब निर्विकल्प अनुभव।* जब अपने स्वरूप में जाना है तब वे बाधक हैं – ऐसा आपका कहना है। आप क्या कह रहे हैं साहब? आप कुछ कहना चाहते हैं? नहीं और कोई कुछ कहना चाहेगा? हां बोलो चेतनाबेन। *श्रोता: वह न साधक है न बाधक है, वह ज्ञेय है।* क्या बताया देखो। अरे! परपदार्थ मेरे लिये न इष्ट है न अनिष्ट है, जिसमें मेरा ज्ञान दर्शन है वह जीवतत्त्व है, जिनमें मेरा ज्ञानदर्शन नहीं है, वह सारा अजीवतत्त्व है और अजीवतत्त्व है वह ज्ञेय है। ज्ञेय है वह न साधक होता है न बाधक होता है। ख्याल में आया? तो यहां क्या कह रहे हैं देखेंगे।

दूसरों के घर देखते, निहारते हुये गड्ढे में गिर जाना मूर्खता है। उसीतरह अजीवतत्त्व ज्ञेयतत्त्व है ऐसा सोचकर उसे ही जानते रहने में हमें रस होगा, रुचि होगी तो वह यथार्थ जानना नहीं कहलायेगा। पूजन में भी हम कहते हैं कि 'हो शांत ज्ञेय निष्ठा मेरी'। पूजन में ऐसा सुना है कि नहीं आपने? पूजन की होगी तो सुना होगा न! तो कौनसे पूजन में यह आता है कौन बतायेगा? चेतनाबेन दूसरे से मत पूछना या दूसरे को मत बताना। हां हमारी बहन, मुझे नाम तो याद नहीं आ रहा है। हां-हां जमनाबेन बराबर अभी याद आया, आप बोलो। *श्रोता: सिद्ध पूजन।* सिद्ध पूजन में। अच्छा-अच्छा! आप जानती हो? नहीं, क्योंकि हम पूजन कहां करते हैं न? कोई बात नहीं, करना हो, पूजन तो करनी ही चाहिये और कोई कुछ कहनेवाला है? अरे! वह सीमंधर पूजन में है हुकुमचंदजी भारिल्ल की, हां, चलो आगे बढ़ते हैं। क्या करें? अब आगे बढ़ते हैं। किधर गया? पूजन में भी हम कहते हैं कि 'हो शांत ज्ञेय निष्ठा मेरी।' यानी ज्ञेय को जानने की जो मेरी आकुलता हो रही है वह भी शांत हो जाये। तो कैसे शांत होगी? तो स्वज्ञेय जो मैं हूं उसमें मैं एकाकार हो जाऊंगा तो

अन्य को जानने की जो आकुलता है वह भी नष्ट होगी। तो ऐसी अंदर में स्थिरता हो जाये कि परिपूर्ण स्थिरता होने से पूरा लोकालोक ज्ञान में झलके ऐसी सहज अवस्था हो जाती है। आज तक इस जीव को अजीवतत्त्व की ही महिमा भासित हो रही है। किसीको पैसे की महिमा भासित हो रही है और किसीको अन्य की।

देखो, एक बहुत मज़े की बात याद आयी मुझे। हम अमेरिका में गये थे तो वह ऐसा सीझन होता है कि गर्मी के दिन खत्म होते हैं और ठंडी के दिन चालू होते हैं, तो उसको वहां कहते हैं, यह फॉल सीझन है। जो अमेरिका जाकर आये हैं या वहां रहते हैं उनको मालूम होगा। फॉल सीझन यानी क्या? वहां की जो वनस्पति है, झाड़ है, वह झाड़ अलग-अलग रंग के पत्ते उनमें आ जाते हैं और जो ओरिजिनल हैं वे गिर जाते हैं और उसको कहते हैं देखो-देखो कितना बढ़िया सीन है। यानी लोगों को दूसरे के फॉल में ही मज़ा आता है। नहीं समझे? वह कौनसा है बड़ा फॉल? क्या नाम है? *श्रोता: नायगारा फॉल।* हां नायगारा फॉल देखने में कितना मज़ा आता है? और वहां लिखकर रखा है हर मिनट में या हर सेकंड में इतने लाखों गॅलन पानी गिर रहा है। तो इतने जीवों का फॉल हो रहा है, जो ऊपर से कोई गिरे तो कितना अच्छा लगता होगा उन जलकायिक जीवों को? वह फॉल देखने में मज़ा आता है। लोग पैसा खर्चा कर-करके जाते हैं और वहां बोट में बैठकर इधर-उधर ऐसा घूमते हैं और अपने अंग के ऊपर दो-चार क्या बोलते हैं? तुषार आ जाये तो ओहो! क्या धन्य-धन्य!

तो यहां कह रहे हैं देखो कि आज तक इस जीव को अजीवतत्त्व की ही महिमा आयी है। ज्ञेयलुब्ध होकर परद्रव्यों को जानने में ही इस जीव ने अनंत भव धारण किये हैं। परंतु इन सबको जाननेवाला मैं ज्ञानवान ज्ञायक उसकी महिमा इस जीव को नहीं आयी है। प्रत्येक द्रव्य की पर्याय उसमें स्वयं में ही होती है। दर्पण में दिखनेवाला अग्नि का प्रतिबिंब यह दर्पण की पर्याय यानी अवस्था है। वह दर्पण की स्वच्छता को जाहिर करती है। तद्वत सर्व पदार्थों को जाननेवाली ज्ञान की पर्याय आत्मा की अपनी है, वह ज्ञान गुण को जाहिर करती है। प्रतिबिंब देखने में जो मग्न हुआ उसे दर्पण की स्वच्छता का भान नहीं है। स्वच्छता नष्ट नहीं हुयी है। यह क्या कहना चाहते हैं? देखो, जब हम आईने के सामने दर्पण यानी आईना, आईने के सामने जाते हैं तो हम क्या देखते हैं? नया आईना खरीदना हो तो

हम देखते हैं कि यह आईना कितना अच्छा है, स्वच्छ है, नज़दीक जाकर देखते हैं, दूर से भी देखते हैं और फिर नज़दीक जाकर देखते हैं, हाथ लगाकर देखते हैं। तो जब हम क्या देख रहे हैं? उस आईने की रिफ्लेक्टिव्हिटी, स्वच्छता देख रहे हैं। उस समय अपना प्रतिबिंब देखते हैं कि नहीं? नहीं और जिस समय अपना प्रतिबिंब देखते हैं उस समय उस आईने की स्वच्छता देखते हैं कि नहीं? ख्याल में आया? यही बात बताना चाहते हैं। देखो, क्या कह रहे हैं?

तद्वत् सर्व पदार्थों को जाननेवाली ज्ञान की पर्याय आत्मा की अपनी है। वह ज्ञान गुण को ज़ाहिर करती है। वैसे ही प्रतिबिंब देखने में जो मग्न हुआ उसे दर्पण की स्वच्छता का भान नहीं है। अपना चेहरा देख रहे हैं न, आईने की स्वच्छता नष्ट नहीं हुयी है, स्वच्छता तो वहीं है। वैसा होता तो प्रतिबिंब दिखायी ही नहीं देता यानी स्वच्छता ही नष्ट हो जाती तो यह रिफ्लेक्शन कैसे आता? तद्वत् ज्ञान में पदार्थ झलक रहे हैं, प्रतिबिंबित होते हैं तब उन प्रतिबिंबों को जानने में ही जो अटक जाता है, मग्न होता है उसे ज्ञान का यानी आत्मा का अर्थात् ज्ञायकप़ने का भान नहीं होता। क्योंकि वह पर को जान रहा है न। तुम कौन हो? मैं ज्ञायक हूं, मैं जान रहा हूं, जान रहा हूं। तो वह अपना जो स्वभाव है उसीको भूल जाता है। आज तक तुमने दर्पण में अपना मुंह देखा होगा, अब दर्पण की स्वच्छता को देखने की कोशिश करना। यानी हमें अपने स्वभाव को देखने की कोशिश करना! ऐसा उपदेश दे रहे हैं। यह जीव ज्ञेयतत्त्व को ज्ञेय न मानकर उसके ग्रहण - त्याग का भाव करता है। कि जैनिझम सीखना है तो हमें यह आचार्य, उपाध्याय और साधु साधक हैं और अपने स्वरूप में जाने के लिये बाधक हैं ऐसा आपने जो उत्तर दिया है न, तो यहां कह रहे हैं जीव ज्ञेयतत्त्व को ज्ञेय न मानकर ये सारी जो बातें हैं न, उनको ज्ञेय न मानकर उनके ग्रहण-त्याग का भाव करता है। कई लोग सोचते हैं फिर हमें धन, संपत्ति, घरबार का त्याग करना होगा। ऐसा सोचनेवाले अजीवतत्त्व को यथार्थ रीति से नहीं जानते। इस अजीवतत्त्व का कभी जीवतत्त्व में प्रवेश ही नहीं हुआ है, उसका त्याग करने की बुद्धि हास्यास्पद है।

अजीवतत्त्व को ज्ञेय न मानकर, हेय यानी छोड़ने योग्य या उपादेय यानी ग्रहण करने योग्य मानना यही बड़ी भारी भूल है। तत्त्वज्ञानरूपी उपचार की उसे आवश्यकता है। यानी उसको तत्त्वज्ञान का सही नॉलेज होना चाहिये। अभी यहां बताते हैं जो आपके सामने बोर्ड

पर लिखा है। ज्ञेय अर्थात् जानने योग्य, वह कौनसा तत्त्व है? हां? अजीवतत्त्व। ज्ञेय है वह अजीवतत्त्व है और क्या कहते हैं? हेयतत्त्व अर्थात् छोड़ने योग्य या त्यागने योग्य। वह कौनसा है? आस्रव और बंधतत्त्व। फिर आगे कहते हैं उपादेय जो है, वह उपादेय शब्द के तीन भेद हैं, कौन-कौनसे? तो कहते हैं यह जो लिखा है; संवरतत्त्व और निर्जरातत्त्व वह कैसे हैं? एकदेश प्रकट करने योग्य उपादेय है और यह मोक्षतत्त्व कैसा है? तो कहते हैं पूर्ण प्रकट करने योग्य उपादेय। उपादेय का अर्थ हमने क्या देखा था? कि ग्रहण करने योग्य। तो संवर, निर्जरा और मोक्षतत्त्व ये कैसे तत्त्व हैं? पर्यायतत्त्व हैं, तो उन्हें हम क्या कहेंगे? प्रकट करने योग्य हैं। तो आश्रय किसका करना है? तो कहते हैं जो पहला लिखा है – जीवतत्त्व वह आश्रय करने योग्य उपादेय है। हम अपने स्वभाव का, स्वरूप का आश्रय करेंगे तो ही संवर प्रकट होगा, तो ही निर्जरा प्रकट होगी और तो ही मोक्ष प्रकट होगा। देखो, हम पर्याय प्रकट करने के लिये कोशिश करते हैं तो जब तक हमारी पर्याय पर ही दृष्टि है, तब तक हमें अपने स्वभाव का अनुभव नहीं होगा क्योंकि पर्याय तो एक समय में नष्ट हो जायेगी उसका क्या आश्रय करोगे तुम? इसलिये जो त्रिकाली है, हमेशा रहनेवाला है ऐसा जो जीवतत्त्व है, वही एकमेव आश्रय करने योग्य उपादेय तत्त्व है। यह बात समझ में आयी है तो हम आगे बढ़ेंगे, नहीं समझ में आयी तो पूछना कि उसमें हमें यह बात समझ में नहीं आयी है। *श्रोता: एकदेश?* हां, एकदेश यानी पार्शली, यानी हम संवर और निर्जरा यह तो प्रकट करने योग्य है लेकिन वे तो पार्शली ही प्रकट होते हैं। परिपूर्ण संवर या परिपूर्ण निर्जरा हो जाये तो वह मोक्षतत्त्व हो जाता है। इसलिये संवर और निर्जरातत्त्व को बताया है कि आंशिक प्रकट करने योग्य हैं और मोक्षतत्त्व तो पूर्ण ही प्रकट होगा। वह आधा अधूरा तो होगा नहीं। पुस्तक में से पढ़ते हैं अपने।

हमने अभी जो दृष्टांत देखा था उसमें जैसे दूसरों के घरों को जानते रहने से सुख नहीं मिलता परंतु वे घर मेरे नहीं हैं यानी हम अजीवतत्त्व को जानेंगे लेकिन उसरूप मैं नहीं हूं या वे मेरे नहीं हैं, मात्र इतना जानना ही कार्यकारी है। वे मेरे मात्र ज्ञेय हैं उन घरों को मुझे त्याग करना चाहिये ऐसा मानना गलत होगा। क्योंकि वे घर मेरे हैं ही नहीं तो उसको हेय मानना भ्रान्ति है। इसीतरह दूसरों के घर में मैं सुख प्राप्त करूंगा ऐसा मानना अर्थात् उन्हें उपादेय मानना भी भ्रान्ति है। अन्य जो हैं न, उन्हें भी उपादेय मानना वह भी गलत है क्योंकि उन घरों में मेरा प्रवेश ही नहीं हो सकता। वे घर दूसरों के हैं मेरे नहीं, मेरा सुख मेरे घर में

है ऐसा जानना यथार्थ जानना है और इसतरह से जानने पर ही अन्य घरों का यथार्थ ज्ञान हुआ ऐसा कह सकते हैं। यह तो दृष्टांत हुआ अब सिद्धान्त को देखेंगे। यह दृष्टांत भी इतना कि जिसको कहते हैं इतना ॲप्रोप्रिएट है, समझने जैसा है। तो कहते हैं दृष्टांत में देखा उसीतरह अजीवतत्त्व मात्र ज्ञेयतत्त्व है, वह स्वतत्त्व नहीं परतत्त्व है। मेरा सुख स्वतत्त्व में है, परतत्त्व में नहीं तथा अजीवतत्त्व हेय नहीं है। *श्रोता: हेय नहीं है।* अजीवतत्त्व हेय नहीं है, ज्ञेय है, हेय नहीं है क्योंकि उसका मेरेमें अभाव ही है तो मैं उसे किसतरह त्याग सकता हूं?

अभी हमने पूछा न, आपने आलू-प्याज़ आदि खाना छोड़ दिया न? हां साहब, दस साल हो गये। कहेंगे कि हमने दस साल से आलू-प्याज़ आदि छोड़ दिया है, उसका अर्थ क्या है कि वह खाने की इच्छा ही नहीं होती है वह छोड़ना है। आलू-प्याज़ तो अत्यंत परपदार्थ है उसको हम ग्रहण भी नहीं करते और छोड़ भी नहीं सकते। बात बिलकुल सही है लेकिन ग्रहण नहीं करते, फिर भी बाहरगांव जाते हैं न, तब हम खा लेते हैं। क्योंकि बाहरगांव गये तो न मालूम खाना नहीं मिलेगा तो? अरे दो-चार दिन खाना नहीं खायेगा तो मरेगा थोड़ी? क्यों? लेकिन हमें ऐसा लगता है कि खाना यानी अन्न, पानी और हवा के बिना हम जिन्दा नहीं रह सकते। तो मैं आपसे पूछता हूं हमारे सिद्ध भगवान हैं, वे कितना खाना खाते हैं, कितना पानी पीते हैं? तो वे ज़िंदा हैं कि नहीं? बोलो धीमंतभाई सिद्ध भगवान? किसने देखा? आप कह रहे हैं तो हमको मानना पड़ता है। तो मैं कहता हूं नरक में जो जीव है वह अधिक से अधिक कितने काल वहां रहता है मालूम है भाई? नरक का जीव? हां जी? *श्रोता: ३३ सागरोपम।* ३३ सागरोपम। यह बहुत बड़ा काल है। तो कहते हैं जो सातवें नरक का नारकी है वह ३३ सागरोपम में कितना खाना खाता है? हां जी? पानी पीता होगा? अरे भाई! उसके बिना भी वह ३३ सागर तक रहता है। उसको इच्छा कितनी है कि पूरे विश्व का अनाज खा जाऊं तब भी उसकी भूख तृप्त नहीं होगी; पूरे सागरों का पानी पी जाऊं तो भी प्यास नहीं बुझे, ऐसे तीव्र क्षुधा-तृषा से वह ग्रसित है; फिर भी ३३ सागरोपम तक वह ज़िंदा है बोलो। तो हम अन्न पानी से ज़िंदे हैं ऐसा ये मानते हैं। आपने बताया वह बराबर परंतु देव को क्या होता है? देवगति के जो जीव हैं, वह जिनके ३३ सागर आयु है उनके तो ३३ हजार वर्ष के बाद खाने का विकल्प आता है और कितना खाते हैं? अरे! कंठ से अमृत झरता है, पेट भर जाता है बोलो। तो हमने जो सोचा है कि अन्न पानी नहीं खायेंगे तो मेरा क्या होगा? मिथ्या मान्यता रहेगी और क्या होगा?

तो क्या कह रहे हैं देखो? यहां समझा रहे हैं कि अजीवतत्त्व हेय नहीं है क्योंकि उसका मेरेमें अभाव ही है। परपदार्थ का मेरेमें अभाव है और मेरा परपदार्थों में अभाव है। यह अजीवतत्त्व इसलिये हेय नहीं है बल्की ज्ञेय है। उसका मेरेमें अभाव ही है तो मैं उसे किसतरह त्याग कर सकता हूं? अजीवतत्त्व उपादेय भी नहीं है। निखिलभाई, क्या कह रहे हैं देखो-देखो, ज़रा शांति से सुनना हो, क्योंकि आपको ज़रा अभी आकुलता हो रही है कि कब यहां से छूटूं। पिंजरे में से पंछी जैसे छूटता है तो ज़ोर से उड़ता है, वैसे ही यहां के लोगों की शायद परिस्थिति हो गयी हो। यहां तो कह रहे हैं, अजीवतत्त्व उपादेय भी नहीं है। तो अजीवतत्त्व में किसको लेना नवलचंदजी आप बताओ? यह आपके पास करोड़ों की संपत्ति है वह जीवतत्त्व है कि अजीवतत्त्व है? अजीवतत्त्व है, तो वह उपादेय है कि नहीं? यह ऐसा डिफिकल्ट प्रश्न मत पूछना साहब। अरे! ज़िन्दगी उसके लिये हमने गंवायी और अभी उसको तुम उपादेय नहीं कहते हो। हमारे मुंह से तो ऐसी बात कभी नहीं आयेगी, क्यों? हां? वह पैसा अजीवतत्त्व है और उपादेय नहीं है? तो हमने तो ज़िन्दगी भर मूर्खाई की, उसके पीछे ही लगे रहे, पकड़ो-पकड़ो-पकड़ो। किसको? पैसे को। अरे! यह तुम तो छोड़ो यह हम जब मुंबई से पूना या पूना से किधर-किधर गांव जाते हैं तो हमारे सामने वह ट्रक्स निकलती हैं। तो समय से पहले और नसीब से अधिक किसीको कुछ भी नहीं मिलता – ऐसा ट्रक के पीछे लिखते हैं। जैसे की जैनिझम के बड़े-बड़े आचार्य हो गये हैं। क्या लिखते हैं? समय से पहले और नसीब से अधिक...

हम तो सोचते हैं, हम दिन में दस घंटा काम करेंगे तो अधिक पैसा कमायेंगे और दिन में चौबीस घंटा काम करेंगे तो उससे डबल कमायेंगे। जितना पुण्यकर्म कमाकर तू यहां आया है उससे एक रत्तीभर भी अधिक तेरेको धन-संपदा नहीं मिलनेवाली है। लेकिन इस पर भरोसा कौन करें? हमको लोग पूछते हैं तुम रिटायर्ड हो गये? हां-हां बिलकुल हो गये साहब। कबसे? सोलहवां साल चल रहा है। तो अभी हम जवान हैं, सोलहवां साल चल रहा है न। तो आप खाना-पीना कैसे खाते हैं? हाथ से उठाकर खाते हैं और कैसे खाते हैं? अभी तक मुंह से तो खाना चालू नहीं किया है कि वह कौन खाता है मुंह से? लोगों को चिंता है कि यह कैसा जीता है। अरे! हम तो आप जैसे के भरोसे जीते हैं, यहां तो मुफ्त में खाना मिलता है न भाई! ऐसा मत समझना हो! क्या करें? यहां कह रहे हैं देखो, जो

अजीवतत्त्व है वह उपादेय भी नहीं है क्योंकि उसमें मेरा प्रवेश ही नहीं है। इसप्रकार से अजीवतत्त्व को जानना यथार्थ जानना है। अभी तक तो हमने अजीवतत्त्व संबंधी या जीवतत्त्व संबंधी जानने में - मानने में जो विपरीतता थी, भूल थी उसको देखने की कोशिश की। अभी यथार्थ कैसा जाने उसकी बात चल रही है। हम अरिहंत - सिद्धों के प्रति देखते हैं कि मेरा भी स्वभाव, मेरा भी वैभव उनके जैसा ही है। स्वभाव में लीन होकर अनंतसुखी बन सकते हैं, इसका साक्षात् उदाहरण अरिहंत - सिद्धों के रूप में विद्यमान है। उन्होंने यह सुख किस रीति से, किस विधि से प्राप्त किया यह जानने के लिये अरिहंत की वाणी-जिनवाणी हम सुनते हैं। मुनि तो साक्षात् उस मोक्षमार्ग पर आरूढ़ हैं, इसलिये देव, शास्त्र, गुरु वंदनीय हैं, पूजनीय हैं। क्या कहना चाहते हैं देखो ?

यह अरिहंत की जो वाणी है और उनकी जिनवाणी सुनते हैं, यह सब बात किन्होंने बतायी है ? अरिहंतों ने हमें बतायी है और अरिहंतों ने जो बात बतायी है उसी विधि से जिनवाणी हम सुनते हैं और उसी रीति से मुनि जो हैं वे मोक्षमार्ग पर आरूढ़ हैं; वे चल रहे हैं; आगे-आगे जा रहे हैं और इसलिये क्या कहते हैं ? यह बात शास्त्रों में भी लिखी है और वे तीनों कौन-कौनसे ? देव, शास्त्र और गुरु ये वंदनीय तो हैं ही, लेकिन पूजनीय भी हैं। पूजनीय का अर्थ समझते हैं आप ? महावीरभाई, पूजनीय यानी क्या ? *श्रोताः आदरणीय।* हां। पूजनीय का अर्थ अष्टद्रव्यों से पूजनीय हैं। तो पूजनीय, आदरणीय वह तो अपना रेग्युलर लौकिक में उसका अर्थ ज़रूर निकलता है, वह गलत नहीं है। लेकिन हम इतनी बात ध्यान में अवश्य रखें कि जो हम अष्टद्रव्यों से पूजन करते हैं, तो वह किनकी पूजा करनी चाहिये ? तो यहां बता रहे हैं, नहीं शास्त्र में हर जगह बता रहे हैं। क्या बता रहे हैं ? कि देव, शास्त्र और गुरु इन्हीं की अष्टद्रव्यों से पूजन की जाती है। हमारे सामने पंचम गुणस्थानवर्ती जीव क्यों न आये, चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव क्यों न आये, लेकिन उनकी अष्टद्रव्यों से पूजन नहीं होती। इनके सामने जाकर हम इच्छामि कहेंगे, लेकिन हम भी आपके जैसे होवे ऐसी इच्छा हम ज़रूर प्रकट करेंगे कि आपमें जैसे स्वरूप में लीनतारूप जो अतीन्द्रिय आनंद का वैभव है वैसा हमें भी प्राप्त हो। ऐसे पंचम गुणस्थानवर्ती जीव तो श्रावक हैं, ऐलक है, क्षुल्लक है और अन्य भी जो कुछ हैं, इनके सामने जाकर हम इच्छामि करके उनको नमस्कार करें और मुनियों के सामने जाकर हम वन्दामि कहते हैं, ख्याल में आया ? और वे पूजनीय भी हैं लेकिन यह जो हमने देखे थे चौथे और पांचवें गुणस्थानवर्ती

जीव वे अष्टद्रव्यों से पूजनीय नहीं हैं। अगर कोई अष्टद्रव्यों से पूजन करता है तो समझना कि वह गृहीत मिथ्यात्वी है।

भाई! कड़क बात है हजम हो जाये उतनी करना। लेकिन हमसे अगर कोई गलती होती हो, आप तो गलती करनेवालों में से नहीं हैं, मैं जानता हूं, फिर भी कोई ऐसा जीव है, अज्ञानता से उसकी ऐसी कोई गड़बड़ चल रही हो, तो उसे ज़रूर सुधारना चाहिये। क्यों? आपको क्या पड़ी है? मेरेको कुछ पड़ी नहीं है। जो चाहो अपनो कल्याण, यहां जो हम एकत्रित हुये हैं वे कल्याण के लिये हैं। किसके? स्व कल्याण के लिये, क्योंकि हम पर का कल्याण कर ही नहीं सकते क्योंकि दो द्रव्यों में अत्यंताभाव है। इसलिये कोई एक द्रव्य परद्रव्य का परिणमन करें ऐसे तीन काल में नहीं हो सकता है। बात ख्याल में आती है? अब आगे बढ़ते हैं, क्या कहा देखो? देव, शास्त्र और गुरु ही पूजनीय हैं। हम अरिहंत सिद्धों के प्रति देखते हैं कि मेरा भी वैभव, मेरा भी स्वभाव उनके जैसा ही है यह जानने के लिये। स्वभाव में लीन होकर अनंतसुखी बन सकते हैं इसका साक्षात् उदाहरण अरिहंत सिद्धों के रूप में विद्यमान है। उन्होंने यह सुख किस रीति से, किस विधि से प्राप्त किया है यह जानने के लिये अरिहंत की वाणी यानी जिनवाणी यानी शास्त्र हम सुनते हैं। मुनि तो साक्षात् उस मोक्षमार्ग पर आरूढ़ हैं इसलिये देव, शास्त्र, गुरु वंदनीय हैं, पूजनीय हैं, परंतु इस जीव ने देव-गुरु-शास्त्र को ही उपादेय माना। सही देखा जाये तो यह सब कौनसा तत्त्व है? *श्रोता: अजीव।* बहुत अच्छा, बहुत अच्छा! देव-गुरु-शास्त्र कौनसा तत्त्व है? बोल मोना? *श्रोता: अजीवतत्त्व।* अजीवतत्त्व है। क्या कहा? सही देखा जाये तो ये सब अजीवतत्त्व हैं, ज्ञेय तत्त्व हैं; परंतु उन्हें आश्रय करने योग्य उपादेय तत्त्व माना; उन्हें जानकर, उपदेश सुनकर, आश्रय तो स्वतत्त्व का यानी जीवतत्त्व का लेना था, परंतु वैसा न करते हुये मात्र देवपूजा, शास्त्रश्रवण और गुरु की उपासना में ही यह जीव संतुष्ट होकर वहीं रुक गया है।

फिर से दोबारा मुझे वह बात याद आयी इसलिये कहता हूं अभी परसों मैंने ऐसा बताया था कि जो हमारे साक्षात् तीर्थंकर की मूर्तियां विराजमान हैं, उनको हाथ लगा-लगाकर ऐसा नमस्कार करना योग्य नहीं है। तो किसीने यहां पर मुझे बताया कि जाकर उसकी वैयावच्च करते हैं, बोले वैयावृत्त यानी उनके पैर दबाते हैं। ऐसा किसीने बताया मैंने मुझे याद नहीं अभी वह शायद भाई निकल भी गये होंगे। तो यहां कह रहे हैं देवपूजा,

शास्त्रश्रवण, गुरु की उपासना में ही यह जीव संतुष्ट होकर वहीं रुक जाता है। स्वरूप में लीनतावाली बात तो वह सब भूल जाता है। दूसरों की सेवा करने में ही पूरी ज़िन्दगी उठाता है। यह शुभभाव और उससे होनेवाला बंध यह तो आस्रव-बंधतत्त्व है। तात्पर्य यह हुआ कि केवल अजीवतत्त्व यानी देव-गुरु-शास्त्र को ही उपादेय मानकर यह जीव नहीं रुका परंतु आस्रव-बंधतत्त्व यानी देव-गुरु-शास्त्र की भक्ति को भी उसने उपादेय माना और क्या कहा? आश्रयभूत माना। यहां क्या कह रहे हैं? आस्रव-बंधतत्त्व को उसने उपादेय माना। आप कहते हैं कि ऐसा आप कहोगे तो लोग नास्तिक हो जायेंगे। तो नास्तिक किसको कहते हैं यह भी हम जानना चाहेंगे।

नास्तिक किसको कहते हैं? बोलो न भाई? आपने तो एक पिल्लू छोड़ दिया। हां, तो यह नास्तिक किसको कहते हैं? हम तो नहीं जानते, कम से कम आप जानते हैं उसे तो बताओ, ताकि हम उसका उत्तर दे सके; नहीं तो हम आगे बढ़ते हैं। क्यों? मेरे कहने से कोई नास्तिक होता हो तो जिनेन्द्र भगवान के कहने से सभी सम्यग्दृष्टि होने चाहिये थे। जिस जीव का जैसा परिणमन होना है वैसा वह स्वयं करेगा अन्य कोई उसको कराता है, यह मान्यता है तो वह नास्तिक है। ख्याल में आया? क्योंकि उसने जिनेन्द्र भगवान को ही नहीं माना। उन्होंने बताये हुये तत्त्वों को ही नहीं सुना और सुना हो तो बिलकुल उसको ॲक्सेप्ट नहीं किया। चलो, अब आगे बढ़ते हैं। ये हमारे मित्र हैं न, तो वे हमको भड़काना चाहते हैं; चलो ठीक है। हां, सम्यग्दृष्टि जीव को भी देव, गुरु, शास्त्र का बहुमान, वंदन, पूजा का भाव आता है। उसे शुभ-अशुभभाव यानी आस्रव और उससे होनेवाला बंध भी होता है परंतु मान्यता में वह आस्रव, बंध को हेय ही मानता है, त्यागने योग्य मानता है, उपादेय नहीं मानता।

देखो, आप ऐसा समझते होंगे कि सिर्फ मिथ्यादृष्टि को ही शुभराग आता है यहां तो कह रहे हैं सम्यग्दृष्टि को भी आता है। दोनों को शुभराग आता है लेकिन मिथ्यादृष्टि उस राग का कर्ता बनता है और सम्यग्दृष्टि उसको होनेवाले राग का ज्ञाता रहता है। ख्याल में आया? इतना फर्क है दोनों में। यह राग कौनसे गुणस्थान तक आता है, जमनाबेन? *श्रोता: बारहवें गुणस्थान।* दसवें गुणस्थान तक। आपने क्या बताया? *श्रोता: बारहवें गुणस्थान तक।* दसवें गुणस्थान तक। कोई बात नहीं, बहुत अच्छा। *श्रोता: छठवें गुणस्थान तक*

बुद्धिपूर्वक राग होता है। हां देखो, हमने क्या पूछा था? राग कौनसे गुणस्थान तक होता है? तो यह दसवें गुणस्थान के अंत समय तक रहता है और ग्यारहवें या बारहवें गुणस्थान में राग की विद्यमानता ही नहीं है। तो कह रहे हैं कि यह जो राग है वह सम्यग्दृष्टि को भी आता है। अभी जो दसवें गुणस्थान तक जो जीव पहुंचा हो और वह सम्यग्दृष्टि न हो, क्या ऐसा बन सकता है? तो यहां क्या कह रहे हैं? कि सम्यग्दृष्टि को भी राग आता है और मिथ्यादृष्टि को भी राग आता है। लेकिन जो शुभराग है, उस शुभराग का कर्ता मैं हूं ऐसा मिथ्यादृष्टि मानता है। व्हेअर अॅज, सम्यग्दृष्टि को भी राग आवे, अट्ठाईस मूलगुण पालन करने का भी राग आवे तब भी वे जानते हैं कि अमे आ परदेसमां क्यां आवी पड्या? हां बेनश्री बेन बोलती है न, हम कहां परदेश में आकर पड़े हैं? आ अमारो स्वदेश नथी। अमे क्यां परदेसमां आवी पड्या। अभी आप यहां पर बैठे-बैठे गुजराती तो सीख गये होंगे बाकी के लोग। क्यों? अरे हम परदेश में कहां आ पड़े हैं अपना स्वदेश छोड़कर? कहां है भाई तुम्हारा स्वदेश? अपने स्वरूप में है। यहां तो शांति-शांति-शांति, निराकुलता-निराकुलता-निराकुलता, सुख-सुख-सुख, समाधान-समाधान है। यहां आकुलतामय जो राग-द्वेष के परिणाम हो रहे हैं उनको भी वे जानते हैं लेकिन वे राग के जो कोई परिणाम हैं, उन राग के वे सिर्फ ज्ञाता हैं, लेकिन कर्ता कतई नहीं हैं। ख्याल में आया? ऐसा वस्तु का स्वरूप हमें समझना चाहिये, पहचानना चाहिये।

तो कह रहे हैं आस्रव-बंधतत्त्व को भी उसने उपादेय माना। किसने? जिसने भूल की है उसने और उसे आश्रयभूत माना। सम्यग्दृष्टि जीव को भी अभी देव-शास्त्र-गुरु का बहुमान, वंदन, पूजन का भाव आता है; उसे शुभ-अशुभभाव यानी आस्रव और उससे होनेवाला बंध भी होता है। यह किसकी बात कर रहे हैं? सम्यग्दृष्टि की। सम्यग्दृष्टि को क्या होता है? आस्रव भी होता है, बंध भी होता है। जो सातवें गुणस्थानवर्ती मुनिराज हैं, उनके आस्रव-बंध होता होगा कि नहीं? बोलो महावीरजी? अर्पलसाहब? *श्रोता: होता है।* होता है। अरे! उनके तो आस्रव होता है, बंध होता है, संवर होता है और निर्जरा होती है। हमने यह पहले एक-दो दिन में देखा था। भूल गये हैं आप!

बोलो, महावीर भगवान की जय!

५९. सात तत्त्वों का यथार्थ श्रद्धान

हम सात तत्त्वों के बारे में जितनी हो सके उतनी इन्फॉर्मेशन ले रहे हैं। यहां हमने अभी सात तत्त्वों का स्वरूप देखा, सात तत्त्वों के नाम देखे, सात तत्त्वों संबंधी इस जीव की जो अनादिकालीन विपरीत मान्यता है, उसके बारे में भी थोड़ी बहुत जानने की कोशिश की। अब इसके आगे इसका यथार्थ श्रद्धान कैसे होता है, इसको हम देख रहे हैं। तो हमने यह देखा था कि सम्यग्दृष्टि जीव को भी देव, गुरु, शास्त्र के प्रति बहुमान, वंदन, पूजनादि का भाव आता है, उसे शुभ-अशुभभाव यानी आस्रव और उससे होनेवाला बंध भी होता है। परंतु मान्यता में वह आस्रव-बंध को हेय ही मानता है क्योंकि उसकी सातों ही तत्त्वों संबंधी यथार्थ मान्यता है इसलिये तो वह सम्यक्त्वी हुआ है; आस्रव-बंध को त्यागने योग्य मानता है, उपादेय नहीं मानता; देव-गुरु-शास्त्र को वह ज्ञेयतत्त्व मानता है। बारंबार स्वसन्मुख यानी जीवतत्त्व के सन्मुख उपयोग केंद्रित करके वह आत्मलीनता साधने में प्रयत्नशील रहता है। ऐसी यथार्थ मान्यता होगी तो ही उसकी देव-गुरु-शास्त्रों की श्रद्धा सच्ची है ऐसा कह सकते हैं। कुछ लोग कहते हैं हम केवल सच्चे देव, गुरु, शास्त्र को ही बारंबार नमस्कार करते हैं। सात तत्त्वों के नाम और लक्षण हमें मालूम हैं, अर्थात् हमें सात तत्त्वों की श्रद्धा है। परंतु उनकी श्रद्धा में हेय-ज्ञेय-उपादेय तत्त्वों का जैसा योग्य श्रद्धान होना जरूरी था वैसा न होने से, ज्यों का त्यों श्रद्धान न होने से, उनकी यह श्रद्धा विपरीत ही है ऐसा शास्त्र में कहा है।

देखो बात ऐसी है, इन सात तत्त्वों के बारे में यथार्थ ज्ञान होना बात अलग है और यथार्थ श्रद्धान होना अलग बात है क्योंकि हम तो इन तत्त्वों के नाम तो जान ही लेते हैं, रट भी लेते हैं, इतना ही क्या औरों को सिखा भी देते हैं। फिर भी अगर कोई अच्छी तरह से उसको जाने और दूसरों को बताये तब भी जब उसकी मान्यता यथार्थ नहीं हो रही। कैसी? जैसे ये सात तत्त्व हैं, अभी सात तत्त्वों में हमने क्या क्या देखा था? कि हेय-ज्ञेय-उपादेयपना जो है वह सहीरूप से उसके ज्ञान में नहीं आ रहा है तो उसका ज्ञान-श्रद्धान यथार्थ नहीं है। ख्याल में आया? अभी हमने सात तत्त्वों में हेयतत्त्व किसको कहा था याद है? भाई! हेयतत्त्व किसको कहा था? आस्रव और बंध को। वे हेय क्यों हैं? क्योंकि वे त्यागने योग्य हैं; क्यों त्यागने योग्य हैं? क्योंकि वे हमारे स्वभावभाव नहीं है और आस्रव कैसे हैं? तो कहते हैं वे दु:खस्वरूप हैं, दु:ख देनेवाले हैं। वर्तमान में दु:खस्वरूप हैं और भविष्य में भी

उनसे दु:ख ही मिलेगा। अपना स्वभाव कैसा है? सुखस्वरूप है और ऐसे सुखस्वरूप को हम न जानते हुये आस्रवों को ही योग्य है, करने योग्य है, करने से हमें लाभ होगा ऐसी मान्यता होगी तो उस जीव ने आस्रवतत्त्व को यथार्थरूप से हेय नहीं जाना-माना है। इसीतरह से अन्य तत्त्वों में भी लेना।

अजीवतत्त्व तो केवल ज्ञेय है लेकिन हम उन्हें उपादेय मान लेते हैं। पैसा हमारे लिये कैसा है? परम उपादेय है, उसके बगैर थोड़ी कुछ चलता है? तो हमारा जो निर्वाह है वह पैसे के बगैर चलता नहीं है और जो तिर्यंचगति के जीव हैं, वह जीवन बिताते हैं कि नहीं? उनके पास कितना धन है? नारकी जीवों के पास कितना धन है? यह तो समझो भाई सिद्धों के पास कितना धन है? बात ख्याल में आती है? लेकिन हम जिसको जैसा है वैसा समझें, माने, तो ही सम्यग्दर्शन होगा। जब हेय-ज्ञेय-उपादेय की बात करते हैं, तो यहां कह रहे हैं – परंतु उनकी श्रद्धा में हेय-ज्ञेय-उपादेय तत्त्वों का जैसा योग्य श्रद्धान होना जरूरी था वैसा न होने से, ज्यों का त्यों श्रद्धान न होने से उनकी यह श्रद्धा विपरीत है, ऐसा शास्त्र में कहा है। आजकल तो देह को ही मैं मानकर लोग उसे ही परम उपादेय मान रहे हैं। यह अजीवतत्त्व में आया न देह, तो उसको परम उपादेय मानते हैं; स्वयं का अस्तित्व ही जीव भूल गये हैं। इतना ही काफी नहीं था कि देह से भिन्न तू आत्मा है ऐसे बतानेवाले को ही मूर्ख कहते हैं। क्या करें?

अपने किसी प्रिय व्यक्ति की स्मृति भ्रष्ट होने से वह अपना नाम, गांव, बुद्धि सब भूल जाता है। देखो, यहां उदाहरण कैसा दे रहे हैं, कोई ऐसा रोगी हो सकता है कि उसे स्मृतिभ्रंश हो जाये यानी उसको याद करने की ताकत खत्म हो जाये। वह अपना नाम भी भूल जाये और वह गांव भी भूल जाये। कहां रहता है? वह घर भी भूल जाये और वैसा व्यक्ति मान लो कि अपने कोई प्रिय और नजदीक का रिलेटिव्ह होवे, तो हमें कैसा लगेगा? कि यह कब सुधरेगा, कब ठीक-ठाक हो जायेगा, ऐसा अपने को लगेगा कि नहीं? तो वैसे ही बात कह रहे हैं कि अपने किसी प्रिय व्यक्ति की स्मृति भ्रष्ट होने से, स्मृति यानी याददाश्त, तो क्या होगा, वह अपना नाम, गांव, बुद्धि सब भूल जाता है, विस्मरण होता है; तो हम भी दु:खी होते हैं, आंखों में आंसू आते हैं। परंतु हम भी अनादिकाल से मतिभ्रष्ट होकर, अपने आपको भूलकर प्रत्येक गति में जो-जो शरीर प्राप्त

हुआ है, उसे ही यह मैं हूं ऐसा मानकर पागल की भांति घूम रहे हैं, दु:ख भोग रहे हैं। परंतु उस बात का पता ही नहीं; किस बात का? कि मैं कौन हूं यह हमें मालूम नहीं है। तो अपना नाम भूल गये हैं। हम बच्चों को जब वे छोटे होते हैं, तो उनको किसी न किसी नाम से पुकारते हैं और उसको पूछेंगे कि भाई तू कौन है? तो जो नाम रखा होगा रमेश, सुरेश जो भी होगा वह बोलेगा। तो हम कितना आनंदित होते हैं? और 'तू कौन है' ऐसा गलती से पूछा जाये और वह कहे मैं आत्मा हूं, तो अपने को क्या होता है? गुस्सा आता है।

देखो! आजकल तो ऐसा हो गया है साहब, यहां तो स्व को पहचानने की बात नहीं। आप सदाचार की बात करते हैं न, तो कभी भी आप एक दूसरे से मिलो तो हाय! हॅलो! गुड मॉर्निंग! परंतु कोई ऐसा नहीं बोलेगा – जय जिनेन्द्र! जय जिनेन्द्र! बोलने में अपने को लगता कि हम बहुत पिछड़े हुये हैं, १८५७ साल के कोई हैं। आजकल तो मॉडर्न फॅशन है, ऐसी कुछ मान्यता चलती है उनकी। कैसी बात है? देखो। वैसे ही यहां कहते हैं मैं कौन हूं? मैं जीव हूं, मैं आत्मा हूं, अॅक्सेप्ट करने को तैयार नहीं है। मैंने यहां बताया है या अन्यत्र कहीं बताया है, मुझे याद नहीं है, लेकिन हमारे एक ऐसे रिलेटिव्ह थे। जिस समय हम इस क्षेत्र में उतरे उस समय कहीं पर भी हम आत्मा की बात यानी जब शास्त्र स्वाध्याय करेंगे, किसी और को पढ़ायेंगे तो उसमें तो आत्मा की ही बात निकलेगी। तो वे हमको बोलते थे तुम्हें क्या हो गया है? वे तो काफी वृद्ध थे मेरे से उम्र में बहुत अधिक थे। तो उनके सामने तो मैं बिलकुल बच्चे जैसे ही था। तो बच्चे बिगड़े तो बड़ों को जरा तकलीफ होती है न? वे कहते थे कि तू क्या बड़बड़ा रहा है? तू आत्मा-आत्मा-आत्मा कर रहा है, तो आत्मा है किधर? अगर तू आत्मा को दिखायेगा तो हम तेरी बात मानेंगे। तो अभी क्या करना बोलो? जो स्वयं को ही नकारता है, अभी उसको कैसा क्या कहना? वह आत्मा को ही यानी अपने स्वयं को ही अॅक्सेप्ट नहीं कर रहा है तो उनको आत्मानुभव होगा कि नहीं? ख्याल में आया?

अभी यहां तो कह रहे हैं जो अपना नाम भूल गया है; नाम भूल गया का मतलब क्या है? कि मैं जीव हूं ऐसा ही जो समझ नहीं रहा है, इसलिये वह अनादिकाल से संसार में रुल रहा है तो कहते हैं यह शरीर ही मैं हूं मानकर पागल की भांति घूम रहा है, दु:ख भोग रहा है। परंतु उसे अपने स्वरूप का पता ही नहीं है। कुछ लोग कहते हैं कि अहो! मैं जीव हूं यह

बात तो सच है। परंतु जीव को रहने के लिये शरीर तो आवश्यक ही है न? क्यों? अगर शरीर ही हमें साथ नहीं देगा तब आत्मा का अनुभव कैसे करेंगे? देखो-देखो, नासिक में एक अंजनेरी नाम का कोई गांव है न? तो अंजनेरी में वहां, लोग कहते हैं कि बहुत पहले यहां अनेक जैन मंदिर थे और वहां मंदिरों के प्रवेशद्वारों पर जिनेन्द्र भगवान की ऐसी मूर्ति बिठायी है, मंदिरों के अंदर भी बहुत सी वहां खंडित मूर्तियां हैं। तो अगर वह मंदिर अच्छा होता तो भगवान भी वहां सुरक्षित होते। मंदिर ही ठीक-ठाक नहीं होगा तो भगवान कैसे ठीक-ठाक रह सकते हैं? इसलिये यह जो आत्मा है उसके रहने के लिये यह जो देह, तन मंदिर है, देह मंदिर है उसको ठीक-ठाक रखना चाहिये कि नहीं? उसको बादाम, लड्डू-पूरी खिलाना चाहिये कि नहीं? ऐसा कहकर वह इस शरीर को ही अधिक पुष्ट करना चाहता है। ख्याल में आया? तो यहां क्या कह रहे हैं? देखो, कुछ लोग कहते हैं अहो! मैं जीव हूं यह बात तो सच है परंतु जीव को रहने के लिये शरीर तो आवश्यक ही है न? शरीर के बिना जीव अंतराल में ही लटकते रहेगा क्या? उन लोगों ने प्रत्येक द्रव्य की स्वतंत्रता को ही नहीं जाना। ये क्या कहना चाहते हैं? देखो...

प्रत्येक द्रव्य की स्वतंत्रता को नहीं जाना इसका अर्थ क्या है? जीवद्रव्य है तो उसको उसका स्वचतुष्टय है कि नहीं? जीवद्रव्य का स्वयं का स्वद्रव्य है, स्वक्षेत्र है, स्वकाल है और स्वभाव है। वैसे, उसी क्षेत्र में रहनेवाला जो शरीर है उसका भी अपना द्रव्य जुदा है; उसका भी अपना क्षेत्र जुदा है; उसका भी अपना काल जुदा है और उसका भी अपना भाव जुदा है। ऐसे प्रत्येक द्रव्य का अपना-अपना क्षेत्र होता है। कोई भले ही आकाश में एक क्षेत्र में बैठे हों, रहे हो फिर भी वे अपने-अपने स्वक्षेत्र में हैं। यह बात जरा आपको समझाने में थोड़ासा टाइम लगेगा लेकिन समझाऊंगा। देखो, मैं जिसतरह से समझाऊंगा, आप भी जरा समझने की कोशिश करना। अटेंशन देना क्योंकि यह बात हम बहुत बार सीख चुके हैं। मैं पहले एक बात बताता हूं, यह जो लोकाकाश है, उस लोकाकाश का एक भी प्रदेश ऐसा नहीं है कि जहां छहों द्रव्य नहीं पाये जाते, यानी क्या? लोकाकाश के प्रत्येक प्रदेश पर छहों द्रव्य हैं, हैं और हैं। तो जिस क्षेत्र में जीवद्रव्य है, उसी क्षेत्र में पुद्गलद्रव्य है, उसी क्षेत्र में धर्मद्रव्य है, अधर्मद्रव्य है, आकाशद्रव्य है और कालद्रव्य है। तो पहले में पहले हम देखते हैं यह आकाशद्रव्य जो है वह कितना प्रदेशी है? *श्रोता: अनंतप्रदेशी है।* अनंतप्रदेशी है, बराबर। उन अनंत प्रदेशों में से जो बीचवाले असंख्यात

प्रदेश हैं, वही लोकाकाश है जिसमें अन्य पांच द्रव्य पाये जाते हैं और जो धर्मद्रव्य है उसका आकार कितना है? हां बोलो! *श्रोता: असंख्यातप्रदेशी।* तो जितना बड़ा लोकाकाश है, उतना बड़ा एक ही धर्मद्रव्य है; वह भी असंख्यातप्रदेशी है। अधर्मद्रव्य भी असंख्यातप्रदेशी है। यानी लोकाकाश में धर्मद्रव्य भी पूरा-पूरा फैला हुआ है। और क्या कहते हैं? अधर्मद्रव्य भी एक और असंख्यातप्रदेशी होने के कारण पूरे-पूरे लोकाकाश में व्याप्त है। अब आगे क्या बताते हैं? कालद्रव्य जो है, वह कालद्रव्य की संख्या कितनी है भाई आप जानते हैं? नहीं जानते हैं, कोई बात नहीं। कौन जानता है? हां? *श्रोता: असंख्यात।* असंख्यात। वह असंख्यात कैसा? प्रमाण क्या उसका? *श्रोता: लोकप्रमाण असंख्यात।* लोकप्रमाण असंख्यात। लोकप्रमाण असंख्यात का अर्थ क्या है? मैं समझाता हूं आपको।

देखो-देखो-देखो, यह लोकाकाश में आकाश के कितने प्रदेश देखे हैं हमने? असंख्यात। उसको भी लोकप्रमाण असंख्यात ही कहेंगे क्योंकि जितने वे लोकप्रमाण असंख्यात प्रदेश हैं, उन प्रत्येक प्रदेश पर एक-एक कालाणु स्थित है, जैसे हम अंगूठी में हीरा जड़ते हैं, ऐसे लोकाकाश के प्रत्येक प्रदेश पर एक-एक कालद्रव्य स्थित है। रत्नों की राशि की भांति यानी जैसे हमने अनाज की रास देखी है वैसी यहां लोकाकाश में जितने प्रदेश हैं, उस हर प्रदेश पर, खाली एक सतह पर, एक लेव्हल पर मत देखना क्योंकि लोकाकाश तो घन स्वरूप है तो कहते हैं जैसे रास हो जाये, ऐसे लोकाकाश के प्रत्येक प्रदेश पर एक-एक कालद्रव्य स्थित है। तो अभी तक तो हमने चार द्रव्यों की उपस्थिति, हयाती लोकाकाश के प्रत्येक प्रदेश पर देखी है। अब कहते हैं कि जीवद्रव्य कितने प्रदेशी है? असंख्यातप्रदेशी है। असंख्यातप्रदेशी है लेकिन उस जीवद्रव्य के असंख्यात प्रदेशों में ऐसी विशेषता है कि उनका संकोच और विस्तार होता है। संकोच और विस्तार होता है, इसका अर्थ क्या है? कि जो आत्मा के प्रदेश हैं वे संकुचित हो जाते हैं और विस्तारित हो जाते हैं। यानी जैसे मैं एक जीवद्रव्य हूं तो मेरे अभी असंख्यात प्रदेश हैं और मैं हाथी की पर्याय में गया तो वे ही आत्मा के प्रदेश स्प्रेड अप होते हैं, विस्तारित होते हैं और वही जीव मरकर चींटी हो जाये तो वे आत्मा के प्रदेश संकुचित हो जाते हैं, छोटी जगह व्यापते हैं। आपको ख़्याल में आया कि नहीं आया? नहीं आया? अच्छा! आ गया? बहुत होशियार हो आप लोग तो।

देखो-देखो, इस रूमाल की अवस्था मत देखना, उसका साइझ देखना। यह जो रूमाल है वह कितना बड़ा है? मान लो एक फूट बाय एक फूट है। अगर हमने उसको ऐसा-ऐसा करके मुठ्ठी में रखा तो सारे उसके जो कोई धागे हैं जो कुछ हैं वह ऐसे ही एक साथ आ गये। लेकिन उनकी जितनी क्वाँटिटि है, उसमें से कुछ कम हो गयी कि नहीं हो गयी? जिसको हम ताना-बाना कहेंगे वे हैं उतने ही रहेंगे। तो इसीतरह से आप अगर कोई स्पंज ले लेवें इतना बड़ा और उसको ऐसा स्क्वीझ कर दो, तो सिकुड़कर जितना हाथ है उतना हो जाता है। अभी आपको पता है कि नहीं मुझे मालूम नहीं, हमने बचपन में ऐसा सुना था – एक ढाका नाम का गांव है, जो अभी कहां गया है? *श्रोता: पाकिस्तान में।* पाकिस्तान में नहीं, इसतरफ हां जी बांग्लादेशवाला पाकिस्तान; चलो ठीक है तो वहां ढाके की मलमल नाम का कपड़े का एक प्रकार था। वह इतनीसी माचिस की डब्बी में पूरे नौ यार्ड की धोती बैठती थी। यह संकोच और विस्तार का मैं उदाहरण दे रहा हूं। तो इससे यह साबित होता है कि आत्मा में एक संकोचविस्तारत्व शक्ति होने के कारण उसके प्रदेश संकुचित हो जाते हैं और अधिक से अधिक विस्तारित कितने होते हैं? सबसे बड़ा, क्या कहते हैं? जीवद्रव्य का आकार कोई जानता है? शाहजी बोलो, बोलो! हां-हां आपका कहना है बहनजी कहते हैं। क्या कहते हैं? स्वयंभूरमण समुद्र में जो सबसे बड़ा महामत्स्य होता है। उसका साइझ मालूम है आपको? हां, एक हजार योजन लंबा, पांच सौ योजन चौड़ा और ढाई सौ योजन ऐसा ऊंचा।

एक योजन यानी कितना? हां जी? चार कोस और वह चार कोस यानी कितना? मान लो अभी, माइल्स में अभी हम नहीं जाते हैं। यह तो साधारण योजन है। शरीर की अवगाहना इसी में नापी जाती है। तो उसका जब हम गणित करेंगे; १००० यो. × ५०० यो. × २५० यो. तो यह क्या हो गया? साढ़े बारह करोड़ घन योजन इतना उस महामत्स्य का साइझ है। तो आत्मा के प्रदेश कितने फैल जाते हैं? इतने बड़े। क्या यह बात सही है? यहां तो हमें दूसरा आन्सर मिला है जमनाबेन कि जीव के प्रदेशों का सबसे बड़ा साइझ लोकाकाश प्रमाण जितना है; कि जब कोई अरिहंत अवस्था का जीव तेरहवें गुणस्थान के अंत में केवली समुद्घात करेगा तो केवली समुद्घात में उसके आत्मा के प्रदेश लोकाकाश प्रमाण फैल जाते हैं। तो कोई महामत्स्य जितना बड़ा असंख्यातप्रदेशी कोई जीव निगोद शरीर में भी आयेगा। क्या? तो भी वह आकाश के असंख्यात प्रदेश ही रोकेगा।

देखो, ऐसा कहने में आता है, एक सूई के नोंक के ऊपर जो कोई कंदमूल आलू, बटाटा या प्याज़, मूली, गाजर, नवलकोल और क्या-क्या नहीं, बीट और कुछ रहा गया भैया? हां? अच्छा, जो भी है आप समझ लो। इनका एक सूई के अग्रभाग-नोंक में जो कोई स्कंध आवें उसमें निगोद के असंख्यात शरीर हैं और एक-एक शरीर में अनंत जीव हैं। कितने अनंत हैं? तो कहते हैं आज तक जितने सिद्ध हुये हैं, उनसे भी अनंतगुणा हैं। ख्याल में आया? ऐसा आलू, प्याज़ लोग कितने चाव से खाते हैं? और कितने जीवों की हिंसा करते हैं? तो कोई भाई मिले। क्या बात करते हो! एक तरफ से कहते हो, एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता है और हम मारेंगे क्या उनको? वे तो अपने स्वयं के कारण से मर जाते हैं। अरे! वे मरते हैं तो अपनी योग्यता से मरते हैं उसमें दो-राय नहीं है। लेकिन खाने की गृद्धता के तेरे जो परिणाम हैं, उन परिणाम का फल तुझे मिलनेवाला है, खाने का फल तुझे नहीं मिल रहा है। ख्याल में आया? हम जो बेदरकार होते हैं, इन जीवों की हिंसा करने में तत्पर होते हैं, वह जो गृद्धता है, गृद्धता समझते हैं? आसक्ति, लिप्सा, लालसा, उसका फल मिलता है। एक सूई के नोंक-अग्रभाग में इतने असंख्यात शरीर, एक-एक शरीर में अनंत जीव यानी असंख्यात इन् टु अनंत कर लेना और एक कौर में कितना बटाटा आता होगा आप ही जानो। तो हम एक समय में कितने जीवों की हिंसा के परिणाम करते हैं? और हम किधर जाते हैं? तो साहब होटल में गये, बाय चान्स कहीं दूसरा चारा न हो तो पहले पूछते हैं कि भाई, यहां कोई आलू, प्याज़ आदि नहीं है ऐसा कोई आयटम है? क्या बात कर रहे हो? हमको धंधा करने का है। धंधा बंद करके भाग जाने का नहीं है और वे अपनी तरफ ऐसा देखते हैं कि यह कोई चिड़ियाघर का प्राणी यहां कहीं भूल से तो नहीं आया है? हमको तो वे पिछड़े हुये लोग समझते हैं।

देखो, मैं असल बात कहता हूं। एक दफे हमें ऐसा प्रसंग आया कि हम लुफ्तांझा एअरलाइन से ट्रॅव्हल कर रहे थे। हमने तो उनको कहा था कि हम व्हेजिटेरियन फूड ही लेंगे। वह पहले बोलना पड़ता है न टिकट खरीदते टाइम, तो उन्होंने कहा ठीक है। तो उन्होंने हमें नाश्ते में एक डिश लाकर दी। उसे देखते ही मैं बोला अरे! यह आपने क्या लाया? इसमें तो मच्छी है, मछली हैं। हां हैं, तो उसमें क्या है? यह तो सी-व्हेजिटेबल है बोले। क्या बोले? यानी समुद्र में, समुद्र की सब्जियां है। मैंने कहा भैया रख ले तू ही, हमें क्यों तकलीफ करता है, हमें खाना नहीं है। यानी लोगों को जो कोई आलू, प्याज अगर

नहीं खावे तो ऐसा देखता है कि यह कहां से आया है? यह तो दूसरे कोई ग्रह से तो नहीं उतरा है यहां? ख्याल में आया? अपनी बात क्या हो रही थी साहब? कि संकोचविस्तारत्व नामक जो शक्ति है, उसके कारण जीव छोटी-बड़ी अवगाहना के धारक हैं। वे इस लोकाकाश में कितने हैं जानते हैं आप? लोकाकाश में जीवों की संख्या कितनी है? अनंत। तो अनंत जीवों के प्रत्येक के अगर असंख्यात प्रदेश हैं तो एक के असंख्यात तो अनंत जीवों के कितने होंगे? अनंत असंख्यात और लोकाकाश कितना है? ३४३ घन राजू यानी असंख्यातप्रदेशी है। बरोबर है न, ३४३ घन राजू; यानी एरिया है छोटी और जीवों का प्रमाण कितना है? अनंत यानी बहुत बड़ा। तो हमारे अर्पलसाहब हमारे से सहमत नहीं हैं। वे कह रहे हैं भाईसाहब, अभी आख़िर का दिन है तो आप कुछ भी बोल लेते हैं और हम आपको समझें और सुने और विश्वास करें? आपके और हमारे बीच में आठ फीट का फांसला है इसमें एक भी जीव दिखायी नहीं देता है और तुम बोलते हो, लोकाकाश के हर प्रदेश में जीव हैं, हैं, हैं, हैं कह रहे हो!

बात में माल है कि नहीं सवाईभाई? माल है। किनके मेरे या उसके? अरे वाह, वाह! तो कहते हैं – आप जो बैठे हैं और हम जो बैठे हैं इसमें वायुकायिक जीव हैं कि नहीं? हवा है कि नहीं? बाकी वायुकायिक बाद में देखेंगे। अरे! यहां तो कह रहे हैं कि पूरे लोकाकाश में ये सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव खचाखच भरे हुये हैं; कैसे हैं वे? सूक्ष्म – उसमें वायुकायिक हैं, जलकायिक हैं, अग्निकायिक हैं, वनस्पतिकायिक यानी निगोद हैं और पृथ्वीकायिक भी हैं। वह तुम्हारे, हमारे ज्ञान का विषय नहीं होता हो तो हम क्या करें? समझ में आया? तो वह तो केवली जानते हैं और केवली ने यह बात निश्चितरूप से हमें बतायी है। तो इसतरह हमने देखा कि जो जीव अनंत हैं और हर एक का साइझ असंख्यातप्रदेशी है तो पूरे लोकाकाश में जीव व्याप्त हैं। तो लोकाकाश का एक भी प्रदेश जीवों के बिना हो नहीं सकता और जीव अनंत हैं तो पुद्‌गल कितने हैं? अनंतानंत हैं और वे भी लोकाकाश में हैं। लेकिन लोकाकाश में, आकाशद्रव्य में जैसे दूसरों को अवगाहना देने की शक्ति है वैसे जीवों में भी अवगाहना देने की, एक दूसरे को अवगाहना देने की शक्ति है; पुद्‌गल में भी है, धर्मद्रव्य में भी है, अधर्मद्रव्य में भी है और कालद्रव्य में भी है। यानी लोकाकाश के हर एक प्रदेश पर छहों द्रव्य हैं यह बात सिद्ध हो जाती है। ख्याल में आया?

देखो, क्या कह रहे हैं? उन लोगों ने प्रत्येक द्रव्य की स्वतंत्रता को नहीं जाना। जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व का स्वरूप तो जानते नहीं हैं। कुछ लोग कहते हैं, अहो! मैं जीव हूं यह तो सच है परंतु जीव को रहने के लिये शरीर तो आवश्यक है न? शरीर के बिना जीव अंतराल में ही लटकते रहेगा क्या? उन लोगों ने प्रत्येक द्रव्य की स्वतंत्रता को नहीं जाना इसका अर्थ क्या है? वे मानते हैं कि आत्मा शरीर के बिना रहता नहीं है। तो अभी तो हम इस निर्णय पर आते हैं कि यहां शरीर होते हुये भी शरीर के प्रदेश भिन्न हैं और आत्मा के प्रदेश भिन्न हैं। एक ही आकाश के प्रदेश में सर्व द्रव्यों के प्रदेश होने पर भी प्रत्येक द्रव्य अपना-अपना स्वतंत्र है यह बात यहां पर आयी थी। जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व का स्वरूप वे जानते नहीं हैं। इतना ही नहीं अनेक वर्षों से सिद्धों को नमस्कार करके भी सिद्ध भगवान जीव हैं और वे अशरीरी हैं। क्या कहा? उन्होंने क्या पूछा था? शरीर की तो आवश्यकता है न? तो सिद्ध तो हैं, वे कैसे हैं? अशरीरी हैं इस बात को भी वे नहीं जानते। वैसे मैं भी जीव हूं और शरीर पुद्गल है और मेरे से अत्यंत भिन्न है, इस बात को भी वे लोग नहीं जानते।

देखो, उपवास करने से मुझे कैसा हलका-हलका भासित होता है, णमोकार मंत्र पढ़ने से फेफड़ों में फलां लाभ होता है, ह्रां कहने से फलां लाभ, ह्रीं कहने से विशिष्ट लाभ। इसतरह शरीर के अवयवों में उसका लाभ ढूंढ़ना और उसमें णमोकार मंत्र का माहात्म्य भासित होना यह सब अभिप्राय का यानी मान्यता का विपरीतपना ही है। क्या कहते हैं? अरे! लोग तो ऐसा मानते हैं कि यह जो भक्तामर स्तोत्र है न, तो उस भक्तामर स्तोत्र की विशिष्ट कोई अभी मैं कोई भी नंबर बोलूंगा क्योंकि मुझे भी मालूम नहीं है कि लोगों की मान्यता क्या है? लेकिन फलां-फलां नंबर का श्लोक बोलने से फेफड़े का दर्द साफ हो जाता है; विशिष्ट श्लोक बोलने से फलां-फलां रोग नष्ट होता है, ऐसी मान्यता है। अब मानतुंगाचार्य ने जो रचना की है, वह जीवों की बीमारियों को ठीक करने के लिये की है क्या? हां, लेकिन क्या करें? लोग ऐसा मानते हैं। मैंने परसों ही बताया था आपको कि हम गये थे वहां कह रहे थे कि भक्तामर स्तोत्र बोलने के लिये किस टाइप के वस्त्र पहनने चाहिये? एक बहन थी न? *श्रोता: शिखरजींच्या एका मंदिरामध्ये लिहलंय सगळं, कोणत्या श्लोकामुळे काय होतं, काय नाहीं।* ये बोलते हैं कि कोई विशिष्ट गांव में कुछ विशिष्ट मंदिर में मिथ्यात्व के लेख लिखे हैं। ऐसा बोल रहे हैं, कहते हैं कि क्या करने से, कौनसे

श्लोक से कौनसा फायदा होता है। अब क्या करें? लोग भी भोले हैं। तत्त्वों का अभ्यास नहीं है और उनके पास अपनी तावीज नहीं है। कौनसी भाई? कौनसी तावीज दी थी? हां बोलो-बोलो! हां देखो, अभी सबके पास तावीज है कि घर में भूलकर आये हैं? यह एक तावीज आप अपने पास रखो, सारी बीमारियां दूर हटेंगी, नहीं तो मुझे पूछना दूसरी तावीज दूंगा। यह मूलभूत जो सिद्धान्त हैं जैनिझम का प्राण है। दो बातें हैं कि 'प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है' और 'मैं जीवद्रव्य जानन-देखन स्वभावी हूं'। अन्य का मैं कुछ नहीं कर सकता क्योंकि प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र रहते हुये, कायम टिकते हुये, कायम बदले ऐसा उसका स्वभाव है। यह बात अगर हम साबुत रखते हैं, यह बात अगर हमारे दिल और दिमाग में छा जाती है तो दुनिया का कोई भी जीव अपनी श्रद्धा को ठोकर लगावे, कितना भी बड़े सागर का क्यों न प्रभाव आवे, हम उससे हटेंगे-डिगेंगे नहीं। बड़े-बड़े आते हैं न, लहरें आती हैं सागरों की, उससे हम बह नहीं जायेंगे। हम तो ऐसे अडिग रह जायेंगे लोग चाहे कुछ भी कहे। नहीं तो हम तो क्या करते हैं? ऐसे वह लाल रूमाल में एक नारियल बांधकर देते हैं, लटकाने के लिये! क्यों, आपने नहीं लटकाये हैं? क्या करें? अरे! लोगों में डर है कि मेरा क्या होगा, मेरा क्या होगा?

अरे तू अनादिअनंत है ना? तेरा क्या होगा? मैं पर्याय जितना ही हूं ऐसा तूने मान रखा है तो तुझे डर रहेगा और मैं अनादिअनंत हूं ऐसा अगर मानेगा तो मैं कैसे मरूंगा? मैं नष्ट ही नहीं हो सकता हूं, ऐसा जब निश्चितरूपसे विश्वास हो जाये तो उसको कोई डिगा नहीं पायेगा, उसको कोई हिला नहीं पायेगा। लेकिन हमने अपने स्वभाव के बारे में कभी न सोचा है न समझा है और समझानेवाला आया तो उस पर भरोसा नहीं किया। चलो, आगे पढ़ते हैं। यहां कह रहे हैं उपवास करने से मुझे कैसा हलका-हलका भासित होता है। णमोकार मंत्र पढ़ने से फेफड़ों में फलां लाभ होता है। ह्रां कहने से फलां लाभ, ह्रीं करने से विशिष्ट लाभ इसतरह शरीर के अवयवों के लाभ ढूंढ़ना और उसमें माहात्म्य भासित होना यह सब अभिप्राय यानी मान्यता का विपरीतपना ही है। उस जीव को अभी भी शरीर में ही एकत्व है, ममत्व है। इस शरीर से हम देवपूजा और व्रतों का काम करवा लेते हैं ऐसा मानना भी महान भूल है। क्या कहते हैं? यहां लिख रहे हैं, यह जो शरीर है न तो उसके लाड़-प्यार मत करना, उसको जितनी तकलीफ़ दे सकते हो उतनी देना। तुम उसको, क्या बोलते हैं गुजराती में पंपालसो यानी उसका बहुत लाड़ प्यार करोगे तो वह हावी हो जायेगा।

तो क्या कहते हैं वह है उससे व्रत करवा लो, वह है उससे ऐसा-ऐसा उपवास करवा लो, उसको त्रास दो। तो शरीर को त्रास होता होगा क्या? हां बहन, आप क्या कहते है? बहन हां-हां, आपके राइट साइड में, शरीर को त्रास होता होगा कि नहीं? क्यों नहीं? *श्रोता: शरीर तो पुद्‌गल है।* बहुत अच्छा! बहन चुप बैठती हैं लेकिन सब कुछ समझती हैं। क्या कहती हैं? अरे! वह तो पुद्‌गल है उसमें ज्ञान नहीं है तो त्रास हो रहा है कि नहीं? वह तो समझे कि नहीं? अरे! वह तो पुद्‌गल है, उसको त्रास होगा ही नहीं। तो कह रहे हैं कि इस शरीर से हम देवपूजा और व्रतों का काम करवा लेते हैं ऐसा मानना भी महान भूल है क्योंकि शरीर का यानी परद्रव्य का कर्ता बनकर कर्तृत्वबुद्धिरूपी मिथ्यात्व का ही पोषण यह जीव करता है। भूत-प्रेत की बातें करने जायेंगे तो एक कहानी से दूसरी कहानी याद आती है, उसीतरह मूर्खता की इन बातों का भी कोई अंत नहीं हैं। मूर्खता मतलब मिथ्यात्व। मिथ्यात्व की, यह भ्रांत कल्पना औरों की है ऐसा समझकर अन्य लोगों की तरफ़ देखने की वृत्ति यानी आदत छोड़कर यह मूर्खता कि बातें क्या मुझमें हैं? ऐसा विचार करना अधिक योग्य है।

मैंने अगर आज तक ऐसी मूर्खता नहीं की होती तो कब का सम्यग्दर्शन प्राप्त करके मैं सिद्धालय में विराजमान हो गया होता, अपने स्वभावसुख का भोग करता। चिंता की कोई बात नहीं; अपनी ही मूर्खता का पता चलना यह भी सयानेपन की ओर मुड़नेवाला पहला कदम है। अब आगे पढ़ते हैं। सात तत्त्वों का अभ्यास करते समय सर्वप्रथम मैं स्वयं जीवतत्त्व हूं यह बात ध्यान में रखकर सभी तत्त्वों का स्वरूप समझना चाहिये। चलो ज़रा जल्दी-जल्दी पढ़ लेता हूं। रामायण सुनने के बाद भी अगर कोई पूछे कि अहो, आप ज़रा यह तो बताइये कि सीता राम की कौन थी? तो हम सिर पर हाथ मारकर कहेंगे 'नसीब मेरा'। तद्वत् सातों तत्त्वों का स्वरूप, उनके लक्षण, उनके संबंध में होनेवाली विपरीत मान्यता और यथार्थ श्रद्धान इन सारी बातों का अभ्यास करने के बाद भी अगर कोई हमसे पूछे कि हम इतना सारा तो अब पढ़ चुके परंतु आप हमें यह बताइये की समाज में रहते हुये हमें किसतरह आचरण करना चाहिये? क्या कहा? यानी उसने, खुद को क्या माना? *श्रोता: मैं मनुष्य हूं, शरीरवाला हूं।* समाज में रहता हूं, तो मैं मनुष्य हूं। इसलिये मैं जीवतत्त्व हूं, मैं त्रिकाली ज्ञानस्वभावी हूं इस बात को तो वह भूल गया। तो कहते हैं कि इतना सारा तो हम पढ़ चुके, अभी आप हमें यह बताइये की समाज में रहते हुये हमें किसतरह आचरण

करना? बाल बच्चों का पोषण करें या न करें? दूसरों की मदद करें या न करें? यानी अभी इतना सुनकर भी उसकी मान्यता में कुछ फ़रक पड़ा कि नहीं? बिलकुल नहीं। अच्छा, ऐसे सवाल उठने का एकमात्र यही कारण है कि उसने अपने आपको जीवतत्त्व न मानकर मनुष्यपर्याय जितना ही मैं हूं ऐसा माना।

आत्मा और शरीर मिलकर मैं हूं ऐसा जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व को एक मानने के कारण उस व्यक्ति को ऐसा प्रश्न उठा। पर्यायगत योग्यता के अनुसार वैसे भाव आते हैं, परंतु उसी समय उन भावों को, उन विचारों को जो जान रहा है वह मैं हूं, मैं मात्र ज्ञान ही कर सकता हूं अन्य कुछ भी नहीं – ऐसा ज्ञान और श्रद्धान होने पर ही, उसने जीव-अजीव तत्त्वों का यथार्थ श्रद्धान किया ऐसा कह सकते हैं। जीवतत्त्व उपादेय है, आश्रय करने योग्य उपादेय अथवा परम उपादेय है इसलिये जिनेन्द्र भगवंतों ने पर्यायतत्त्वों का स्वतंत्र स्वरूप बताकर आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा एवं मोक्ष पर्यायों के भेद बताये हैं। पर्याय मात्र का लक्ष्य यानी दृष्टि यानी ध्यान छोड़े बिना जीवतत्त्व का आश्रय नहीं ले सकते। सर्वप्रथम मेरेसे ये अन्य सभी तत्त्व भिन्न हैं और मैं भिन्न हूं क्योंकि मेरे लक्षण भिन्न हैं और इन अन्य तत्त्वों के लक्षण भिन्न-भिन्न हैं ऐसा जानना पड़ेगा। ये सात तत्त्व जान लिये न हमने! अब आगे की बात बता रहे हैं। सब तत्त्वों में महान ऐसा मैं जीवतत्त्व हूं, इसतरह स्व की महानता भासित हुये बिना हमारी दृष्टि, हमारा उपयोग, हमारा ध्यान स्व की ओर नहीं झुक सकता। अब आगे बढ़ते हैं, संवर, निर्जरा ये दो तत्त्व एकदेश प्रकट करने योग्य उपादेय हैं और मोक्षतत्त्व पूर्ण प्रकट करने योग्य उपादेय है। अंतर ख्याल में आया कि नहीं? कि जीवतत्त्व को आश्रय करने योग्य उपादेय बताया और मोक्षतत्त्व को प्रकट करने योग्य उपादेय बताया। यहां लिखा है न – यहां मोक्षतत्त्व का आश्रय लेने का उपदेश नहीं दिया जा रहा है। हां, वहां प्रकट करने के लिये बताया है आश्रय करने कि बात नहीं बतायी है। तो कहते हैं, परंतु मोक्ष प्रकट करने में ही अपना कल्याण है ऐसा बताया जा रहा है।

मोक्ष पर्याय की तरफ़ देखते-देखते मोक्ष पर्याय प्रकट नहीं होती, परंतु स्व की तरफ़ देखते रहने से अर्थात् आत्मानुभव में लीन रहते-रहते मोक्ष पर्याय प्रकट होती है। संवर और निर्जरा को एकदेश यानी आंशिक प्रकट करने योग्य उपादेय क्यों कहते हैं? इस पर हम विचार करेंगे। संवर-निर्जरा अर्थात् मोक्षमार्ग, घर की ओर जानेवाले मार्ग पर चलकर हम घर तक पहुंच गये, तो भी घर में प्रवेश करने के लिये हमें उस मार्ग का त्याग करना पड़ता

है। उस मार्ग पर रखा हुआ कदम मार्ग पर से हटाकर घर में रखना होगा, उसीतरह संवर, निर्जरारूप मोक्षमार्ग पर चलकर ही हम मोक्ष की ओर आगे बढ़ सकते हैं। परंतु जब मोक्ष पर्याय उत्पन्न होगी तब संवर, निर्जरारूप मोक्षमार्ग की पर्याय का अभाव, व्यय करके ही उत्पन्न होगी। यह तो बहुत सरल है लेकिन इसमें अगर आप कोई एक्स्प्लनेशन चाहते हैं, यह तो हमने देखा था न, रेलिंग को पकड़ते हुये हम आगे जाते हैं, यहां इन्होंने मार्ग की बात की। इसके अलावा और भी एक बात है कि अंतिम ध्येय यानी अंतिम लक्ष्य निश्चित किये बिना जीव मार्ग में ही संतुष्ट होकर बैठ जायेगा। क्या कहा? कि हमारा अंतिम लक्ष्य क्या है? वह हमने निश्चित नहीं किया है तो मार्ग में इधर-उधर कहीं वह रुक जायेगा ऐसा कहते हैं। केवल संवर, निर्जरा प्रकट हुयी अर्थात् सम्यग्दर्शन प्रकट हो गया तो हो गयी मेरी इति कर्तव्यता ऐसा मानकर जो संतुष्ट होगा, उसका श्रद्धान विपरीत होने से एक तो सम्यग्दर्शन होगा नहीं और कदाचित् पूर्व में प्रकट हो गया हो तो वह पुनश्च मिथ्यादृष्टि होगा।

देखो क्या कहना चाहते है कि यहां पर यह बताया जा रहा कि हम पर्याय का आश्रय लेते हुये अपने स्वभाव को पा नहीं सकते, एक बात। क्या कहा? जो मोक्ष पर्याय है उसीमें हम एकाग्र होने की कोशिश करेंगे तो मोक्ष प्रकट नहीं होगा और उसके साथ-साथ यह कह रहे हैं कि हमारा अंतिम लक्ष्य जो है वह हमें प्रथम में प्रथम नक्की करना है। तो हम तो कहेंगे कि हमें तो मोक्ष ही प्राप्त करना है लेकिन हम तो, हमें सम्यग्दर्शन होगा तो बहुत अच्छी बात है ऐसा मानकर उधर ही रुक जायेंगे तो वह काम में आनेवाला नहीं है। देखो गुरुदेवश्री तो ज़रूर बताते थे कि पडवानी वात ज नहीं करवानी-पडवानी वात यानी सम्यग्दर्शन से हम भ्रष्ट हो जायें ऐसा सोचो ही मत। बिलकुल अच्छी बात है और सही भी बात है, ऐसा हमारा उग्र पुरुषार्थ तो रहना चाहिये लेकिन एक बात ध्यान में रखिये ऐसे जीव इस विश्व में अनेक हैं कि जो एक नहीं, दो नहीं, असंख्यात बार मिथ्यात्व में जाते हैं। इसका अर्थ क्या हो गया? असंख्यात बार सम्यग्दर्शन प्राप्त करते हैं। ख्याल में आया? तो यहां तो कह रहे हैं कि मुझे सम्यग्दर्शन प्रकट हो गया तो अभी मेरा काम पूरा हो गया यानी हो गयी इति कर्तव्यता यानी यह मेरा कर्तव्य था वह मैंने किया ऐसा मानकर तू असावधान मत रह। उसमें क्या ऑल्टरनेटिव्ह बताया? या तो तू ऐसा ही पर्याय पर नज़र रखेगा तो हो सकता है कि तुझे सम्यग्दर्शन ही नहीं होगा, बाय चान्स किसीको हो गया और अभी वह इतने में ही संतुष्ट हो रहा है, तो उसका वह सम्यक्त्व भी भ्रष्ट हो सकता है। संवर, निर्जरा यह मोक्ष

का उपाय है, मोक्ष का मार्ग है; आस्रव, बंध का अभाव करने से संवर, निर्जरा प्रकट होती है। संवर और निर्जरा को प्रकट करने योग्य मानते ही आस्रव, बंध अभाव करने योग्य, नष्ट करने योग्य यानी छोड़ने योग्य है अर्थात् आस्रव और बंध ये दोनों हेय तत्त्व हैं यह बात ध्यान में आती है।

अभी यह हमने जो सात तत्त्व देखे हैं, उनका यथार्थ श्रद्धान कैसा होगा? उसकी बात चल रही है न! तो कहते हैं शुभ-अशुभराग है और उनके कारण होनेवाला बंध जो है वह त्यागने योग्य है। संवर, निर्जरा शुद्धभाव है, वीतरागभाव है और आस्रव-बंध अशुद्धभाव है, रागभाव है। अशुद्धभाव कायम रखकर कोई शुद्धभाव प्रकट करने की इच्छा करता होगा अर्थात् राग करते-करते वीतरागता प्रकट हो जायेगी ऐसा कोई मानता होगा तो वह उसका दोष है, विपरीत मान्यता है अर्थात् मिथ्यात्व है। तत्त्वों का अभ्यास और यथार्थ श्रद्धान करते समय शुभभाव छोड़ने लायक है, हेय है ऐसा योग्य श्रद्धान करना ज़रूरी है। अभी क्या है? लोगों की ऐसी मान्यता हो गयी है कि साहब आप कहते हैं उस पर तो हम बिलकुल सहमत हैं। क्या बात कह रहे हैं कि शुभभाव छोड़ने लायक़ है, हेय है ऐसा समझना योग्य है। लेकिन जब तक हमें सम्यग्दर्शन नहीं होता है, तब तक हम क्या करें? अशुभभाव करें? जब तक सम्यग्दर्शन नहीं होता है, तब तक तो शुभभाव करना चाहिये कि नहीं चाहिये? ऐसा प्रश्न लोग पूछते हैं तो क्या उत्तर होना चाहिये? बोलो चेतनाबेन? क्योंकि अभी आजकल तो यह फॅशन हो गयी है हो, कि जो गुरुदेवश्री पैंतालिस-पैंतालिस वर्ष तक शुभभाव हेय है, हेय है कह रहे थे, कहते आये थे परंतु हम तो अपनी मान्यता छोड़ नहीं रहे हैं कि अभी तो हमें शुभभाव करना ही चाहिये क्योंकि हमको सम्यग्दर्शन नहीं हो रहा है न!

हां, तो सम्यग्दर्शन नहीं हो रहा है तब तक हम क्या करें? तो शुभभाव करना ही चाहिये न? ऐसा सवाल आता है तो उसका उत्तर क्या होना चाहिये? हां, बोलो बहन हां। *श्रोता: पापों से बचने के लिये शुभभाव करो परंतु श्रद्धा तो ऐसी रखो कि ये भी हेय हैं।* हां! आपने बिलकुल सही फ़रमाया, सही कहा। आपने कहा कि पापों से बचने के लिये पुण्य करो लेकिन श्रद्धान तो यह रखो कि यह भी हेय है, लेकिन श्रद्धान की तो हमने ऐसी की तैसी कर दी है और हम तो शुभ आचरण में ही अटक रहे हैं, यही तो मैं बताना चाहता हूं। हां साहब? हां, आप जो कह रहे हैं बिलकुल पंडित टोडरमलजी ने मोक्षमार्गप्रकाशक में

सातवें अधिकार में तो यही बात बतायी है, २२६ पृष्ठ पर यह बात है। तो आप जो कह रहे हैं, श्रद्धान तो ऐसा रखो लेकिन श्रद्धान को कोई पूछता ही नहीं है। तो क्या कहते हैं हमें शुभभाव करना चाहिये न, इस प्रश्न में ही मैं शुभभाव कर सकता हूं यह श्रद्धान है कि नहीं? ख्याल में आया? और जो विभावभाव है, उस विभावभाव को वह चाव से करना चाहता है। हम दूसरी भाषा में कहे तो उसको शुभराग का राग है। श्रद्धान मैंने कहा न! मेरी भाषा थोड़ी बहुत आड़ी-टेढ़ी है क्योंकि हम गामडिया है न, आपके जैसे थोड़ी लिखे पढ़े हैं! तो हम तो क्या कहें?

देखो-देखो, मुझे बहुत बातें याद आती हैं कि यह जो है न मुनियों के स्वरूप की बात जो हम यहां बोल चुके हैं वह हमारे यहां घर में जो स्वाध्याय चलता है वहां यही बात चलती है, तो यह बात किसीके कान पर गयी तो वे आकर हमसे मिले। साहब! आप जो बोलते हैं न, हळवे-हळवे बोलवुं जोइअे, मैंने कहा हळवे-हळवे शुं होय छे? हळवे-हळवे नहीं समझे। आहिस्ते-आहिस्ते, स्लोलि-स्लोलि, धीमे-धीमे से। अरे! जो अनादिकाल से मोहनिद्रा में सोता हुआ जीव है उसको ऐसा टक-टक करने से थोड़े ही वह जागनेवाला है? उसको तो नगाड़े बजायेंगे तब भी जागे नहीं, कुंभकर्ण हो गया न वह। तो कह रहे हैं कि हम तो ऐसा ही ज़ोर-जोर से फटके मारेंगे, तभी तो वह सुनेगा, ख्याल में आया? तो मैं यह कह रहा था इनकी जब प्रश्न की शैली ऐसी है कि तब तक तो शुभभाव करना चाहिये न? तो इस चाहत में क्या भरा हुआ है? वह शुभभाव का राग भरा हुआ है। तो फिर आप कहोगे आप हमको तो समझा रहे हैं लेकिन हम करें क्या? यहां पूछने में भी कर्तृत्वबुद्धि है, वह तो हम समझ सकते हैं। हमारा सबका तो यही सवाल है कि हम करें क्या? तो उसका उत्तर यह है, मैं पहले उदाहरण दूंगा और फिर बाद में सिद्धान्त पर घटित करूंगा।

मान लो हो! आप में से कोई रास्ते में चलते-चलते केले के छिलके पर से फिसलकर गिर जाये तो उसको क्या करना चाहिये? हां, बोलो-बोलो कौन बोलता है? हमारी बहनों में से कोई बोले तो अच्छी बात है। हां, अरे! गिर गया है, अभी वह सावधानी से चलना चाहिये यह बात तो बाद में आयेगी, अभी तो गिर गया है, हां बोलने दो बहनों को बोलने दो, बहुत मुश्किल से हमें यह चान्स मिला है उनसे सात तत्त्व की चर्चा करने का। हां, आप क्या कह रहे थे? बोलो भाई! वहां तो कोई बात ही नहीं कर रहा है। आप बोल रही हैं, हां

बोलो चेतनाबेन। अरे बोलो-बोलो... हां, भाइयों में कौन बतायेगा? *श्रोता: सीधी बात है उसको उठना चाहिये।* हां, उठना चाहिये न, कि बेड-बिस्तरा मंगाकर उधर ही सो जाना चाहिये? हां, क्या करना चाहिये? उठना चाहिये। अरे! भाई हम तो वही कहते हैं – उठना चाहिये, लेकिन उठने के पहले क्या करना चाहिये? उठने का प्रयत्न करना चाहिये, ख्याल में आया? वैसे हमें सम्यग्दर्शन नहीं हो रहा है तो हमें सम्यग्दर्शन करना चाहिये लेकिन नहीं हो रहा है तो क्या करना चाहिये? प्रयत्न करना चाहिये। कितनी बार प्रयत्न करना चाहिये? जब तक सम्यग्दर्शन नहीं होता, तब तक प्रयत्न करना चाहिये। इसीको तो पुरुषार्थ कहेंगे।

लेकिन हम बीच में ऐसी कंडिशन रखते हैं, यह मोक्षमार्गप्रकाशक में लिखा है, हां भाई, लिखा है, लेकिन यह प्रश्नकार का प्रश्न ऐसा है कि हमको शुभभाव करना चाहिये न? यह क्या बताता है कि हमें अभी भी राग का राग बाकी है, ख्याल में आया? तो वास्तव में यह हमें सम्यग्दर्शन नहीं हो रहा है तो यह भूल हमारी है या दूसरे किसीकी है? तो अपनी स्वयं की भूल है तो उसे हम स्वयं ही सुधार पायेंगे। अन्य कोई सुधार नहीं पायेगा, ख्याल में आया? नलिनभाई, ख्याल में आया? कि उसे प्रयत्न करना ही चाहिये। क्या करें दिन प्रति दिन गुरुदेवश्री को हम भूल रहे हैं और अपनी-अपनी मनगढ़ंत कल्पनाओं से आगे बढ़ने कि कोशिश कर रहे हैं; तो हम उनका नाम रोशन कर रहे हैं या और कुछ कर रहे हैं? वह अपने आप नक्की करना। गुरुदेवश्री तो हमारे सामने मार्गदर्शक बोलकर खड़े हैं और उन्होंने जो मार्ग दर्शाया है हमें, उस मार्ग पर चलना यह हमारी जवाबदारी है, कोई दूसरे की नहीं है। तो कह रहे थे कि तत्त्वों का अभ्यास और यथार्थ श्रद्धान करते समय शुभभाव छोड़ने लायक़ है, हेय है ऐसा योग्य श्रद्धान करना ज़रूरी है। शुभ भला है, ऐसी विपरीत मान्यता की जड़ इतनी गहराई तक पहुंची हुयी हैं कि किसी न किसी बहाने से शुभ भला इस मान्यता को जीव कायम रखना चाहता है। अहो! शुद्ध में जाने के लिये प्रथम शुभ में आना चाहिये न? यह दूसरा प्रश्न है। क्या कहते हैं प्रतिभाताई? ओ! चलो टाइम की पाबंदी है इसीको हम दोबारा देखेंगे। अभी तो इस वक्त हम रुकते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

६०. भेदविज्ञान

अभी हम यहां जो सात तत्त्व हैं, उन सात तत्त्वों का यथार्थ श्रद्धान कैसे किया जाता है और यथार्थ श्रद्धान किसे कहते हैं इस बात को देख रहे थे। इसके पहले हम दो तीन लेक्चर्स के पहले यह जीव अयथार्थ श्रद्धान, विपरीत श्रद्धान कैसे करता है? इसको देख रहे थे। अभी यहां बता रहे हैं कि आस्रवतत्त्व जो है, उस आस्रवतत्त्व का यथार्थ श्रद्धान कैसा होना चाहिये। अभी तक तो हमने देखा था कि हमें शुभभाव करना ही चाहिये न, ऐसी बात लोगों के दिल और दिमाग में बहुत घर करके बैठी हुयी है। यहां दूसरी बात कर रहे हैं, कह रहे हैं कि अहो! शुद्ध में जाने के लिये प्रथम शुभ में आना ही चाहिये न?

देखो, यहां पर भी ऐसी बात है कि शास्त्र में तो ऐसा लिखा है कि कोई जीव पाप कार्य करता है या पापभाव में अटका हुआ है, वह पाप में से डायरेक्ट शुद्धभाव में नहीं जा सकता। शुद्धभाव में जाने के पूर्व नियमरूप से शुभभाव ही होते हैं। क्या कहा? शुभभाव होते हैं तो इस जीव ने क्या पकड़ा? *श्रोता: शुभभाव से शुद्धभाव होगा।* हां। कह रहे हैं, अहो! शुद्ध में जाने के लिये प्रथम शुभ में आना ही चाहिये न, ऐसा कहकर चाहिये इस शब्द का वजन शुभ पर डालकर वह जीव शुभ को महत्व देकर आस्रव, बंध को हेय न मानकर उपादेय मानता है और तत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता दृढ़ करके मिथ्यात्व का ही पोषण करता है, ख्याल में आया? जब तक शुद्धभाव प्रकट नहीं होता अर्थात् सम्यग्दर्शन नहीं होता, शुद्धोपयोग नहीं होता, तब तक जीव में शुभ में से अशुभभाव और अशुभ में से शुभभाव ऐसा सदा ही चलता रहता है। शुभभाव हो या अशुभभाव हो इसमें रहने का अधिक से अधिक काल अंतर्मुहूर्त है अर्थात् शुभभाव हो या अशुभभाव हो वह अधिक से अधिक अंतर्मुहूर्त काल तक ही टिक सकता है।

अभी यहां पर कह रहे हैं कि यह अंतर्मुहूर्त क्या होता है? इसकी बात तो हमने पहले देखी थी, याद है न कि एक अंतर्मुहूर्त में, जिसको हम कहते हैं, दो घड़ी, एक मुहूर्त में दो घड़ी होती हैं और दो घड़ी से एक समय कम वह अंतर्मुहूर्त है। वह तो उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है और जघन्य अंतर्मुहूर्त एक आवलि अधिक एक समय। यह बात हमने पहले देखी थी। हां, तो मैं एक ही प्रश्न जाते-जाते करूंगा कि एक आवलि में कितने असंख्यात समय होते हैं?

याद है किसीको? *श्रोता: जघन्य युक्तासंख्यात।* हां, जघन्य युक्तासंख्यात, बहुत बढ़िया! देखो, असंख्यात के भी तीन प्रकार पहले बताये हैं – परीतासंख्यात, युक्तासंख्यात। यानी वह संख्यात नहीं है, परीत-असंख्यात, युक्त-असंख्यात और असंख्यात-असंख्यात। उसके भी प्रत्येक के तीन-तीन भेद हैं, जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट ऐसी बात है।

अभी कहते हैं, इसतरह जब अशुभभाव पलटकर शुभभाव अपने आप आते हैं, तब शुभ में आना ही चाहिये कहकर यह जीव शुभभाव में ही संतुष्ट होने की मान्यता कायम रखता है। आस्रव यानी शुभभाव करने लायक है, करना ही चाहिये, ऐसी उसकी मान्यता है; राग करते-करते वीतराग बनूंगा ऐसी उसकी मान्यता है। शुभराग करते-करते शुद्धभाव प्रकट होगा ऐसी मान्यता है, यह सभी मान्यतायें विपरीत हैं और विपरीत मान्यता को ही मिथ्यात्व कहते हैं। सच देखा जाये तो सम्यग्दर्शन का मार्ग बहुत सरल है, सहज है, बस सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के यथार्थ श्रद्धान तथा सात तत्त्वों के यथार्थ श्रद्धान को ही सम्यग्दर्शन कहते हैं। वह धीमंत कहां गया? उसका यह प्रश्न था, वही भाग गया, आया है, जिंदा है, अच्छा आ जाओ। भैया, तेरे लिये ही यह माल रखा था हमने आखिर की क्लास में, बहुत अच्छा-बहुत अच्छा! देखो, यहां क्या कह रहे हैं? कि सच देखा जाये तो सम्यग्दर्शन का मार्ग बहुत सरल है और सहज है, प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय सहज ही है। क्यों सहज है? वह अकृत्रिम है इसलिये वह सहज है, किसीकी पर्याय कोई करें, तो कृत्रिम हो जाये, लेकिन यह कैसी है, नैसर्गिक है, सहज है। तो क्या कहते हैं? सम्यग्दर्शन का मार्ग बहुत सरल है, आसान है। सरल का अर्थ क्या है? आसान है और वह सहज है। बस तो क्या करना चाहिये? सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के यथार्थ श्रद्धान तथा सात तत्त्वों के यथार्थ श्रद्धान को ही सम्यग्दर्शन कहते हैं।

असल में ये दोनों एक ही हैं। यानी कभी-कभी ऐसा प्रश्न खड़ा हो जाता है कि हम सच्चे देव-गुरु-शास्त्रवाला श्रद्धान करें, या सात तत्त्वोंवाला श्रद्धान करें? कौनसा सम्यग्दर्शन हमें करना चाहिये? कुछ भोले जीवों का ऐसा प्रश्न हो सकता है, क्या कहा? तो यहां पर कह रहे हैं, असल में ये दोनों एक ही हैं। यह किसतरह कह सकते हैं? देखो, मोक्षतत्त्व के श्रद्धान में सच्चे देव का श्रद्धान अंतर्भूत है क्योंकि मोक्ष में कौन है साहब? अरिहंत है न? बोलो-बोलो। अरे! क्यों चुप कर रहे हो? मोक्ष में कौन होता है? *श्रोता: सिद्ध।* हां जी,

सिद्ध, तो सिद्ध हमारे भगवान हैं कि नहीं? देव है न? तो कह रहे हैं। मोक्षतत्त्व के श्रद्धान में सच्चे देव का श्रद्धान अंतर्भूत है। सिर्फ देव का नहीं कहा, क्या कहा? सच्चे देव का। क्यों? हम आप जानते हैं क्या कि हम भी सिद्धशिला पर पहुंचकर आये है? प्रतिभाताई आप जानती हैं, आप बहन ना पाड़ रही हैं। सिद्धशिला आप जाकर आयी हैं? आप नहीं, आपके सामने बहन बैठी है। सिद्धशिला गयी नहीं थी आप? जैसे हम अमेरिका जाकर आते हैं, तो हम अमेरिका रिटर्न्ड है तो मैं तो कहता हूं यहां बैठे हुये सभी भाग्यशाली जीव सिद्धशिला रिटर्न्ड हैं। अरे! वहां के सूक्ष्म वायुकायिक जीव, सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव वगैरह इन सारे पांचों ही प्रकार के सूक्ष्म जीवों में, हम अनंत बार जन्म लेकर आये हैं न भाई? *श्रोता: निगोद।* चलो निगोद, भाईसाहब कह रहे हैं निगोद में, भेज दो चलो निगोद, वहां के भी निगोद जीव होकर आये हैं, बोलो! हमें पता नहीं हम कहां-कहां घूमे हैं क्योंकि हम मिथ्यात्व में इतने रचे-पचे हैं, कहां-कहां हमारा जन्म हुआ है? कौनसी-कौनसी पर्याय में हम जन्म लेते हुये, कहां से रिटर्न होकर आये हैं? हम तो जरा आफ्रिका जाकर आये तो हम आफ्रिका रिटर्न्ड करके नाचते हैं। हम तो बांग्लादेश में जाकर आये, तब भी नाच रहे न भाई, फॉरेन रिटर्न्ड, फॉरेन रिटर्न्ड हैं। अरे! फॉरेन रिटर्न्ड छोड़, तू तो सिद्धशिला रिटर्न्ड है।

तो यहां क्या बता रहे हैं? कि जो सच्चे देव हैं उनका श्रद्धान अंतर्भूत है। किसमें? मोक्षतत्त्व में; और संवर, निर्जरातत्त्व में? संवर, निर्जरातत्त्व के श्रद्धान में सच्चे गुरु का श्रद्धान अंतर्भूत है क्योंकि संवर, निर्जरारूप प्रवर्तन कौन जीव करेंगे? मुनिराज तो अवश्य ही करेंगे, तो उस संवर, निर्जरातत्त्व के श्रद्धान में सच्चे गुरु का श्रद्धान अंतर्भूत है और सात तत्त्वों के यथार्थ श्रद्धान में सच्चे शास्त्र का यथार्थ श्रद्धान अंतर्भूत होता है। क्योंकि शास्त्रों का प्रयोजन ही यह है कि सात तत्त्वों का स्वरूप बताकर, भेदविज्ञान की कला बताकर वीतरागता का उपदेश देना। यह भेदविज्ञान की कला सात तत्त्वों में कैसी छुपी हुयी है? तो कहते हैं, यह जीवतत्त्व है, वह अन्य बाकी के छह तत्त्वों से भिन्न है। जीव के ही पर्यायरूप जो आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्षरूप जो तत्त्व हैं, उनसे भी यह जीवतत्त्व भिन्न है। जब अपने पर्यायतत्त्व से भी मैं भिन्न हूं तो पर तत्त्वों से मैं भिन्न हूं ही। ऐसे भेदविज्ञान का उपदेश हमें ये सात तत्त्व दे रहे हैं। आज तक आस्रव, बंध को हेय न मानकर उपादेय माना, यही हमारी बड़ी भारी भूल हो रही है। हमने आस्रव आदि पर्याय तत्त्वों के प्रत्येक के

दो-दो भेद देखे थे। द्रव्य और भाव; द्रव्यास्रव, द्रव्यबंध, द्रव्यसंवर, द्रव्यनिर्जरा और द्रव्यमोक्ष। यह तो कर्म की अवस्थायें हैं, आपका प्रश्न था न? यह कर्म की यानी पुद्‌गल की अवस्थायें हैं। कर्म कार्माणवर्गणा से बनता है, कार्माणवर्गणा पुद्‌गल है और पुद्‌गल परद्रव्य है।

अजीवतत्त्व का अभ्यास करते हुये हमने सभी परद्रव्यों को ज्ञेयतत्त्व में डाल दिया था, परंतु वैसा न मानकर मुझे फलाने कर्म का नाश करना है। यह आपको मालूम है क्या? फलाने कर्म का नाश करना है, यह बात जो चल रही है; हम तो कर्मदहन पूजन करते हैं। करते हैं क्या आप लोग? हां? अरे! हम पूजन ही नहीं करते तो कर्मदहन की बात ही कहां है? कुछ लोग तो वह पूजन करते हैं लेकिन ऐसा मानते हैं कि हम कर्मदहन पूजन करेंगे तो कर्म जल जायेंगे। इतना आसान है क्या? तू कर्मदहन पूजन करने के परिणाम करता है, तो नया बंध बांध रहा है, पुराने जाने की तो छोड़ दे, लेकिन वहां उस कर्मदहन पूजन में जिन्होंने कर्मदहन किया है ऐसे सिद्धों की वहां पूजन है और हम क्या मानते हैं? यह पूजन करेंगे, तो हमारे कर्म जल जायेंगे और हम उससे भी अधिक भोले हैं, यह जो दसलक्षण के धर्म आते हैं, हां, उसमें, वह कौनसा होता है? सुगंधदशमी का दिन जो होता है, उस समय वहां धूप खेने से और धुआं करने से कर्म जल जायेंगे ऐसा मानते हैं। हम कौनसे गांव गये थे मुझे याद नहीं है। वहां सुगंध दशमी के दिन इतना धूप डाला हुआ था कि सामनेवाला आदमी भी नहीं दिखायी देवें। तो भगवान की प्रदक्षिणा करने के लिये कोई जावे, तो एक दूसरे से टकरा जाये, धुअें से सांस लेने में तकलीफ हो जावे। हमारे-तुम्हारे जैसे पंचेन्द्रिय जीवों की यह हालत तो वहां जो द्वीन्द्रिय, एकेन्द्रिय ऐसे जो कोई जीव होंगे, उनका क्या होता होगा, कितनी तकलीफ होती होगी?

लेकिन उससे हम मानते क्या हैं? कि कर्म जलायेंगे। इतना आसान नहीं है, तो कर्म जलाने का तरीका क्या है? हमने अभी सीखा था। हां, धीमंत आप बतायेंगे? हां वे उनके कर्म जला रहे हैं, पुण्य कर्म, जलाने दो। तुम बताओ मुझे, कर्म नाश करने का कौनसा मार्ग है? पल्लवी आप बतायेंगे? *श्रोता: स्व का अनुभव करना और उसी में लीनता करना।* बहुत अच्छा! स्व का अनुभव करना और उसीमें लीनता करना, तो जहां निर्जरा चालू होगी, तो निश्चितरूप से कर्म अपने आप खिर जायेंगे। क्या कह रहे हैं? तो ऐसा न मानकर मुझे फलाने कर्म का नाश करना है, दर्शनमोहनीय कर्म मुझे सम्यक्त्व होने नहीं

देता, नहीं तो मैं कबका सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लेता। मैं कर्म का कर्ता हूं अथवा कर्म मेरे भावों के कर्ता-हर्ता हैं, ऐसा मानना यह सब मान्यता की विपरीतता ही है। अनेक लोग ऐसा आरोप लगाते हैं कि आप आस्रव, बंध को हेय बताते हैं, शुभभाव हेय हैं, ऐसा कथन करते हैं, उसे सुनकर जीव की दशा करेला, ऊपर नीम चढ़ा, जैसी होगी। अभी कहां गये हमारे नास्तिक भाई? हां, उन्हीं का यह प्रश्न था। क्या कहा? वे कहते हैं, आप आस्रव बंध को हेय बताते हैं, शुभभाव को हेय बताते हैं। ऐसा कथन करने पर कैसा है? करेला ऊपर नीम चढ़ा जैसा होगा। मराठी में कहावत है कि पहले से ही मर्कट है और ऊपर से मद्य पिया है, यह तो आधी बात बतायी, मैं आपको आगे की बात बताऊंगा, पहले तो इसको देखते हैं जो करेला होता है, उसका स्वाद कैसा होता है? कभी चखा है भाई आपने कैसा होता है? मीठा है? फिर? *श्रोता: कड़वा।* कड़वा, बहुत अच्छा! और नीम वह भी कड़वा होता है, तो यहां क्या कहते हैं? करेला पहले ही कड़वा है और वह नीम के झाड़ पर चढ़ा है, क्योंकि करेले की बेल होती है। तो दोनों एक जगह होते हैं, तो क्या होता है? वह अधिक कड़वा हो जाता है। वैसे यहां कहते हैं, पहले से ही मर्कट है, मर्कट जानते हैं आप? हां? नहीं? बंदर। क्या कहा? पहले से ही मर्कट है और उसको थोड़ीसी, थोड़ीसी नहीं और अधिक मदिरा पिला दो और हाथ में ढोल दे दो, लकड़ी दे दो और उसको घर के पत्रे पर खड़ा करो, तो आप शांति से नींद ले सकोगे कि नहीं? तो कहते हैं, उस जीव की अवस्था वैसी होगी और जीव शुभ छोड़कर अशुभ में ही मग्न होगा, परंतु उनका यह भय निराधार है, क्योंकि शुभ भला है, करते रहने जैसा है, यह मान्यता छुड़ानी है। शुभ छोड़ने का कहां उपदेश है? अभी बहनजी कहां गयी? उन्होंने बताया श्रद्धान तो ऐसा होना चाहिये, हां।

तो यहां क्या बात कह रहे हैं देखो। शुभ भला है, करते रहने जैसा है, यह मान्यता छुड़ानी है। शुभ छोड़ने को कहां उपदेश दे रहे हैं? पहले तो हमें मान्यता में लेना चाहिये न कि यह छोड़ने लायक है। यह जो स्वाध्याय चल रहा है, मान्यता के विपरीतता का विवेचन चल रहा है, वह शुभभाव है या अशुभभाव है? यह भी शुभभाव ही है और शुभभाव करने के लिये किसीके उपदेश की जरूरत भी कहां है? सूक्ष्म एकेन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तक के, चारों गति के जीवों का भी शुभ-अशुभभावों का यह रहट, तो सदा घूम ही रहा है। यह क्या कहना चाहते हैं, देखो-देखो, हमें शुभभाव करने को सिखना पड़ता है और उसका निषेध करोगे तो नास्तिक बन जाओगे, ऐसा हमारे भाईसाहब कह रहे थे न? लेकिन बात

तो यह है कि शुभभाव करने के लिये सिखाना नहीं पड़ता है। क्यों? देखो, यह चारित्र नाम का गुण है वह कौनसे जीव में होता होगा? एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय या पंचेन्द्रिय, कौनसे जीवों में चारित्र गुण होगा? लताबहन। *श्रोता: सब जीवों में।* सब जीवों में और वह निगोदिया जीव है उसमें? *श्रोता: उसमें भी।* उसमें भी होगा न, तो वह चारित्र गुण जो है वह एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के जीवों में कौनसा चारित्र होगा, हमने देखा था? *श्रोता: मिथ्याचारित्र।* मिथ्याचारित्र। तो उनके सम्यग्दर्शन होगा कि नहीं होगा? तो उनके शुद्धोपयोग नहीं है तो उनके अशुद्धोपयोग है, यह बात हमने देखी थी। तो अशुद्धोपयोग में अभी-अभी दो मिनट पहले हमने पढ़ा है कि शुभ से अशुभ और अशुभ से शुभ वह तो परिणमन होता ही रहता है। क्या?

अब क्या बता रहे हैं? कि यह जो परिणमन है; तो मैं उसके पहले आपसे दो प्रश्न पूछना चाहता हूं। एक, जो कोई जीव जाता है, कहां? निगोद में, वह शुभभाव करके जाता होगा न? नहीं, तो कौनसे भाव से जाता है? *श्रोता: अशुभभाव।* और वहां से बाहर निकलता है; तो कौनसा भाव करता होगा? *श्रोता: शुभभाव।* तो उसको कौन सिखाता है? हां, यह तो सहज रहट है भाई! शुभ से अशुभ, अशुभ से शुभ, शुभ से अशुभ ऐसा हर जीव करता रहता है। अरे! यहां हम बैठे हैं। कहां? स्वाध्याय करते हुये तो बीच-बीच में अशुभभाव हो रहे हैं कि नहीं हो रहे हैं? हमने एक बगासा - जांभई ली, तो शुभभाव है या अशुभ? किसीने कान खुजलाया, किसीने सिर खुजलाया, तो यह कैसा परिणाम है? शुभ परिणाम है न? अरे भाई! क्षण-क्षण में बदलता है, क्षण-क्षण यानी अंतर्मुहूर्त में। लेकिन हमें तो ऐसा लगता है शुभभावों का तुम निषेध करो तो हाहाकार मच जायेगा। अरे! हाहाकार क्या मचेगा कि मेरे कहने से अन्य जीवों का परिणमन होनेवाला है? यह ऐसी मान्यता लोगों की है तो क्या करे, क्या? यहां कह रहे हैं, सूक्ष्म एकेन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तक के सारे चारों गति के जीवों का एक नहीं, दो नहीं, चारों गति के जीवों का भी, हां शुभ-अशुभ भावों का रहट, रहट समझते हैं आप? वह कुयें पर लगाते हैं ना, ऐसा-ऐसा घूमता है, क्या बोलते हैं रहट को? *श्रोता: रेंट।* रेंट-रेंट, सदा घूमता ही रहता है। बहुत अच्छा! अभी और एक उदाहरण आ रहा है।

माता ने अपने बेटियों को खत लिखा है इसलिये वह लिखती है कि तुम दोनों

लड़कियां हो इसलिये लड़की का उदाहरण देकर समझाती हूं। लड़की का जन्म होता है तभी से मां-बाप मानते हैं कि यह तो, अरे वाह! बहनों को सबको याद है, हां, कि यह पराया धन है, ऐसा मयूरभाई बोलते हैं, क्या कहते हैं? हेय है, हेय यानी क्या? छोड़ने लायक है। अपने घर में रखने लायक नहीं है, फिर भी उसकी शादी होकर वह पराये घर नहीं जाती है तब तक उसका लाड़, प्यार, पोषण, शिक्षण, संस्कार, अपने पैरों पर खड़ा होकर धनोर्पाजन करने का शिक्षण आदि सभी बातों में क्या थोड़ीसी भी ढील होती है? बिलकुल नहीं होती है, यह बताना चाहते हैं, उलटा बहुत ध्यानपूर्वक उसे संभाला जाता है। शादी होने पर भी तुम लड़कियां शुरू-शुरू में तो बार-बार मायके आती हो और कुछ काल के बाद ससुराल में इतनी घुल-मिल जाती हो, आनंद में रहती हो कि कभी कभार मायके आ भी जाओगी तो कब मैं, मेरे अपने घर चली जाऊं ऐसा सोचती हो। अब आस्रव के बारे में भी वैसा ही हाल है। उसे हेय माना, श्रद्धा में त्यागने योग्य माना, तो भी जब तक आस्रव छूटकर शुद्धभाव प्रकट नहीं होता, तब तक अधिक-अधिक उच्च प्रकार के शुभभाव आते ही रहते हैं; शुद्धभाव प्रकट होने पर भी पुनः पुनः आस्रव होते ही हैं; शुद्धि बढ़ती जाती है तब आस्रव पूर्णतः छूटते तो नहीं है, परंतु कब मैं मेरे शुद्ध स्वभाव में जाऊं ऐसी खटक निरंतर रहती है और एक समय ऐसा आता है कि आस्रवों का पूर्ण अभाव होकर मोक्ष दशा, पूर्ण शुद्धि प्रकट होती है। इसमें तो सब बात आ गयी है और बहुत आसान एक्झाम्पल है और दृष्टांत भी आसान है, दृष्टांत भी उससे समझ में आवे, ऐसा है।

जिस मां के दिल में अपनी बेटी के कल्याण की भावना रहती है, वह लड़की से कहती है तुझे मायका हेय है और ससुराल उपादेय है। वह तेरा स्वघर है, यह लौकिक की बात है हो। जिनवाणी मां को भी हमारे कल्याण की भावना है। वह बता रही है अनादिकाल से तुम आस्रव, बंध करते आये हो, परंतु वे हेय तत्त्व हैं, उन्हें छोड़कर निजतत्त्व का यानी स्व-जीवतत्त्व का आश्रय लो तो संवर, निर्जरा, मोक्षरूप सुख प्राप्त होगा। संवर, निर्जरा प्रकट होने पर भी शुरुआत में साथ-साथ में अल्प आस्रव-बंध कुछ काल तक होते रहेंगे परंतु कालांतर से उनका अभाव होकर पूर्ण सुखरूप अनंत सुखरूप मोक्ष अवस्था प्रकट होगी। हमारा विषय तो सात तत्त्वों का चल रहा है। सात तत्त्वों की विस्तृत चर्चा हम आज तक करते आये हैं। उनके संबंध में जीव की विपरीत मान्यतायें, तत्त्वों में हेय, ज्ञेय, उपादेयपना कैसे घटित करना आदि बातें हमने विस्तार से देखी। हमने यह भी सीखा था

तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्। इसलिये अब तुम कहोगी, वाह अब हमें सम्यग्दर्शन हुआ होगा। क्योंकि वहां क्या कहा था? **तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्** तो यह लड़की क्या मानती है? वाह! वाह! अभी हमने सब कुछ पढ़ लिया है, सब बातें हमारे ज्ञान में आयी हैं, तो अभी हमें सम्यग्दर्शन हुआ होगा। तो कहते हैं कि, हां-हां ऐसी जल्दी मत करना, ध्यान से सुनना, यह जो सात तत्त्वों का ज्ञान हुआ है, वह तो शब्दज्ञान है, शास्त्रज्ञान है, बहिरंग ज्ञान ही हुआ है। यानी क्या सिर्फ इन्फॉर्मेशन मिली है तुम्हें। क्योंकि, अभी तूने आत्मा का अनुभव तो नहीं किया है। कह रहे हैं, शब्दज्ञान है, शास्त्रज्ञान है और बहिरंग ज्ञान ही हुआ है। अभी आत्मज्ञान कहां हुआ है? इन सात तत्त्वों में छुपी हुयी आत्मज्योति अब तक अनुभव में कहां आयी है? देखो, वैसे तो शास्त्रों में ऐसी बात आती है कि आत्मज्ञान ही ज्ञान है, शेष सभी अज्ञान, क्या कहते हैं? हमने इतने शास्त्र पढ़े वे भी? हां, आत्मज्ञान को ही सच्चा ज्ञान-सम्यग्ज्ञान कहा गया है; बाकी ग्यारह अंग और नौ पूर्व का पाठी क्यों न हो, वह भी ज्ञान नहीं–सम्यग्ज्ञान नहीं कहा जायेगा। अब कह रहे हैं, तुम भी अब थोड़ी शास्त्र की भाषा सीख गयी हो इसलिये कहोगी, कम से कम व्यवहार सम्यग्दर्शन तो है न? ऐसा अगर तुम्हें लगता हो, तो तुम भ्रम में हो, ऐसा मुझे कहना पड़ेगा।

क्या कह रहे है? हमें निश्चय सम्यग्दर्शन तो हुआ नहीं है यानी आत्मा का अनुभव नहीं हुआ है। लेकिन व्यवहार सम्यग्दर्शन तो है न ऐसा किसी जीव को लगेगा। तो उस बेटी के माथे पर वह बात बता दी तुम ऐसा कहती हो। हां तो कह रहे हैं आधा-अधूरा ज्ञान खतरे से खाली नहीं होता। वैसी ही यह बात हुयी, अहो। इस जीव ने इन सात तत्त्वों का अभ्यास करके उनमें से एक स्व-चैतन्य तत्त्व ग्रहण किया, आत्मानुभव किया, उसे निश्चय सम्यग्दर्शन प्राप्त होता है और ऐसा निश्चय सम्यग्दर्शन होने पर, उस जीव का सात तत्त्व संबंधी जो यथार्थ श्रद्धान होता है, उसे व्यवहार सम्यग्दर्शन कहने में आता है। ये क्या कहना चाहते हैं? देखो-देखो। जब तक निश्चय सम्यग्दर्शन नहीं होता है तब तक उस जीव को व्यवहार सम्यग्दर्शन भी नहीं है। जिसको सम्यग्दर्शन हुआ है, ऐसे जीव के जो शुभभाव हैं, कौनसे हैं? कि उस चतुर्थ गुणस्थान के योग्य, ऐसे सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के प्रति जो उनके अहोभाव है, आदरभाव है उसको व्यवहार सम्यग्दर्शन कहेंगे। तो यहां पहले में पहले नियम ऐसा है कि जहां निश्चय होता है तो उसके साथ व्यवहार होता है। सिर्फ व्यवहार कभी नहीं होता और सिर्फ निश्चय भी कभी नहीं होता। यह बात समझने लायक है। क्या कहा? यहां

यह बताना चाहते हैं, कौनसी बात? शास्त्रों में तो ऐसी बात आती है। पर आजकल कहां देखने में मिलता है? शास्त्रों में तो लिखते हैं, घी का घड़ा; आपने घी का घड़ा देखा है बेटा? घी का घड़ा देखा है? किधर है? आपके घर में है? हां, कि पानी का घड़ा है? दोनों नहीं हैं, क्योंकि फ्रीज है तुम्हारे घर में। हां, तो घी का घड़ा जब कहते हैं तो वह बात हमारे समझ में नहीं आती है।

हम दूसरा उदाहरण लेंगे, लेटेस्ट मॉडेल! तो आपके घर में चाय की बरनी यानी डब्बा है कि नहीं? अभी बोलो हां, चाय की नहीं है तो, शक्कर की तो होनी ही चाहिये न? हां, क्यों? लेकिन वह जो बरनी है, उसमें चाय रखी नहीं है, केवल बरनी ही है, तो उसको आप चाय की बरनी कहेंगे कि नहीं? लेकिन जब उसमें चाय रखी है तभी उसको चाय की बरनी यह नाम दिया जाता है। चाय के कारण उसको चाय की बरनी कहते हैं। वैसे घी का घड़ा जो होता है, तो जिस घड़े में घी रखा है बहुत दिनों से, तो ऐसा घड़ा, चिकना-चिकना बन जाता है तो उसको घी का घड़ा कहने में आता है। केवल घड़ा होगा, तो उसको कोई घी का घड़ा कहेगा क्या? वैसे यहां कह रहे हैं जिसके सम्यग्दर्शन होता है, उसके साथ रहनेवाले जो उसके शुभ परिणाम हैं, उनको व्यवहार सम्यग्दर्शन कहते हैं और यहां तो निश्चय सम्यग्दर्शन हुआ ही नहीं है और हमें तो सच्चे देव-गुरु-शास्त्र के प्रति अहोभाव तो जरूर है, तो उसको व्यवहार सम्यग्दर्शन नहीं कहेंगे। बात नहीं समझ में आयी? चलो दूसरी ओर से देखते हैं।

यह बेटी, इनके पिताजी मयूरभाई हमारे पुराने मित्र हैं। तो अभी समझो, वह बेटी बड़ी हो गयी तो आयी मेरे पास, उदाहरण दे रहा हूं, सत्य बात नहीं है, पापा को जाकर बोलना। क्या कहा? तो वह आयी मेरे पास पंडितजी, मेरा आपके पास एक काम है। अरे बोलो बेटा, नहीं इधर नहीं, आपको मेरे साथ आना पड़ेगा। हमने कहा, कहां जाना है? तुम चलो तो सही, अभी बोलूंगी तो सस्पेन्स टूट जायेगा। तो हमने कहा चलो साहब, क्या करें? अपने बेटी जैसी है, तो साथ में जायेंगे, गये तो एक फलां-फलां घर में गये। तो उस बंगले में जाते ही बोली, यह जो सामने इझी चेअर में बैठें हैं न, इझी चेअर समझते हैं न आप? हां, वह डोलनेवाली। तो इझी चेअर में जो बैठें हैं, वही मेरे ससुर हैं। अच्छा, जय जिनेन्द्र! फिर उतने में वहां से कोई बड़ी उम्रवाली बाई बाहर आयी तो कहती हैं, यह मेरी सास है –

मैंने कहा जय जिनेन्द्र, फिर वहां से कोई और आया तो यह मेरे देवर हैं – तो उनको भी जय जिनेन्द्र, यह मेरी ननद है – उनको भी जय जिनेन्द्र, यह मेरी जेठानी है – उनको भी जय जिनेन्द्र। मैंने कहा बेटा यह तो सब बात ठीक है। इन सबकी तो आपने पहचान करा दी है लेकिन तुम्हारा होनेवाला वर कहां है? तो उसने कहा कि वह किसने नक्की किया है? हां, तो जब ऐसा कहेंगे तो उसको ससुर, उसको सास आप कहेंगे कि नहीं कहेंगे? नहीं। ये जवान बेटियां जानती हैं सब। वैसे जहां निश्चय नहीं है, वहां व्यवहार कहां का? क्योंकि जब मूल ही नहीं है, पति ही नहीं है, तो बाकी रिलेशन्स कहां से पैदा होंगे? ख्याल में आया? तो यहां जो बात बता रहे हैं, वह बिलकुल ऐसी ही है। जहां निश्चय सम्यग्दर्शन नहीं है, तो उस निश्चय सम्यग्दर्शन के साथ जो रागभाव चल रहा है उसको व्यवहार सम्यग्दर्शन कहना, राग-भाव को श्रद्धा के परिणाम कहना यह उपचार है, यह व्यवहार है और इसलिये उसको व्यवहार सम्यग्दर्शन कहते हैं। तो यहां क्या कह रहे हैं?

जिस जीव ने इन सात तत्त्वों का अभ्यास करके उनमें से एक स्व-चैतन्यतत्त्व ग्रहण किया, आत्मानुभव किया, उसे निश्चय सम्यग्दर्शन प्राप्त होता है और ऐसा निश्चय सम्यग्दर्शन होने पर उस जीव का सात तत्त्व संबंधी जो यथार्थ श्रद्धान है उसे व्यवहार सम्यग्दर्शन कहने में आता है। व्यवहार का अर्थ होता है उपचार से कहना। इसलिये निश्चय सम्यग्दर्शन से युक्त जीव को ही व्यवहार सम्यग्दर्शन होता है, क्या यह बात समझ में आ गयी? हां, अब आगे पढ़ते हैं। फिर तुम कहोगी केवल आत्मा का ही अनुभव करना था तो फिर ये सात तत्त्व बताये ही क्यों? क्योंकि केवल मैं शुद्ध हूं, चैतन्यस्वरूप हूं, ऐसे रटने मात्र से आत्मानुभूति नहीं होती है। तो सर्वज्ञ की वाणी में जैसा शुद्ध आत्मा बताया, शुद्ध आत्मा का स्वरूप बताया, वैसा ही अगर श्रद्धान हुआ, तो ही आत्मानुभूति हो सकती है। इसके लिये आगम का अभ्यास और गुरु के उपदेश से ही यथार्थ तत्त्वनिर्णय करना चाहिये। अंतर्मुख होकर विचार करना चाहिये, यह मूल बात है और वह अंतर्मुख होकर विचार करने के लिये यथार्थ तत्त्वनिर्णय करने के लिये, हमें आगम के अभ्यास की आवश्यकता है और आगम का अभ्यास करते-करते हमें बराबर ख्याल नहीं आया तो गुरु से उपदेश लेना चाहिये। तब वह जीव यथार्थ निर्णय करेगा और फिर निर्णय होते ही अंतर्मुख होकर विचार करेगा और जब विकल्परहित होगा तब ही उसको सम्यग्दर्शन हो सकता है। समयसार ग्रंथ में ऐसा बताया है कि नव तत्त्व में, यानी पुण्य और पाप को अलग बताकर सात तत्त्वों को ही

नौ तत्त्व या नौ पदार्थ कहते हैं, एक आत्मा ही प्रकाशमान है और वह नवतत्त्वरूप होकर भी वह अपना शुद्ध स्वभाव नहीं छोड़ता। इन सात तत्त्वों में कई शुद्धभाव, कई अशुद्धभाव और कई मिश्रभाव होते हैं, परंतु चेतना स्वभाव तो उन सबसे भिन्न अनुभव में आता है।

शास्त्र में अग्नि का दृष्टांत दिया है जैसे जलती हुयी लकड़ी, घास या गोबरी को, गोबरी यानी छाना जिसको बोलते हैं। गुजराती में क्या बोलते हैं। *श्रोता: छाना।* छाना बोला है न! हां-हां। तो कहते हैं जैसे जलती हुयी लकड़ी, घास, घास यानी ग्रास, गोबरी को देखने पर अग्नि भी लकड़ी, घास या गोबरी के आकार की दिखायी देती है। परंतु अग्नि के मूल ज्वलन स्वभाव को देखने पर, एक ज्वलन स्वभावरूप ही अग्नि है, भिन्न-भिन्न प्रकार की नहीं है, यह बात ज्ञान में आती है। हमें आत्मानुभव करना है, तो उसके लिये चार बातें आवश्यक हैं। क्या कहते हैं? ये चार बातें कौनसी होनी चाहिये? तो सच्चे देव, गुरु और शास्त्र का यथार्थ स्वरूप पहचानकर उनकी दृढ़ श्रद्धा। क्या कहा? एक बात मुझे याद आयी उसको देखते हुये हम आगे बढ़ेंगे। कई जीव जो भोले जीव हैं न, वे क्या मानते हैं, हम तो जैन कुल में जन्मे हैं साहब और हम चौबीस तीर्थंकर के अलावा किसी के सामने झुकते नहीं हैं और हमने तो रोज स्वाध्याय करूंगा ऐसा व्रत भी लिया है, तो हमारी श्रद्धा भी सही है और हमारा ज्ञान भी सही है, क्योंकि हम रोजाना शास्त्र वाचन करते हैं। अभी थोड़ासा आचरण हमारा हो जाये यानी कोई व्रत आदि हो जाये तो हमको तो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र हो ही जायेगा। हां, तो उनके लिये कह रहे हैं कि; अभी मैं लंबाता नहीं हूं। तो उनको देव का स्वरूप क्या है पूछने पर; अरे! जो तीर्थंकर हैं वे देव हैं। अरे भाई! उनके लक्षण क्या हैं? हमने कभी विचार ही नहीं किया उसके बारे में, तो वैसा श्रद्धान सही श्रद्धान होगा कि नहीं होगा? यह बात बता रहे हैं।

सच्चे देव, गुरु और शास्त्र का यथार्थ स्वरूप पहचानकर, उनकी दृढ़ श्रद्धा होनी चाहिये। उक्त विवेचन में हमने देखा था कि जिनेन्द्र भगवान ने बताये हुये उपदेश से ही जीव को सम्यग्दर्शन होगा। यह बात बिलकुल ध्यान में रखना। क्या कह रहे हैं कि जिनेन्द्र भगवान ने बताये हुये उपदेश से ही जीव को सम्यग्दर्शन होगा। उसके लिये जिनेन्द्र का स्वरूप, उन्होंने बताया हुआ उपदेश यानी सत्शास्त्र और उस उपदेश को अंगीकार करके, आत्मानुभव करनेवाले भावलिंगी संत इन सब के निर्णय से ही यानी किनके-किनके निर्णय करना है? देव का, गुरु का यानी मुनियों का और सत्शास्त्र का। तो इन सबके निर्णय से

ही यानी इनका जैसा यथार्थ स्वरूप है, वैसा निर्णय करने से ही हमें सच्चा उपदेश प्राप्त होगा। केवल देवपूजा, गुरुपास्ति, स्वाध्याय यानी देव की मात्र पूजा करना, गुरु की सेवा करना और शास्त्र पढ़ लेना, ऐसा अर्थ यहां अभिप्रेत नहीं है। जिन्हें देव की महत्ता आयी है, उनके देव के प्रति शुभभाव आये बिना, उनकी पूजा-अर्चा आदि करने के भाव आये बिना रहेंगे नहीं। केवल एक नाम मात्र जाकर भाई, अभी कितने बजे? पौने सात बजे गये, चलो-चलो ढाम-ढूम बज रहा है, अभिषेक-पूजा शुरू हुयी, चलो जल्दी जाकर दौड़ो-दौड़ो। उससे काम नहीं होगा, यह कह रहे हैं। तुम्हें उनके स्वरूप का पता लगना चाहिये और केवल गुरु की वैयावृत्त करें तो अपना काम होगा, ऐसा नहीं है। गुरु की सेवा करना, इसका ही अर्थ यह है कि गुरु ने जो हमें उपदेश दिया है उस उपदेश के अनुसार हमें अपना आचरण रखना है। आचरण यानी बाह्य आचरण नहीं, स्वरूप में लीनता करनी है, वह बात ध्यान रखना और शास्त्र पढ़ लेना यानी केवल पढ़ना यह बात यहां अभिप्रेत नहीं है। उनके बताये हुये मार्ग पर चलना ही सच्ची भक्ति और सच्ची उपासना है।

तो यह आत्मानुभव करना है उसके लिये चार आवश्यक बातों में से एक बात यह हुयी कि सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का हमें निर्णय होना चाहिये। अब दूसरी बात कह रहे हैं सात तत्त्वों की यथार्थ प्रतीति, प्रतीति का अर्थ श्रद्धान है; सात तत्त्व संबंधी विपरीत मान्यता छोड़कर तत्त्वों का सही स्वरूप जानकर, उनमें हेय, ज्ञेय, उपादेय तत्त्व की पहचान, केवल पहचान नहीं तो श्रद्धा करके उस पर बारंबार विचार करके, ये तत्त्व सचमुच में वैसे ही हैं, ऐसी परीक्षापूर्वक निर्णय करना ही प्रतीति करना है। क्या कह रहे हैं? देखो, यहां पर यह बता रहे हैं यह सात तत्त्व हमने तो सुन लिये, हां उस संबंधी जो विपरीत मान्यता है, उसको भी हमने छोड़ दिया है और तत्त्वों का सही स्वरूप जान लिया है। उनमें भी कौनसे तत्त्व हेय हैं, कौनसे तत्त्व ज्ञेय हैं, कौनसे तत्त्व उपादेय हैं इनकी भी पहचान हो गयी। लेकिन इतना होने के बाद जो हमने सीखा है, उस पर बारंबार विचार करके ये तत्त्व जैसे हमें बताये हैं, वैसे ही हैं ऐसा निर्णय, वह भी निर्णय कैसा? परीक्षापूर्वक निर्णय! कोई कहता है इसलिये नहीं, तो कह रहे हैं परीक्षापूर्वक निर्णय करना ही प्रतीति करना है। सात तत्त्वों की यथार्थ प्रतीति यह दूसरी बात हो गयी हो। अभी तीसरा पॉइंट कौनसा है? स्व-पर भेदविज्ञान। मैं कौन हूं? पर कौन है? इसे जानकर स्व को स्व जानना और मानना, तथा पर को पर जानना एवं मानना, सात तत्त्वों में स्व-पर भेदविज्ञान करना और लास्ट में क्या कह रहे हैं?

आत्मानुभूति। स्व कौन है इस बात को जानने पर, समझने पर, बारंबार अंतर्मुख होकर स्व की अनुभूति करने का अभ्यास करना, यह आत्मानुभूति हमें करनी है। आत्मा कैसा है यानी आत्मा का स्वरूप कैसा है और उसका अनुभव किस विधि से किया जाता है, इसका उपदेश अरिहंत भगवंतों ने दिया है। उसके अनुसार अनेक जीवों ने आत्मानुभव किया, अनेक आचार्यों ने ग्रंथ रचना करके यह मार्ग लिखकर रखा है। हम स्व को पहचानकर निजवैभव का आनंद लूट रहे हैं, तुम भी अपने निजवैभव को जानो और उसका उपभोग करो, ऐसा उन्होंने उपदेश दिया है।

देखो, यहां क्या बात बताते हैं कि जिसके आत्मानुभूति होती है उसके चार बातें एकत्रित होती हैं, क्या-क्या होती हैं? तो कहते हैं सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का यथार्थ श्रद्धान उसको होता ही है। इसलिये ऐसा भी शास्त्रों में कथन आता है कि जिसे सम्यग्दर्शन होगा उसको निमित्तरूप से सच्चे देव-गुरु-शास्त्र ही होंगे। हम जानते हैं कि निमित्त से कार्य होता नहीं है, लेकिन जब कोई कार्य होता है तब उसको उचित निमित्त अवश्य होता ही है। अनुकूल जिसको हम कह रहे हैं, तो यहां कहते हैं कि किसी जीव के सम्यग्दर्शन होगा, तो उसके निमित्त कौन है? सच्चे देव-गुरु-शास्त्र हैं; इन्हें निमित्त किसलिये कह रहे हैं? कि उनकी देशना मिलती है न! तो देशना देनेवाला स्वयं सम्यक्त्वी होगा तो उसके मोक्षमार्ग संबंधी उपदेश को देशना कहेंगे। ख्याल में आया? तो कई लोग ऐसा प्रश्न पूछते हैं, कोई विशिष्ट व्यक्ति का नाम लेकर कि उनके सम्यग्दर्शन था या नहीं था? उस व्यक्ति का सच्चे देव, शास्त्र और गुरु का यथार्थ श्रद्धान है या नहीं इस बात को हमें पहले देखना चाहिये। अगर उनका देव, शास्त्र, गुरु संबंधी यथार्थ श्रद्धान है तो वह किस जाति के हैं, किस पर्याय के हैं यानी मनुष्यपर्याय, तिर्यंचपर्याय के हैं या अन्य दो पर्याय के हैं इस बात का कोई महत्व नहीं है। यानी यहां पर यह कहते हैं कि निमित्त को देखते हुये इस जीव को सम्यग्दर्शन हुआ है या नहीं हुआ है, इस बात का हम निर्णय कर सकते हैं।

यह किसकी बात कर रहा हूं मैं? जो अन्यमती हैं उनमें से बहुत लोगों की ऐसी मान्यता है कि हमको सम्यग्दर्शन हुआ है, लेकिन वे सात तत्त्वों के नाम तक नहीं जानते हैं। मान लो मनुष्यपर्याय का जीव है, देव-गुरु-शास्त्र का कोई अता-पता नहीं है। सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का उनके कोई भान नहीं, ज्ञान नहीं है और वह कहे कि हम सम्यग्दृष्टि हैं। तो हम मन ही मन में निर्णय कर सकते हैं कि जहां निमित्त भी यथार्थ नहीं हैं तो वहां कार्य भी

यथार्थ नहीं होगा क्योंकि कारण के अनुसार कार्य होता है, यह बात भी हम देखते हैं। यहां निमित्त कारण की तरफ देखकर हमने जो कार्य हुआ है उसको देखेंगे। तो यहां बता रहे हैं कि सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का यथार्थ श्रद्धान होता है। सात तत्त्वों की यथार्थ प्रतीति होती है। और कह रहें हैं कि स्व-पर भेदविज्ञान उनके होता है और आत्मानुभूति होती है। जिसको सम्यक्त्व होता है, तो उसको ये चारों ही बातें होती ही हैं।

अब कह रहे हैं। उक्त चारों बातों में, पहली दो बातों पर तो हमने आज तक विस्तृत चर्चा की है। आज का हमारा विषय है, भेदविज्ञान। यहां किसी भी दो चीजों में भेद पाड़ना ऐसा अर्थ नहीं है, परंतु एक ओर मैं स्वयं और दूसरी ओर अन्य चीजें, इनमें लक्षण जानकर उनके द्वारा भेद करना ऐसा अर्थ है। यह क्या कहना चाहते हैं? भेदविज्ञान में हमेशा दो पार्टी तो होनी ही चाहिये। भेद करना है न हमें, तो भेद करना है तो दो पार्टी होवे तो दो में से एक पार्टी तो मैं स्वयं होनी चाहिये। बात ख्याल में नहीं आयी है? मान लो यहां वर्ल्ड कप क्रिकेट मॅच चल रही है और झिंबाब्वे व्हर्सेस बांग्लादेश की मॅच चल रही है और यहां इंडिया व्हर्सेस वेस्टइंडीज कहो या ऑस्ट्रेलिया कहो, मॅच चल रही है, आपको किसमें रस होगा? *श्रोता: इंडिया व्हर्सेस।* हां। इंडिया व्हर्सेस, क्योंकि इंडिया यानी मैं हूं, तो मेरे विरुद्ध वे हैं, तो उसमें हम भेदविज्ञान करेंगे। उन दो पार्टियों में से एक पार्टी हम स्वयं होनी चाहिये। तो जब हम भेदविज्ञान करते हैं तो जीवतत्त्व और आस्रवतत्त्व में भेदविज्ञान होगा। जीवतत्त्व और अजीवतत्त्व में भेदविज्ञान होगा। ख्याल में आया? इसतरह से एक स्व होना चाहिये और पर में जिसको आपको रखना है उसको रख लो। तो कह रहे हैं भेदविज्ञान करने का अर्थ क्या है? यहां किसी भी दो चीज़ों में भेद करना ऐसा अर्थ नहीं है, परंतु एक ओर मैं स्वयं और दूसरी ओर अन्य चीजें, इनमें लक्षण जानकर – उसके द्वारा भेद करना है ऐसा अर्थ है। भेदविज्ञान तो सहज ही होता है, नन्हा बालक भी यह मेरी मां है, इस बात को समझता है। इसकारण अपनी मां ने दूसरे बालक को हाथ में उठा लेने से उसे गुस्सा आता है, रोना आता है। यह तो सबने अनुभव किया होगा। मैं यह नहीं कहता कि आप रोये होंगे, लेकिन यह देखा तो होगा न भाई!

आत्मा ही मैं ऐसा अहंभाव, मैं ऐसा पक्का निर्णय होगा, तब दूसरी पार्टी में शरीर, कर्म, राग-द्वेष और अन्य सभी पदार्थ होंगे। हम सब जीवों का प्रतिनिधित्व यानी रिप्रेझेन्ट

करनेवाला कोई जीव इस दूसरी पार्टी को पराभूत करके पूर्ण शुद्धरूप को प्राप्त होगा अर्थात् सिद्ध परमेष्ठी बनेगा, कायम के लिये मुक्त होगा, तब ऐसे वक्त पर हम सबको आनंद का उफान ना आवे, तो ही आश्चर्य की बात बनेगी। यानी हम सबको आनंद निश्चित होगा यह बताते हैं। तद्वत् ही जिसने अरिहंत अवस्था प्राप्त की उसके प्रति हमारा मन अत्यंत भक्ति से, आदर से, आनंद से भर जाये यह तो सहज बात है। उसीप्रकार जो मुनि हैं, आचार्य, उपाध्याय, साधु हैं, जिन्होंने यह मोक्षमार्ग अपने में प्रकट किया हुआ है, उन्हें देखकर या उनके गुणों का स्मरण होते ही हमारे में भक्तिभाव जागृत होना सहज बात है। इसतरह भक्ति और आनंद न हो तो ही अचरज की बात है।

जिस मोक्षमार्ग का अवलंबन करके वे अरिहंत और गुरु बन गये हैं उस मार्ग का उपदेश उन्होंने अखिल विश्व को दिया है। कोई भी ट्रेड-सिक्रेट रखा नहीं, क्या कहना चाहते है, हां ? यह ट्रेड-सिक्रेट क्या होता है ? देखो कोई बहुत बड़ा व्यापारी होगा, तो जिस विशेष बात से वह पैसा कमाता है, यानी ट्रेड-सिक्रेट जिसको हम कहते हैं, वह किसी अन्य को नहीं बताता है। जैसा कोई हीरे का व्यापारी होगा तो हीरे की परख जो होती है, जो उत्कृष्ट में उत्कृष्ट परख होती है, वह अपने नौकरों को नहीं सिखायेगा, क्योंकि उसका वह सिक्रेट है। व्यापार में अपनी अंदर की खास बात दूसरों को किसीको कोई सिखाता नहीं है। लेकिन यहां जिनेन्द्र भगवान ने स्वयं तो उत्कृष्ट अवस्था प्राप्त की है और अन्यों को भी वह अवस्था कैसे प्राप्त होगी, इसका वहां उपदेश दिया है। वहां कोई ट्रेड-सिक्रेट रखा नहीं कि मेरा कोई अपोनन्ट आ जाये तो मेरा व्यापार बंद हो जाये। ऐसी तो उन्हें कोई चिंता है नहीं, इसलिये कह रहे हैं कि कोई भी ट्रेड-सिक्रेट रखा नहीं, किसी भी मत-पंथ का दुराग्रह रखा नहीं, प्राणीमात्र को यह उपदेश दिया है। यह उपदेश अर्थात् केवलीप्रणीत धर्म अर्थात् सत्शास्त्र उसके प्रति भक्तिभाव उमड़ना सहज में होता है इसके लिये किसीको, कुछ बताने की अथवा जोर जबरदस्ती करने की आवश्यकता ही नहीं रहती। मैं कौन हूं यह समझते ही अपनी पार्टी ख्याल में आती है और बाकी की बातें सहज हो जाती हैं। सारा गड़बड़ घोटाला यहीं पर है, मूल में ही भूल है। 'मैं' समझने में ही भूल हो गयी है।

अभी क्या कहते हैं, हमको आज तक अपना अनुभव जिसको हम सम्यग्दर्शन कहते हैं, वह क्यों नहीं हुआ है ? तो कहते हैं मूल में ही भूल है। कौनसी मूल में भूल है ? कि मैं

कौन हूं यह समझने में ही भूल है। क्या कहा? मैं समझने में ही भूल हो गयी है। इसलिये विरोधी पार्टी को ही अपनी पार्टी समझकर उन्हें चिअर-अप् करने में हमने आज तक का काल गंवाया है और मूर्खता की है। शरीर को ही मैं हूं ऐसा हमने माना और शरीर का ही लालन पोषण करने में पूरी जिंदगी गंवायी-बितायी। तो कहते हैं ऑपोझिट पार्टी को ही हमने चिअर-अप् किया। अपनी स्व पार्टी हार रही है, फिर भी उसकी तरफ ध्यान नहीं दिया, क्योंकि उसने अपने को ही नहीं पहचाना। इस मैं का यानी स्व का, अर्थात् आत्मा का स्वरूप क्या है? यह तो सुनो, सुनने के बाद वह सही है या गलत है, इसका निर्णय करना तुम्हारे हाथ में है। परंतु सुने बिना, समझे बिना निषेध मत करना। विश्व की समस्त बातें, सभी पदार्थ इन सात तत्त्वों में गर्भित हैं। इनमें मैं और अन्य सब कुछ ऐसी दो पार्टियां हैं। मैं अर्थात् केवल मैं यानी जीवतत्त्व जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन है वह मैं हूं और पर में अजीवतत्त्व, आस्रवतत्त्व, बंधतत्त्व, संवरतत्त्व, निर्जरातत्त्व और मोक्षतत्त्व ये सब आते हैं।

देखो, हम ऐसा समझेंगे कि तराजू के दो पलड़ो में से एक पलड़े में मैं ज्ञान-दर्शनमय जीवतत्त्व और दूसरे पलड़े में विश्व के समस्त चराचर पदार्थ, अन्य अनंत जीव, पुद्‌गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल, धन, संपत्ति, दुनिया का समस्त वैभव, पृथ्वी, ग्रह, तारे, नक्षत्र, स्वर्ग, नरक सब कुछ इतना ही नहीं परंतु राग-द्वेषरूप विकारी पर्यायों को तथा संवर, निर्जरा, मोक्षरूपी शुद्ध पर्यायों को रखें – फिर भी मैं वाला पलड़ा ही भारी होगा। ऐसा जब इस जीव को पता लगेगा कि मैं जो हूं, वह सर्वोत्कृष्ट है, इससे भारी अन्य कुछ नहीं है। तो कह रहे हैं विश्व के इन समस्त तत्त्वों में से मैं भिन्न तो हूं ही, सभी से श्रेष्ठ भी हूं। इन सभी चीजों को एक समय में जानने की मेरी शक्ति है, यह जब इस जीव को पता लगेगा, तब उसको सम्यक्त्व हुये बिना रहेगा नहीं।

इसतरह इस प्रकार से सम्यक्त्व कैसे हासिल करना? भेदज्ञान कैसे करना? इस बात का हमें थोड़ा बहुत यहां मार्गदर्शन मिलता है और उस मार्गदर्शन को आत्मसात करते हुये हम सभी जीव अपने स्वरूप को जाने और आत्मानुभव करें इस पवित्र भावना के साथ अभी हम यहां विराम लेते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !